श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

(सचित्र तत्त्वप्रबोधिनी सरल हिन्दी टीका सहितम्)

चतुर्थ खण्ड

(षष्ठः स्कन्धः सप्तमः स्कन्धश्च)



दयालोक प्रकाशन संस्थान

18, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद- 211002

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

चतुर्थः खण्डः

(षष्ठः स्कन्धः सप्तमः स्कन्धश्च)



टीकाकर्त्री

श्रीमती दयाकान्ति देवी

धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद, २११००२

प्रकाशक —दयालोक प्रकाशन संस्थान, १८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद

विक्रमसंवत् २०४६, प्रथम संस्करण १०००

❁

प्राप्ति–स्थान
दयालोक प्रकाशन संस्थान
१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद—२११००२

❁

मूल्य : ४०० रुपये मात्र

❁

मुद्रक—
शाकुन्तल मुद्रणालय
३४, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद



सम्पादिका–श्रीमती दयाकान्ति देवी

नम्र निवेदन

भक्त्या हरिः साध्यते

भक्ति से भगवान् मिलते हैं। यद्यपि ज्ञान भी भगवत्प्राप्ति का साधन है, किन्तु भक्ति उससे श्रेष्ठ और सुलभ साधन है। क्योंकि भक्ति ज्ञान की माता है, जैसा कि पद्मपुराण के श्रीमद्भागवत-माहात्म्य में वर्णित है—

अहं भक्तिरिति ख्याता इमौ मे तनयौ मतौ।
ज्ञानवैराग्यनामानौ कालयोगेन जर्जरौ॥

(पद्म० ११४५)

अर्थात् मैं भक्ति हूँ और समय के प्रभाव से अत्यन्त वृद्ध ये दोनों ज्ञान और वैराग्य नामक मेरे पुत्र हैं।

भगवान् श्रीराम ने स्वयं कहा है कि जो मेरी भक्ति से विहीन शास्त्ररूपी गढ़े में मोहित है उसको सौ जन्म तक भी न ज्ञान होगा और न मुक्ति मिलेगी—

मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्रगर्तेषु मुह्यताम्।
न ज्ञानं न च मोक्षः स्यात् तेषां जन्मशतैरपि॥

सुनु खगेस हरि भगति बिहाई।
जो सुख चाहहिं आन उपाई॥
ते सठ महासिन्धु बिनु तरनी।
पैरि पार चाहहिं जड़ करनी॥ (तुलसीदास)

भक्तिशास्त्र का आकर ग्रन्थ श्रीमद्भागवत महापुराण कहता है, भक्ति के समान न कोई तप है, न कोई धर्म है—

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥

(भा० ११।१४।२०)

अर्थात् हे उद्धव! उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होने वाली भक्ति जिस प्रकार मुझे वश में कर लेती है उस प्रकार योग, सांख्य, स्वाध्याय, तप आदि दूसरे साधन मुझे वश में नहीं कर सकते हैं।

भगवान् ने तो यहाँ तक कहा है कि मैं भक्त के अधीन परतन्त्र के समान हूँ—

अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।

अतएव श्रीशुक देव जी राजा परीक्षित् से कहते हैं—'राजन्! कहाँ तो भगवान् त्रिलोकी के गुरु, वैकुण्ठ के स्वामी, यदुकुल और आप सबके कुलों के नेता और सर्वदेव सर्वेश्वर हैं, परन्तु भक्ति के कारण उन्हें आप सबका दौत्यकर्म, कैंकर्य एवं अर्जुन के रथ का सारथ्य भी करना पड़ा।

राजन् पतिर्गुरुरलं भवतां यदूनां
दैवं प्रियः कुलपतिः क्व च किंकरो वः।
अस्त्वेवमङ्ग भगवान् भजतां मुकुन्दो
मुक्तिं ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोगम्॥

(भा० ५।६।१८)

एक सन्त ने कहा है—

'भक्ति का जन्म भाव में होता है और भाव में ही इसका विकास होता है। भाव बढ़ते-बढ़ते महाभाव की स्थिति में पहुँच जाता है, जहाँ भक्त भगवान् बन जाता है।'

ऐसी महिमामयी भक्ति की ओर उन्मुख करने वाले श्रीमद्भागवत की जितनी प्रशंसा की जाय, उतनी थोड़ी है। ऐसे ग्रन्थरत्न की टीका करना मुझ जैसी अल्पमति के लिए दुःसाहसमात्र है। फिर भी मेरे इस कार्य से यदि पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो मुझे बड़ा सन्तोष होगा।

हमारे इस चतुर्थ खण्ड में श्रीमद्भागवत के दो स्कन्ध—छठा और सातवाँ समाविष्ट हैं। इन दोनों खण्डों के विषय विषय-सूची में द्रष्टव्य हैं।

अन्त में, मैं इस ज्ञानयज्ञ में सहायक अपने आराध्य पतिदेव श्रीलोकमणि लाल को धन्यवाद देती हूँ। किन्तु इस कार्य के सम्पादन में परम सहायक आचार्य श्री तारिणीश झा के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना धर्म मानती हूँ। संस्कृत पुस्तकों के सेवाव्रती मुद्रक श्री उपेन्द्र त्रिपाठी को, जिन्होंने बड़ी निष्ठा से इस पुस्तक को साधु मुद्रित किया है, धन्यवाद देकर अपना वक्तव्य समाप्त करती हूँ।

दुर्गानवमी
संवत् २०४६, कलि संवत् ५०९०, श्रीकृष्णसंवत् ५११५
९ अक्टूबर, १९८९ ई०

निवेदिका
दयाकान्ति देवी अग्रवाल

श्रीहरिः शरणम्

विषय सूची

षष्ठ स्कन्ध

सप्तम स्कन्ध

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

षष्ठः स्कन्धः





यदङ्घ्रिपोतशरणस्तीर्त्वा मोहाम्बुधिं नरः ।
स्वात्मधर्ममुपैत्याशु तं वन्दे पुरुषोत्तमम् ।।

श्री मद्भागवत की आरती

आरती अति पावन पुराण की।
धर्म भक्ति विज्ञान खान की ।। आ० ।।
महापुराण भागवत निर्मल।
शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल
परमानन्द-सुधा-रसमय कल।
लीला-रति-रस रस-निधान की ।। आ० ।।
कलि-मल-मथनि त्रिताप-निवारिनि।
जन्म-मृत्युमय भव-भय-हारिनि।
सेवत सतत सकल सुख कारिनि।
सुमहौषधिहरि-चरित-गान की ।। आ० ।।
विषय-विलास-विमोह-विनाशिनि।
विमल विराग विवेक विकाशिनि।
भगवत्तत्त्व-रहस्य प्रकाशिनि।
परम ज्योति परमात्म-ज्ञान की ।। आ० ।।
परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनि।
रसिक-हृदय-रस-रास विलासिनि।
भुक्ति मुक्ति रति प्रेम सुदासिनि।
कथा अकिञ्चनप्रिय सुजान की ।। आ० ।।





ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच

निवृत्तिमार्गः कथित आदौ भगवता यथा ।
क्रमयोगोपलब्धेन ब्रह्मणा यदसंसृतिः ॥१॥

पदच्छेद—

निवृत्ति मार्गः कथितः आदौ भगवता यथा ।
क्रमयोग उपलब्धेन ब्रह्मणा यत् असंसृतिः ॥

शब्दार्थ—

निवृत्तिः	४. निवृत्ति	क्रम	८. क्रमशः
मार्गः	५. मार्ग को	योग	९. योग के द्वारा
कथितः	६. बताया	उपलब्धेन	१२. प्राप्त करता है
आदौ	३. पहले	ब्रह्मणा	१०. ब्रह्मा के साथ
भगवता	१. हे भगवन् ! आपने	यत्	७. जिससे (जीव)
यथा	२. जिस प्रकार	असंसृतिः	११. ब्रह्मलोक को

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपने जिस प्रकार पहले निवृत्तिमार्ग को बताया, जिससे जीव क्रमशः योग के द्वारा ब्रह्मा के साथ ब्रह्मलोक को प्राप्त करता हैं।

द्वितीयः श्लोकः

प्रवृत्तिलक्षणश्चैव त्रैगुण्यविषयो मुने ।
योऽसावलीनप्रकृतेर्गुणसर्गः पुनः पुनः ॥२॥

पदच्छेद—

प्रवृत्ति लक्षणः च एव त्रैगुण्य विषयः मुनें।
यः असौ अलीन प्रकृतेः गुणसर्गः पुनः पुनः ॥

शब्दार्थ—

प्रवृत्ति	४. प्रवृत्ति के	यः असौ	७. जिससे वह जीव
लक्षणः च	५. मार्ग को (बताया)	अलीन	१०. सम्बन्ध न टूटने के कारण
एव	६. और	प्रकृतेः	८. प्रकृति के
त्रगुण्य	२. तीनो गुणों वाले	गुण	९. गुणों का
विषयः	३. लोकों के	सर्गः	१२. सृष्टि में आता है
मुनें।	१. हे मुनिवर ! आपने	पुनः-पुनः॥	११. बार-बार

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आपने तीनों गुणों वाले लोकों के प्रवृत्ति के मार्ग को बताया। और जिससे वहजीव प्रकृति के गुणों का सम्बन्ध न टूटनें के कारण बार-बार सृष्टि में आता है।

तृतीयः श्लोकः

अधर्मलक्षणा नाना नरकाश्चानुर्वणिताः ।
मन्वन्तरश्च व्याख्यात आद्यः स्वायम्भुवो यतः ।।३।।

पदच्छेद—

अधर्म लक्षणाः नाना नरकाः च अनुर्वणिताः ।
मन्वन्तरः च व्याख्यातः आद्यः स्वायम्भुवः यतः ।।

श्लोकार्थ—

अधर्म	२. अर्धम	मन्वन्तरः	९. मन्वन्तर की
लक्षणाः	३. लक्षण से	च	७. और
नाना	४. अनेक प्रकार के	व्याख्यातः	१०. व्याख्या की
नरकाः	५. नरकों का	आद्यः	८. पहले
च	१. और	स्वायम्भुवः	१२. स्वायम्भुव मनु थे
अनुर्वणिताः ।	६. वर्णन किया	यतः ।।	११. जिसके स्वामी

श्लोकार्थ—और अधर्म लक्षण वाले अनेक प्रकार के नरकों का वर्णन किया । और पहले मन्वन्तर की व्याख्या की । जिनके स्वामी स्वायम्भुव मनु थे ।

चतुर्थः श्लोकः

प्रियव्रतोत्तानपदोर्वंशस्तच्चरितानि च ।
द्वीपवर्षसमुद्राद्रिनद्युद्यानवनस्पतीन् ।।४।।

पदच्छेद—

प्रियव्रत उत्तानपदोः वंशः तत् चरितानि च ।
द्वीप वर्ष समुद्र अद्रि नदी उद्यान वनस्पतीन् ।।

शब्दार्थ—

प्रियव्रत	१. प्रियव्रत और	द्वीप	७. द्वीप
उत्तानपदोः	२. उत्तानपाद के	वर्ष	८. वर्ष
वंशः	३. वंश का	समुद्र	९. समुद्र
तत्	५. उनके	अद्रि-नदी	१०. पर्वत-नदी
चरितानि	६. चरित्र का (तथा)	उद्यान	११. बगीचे और
च ।	४. और	वनस्पतीन् ।।	१२. वनस्पतियों का (वर्णन किया)

श्लोकार्थ—आपने प्रियव्रत और उत्तानपाद के वंश का और उनके चरित्र का तथा द्वीप, वर्ष, समुद्र, पर्वत नदी, बगीचे और वनस्पतियों का वर्णन किया ।

पंचमः श्लोकः

धरामण्डलसंस्थानं भागलक्षणमानतः ।
ज्योतिषां विवराणां च यथेदमसृजद्विभुः ॥५॥

पदच्छेद—

धरा मण्डल संस्थानम् भाग लक्षण मानतः ।
ज्योतिषाम् विवराणाम् च यथा इदम् असृजत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

धरा	१. पृथिवी	ज्योतिषाम्	७. ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति
मण्डल	२. मण्डल की	विवराणाम्	९. सात विवरों की
संस्थानम्	३. स्थिति	च	८. और
भाग	४. विभाग	यथा	१०. जिस प्रकार
लक्षण	५. लक्षण	इदम् असृजत्	१२. इस सृष्टि की रचना की (आपने वर्णन किया)
मानतः ।	६. परिमाण	विभुः ॥	११. भगवान् विष्णु ने

श्लोकार्थ—पृथिवी मण्डल की स्थिति, विभाग, लक्षण, परिमाण, ग्रह, नक्षत्रों की स्थिति और सात विवरों की जिस प्रकार भगवान् विष्णु ने इस सृष्टि की रचना की, उसका आपने वर्णन किया :

षष्ठः श्लोकः

अधुनेह महाभाग यथैव नरकान्नरः ।
नानोग्रयातनान्नेयात्तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥६॥

पदच्छेद—

अधुना इह महाभाग यथा एव नरकात् नरः ।
नाना उग्र यातनात् नेयात् तत् मे व्याख्यातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

अधुना	२. इस समय	नाना	५. अनेक
इह	३. यहाँ	उग्र	६. भयंकर
महाभाग	१. हे महाभाग !	यातनात्	७. यातना से पूर्ण
यथा एव	४. जिस प्रकार से	नेयात्	१०. निवृत्ति होती है
नरकात्	९. नरकों से	तत् मे	११. उसका हमें
नरः ।	८. मनुष्य की	व्याख्यातुम् अर्हसि ॥	१२. उपदेश दीजिए

श्लोकार्थ—हे महाभाग ! इस समय यहाँ जिस प्रकार से अनेक भयंकर यातना से पूर्ण मनुष्य की नरकों से निवृत्ति होती है, उसका हमें उपदेश दीजिए ।

सप्तमः श्लोकः

नचेदिहैवापचितिं यथांहसः कृतस्य कुर्यान्मनउक्तिपाणिभिः ।
ध्रुवं स वै प्रेत्य नरकानुपैति ये कीर्तिता मे भवतस्तिग्मयातनाः ।।७।।

पदच्छेद—

न चेत् इह एव अपचितिम् यथा अंहसः कृतस्य कुर्यात् मन उक्ति पाणिभिः ।
ध्रुवम् सः वै प्रेत्य नरकात् उपैति ये कीर्तिताः मे भवतः तिग्म यातनाः ।।

शब्दार्थ—

न	९. नहीं	ध्रुवम	११. निश्चित ही
चेत्	५. यदि	सः वै	६. वह
इह एव	७. इस जन्म में ही	प्रेत्य	१२. मरने के बाद
अपचितिम्	८. प्रायश्चित्त	नरकात्	१४. नरकों को
यथा अंहसः	३. जैसे पाप को	उपैति	१५. प्राप्त करता है
कृतस्य	१०. कर ले तो	ये	१६. जिसका
कुर्यात्	४. करता है	कीर्तिताः	१८. वर्णन किया है
मनउक्ति	१. मनुष्य मन वाणी और	मेभवतः	१७. मैंने आपसे
पाणिभिः ।	२. हाथ से	तिग्मयातनाः ।।	१३. तीक्ष्ण यातना से पूर्ण

श्लोकार्थ—मनुष्य मन, वाणी और हाथ से जैसे पाप को करता है । यदि वह इस जन्म में ही प्रायश्चित्त नहीं कर ले तो निश्चित ही मरने के बाद तीक्ष्ण यातना से पूर्ण नरकों को प्राप्त करता है । जिसका मैंने आपसे वर्णन किया है ।

अष्टमः श्लोकः

तस्मात्पुरैवाश्विह पापनिष्कृतौ यतेत मृत्योरविपद्यताऽऽत्मना ।
दोषस्य दृष्ट्वा गुरुलाघवं यथा भिषक् चिकित्सेत रुजां निदानवित् ।।८।।

पदच्छेद—

तस्मात् पुरैव आश्विह पापनिष्कृतौ यतेत मृत्योः अविपद्यता आत्मना ।
दोषस्य दृष्ट्वा गुरु लाघवम् यथा भिषक् चिकित्सेत रुजाम् निदानवित् ।।

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिए	दोषस्य	७. पापों को
पुरैव	२. सावधानी से (मनुष्य को)	दृष्ट्वा	९ देखकर
आश्विह	३. शीघ्र यहीं	गुरुलाघवम्	८. बड़ा-छोटा
पापनिष्कृतौ	१०. पाप का प्रायश्चित्त	यथा	१२. जिस प्रकार से
यतेत	११. कर लेना चाहिए	भिषक्	२३. वैद्य
मृत्योः	४. मृत्यु	चिकित्सेत	१६. चिकित्सा करता है
अविपद्यता	५. आने से पहले	रुजाम्	१४. रोगों का
आत्मना	६. अपने	निदानवित् ।।	१५. कारण जानकर

श्लोकार्थ—इसलिए सावधानी से मनुष्य को शीघ्र यहीं मृत्यु आने से पहले अपने पापों को बड़ा-छोटा देखकर पाप का प्रायश्चित कर लेना चाहिए जिस प्रकार से वैद्य रोगों का कारण जानकर चिकित्सा करता है ।

नवमः श्लोक

राजोवाच

दृष्टश्रुताभ्यां यत्पापं जानन्नप्यात्मनोऽहितम् ।
करोति भूयो विवशः प्रायश्चित्तमथो कथम् ।।९।।

पदच्छेद—

दृष्ट श्रुताभ्याम् यत् पापम् जानन् अपि आत्मनः अहितम् ।
करोति भूयः विवशः प्रायश्चित्तम् अथो कथम् ।।

शब्दार्थ—

दृष्ट	१. लौकिक और	अहितम् ।	६. शत्रु
श्रुताभ्याम्	२. शास्त्रोक्त	करोति	११. करता है
यत्	३. जिस	भूयः	१०. बार-बार
पापम्	४. पाप को	विवशः	९. विवश होकर
जानन्	७. जानता हुआ	प्रायश्चित्तम्	१३, प्रायश्चित्त
अपि	८. भी	अथो	१२. ऐसी अवस्था में
आत्मनः	५. अपना	कथम् ।।	१४. कैसे (सम्भव है)

श्लोकार्थ—(जीव) लौकिक और शास्त्रोक्त जिस पाप को अपना शत्रु जानता हुआ भी विवश होकर बार-बार करता रहता है, ऐसी अवस्था में प्रायश्चित्त कैसे सम्भव है ।

दशमः श्लोकः

क्वचिन्निवर्ततेऽभद्रात्क्वचिच्चरति तत्पुनः ।
प्रायश्चित्तमतोऽपार्थं मन्ये कुञ्जरशौचवत् ।।१०।।

पदच्छेद—

क्वचित् निवर्तते अभद्रात् क्वचित् चरति तत्पुनः ।
प्रायश्चित्तम् अतः अपार्थम् मन्ये कुंजर शौचवत् ।।

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी तो	पुनः ।	७. फिर से
निवर्तते	५. छुटकारा पाता है	प्रायश्चित्तम्	३. प्रायश्चित्त के द्वारा
अभद्रात्	४. पापों से	अतः	१०. अतः (मैं इसे)
क्वचित्	६. कभी	अपार्थम्	२. मनुष्य
चरति	९. आचरण करता है	मन्ये	१२. मानता हूं
तत्	८. उन्हीं पापों का	कुंजर शौचवत् ।।	११. हाथी के स्नान के समान

श्लोकार्थ—कभी तो मनुष्य प्रायश्चित्त के द्वारा पापों से छुटकारा पाता है । कभी फिर से उन्हीं पापों का आचरण करता । अतः मैं इसे हाथी के स्नान के समान मानता हूँ ।

एकादशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

कर्मणा कर्मनिर्हारो न ह्यात्यन्तिक इष्यते ।
अविद्वदधिकारित्वात्प्रायश्चित्तं विमर्शनम् ॥११॥

पदच्छेद---

कर्मणा कर्म निर्हारः न हि आत्यन्तिकः इष्यत ।
अविद्वद् अधिकारित्वात् प्रायश्चित्तम् विमर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

कर्मणा	१. कर्म के द्वारा	इष्यते ।	६, होता है (कर्म का)
कर्म	२. कर्म का	अविद्वत्	८. अज्ञानी जीव है
निर्हारः	४. नाश	अधिकारित्वात्	७. अधिकारी
न हि	५. नहीं	प्रायश्चित्तम्	९. प्रायश्चित्त तो
आत्यन्तिकः	३. सम्पूर्ण रूप से	विमर्शनम्	१०. तत्त्वज्ञान है

श्लोकार्थ—कर्म के द्वारा कर्म का सम्पूर्ण रूप से नाश नहीं होता है। कर्म का अधिकारी अज्ञानी जीव है। प्रायश्चित्त तो तत्त्वज्ञान है।

द्वादशः श्लोकः

नाश्नतः पथ्यमेवान्नं व्याधयोऽभिभवन्ति हि ।
एवं नियमकृद्राजन् शनैः क्षेमाय कल्पते ॥१२॥

पदच्छेद—

न अश्नतः पथ्यम् एव अन्नम् व्याधयः अभिभवन्ति हि ।
एवम् नियमकृत् राजन् शनैः क्षेमाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

न	५. नहीं	हि। एवम्	७. इस प्रकार से
अश्नतः	३. खाता है (उसे)	नियमकृत्	९. नियम करने वाले हैं
पथ्यम्	१. जो पथ्य	राजन्	८. हे राजन् ! जो
एवअन्नम्	२. ही अन्न	शनैः	१०. वे धीरे-धीरे
व्याधयः	४. व्याधियाँ	क्षेमाय	११. कल्याण को
अभिभवन्ति ।	६. होती हैं	कल्पते ॥	१२. प्राप्त करते हैं

श्लोकार्थ—जो पथ्य ही अन्न खाता है, उसे व्याधियाँ नहीं होती हैं। इस प्रकार से हे राजन् ! जो नियम करने वाले हैं, वे धीरे-धीरे कल्याण को प्राप्त करते हैं।

त्रयोदशः श्लोकः

तपसा ब्रह्मचर्येण शमेन च दमेन च।
त्यागेन सत्यशौचाभ्यां यमेन नियमेन च ॥१३॥

पदच्छेद—

तपसा ब्रह्मचर्येण शमेन च दमेन च।
त्यागेन सत्य शौचाभ्यां यमेन नियमेन च॥

शब्दार्थ—

तपसा	१. तपस्या	त्यागेन	६. त्याग से
ब्रह्मचर्येण	२. ब्रह्मचर्य	सत्य	८. सत्य से
शमेन	४. इन्द्रियों के शमन से	शौचाभ्याम्	९. पवित्रता से
च	३. और	यमेन	१०. यम
दमेन	५. मन की स्थिरता से	नियमेन	१२. नियम से कल्याण को प्राप्त करता है
च।	७. और	च॥	११. और

श्लोकार्थ—मनुष्य तपस्या, ब्रह्मचर्य और इन्द्रियों के शमन से, मन की स्थिरता से, त्याग से, और सत्य से, पवित्रता से, यम और नियम से कल्याण को प्राप्त करता है।

चतुर्दशः श्लोकः

देहवाग्बुद्धिजं धीरा धर्मज्ञाः श्रद्धयान्विताः।
क्षिपन्त्यघं महदपि वेणुगुल्ममिवानलः ॥१४॥

पदच्छेद—

देह वाक् बुद्धिजम् धीराः धर्मज्ञाः श्रद्धया अन्विताः।
क्षिपन्ति अघम् महद् अपि वेणु गुल्मम् इव अनलः॥

शब्दार्थ—

देह	१. शरीर से	क्षिपन्ति	११. नष्ट कर देते हैं
वाक्	२. वाणी से	अघम्	९. पापों को
बुद्धिजम्	३. बुद्धि से	महद्	८. बड़े से बड़े
धीराः	४. धैर्यवान्	अपि	१०. भी
धर्मज्ञाः	५. धर्मज्ञ और	वेणुगुल्मम्	१४. बाँसों के समूह को (जला देती है)
श्रद्धया	६. श्रद्धा से	इव	१२. जैसे
अन्विताः।	७. युक्त मनुष्य	अनलः॥	१३. अग्नि

श्लोकार्थ—शरीर से, वाणी से और बुद्धि से, धैर्यवान्, धर्मज्ञ और श्रद्धा से युक्त मनुष्य बड़े से बड़े पापों को भी नष्ट कर देते हैं, जैसे अग्नि बाँसों के समूह को जला देती है।

पंचदशः श्लोकः

केचित्केवलया भक्त्या वासुदेवपरायणाः ।
अघं धुन्वन्ति कात्स्न्र्येन नीहारमिव भास्करः ।।१५।।

पदच्छेद—

केचित् केवलया भक्त्या वासुदेव परायणाः ।
अघम् धुन्वन्ति कात्स्न्र्येन नीहारम् इव भास्करः ।।

शब्दार्थ—

केचित्	३. कुछ लोग	अघम्	७. पापों को
केवलया	४. केवल	धुन्वन्ति	८. भस्म कर देते हैं
भक्त्या	५. भक्ति के द्वारा ही	कात्स्न्र्येन	६. सम्पूर्ण
वासुदेव	१. भगवान् विष्णु के	नीहारम्	१०. कुहरे को (दूर कर देते हैं)
परायणाः	२. शरण में रहने वाले	इव भास्करः	९. जैसे सूर्य

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु की शरण में रहने वाले कुछ लोग केवल भक्ति के द्वारा ही सम्पूर्ण पापों को भस्म कर देते हैं, जैसे सूर्य कुहरे को दूर कर देते हैं।

षोडशः श्लोकः

न तथा ह्यघवान् राजन् पूयेत तप आदिभिः ।
यथा कृष्णार्पितप्राणस्तत्पूरुषनिषेवया ।।१६।।

पदच्छेद—

न तथा हि अघवान् राजन् पूयेत तप आदिभिः ।
यथा कृष्ण अर्पित प्राणः तत् पूरुष निषेवया ।।

शब्दार्थ—

न	१३. नहीं (होती है)	यथा	२. जैसे
तथा हि	११. वैसी (शुद्धि)	कृष्ण	३. भगवान् कृष्ण को
अघवान्	९. पापी पुरुषों की	अर्पित	५. समर्पित कर देने से और
राजन्	१. हे राजन् !	प्राण	४. प्राण
पूयेत	१०. शुद्धि होती है	तत्	६. उनके
तप आदिभिः	१२. तपस्या आदि के द्वारा	पूरुष	७. भक्तों की
		निषेवया	८. सेवा से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जैसे भगवान् श्रीकृष्ण को प्राण समर्पित कर देने से और उनके भक्तों की सेवा से पापी पुरुषों की शुद्धि होती है, वैसी शुद्धि तपस्या आदि के द्वारा नहीं होती है।

सप्तदशः श्लोकः

सध्रीचीनो ह्ययं लोके पन्थाः क्षेमोऽकुतोभयः ।
सुशीलाः साधवो यत्र नारायणपरायणाः ।।१७।।

पदच्छेद—

सध्रीचीनः हि अयम् लोके पन्थाः क्षेमः अकुतोभयः ।
सुशीलाः साधवः यत्र नारायण परायणाः ।।

शब्दार्थ—

सध्रीचीनः	५. सर्वश्रेष्ठ	अकुतोभयः ।	६. भयरहित (और)
हि	४. ही	सुशीलाः	११. सुशील और
अयम्	२. यह	साधवः	१२. साधुजन अनुकरण करते हैं
लोके	१. संसार में	यत्र	८. इस मार्ग का
पन्थाः	३. (भक्ति का) रास्ता	नारायण	९. भगवान् नारायण के
क्षेमः	७. कल्याणकारक है	परायणाः ।	१०. शरण में रहने वाले

श्लोकार्थ—संसार में यह भक्ति का रास्ता ही सर्वश्रेष्ठ, भयरहित और कल्याणकारक है। इस मार्ग का भगवान् नारायण की शरण में रहने वाले सुशील और साधुजन अनुकरण करते हैं।

अष्टादशः श्लोकः

प्रायश्चित्तानि चीर्णानि नारायणपराङ्मुखम् ।
न निष्पुनन्ति राजेन्द्र सुराकुम्भमिवापगाः ।।१८।।

पदच्छेद—

प्रायश्चित्तानि चीर्णानि नारायण पराङ्मुखम् ।
न निष्पुनन्ति राजेन्द्र सुरा कुम्भम् इव आपगाः ।।

शब्दार्थ—

प्रायश्चित्तानि	१०. प्रायश्चित्त (पवित्र नहीं कर सकते)	राजेन्द्र	१. हे राजेन्द्र ! परीक्षित्
		सुरा	३. मदिरा से पूर्ण
चीर्णानि	९. अनेक	कुम्भम्	४. घड़े को
नारायण	७. भगवान् नारायण से	इव	२. जैसे
पराङ्मुखम् ।	८. विमुख मनुष्य को	आपगाः ।।	५. नदियाँ
न निष्पुनन्ति	६. नहीं पवित्र कर सकती हैं, (वैसे ही)		

श्लोकार्थ—हे राजेन्द्र ! परीक्षित् ! जैसे मदिरा से पूर्ण घड़े को नदियाँ नहीं पवित्र कर सकती हैं, वैसे ही भगवान् नारायण से विमुख मनुष्य को अनेक प्रायश्चित्त पवित्र नहीं कर सकते हैं।

एकोनविंशः श्लोकः

सकृन्मनः कृष्णपदारविन्दयोर्निवेशितं तद्गुणरागि यैरिह ।
न ते यमं पाशभृतश्च तद्भटान् स्वप्देऽपि पश्यन्ति हि चीर्णनिष्कृताः ।।१९।।

पदच्छेद-----

सकृत् मनः कृष्ण पदारविन्दयोः निवेशितम् तत् गुणरागि यैः इह ।
न ते यमम् पाशभृतः च ततभटान् स्वप्नें अपि पश्यन्ति हि चीर्ण निष्कृताः ।।

शब्दार्थ----

सकृत्	२. एक बार भी	न	१४. नहीं
मनः	५. अपने मन को	ते	९. वे
कृष्ण	६. भगवान् श्रीकृष्ण के	यमम्	१०. यमराज को और
पदारविन्दयोः	७. चरण-कमलों में	पाशभृतः च	११. पाश को धारण करने वाले
निवेशितम्	८. लगा दिया है	तत् भटान्	१२. उनके दूतों को
तत्	३. भगवान् के	स्वप्नें अपि	१३. स्वप्न में भी
गुणरागि	४. गुणानुरागी	पश्यन्ति हि	१५. देखते हैं (अतः)
यैः इह ।	१. जिसने इस लोक में	चीर्ण	१६. अनेक न॰कों की
		निष्कृताः ।।	१७. वात ही क्या है

श्लोकार्थ—जिसने इस लोक में एक बार भी भगवान् के गुणानुरागी अपने मन को भगवान् श्रीकृष्ण के चरण-कमलों में लगा दिया है, वे यमराज को और पाश को धारण करने वाले उनके दूतों को स्वप्न में भी नहीं देखते हैं। अतः अनेक नरकों की वात ही क्या है।

विंशः श्लोकः

अथ चोदाहारन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
दूतानां विष्णुयमयोः संवादस्तं निवोध मे ।।२०।।

पदच्छेद----

अथ च उदाहरन्ति इमम् इतिहासम् पुरातनम् ।
दूतानाम् विष्णुयमयोः संवादः तम् निबोध मे ।।

शब्दार्थ----

अथ च	१. इसके बाद हे राजन् !	दूतानाम्	८. दूतों का
उदाहरन्ति	५. उदाहरण देते है (जो)	विष्णु	६. भगवान् विष्णु के और
इमम्	२. इस विषय में (विद्वान् लोग)	यमयोः	७. यमराज के
इतिहासम्	४. इतिहास का	संवादः तम्	९. संवाद है उसे
पुरातनम् ।	३. प्राचीन	निबोध मे ।।	१०. मुझसे सुनो

श्लोकार्थ—इसके बाद हे राजन् ! इस विषय में विद्वान् लोग प्राचीन इतिहास का उदाहरण देते हैं, जो भगवान् विष्णु के और यमराज के दूतों का संवाद है। उसे मुझसे सुनो।

एकविंशः श्लोकः

कान्यकुब्जे द्विजः कश्चिद्दासीपतिरजामिलः ।
नाम्ना नष्टसदाचारो दास्याः संसर्गदूषितः ॥२१॥

पदच्छेद—

कान्यकुब्जे द्विजः कश्चित् दासी पतिः अजामिलः ।
नाम्ना नष्ट सदाचारः दास्याः संसर्ग दूषितः ॥

शब्दार्थ—

कान्यकुब्जे	१. कान्यकुब्ज नगर में	नाम्ना	६. नाम का
द्विजः	७. ब्राह्मण था	नष्ट	१२. नष्ट हो गया था
कश्चित्	२. कोई	सदाचारः	११. सदाचार
दासी	३. दासी का	दास्याः	८. दासी के
पतिः	४. पति	संसर्ग	९. संसर्ग से
अजामिलः ।	५. अजामिल	दूषितः ॥	१०. दूषित होने के कारण (उसका)

श्लोकार्थ—कान्यकुब्ज नगर में कोई दासी का पति अजामिल नाम का ब्राह्मण था। दासी के संसर्ग से दूषित होने के कारण उसका सदाचार नष्ट हो गया था।

द्वाविंशः श्लोकः

बन्द्यक्षकैतवैश्चौर्यैर्गर्हितां वृत्तिमास्थितः ।
बिभ्रत्कुटुम्बमशुचिर्यातयामास देहिनः ॥२२॥

पदच्छेद—

बन्दि अक्ष कैतवैः चौर्यैः गर्हिताम् वृत्तिम् आस्थितः ।
बिभ्रत् कुटुम्बम् अशुचिः यातयामास देहिनः ॥

शब्दार्थ—

बन्दि अक्ष	२. बाँधकर जुए से	बिभ्रत्	९. पालन-पोषण करते हुए प्राणियों को
कैतवैः	३. धोखा देकर और	कुटुम्बम्	८ परिवार का
चौर्यैः गर्हिताम्	४. चोरी से निन्दनीय	अशुचिः	७. अपवित्र ढंग से
वृत्तिम्	५. जोविका का	यातयामास	१०. सताता था
आस्थितः ।	६. आश्रय लेकर	देहिनः ॥	१. शरीरधारी प्राणियों को

श्लोकार्थ—शरीरधारी प्राणियों को बाँधकर जुए से धोखा देकर और चोरी से निन्दनीय जीविका का आश्रय लेकर अपवित्र ढंग से परिवार का पालन-पोषण करते हुए प्राणियों को सताता था।

त्रयोविंशः श्लोकः

एवं निवसतस्तस्य लालयानस्य तत्सुतान् ।
कालोऽत्यगान्महान् राजन्नष्टाशीत्यायुषः समः ।।२३।।

पदच्छेद—

एवम् निवसतः तस्य लालयानस्य तत् सुतान् ।
कालः अति अगात् महान् राजन् अष्टाशीति आयुषः समाः ।।

शब्दार्थ—

एवम्	२. इस प्रकार	अति	९. बहुत
निवसतः	३. निवास करते हुए	अगात्	१४. बीत गया
तस्य	७. उसकी	महान्	१०. बड़ा
लालयानस्य	६. लालन-पालन करते हुए	राजन्	१. हे राजन् !
तत्	४. उस दासी के	अष्टाशीति	११. अट्ठासी
सुतान् ।	५. पुत्रों का	आयुषः	८. आयु का
कालः	१३. समय	समाः ।।	१२. वर्षों का

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार निवास करते हुए उस दासी के पुत्रों का लालन-पालन करते हुए उसकी आयु का बहुत बड़ा अट्ठासी वर्षों का समय बीत गया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

तस्य प्रवयसः पुत्रा दश तेषां तु योऽवमः ।
बालो नारायणो नाम्ना पित्रोश्च दयितो भृशम् ।।२४।।

पदच्छेद—

तस्य प्रवयसः पुत्राः दश तेषाम् तु यः अवमः ।
बालः नारायणः नाम्ना पित्रोः च दयितः भृशम् ।।

शब्दार्थ—

तस्य	१. उस	बालः	७. बालक
प्रवयसः	२. बूढ़े अजामिल के	नारायणः	८. नारायण
पुत्राः	४. पुत्र थे	नाम्ना	९. नाम का था
दश	३. दस	पित्रोः	१०. माता-पिता को
तेषाम्	५. उनमें	च	१२. और वह
तु	११. वह	दयितः	१४. प्रिय था
यः अवमः ।	६. जो छोटा	भृशम् ।।	१३. अत्यधिक

श्लोकार्थ—उस बूढ़े अजामिल के दस पुत्र थे । उनमें जो छोटा बालक नारायण नाम का था, वह माता-पिता को अत्यधिक प्रिय था ।

पंचविंशः श्लोकः

स बद्धहृदयस्तस्मिन्नर्भके कलभाषिणि ।
निरीक्षमाणस्तल्लीलां मुमुदे जरठो भृशम् ॥२५॥

पदच्छेद—

सः बद्ध हृदयः तस्मिन् अर्भके कलभाषिणि ।
निरीक्षमाणः तत् लीलाम् मुमुदे जरठः भृशम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह	निरीक्षमाणः	१०. देखकर (वह)
बद्धहृदयः	७. सौंप दिया था	तत्	८. उसके
हृदयः	६. हृदय	लीलाम्	९. खेल को
तस्मिन्	३. उस	मुमुदे	१२. प्रसन्न होता था
अर्भके	५. बालक को (अपना)	जरठः	२. बूढ़ा अजामिल
कलभाषिणि ।	४. मीठी-बोली बोलने वाले	भृशम् ॥	११. अत्यधिक

श्लोकार्थ—वह बूढ़ा अजामिल उस मीठी-बोली बोलने वाले बालक को अपना हृदय सौंप दिया था । उसके खेल को देखकर वह अत्यधिक प्रसन्न होता था ।

षड्विंशः श्लोकः

भुञ्जानः प्रपिबन् खादन् बालकस्नेहयन्त्रितः ।
भोजयन् पाययन्मूढो न वेदागतमन्तकम् ॥२६॥

पदच्छेद—

भुंजानः प्रपिबन् खादन् बालक स्नेह यन्त्रितः ।
भोजयन् पाययन् मूढः न वेद आगतम् अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

भुञ्जानः	४. भोजन करते समय	भोजयन्	५. भोजन करता हुआ
प्रपिबन्	८. पिलाता था इस प्रकार वह	पाययन्	७. पानी पीते समय
खादन्	६. खिलाता था	मूढः	९. मूर्ख
बालक	१. बालक के	न वेद	१२. नहीं जान सका
स्नेह	२. स्नेह से	आगतम्	१०. आयी हुई
यन्त्रितः ।	२, बंधा हुआ वह	अन्तकम ॥	११. मृत्यु को

श्लोकार्थ—इस प्रकार बालक के स्नेह से बंधा हुआ वह भोजन करते समय भोजन करता हुआ खिलाता था। जल पीते समय जल पिलाता था। इस प्रकार वह मूर्ख आयी हुई मृत्यु को नहीं जान सका ।

सप्तविंशः श्लोकः

स एवं वर्तमानोऽज्ञो मृत्युकाल उपस्थिते।
मतिं चकार तनये बाले नारायणाह्वये ।।२७।।

पदच्छेद---

स एवम् वर्तमानः अज्ञः मृत्युकाले उपस्थिते।
मतिम् चकार तनये बाले नारायण आह्वये।।

शब्दार्थ---

सः	१. वह	मतिम्	११. बुद्धि से
एवम्	३. इस प्रकार	चकार	१२. सोचने लगा
वर्तमानः	६. देखकर	तनये	७. पुत्र
अज्ञः	२. अज्ञ नी अजामिल	बाले	८. बालक
मृत्युकाले	४. मृत्यु का समय	नारायण	९. नारायण के
उपस्थिते।	५. उपस्थित हुआ	आह्वये।।	१०. सम्बन्ध में

श्लोकार्थ—वह अज्ञानी अजामिल मृत्यु का समय उपस्थित हुआ देखकर पुत्र बालक नारायण के सम्बन्ध में बुद्धि से सोचने लगा।

अष्टाविंशः श्लोकः

स पाशहस्तांस्त्रीन्दृष्ट्वा पुरुषान् भृशदारुणान्।
वक्रतुण्डानूर्ध्वरोम्ण आत्मानं नेतुमागतान् ।।२८।।

पदच्छेद---

सः पाशहस्तान् त्रीन् दृष्ट्वा पुरुषान् भृश दारुणान्।
वक्र तुण्डान् ऊर्ध्वरोम्णः आत्मानम् नेतुम् आगतान्।।

शब्दार्थ---

सः	१. उसने	दारुणान्।	११. भयंकर
पाश	३. पाश लिये हुए	वक्र	४. टेढ़े
हस्तान्	२. हाथों में	तुण्डान्	५. मुख वाले
त्रीन्	१२. तीन	ऊर्ध्वरोम्णः	६. उठे हुए रोएं वाले
दृष्ट्वा	१४. देखा	आत्मानम्	७. अपने को
पुरुषान्	१३. पुरुषों को	नेतुम्	८. ले जाने के लिए
भृश	१०. अत्यधिक	आगतान्।।	९. आये हुए

श्लोकार्थ—उसने हाथों में पाश लिए हुए टेढ़े मुखवालें, उठे हुए रोएं वाले, अपने को ले जाने के लिए आये हुए अत्यधिक भयंकर तीन पुरुषों को देखा।

एकोनत्रिंश: श्लोकः

दूरे क्रीडनकासक्तं पुत्रं नारायणाह्वयम् ।
प्लावितेन स्वरेणोच्चैराजुहावाकुलेन्द्रियः ॥२९॥

पदच्छेद---

दूरे क्रीडनक आसक्तम् पुत्रम् नारायण आह्वयम् ।
प्लावितेन स्वरेण उच्चैः आजुहाव आकुल इन्द्रियः ॥

शब्दार्थ---

दूरे	३. दूर	प्लावितेन	९. बहुत
क्रीडनक	४. खेलने में	स्वरेण	११. स्वर से
आसक्तम्	५. लगे हुए	उच्चैः	१०. ऊँचे
पुत्रम्	८. पुत्र को	आजुहाव	१२. पुकारने लगा।
नारायण	६. नारायण	आकुल	१. व्याकुल
आह्वयम् ।	७. नामक	इन्द्रियः ॥	२. इन्द्रियों वाला (अजामिल)

श्लोकार्थ---व्याकुल इन्द्रियों वाला अजामिल दूर खेलने में लगे हुए नारायण नामक पुत्र को बहुत ऊँचे स्वर से पुकारने लगा।

त्रिंशः श्लोकः

निशम्य म्रियमाणस्य ब्रुवतो हरिकीर्तनम् ।
भर्तुर्नाम महाराज पार्षदाः सहसाऽऽपतन् ॥३०॥

पदच्छेद---

निशम्य म्रियमाणस्य ब्रुवतः हरिकीर्तनम् ।
भर्तुः नाम महाराज पार्षदाः सहसा आपतन् ॥

शब्दार्थ---

निशम्य	६. सुनकर	भर्तुः नाम	२. अपने स्वामी का नाम
म्रियमाणस्य	१. मरे हुए अजामिल को	महाराज	७. भगवान् के
ब्रुवतः	३. लेते हुए (और)	पार्षदाः	८. पार्षद
हरि	४. भगवान् के नाम का	सहसा	९. अकस्मात्
कीर्तनम् ।	५. कीर्तन करते हुए	आपतन् ॥	१०. आ पहुंचे

श्लोकार्थ—मरे हुए अजामिल को अपने स्वामी का नाम लेते हुए और भगवान् के नाम का कीर्तन करते हुए सुनकर भगवान् के पार्षद अकस्मात् आ पहुंचे।

एकत्रिंशः श्लोकः

विकर्षतोऽन्तर्हृदद्दासीपतिमजामिलम् ।
यमप्रेष्यान् विष्णुदूता वारयामासुरोजसा ।।३१।।

पदच्छेद---

विकर्षतः अन्तर् हृदयात् दासी पतिम् अजामिलम् ।
यम प्रेष्यान् विष्णु दूताः वारयामासुः ओजसा ।।

शब्दार्थ---

विकर्षतः	६. खींचते हुये	यम	७. यमराज के
अन्तर्	४. सूक्ष्म	प्रेष्यान्	८. दूतों को
हृदयात्	५. शरीर को	विष्णु	९. भगवान् विष्णु के
दासी	१. दासी	दूताः	१०. दूतों नें
पतिम्	२. पति	वारयामासुः	१२. रोक दिया
अजामिलम् ।	३. अजामिल के	ओजसा ।।	११. बल पूर्वक

श्लोकार्थ—दासी पति अजामिल के सूक्ष्म शरीर को खींचते हुए यमराज के दूतों को भगवान् विष्णु के दूतों ने बल पूर्वक रोक दिया ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

ऊचुर्निषेधितास्तांस्ते वैवस्वतपुरःसराः ।
के यूयं प्रतिषेद्धारो धर्मराजस्य शासनम् ।।३२।।

पदच्छेद—

ऊचुः निषेधिताः तान् ते वैवस्वत पुरः सराः ।
के यूयम् प्रतिषेद्धारः धर्मराजस्य शासनम् ।।

शब्दार्थ---

ऊचुः	५. कहा कि	के	१०. कौन हो
निषेधिताः	२. रोकनें पर	यूयम्	९. तुम लोग
तान्	१. उनके	प्रतिषेद्धारः	८. निषेध करने वाले
ते वैवस्वत	३. उन यमराज के	धर्मराजस्य	६. धर्म राज की
पुरः सराः ।	४. दूतों ने	शासनम् ।।	७. आज्ञा का

श्लोकार्थ—उनके रोकने पर उन यमराज के दूतों ने कहा कि धर्मराज की आज्ञा का निषेध करने वाले तुम लोग कौन हो ?

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कस्य वा कुत आयाताः कस्मादस्य निषेधथ ।
किं देवा उपदेवा वा यूयं किं सिद्धसत्तमाः ।।३३।।

पदच्छेद—

कस्य वा कुतः आयाताः कस्मात् अस्य निषेधथ ।
किम् देवाः उपदेवाः वा यूयम् किम् सिद्ध सत्तमाः ।।

शब्दार्थ—

कस्य	२. किसके दूत हो	किम् देवाः	९. क्या कोई देवता हो
वा	३. अथवा	उपदेवाः	११. उपदेवता हो
कुतः	४. कहाँ से	वा	१०. अथवा
आयाताः	५. आये हो	यूयम्	१. तुम लोग
कस्मात्	७. किसलिए	किम्	१२. अथवा
अस्य	६. इसका	सिद्ध	१४. सिद्ध हो
निषेधथ ।	८. निपेध कर रहे हो	सत्तमाः ।।	१३. श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—तुम लोग किसके दूत हो, अथवा कहाँ से आये हो ? इसका किसलिए निपेध कर रहे हो ? क्या कोई देवता हो अथवा उपदेवता हो, अथवा श्रेष्ठ सिद्ध हो ?

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

सर्वे पद्मपलाशाक्षाः पीतकौशेयवाससः ।
किरीटिनः कुण्डलिनो लसत्पुष्करमालिनः ।।३४।।

पदच्छेद—

सर्वे पद्म पलाश अक्षाः पीतकौशेय वाससः ।
किरीटिनः कुण्डलिनः लसत्पुष्कर मालिनः ।।

शब्दार्थ—

सर्वे	१. सभी	किरीटिनः	६. मुकुट
पद्म	२. कमल	कुण्डलिनः	७. कुण्डल
पलाश अक्षाः	३. दल के समान नेत्र वाले हों (तथा)	लसत्	१०. सुशो त हो रहे हों
पीत कौशेय	४. पीले रेशमी	पुष्कर	८. कमल की
वाससः ।	५. वस्त्र	मालिनः ।।	९. माला से

श्लोकार्थ—सभी कमल दल के समान नेत्र वाले हों। तथा सभी पीले-रेशमी वस्त्र, मुकुट, कुण्डल, कमल की माला से सुशोभित हो रहे हों।

पंचत्रिंशः श्लोकः

सर्वे च नूत्नवयसः सर्वे चारुचतुर्भुजाः ।
धनुर्निषङ्गासिगदाशङ्खचक्राम्बुजश्रियः ।।३५।।

पदच्छेद—

सर्वे च नूत्न वयसः सर्वे चारु चतुर्भुजाः ।
धनुर्निषङ्ग असि गदा शङ्ख चक्र अम्बुजश्रियः ।।

शब्दार्थ—

सर्वे	२. सबकी	धनुर्निषङ्ग	८. धनुष-तरकस
च	१. और	असि	९. तलवार
नूत्न	३. नई	गदा	१०. गदा
वयसः	४. अवस्था है	शङ्ख	११. शङ्ख
सर्वे	५. सभी लोग	चक्र	१२. चक्र और
चारु	६. सुन्दर	अम्बुज	१३. कमल से
चतुर्भुजाः ।	७. चार भुजाओं वाले हो	श्रियः ।।	१४. सुशोभित

श्लोकार्थ—और सबकी नयी अवस्था है। सभो लोग सुन्दर चार भजाओं वाले हैं। सभी धनुष तरकस, तलवार, गदा, शंख, चक्र और कमल से सुशोभित हैं।

षट्त्रिंशः श्लोकः

दिशो वितिमिरालोकाः कुर्वन्तः स्वेन रोचिषा ।
किमर्थं धर्मपालस्य किङ्करान्नो निषेधथ ।।३६।।

पदच्छेद—

दिशः वितिमिर आलोकाः कुर्वन्तः स्वेन रोचिषा ।
किम् अर्थम् धर्म पालस्य किङ्करान् नः निषेधथ ।।

शब्दार्थ—

दिशः	२. दिशाओं के	किम् अर्थम्	९. किसलिए
वितिमिर	३. अन्धकार और	धर्म पालस्य	६. यमराज के
आलोकाः	४. प्रकाश को (दूर)	किङ्करान्	७. सेवक
कुर्वन्तः	५ कर रहे हों	नः	८. हम लोगों को
स्वेन रोचिषा ।	१. अपनी कान्ति से	निषेधथ ।।	१०. रोक रहे हो।

श्लोकार्थ—अपनी कान्ति से दिशाओं के अन्धकार और प्रकाश को दूर कर रहे हो। यमराज के सेवक हम लोगों को किसलिए रोक रहे हो ?

सप्तत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इत्युक्ते यमदूतैस्तैर्वासुदेवोक्तकारिणः ।
तान् प्रत्यूचुः प्रहस्येदं मेघनिर्ह्रादया गिरा ।।३७।।

पदच्छेद—

इति उक्ते यतदूतैः तैः वासुदेव उक्त कारिणः।
तान् प्रति ऊचुः प्रहस्य इदम् मेघ बिर्ह्लादया गिरा ।।

शब्दार्थ—

इति	२. ऐसा	तान्	८. उन यमदूतों के
उक्ते	३. कहने पर	प्रति	९. प्रति
यमदूतैः	१. यमदूतों के द्वारा	ऊचुः	१४. बोले
तैः	४. वे	प्रहस्य	१०. हँसकर
वासुदेव	५. भगवान् विष्णु के	इदम्	१३. यह
उक्त	६. आज्ञा	मेघ	११. बादल के समान
कारिणः।	७. कारी पार्षद	निर्ह्रादया गिरा।	१२. गम्भीर वाणी में

श्लोकार्थ—यमदूतों के द्वारा ऐसा कहने पर वे भगवान् विष्णु के आज्ञाकारी पार्षद उन यमदूतों के प्रति हंसकर बादल के समान गम्भीर वाणी में यह बोले।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

विष्णुदूता ऊचुः

यूयं वै धर्मराजस्य यदि निर्देशकारिणः ।
ब्रूत धर्मस्य नस्तत्त्वं यच्च धर्मस्य लक्षणम् ।।३८।।

पदच्छेद—

यूयम् वै धर्मराजस्य यदि निर्देशकारिणः।
ब्रूत धर्मस्य नः तत्त्वम् यत् च धर्मस्य लक्षणम् ।।

शब्दार्थ---

यूयम्	२. तुम लोग	धर्मस्य	७. धर्म का
वै	३. निश्चय ही	नः	६. हमको
धर्मराजस्य	४. यमराज के	तत्त्वम्	८. तत्त्व
यदि	१. यदि	यत्	१०. जो
निदशकारिणः	५. आज्ञाकारी हो (तो)	च	९. और
ब्रूत	१२. बताओ	धर्मस्य लक्षणम् ।।	११. धर्म का लक्षण है (उसे)

श्लोकार्थ---यदि तुम लोग निश्चय ही, यमराज के आज्ञाकारी हो तो हमको धर्म का तत्त्व और जो धर्म का लक्षण है उसे बताओ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कथंस्विद् ध्रियते दण्डः किं वास्य स्थानमीप्सितम् ।
दण्ड्याः किं कारिणः सर्वे आहोस्वित्कतिचिन्नृणाम् ।।३६।।

पदच्छेद---

कथंस्विद् ध्रियते दण्डः किम् वा अस्य स्थानम् ईप्सितम् ।
दण्ड्याः किम् कारिणः सर्वे आहोस्वित् कतिचित् नृणाम् ।।

शब्दार्थ---

कथंस्विद्	२. किस प्रकार	दण्ड्याः	१०. दण्ड के
ध्रियते	३. दिया जाता है	किम्	८. क्या
दण्डः	१. दण्ड	कारिणः	११. अधिकारी हैं
किम्	७. कौन है	सर्वे	९. सभी
वा अस्य	४. अथवा इसका	आहोस्वित्	१२. अथवा
स्थानम्	६. पात्र	कतिचित्	१३. कुछ ही
ईप्सितम् ।	५. अभीष्ट	नृणाम् ।।	१४. मनुष्य हैं

श्लोकार्थ---दण्ड किस प्रकार दिया जाता है, अथवा इसका अभीष्ट पात्र कौन है, क्या सभी दण्ड के अधिकारी हैं, अथवा कुछ ही मनुष्य हैं ।

यमदूता ऊचुः

चत्वारिंशः श्लोकः

वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः ।
वेदो नारायणः साक्षात्स्वयम्भूरिति शुश्रुम ।।४०।।

पदच्छेद---

वेदप्रणिहितो धर्मः हि अधर्मः तद् विपर्ययः ।
वेदः नारायणः साक्षात् स्वयम्भूः इति शुश्रुम ।।

शब्दार्थ---

वेद	१. वेदों ने जिसका	वेदः	७. वेद ही
प्रणिहितो	२. विधान किया है	नारायणः	९. नारायण (तथा)
धर्मः	३. वे धर्म हैं	साक्षात्	८. साक्षात्
हि अधर्मः	४. अधर्म	स्वयम्भूः	१०. स्वयम् उत्पन्न हुए हैं
तद्	५. उससे	इति	११. ऐसा
विपर्ययः ।	६. विपरीत है	शुश्रुम ।।	१२. सुना जाता है

श्लोकार्थ---वेदों ने जिसका विधान किया है वे धर्म हैं, अधर्म उससे विपरीत है । वेद ही साक्षात् नारायण तथा स्वयम् उत्पन्न हुए हैं, ऐसा सुना जाता है ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

येन स्वधाम्न्यमी भावा रजः सत्त्वतमोमयाः ।
गुणनामक्रियारूपैर्विभाव्यन्ते यथातथम् ।।४१।।

पदच्छेद—

येन स्वधाम्नि अमी भावाः रजः सत्त्वः तमोमयाः ।
गुण नाम क्रिया रूपैः विभाव्यन्ते यथातथम् ।।

शब्दार्थ—

येन	१. जिसके	गुण	७. वेद ही गुण
स्वधाम्नि	६. अपने आश्रय भगवान् में स्थित हैं	नाम	८. नाम और
अमी भावाः	५. ये पदार्थ	क्रिया	९. कर्म
रजः	२. रजो गुण	रूपैः	१०. रूप के द्वारा (उसका)
सत्त्वः	३. सत्त्व गुण और	विभाव्यन्ते	१२. विभाजन करते हैं
तमोमयाः ।	४. तमोमय	यथातथम् ।।	११. यथोचित

श्लोकार्थ—जिसके रजोगुण, सत्त्वगुण और तमोमय ये पदार्थ अपने आश्रय भगवान् में स्थित हैं। वेद ही गुण नाम और कर्म रूप के द्वारा उसका यथोचित विभाजन करते हैं।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

सूर्योऽग्निः खं मरुद्गावः सोमः सन्ध्याहनी दिशः ।
कं कुः कालो धर्म इति ह्येते दैह्यस्य साक्षिणः ।।४२।।

पदच्छेद—

सूर्यः अग्निः खम् मरुद् गावः सोमः सन्ध्या अहनी दिशः ।
कम् कुः कालः धर्म इति हि एते दैह्यस्य साक्षिणः ।।

शब्दार्थ—

सूर्यः	१. सूर्य	कम्	१०. जल
अग्निः	२. अग्नि	कुः	११. पृथिवी
खम्	३. आकाश	कालः	१२. काल
मरुद्	४. वायु	धर्मः	१३. धर्म
गावः	५. इन्द्रियाँ	इति	१७. ऐसा
सोमः	६. चन्द्रमा	हि	१८. ही (कहा जाता है)
सन्ध्या	७. सन्ध्या	एते	१४. ये सभी
अहनी	८. दिन-रात	दैह्यस्य	१५. जीवों के
दिशः ।	९. दिशायें	साक्षिणः ।।	१६. साक्षी हैं

श्लोकार्थ—सूर्य, अग्नि, आकाश, वायु, इन्द्रियाँ, चन्द्रमा, सन्ध्या, दिन-रात, दिशायें, जल, पृथिवी, काल, धम ये सभी जीवों के साक्षी हैं, ऐसा ही कहा जाता है।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

एतैरधर्मो विज्ञातः स्थानं दण्डस्य युज्यते ।
सर्वे कर्मानुरोधेन दण्डमर्हन्ति कारिणः ॥४३॥

पदच्छेद—

एतैः अधर्मः विज्ञातः स्थानम् दण्डस्य युज्यते ।
सर्वे कर्म अनुरोधेन दण्डम् अर्हन्ति कारिणः ॥

शब्दार्थ—

एतैः	१. इनके द्वारा	सर्वे	७. सभी मनुष्य
अधर्मः	२. अधर्म का	कर्म	८. कर्म के
विज्ञातः	३. ज्ञान होता है (और)	अनुरोधेन	९. अनुसार
स्थानम्	५. पात्र का	दण्डम्	१०. दण्ड के
दण्डस्य	४. दण्ड के	अर्हन्ति	१२. होते हैं
युज्यते ।	६. निर्णय होता है	कारिणः ॥	११. अधिकारी

श्लोकार्थ—इनके द्वारा अधर्म का ज्ञान होता है और दण्ड के पात्र का निर्णय होता है, सभी मनुष्य कर्म के अनुसार दण्ड के अधिकारी होते हैं ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

सम्भवन्ति हि भद्राणि विपरीतानि चानघाः ।
कारिणां गुणसङ्गोऽस्ति देहवान् न ह्यकर्मकृत् ॥४४॥

पदच्छेद—

सम्भवन्ति हि भद्राणि विपरीतानि च अनघाः ।
कारिणाम् गुणसङ्गः अस्ति देहवान् न हि अकर्मकृत् ॥

शब्दार्थ—

सम्भवन्ति हि	७. (सभी से) सम्भव है	कारिणाम्	२. कर्म करने वाले प्राणियों का
भद्राणि	४. पुण्य	गुणसङ्गः अस्ति	३. गुणों से सङ्ग रहता है इसलिये
विपरीतानि	६. पाप	देहवान्	८. शरीरधारी प्राणी
च	५. और	न हि	१०. नहीं रह सकता है,
अनघाः	१. हे पापरहित पुरुषो !	अकर्मकृत् ।	९. कर्म किये बिना

श्लोकार्थ—हे पाप रहित पुरुषो ! कर्म करने वाले प्राणियों का गुणों से सङ्ग रहता है । इसलिए पुण्य और पाप सभी से सम्भव है । शरीरधारी प्राणी कर्म किये बिना नहीं रह सकता है ।

पंचचत्वारिंशः श्लोकः

येन यावान् यथाधर्मो धर्मो वेह समीहितः ।
स एव तत्फलं भुङ्क्ते तथा तावदमुत्र वै ॥४५॥

पदच्छेद--

येन यावान् यथा अधर्मः धर्मः वा इह समीहितः ।
सः एव तत्फलम् भुङ्क्ते तथा तावत् अमुत्र वै ॥

शब्दार्थ--

येन	१. जो नुष्य	सः	९. वह
यावान्	४. जितना	एव	१४. ही
यथा	३. जिस प्रकार	तत्	१२. उसका
अधर्मः	५. पाप	फलम् भुङ्क्ते	१६. फल भोगता है
धर्मः	७. धर्म	तथा	१५. वैसा
वा	६. अथवा	तावत्	१३. उतना
इह	२. इस लोक भ	अमुत्र	१०. परलोक में
समीहितः ।	८. करता है	वै ॥	११. निश्चित ही

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस लोक में जिस प्रकार जितना पाप अथवा धर्म करता है वह परलोक में निश्चित ही उसका उतना ही वैसा फल भोगता है ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

यथेह देवप्रवरास्त्रैविध्यमुपलभ्यते ।
भूतेषु गुणवैचित्र्यात्तथान्यत्रानुमीयते ॥४६॥

पदच्छेद—

यथा इह देव प्रवराः त्रैविध्यम् उपलभ्यते ।
भूतेषु गुण वैचित्र्यात् तथा अन्यत्र अनुमीयते ॥

शब्दार्थ--

यथा	४. जिस प्रकार	भुतेषु	६. प्राणी
इह	३. इस लोक में	गुण वैचित्र्यात्	२. गुणों के विभेद से
देवप्रवराः	१. हे श्रेष्ठ देवताओं !	तथा	८. उसी प्रकार
त्रैविध्यम्	५. तीन तरह के	अन्यत्र	९. परलोक में भी उनका
उपलभ्यते ।	७. दिखाई पड़ते हैं	अनुमीयते ॥	१०. अनुमान किया जाता है ।

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ देवताओ ! गुणों के विभेद से इस लोक में जिस प्रकार तीन तरह के प्राणी दिखाई पड़ते हैं उसी प्रक र परलोक में भी उनका अनुमान किया जाता है ।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

वर्तमानोऽन्ययोः कालो गुणाभिज्ञापको यथा।
एवं जन्मान्ययोरेतद्धर्माधर्मनिदर्शनम् ॥४७॥

पदच्छेद—

वर्तमानः अन्ययोः कालः गुण अभिज्ञापकः यथा।
एवम् जन्म अन्ययोः एतत् धर्म अधर्म निदर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

वर्तमानः	२. वर्तमान	**एवम्**	८. उसी प्रकार
अन्ययोः	४. भूत और भविष्य के	**जन्म**	१०. जन्म के
कालः	३. समय	**अन्ययोः**	१३. भूत और भविष्य का
गुण	५. गुणों की	**एतत्**	९. इस
अभि	६. स्थिति का	**धर्म**	१२. पुण्य
ज्ञापकः	७. अनुमान करा देता है	**अधर्म**	११. पाप और
यथा।	१. जैसे	**निदर्शनम्॥**	१४. अनुमान करा देता है

श्लोकार्थ—जैसे वर्तमान समय भूत और भविष्य के गुणों की स्थिति का अनुमान करा देता है उसी प्रकार इस जन्म के पाप और पुण्य भूत और भविष्य का अनुमान करा देता है।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मनसैव पुरे देवः पूर्वरूपं विपश्यति।
अनुमीमांसतेऽपूर्वं मनसा भगवानजः ॥४८॥

पदच्छेद—

मनसः एव पुरे देवः पूर्व रूपम् विपश्यति।
अनुमीमांसते अपूर्वम् मनसा भगवान् अजः॥

शब्दार्थ—

मनसः एव	४. मन में ही	**अनुमीमांसते**	११. अनुमान लगा लेते हैं
पुरे	५. सम्पूर्ण जीवों के	**अपूर्वम्**	१०. भावी स्वरूप का
देवः	१. हमारे स्वामी	**मनसा**	९. मन से ही वे
पूर्व	६. पूर्व	**भगवान्**	३. भगवान् यमराज
रूपम्	७. रूपों को	**अजः**	२. अजन्मा
विपश्यति।	८. देख लेते हैं (तथा)		

श्लोकार्थ—हमारे स्वामी अजन्मा भगवान् यमराज मन से ही सम्पूर्ण जीवों के पूर्व रूपों को देख लेते हैं। तथा मन से ही वे भावी स्वरूप का अनुमान लगा लेते हैं।

एकोनपंचाशः श्लोकः

यथाज्ञस्तमसा युक्त उपास्ते व्यक्तमेव हि।
न वेद पूर्वमपरं नष्टजन्मस्मृतिस्तथा ॥४९॥

पदच्छेद—

यथा अज्ञः तमसा युक्तः उपास्ते व्यक्तम् एव हि।
न वेद पूर्वम् अपरम् नष्ट जन्म स्मृतिः तथा ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जिस प्रकार	न	९. नहीं
अज्ञः	२. अज्ञानी व्यक्ति	वेद	१०. जानता है
तमसा	३. स्वप्न से	पूर्वम्अपरम्	८. पहले और बाद को
युक्तः	४. युक्त	नष्ट	१४. भूल जाता है
उपास्ते	७. वास्तविक समझता है	जन्म	१२. पूर्व जन्मों की
व्यक्तम्	५. कल्पित शरीर को	स्मृतिः	१३. स्मृति को
एव हि।	६. ही	तथा ॥	११. उसी प्रकार (जीव)

श्लोकार्थ—जिस प्रकार अज्ञानी व्यक्ति स्वप्न से युक्त कल्पित शरीर को ही वास्तविक समझता है तथा पहले को और बाद को नहीं जानता है उसी प्रकार जीव पूर्व जन्मों की स्मृति को भूल जाता है।

पंचाशः श्लोकः

पञ्चभिः कुरुते स्वार्थान् पञ्च वेदाथ पञ्चभिः।
एकस्तु षोडशेन त्रीन् स्वयं सप्तदशोऽश्नुते ॥५०॥

पदच्छेद—

पञ्चभिः कुरुते स्वार्थान् पंच वेद अथ पंचभिः।
एकः तु षोडशेन त्रीन् स्वयं सप्तदशः अश्नुते ॥

शब्दार्थ—

पंचभिः	१. (जीव) पांच कर्मेन्द्रिय के द्वारा	एकः तु	१०. अकेले ही
कुरुते	३. करता है। और	षोडशेन	७. सोलहवें मन के साथ
स्वार्थान्	२. अपने कार्यों को	त्रीन्	११. तीनों के विषयों को
पंच	५. पांच विषयों को	स्वयं	९. स्वयम्
वेद अथ	६. जानता है तथा	सप्तदशः	८. सत्रहवां (वह)
पंचभिः।	४. पाँच ज्ञानेन्द्रियों से	अश्नुते ॥	१२. भोगता है

श्लोकार्थ—जीव पाँच कर्मेन्द्रियों के द्वारा अपने कार्यों को करता है और पाँच ज्ञानेन्द्रियों से पाँच विषयों को जानता है तथा सोलहवें मन के साथ सत्रहवाँ वह स्वयम् अकेले ही तीनों के विषयों को भोगता है।

एकपंचाशः श्लोकः

तदेतत् षोडशकलं लिङ्गं शक्तित्रयं महत् ।
धत्तेऽनु संसृतिं पुंसि हर्षशोकभयार्तिदाम् ।।५१।।

पदच्छेद—

तद् एतत् षोडशकलम् लिङ्गं शक्ति त्रयम् महत्
धत्ते अनु संसृतिं पुंसि हर्ष-शोक भय अर्तिदाम्

श्लोकार्थ—

तद्	६. वह	**धत्ते**	१४. धारण करता है
एतत्	१. इस जीव का	**अनु**	१२. बार-बार
षोडशकलम्	२. सोलह कला और	**संसृति**	१३. जन्म-मृत्यु को
लिङ्ग	७. शरीर	**पुंसि**	८. प्राणियों के
शक्ति	५. गुणों वाला	**हर्ष-शोक**	९. हर्ष-शोक
त्रयम्	४. तीन	**भय**	१०. भय और
महत्।	३. महत् आदि	**अर्तिदाम्।।**	११. पीड़ा को तथा

श्लोकार्थ—इस जीव का सोलह कला और महत् आदि तीन गुणों वाला वह शरीर प्राणियों के हर्ष, शोक, भय और पीड़ा को तथा बार-बार जन्म मृत्यु को धारण करता है।

द्विपंचाशः श्लोकः

देह्यज्ञोऽजितषड्वर्गो नेच्छन् कर्माणि कार्यते ।
कोशकार इवात्मानं कर्मणाऽऽच्छाद्य मुह्यति ।।५२।।

पदच्छेद—

देही अज्ञः अजित षड्वर्गः न इच्छन् कर्माणि कार्यते।
कोशकारः इव आत्मानम् कर्मणः आच्छाद्य मुह्यति ।।

शब्दार्थ—

देही अज्ञः	१. शरीरधारी जीव अज्ञानवश	**कोशकारः**	७. रेशम के कीड़े के
अजित	३. विजय न प्राप्त करने से	**इव**	८. समान
षड्वर्गः	२. छः विकारों पर	**आत्मानम्**	९. स्वयम्
न इच्छन्	४. इच्छा न रखते हुए भी	**कर्माणि**	१०. कर्मों से
कर्माणि	५. अनेक कर्मों को	**आच्छाद्य**	११. घिर कर
कार्यते	६. करता है	**मुह्यति**	१२. मोह को प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—शरीरधारी जीव अज्ञानवश छः विकारों पर विजय न प्राप्त करने से इच्छा न रखते हुए भी अनेक कर्मों को करता है। रेशम के कीड़े के समान स्वयम् कर्मों से घिर कर मोह को प्राप्त होता है।

त्रिपंचाशः श्लोकः

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म गुणैः स्वाभाविकैर्बलात् ॥५३॥

पदच्छेद—

न हि कश्चित् क्षणम् अपि जातु तिष्ठति अकर्मकृत् ।
कार्यते हि अवशः कर्म गुणैः स्वाभाविकैः बलात् ॥

शब्दार्थ—

न हि	५. नहीं	कार्यते	१२. कराते हैं
कश्चित्	१. कोई जीव	हि अवशः	१०. विवश करके
क्षणम् अपि	४. एक क्षण भी	कर्म	११. कर्मों को
जातु	३. कभी	गुणैः	८ गुण
तिष्ठति	६. रह सकता है	स्वाभाविकैः	७. उसके स्वाभाविक
अकर्म-कृत् ।	२. बिना कर्म किये	बलात् ॥	९. बल पूर्वक

श्लोकार्थ—कोई जीव बिना कर्म किये कभी एक क्षण भी नहीं रह सकता है। उसके स्वाभाविक गुण बल पूर्वक विवश करके कार्यों को कराते हैं।

चतुष्पंचाशः श्लोकः

लब्ध्वा निमित्तमव्यक्तं व्यक्ताव्यक्तं भवत्युत ।
यथायोनि यथाबीजं स्वभावेन बलीयसा ॥५४॥

पदच्छेद—

लब्ध्वा निमित्तम् अव्यक्तम व्यक्त अव्यक्तम् भवति उत ।
यथा योनि यथा बीजम् स्वभावेन बलीयसा ॥

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	४. प्राप्त करता है	उत	७. कभी
निमित्तम्	२. संस्कारवश (जीव)	यथायोनि	८. माता के समान कभी
अव्यक्तम्	१. पूर्व जन्म के	यथा बीजम्	९. पिता के समान उसकी
व्यक्त अव्यक्तम्	३. स्थूल और सूक्ष्म शरीर को	स्वभावेन	५. उसकी स्वभाविक
भवति	१०. बना देती हैं	बलीयसा ॥	६. प्रबल वासनायें

श्लोकार्थ—पूर्व जन्म के संस्कार वश जीव स्थूल और सूक्ष्म शरीर को प्राप्त करता है। उसकी स्वाभाविक प्रबल वासनायें कभी माता के समान कभी पिता के समान उसको बना दे ी हैं।

पंचपंचाशः श्लोकः

एष प्रकृतिसङ्गेन पुरुषस्य विपर्ययः ।
आसीत् स एव नचिरादीशसङ्गाद्विलीयते ।।५५।।

पदच्छेद----

एषः प्रकृति सङ्गेन पुरुषस्य विपर्ययः।
आसीत् स एव न चिरात् ईश सङ्गात् विलीयते ।।

शब्दार्थ---

एषः	१. यह पुरुष	आसीत्	६. है
प्रकृति	२. प्रकृति के	स एव	७. वह विपर्यय ही
सङ्गेन	३. संसर्ग से (अपने को)	न चिरात्	९. शीघ्र ही
पुरुषस्य	४. पुरुष के	ईश सङ्गात्	८. ईश्वर के भजन से
विपर्ययः।	५. विपरीत मानता	विलीयते ।।	१०. दूर हो जाता है

श्लोकार्थ----यह पुरुष प्रकृति के संसर्ग से अपने को पुरुष के विपरीत मानता है। वह विपर्यय ही ईश्वर भजन से शीघ्र ही दूर हो जाता है।

षट्पंचाशः श्लोकः

अयं हि श्रुतसम्पन्नः शीलवृत्तगुणालयः ।
धृतव्रतो मृदुर्दान्तः सत्यवान्मन्त्रविच्छुचिः ।।५६।।

पदच्छेद---

अयम् हि श्रुतसम्पन्नः शीलवृत्त गुणालयः।
धृतव्रतः मृदुः दान्तः सत्यवान् मन्त्रवित् शुचिः ।।

शब्दार्थ---

अयम्	१. यह अजामिल	धृतव्रतः	६. व्रत को धारण करने वाला था
हि श्रुत	२. शास्त्र	मृदुः दान्तः	७. विनम्र जितेन्द्रिय
सम्पन्न	३. जानने वाला था	सत्यवान्	८. सत्यनिष्ठ
शीलवृत्त	४. शील-सदाचार और	मन्त्रवित्	९. मंत्रवेत्ता और
गुणालयः।	५. गुणों का खजाना था	शुचिः ।।	१०. पवित्र था

श्लोकार्थ---यह अजामिल शास्त्र जानने वाला था। शील, सदाचार और गुणों का खजाना था। व्रत धारण करने वाला था। विनम्र, जितेन्द्रिय, सत्यनिष्ठ, मन्त्रवेत्ता और पवित्र था।

सप्तपंचाशः श्लोकः

गुर्वग्न्यतिथिवृद्धानां शुश्रूषुर्निरहंकृतः ।
सर्वभूतसुहृत्साधुर्मितवागनसूयकः ॥५७॥

पदच्छेद—

गुरुअग्नि अतिथि वृद्धानाम् शुश्रूषुः निरहंकृतः ।
सर्वभत सुहृत् साधुः मित वाक् अनसूयकः ॥

शब्दार्थ—

गुरुअग्नि	२. गुरु की अग्नि को	सर्वभूत	६. सभी प्राणियों का
अतिथि	३. अतिथि की और	सुहृत्	७. मित्र और
वृद्धानाम्	४. वृद्धों की	साधुः	८. उपकारी था
शूश्रूषुः	५. सेवा करता था	मितवाक्	९. सीमित वाक्य बोलने वाला था और
निरहंकृतः ।	१. अहंकार रहित यह अजामिल	अनसूयकः ॥	१०. किसी की निन्दा नहीं करता था ।

श्लोकार्थ—अहंकार रहित यह अजामिल गुरु की, अग्नि को, अतिथि की और वृद्धों की सेवा करता था। सभी प्राणियों का मित्र और उपकारी था। सीमित वाक्य बोलने वाला था और किसी की निन्दा नहीं करता था।

अष्टपंचाशः श्लोकः

एकदासौ वनं यातः पितृसन्देशकृद् द्विजः ।
आदाय तत आवृत्तः फलपुष्पसमित्कुशान् ॥५८॥

पदच्छेद—

एकदा असौ वनम् यातः पितृ सन्देशकृत् द्विजः ।
आदाय ततः आवृत्तः फल पुष्प समित् कुशान् ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१. एक बार	आदाय	११. लेकर
असौ	२. यह	ततः	७. वहाँ से
वनम् यातः	६. वन को गया (और)	आवृत्तः	१२. लौटा
पितृ	४. पिता के	फल पुष्प	८. फल-फूल
सन्देशकृत्	५. आदेशानुसार	समित्	९. समिधा (और)
द्विजः ।	३. ब्राह्मण	कुशान् ॥	१० कुशा को

श्लोकार्थ—एक बार यह ब्राह्मण पिता के आदेशानुसार वन को गया और वहाँ से फल, फूल, समिधा और कुशा को लेकर लौटा।

एकोनषष्टितमः श्लोकः

ददर्श कामिनं कञ्चिच्छूद्रं सह भुजिष्यया ।
पीत्वा च मधु मैरेयं मदाघूर्णितनेत्रया ॥५९॥

पदच्छेद—

दर्दश कामिनम् कंचित् शूद्रम् सह भुजिष्यया ।
पीत्वा च मधु मैरेयम् मद आघूर्णित नेंत्रया ॥

शब्दार्थ—

ददर्श	१२. देखा	पीत्वा	४. पीकर
कामिनम्	११. कामी को	च	२. और
कंचित्	९. किसी	मधु	१. सुरा
शूद्रम्	१०. शूद्र	मैरेयम्	३. शराब को
सह	८. साथ	मदआघूर्णित	५. मद से घूमती हुई
भुजिष्यया ।	७. दासी के	नेंत्रया ॥	६. आखों वाली

श्लोकार्थ—वहाँ सुरा और शराब को पीकर मद से घूमती हुई आँखों वाली दासी के साथ किसी शूद्र कामी को देखा ।

षष्टितमः श्लोकः

मत्तया विश्लथन्नीव्या व्यपेतं निरपत्रपम् ।
क्रीडन्तमनु गायन्तं हसन्तमनयान्तिके ॥६०॥

पदच्छेद—

मत्तया विश्लथन् नीव्या व्यपेतम् निरपत्रपम् ।
क्रीडन्तम् अनुगायन्तम् हसन्तम् अनया अन्तिके ॥

शब्दार्थ—

मत्तया	१. मतवाली	क्रीडन्तम्	१०. क्रीड़ा कर रहा था
विश्लथन्	३. ढीले हो जाने से	अनु	९. बार-बार
नीव्या	२. कटि वस्त्र की गांठों के	गायन्तम्	७. गाता हुआ
व्यपेतम्	५. हो रही थी	हसन्तम्	८. हंसता हुआ
निरपत्रपम् ।	४. वस्त्र रहित	अनया अन्तिकें ।	६. उस दासी के समीप में (वह शूद्र)

श्लोकार्थ—मतवाली, कटि वस्त्र की गाँठों के ढीले हो जाने से वस्त्र रहित हो रही थी। उस दासी के समीप में वह शूद्र गाता हुआ, हंसता हुआ, बार-बार क्रीड़ा कर रहा था।

एकषष्टितमः श्लोकः

दृष्ट्वा तां कामलिप्तेन बाहुना परिरम्भिताम् ।
जगाम हृच्छयवशं सहसैव विमोहितः ।।६१।।

पदच्छेद---

दृष्ट्वा ताम् काम लिप्तेन बाहुना परिरम्भिताम् ।
जगाम हृच्छयवशम् सहसा एव विमोहितः ।।

शब्दार्थ---

दृष्ट्वा	५. देखकर (वह)	जगाम	१०. हो गया
ताम्	१. उसको	हृच्छयवशम्	९. कामदेव के वश में
काम लिप्तेन	२. काम में लिप्त	सहसा	६. एकाएक
बाहुना	३. भुजाओं से	एव	७. ही
परिरम्भिताम् ।	४. आलिंगित	विमोहितः ।	८. मोहित होकर

श्लोकार्थ—उसको काम में लिप्त भुजाओं से आलिंगित देखकर वह एकाएक ही मोहित होकर काम-देव के वश में हो गया ।

द्विषष्टितमः श्लोकः

स्तम्भयन्नात्मनाऽऽत्मानं यावत्सत्त्वं यथाश्रुतम् ।
न शशाक समाधातुं मनो मदनवेपितम् ।।६२।।

पदच्छेद---

स्तम्भयन् आत्मना आत्मानम् यावत् सत्त्वम् यथाश्रुतम् ।
न शशाक समाधातुम् मनः मदन वेपितम् ।।

शब्दार्थ---

स्तम्भयन्	७. रोकता हुआ	श्रुतम्	४. ज्ञान के
आत्मना	६. आत्मा को	न शशाक	१३. समर्थ नहीं हो सका
आत्मानम्	१. अपने	समाधातुम्	११. रोकने में
यावत्	३. अनुसार और	मनः	१०. मन को
सत्त्वम्	२. धैर्य के	मदन	८. कामदेव से
यथा	५. अनुसार	वेपितम्	९. कम्पित

श्लोकार्थ—यह अजामिल अपने धैर्य के अनुसार और ज्ञान के अनुसार आत्मा को रोकता हुआ कामदेव से कम्पित मन को रोकने में समर्थ नहीं हो सका ।

त्रिषष्टितमः श्लोकः

तन्निमित्तस्मरव्याजग्रहग्रस्तो विचेतनः ।
तामेव मनसा ध्यायन् स्वधर्माद्विरराम ह ।।६३।।

पदच्छेद---

तत् निमित्त स्मर व्याज ग्रह ग्रस्तः विचेतनः ।
ताम् एव मनसा ध्यायन् स्वधर्मात् विरराम ह ।।

शब्दार्थ---

तत्	१. उस वेश्या को	विचेतनः	४. चेतना-रहित
निमित्तस्मर	२. निमित्त	ताम्-एव्	७. उसी का
स्मर	५. काम	मनसा-ध्यायन्	८. मन से चिन्तन करता हुआ
व्याज	३. बनाकर	स्वधर्मात्	९. अपने धर्म से
ग्रह ग्रस्तः ।	६. पिशाच ने ग्रस लिया (अजामिल को)	विरराम ह ।।	१०. विमुख हो गया

श्लोकार्थ—उस वेश्या को निमित्त बनाकर चेतना-रहित काम पिशाच ने अजामिल को ग्रस लिया । व
अजामिल उसी का मन से चिन्तन करता हुआ अपने धर्म से विमुख हो गया ।

चतुःषष्टितमः श्लोकः

तामेव तोषयामास पित्र्येणार्थेन यावता ।
ग्राम्यैर्मनोरमैः कामैः प्रसीदेत यथा तथा ।।६४।।

पदच्छेद---

ताम् एव तोषयामास पित्र्येण अर्थेन यावता ।
ग्राम्यैः मनोरमैः कामैः प्रसीदेत यथा तथा ।।

शब्दार्थ---

ताम् एव	४. उसी वेश्या को	ग्राम्यैः मनोरमैः	६. अश्लील और सुन्दर
तोषयामास	५. प्रसन्न किया	कामैः	७. वस्त्राभूषणों से
पित्र्येण	१. पिता के	प्रसीदेत	१०. प्रसन्न करता रहा
अर्थेन	३. धन से	यथा	८. तथा जिस
यावता ।	२. सम्पूर्ण	तथा ।।	९. किसी प्रकार से उसको

श्लोकार्थ—इस अजामिल ने पिता के सम्पूर्ण धन से उसी वेश्या को प्रसन्न किया । अश्लील और सुन्दर वस
भूषणों से तथा जिस किसी प्रकार से उसको प्रसन्न करता रहा ।

पंचषष्टितमः श्लोकः

विप्रां स्वभार्यामप्रौढां कुले महति लम्भिताम् ।
विससर्जाचिरात्पापः स्वैरिण्यापाङ्गविद्धधीः ।।६५।।

पदच्छेद—

विप्राम् स्वभार्याम् अप्रौढाम् कुले महति लम्भिताम् ।
विससर्ज अचिरात् पापः स्वैरिण्या अपाङ्ग विद्धधीः ।।

शब्दार्थ—

विप्रान्	७. ब्राह्मण (अजामिल)	विससर्ज	१२. परित्याग कर दिया
स्वभार्याम्	१०. अपनी पत्नी का	अचिरात्	११. शीघ्र ही
अप्रौढाम्	८. नवयुवती	पापः	६. पापी
कुले	९. कुलीन	स्वैरिण्या	१. उस वेश्या के
महति	४. अनेक प्रकार से (इतना)	अपाङ्ग	२. नेत्रों के कोनों से
लम्भिताम् ।	५. लुभाया (कि)	विद्धध :।।	३. विद्ध मन को

श्लोकार्थ—उस वेश्या के नेत्रों के कोनों से विद्ध मन को अनेक प्रकार से इतना लुभाया कि पापी ब्राह्मण अजामिल ने नवयुवती कुलीन अपनी पत्नी का शीघ्र ही परित्याग कर दिया ।

षट्षष्टितमः श्लोकः

यतस्ततश्चोपनिन्ये न्यायतोऽन्यायतो धनम् ।
बभारास्याः कुटुम्बिन्याः कुटुम्बं मन्दधीरयम् ।।६६।।

पदच्छेद—

यतः ततः च उपनिन्ये न्यायतः अन्यायतः धनम् ।
बभार अस्याः कुटुम्बिन्याः कुटुम्बम् मन्द धीः अयम् ।।

शब्दार्थ—

यतः ततः	४. जिस किसी प्रकार से	बभार अस्याः	११. पालन-पोषण करता था
च	२. और	कुटुम्बिन्याः	९. उस वेश्या के
उपनिन्ये	६. प्राप्त होता था	कुटुम्बम्	१०. परिवार का
न्यायतः	१. न्याय से	मन्द धीः	८. मूर्ख अजामिल
अन्यायतः	३. अन्याय से		
धनम् ।	५. धन	अयम् ।।	७. वह

श्लोकार्थ—न्याय से और अन्याय से जिस किसी प्रकार से धन प्राप्त होता था, वह मूर्ख अजामिल उस वेश्या के परिवार का पालन-पोषण करता था ।

सप्तषष्टितमः श्लोकः

यदसौ शास्त्रमुल्लङ्घ्य स्वैरचार्यार्यगर्हितः ।
अवर्तत चिरं कालमघायुरशुचिर्मलात् ।।६७।।

पदच्छेद—

यद् असौ शास्त्रम् उल्लङ्घ्य स्वैरचारी आर्य गर्हितः।
अवर्तत चिरम् कालम् अघ आयुः अशुचिः मलात् ।।

शब्दार्थ—

यद् असौ	१. जो इस पाप ने	**अवर्तत**	१०. व्यतीत किया
शास्त्रम् उल्लङ्घ्य	२. शास्त्र का उल्लंघन करके	**चिरम् कालम्**	९. बहुत समय तक
स्वैरचारी	३. स्वच्छन्द विहार किया तथा	**अघ आयुः**	८. पापमय आयु को
आर्य	४. सज्जन पुरुषों से	**अशुचिः**	७. अपवित्र
गर्हितः ।	५. निन्दनीय	**मलात् ।।**	६. मल के समान

श्लोकार्थ—जो इस पापी ने शास्त्र का उल्लंघन करके स्वच्छन्द विहार किया तथा सज्जन पुरुषों से निन्दनीय मल के समान अपवित्र, पापमय आयु का बहुत समय तक व्यतीत किया।

अष्टषष्टितमः श्लोकः

तत एनं दण्डपाणेः सकाशं कृतकिल्बिषम् ।
नेष्यामोऽकृतनिर्वेशं यत्र दण्डेन शुद्ध्यति ।।६८।।

पदच्छेद—

ततः एनम् दण्डपाणेः सकाशम् कृत किल्बिषम्।
नेष्यामः अकृत निर्वेशम् यत्र दण्डेन शुद्ध्यति ।।

शब्दार्थ—

ततः	१. इसलिये	**नेष्यामः**	९. ले जाऊँगा
एनम्	६. इस पापी को	**अकृत**	५. न करने से
दण्डपाणेः	७. दण्डपाणि यमराज के	**निर्वेशम्**	४. प्रायश्चित्त
सकाशम्	८. समीप	**यत्र**	१०. जहाँ (यह)
कृत	२. किये हुए	**दण्डेन**	११. दण्ड के द्वारा
किल्बिषम् ।	३. पापों का	**शुद्ध्यति ।।**	१२. शुद्ध हो जायेगा

श्लोकार्थ—इसलिये किये हुए पापों का प्रायश्चित्त न करने से इस पापी को दण्डपाणि यमराज के समीप ले जाऊँगा। जहाँ यह दण्ड के द्वारा शुद्ध हो जायेगा।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां
संहितायां षष्ठे स्कन्धे अजामिलोपाख्याने
प्रथमः अध्यायः ।।१।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

एवं ते भगवद्दूता यमदूताभिभाषितम् ।
उपधार्याथ तान् राजन् प्रत्याहुर्नयकोविदाः ।।१।।

पदच्छेद—

एवम् ते भगवत् दूताः यमदूत अभिभाषितम् ।
उपधार्य अथ तान् राजन् प्रति आहुः नयकोविदाः ।।

शब्दार्थ —

एवम्	२. इस प्रकार	उपधार्य अथ	९. सुन करके
ते	४. वे	तान्	१०. उनसे
भगवत्	५. भगवान् के	राजन्	१. हे राजन् !
दूताः	६. पार्षद	प्रति	११. यह
यमदूत	७. यमदूतों के	आहुः	१२. बोले
अभिभाषितम् ।	८. अभिभाषण को	नयकोविदाः ।।	३. नीति को जानने वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार नीति को जानने वाले वे भगवान्के पार्षद यमदूतों के अभिभाषण को सुन करके उनसे यह बोले ।

द्वितीयः श्लोकः

विष्णुदूता ऊचुः

अहो कष्टं धर्मदृशामधर्मः स्पृशते सभाम् ।
यत्रादण्ड्येष्वपापेषु दण्डो यैर्ध्रियते वृथा ।।२।।

पदच्छेद—

अहो कष्टम् धर्मदृशाम् अधर्मः स्पृशते सभाम् ।
यत्र अदण्ड्येषु अपापेषु दण्डः यैः ध्रियते वृथा ।।

शब्दार्थ—

अहो	१. आश्च और	यत्र अदण्ड्येषु	७. जहाँ दण्ड रहित
कष्टम्	२. कष्ट है कि	अपापेषु	८. पाप रहित
धर्मदृशाम्	३. धर्मज्ञों की	दण्डः	११. दण्ड
अधर्मः	४. अधर्म	यैः	९. व्यक्तियों को
स्पृशते	६. प्रवेश कर रहा है	ध्रियते	१२. दिया जाता है
सभाम् ।	४. सभा में (अब)	वृथा ।।	१०. व्यर्थ ही

श्लोकार्थ—आश्चर्य और कष्ट है कि धर्मज्ञों को सभा में अब अधम प्रवेश कर रहा है। जहाँ दण्ड रहित, पापरहित व्यक्तियों को व्यर्थ ही दण्ड दिया जाता है ।

तृतीयः श्लोकः

प्रजानां पितरो ये च शास्तारः साधवः समाः ।
यदि स्यात्तेषु वैषम्यं कं यान्ति शरणं प्रजाः ।।३।।

पदच्छेद—

प्रजानाम् पितरः ये च शास्तारः साधवः समाः।
यदि स्यात् तेषु वैषम्यम् कम् यान्ति शरणम प्रजाः ।।

शब्दार्थ—

प्रजानाम्	३. प्रजाओं के	यदि	८. यदि
पितरः	४. पिता हैं	स्यात्	१०. हो जावे तो
ये	२. जो	तेषु वैषम्यम्	९. उनमें विषमता
च	१. और	कम्	१२. किसकी
शास्तारः	५. शासक हैं	यान्ति	१४. जायेगी
साधवः	६. परोपकारी तथा	शरणम्	१३. शरण में
समाः।	७. समदर्शी हैं	प्रजाः ।।	११. प्रजा

श्लोकार्थ—और जो प्रजाओं के पिता हैं, शासक हैं परोपकारी तथा समदर्शी हैं। यदि उनमें विषमता हो जाये तो प्रजा किसकी शरण में जायेगी।

चतुर्थः श्लोकः

यद्यदाचरति श्रेयानितरस्तत्तदहते ।
स यत् प्रणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।।४।।

पदच्छेद—

यत्-यत् आचरति श्रेयान्इतरः तत् तत् ईहते।
सः यत् प्रमाणम् कुरुते लोकः तत् अनुवर्तते ।।

शब्दार्थ—

यत्-यत्	२. जिस जिस प्रकार से	सः	८. वे सत् पुरुष
आचरति	३. आचरण करते हैं	यत्	९. जिसे
श्रेयान्	१. सत् पुरुष जन	प्रमाणम्	१०. प्रमाणित
इतरः	४. दूसरे लोग	कुरुते	११. करते हैं
तत्	५. उसी	लोकः	१२. लोग
तत्	६. उसो तरह का	तद्	१३. उसी का
ईहते।	७ आचरण करते हैं	अनुवर्तते ।।	१४. अनुसरण करने लगते हैं

श्लोकार्थ—सत् पुरुष जन जिस-जिस प्रकार से आचरण करते हैं, दूसरे लोग उसी तरह का आचरण करते हैं। वे सत् पुरुष जिसे प्रमाणित करते हैं, लोग उसी का अनुसरण करने लगते हैं।

पंचमः श्लोकः

यस्याङ्के शिर आधाय लोकः स्वपिति निर्वृतः ।
स्वयं धर्ममधर्मं वा न हि वेद यथा पशुः ।।५।।

पदच्छेद—

यस्य अङ्के शिरः आधाय लोकः स्वपिति निर्वृतः ।
स्वयम् धर्मम् अधर्मम् वा नहि वेद यथा पशुः ।।

शब्दार्थ—

यस्य	९. जिसकी	स्वयम्	३. स्वयम्
अङ्के	१०. गोदी में	धर्मम्	४. धर्म
शिरः	११. सिर	अधर्मम्	६. अधर्म को
आधाय	१२. रख करके	वा	५. अथवा
लोकः	८. लोग	न हि वेद	७. नहीं जानता है
स्वपिति	१४. सो जाते हैं	यथा	२. समान
निर्वृतः ।	१३. निश्चिन्त होकर	पशुः ।।	१. जीव पशु के

श्लोकार्थ—जीव पशु के समान स्वयम् धर्म अथवा अधर्म को नहीं जानता है। लोग जिसकी गोदी में सिर रख करके निश्चिन्त होकर सो जाते हैं।

षष्ठः श्लोकः

स कथं न्यर्पितात्मानं कृतमैत्रमचेतनम् ।
विश्रम्भणीयो भूतानां सघृणो द्रोग्धुमर्हति ।।६।।

पदच्छेद—

सः कथम् न्यर्पित आत्मानम् कृत मैत्रम् अचेतनम् ।
विश्रम्भणीयः भूतानाम् सघृणः द्रोग्धुम् अर्हति ।।

शब्दार्थ—

सः	९. वही	अचेतनम्	१. जो अज्ञानी
कथम्	१०. कैसे	विश्रम्भणीयः	२. विश्वास पात्र (तथा)
न्यर्पित	७. समर्पण	भूतानाम्	३. प्राणियों का
आत्मानम्	६. आत्मा	सघृणः	४. दयालु है
कृत	८. किया है	द्रोग्धुम्	११. विश्वासघात
मैत्रम् ।	५. मैत्री-भाव से (जिसे)	अर्हति ।।	१२. कर सकता है ।

श्लोकार्थ—जो अज्ञानी प्राणियों का विश्वास पात्र तथा दयालु है, मैत्री भाव से जिसे आत्म समर्पण किया है, वही कैसे विश्वासघात [illegible]र सकता है।

सप्तमः श्लोकः

अयं हि कृतनिर्वेशो जन्मकोट्यंहसामपि ।
यद् व्याजहार विवशो नाम स्वस्त्ययनं हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

अयम् हि कृत निर्वेशः जन्म कोटि अंहसाम् अपि ।
यद् व्याजहार विवशः नाम स्वस्त्ययनं हरेः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१. इसने	यद्	७. जो कि
हि कृत	६. कर लिया है	व्याजहार	१२. उच्चारण किया है
निर्वेशः	५. प्रायश्चित्त	विवशः	८. विवश होकर
जन्म	३. जन्मों के	नाम	११. नाम का
कोटि	२. करोड़ों	स्वस्त्ययनम्	९. कल्याण के धाम
अंहसाम् अपि ।	४. पापों का भी	हरेः	१०. भगवान् नारायण के

श्लोकार्थ—इसने करोड़ों जन्मों के पापों का प्रायश्चित्त कर लिया है, जो कि विवश होकर कल्याण के धा[म]
भगवान् नारायण के नाम का उच्चारण किया है।

अष्टमः श्लोकः

एतेनैव ह्यघोनोऽस्य कृतं स्यादघनिष्कृतम् ।
यदा नारायणायेति जगाद चतुरक्षरम् ॥८॥

पदच्छेद—

एतेन एव हि अघोनः अस्य कृतम् स्याद् अघनिष्कृतम् ।
यदा नारायणाय इति जगाद चतुः अक्षरम् ॥

शब्दार्थ—

एतेन	९. इतने से	निष्कृतम् ।	१२. प्रायश्चित्त
एव	१०. ही (इसने)	यदा	१. जब
हि अघोनः	४. पापी ने	नारायणाय	७. नारायण के नाम को
अस्य	३. इस	इति	२. ऐसा
कृतम्	१३. कर	जगाद	८. कहा
स्याद्	१४. लिया	चतुः	५. चार
अघ	११. पापों का	अक्षरम् ॥	६. अक्षरों वाले

श्लोकार्थ—जब ऐसा इस पापी ने चार अक्षरों वाले नारायण के नाम को कहा, इतने से ही इसने पापों [का]
प्रायश्चित्त कर लिया।

नवमः श्लोकः

स्तेनः सुरापो मित्रध्रुग् ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
स्त्रीराजपितृगोहन्ता ये च पातकिनोऽपरे ।।९।।

पदच्छेद—

स्तेनः सुरापः मित्र ध्रुग् ब्रह्महा गुरु तल्पगः ।
स्त्री राजपितृ गोहन्ता ये च पातकिनः अपरे ।।

शब्दार्थ—

स्तेनः	१. चोर	स्त्रीराज	७. स्त्री, राजा
सुरापः	२. शराबी	पितृ	८. पिता और
मित्र	३. मित्र से	गोहन्ता	९. गाय को मारने वाला
ध्रुग्	४. द्रोह करने वाला	ये च	१०. ये सभी और
ब्रह्महा	५. ब्राह्मणों का हत्यारा	पातकिनः	१२. पातकी भी भगवान् के नाम से पवित्र हो जाते हैं
गुरुतल्पगः ।	६. गुरु पत्नी गामी	अपरे ।।	११. दूसरे

श्लोकार्थ—चोर, शराबी, मित्र से द्रोह करने वाला, ब्राह्मणों का हत्यारा, गुरुपत्नीगामी, स्त्री, राजा, पिता और गाय को मारने वाला ये सभी और दूसरे पातकी भी भगवान् के नाम से पवित्र हो जाते हैं।

दशमः श्लोकः

सर्वेषामप्यघवतामिदमेव सुनिष्कृतम् ।
नामव्याहरणं विष्णोर्यतस्तद्विषया मतिः ।।१०।।

पदच्छेद—

सर्वेषाम् अपि अघवताम् इदम् एव सुनिष्कृतम् ।
नाम व्याहरणम् विष्णोः यत् तद् विषया मतिः ।।

शब्दार्थ—

सर्वेषाम्	१. सभी	नाम व्याहरणम्	९. नाम उच्चारण से ही
अपि	२. भी	विष्णोः	८. भगवान् विष्णु के
अघवताम्	२. पापों का	यत्	७. क्योंकि
इदम्	४. यह	तद्	११. उन भगवान् के
एव	५. ही	विषया	११. उन भगवान् के
सुनिष्कृतम् ।	६. सुन्दर प्रायश्चित्त है	मतिः ।।	१०. बुद्धि

श्लोकार्थ—सभी पापों का भी यह ही सुन्दर प्रायश्चित्त है क्योंकि भगवान् विष्णु के नाम उच्चारण से ही बुद्धि उन भगवान् के स्वरूप की हो जाती है।

एकादशः श्लोकः

न निष्कृतैरुदितैर्ब्रह्मवादिभिस्तथा विशुद्ध्यत्यघवान् व्रतादिभिः ।
यथा हरेर्नामपदैरुदाहृतैस्तदुत्तमश्लोकगुणोपलम्भकम् ।।११।।

पदच्छेद---

न निष्कृतैः उदितैः ब्रह्मवादिभिः तथाविशुद्ध्यति अघवान् व्रतादिभिः ।
यथा हरेः नामपदैः उदाहृतैः तद् उत्तम श्लोक गुण उपलम्भकम् ।।

शब्दार्थ---

न	८. नहीं	यथा	१०. जैसे
निष्कृतैः	५. प्रायश्चित्त	हरेः	११. नारायण के
उदितैः	६. कहा है (उससे)	नामपदैः	१२. नाम पदों के
ब्रह्म	१. ब्रह्म	उदाहृतैः	१३. उच्चारण से होती है
वादिभिः	२. वादी ऋषियों नें	तद्	१४. वह नाम
तथा	७. उस प्रकार की	उत्तम	१५. पवित्र
विशुद्ध्यति	९. शुद्धि होती है	श्लोक	१६. कीर्ति भगवान् के
अघवान्	४. पापों का	गुण	१७. गुणों का
व्रतादिभिः ।	३. व्रत आदि के द्वारा	उपलम्भकम् ।।	१८. ज्ञान कराने वाला है

श्लोकार्थ---ब्रह्मवादी ऋषियों ने व्रत आदि के द्वारा पापों का प्रायश्चित कहा है। उससे उस प्रकार की शुद्धि नहीं होती है जैसे नारायण के नाम पदों के उच्चारण से होती है। वह नाम पवित्रकीर्ति भगवान् के गुणों का ज्ञान कराने वाला है।

द्वादशः श्लोकः

नैकान्तिकं तद्धि कृतेऽपि निष्कृते मनः पुनर्धावति चेदसत्पथे ।
तत्कर्मनिर्हारमभीप्सतां हरेर्गुणानुवादः खलु सत्त्वभावनः ।।१२।।

पदच्छेद—

न ऐकान्तिकम् तद्धि कृते अपि निष्कृते मनः पुनः धावति चेत्असत्पथें ।
तत् कर्म निर्हारम् अभीप्सताम् हरेः गुणअनुवादः खलु सत्त्वभावनः ।।

शब्दार्थ---

न	९. नहीं है	तत्	१०. उन
ऐकान्तिकम्	८. चरमसीमा का प्रायश्चित्त	कर्म	११. कर्मों को
तद्धि	७. वह	निर्हारम्	१२. निर्मल करने की
कृते अपि	३. करने पर भी	अभीप्सताम्	१३. इच्छा से
निष्कृते	२. प्रायश्चित्त	हरेः गुणः	१७. भगवान् के गुणों का
मनः पुनः	४. मन फिर से	अनुवादः	१८. गान करे
धावति	६. दौड़ता है तो	खलु	१४. निश्चित ही
चेत्	१. यदि	सत्त्व	१५. सात्त्विक
असत्पथें ।	५. कुमार्ग पर	भावनः ।।	१६. भाव से

श्लोकार्थ—यदि प्रायश्चित्त करने पर भी मन फिर से कुमार्ग पर दौड़ता है तो वह चरम सीमा का प्रायश्चित्त नहीं है। उन कर्मों को निर्मूल करने की इच्छा से निश्चित ही सात्त्विक भाव से भगवान् के गुणों का गान करे।

त्रयोदशः श्लोकः

अथैनं मापनयत कृताशेषाघनिष्कृतम् ।
यदसौ भगवन्नाम म्रियमाणः समग्रहीत ।।१३।।

पदच्छेद—

अथ एनम् मा अपनयत कृत अशेषअघनिष्कृतम् ।
यद् असौ भगवन् नाम म्रियमाणः समग्रहीत् ।।

शब्दार्थ—

अथ	१. इसलिये	निष्कृतम् ।	७. प्रायश्चित्त
एनम्	२. इसको	यद्	९. जो
मा	३. मत	असौ	१०. इसने
अपनयत	४. ले जाओ (इसने)	भगवन्	१२. भगवान् के
कृत	८. कर लिया है	नाम	१३. नाम का
अशेष	५. सम्पूर्ण	म्रियमाणः	११. मरते समय
अघ	६. पापों का	समग्रहीत् ।।	१४. उच्चारण किया है ।

श्लोकार्थ—इसलिये इसको मत ले जाओ । इसने सम्पूर्ण पापों का प्रायश्चित्त कर लिया है । जो इसने मरते समय भगवान् के नाम का उच्चारण किया है ।

चतुर्दशः श्लोकः

साङ्केत्यं पारिहास्यं वा स्तोभं हेलनमेव वा ।
वैकुण्ठनामग्रहणमशेषाघहरं विदुः ।।१४।।

पदच्छेद—

साङ्केत्यम् पारिहास्यम् वा स्तोमम् हेलनम् एव वा ।
वैकुण्ठ नाम ग्रहणम् अशेष अघ हरम् विदुः ।।

शब्दार्थ—

साङ्केत्यम्	२. संकेत में	वैकुण्ठ	८. भगवान् के
पारिहास्यम्	३. हँसी में	नाम	९. नाम का
वा	४. अथवा	ग्रहणम्	१०. उच्चारण
स्तोभम्	५. संगोत आदि में	अशेष	१२. सम्पूर्ण
हेलनम्	७. अवहेलना करने में	अघ	१३. पापों को
एव	११. ही	हरम्	१४. नष्ट कर देता है
वा ।	६. अथवा	विदुः ।।	१. विद्वान् लोग कहते हैं कि

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग कहते हैं कि संकेत में, हंसी में अथवा संगोत आदि में अथवा अवहेलना करने में भगवान् के नाम का उच्चारण ही सम्पूर्ण पापों को नष्ट कर देता है ।

पंचदशः श्लोकः

पतितः स्खलितो भग्नः सन्दष्टस्तप्त आहतः ।
हरिरित्यवशेनाह पुमान्नार्हति यातनाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

पतितः स्खलितः भग्नः सन्दष्टः तप्तः आहतः ।
हरिः इति अवशेन आह पुमान् न अर्हति यातनाम् ॥

शब्दार्थ—

पतितः	१. गिरते समय	इति	११. वह
स्खलितः	२. फिसलते समय	अवशेन	९. विवश होकर
भग्नः	३. अंग-भंग होते समय	आह	१०. नाम लेता हैं
सन्दष्टः	४. विषैले जीवों के डसते समय	पुमान्	७. मनुष्य
तप्तः	५. जलने के समय	न	१३. नहीं
आहतः ।	६. चोट लगते समय जो	अर्हति	१४. प्राप्त होता है
हरिः	८. भगवान् श्रीहरि का	यातनाम्	१२. यातना को

श्लोकार्थ—गिरते समय, फिसलते समय, अंग-भंग होते समय, विषैले जीवों के डसते समय, जलने के समय जो मनुष्य भगवान् श्रीहरि का विवश होकर नाम लेता हैं वह यातना को नहीं प्राप्त होता हैं।

षोडशः श्लोकः

गुरूणां च लघूनां च गुरूणि च लघूनि च ।
प्रायश्चित्तानि पापानां ज्ञात्वोक्तानि महर्षिभिः ॥१६॥

पदच्छेद—

गुरूणाम् च लघूनाम् च गुरूणि च लघूनि च ।
प्रायश्चित्तानि पापानाम् ज्ञात्वा उक्तानि महर्षिभिः ॥

शब्दार्थ—

गुरूणाम्	३. बड़ों के लिये	प्रायश्चित्तानि	९. प्रायश्चित्त
च	५. और	पापानाम्	८. पापों का
लघूनाम् च	६. छोटों के लिये	ज्ञात्वा	१. जानकर
गुरूणि च	४. बड़ा	उक्तानि	२. कहा है
लघूनि च	७. छोटा	महर्षिभिः ॥	१०. महर्षियों ने

श्लोकार्थ—जानकार महर्षियों ने बड़ों के लिये बड़ा और छोटों के लिये छोटा पापों का प्रायश्चित्त कहा है।

सप्तदशः श्लोकः

तैस्तान्यघानि पूयन्ते तपोदानजपादिभिः ।
नाधर्मजं तद्धृदयं तदपीशाङ्घ्रिसेवया ।।१७।।

पदच्छेद—

तैः तानि अघानि पूयन्ते तपः दान जप आदिभिः ।
न अधर्मजम् तद् हृदयम् तद् अपि ईश अङ्घ्रि सेवया ।।

शब्दार्थ—

तैः	१. उस	न	१२. नहीं होता
तानि	६. वे	अधर्मजम्	९. पाप से उत्पन्न हुआ
अघानि	७. पाप	तद्	१०. उसका
पूयन्ते	८. नष्ट हो जाते हैं	हृदयम्	११. हृदय (शुद्ध)
तपः	२. तपस्या	तद् अपि	१३. वह भी
दान	३. दान	ईश	१४. भगवान् के
जप	४. जप	अङ्घ्रि	१५. चरणों की
आदिभिः ।	५. इत्यादि प्रायश्चित्तों से	सेवया ।।	१६. सेवा से शुद्ध हो जाता है

श्लोकार्थ—उस तपस्वा, दान, जप इत्यादि प्रायश्चितों से वे पाप नष्ट हो जाते हैं। पाप से उत्पन्न हुआ उसका हृदय शुद्ध नहीं होता। उन भगवान् के चरणों की सेवा से शुद्ध हो जाता है।

अष्टादशः श्लोकः

अज्ञानादथवा ज्ञानादुत्तमश्लोकनाम यत् ।
सङ्कीर्तितमघं पुंसो दहेदेधो यथानलः ।।१८।।

पदच्छेद—

अज्ञानात् अथवा ज्ञानात् उत्तमश्लोक नाम यत् ।
सङ्कीर्तितम् अघम् पुंसः दहेत् एधः यथा अनलः ।।

शब्दार्थ—

अज्ञानात्	५. अज्ञान से	सङ्कीर्तितम्	१०. संकीर्तन करने से
अथवा	६. अथवा	अघम्	१२. पाप (नष्ट हो जाते हैं)
ज्ञानात्	७. ज्ञान से	पुंसः	११. मनुष्यों के
उत्तमश्लोक	८. भगवान् के पवित्र	दहेत्	३. भस्म हो जाता है
नाम	९. नामों के	एधः	२. ईंधन
यत् ।	४. वैसे ही	यथा अनलः ।।	१. जैसे आग से

श्लोकार्थ—जैसे आग से ईंधन भस्म हो जाता है, वैसे ही अज्ञान से अथवा ज्ञान से भगवान् के पवित्र नाम के संकीर्तन से मनुष्यों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

एकोनविंशः श्लोकः

यथागदं वीर्यतममुपयुक्तं यदृच्छया ।
अजानतोऽप्यात्मगुणं कुर्यान्मन्त्रोऽप्युदाहृतः ॥१९॥

पदच्छेद—

यथा अगदम् वीर्य तमम् उपयुक्तम् यदृच्छया ।
अजानतः अपि आत्मगुणम् कुर्यात् मन्त्रः अपि उदाहृतः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	अजानतः	५. अज्ञानवश
अगदम्	३. अमृत को मनुष्य	अपि	७. तो भी अमत
वीर्यतमम्	२. शक्तिशाली	आत्मगुणम्	८. अपने समान गुणवान्
उपयुक्तम्	६. पीता है	कुर्यात्	९. कर देता है (वैसे ही)
यदृच्छया।	४. बिना इच्छा के	मन्त्रः अपि	१०. मन्त्र भी
		उदाहृतः॥	११. उच्चारण करने पर फल देता है

श्लोकार्थ—जैसे शक्तिशाली अमृत को मनुष्य बिना इच्छा के आज्ञानवश पीता है, तो भी अमृत अप समान गुणवान् कर देता है वैसे ही मन्त्र भी उच्चारण करने पर फल देता है।

विंशः श्लोकः

त एवं सुविनिर्णीय धर्मं भागवतं नृप ।
तं याम्यपाशान्निर्मुच्य विप्रं मृत्योरमूमुचन् ॥२०॥

पदच्छेद—

ते एवम् सुविनिर्णीय धर्मम् भागवतम् नृप ।
तम् याम्य पाशात् निर्मुच्य विप्रम् मृत्योः अमूमुचन् ॥

शब्दार्थ—

ते	३. वे भगवान् के पार्षद	तम् याम्य	८. यमदूतों के
एवम्	२. इस प्रकार	पाशात्	९. पाश से
सुविनिर्णीय	६. निर्णय सुनकर	निर्मुच्य	१०. छुड़ाकर
धर्मम्	५. धर्म का	विप्रम्	७. ब्राह्मण अजामिल को
भागवतम्	४. भागवत	मृत्योः	११. मृत्यु से
नृप।	१. हे राजन् !	अमूमुचन्॥	१२. बचा लिया

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार वे भगवान् के पार्षद भागवत धर्म का निर्णय सुनकर ब्राह्मण अजामिल यमदूतों के पाश से छुड़ाकर मृत्यु से बचा लिया।

एकविंशः श्लोक

इति प्रत्युदिता याम्या दूता यात्वा यमान्तिके ।
यमराज्ञे यथा सर्वमाचचक्षुररिन्दम ।।२१।।

पदच्छेद—

इति प्रतिउदिताः याम्याः दूताः यात्वायम अन्तिके ।
यमराज्ञे यथा सर्वम् आचचक्षुः अरिन्दम ।।

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	अन्तिके ।	८. पास में
प्रति	३. पार्षदों की	यमराज	१०. उनसे
उदिताः	४. बात सुनकर	यथा	११. ज्यों का त्यों
याम्याः	५. यमराज के	सर्वम्	१२. सम्पूर्ण बात को
दूताः	६. दूतों ने	आचचक्षुः	१३. सुनाया
यात्वा	९. जाकर	अरिन्दम ।।	१. हे प्रिय परीक्षित् !
यम	७. यमराज के		

श्लोकार्थ—हे प्रिय परीक्षित् ! इस प्रकार पार्षदों की बात सुनकर यमराज के दूतों ने यमराज के पास में जाकर उनसे ज्यों का त्यों सम्पूर्ण बात को सुनाया।

द्वाविंशः श्लोकः

द्विजः पाशाद्विनिर्मुक्तो गतभीः प्रकृतिं गतः ।
ववन्दे शिरसा विष्णोः किङ्करान् दर्शनोत्सवः ।।२२।।

पदच्छेद—

द्विजः पाशात्विनिर्मुक्तः गतभीः प्रकृतिम् गतः ।
ववन्दे शिरसा विष्णोः किङ्करान् दर्शन उत्सवः ।।

शब्दार्थ—

द्विजः	१. ब्राह्मण अजामिल	ववन्दे	१२. प्रणाम किया
पाशात्	२. पाशों से	शिरसा	११. सिर से
विनिर्मुक्तः	३. छूटकर	विष्णोः	७. भगवान् विष्णु के
गतभीः	४. निर्भय होकर	किङ्करान्	८. पार्षदों के
प्रकृतिम्	५. स्वस्थ	दर्शन	९. दर्शन से
गतः ।	६. हो गया	उत्सवः ।।	१०. आनन्दित होकर

श्लोकार्थ—ब्राह्मण अजामिल पाशों से छूटकर निर्भय होकर स्वस्थ हो गया। भगवान् विष्णु के पार्षदों के दर्शन से आनन्दित होकर सिर से प्रणाम किया।

त्रयोविंशः श्लोकः

तं विवक्षुमभिप्रेत्य महापुरुषकिङ्कराः ।
सहसा पश्यतस्तस्य तत्रान्तर्दधिरेऽनघ ॥२३॥

पदच्छेद—

तम् विवक्षुम् अभिप्रेत्य महापुरुष किङ्कराः ।
सहसा पश्यतः तस्य तत्र अन्तर्दधिरे अनघ ॥

शब्दार्थ—

तम्	२. उस अजामिल को	सहसा	१०. एकाएक
विवक्षुम्	३. कुछ कहने की इच्छा वाला	पश्यतः	९. देखते हुए
अभिप्रेत्य	४. जानकर	तस्य	८. उसके
महा	५. भगवान्	तत्र	११. वहाँ से
पुरुष	६. विष्णु के	अन्तर्दधिरे	१२. अन्तर्ध्यान हो गये
किङ्कराः ।	७. पार्षद	अनघ ॥	१. हे निष्पाप परीक्षित् !

श्लोकार्थ—हे निष्पाप ! परीक्षित्, उस अजामिल को कुछ कहने की इच्छा वाला जानकर भगवान् विष्णु के पार्षद उसके देखते हुए एकाएक वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गये ।

चतुर्विंशः श्लोकः

अजामिलोऽप्यथाकर्ण्य दूतानां यमकृष्णयोः ।
धर्मं भागवतं शुद्धं त्रैविद्यं च गुणाश्रयम् ॥२४॥

पदच्छेद—

अजामिलः अपि अथ आकर्ण्य दूतानाम् यम कृष्णयोः ।
धर्मम् भागवतम् शुद्धम् त्रैविद्यम् च गुण आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

अजामिलः	२. अजामिल ने	धर्मम्	९. धर्म को
अपि	३. भी	भागवतम्	८. भागवत
अथ	१. तथा	शुद्धम्	७. विशुद्ध
आकर्ण्य	१४. सुना	त्रैविद्यम्	११. वेदोक्त
दूतानाम्	६. दूतों से	च	१०. और
यम	५. यमराज के	गुण	१२. गुण
कृष्णयोः ।	४. भगवान् विष्णु के और	आश्रयम्	१३. धर्मों को

श्लोकार्थ—तथा अजामिल ने भी भगवान् विष्णु के और यमराज के दूतों से विशुद्ध भागवत धर्म को और वेदोक्त गुण धर्मों को सुना ।

पंचविंशः श्लोकः

भक्तिमान् भगवत्याशु महात्म्यश्रवणाद्धरेः ।
अनुतापो महानासीत्स्मरतोऽशुभमात्मनः ।।२५।।

पदच्छेद—

भक्तिमान् भगवति आशु महात्म्यश्रवणात् हरेः ।
अनुतापः महान् आसीत् स्मरतः अशुभम् आत्मनः ।।

शब्दार्थ—

भक्तिमान्	६. भक्तियुक्त हो गया (तथा)	अनुतापः	११. पश्चात्ताप
भगवति	१. भगवान्	महान्	१०. बड़ा
आशु	५. शीघ्र ही	आसीत्	१२. करने लगा
माहात्म्य	३. महिमा	स्मरतः	९. स्मरण करके (वह)
श्रवणात्	४. सुनसे से (वह)	अशुभम्	८. पापों को
हरेः ।	२. श्रीहरि की	आत्मनः ।।	७. अपने

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीहरि की महिमा सुनने से वह शीघ्र ही भक्तियुक्त हो गया तथा अपने पापों को स्मरण करके वह बड़ा पश्चात्ताप करने लगा ।

षड्विंशः श्लोकः

अहो मे परमं कष्टमभूदविजितात्मनः ।
येन विप्लावितं ब्रह्म वृषल्यां जायतात्मना ।।२६।।

पदच्छेद—

अहो मे परमम् कष्टम अभूत्अविजित आत्मनः ।
येन विप्लावितम् ब्रह्म वृषल्याम् जायता आत्मना ।।

शब्दार्थ—

अहो	१. अरे	येन	९. जो
मे	३. मैं	विप्लावितम्	८. नष्ट कर दिया
परमम् कष्टम्	२. बहुत कष्ट है	ब्रह्म	७. ब्राह्मणत्व को
अभूत्	५. था	वृषल्याम्	१०. दासी से
अविजित	४, इन्द्रियों का दास	जायता	१२. उत्पन्न हुआ
आत्मनः ।	६. मैंने अपने	आत्मना ।।	११. पुत्र रूप में स्वयं

श्लोकार्थ—अरे बहुत कष्ट है । मैं इन्द्रियों का दास था । मैंने अपने ब्राह्मणत्व को नष्ट कर दिया । जो दासी से पुत्र रूप में स्वयं उत्पन्न हुआ ।

सप्तविंशः श्लोकः

धिङ् मां विगर्हितं सद्भिर्दुष्कृतं कुलकज्जलम् ।
हित्वा बालां सतीं योऽहं सुरापामसतीमगाम् ।।२७।।

पदच्छेद—

धिक् माम् विगर्हितम् सद्भिः दुष्कृतम् कुलकज्जलम् ।
हित्वा बालाम् सतीम् यः अहम् सुरापाम् असतीम् अगाम् ।।

शब्दार्थ—

धिक्	७. धिक्कार है	हित्वा	११. छोड़कर
माम्	६. मुझे	बालाम्	९. अबोध
विगर्हितम्	२. निन्दित	सतीम्	१०. सती को
सद्भिः	१. सज्जनों से	यः अहम्	८. जो मैंने
दुष्कृतम्	३. पापात्मा	सुरापाम्	१२. सुरा पीने वाली
कुल	४. कुल के लिये	असतीम्	१३. कुलटा का
कज्जलम् ।	५. कलंक	अगाम् ।।	१४. संसर्ग किया

श्लोकार्थ—सज्जनों से निन्दित, पापात्मा, कुल के लिये कलंक मुझे धिक्कार है। जो मैंने अबोधसती को छोड़कर सुरा पीनें वाली कुलटा का संसर्ग किया।

अष्टाविंशः श्लोकः

वृद्धावनाथौ पितरौ नान्यबन्धू तपस्विनौ ।
अहो मयाधुना त्यक्तावकृतज्ञेन नीचवत् ।।२८।।

पदच्छेद—

वृद्धौ अनाथौ पितरौ न अन्यबन्धू तपस्विनौ ।
अहो मया अधुना त्यक्तौ अकृतज्ञेन नीचवत् ।।

शब्दार्थ—

वृद्धौ	६. वृद्ध (और)	अहो	१. आश्चर्य है कि
अनाथौ	७. अनाथ	मया	५. मेरे द्वारा
पितरौ	१०. माता-पिता का	अधुना	२. उस समय
न अन्यबन्धू	८. असहाय	त्यक्तौ	११. परित्याग कर दिया गया
तपस्विनौ	९. तपस्वी	अकृतज्ञेन	४. कृतघ्न
		नीचवत्	३. नीचों के समान

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि उस समय नीचों के समान कृतघ्न मेरे द्वारा वृद्ध और अनाथ, असहाय, तपस्वी माता-पिता का परित्याग कर दिया गया।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सोऽहं व्यक्तं पतिष्यामि नरके भृशदारुणे ।
धर्घ्मनाः कामिनो यत्र विन्दन्ति यमयातनाः ।।२९।।

पदच्छेद—

सः अहम् व्यक्तम् पतिष्यामि नरके भृशदारुणे ।
धर्घ्मनाः कामिनः यत्र विन्दन्ति यमयातनाः ।।

शब्दार्थ—

सः	१. (अब) वही	धर्मघ्नाः	८. धर्म को नष्ट करने वाले
अहम्	२. मैं	कामिनः	९. कामी पुरुष
व्यक्तम्	३. निश्चित रूप से	यत्र	७. जहाँ
पतिष्यामि	६. गिरूंगा	विन्दन्ति	१२. भोगते हैं
नरके	५. नरक में	यम	१०. यम की
भृशदारुणे ।	४. अत्यधिक भयावने	यातनाः ।।	११. यातना को

श्लोकार्थ—अब वही मैं निश्चित रूप से अत्यधिक भयावने नरक में गिरूंगा। जहाँ धर्म को नष्ट करने वाले कामी पुरुष यम की यातना को भोगते है ।

त्रिंशः श्लोकः

किमिदं स्वप्न आहोस्वित् साक्षाद् दृष्टमिहाद्भुतम् ।
क्व याता अद्य ते ये मां व्यकर्षन् पाशपाणयः ।।३०।।

पदच्छेद—

किम् इदम् स्वप्नः आहोस्वित् साक्षात् दृष्टम् इह अद्भुतम् ।
क्व याताः अद्य ते ये माम् व्यकर्षन् पाश पाणयः ।।

शब्दार्थ—

किम्	५. क्या	क्व	१५. कहाँ
इदम्	६. यह	याताः	१६. चले गये
स्वप्नः	७. स्वप्न है	अद्य	२. अभी
आहोस्वित्	८. अथवा	ते	१४. वे
साक्षात्	९. प्रत्यक्ष अनुभव है	ये	१०. जो
दृष्टम्	४. दृश्य देखा	माम्	११. मुझको
इह	१. यहाँ	व्यकर्षन्	१३. खींच रहे थे
अद्भुतम् ।	३. अद्भुत	पाश पाणयः ।।	१२. पाशयुक्त हाथों से

श्लोकार्थ—मैंने यहाँ अभी अद्भुत दृश्य देखा। क्या यह स्वप्न है अथवा प्रत्यक्ष अनुभव है। जो मुझको पाशयुक्त हाथों से खींच रहे थे, वे कहाँ चले गये।

एकत्रिंशः श्लोकः

अथ ते क्व गताः सिद्धाश्चत्वारश्चारुदर्शनाः ।
व्यमोचयन्नीयमानं बद्ध्वा पाशैरधो भुवः ॥३१॥

पदच्छेद—

अथ ते क्व गताः सिद्धाः चत्वारः चारु दर्शनाः ।
व्यमोचयन् नीयमानम् बद्ध्वा पाशैः अधोभुवः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. और	व्यमोचयन्	७. छुड़ा लिया
ते	९. वे	नीयमानम्	६. ले जाते हुये मुझे
क्व	१२. कहाँ	बद्ध्वा	३. बाँध कर
गताः	१३. चले गये	पाशैः	२. पाशों के द्वारा
सिद्धाः	११. सिद्ध	अधो	५. नीचे
चत्वारः	१०. चारों	भुवः ॥	४. पृथ्वी के
चारुदर्शनाः ।	८. सुन्दर दर्शन वाले		

श्लोकार्थ—और पाशों के द्वारा बाँध कर पृथ्वी के नीचे ले जाते हुये मुझे छुड़ा लिया। सुन्दर दर्शन वाले वे चारों सिद्ध कहाँ चले गये।

द्वात्रिंशः श्लोकः

अथापि मे दुर्भगस्य विबुधोत्तमदर्शने ।
भवितव्यम् मङ्गलेन येनात्मा मे प्रसीदति ॥३२॥

पदच्छेद—

अथ अपि मे दुर्भगस्य विबुध उत्तमदर्शने ।
भवितव्यम् मङ्गलेन येन आत्मा मे प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

अथापि	१. यद्यपि	भवितव्यम्	९. किया था
मे	२. मैं	मङ्गलेन	८. अवश्य ही (शुभ कर्म)
दुर्भगस्य	३. दुर्भाग्यशाली हूँ (फिर भी)	येन	१०. जिससे
विबुध	५. देवताओं का	आत्मा	११. आत्मा
उत्तम	४. श्रेष्ठ	मे	७. मैंने
दर्शने ।	६. दर्शन हुआ	प्रसीदति ॥	१२. प्रसन्न हो रही है

श्लोकार्थ—यद्यपि मैं दुर्भाग्यशाली हूं। फिर भी श्रेष्ठ देवताओं का दर्शन हुआ। मैंने अवश्य ही शुभ कर्म किया था। जिससे आत्मा प्रसन्न हो रही है।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अन्यथा म्रियमाणस्य नाशुचेर्वृषलीपतेः ।
वैकुण्ठनामग्रहणं जिह्वा वक्तुमिहार्हति ॥३३॥

पदच्छेद—

अन्यथा म्रियमाणस्य न अशुचेः वृषलीपतेः ।
वैकुण्ठनामग्रहणम् जिह्वा वक्तुम् इह अर्हति ॥

शब्दार्थ—

अन्यथा	१. नहीं तो	वैकुण्ठनाम	८. भगवान् नारायण के नाम का
म्रियमाणस्य	२. मरते समय	ग्रहणम्	९. उच्चारण
न	११. नहीं	जिह्वा	६. मेरी जीभ (इस समय)
अशुचेः	३. अपवित्र और	वक्तुम्	१०. करने म
वृषली	४. दासी	इह	७. यहाँ
पतेः ।	५. पति	अर्हति ॥	१२. समर्थ होती

श्लोकार्थ—नहीं तो मरते समय अपवित्र और दासी पति मेरी जीभ यहाँ भगवान् नारायण के नाम का उच्चारण करने में नहीं समर्थ होतो ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

क्व चाहं कितवः पापो ब्रह्मघ्नो निरपत्रपः ।
क्व च नारायणेत्येतद्भगवन्नाम मङ्गलम् ॥३४॥

पदच्छेद—

क्व च अहम् कितवः पापः ब्रह्मघ्नः निरपत्रपः ।
क्व च नारायणः इति एतद् भगवन् नाम मङ्गलम् ॥

शब्दार्थ—

क्व	२. कहाँ	क्व	९. कहाँ
च	१. और	च	८. और
अहम्	३. मैं	नारायण इति	१२. नारायण का
कितवः	४. कपटी	एतद्	१३. यह
पापः	५. पापी	भगवन्	११. भगवान्
ब्रह्मघ्नः	६. ब्रह्महत्यारा (तथा)	नाम	१४. नाम है
निरपत्रपः ।	७. निर्लज्ज हूँ	मङ्गलम् ॥	१०. कल्याणकारी

श्लोकार्थ—और कहाँ मैं कपटी-पापी-ब्रह्महत्यारा तथा निर्लज्ज हूँ और कहाँ कल्याणकारी भगवान् नारायण का यह नाम है ।

पंचत्रिंशः श्लोकः

सोऽहं तथा यतिष्यामि यतचित्तेन्द्रियानिलः ।
यथा न भूय आत्मानमन्धेतमसि मज्जये ।।३५।।

पदच्छेद—

स: अहम् तथा यतिष्यामि यतचित्तेन्द्रिय अनिलः ।
यथा न भूयः आत्मानम् अन्धे तमसि मज्जये ।।

शब्दार्थ—

सः	१. सो	यथा	८. जिससे कि
अहम्	२. मैं	न	१३. न
तथा	६. उसी प्रकार से	भूयः	९. पुनः
यतिष्यामि	७. प्रयत्न करूंगा	आत्मानम्	१०. अपने को
यत	५. वश में करके	अन्धे	११. अन्धकारमय
चित्तेन्द्रिय	३. मन इन्द्रियों और	तमसि	१२. भयंकर नरक में
अनिलः ।	४. प्राणों को	मज्जये ।।	१४. डालूँ

श्लोकार्थ—सो मैं मन, इन्द्रियों और प्राणों को वश में करके उसी प्रकार से प्रयत्न करूंगा, जिससे कि पुनः अपने को अन्धकारमय नरक में न डालूँ।

षष्ठत्रिंशः श्लोकः

विमुच्य तमिमं बन्धमविद्याकामकर्मजम् ।
सर्वभूतसुहृच्छान्तो मैत्रः करुण आत्मवान् ।।३६।।

पदच्छेद—

विमुच्य तम् इमम् बन्धम् अविद्याकामकर्मजम् ।
सर्वभूत सुहृत् शान्तः मैत्रः करुणः आत्यवान् ।।

शब्दार्थ—

विमुच्य	७. छोड़कर	सर्व	८. सम्पूर्ण
तम्	६. उसको	भूत	९. प्राणियों का
इमम्	४. यह	सुहृत्	१०. हित करूंगा
बन्धम्	५. बन्धन है	शान्त	११. शान्त
अविद्या	१. अविद्या	मैत्रः	१२. मैत्री
काम	२. काम और	करुणः	१३. करुणा (और)
कर्मजम् ।	३. कर्म से (उत्पन्न हुआ)	आत्मवान्।।	१४. संयम के साथ रहूँगा

श्लोकार्थ—अविद्या, काम और कर्म से उत्पन्न हुआ यह बन्धन है। उसको छोड़कर सम्पूर्ण प्राणियों का हित करूंगा। शांत, मैत्री, करुणा और संयम के साथ रहूँगा।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

मोचये ग्रस्तमात्मानं योषिन्मय्याऽऽत्ममायया ।
विक्रीडितो ययैवाहं क्रीडामृग इवाधमः ॥३७॥

पदच्छेद—

मोचये ग्रस्तम् आत्मानम् योषित्मय्या आत्ममायया ।
विक्रीडितः यया एव अहम् क्रीडामृगः इव अधमः ॥

शब्दार्थ—

मोचये	७. मुक्त करूँगा	विक्रीडितः	१४. नचाया है
ग्रस्तम्	५. ग्रसा हुआ	यया एव	८. जिस माया ने
आत्मानम्	६. अपने को	अहम्	९. मुझ
योषित्	३. स्त्री के	क्रीडा	११. क्रीडा
मय्या	४. रूप में	मृग	१२. मृग के
आत्म	१. भगवान् की	इव	१३. समान
मायया ।	२. माया के द्वारा	अधमः ॥	१०. नीच को

श्लोकार्थ—भगवान् की माया के द्वारा स्त्री के रूप में ग्रसे हुए अपने को मुक्त करूँगा। जिस माया ने मुझ नीच को क्रीडा मृग के समान नचाया है।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

ममाहमिति देहादौ हित्वा मिथ्यार्थधीर्मतिम् ।
धास्ये मनो भगवति शुद्धं तत्कीर्तनादिभिः ॥३८॥

पदच्छेद—

मम अहम् इति देह आदौ हित्वा मिथ्या अर्थधीः मतिम् ।
धास्ये मनः भगवति शुद्धम् तत् कीर्तन आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

मम	१. मेरा	मतिम्	८. मति को
अहम्	२. मैं	धास्ये	१६. लगाऊंगा।
इति	३. यह	मनः	१४. मन को
देह	४. शरीर	भगवति	१५. भगवान् में
आदौ	५. आदि के	शुद्धम्	१३. शुद्ध
हित्वा	९. छोड़कर	तत्	१०. उन भगवान् के
मिथ्या	६. मिथ्या	कीर्तन	११. कीर्तन
अर्थ धीः	७. धनयुक्त बुद्धि (और)	आदिभिः ॥	१२. इत्यादि से

श्लोकार्थ—मेरा मैं यह शरीर आदि के मिथ्या, धनयुक्त बुद्धि और मति को छोड़कर उन भगवान् के कीर्तन इत्यादि से शुद्ध मन को भगवान् में लगाऊंगा।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इति जातसुनिर्वेदः क्षणसङ्गेन साधुषु ।
गङ्गाद्वारमुपेयाय मुक्तसर्वानुबन्धनः ॥३९॥

पदच्छेद—

इति जात सुनिर्वेदः क्षण सङ्गेन साधुषु।
गङ्गाद्वारम् उपेयाय मुक्त सर्व अनुबन्धनः ॥

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार	गङ्गाद्वारम्	१०. पश्चात्ताप
जात	६. उत्पन्न हो गया (और वे)	उपेयाय	११. चले गये
सुनिर्वेदः	५. सुन्दर वैराग्य	मुक्त	१२. छोड़कर
क्षण	३. क्षण भर के	सर्व	७. सभी
सङ्गेन	४. सङ्ग से (उन्हें)	अनुबन्धनः ॥	८. बन्धनों को
साधुषु।	२. भगवान् विष्णु के		

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् विष्णु के पार्षदों के क्षण भर के सङ्ग से उन्हें सुन्दर वैराग्य उत्पन्न हो गया। और वे सभी बन्धनों को छोड़ कर हरिद्वार चले गये।

चत्वारिंशः श्लोकः

स तस्मिन् देवसदन आसीनो योगमाश्रितः ।
प्रत्याहृतेन्द्रियग्रामो युयोज मन आत्मनि ॥४०॥

पदच्छेद—

सः तस्मिन् देवसदनें आसीनः योगम् आश्रितः।
प्रत्याहृत इन्द्रिय ग्रामः युयोज मनः आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह अजामिल	प्रत्याहृत	९. हटाकर
तस्मिन्	२. उस	इन्द्रिय	७. इन्द्रियों के
देवसदनें	३. देव स्थान म	ग्रामः	८. समूह को विषयों से
आसीनः	४. बैठकर	युयोज	१२. लगा दिया
योगम्	५. योग का	मनः	१०. अपने मन को
आश्रितः।	६. सहारा लेकर	आत्मनि ॥	११. आत्मामें स्वयं

श्लोकार्थ—वह अजामिल उस देव स्थान में बैठकर योग का सहारा लेकर इन्द्रियों के समूह को विषयों से हटाकर अपने मन को आत्मा में लगा दिया।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

ततो गुणेभ्य आत्मानं वियुज्यात्मसमाधिना ।
युयुजे भगवद्धाम्नि ब्रह्मण्यनुभवात्मनि ।।४१।।

पदच्छेद—

ततः गुणेभ्यः आत्मानम् वियुज्य आत्मसमाधिना ।
युयुजे भगवत् धाम्नि ब्रह्मणि अनुभव आत्मनि ।।

श्लोकार्थ—

ततः	१. इसके बाद	युयुजे	१२. जोड़ दिया
गुणेभ्यः	५. विषयों से	भगवत्	९. भगवान् के
आत्मानम्	४. आत्मा	धाम्नि	१०. धाम
वियुज्य	६. अलग करके	ब्रह्मणि	११. पर ब्रह्म में
आत्म	२. अपनी	अनुभव	७. अनुभवस्वरूप
समाधिना ।	३. समाधि के द्वारा	आत्मनि ।।	८. अपनी बुद्धि के

श्लोकार्थ—इसके बाद अपनी समाधि के द्वारा आत्मा को विषयों से अलग करके अनुभवस्वरूप अपनी बुद्धि को भगवान् के धाम पर ब्रह्म में जोड़ दिया ।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

यर्ह्युपारतधीस्तस्मिन्नद्राक्षीत्पुरुषान् पुरः ।
उपलभ्योपलब्धान् प्राग् ववन्दे शिरसा द्विजः ।।४२।।

पदच्छेद—

यर्हि उपारतधीः तस्मिन् अद्राक्षीत् पुरुषान् पुरः ।
उपलभ्य उपलब्धान् प्राक् ववन्दे शिरसा द्विजः ।।

शब्दार्थ—

यर्हि	१. जब	उपलभ्य	७. उपस्थित
उपारत	४. प्रकृति से ऊपर उठ गई	उपलब्धान्	९. देखे हुये
धीः	२. छः विकारों पर	प्राक्	८. पहले
तस्मिन्	४. इच्छा न रखते हुए भी	ववन्दे	१३. प्रणाम किया
अद्राक्षीत्	५. अनेंक कर्मों को	शिरसा	१२. सिर से
पुरुषान्	६. करता है	द्विजः ।।	२. ब्राह्मण अजामिल की
पुरः ।	६. सामने		

श्लोकार्थ—जब ब्राह्मण अजामिल को बुद्धि प्रकृति से ऊपर उठ गई । उस समय सामने उपस्थित पहले देखे हुये पुरुषों को देखा और सिर से प्रणाम किया ।

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

हित्वा कलेवरं तीर्थे गङ्गायां दर्शनादनु ।
सद्यः स्वरूपं जगृहे भगवत्पार्श्ववर्तिनाम् ।।४३।।

पदच्छेद---

हित्वा कलेवरं तर्थे गङ्गायाम् दर्शनात् अनु ।
सद्यः स्वरूपम् जगृहे भगवत् पार्श्व वर्तिनाम् ।।

शब्दार्थ---

हित्वा	६. छोड़कर	सद्यः	७. तत्काल ही
कलेवरम्	५. शरीर को	स्वरूपम्	११. स्वरूप को
तीर्थे	४. तीर्थ में	जगृहे	१२. प्राप्त कर लिया
गङ्गायाम्	३. गङ्गा के किनारे	भगवत्	८. भगवान के
दर्शनात्	१. उनके दर्शन के	पार्श्व	९. पास में
अनु।	२. बाद	वर्तिनाम् ।।	१०. रहने वाले (पार्षदों के)

श्लोकार्थ----उनके दर्शन के बाद गङ्गा के किनारे तीर्थ में शरीर को छोड़ कर तत्काल ही भगवान् के पास में रहने वाले पार्षदों के स्वरूप को प्राप्त कर लिया ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

साकं विहायसा विप्रो महापुरुषकिङ्करैः ।
हैमं विमानमारुह्य ययौ यत्र श्रियः पतिः ।।४४।।

पदच्छेद---

साकम् विहायसा विप्रः महापुरुषकिङ्करैः ।
हैमम् विमानम् आरुह्य ययौ यत्र श्रियः पतिः ।।

शब्दार्थ---

साकम्	४. साथ में	विमानम्	६. विमान पर
विहायसा	८. आकाश मार्ग से	आरुह्य	७. चढ़कर
विप्रः	१. अजामिल	ययौ	१२. चले गये
महापुरुष	२. भगवान् के	यत्र	९. जहां
किङ्करैः	३. पार्षदों के	श्रियः	१०. लक्ष्मी
हैमम्	५. स्वर्णमय	पतिः ।।	११. पति (भगवान विष्णु हैं)

श्लोकार्थ—अजामिल भगवान् के पार्षदों के साथ में स्वर्णमय विमान पर चढ़कर आकाश मार्ग से जहाँ लक्ष्मी पति भगवान् विष्णु हैं, चले गये ।

पंचचत्वारिंशः श्लोकः

एवं स विप्लावितसर्वधर्मा दास्याःपतिः पतितो गर्ह्यकर्मणा ।
निपात्यमानो निरये हतव्रतः सद्यो विमुक्तो भगवन्नाम गृह्णन् ।।४५।।

पदच्छेद—

एवम् सः विप्लावित सर्वधर्मा दास्याः पतिः पतितः गर्ह्यकर्मणा।
निपात्यमानः निरये हतव्रतः सद्यः विमुक्तः भगवन् नाम गृह्णन् ।।

शब्दार्थ—

एवम्	४. इस प्रकार	कर्मणा	९. कर्मों के कारण
सः	१. उस अजामिल ने	निपात्यमानः	१३. गिराये जाते हुये
विप्लावित	५. नष्ट कर दिया था (तथा)	निरये	१२. नरक में
सर्व	२. सभी	हतव्रतः	११. नियमों के नष्ट हो जाने से
धर्मा	३. धर्मों को	सद्यः	१७. तत्काल
दास्याः	६. दासी के	विमुक्तः	१८. मुक्त हो गये
पतिः	७. स्वामी होकर	भगवन्	१४. भगवान् के
पतितः	१०. गिर गये थे	नाम	१५. नाम का
गर्ह्य	८. निन्दित	गृह्णन् ।।	१६ उच्चारण करने से

श्लोकार्थ—उस अजामिल ने सभी धर्मों को इस प्रकार नष्ट कर दिया था। तथा दासी के स्वामी होकर निन्दित कर्मों के कारण गिर गये थे। नियमों के नष्ट हो जाने से नरक में गिराये जाते हुये भगवान् के नाम का उच्चारण करने से तत्काल मुक्त हो गये ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

नातः परं कर्मनिबन्धकृन्तनं मुमुक्षतां तीर्थपदानुकीर्तनात् ।
न यत्पुनः कर्मसु सज्जते मनो रजस्तमोभ्यां कलिलं ततोऽन्यथा ।।४६।।

पदच्छेद—

न अतः परम् कर्म निबन्ध कृन्तनम् मुमुक्षताम् तीर्थपदअनुकीर्तनात्।
न यत् पुनः कर्मसु सज्जते मनः रजः तमोभ्याम् कलिलम् ततः अन्यथा ।।

शब्दार्थ—

न	१७ नहीं	यत्	८. जिससे
अतः	१. इसलिये	पुनः कर्मसु	१०. फिर से कर्मों के
परम्	५. बड़े-बड़े	सज्जते	११. पचड़ों में
कर्म निबन्ध	६. कर्मों के बन्धन को	मनः	९. मन
कृन्तनम्	७. काट देना चाहिये	रजः	१३. मनुष्य रजोगुण
ममुक्षताम्	२. मोक्ष की इच्छा वाले पुरुषों को	तमोभ्याम्	१४. तमो गुण से ग्रस्त
तीर्थ पद	३. भगवान् के तीर्थ के समान चरणों का	कलिलम्	१५. पापों का
अनुकीर्तनात् ।	४. कीर्तन करने से	ततः	१६. इसके अलावा
न	१२. नहीं (पड़ता है)	अन्यथा ।।	१८. दूसरे किसी उपाय से नष्ट होता है

श्लोकार्थ—इसलिये मोक्ष की इच्छा वाले पुरुषों को भगवान् के तीर्थ के समान चरणों का कीर्तन करने से बड़े-बड़े कर्मों के बन्धन को काट देना चाहिये। जिससे मन फिर से कर्मों के पचड़ों में नहीं पड़ता है। मनुष्य के रजोगुण एवं तमोगुण से ग्रस्त पापों का इसके अलावा दूसरे किसी उपाय से नाश नहीं होता है।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

य एवं परमं गुह्यमितिहासमथापहम् ।
शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तो यश्च भक्त्यानुकीर्तयेत् ।।४७।।

पदच्छेद—

यः एवम् परमम् गुह्यम् इतिहासम् अथ अपहम् ।
शृणुयात् श्रद्धया युक्तः यः च भक्त्या अनुकीर्तयेत् ।।

शब्दार्थ—

यः	२. यह	शृणुयात्	१२. सुनता है (या)
एवम्	१. इस प्रकार	श्रद्धया	८. श्रद्धा से
परमम्	३. अत्यधिक	युक्तः	९. युक्त होकर
गुह्यम्	४. गोपनीय	यः च	१०. जो मनुष्य
इतिहासम्	५. इतिहास	भक्त्या	११. भक्ति पूर्वक
अघ	६. पापों का	अनु	१३. कीतन करता है (वह)
अपहम् ।	७. नाश करने वाला है	कीर्तयेत् ।।	१४. मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार यह अत्यधिक गोपनीय इतिहास पापों का नाश करने वाला है । श्रद्धा से युक्त होकर जो मनुष्य भक्ति पूर्वक सुनता है या कीर्तन करता है वह मुक्त हो जाता है ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

न वै स नरकं याति नेक्षितो यमकिङ्करैः ।
यद्यप्यमङ्गलो मर्त्यो विष्णुलोके महीयते ।।४८।।

पदच्छेद—

न वै सः नरकम् याति न ईक्षितः यम किङ्करैः ।
यद्यपि अमङ्गलः मर्त्यः विष्णुलोके महीयते ।।

शब्दार्थ—

न	३. नहीं	किङ्करैः	६. दूतों के द्वारा
वै सः	१. निश्चित ही वह	यद्यपि	८. भले ही
नरकम्	२. नरक में	अमङ्गलः	९. पापी
याति	४. जाता है	मर्त्य	१०. मनुष्य हो (वह)
न ईक्षितः	७. नहीं देखा जाता है	विष्णुलोके	११. वैकुण्ठ लोक में
यम	५. यम	महीयते ।।	१२. आदर को प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—निश्चित ही वह नकर में नहीं जाता है । यमदूतों के द्वारा नहीं देखा जाता है । भले ही पापी मनुष्य हो वह वैकुण्ठ लोक में आदर को प्राप्त करता है ।

एकोनपंचाशः श्लोकः

म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन् पुत्रोपचारितम् ।
अजामिलोऽप्यगाद्धाम किं पुनः श्रद्धया गृणन् ।।४९।।

पदच्छेद---

म्रियमाणः हरे नाम गृणन् पुत्र उपचारितम् ।
अजामिलः अपि अगात् धाम किम् पुनः श्रद्धया गृणन् ।।

शब्दार्थ---

म्रियमाणः	२. मरते समय	अजामिलः अपि	१. अजामिल ने भी
हरेः	५. भगवान् नारायण के	अगात्	९. प्राप्त किया
नाम	६. नाम का	धाम	८ भगवान् के धाम को
गृणन्	७. उच्चारण करके	किम्	१२. तो बात ही क्या है
पुत्र	३. पुत्र के	पुनः श्रद्धया	१०. फिर श्रद्धा पूर्वक
उपचारितम् ।	४. बहाने	गृणन् ।	११. उच्चारण करने वालों की

श्लोकार्थ—अजामिल ने भी मरते समय पुत्र के बहाने भगवान् नारायण के नाम का उच्चारण करके भगवान् के धाम को प्राप्त किया। फिर श्रद्धा पूर्वक उच्चारण करने वालों की तो बात ही क्या है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठे स्कन्धे अजामिलोपाख्याने
द्वितीयः अध्यायः ।।२।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

निशम्य देवः स्वभटोपवर्णितम् प्रत्याह किं तान् प्रति धर्मराजः ।
एवं हताज्ञो विहितान्मुरारेर्नैदेशिकैर्यस्य वशे जनोऽयम् ॥१॥

पदच्छेद—

निशम्य देवः स्वभट उपवर्णितम् प्रत्याह किम् तान् प्रति धर्मराजः।
एवम् हत आज्ञः विहितान् मुरारेः नैदेशिकैः यस्य वशे जनः अयम् ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	११. सुनकर	एवम्	८. इस प्रकार
देवः	१३. भगवान्	हत	७. भङ्ग कर दिया
स्वभट	९. अपने दूतों से (अजामिल के)	आज्ञः	५. आदेश को
उपवर्णितम्	१०. वृत्तान्त को	विहितान्	४. दिये गये
प्रत्याह	१६. कहा	मुरारेः नैदेशिकैः	६ भगवान् विष्णु के पार्षदों ने
किम्	१५. क्या	यस्य वशे	१. जिसके वश में
तान् प्रति	१२. उनके प्रति	जनः	३. सम्पूर्ण जीव लोक है (उसके)
धर्मराजः।	१४. यमराज ने	अयम् ॥	२. यह

श्लोकार्थ—जिसके वश में यह सम्पूर्ण जीव लोक है। उसके दिये गये आदेश को भगवान् विष्णु के पार्षदों ने भङ्ग कर दिया। इस प्रकार अपने दूतों से अजामिल के वृत्तान्त को सुनकर उनके प्रति भगवान् यमराज ने क्या कहा।

द्वितीयः श्लोकः

यमस्य देवस्य न दण्डभङ्गः कुतश्चनर्षे श्रुतपूर्व आसीत् ।
एतन्मुने वृश्चति लोकसंशयं नहि त्वदन्य इति मे विनिश्चितम् ॥२॥

पदच्छेद—

यमस्य देवस्य न दण्डभङ्गः कुतश्चन ऋषे श्रुतपूर्वः आसीत्।
एएत् मुने वृश्चति लोक संशयम् न हि अन्यं इति मे विनिश्चितम् ॥

शब्दार्थ—

यमस्य	९. यमराज के	एतत्	२. ऐसा
देवस्य	८. भगवान्	मुने	१. हे मुनिवर
न	४. नहीं	वृश्चति	१६. निवारण कर सकता है
दण्डम्	१० शासन का	लोकसंशयम्	१४. लोगों के सन्देह का
भङ्गः	११. उल्लंघन किया हो	न हि	१५ नहीं
कुतश्चनऋषे	७. किसी ने भी	त्वत	१२. आपके
श्रुत	५. सुना	अन्ये	१३. अलावा कोइ अन्य
पूर्वः	३. पहले	इति मे	१७. ऐसा हमारा
आसीत्।	६ था कि	विनिश्चितम् ॥	१८. निश्चय है

श्लोकार्थ—हे मुनिवर! ऐसा पहले नहीं सुना था कि किसी ने भी भगवान् यमराज के शासन का उल्लंघन किया हो। आपके अलावा कोई अन्य लोगों के संदेह का निवारण नही कर सकता है, ऐसा हमारा निश्चय है।

तृतीयः श्लोकः

श्री शुकउवाच

भगवत्पुरुषै राजन् याम्याः प्रतिहतोद्यमाः ।
पतिं विज्ञापयामासुर्यमं संयमनीपतिम् ।।३।।

पदच्छेद—

भगवत् पुरुषैः राजन् याम्याः प्रतिहत उद्यमाः ।
पतिम् विज्ञापयामासुः यमम् संयमनी पतिम् ।।

शब्दार्थ—

भगवत् पुरुषैः	२. भगवान् के पार्षदों ने	पतिम्	८. अपने शासक
राजन्	१. हे राजन् !	विज्ञापयामासुः	१०. निवेदन किया
याम्याः	३. यमदूतों का	यमम्	९. यमराज
प्रतिहतः	५. नष्ट कर दिया (तब उन दूतों ने)	संयमनी	६. संयमनी पुरी के
उद्यमाः ।	४. प्रयत्न	पतिम् ।।	७. स्वामी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भगवान् के पार्षदों ने यमदूतों के प्रयत्न को नष्ट कर दिया । तब उन यमदूतों ने संयमनी पुरी के स्वामी अपने शासक यमराज से निवेदन किया ।

चतुर्थः श्लोकः

यमदूता ऊचुः

कति सन्तीह शास्तारो जीवलोकस्य वै प्रभो ।
त्रैविध्यं कुर्वतः कर्म फलाभिव्यक्तिहेतवः ।।४।।

पदच्छेद—

कति सन्ति इह शास्तारः जीवलोकस्य वै प्रभो ।
त्रैविध्यम् कुर्वतः कर्म फलअभिव्यक्ति हेतवः ।।

शब्दार्थ—

कति	११. कितने	त्रैविध्यम्	२. तीन प्रकार के
सन्ति इह	१२. यहाँ	कुर्वतः	४. करने वाले
शास्तारः	१०. शासक	कर्म	३. कर्मों को
जीव	१३. जीव	फल	७. फल की
लोकस्य	५. लोकों के	अभिव्यक्ति	८. अनुभूति
वै प्रभो ।	१. हे प्रभो !	हेतवः ।।	९. कराने वाले

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! तीन प्रकार के कर्मों का करने वाले जीवलोकों के फल की अनुभूति करने वाले यहाँ

पंचमः श्लोकः

यदि स्युर्बहवो लोके शास्तारो दण्डधारिणः।
कस्य स्यातां न वा कस्य मृत्युश्चामृतमेव वा ॥५॥

पदच्छेद—

यदि स्युः बहवः लोके शास्तारः दण्ड धारिणः।
कस्य स्याताम् न वा कस्य मृत्युः च अमृतम् एव वा ॥

शब्दार्थ—

यदि	१. यदि	कस्य	११. किसे
स्युः	७. हों	स्याताम्	१२. मिले
बहवः	३. वहुत	न	१४. न मिले
लोके	२. संसार में	वा कस्य	१३. अथवा किसे
शास्तारः	६. शासक	मृत्युः च	९. दुःख और
दण्ड	४. दण्ड	अमृतम् एव	१०. सुख ही
धारिणः।	५. देने वाले	वा ॥	८. तो

श्लोकार्थ—यदि संसार में वहुत दण्ड देने वाले शासक हों तो दुःख और सुख ही किसे मिले। अथवा किसे न मिले।

षष्ठः श्लोकः

किन्तु शास्तृबहुत्वे स्याद्बहूनामिह कर्मिणाम्।
शास्तृत्वमुपचारो हि यथा मण्डलवर्तिनाम् ॥६॥

पदच्छेद—

किन्तु शास्तृ बहुत्वे स्यात् बहूनाम इह कर्मिणाम्।
शास्तृत्वम् उपचारः हि यथा मण्डल वर्तिनाम् ॥

शब्दार्थ—

किन्तु	६. तो	शास्तृ	७. शासक
शास्तृ	४. शासक भी	त्वम्	८. बनना
बहुत्वे	५. वहुत हों	उपचारः	९. नाम मात्र का होगा
स्यात्	३. होने से	हि यथा	१०. जैसे
बहूनाम्	२. अनेक	मण्डल	११ सम्राट् के
इह कर्मिणाम्।	१. यहाँ कर्म करने वालों के	वर्तिनाम् ॥	१२. अधीन (सामन्त होते हैं)

श्लोकार्थ—यहाँ कर्म करने वालों के अनेक होने से शासक भी वहुत हों तो शासक बनना नाम मात्र का होगा। जैसे सम्राट् के अधीन सामन्त होते हैं।

सप्तमः श्लोकः

अतस्त्वमेको भूतानां सेश्वराणामधीश्वरः ।
शास्ता दण्डधरो नृणां शुभाशुभविवेचनः ॥७॥

पदच्छेद—

अतः त्वम् एकः भूतानाम् स ईश्वराणाम् अधीश्वरः ।
शास्ता दण्डधरः नृणाम् शुभ अशुभ विवेचनः ॥

शब्दार्थ—

अतः	१. इसलिये	शास्ता	१२. शासक हैं
त्वम्	२. आप	दण्डधरः	११. दण्ड देने वाले
एकः	३. अकेले ही	नृणाम्	७. मनुष्यों के
भूतानाम्	४. प्राणियों के (और)	शुभ	८. पुण्य और
स ईश्वराणाम्	५. उनके स्वामियों के	अशुभ	९. पापों का
अधीश्वरः ।	६. अधीश्वर हैं	विवेचनः ॥	१०. निर्णय करने वाले

श्लोकार्थ—इसलिये आप अकेले ही प्राणियों के और उनके स्वामियों के अधीश्वर हैं । मनुष्यों के पुण्य और पापों के निर्णय करने वाले दण्ड देने वाले शासक हैं ।

अष्टमः श्लोकः

तस्य ते विहतो दण्डो न लोके वर्ततेऽधुना ।
चतुर्भिरद्भुतैः सिद्धैराज्ञा ते विप्रलम्भिता ॥८॥

पदच्छेद—

तस्य ते विहतः दण्डः न लोके वर्तते अधुना ।
चतुर्भिः अद्भुतैः सिद्धैः आज्ञा ते विप्र लम्भिता ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. आपके द्वारा	अधुना ।	७. इस समय
ते	८. उन	चतुर्भिः	९. चार
विहतः	२. निश्चित किये हुये	अद्भुतैः	१०. अद्भुत
दण्डः	३. दण्ड को	सिद्धैः	११. सिद्धों ने
न	५. नहीं	आज्ञा	१३. आज्ञा का
लोके	४. इस संसार में	ते	१२. आपकी
वर्तते	६. अवहेलना होती है	विप्रलम्भिता ॥	१४. उल्लंघन कर दिया

श्लोकार्थ—आपके द्वारा निश्चित किये हुये दण्ड की इस संसार में अवहेलना नहीं होती है । इस समय उन चार अद्भुत सिद्धों ने आपकी आज्ञा का उल्लंघन कर दिया ।

नवमः श्लोकः

नीयमानं तवादेशादस्माभिर्यातनागृहान् ।
व्यमोचयन् पातकिनं छित्त्वा पाशान् प्रसह्य ते ॥९॥

पदच्छेद—

नीयमानम् तव आदेशात् अस्माभिः यातना गृहान् ।
व्यमोचयन् पातकिनम् छित्त्वा पाशान् प्रसह्य ते ॥

शब्दार्थ—

नीयमानम्	७. ले जा रहे थे	व्यमोचयन्	१२. छुड़ा दिया
तव	२. आपकी	पातकिनम्	४. उस पापी को
आदेशात्	३. आज्ञा से	छित्त्वा	११. काट कर (उसे)
अस्माभिः	१. हम लोग	पाशान्	१०. पाशों को
यातना	५. यातना	प्रसह्य	९. बलपूर्वक
गृहान् ।	६. गृह	ते ॥	८. उन सिद्धों ने

श्लोकार्थ—हम लोग आपकी आज्ञा से उस पापी को यातना गृह ले जा रहे थे। उन सिद्धों ने बलपूर्वक पाशों को काट कर उसे छुड़ा दिया।

दशमः श्लोकः

तांस्ते वेदितुमिच्छामो यदि नो मन्यसे क्षमम् ।
नारायणेत्यभिहिते मा भैरित्याययुर्द्रुतम् ॥१०॥

पदच्छेद—

तान् ते वेदितुम् इच्छामः यदि नः मन्यसे क्षमम् ।
नारायण इति अभिहिते मा भैः इति आययुः द्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

तान्	२. उनको	नारायण	९. नारायण
ते	१. आपसे	इति	१०. यह नाम
वेदितुम्	३. जानने की	अभिहिते	११ उच्चारण करने पर
इच्छामः	४. इच्छा करता हूँ	मा	१२. मत
यदि	५. यदि	भैः	१३. डरो
नः	६. हम लोगों को	इति	१४. ऐसा कहते हुए (वे सिद्ध)
मन्यसे	८. मानते हों (तो बतावें)	आययुः	१६. आ पहुंचे
क्षमम् ।	७. अधिकारी	द्रुतम् ॥	१५. शीघ्र ही

श्लोकार्थ—आपसे उनको जानने की इच्छा करता हूँ। यदि हम लोगों को अधिकारी मानते हों तो बतावें। नारायण यह नाम उच्चारण करने पर मत डरो ऐसा कहते हुए वे सिद्ध शीघ्र ही आ पहुंचे।

एकादशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इति देवः स आपृष्टः प्रजासंयमनो यमः ।
प्रीतः स्वदूतान् प्रत्याह स्मरन् पादाम्बुजं हरेः ॥११॥

पदच्छेद---

इति देवः सः आपृष्टः प्रजा संयमनः यमः ।
प्रीतः स्वदूतान् प्रत्याह स्मरन् पादाम्बुजम् हरेः ॥

शब्दार्थ---

इति	१. इस प्रकार (जब)	प्रीतः	८. प्रसन्न होकर
देवः	६. भगवान्	स्वदूतान्	१३. अपने दूतों से
सः	२. उन दूतों ने	प्रत्याह	१४. बोले
आपृष्टः	३. प्रश्न पूछा (तब)	स्मरन्	१२. स्मरण करते हुये
प्रजा	४. प्रजाओं के	पाद	१०. चरण
संयमनः	५. शासक	अम्बुजम्	११. कमलों का
यमः ।	७. यमराज ने	हरेः ॥	९. भगवान् विष्णु के

श्लोकार्थ—इस प्रकार जब उन दूतों ने प्रश्न पूछा तब प्रजाओं के शासक भगवान् यमराज प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु के चरण कमलों का स्मरण करते हुये अपनें दूतों से बोले।

द्वादशः श्लोकः

यम उवाच

परो मदन्यो जगतस्तस्थुषश्च, ओतं पटवद्यत्र विश्वम् ।
यदंशतोऽस्य स्थितिजन्मनाशा, नस्योतवद् यस्यवशे च लोकः ॥१२॥

पदच्छेद---

परः मत् अन्यः जगतः तस्थुषश्च ओतम् प्रोतम् पटवत् यत्र विश्वम् ।
यत्अंशतः अस्य स्थिति जन्मनाशाः नस्योतवत् यस्य वशे च लोकः ॥

शब्दार्थ---

परः	३. दूसरा	यत् अंशतः	११. जिसके अंश से
मत्	१ मेरे	अस्य	१२. इस संसार का
अन्यः	२. अलावा	स्थिति	१३. पालन
जगतः	५. संसार का स्वामो है	जन्म	१४. उत्पत्ति और
तस्थुषश्च	४. इस चराचर	नाशाः	१५. संहार होता है
ओतम्	९. ओत	नस्योतवत्	१९. नथे हुये बैल के समान
प्रोतम्	१०. प्रोत है	यस्य	१७. जिसके
पटवत्	८. सूत में वस्त्र के समान	वशे	१८. वश में
यत्र	६. जिसमें	च	१६. और
विश्वम् ।	७. संसार	लोकः ॥	२०. यह संसार है

श्लोकार्थ—मेरे अलावा दूसरा इस चराचर संसार का स्वामी है। जिसमें संसार सूत में वस्त्र के समान ओत-प्रोत है। जिसके अंश से इस संसार का पालन, उत्पत्ति और संसार होता है। और जिसके वश में नथे हुये बैल के समान यह संसार है।

त्रयोदशः श्लोकः

यो नामभिर्वाचि जनान्निजायां बध्नाति तन्त्यामिव दामभिर्गाः ।
यस्मै बलिं त इमे नामकर्मनिबन्धबद्धाश्चकिता वहन्ति ।।१३।।

पदच्छेद—

यः नामभिः वाचि जनान् निजायाम् बध्नाति तन्त्याम् इव दामभिःगाः ।
यस्मै बलिम् ते इमे नामकर्म निबन्धबद्धाः चकिताः वहन्ति ।।

शब्दार्थ—

यः	१. जैसे (किसान)	**यस्मै**	१०. जिससे
नामभिः	६. नाम के और	**बलिम्**	१२. प्राणी
वाचि	७. वाणी के द्वारा	**ते**	११. वे
जनान्	९. लोगों को रखते है	**इमे नाम**	१३ इस नाम और
निजायाम्	८. अपने	**कर्म**	१४. कर्मों के
बध्नाति	४. बाँधते हैं	**निबन्ध**	१५. बन्धन में
तन्त्याम्	२. छोटी-छोटी रस्सियों से और	**बद्धाः**	१६. बंधे हुये
इव	५. उसी प्रकार भगवान्	**चकिताः**	१७. भयभीत होकर
दामभिःगाः ।	३. बड़ी रस्सियों से, बैलों को	**वहन्ति ।।**	१८. ढो रहे हैं

श्लोकार्थ—जैसे किसान छोटी-छोटी रस्सियों से और बड़ी रस्सियों से बैलों को बाँधते हैं, उसी प्रकार भगवान् नाम के और वाणी के द्वारा अपने लोगों को रखते हैं। जिससे वे प्राणी इस नाम और कर्मों के बन्धन में बंधे हुये भयभीत होकर ढो रहे हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

अहं महेन्द्रो निर्ऋतिः प्रचेताः सोमोऽग्निरीशः पवनोऽर्को विरिञ्चः ।
आदित्यविश्वे वसवोऽथ साध्याः :मरुद्गणाः रुद्रगणाः ससिद्धाः ।।१४।।

पदच्छेद—

अहम् महेन्द्रः निर्ऋतिः प्रचेताः सोमः अग्निः ईशः पवनः अर्कः विरिञ्चः ।
आदित्यविश्वे वसवोऽ थ साध्याः मरुद्गणाः रुद्रगणाः ससिद्धाः ।।

शब्दार्थ—

अहम्	२. मैं (यमराज)	**आदित्य**	११. आदित्य
महेन्द्रः	३. इन्द्र	**विश्वे**	१२. विश्वे देव
निर्ऋतिः	४. निर्ऋति	**वसवः**	१३. वसु
प्रचेताः	५. वरुण	**अथ**	१. इसके बाद
सोमः	६. चन्द्रमा	**साध्याः**	१४. साध्य
अग्निः	७. अग्नि	**मरुद्गणाः**	१५. मरुद्गण
ईशः	८. भगवान् शंकर	**रुद्रगणाः**	१६. रुद्रगण और
पवनः अर्कः	९. वायु-सूर्य	**स**	१८. ये सब भगवान् की माया के अधीन हैं
विरिञ्चः ।	१०. ब्रह्मा	**सिद्धाः ।।**	१७. सिद्ध

श्लोकार्थ—इसके बाद मैं, यमराज, इन्द्र, निर्ऋति, वरुण चन्द्रमा, अग्नि, भगवान् शंकर, वायु, सूर्य, ब्रह्मा, आदित्य, विश्वेदेव, वसु, साध्य, मरुद्गण, रुद्रगण और सिद्ध ये सब भगवान् की माया के अधीन हैं।

पंचदशः श्लोकः

अन्ये च ये विश्वसृजोऽमरेशा भृग्वादयोऽस्पृष्टरजस्तमस्काः ।
यस्येहितं न विदुः स्पृष्टमायाः सत्त्वप्रधाना अपि किं ततोऽन्ये ।।१५।।

पदच्छेद---

अन्ये च ये विश्वसृजः अमरेशाः भृगु आदयः अस्पृष्ट रजः तमस्काः ।
यस्य ईहितम् न विदुः स्पृष्ट मायाः सत्त्वप्रधानाः अपि किम् ततः अन्ये ।।

शब्दार्थ---

अन्य	२. दूसरे	यस्य	११. जिनके
च ये	१. और जो	ईहितम्	१२. कार्य को
विश्वसृजः	८. प्रजापति (तथा)	न विदुः	१३. नहीं जानकर (उनकी)
अमरेशः	९. बड़े-बड़े देवता	स्पृष्ट	१५. अधीन हैं
भृगु	६. भृगु	मायाः	१४. माया के
आदयः	७. आदि	सत्त्वप्रधानाः अपि	१०. सत्त्व गुण प्रधान होने पर भी
अस्पृष्ट	५. रहित	किम्	१८. बात ही क्या है
रजः	३. रजो गुण और	ततः	१६. उनके अलावा
तमस्काः ।	४. तमो गुण से	अन्ये ।।	१७. दूसरे लोगों की तो

श्लोकार्थ---और जो रजो गुण और तमो गुण से रहित भृगु आदि प्रजापति तथा बड़े-बड़े देवता सत्त्व गुण प्रधान होने पर भी जिनके कार्य को नहीं जानकर उनकी माया के अधीन हैं। उनके अलावा दूसरे लोगों की तो बात ही क्या है ।

षोडशः श्लोकः

यं वै न गोभिर्मनसासुभिर्वा हृदा गिरा वासुभृतो विचक्षते ।
आत्मानमन्तर्हृदि सन्तमात्मना चक्षुर्यथैवाकृतयस्ततः परम् ।।१६।।

पदच्छेद---

यम् वै न गोभिः मनसा असुभिः वा हृदा गिरा वासुभृतः विचक्षते ।
आत्मानम् अन्तर्हृदि सन्तम् आत्मना चक्षुः यथा एव आकृतयः ततः परम् ।।

शब्दार्थ---

यम् वै	५. उसी प्रकार मनुष्य निश्चित हो	आत्मनाम्	६. अपने
न	१७. नहीं	अन्तः हृदि	७. अन्तःकरण में
गोभिः	११. इन्द्रियों से	सन्तम्	८. स्थित
मनसा	१२. मन से	आत्मानम्	९. परमात्मा के
असुभिः	१३. प्राणों से	चक्षुः	२. आँख (अपने)
वा	१ . अथवा	यथा एव	१. जिस प्रकार
हृदा गिरा	१४. हृदय से वाणी से	आकृतयः	१०. स्वरूप को
वासुभृतः	१५. अन्य किसी भी साधन से	ततः	४. प्रकाशक को नहीं देख पाती
विचक्षते ।	१८. जान सकता है	परम् ।।	३. परम

श्लोकार्थ--जिस प्रकार आँख अपने परम प्रकाशक को नहीं देख पाती है। उसी प्रकार मनुष्य निश्चित ही अपने अन्तःकरण में स्थित परमात्मा के स्वरूप को इन्द्रियों से, मन से, प्राणों से हृदय से वाणी अथवा अन्य किसी भी साधन से नहीं जान सकता है ।

सप्तदशः श्लोकः

तस्यात्मतन्त्रस्य हरेरधीशितुः, परस्य मायाधिपतेर्महात्मनः ।
प्रायेण दूता इह वै मनोहराश्चरन्ति तद्रूपगुणस्वभावाः ।।१७।।

पदच्छेद—

तस्य आत्म तन्त्रस्य हरेः अधीशितुः परस्य माया अधिपतेः महात्मनः ।
प्रायेण दूताः इह वै मनोहराः चरन्ति तद्रूप गुण स्वभावाः ।।

शब्दार्थ—

तस्य	१. वे	प्रायेण	१५. प्रायः
आत्मतन्त्रस्य	३. स्वतन्त्र	दूताः इह	१०. दूता इस लोक में
हरेः	२. भगवान्	वै	११. निश्चित ही
अधीशितुः	४. सबके स्वामी (और)	मनोहराः	९. सुन्दर
परस्य	५. दूसरे	चरन्ति	१६. विचरण करते हैं
माया	६ माया के भी	तद्रूप	१२. भगवान् के समान रूप
अधिपतेः	७. स्वामी हैं	गुण	१३. गुण (और)
महात्मनः ।	८. भगवान् के	स्वभावाः ।।	१४. स्वभाव वाले

श्लोकार्थ—वे भगवान् स्वतन्त्र सबके स्वामी और दूसरे माया के भी स्वामी हैं। भगवान् के सुन्दर दूत इस लोक में निश्चित ही भगवान् के समान रूप गुण और स्वभाव वाले प्रायः विचरण करते हैं।

अष्टादशः श्लोकः

भूतानि विष्णोः सुरपूजितानि दुर्दर्शलिङ्गानि महाद्भुतानि ।
रक्षन्ति तद्भक्तिमतः परेभ्यो मत्तश्च मर्त्यानथ सर्वतश्च ।।१८।।

पदच्छेद—

भूतानि विष्णोः सुर पूजितानि, दुर्दर्शलिङ्गानि महा अद्भुतानि।
रक्षन्ति तद् भक्ति मतः परेभ्यः मत्तश्च मर्त्यान् अथ सर्वतः च ।।

शब्दार्थ—

भूतानि	८. प्राणियों को	रक्षन्ति	१८. रक्षा करते हैं
विष्णोः	५. भगवान् विष्णु के	तद्	१०. वे भगवान् के
सुर	१. देवताओं से	भक्तिमतः	११. भक्त जनों की
पूजितानि	२. पूजित	परेभ्य.	१२. शत्रुओं से
दुः	९. कठिनता से होता है	मत्तश्च	१३. उन्मत्तों से
दर्श	७. दर्शन	मर्त्यान्	१५. मृत्यु से
लिङ्गानि	६. पार्षदों का	च	१६. तथा
महा	३. परम	सर्वतः	१७. चारों ओर से
अद्भुतानि ।	४. अलौकिक	च ।।	१४. और

श्लोकार्थ—देवताओं से पूजित परम अलौकिक भगवान् विष्णु के पार्षदों का दर्शन प्राणियों को कठिनाई से होता है। वे भगवान् के भक्त जनों की शत्रुओं से, उन्मत्तों से, और मृत्यु से तथा चारों ओर से रक्षा करते हैं।

एकोनविंशः श्लोकः

धर्मं तु साक्षाद्भगवत्प्रणीतं न वै विदुर्ऋषयो नापि देवाः ।
न सिद्धमुख्या असुरा मनुष्याः कुतश्च विद्याधरचारणादयः ॥

पदच्छेद—

धर्मम् तु साक्षात् भगवत् प्रणीतम् न वै विदुः ऋषयः न अपि देवाः ।
न सिद्ध मुख्याः असुराः मनुष्याः कुतश्च विद्याधर चारण आदयः ॥

शब्दार्थ—

धर्मम	४. धर्म की मर्यादा का	देवाः ।	८. देवता (और)
तु	२. तो	न	१३. नहीं
साक्षात्	३ स्वयम्	सिद्ध	१०. सिद्ध
भगवत्	१. भगवान् ने	मुख्याः	९. प्रधान
प्रणीतम्	५. निर्माण किया है	असुराः	१५. असुर
न	६. नहीं	मनुष्याः	१६. मनुष्य
वै	१२. निश्चित ही	कुतश्च	२०. कहाँ से जानेंगे
विदुः	१४. जानते हैं	विद्याधर	१७. विद्याधर
ऋषयः न	७. ऋषिगण न	चारण	१८. चारण
अपि	११. भी	आदयः ॥	१९. इत्यादि

श्लोकार्थ—भगवान् ने तो स्वयम् धर्म की मर्यादा का निर्माण किया है। नहीं ऋषिगण, न देवता और प्रधान सिद्ध भी निश्चित ही नहीं जानते हैं। असुर, विद्याधर, चारण इत्यादि कहाँ से जानेंगे ?

विंशः श्लोकः

स्वयम्भूर्नारदः शम्भुः कुमारः कपिलो मनुः ।
प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासकिर्वयम् ॥

पदच्छेद—

स्वयम्भूः नारदः शम्भुः कुमारः कपिलः मनुः ।
प्रह्लादः जनकः भीष्मः बलिः वैयासकिः वयम् ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्भूः	१. ब्रह्मा जी	प्रह्लादः	७. प्रह्लाद
नारदः	२. नारद	जनकः	८. जनक
शम्भुः	३. भगवान् शंकर	भीष्मः	९. भीष्म पितामह
कुमारः	४. सनकादिक	बलिः	१०. बलि (और)
कपिलः	५. कपिल	वैयासकिः	११. शुकदेव जी (तथा)
मनुः ।	६. मनु	वयम् ॥	१२. मैं (यमराज) इस भागवत धर्म को जानते हैं

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी, नारद, भगवान् शंकर, सनकादिक, कपिल, मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्म पितामह, बलि और शुकदेव जी तथा मैं यमराज इस भागवत धर्म को जानते हैं।

एकविंशः श्लोकः

द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः ।
गुह्यं विशुद्धं दुर्बोधं यं ज्ञात्वामृतमश्नुते ।।२१।।

पदच्छेद---

द्वादश एते विजानीमः धर्मम् भागवतम् भटाः ।
गुह्यम् विशुद्धम् दुर्बोधम् यम् ज्ञात्वा अमृतम् अश्नुते ।।

शब्दार्थ---

द्वादश एते	७. बारह लोग ही	विशुद्धम्	३. विशुद्ध
विजानीमः	८. जानते है	दुर्बोधम्	४. कठिनाई से जानने योग्य
धर्मम्	६. धर्म को	यम्	९. जिसको
भागवतम्	५. भागवत	ज्ञात्वा	१०. जानकर
भटाः	१. हे दूतो ! इस	अमृतम्	११. अमरत्व को
गुह्यम्	२. गोपनीय	अश्नुते ।।	१२. प्राप्त होते हैं

श्लोकार्थ—हे दूतो ! इस गोपनीय, विशुद्ध, कठिनाई से जानने योग्य, भागवत धर्म को बारह लोग ही जानते हैं। जिसको जानकर अमरत्व को प्राप्त होते हैं।

द्वाविंशः श्लोकः

एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां धर्मः परः स्मृतः ।
भक्तियोगो भगवति तन्नामग्रहणादिभिः ।।२२।।

पदच्छेद—

एतावान् एव लोके अस्मिन् पुंसाम् धर्मः परः स्मृतः ।
भक्ति योगः भगवति तत् नाम ग्रहण आदिभिः ।।

शब्दार्थ---

एतावान्	६. इतना	भक्ति	१४. भक्ति
एव	७. ही	योगः	१५. भाव को प्राप्त करें
लोके	२. संसार में	भगवति	१०. भगवान् के
अस्मिन्	१. इस	तत्	९. वे
पुंसाम्	३. मनुष्यों का	नाम	११. नाम
धर्मः	५. धर्म	ग्रहण	१२. उच्चारण
परः	४. परम	आदिभिः ।।	१३. इत्यादि से
स्मृतः ।	८. कहा गया है कि		

श्लोकार्थ—इस संसार में मनुष्यों का परम धर्म इतना ही कहा गया है कि वे भगवान् के नाम उच्चारण इत्यादि से भक्ति-भाव को प्राप्त करें।

त्रयोविंशः श्लोकः

नामोच्चारणमाहात्म्यं हरेः पश्यत पुत्रकाः ।
अजामिलोऽपि येनैव मृत्युपाशादमुच्यत ।।२३।।

पदच्छेद—

नामउच्चारण माहात्म्यम् हरेः पश्यत पुत्रकाः ।
अजामिलः अपि येन एव मृत्यु पाशात् अमुच्यत ।।

शब्दार्थ—

नाम	३. नाम के	अजामिलः	८. अजामिल
उच्चारण	४. उच्चारण की	अपि	९. भी
माहात्म्यम्	५. महिमा को	येन एव	७. जिससे
हरेः	२. भगवान् नारायण के	मृत्यु	१०. मृत्यु के
पश्यत	६. देखो	पाशात्	११. बन्धन से
पुत्रकाः ।	१. हे दूतो ! तुम	अमुच्यत ।।	१२. छूटकारा पा गया

श्लोकार्थ—हे दूतो ! तुम भगवान् नारायण के नाम के उच्चारण की महिमा को देखो । अजामिल भी मत्यु के बन्धन से छूटकारा पा गया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

एतावतालमघनिर्हरणाय पुंसां सङ्कीर्तनं भगवतो गुणकर्म नाम्नाम् ।
विक्रुश्य पुत्रमघवान् यदजामिलोऽपि नारायणेति म्रियमाण इयाय मुक्तिम् ।।२४।।

पदच्छेद—

एतावता अलम् अघनिर्हरणाय पुंसाम् सङ्कीर्तनम् भगवतः गुणकर्म नाम्नाम् ।
विक्रुश्य पुत्रम् अघवान् यद् अजामिलः अपि नारायणः इति म्रियमाणः इयाय मुक्तिम् ।।

शब्दार्थ—

एतावता	५. इतना ही	विक्रुश्य	१६. उच्चारण करके
अलम्	९. पर्याप्त है	पुत्रम्	१४. पुत्र के
अघ	७. पापों को	अघवान्	११. पापी
निर्हरणाय	८. नष्ट करने के लिये	यद्	१०. जो
पुंसाम्	६. पुरुषों के	अजामिलः अपि	१२. अजामिल भी
सङ्कीर्तनम्	४. कीर्तन	नारायण इति	१५. नारायण इस नाम का
भगवतः	१. भगवान् के	म्रियमाणः	१३. मरते समय
गुण कर्म	२. गुण, कर्म और	इयाय	१८. प्राप्त हु
नाम्नाम् ।	३. नागों का	मुक्तिम् ।।	१७. मुक्ति को

श्लोकार्थ—भगवान् के गुण, कर्म और नामों का कीर्तन इतना ही पुरुषों के पापों को नष्ट करने के लिये पर्याप्त है, जो पापी अजामिल भी मरते समय पुत्र के नापायण इस नाम का उच्चारण करके मुक्ति को प्राप्त हुआ ।

पंचविंशः श्लोकः

प्रायेण वेद तदिदं न महाजनोऽयं देव्या विमोहितमतिर्बत माययालम् ।
त्रय्यां जडीकृतमतिर्मधु पुष्पितायां वैतानिके महति कर्मणि युज्यमानः ।।२५।।

पदच्छेद—

प्रायेण वेद तद्इदम् न महाजनः अयम् देव्या विमोहितमतिः बत मायया अलम् ।
त्रय्याम् जडीकृतमतिः मधु पुष्पितायाम् वैतानिके महति कर्मणि युज्यमानः ।।

शब्दार्थ—

प्रायेण	१८. प्रायः	**बत**	१. खेद है कि
वेद	२०. जानते हैं	**मायया अलम्**	६. माया से युक्त होकर
तद्	१७. नाम की महिमा को	**त्रय्याम्**	१०. वेद
इदम्	१६. उस	**जडीकृते**	१२. मोहित हो जाते हैं (और)
न	१९. नहीं	**मतिः**	११. वाणी में
महाजनः	२. बुद्धिमान्	**मधु**	८. मीठे-मीठे
अयम्	४. इस	**पुष्पितायाम्**	९. फलों का वर्णन करने वाली
देव्या	५. भगवान् की	**वैतानिके**	१३. यज्ञादि
विमोहित	७. मोहित हो जाती है (वे)	**महति कर्मणि**	१४. बड़े-बड़े कर्मों से
मतिः	३. बुद्धि भी	**युज्यमानः ।।**	१५. लगे रहते हैं

श्लोकार्थ—खेद है कि बुद्धिमान् लोगों की बुद्धि भी इस भगवान् की माया से युक्त होकर मोहित हो जाती है। वे मीठे-मीठे फलों का वर्णन करने वाली अर्थवाद रूपी वेद वाणी म मोहित हो जाते हैं। और यज्ञादि बड़े-बड़े कर्मों में लगे रहते हैं। इस नाम की महिमा को प्रायः नहीं जानते हैं।

षड्विंशः श्लोकः

एवं विमृश्य सुधियो भगवत्यनन्ते सर्वात्मना विदधते खलु भावयोगम् ।
ते मे न दण्डमर्हन्त्यथ यद्यमीषां स्यात् पातकं तदपि हन्त्युरुगायवादः ।।२६।।

पदच्छेद—

एवम् विमृश्य सुधियः भगवति अनन्ते सर्वआत्मना विदधते खलु भावयोगम् ।
ते मे न दण्डम् अर्हन्ति अथ यदि अमीषाम् स्यात् पातकम् तद् अपि हन्ति उरुगाय वादः ।।

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	**ते मे**	१०. वे मेरे
विमृश्य	३. विचार कर	**न दण्डम् अर्हन्ति**	११. दण्ड के योग्य नहीं
सुधियः	२. विद्वान् लोग	**अथ यदि**	१२. परन्तु यदि
भगवनि अनन्ते	४. भगवान् अनन्त में	**अमीषाम्**	१४. इन लोगों से
सर्व आत्मना	५. सम्पूर्ण अन्तःकरण से	**स्यात्**	१५. हो जाय
विदधते	९. स्थापित करते हैं	**पातकम्**	१३. पाप
खलु	६. निश्चित ही	**तदपि**	१६. तो भी (ये)
भाव	८. भाव को	**हन्ति**	१८. नष्ट कर देते हैं
योगम् ।	७. भक्ति	**उरुगायवादः ।।**	९०. भगवान् का गुणमान करके उसको।

श्लोकार्थ—इस प्रकार विद्वान् लोग विचार कर भगवान् अनन्त में सम्पूर्ण अन्तःकरण से निश्चित ही भक्ति भाव को स्थापित करते हैं। वे मेरे दण्ड के योग्य नहीं हैं। परन्तु यदि इन लोगों से पाप हो जाये तो भी ये भगवान का गुण गान करके उसको नष्ट कर देते हैं।

सप्तविंशः श्लोकः

ते देवसिद्धपरिगीतपवित्रगाथा ये साधवः समदृशो भगवत्प्रपन्नाः ।
तान्नोपसीदत हरेर्गदयाभिगुप्तान् नैषां वयं न च वयः प्रभवाम दण्डे ॥२७॥

पदच्छेद—

ते देव सिद्ध परिगीत पवित्र गाथाः ये साधवः समदृशः भगवत् प्रपन्नाः ।
तान् न उपसीदत हरेः गदया अभिगुप्तान् न एषाम् वयम् न च वयः प्रभवाम दण्डे ॥

शब्दार्थ—

ते	५. उनके	उपसीदत	१२. कष्ट
देव सिद्ध	७. देवता और सिद्ध भी	हरेः गदया	९. भगवान् गदा से
परिगीत	८. भान करते रहते हैं	अभिगुप्तान	१०. रक्षा करते हैं
पवित्रगाथाः	६. पवित्र चरित्रों का	न	१५. नहीं
ये	१. जो	एषाम्	१४. उन लोगों को
साधवः	३. साधु लोग	वयम्	१६. हम
समदृशः	२. समदर्शी	न	१८. नहीं
भगवत् प्रपन्नाः ।	४. भगवान् की शरण में है	च	१७. और
तान्	११. उनको	वयः प्रभवाम	१९. काल भी समर्थ है
न	१३. नहीं दो	दण्डे ॥	२०. दण्ड देने में

श्लोकार्थ—जो समदर्शी साधु लोग भगवान् की शरण में हैं, उनके पवित्र चरित्रों का देवता और सिद्ध भी गान करते रहते हैं। भगवान् गदा से रक्षा करते हैं। उनको कष्ट नहीं दो। उन लोगों को न ही हम और न ही काल भी दण्ड देने में समर्थ हैं।

अष्टाविंशः श्लोकः

तानानयध्वमसतो विमुखान् मुकुन्दपादारविन्दमकरन्दरसादजस्रम् ।
निष्किञ्चनैः परमहंसकुलै रसज्ञैर्जुष्टाद्गृहे निरयवर्त्मनि बद्धतृष्णान् ॥२८॥

पदच्छेद—

तान् आनयध्वम् असतः विमुखान् मुकुन्द पाद अरविन्द मकरन्द रसात् अजस्रम् ।
निष्किञ्चनैः परमहंसकुलैः रसज्ञैः जुष्टात् गृहे निरयवर्त्मनि बद्ध तृष्णान् ॥

शब्दार्थ—

तान्	१५. उन भगवान् से	निष्किञ्चनैः	३. अकिंचन होकर के
आनयध्वम्	१८. लाया करो	परमहंस कुलेः	१. परमहंसों का समूह
असतः	१७. दुष्टों को ही	रसज्ञैः	२. रस के लोभ से
विमुखान्	१६. विमुख	जुष्टात्	१४. ढो रहे हैं
मुकुन्द	५. भगवान् मुकुन्द के	गृहे	१३. घर रूप गृहस्थी को
पाद अरविन्द	६. चरण कमलों के	निरय	११. नरक के
मकरन्द	७. पराग रूपी	वर्त्मनि	१२. दरवाजे
रसात्	८. रस का (पान करते है)	बद्ध	१०. बंधे हुये
अजस्रम् ।	४. निरन्तर	तृष्णाम् ॥	९. जो तृष्णा से

श्लोकार्थ—परमहंसों का समूह रस के लोभ से अकिंचन होकर के निरन्तर भगवान् मुकुन्द के चरण कमलों के परागरूपी रस का पान करते हैं। जो तृष्णा से बंधे हुये नरक के दरवाजे घर रूप गृहस्थी को ढो रहे हैं, उन भगवान् से विमुख दुष्टों को ही लाया करो।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

जिह्वा न वक्ति भगवद् गुणनामधेयं चेतश्च न स्मरति तच्चरणारविन्दम् ।
कृष्णाय नो नमति यच्छिर एकदापि तानानयध्वमसतोऽकृतविष्णुकृत्यान् ॥२९॥

पदच्छेद—

जिह्वा न वक्ति भगवत् गुण नामधेयम्चेतः च न स्मरति तत्चरणारविन्दम् ।
कृष्णाय नो नमति यत् शिरः एकदा अपि तान् आनयध्वम् अकृत विष्णुकृत्यान् ॥

शब्दार्थ—

जिह्वा	२. जीभ	**कृष्णाय**	१२. भगवान् कृष्ण के लिये
न वक्ति	५. नहीं उच्चारण करती है	**न नमति**	१३. नहीं प्रणाम करता है
भगवत्	३. भगवान् के	**यत्**	१. जिसकी
गुण नामधेयम्	४. गुणों, नामों का	**शिरः एकदा अपि**	११. सिर एक बार भी
चेतः	७. चित्त	**तान्**	१४. उन
च	६. और	**आनयध्वम्**	१८. लाया करो
न स्मरति	१०. नहीं स्मरण करता है (तथा)	**असत्**	१७. दुष्टों को ही
तत चरण	८. उनके चरण	**अकृत**	१६. विमुख
अरविन्दम् ।	९. कमलों का	**विष्णुकृत्यान् ॥**	१५. भगवान् विष्णु की सेवा से

श्लोकार्थ—जिसकी जीभ भगवान् के गुणों का और नामों का उच्चारण नहीं करती है और चित्त उनके चरण कमलों का स्मरण नहीं करता है। तथा सिर एक बार भी भगवान् कृष्ण के लिये प्रणाम नहीं करता है उन भगवान् विष्णु से विमुख दुष्टों को ही लाया करो।

त्रिंशः श्लोकः

तत्क्षम्यतां स भगवान् पुरुषः पुराणो नारायणः स्वपुरुषैर्यदसत्कृतं नः ।
स्वानामहो न विदुषां रचिताञ्जलीनां क्षान्तिर्गरीयसि नमः पुरुषाय भूम्ने ॥३०॥

पदच्छेद—

तत् क्षम्यताम् सः भगवान् पुरुषः पुराणः नारायणः स्वपुरुषैः यद् असत् कृतम् नः ।
स्वानाम् अहो न विदुषाम् रचित अञ्जलीनाम् क्षान्तिः गरीयसि नमः पुरुषाय भूम्ने ॥

शब्दार्थ—

तत्	८. उसे	**नः ।**	६. हम लोगों से
क्षम्यताम्	१०. क्षमा करे	**स्वानाम्**	१०. अपने ही होकर
सः	९. वह भगवान्	**अहो**	११. आश्चर्य है
भगवान्	१. भगवान्	**न विदुषाम्**	१३. अज्ञानी हम लोग
पुरुषः	२. पुरुष	**रचित**	१५. बाँध कर खड़े रहते हैं
पुराणः	२. पुराण	**अञ्जलीनाम्**	१४. अञ्जली को
नारायणः	४. नारायण के	**क्षान्तिः**	१८. वे क्षमा करें
स्वपुरुषैः	५. पार्षदों का	**गरीयसि नमः**	१७. महिमा युक्त नमस्कार है
यतअसत्कृतम्	७. जो अपमान हुआ है	**पुरुषाय भूम्ने ॥**	१६. अनन्त पुरुष को

श्लोकार्थ—भगवान् पुराण पुरुष नारायण के पार्षदों का हम लोगों से जो अपमान हुआ है, उसे वह क्षमा करें। आश्चर्य है अपने हो होकर अज्ञानी हम लोग अञ्जलि को बाँधकर खड़े रहते हैं। महिमा-युक्त अनन्त पुरुष को नमस्कार है। वे हमें क्षमा करें।

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्मात् सङ्कीर्तनं विष्णोर्जगन्मङ्गलमंहसाम् ।
महतामपि कौरव्य विद्ध्यैकान्तिकनिष्कृतिम् ॥३१॥

पदच्छेद—

तस्मात् सङ्कीर्तनम् विष्णोः जगत् मङ्गलम् अंहसाम् ।
महताम् अपि कौरव्य विद्धि ऐकान्तिक निष्कृतिम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२. इसलिये	महताम्	७. उसे बड़े से बड़े
सङ्कीर्तनम्	४. कीर्तन	अपि	९. भी
विष्णोः	३. भगवान् विष्णु का	कौरव्य	१. हे परीक्षित् !
जगत्	५. संसार का	विद्धि	१२. जानो
मङ्गलम्	६. मङ्गल करने वाला है (तथा)	ऐकान्तिक	१०. निर्मूल करने वाला
अंहसाम् ।	८. पापों का	निष्कृतिम् ॥	११. प्रायश्चित्त

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इसलिये भगवान् विष्णु का कीर्तन संसार का मङ्गल करने वाला है ,तथा उसे बड़े से बड़े पापों को भी निर्मूल करने वाला प्रायश्चित्त जानो।

द्वात्रिंशः श्लोकः

शृण्वतां गृणतां वीर्याण्युद्दामानि हरेर्मुहुः ।
यथा सुजातया भक्त्या शुद्ध्येन्नात्मा व्रतादिभिः ॥३२॥

पदच्छेद—

शृण्वताम् गृणताम् वीर्याणि उद्दामानि हरेः मुहुः ।
यथा सुजातया भक्त्या शुद्ध्येत् न आत्मा व्रत आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

शृण्वताम्	५. श्रवण करने से तथा	सुजातया	८. सुन्दर
गृणताम्	६. गान करने से	भक्त्या	९. भक्ति से
वीर्याणि	३. पराक्रम पूर्ण	शुद्ध्येत्	११. शुद्ध हो जाती है (उस प्रकार)
उद्दामानि	४. उदार चरित्रों का	न	१४. नहीं होती है
हरेः	१. भगवान् के	आत्मा	१०. आत्मा
मुहुः	२. बार-बार	व्रत	१२. व्रत
यथा	७. जिस प्रकार	आदिभिः ॥	१३. इत्यादि से

श्लोकार्थ—भगवान् के बार-बार पराक्रमपूर्ण उदार चरित्रों का श्रवण करने से तथा गान करने से जिस प्रकार सुन्दर भक्ति से आत्मा शुद्ध हो जाती है उस प्रकार व्रत इत्यादि से नहीं होती है।

त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

कृष्णाङ्घ्रिपद्ममधुलिण् न पुनर्विसृष्टमायागुणेषु रमते वृजिनावहेषु।
अन्यस्तु कामहत आत्मरज: प्रमार्ष्टुमीहेत कर्म यत एव रज: पुन: स्यात् ॥३३॥

पदच्छेद—

कृष्ण अङ्घ्रिपद्म मधुलिट् न पुन: विसृष्ट माया गुणेषु रमते वृजिन आवहेषु।
अन्य:तु कामहत आत्मरज: प्रमार्ष्टुम् ईहेत कर्म यत एव रज: पुन: स्यात् ॥

शब्दार्थ—

कृष्ण	१. जो मनुष्य भगवान् श्रीकृष्ण के	अन्य:तु	१०. दूसरे लोग तो
अङ्घ्रि पद्म	२. चरण कमल मकरन्द के	कामहत:	११. कामनाओं से विमुख
मधुलिट्	३. भ्रमर के समान लोभी	आत्मरज:	१२. अपने पापों को
न पुन:	८. नहीं फिर से	प्रमार्ष्टुम्	१३. धोने के लिए
विसृष्ट	६. छोड़े हुए	ईहेत	१६. करते हैं
मायागुणेषु	७. माया के गुणों में	कर्म	१५. कर्मों को
रमते	९. रमण करते हैं	यत्	१४. जिन
वृजिन	४. दु:ख को	एव रज:	१८. ही पाप
आवहेषु।	५. प्रदान करने वाले तथा	पुन:	१७. वे फिर से
		स्यात् ॥	१९. करते हैं

श्लोकार्थ—जो मनुष्य भगवान् श्रीकृष्ण के चरण कमल मकरन्द के भ्रमर के समान लोभी हैं वे दु:ख को प्रदान करने वाले तथा छोड़े हुए माया के गुणों में फिर से नहीं रमण करते हैं। दूसरे लोग तो कामनाओं से विमुख अपने पापों को धोने के लिए जिन कर्मों को करते हैं, वे फिर से ही पाप करते हैं।

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

इत्थं स्वभर्तृ गदितं भगवन्महित्वं संस्मृत्य विस्मितधियो यमकिङ्करास्ते।
नैवाच्युताश्रयजनं प्रति शङ्कमाना द्रष्टुं च बिभ्यति तत: प्रभृति स्म राजन् ॥३४॥

पदच्छेद—

इत्थम् स्वभर्तृ गदितम् भगवन् महित्वम् संस्मृत्य विस्मतधिय: यमकिङ्करा:ते।
न एव अच्युत आश्रय जनम् प्रति शङ्कमाना: द्रष्टुम् च बिभ्यति तत: प्रभृति स्म राजन् ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	३. इस प्रकार	न एव	१४. नहीं जाते
स्वभर्तृ	२. अपने स्वामी यमराज से	अच्युतआश्रय	१२. भगवान् विष्णु के आश्रित
गदितम्	६. सुनकर और	जनम् प्रति	१३. भक्तों के पास
भगवत्	४. भगवान् की	शङ्कमाना:	११. सशंकित होकर
महित्वम्	५. महिमा को	द्रष्टुम्	१७. देखने में भी
संस्मृत्य	७. स्मरण करके	च	१५. और
विस्मित	८. आश्चर्य युक्त	बिभ्यति	१८. डरते हैं
धिय:	९. बुद्धि से	तत: प्रभृतिस्म	१६. तभी से लेकर अब तक
यमकिङ्करा:ते।	१०. यमराज के वे दूत	राजन् ॥	१. हे राजा परीक्षित्!

श्लोकार्थ—हे राजा परीक्षित्! अपने स्वामी यमराज से इस प्रकार भगवान् की महिमा को सुनकर और स्मरण करके आश्चर्य युक्त बुद्धि से यमराज के वे दूत सशंकित होकर भगवान् विष्णु के आश्रित भक्तों के पास नहीं जाते और तभी से लेकर अब तक देखने में भी डरते हैं।

पंचत्रिंशः श्लोकः

इतिहासमिमं गुह्यं भगवान् कुम्भसम्भवः ।
कथयामास मलय आसीनो हरिमर्चयन् ।।३५।।

पदच्छेद---

इतिहासम् इमम् गुह्यम् भगवान् कुम्भसम्भवः ।
कथयामास मलये आसीनः हरिम् अर्चयन् ।।

शब्दार्थ---

इतिहासम्	३. इतिहास	कथयामास	१०. कहा था
इमम्	१. यह	मलये	६. मलयाचल पर्वत पर
गुह्यम्	२ गोपनीय	आसीनः	७. विराजमान
भगवान्	४. भगवान्	हरिम्	८. भगवान् विष्णु की
कुम्भसम्भवः ।	५. अगस्त्य जी ने	अर्चयन् ।।	९. पूजा करते समय

श्लोकार्थ—यह गोपनीय इतिहास भगवान् अगस्त्य जी ने मलयाचल पर्वत पर विराजमान भगवान् विष्णु की पूजा करते समय कहा था।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
यमपुरुषसंवादे षष्ठे स्कन्धे
तृतीयः अध्यायः ।।३।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच

देवासुरनृणां सर्गो नागानां मृगपक्षिणाम्।
सामासिकस्त्वया प्रोक्तो यस्तु स्वायम्भुवेऽन्तरे ॥१॥

पदच्छेद—

देव असुर नृणाम् सर्गः नागानाम् मृग पक्षिणाम्।
सामासिकः त्वया प्रोक्तः यः तु स्वायम्भुवे अन्तरे॥

शब्दार्थ—

देव असुर	७. देवता और असुर	सामासिकः	२. संक्षेप से
नृणाम्	८. मनुष्य	त्वया	१. आपने
सर्गः	१२. सृष्टि (का वर्णन किया)	प्रोक्तः	३. कहा
नागानाम्	९. सर्प	यः तु	४. जो
मृग	१०. पशु	स्वायम्भुवे	५. स्वायम्भुव
पक्षिणाम्।	११. पक्षी आदि को	अन्तरे॥	६. मन्वन्तर में

श्लोकार्थ—आपने संक्षेप से कहा, जो स्वायम्भुवमन्वन्तर मे देवता और असुर, मनुष्य, सर्प, सभी पशु, पक्षी आदि की सृष्टि का वर्णन किया।

द्वितीयः श्लोकः

तस्यैव व्यासमिच्छामि ज्ञातुं ते भगवन् यथा।
अनुसर्गं यथा शक्त्या ससर्ज भगवान् परः ॥२॥

पदच्छेद—

तस्यैव व्यासम् इच्छामि ज्ञातुम् ते भगवन् यथा।
अनुसर्गम् यथा शक्त्या ससर्ज भगवान् परः॥

शब्दार्थ—

तस्यैव व्यासम्	२. उसके विस्तार को	अनुसर्गम्	११. इस सृष्टि के पश्चात्
इच्छामि	४. इच्छा करता हूं	यथा	८. अपनी जिस
ज्ञातुम्	३. जानने की	शक्त्या	९. शक्ति से
ते	५. वे	ससर्ज	१२. सृष्टि करते हैं
भगवन्	१. हे भगवन्!	भगवान्	७. भगवान्
यथा।	१०. जिस प्रकार	परः॥	६. परमपुरुष

श्लोकार्थ—हे भगवन्! उसके विस्तार को जानने की इच्छा करता हूं। वे परमपुरुष भगवान् अपनी जिस शक्ति से जिस प्रकार इस सृष्टि के पश्चात् सृष्टि करते हैं।

तृतीयः श्लोकः

सूत उवाच

इति सम्प्रश्नमाकर्ण्य राजर्षेर्बादरायणिः ।
प्रतिनन्द्य महायोगी जगाद मुनिसत्तमाः ।।३।।

पदच्छेद—

इति सम्प्रश्नम् आकर्ण्य राजर्षेः बादरायणिः ।
प्रतिनन्द्य महायोगी जगाद मुनिसत्तमाः ।।

शब्दार्थ—

इति	४. इस प्रकार	प्रतिनन्द्य	७. उनका अभिनन्दन करके
सम्प्रश्नम्	६. सुन्दर प्रश्नों को सुनकर	महायोगी	२. महान् योगी
राजर्षेः	५. राजर्षि परीक्षित् के	जगाद	८. बोले
बादरायणिः ।	३. श्री शुकदेव जी	मुनिसत्तमाः ।।	१. हे शौनकादि ऋषियो

श्लोकार्थ—हे शौनकादि ऋषियो ! महान् योगी श्री शुकदेव जी इस प्रकार राजर्षि परीक्षित् के सुन्दर प्रश्नों को सुनकर उनका अभिनन्दन करके बोले ।

चतुर्थः श्लोकः

श्री शुकउवाच

यदा प्रचेतसः पुत्रा दश प्राचीनर्वाहिषः ।
अन्तः समुद्रादुन्मग्ना ददृशुर्गां द्रुमैर्वृताम् ।।४।।

पदच्छेद—

यदा प्रचेतसः पुत्राः दश प्राचीनर्बर्हिषः ।
अन्तः समुद्रात् उन्मग्नाः ददृशुः गाम् द्रुमैः वृताम् ।।

शब्दार्थ—

यदा	५. जब	अन्तः समुद्रात्	६. अन्तः समुद्र से
प्रचेतसः	४. प्रचेता	उन्मग्नाः	७. निकले (तब)
पुत्राः	३. पुत्र	ददृशुः	१०. देखा
दश	२. दस	गाम्	८. पृथिवी को
प्राचीनर्बर्हिषः ।	१. राजा प्राचीनर्बर्हि के	द्रुमैः वृताम् ।।	९. वृक्षों से घिरी हुई

श्लोकार्थ—राजा प्राचीन बर्हि के दस पुत्र प्रचेता जब अन्तः समुद्र से निकले तब पृथिवी को वृक्षों से घिरी हुई देखा ।

पंचमः श्लोकः

द्रुमेभ्यः क्रुध्यमानास्ते तपोदीपितमन्यवः।
मुखतो वायुमग्निं च ससृजुस्तद्दिधक्षया ॥५॥

पदच्छेद—

द्रुमेभ्यः क्रुध्यमानाः ते तपः दीपित मन्यवः।
मुखतः वायुम् अग्निम् च ससृजुः तत् द्दिधक्षया ॥

शब्दार्थ—

द्रुमेभ्यः	२. वृक्षों पर	मुखतः वायुम्	९. मुख से वायु
क्रुध्यमानाः	३. क्रोध आया	अग्निम्	११. अग्नि की
ते	१. उन्हें	च	१०. और
तपः	४. तपस्या रूप	ससृजुः	१२. सृष्टि की
दीपित	६. दीप्त	तत्	७. उन वृक्षों को
मन्यवः।	५. क्रोध से	दिधक्षया ॥	८. जलाने के लिए

श्लोकार्थ—उन्हें वृक्षों पर क्रोध आया। ततस्या रूप क्रोध से दीप्त हो उन वृक्षों को जलाने के लिये मुख से वायु और अग्नि की सृष्टि की।

षष्ठः श्लोकः

ताभ्यां निर्दह्यमानांस्तानुपलभ्य कुरूद्वह।
राजोवाच महान् सोमो मन्युं प्रशमयन्निव ॥६॥

पदच्छेद—

ताभ्याम् निर्दह्यमानान् तान् उपलभ्य कुरूद्वह।
राजा उवाच महान् सोमः मन्युं प्रशमयन् इव ॥

शब्दार्थ—

ताभ्याम्	२. उन प्रचेताओं द्वारा	राजा उवाच	१०. राजा ने कहा
निर्दह्यमानान्	५. जलाने लगी	महान् सोमः	६. श्रेष्ठ (वृक्षों के) चन्द्रमा नें
तान्	४. उन वृक्षों को	मन्युं	७. क्रोध कों
उपलभ्य	३. छोड़ी गई अग्नि	प्रशमयन्	९. शान्त करतें हुये
कुरूद्वह।	१. हे परीक्षित्!	इव ॥	८. मानों

श्लोकार्थ—हे परीक्षित्! उन प्रचेताओं के द्वारा छोड़ी हुई अग्नि उन वृक्षों को जलानें लगी। वक्षों के श्रेष्ठ राजा चन्द्रमा ने क्रोध को मानों शान्त करतें हुये कहा।

सप्तमः श्लोकः

मा द्रुमेभ्यो महाभागा दीनेभ्यो द्रोग्धुमर्हथ ।
विवर्धयिषवो यूयं प्रजानां पतयः स्मृताः ।।७।।

पदच्छेद—

मा द्रुमेभ्यः महाभागाः दीनेभ्यः द्रोग्धुम् अर्हथ ।
विवर्धयिषवः ययम् प्रजानाम् पतयः स्मृताः ।।

शब्दार्थ—

मा	६. नहीं हो	विवर्ध	९. अभिवृद्धि की
द्रुमेभ्यः	३. वृक्षों से	यिषवः	१०. इच्छा करते हैं (और)
महाभागाः	१. हे महाभाग्यवान् प्रचेताओ (इन)	यूयम्	७. आप लोग
दीनेंभ्यः	२. दीन	प्रजानाम्	८. प्रजाओं की
द्रोग्धुम्	४. द्रोह करनें	पतयः	११. प्रजापति
अहथ ।	५. योग्य	स्मृताः ।।	१२. कहे जाते हैं

श्लोकार्थ---हे महाभाग्यवान् प्रचेताओ ! इन दीन वृक्षों से द्रोह करने योग्य नहीं हो । आप लोग प्रजाओं का अभिवृद्धि की इच्छा करते हैं और प्रजापति कहे जाते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

अहो प्रजापतिपतिर्भगवान् हरिरव्ययः ।
वनस्पतीनोषधीश्च ससर्जोर्जमिषं विभुः ।।८।।

पदच्छेद—

अहो प्रजापति पतिः भगवान् हरिः अव्ययः ।
वनस्पतीन् ओषधीश्च ससर्ज ऊर्जमिषम् विभुः ।।

शब्दार्थ—

अहो	१. अहो प्रचेताओ !	वनस्पतीन्	७. वनस्पतियों तथा
प्रजापति	२. प्रजापतियों के	ओषधीः च	८. ओषधियों को
पतिः	३. स्वामी	ससर्ज	१०. बनाया है ।
भगवान् हरिः	६. भगवान् श्री हरि ने	ऊर्जमिषं	९. प्रजा के हित के लिए
अव्ययः।	४. अविनाशी	विभुः ।।	५. परमात्मा

श्लोकार्थ—अहो प्रचेताओ ! प्रजपतियों के स्वामी अविनाशी, परमात्मा, भगवान् श्री हरि ने वनस्पतियों तथा ओषधियों को प्रजा के हित के लिये बनाया है ।

नवमः श्लोकः

अन्नं चराणामचरा ह्यपदः पादचारिणाम् ।
अहस्ता हस्तयुक्तानां द्विपदां च चतुष्पदः ॥९॥

पदच्छेद—

अन्नम् चराणाम् अचराः हि अपदः पाद चारिणाम् ।
अहस्ताः हस्त युक्तानाम् द्विपदाम् च चतुष्पदः ॥

शब्दार्थ—

अन्नम्	११. अन्न (भोजन बनाया है)	अहस्ताः	७. विना हाथ का वृक्ष लतादि
चराणाम्	१. चलने वालों के लिए	हस्त	५. हाथ
अचराः	२. स्थिर (फल-पुष्प)	युक्तानाम्	६. वालों के लिये
हि	१२. ही	द्विपदाम्	८. दो पैर वालों के लिये (धान गेहूँ आदि)
अपदः	४. बिना पैर का (घास तृणादि	च	९. और
पाद चारिणाम् ।	३. पैर से चलनें वालों के लिए	चतुष्पदः ॥	१०. चार पैर वालों के लिये

श्लोकार्थ—विधाता ने चलने वालों के लिए स्थिर फल-पुष्पादि, पैर से चलनें वालों के लिए बिना पैर का घास तृणादि, हाथ वालों के लिए बिना हाथ का वृक्ष लतादि, दो पैर वालों के लिए धान गेहूँ आदि और चार पैर वालों के लिए अन्न ही भोजन बनाया है।

दशमः श्लोकः

यूयं च पित्रान्वादिष्टा देवदेवेन चानघाः ।
प्रजासर्गाय हि कथं वृक्षान् निर्दग्धुमर्हथ ॥१०॥

पदच्छेद—

यूयम् च पित्राअन्वादिष्टा देव देवेन च अनघाः ।
प्रजा सर्गाय हि कथम् वृक्षान् निर्दग्धुम् अर्हथ ॥

शब्दार्थ—

यूयम्	२. आप लोगों को	अनघाः	१. हे निष्पाप ! प्रचेताओं
च	४. और	प्रजासर्गाय हि	७. प्रजा की सृष्टि करो
पित्रा	३. पिता	कथम्	१०. कैसे
अन्वादिष्टा	६. आदेश दिया है कि	वृक्षान्	८. वृक्षों को
देव देवेन च ।	५. देवाधिदेव भगवान् ने यह	कि निर्दग्धुम्	९. जलाना
		अर्हथ ॥	११. उचित है।

श्लोकार्थ—हे निष्पाप ! प्रचेताओं ! आप लोगों को पिता और देवाधिदेव भगवान् ने यह आदेश दिया है कि प्रजा कि सृष्टि करो (अतः) वृक्षों का जलाना कैसे उचित है।

एकादशः श्लोकः

आतिष्ठत सतां मार्गं कोपं यच्छत दीपितम् ।
पित्रा पितामहेनापि जुष्टं वः प्रपितामहैः ॥११॥

पदच्छेद---

आतिष्ठत सताम् मार्गम् कोपम् यच्छत दीपितम् ।
पित्रा पितामहेन अपि जुष्टम् वः प्रपितामहैः ॥

शब्दार्थ---

आतिष्ठत	१२. अनुकरण करें।	पित्रा	५. पिता
सताम्	१०. सत्पुरुषों के	पितामहेन	६. पितामह
मार्गम्	११. मार्ग का	अपि	८. भी
कोपम्	३. क्रोध को	जुष्टम्	९. सेवित
यच्छत	४. शान्त करें (और)	वः	१. आप लोग
दीपितम् ।	२. उद्दीप्त	प्रपितामहैः ॥	७. प्रपितामह आदि के द्वारा

श्लोकार्थ---आप लोग उद्दीप्त क्रोध को शान्त करें और पिता पितामह-प्रपितामह आदि के द्वारा भी सेवित सत्पुरुषों के मार्ग का अनुकरण करें।

द्वादशः श्लोकः

तोकानां पितरौ बन्धू दृशः पक्ष्म स्त्रियाः पतिः ।
पतिः प्रजानां भिक्षूणां गृह्यज्ञानां बुधः सुहृत् ॥१२॥

पदच्छेद---

तोकानाम् पितरौ बन्धुः दृशः पक्ष्म स्त्रियाः पतिः ।
पतिः प्रजानाम् भिक्षूणाम् गृही अज्ञानाम् बुधः सुहृत् ॥

शब्दार्थ—

तोकानाम्	२. बालकों की	पतिः	१२. राजा
पितरौ	१. जैसे माता-पिता	प्रजानाम्	१३. प्रजा का
बन्धुः	१४. सहायक है	भिक्षूणाम्	८. भिक्षुओं की
दृशः	४. आँखों की	गृही	७. गृहस्थ
पक्ष्म	३. पलक	अज्ञानाम्	१०. अज्ञानियों की
स्त्रियाः	६. पत्नी की	बुधः	९. ज्ञानी
पतिः ।	५. पति	सुहृत् ॥	११. रक्षा करते हैं (वैसे ही)

श्लोकार्थ—जैसे माता पिता बालकों की, पलक आखों की; पति पत्नी की, गृहस्थ भिक्षुओं की तथा ज्ञानी अज्ञानियों की रक्षा करते हैं वैसे ही राजा प्रजा का सहायक है।

त्रयोदश: श्लोक:

अन्तर्देहेषु भूतानामात्माऽऽस्ते हरिरीश्वरः।
सर्वं तद्धिष्ण्यमीक्षध्वमेवं वस्तोषितो ह्यसौ ॥१३॥

पदच्छेद---

अन्तः देहेषु भतानाम् आत्मा आस्त हरिः ईश्वरः।
सर्वम् तद् धिष्ण्यम् ईक्षध्वम् एवम् वः तोषितः हि असौ ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	३. अन्दर	सर्वम्	९. सभी को
देहेषु	२. शरीर के	तद्	१०. उन भगवान् का
भूतानाम्	१. प्राणियों के	धिष्ण्यम्	११. निवास स्थान
आत्मा	६. आत्मा के रूप में	ईक्षध्वम्	१२. जानों
आस्ते	७. स्थित हैं	एवंवः	८. इस प्रकार आप लोग
हरिः	५. श्री हरि	तोषितः	१४. प्रसन्न
ईश्वरः।	४. भगवान्	हि असौ ॥	१३. ऐसा करने से भगवान्

श्लोकार्थ—प्राणियों के शरीर के अन्दर भगवान् श्री हरि आत्मा के रूप में स्थित हैं। इस प्रकार आप लोग सभी को उन भगवान् का निवास स्थान जानें। ऐसा करने से भगवान् प्रसन्न होंगे।

चतुर्दश: श्लोक:

यः समुत्पतितं देह आकाशान्मन्युमुल्बणम्।
आत्मजिज्ञासया यच्छेत् स गुणानतिवर्तते ॥१४॥

पदच्छेद---

यः समुत् पतितम् देहे आकाशात् मन्युम् उल्बणम्।
आत्म जिज्ञासया यच्छेत् सः गुणान् अतिवर्तते ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जो व्यक्ति	आत्म	४. आत्म
समुत्पतितम्	२. उठे हुये	जिज्ञासया	५. विचार के द्वारा
देहे	६ शरीर में ही	यच्छेत्	६. शान्त कर लेता है
आकाशात्	७. बाहर नहीं निकलने देता	सः	८. वह
मन्युम्	३. क्रोध को	गुणान्	९. गुणों पर
उल्बणम्।	३. उत्कट	अतिवर्तते ॥	१०. विजय प्राप्त कर लेता है

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति उठे हुये क्रोध को आत्म विचार के द्वारा शरीर में ही शान्त कर लेता है बाहर नहीं निकलने देता वह गुणों पर विजय प्राप्त कर लेता है।

पंचदशः श्लोकः

अलं दग्धैर्द्रुमैर्दीनैः खिलानां शिवमस्तु वः ।
वार्क्षी ह्येषा वरा कन्या पत्नीत्वे प्रतिगृह्यताम् ॥१५॥

पदच्छेद—

अलम् दग्धैः द्रुमैः दीनैः खिलानाम् शिवम् अस्तु वः ।
वार्क्षी हि एषा वरा कन्या पत्नीत्वे प्रतिगृह्यताम् ॥

शब्दार्थ—

अलम् दग्धैः	६. न जलाइये	वार्क्षी	७. वृक्षों की
द्रुमैः	५. वृक्षों को	हि एषा	८. इस
दीनैः	४. दीन	वरा	९. श्रेष्ठ
खिलानाम्	३. बचे हुये	कन्या	१०. कन्या को
शिवमस्तु	२. कल्याण हो	पत्नीत्वे	११. पत्नी के रूप में
वः ।	१. आप लोगों का	प्रतिगृह्यताम् ॥	१२. ग्रहण कीजिए

श्लोकार्थ—आप लोगों का कल्याण हो। इन बचे हुए दीन वृक्षों को न जलाइये। वृक्षों की इस श्रेष्ठ कन्या को त्नी के रूप में ग्रहण कीजिए।

षोडशः श्लोकः

इत्यामन्त्र्य वरारोहां कन्यामाप्सरसीं नृप ।
सोमो राजा ययौ दत्त्वा ते धर्मेणोपयेमिरे ॥१६॥

पदच्छेद—

इति आमन्त्र्य वरारोहाम् कन्याम् आप्सरसीम् नृप ।
सोमः राजा ययौ दत्त्वा ते धर्मेण उपयेमिरे ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	राजा	३. राजा
आमन्त्र्य	५. समझा बुझाकर	ययौ	१०. प्रस्थान किया
वरारोहाम्	७. श्रेष्ठ सुन्दरी	दत्त्वा	९. देकर
कन्याम्	८. कन्या को	ते	११. उन प्रचेताओं ने
आप्सरसीम्	६. अप्सरा की	धर्मेण	१२. धर्म के अनुसार
नृप ।	१. हे राजन् परीक्षित्	उपयेमिरे ॥	१३. विवाह किया
सोमः	४. चन्द्रमा नें		

श्लोकार्थ—हे राजन् परीक्षित् ! इस प्रकार राजा चन्द्रमा नें समझा-बुझाकर अप्सरा की श्रेष्ठ सुन्दर कन्या को देकर प्रस्थान किया। उन प्रचेताओं ने धर्म के अनुसार विवाह किया।

सप्तदशः श्लोकः

तेभ्यस्तस्यां समभवद्दक्षः प्राचेतसः किल ।
यस्य प्रजाविसर्गेण लोका आपूरितास्त्रयः ॥२७॥

पदच्छेद—

तेभ्यः तस्याम् समभवद् दक्षः प्राचेतसः किल ।
यस्य प्रजा विसर्गेण लोकाः आपूरिताः त्रयः ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	१. उन्हीं प्रचेताओं के द्वारा	यस्य	७. जिसके द्वारा
तस्याम्	२. उस कन्या से	प्रजा	८. प्रजा की
समभवद्	६. पैदा हुये	विसर्गेण	९. सृष्टि से
दक्षः	५. दक्षः	लोकाः	११. लोक
प्राचेतसः	४. प्रचेता	आपूरिताः	१२. भर गये
किल ।	३. निश्चत ही	त्रयः ॥	१०. तीनों

श्लोकार्थ---उन्हीं प्रचेताओं के द्वारा उस कन्या से निश्चित ही प्रचेता दक्ष पैदा हुये जिसके द्वारा प्रजा की सृष्टि से तीनों लोक भर गये ।

अष्टादशः श्लोकः

यथा ससर्ज भूतानि दक्षो दुहितृवत्सलः ।
रेतसा मनसा चैव तन्ममावहितः शृणु ॥१८॥

पदच्छेद—

यथा ससर्ज भूतानि दक्षः दुहितृवत्सलः ।
रेतसा मनसा च एवं तत् मम अवहितः शृणु ॥

शब्दार्थ—

यथा	४. जिस प्रकार	रेतसा	७. वीर्य से
ससर्ज	९. सृष्टि की	मनसा	५. संकल्प से
भूतानि	८. प्राणियों की	च एव	६. और
दक्षः	१. दक्ष का (अपनी)	तत् मम	१०. उसको मुझसे
दुहितृ	२. कन्याओं पर	अवहितः	११. सावधान होकर
वत्सलः ।	३. प्रेम था (उन्होंनें)	शृणु ।	१२. सुनो

श्लोकार्थ---दक्ष का अपनी कन्याओं पर प्रेम था । उन्होंनें जिस प्रकार संकल्प से और वीर्य से प्राणियों की सृष्टि की, उसको मुझसे सावधान होकर सुनो ।

एकोनविंशः श्लोकः

मनसैवासृजत्पूर्वं प्रजापतिरिमाः प्रजाः ।
देवासुरमनुष्यादीन्नभःस्थलजलौकसः ॥१९॥

पदच्छेद

मनसः एव असृजत् पूर्वम् प्रजापतिः इमाः प्रजाः ।
देव असुर मनुष्य आदीन् नभः स्थल जल ओकसः ॥

शब्दार्थ

मनसः एव	११. मन से ही	देव असुर	७. देवता असुर
असृजत्	१२. सृष्टि की	मनुष्य आदीन्	८. मनुष्य आदि
पूर्वम्	१. पहले	नभः	३. आकाश में
प्रजापतिः	२. प्रजापति दक्ष ने	स्थल	४. स्थल और
इमाः	९. इन	जल	५. जल में
प्रजाः ।	१०. प्रजाओं की	ओकसः ॥	६. निवास करने वाले

श्लोकार्थ---पहले प्रजापति दक्ष ने आकाश में, स्थल और जल में निवास करने वाले देवता, असुर, मनुष्य आदि इन प्रजाओं की मन से सृष्टि की।

विंशः श्लोकः

तमबृंहितमालोक्य प्रजासर्गं प्रजापतिः ।
विन्ध्यपादानुपव्रज्य सोऽचरद् दुष्करं तपः ॥२०॥

पदच्छेद

तम् अबृंहितम् आलोक्य प्रजा सगम् प्रजापतिः ।
विन्ध्य पादान् उपव्रज्य सः अचरत् दुष्करम् तपः ॥

शब्दार्थ

तम्	२. उस	विन्ध्यपादान्	६. विन्ध्याचल पर्वत पर
अबृंहितम्	४. न बढ़ते हुये	उपव्रज्य	७. जाकर
आलोक्य	५. देखकर	सः	८. उसने
प्रजासर्गम्	३. प्रजा की सृष्टि को	अचरत्	१०. आचरण किया
प्रजापतिः ।	१. प्रजापति दक्ष छ	दुष्करम् तपः ॥	९. घनघोर तपस्या का

श्लोकार्थ---प्रजापति दक्ष नें उस प्रजा की सृष्टि को न बढ़ते हुये देखकर विन्ध्याचल पर्वत पर जाकर उसने घनघोर तपस्या का आचरण किया।

एकविंशः श्लोकः

तत्राघमर्षणं नाम तीर्थं पापहरं परम् ।
उपस्पृश्यानुसवनं तपसातोषयद्धरिम् ।।२१।।

पदच्छेद

तत्र अघमर्षणम् नाम तीर्थम् पाप हरम् परम् ।
उपस्पृश्य अनुसवनम् तपसा अतोषयत् हरिम् ।।

शब्दार्थ

तत्र	१. वहाँ	उपस्पृश्य	६. प्रजापति दक्ष उसके पास में जाकर
अघमर्षणम् नाम	३. अघमर्षण नाम का	अनुसवनम्	७. स्नान-सन्ध्या आदि
तीर्थम्	५. तीर्थ है	तपसा	८. तपस्या के द्वारा
पाप हरम्	२. पापों को नष्ट करने वाला	अतोषयत्	१०. आराधना करते थे
परम् ।	४. श्रेष्ठ	हरिम् ।।	९. भगवान् विष्णु की

श्लोकार्थ—वहाँ पापों को नष्ट करनें वाला अघमर्षण नाम का श्रेष्ठ तीर्थ है । प्रजापति दक्ष उसके पास में जाकर स्नान, सन्ध्या आदि तपस्या के द्वारा भगवान् विष्णु की आराधना करते थे ।

द्वाविंशः श्लोकः

अस्तौषीद्धंसगुह्येन भगवन्तमधोक्षजम् ।
तुभ्यं तदभिधास्यामि कस्यातुष्यद् यतो हरिः ।।२२।।

पदच्छेद—

अस्तौषीत् हंस गुह्येन भगवन्तम् अधोक्षजम् ।
तुभ्यम् तद् अभिधास्यामि कस्य अतुष्यद् यतः हरिः ।।

शब्दार्थ

अस्तौषीत्	५. स्तुति की	तुभ्यम्	८. तुम्हें
हंस	२. हंस	तद्	९. उस स्तुति को
गुह्येन	३. गुह्य नाम के स्तोत्र	अभिधास्यामि	१०. सुनाता हूँ
भगवन्तम्	४. भगवान् की	कस्य अतुष्यद्	७. उन पर प्रसन्न हुयें थें
अधोक्षजम् ।	१. दक्ष प्रजापति ने	यतः हरिः ।।	६. जिससे भगवान् श्री हरि

श्लोकार्थ—दक्ष प्रजापति ने हंस गुह्य नाम के स्तोत्र से भगवान् की स्तुति की जिससे भगवान् श्रीहरि उन पर प्रसन्न हुये थे । तुम्हें उस स्तुति को सुनाता हूँ ।

त्रयोविंशः श्लोकः

प्रजापतिरुवाच—

नमः परायावितथानुभूतये गुणत्रयाभासनिमित्तबन्धवे ।
अदृष्टधाम्ने गुणतत्त्वबुद्धिर्भिनिवृत्तमानाय दधे स्वयम्भुवे ।।२३।।

पदच्छेद--

नमः पराय अवितथ अनुभूतये गुणत्रय आभास निमित्त बन्धवे ।
अदृष्ट धाम्ने गुणतत्त्व बुद्धिभिः निवृत्तमानाय दधे स्वयम्भुवे ।।

शब्दार्थ—

नमः	१६. नमस्कार है	अदृष्ट	११. न देखे गये
परायअवितथ	१. प्रकृति से परे सत्य	धाम्ने	१२. स्वरूप वाले
अनुभूतये	२. अनुभूति वाले हैं	गुण	८. गुण
गुण	४. गुणों से युक्त	तत्त्व	९. तत्त्व और
त्रय	३. तीनों	बुद्धिभिः	१०. बुद्धि के द्वारा
आभास	७. भासित होनें वाले	निवृत्तमानाय	१३. अवधि और सीमा से रहित
निमित्त	६. कारण	दधे	१५. धारण करने वाले भगवान् को
बन्धवे ।	५. सृष्टि के	स्वयम्भुवे ।।	१४. स्वयम् प्रकाश को

श्लोकार्थहे--- भगवन् ! आप प्रकृति से परे सत्य अनुभूति वाले हैं। तीनों गुणों से युक्त सृष्टि के कारण भासित होंने वाले गुण-तत्त्व और बुद्धि के द्वारा न देख गये स्वरूप वाले, अवधि और सीमा से रहित, स्वयम् प्रकाश को धारण करने वाले भगवान् को नमस्कार है।

चतुर्विंशः श्लोकः

न यस्य सख्यं पुरुषोऽवैति सख्युः सखा वसन् संवसतः पुरेऽस्मिन् ।
गुणः यथा गुणिनः व्यक्तदृष्टेस्तस्मै महेशाय नमः करोमि ।।२४।।

पदच्छेद--

न यस्य सख्यम् पुरुषः अवैति सख्युः सखा वसन् संवसतः पुरे अस्मिन् ।
गुणः यथा गुणिनः व्यक्त दृष्टेः तस्मै महेशाय नमः करोमि ।।

शब्दार्थ—

न	३. नहीं	पुरे	७. शरीर में
यस्य सख्यम्	१. जिसके सख्य भाव को	अस्मिन् ।	६. इस
पुरुषः	२. जीव	गुणः	१२. गुण को
अवैति	४. जानता है	यथा गुणिनः	११. जैसे गुणी व्यक्ति
सख्युः	५. जीवों के	व्यक्त दृष्टेः	१३. स्पष्ट ही देखता है
सखा	८. मित्र रूप से	तस्मै	१४. उस
वसन्	१०. निवास करते हैं	महेशाय	१५. महेश्वर को
संवसतः	९. इकट्ठे होकर	नमः करोमि ।।	१६. नमस्कार करता हूँ

श्लोकार्थ—जिसके सख्य भाव को जीव नहीं जानता है। जो जीवों के इस शरीर में मित्र रूप से इकट्ठे होकर निवास करते हैं जैसे गुणी व्यक्ति गुण को स्पष्ट ही देखता है। उस महेश्वर को नमस्कार करता हूँ।

पंचविंश: श्लोक:

देहोऽसवोऽक्षा मनवो भूतमात्रा नात्मानमन्यं च विदुः परंयत् ।
सर्वं पुमान् वेद गुणांश्च तज्ज्ञो न वेद सर्वज्ञमनन्तमीडे ।।२५।।

पदच्छेद—

देह: असव: अक्षा: मनव: भूतमात्रा: न आत्मानम् अन्यम् च विदु: परं यत् ।
सर्वम् पुमान् वेद गुणान् च तज्ज्ञ: न वेद सर्वज्ञम् अनन्तम् ईडे ।।

शब्दार्थ—

देह: असव:	१. शरीर प्राण	**सर्वम्**	१३. सभी
अक्षा:	२. आँखें	**पुमान्**	११. मनुष्य
मनव:	३. अन्त: करण	**वेद**	१४. जानता है
भूतमात्रा:	४. पञ्चमहाभूत और पञ्चतन्मात्रा आदि	**गुणान्**	१२. इनके गुणों को
न	८. नहीं	**च**	१५. और
आत्मानम्	५. अपने को	**तज्ज्ञ:**	१६. उसके कारण को
अन्यम्	७. दूसरे को	**न वेद**	१७. नहीं ज न सकता है (उस)
च	६. और	**सर्वज्ञम्**	१८. सर्वज्ञ और
विदु:	९. जानते हैं	**अनन्तम्**	१९. अनन्त की
परंयत् ।	१०. परन्तु	**ईडे ।।**	२०. मैं स्तुति करता हूँ

श्लोकार्थ—शरीर, प्राण, आँखें, अन्त:करण, पञ्चमहाभूत, पञ्चतन्मात्रा आदि अपने को और दूसरे को नहीं जानते हैं। परन्तु मनुष्य इनके सभी गुणों को जानता है और उसके कारण को नहीं जान सकता है। उस सर्वज्ञ और अनन्त की मैं स्तुति करता हूँ।

षड्विंश: श्लोक:

यदोपरामो मनसो नामरूपरूपस्य दृष्टस्मृतिसम्प्रमोषात् ।
य ईयते केवलया स्वसंस्थया हंसाय तस्मै शुचिसद्मने नमः ।।२६।।

पदच्छेद

यदा उपराम: मनस: नाम रूप रूपस्य दृष्टस्मृति सम्प्रमोषात् ।
य: ईयते केवलया स्वसंस्थया हंसाय तस्मै शुचि सद्मने नम: ।।

शब्दार्थ

यदा	१. जब	**य: ईयते**	१०. जो प्रकाशित होता है
उपराम:	७. उपरत हो जाता है (तब)	**केवलया**	८. केवल
मनस:	६. मन का	**स्वसंस्थया**	९. अपनी रूप स्थिति से
नाम रूप	४. नाम रूप वाले	**हंसाय**	१३. भगवान् को
रूपस्य	५. जगत् का निरूपण करने वाले	**तस्मै**	१२. उस
दृष्ट स्मृति	२. दृष्टि और स्मरण शक्ति का	**शुचि सद्मने**	११. पवित्र हृदय रूपी मन्दिर वाले
सम्प्रमोषात् ।	३. लोप हो जाने से	**नम: ।।**	१४. नमस्कार है

श्लोकार्थ—जब दृष्टि और स्मरण शक्ति का लोप हो जाने से नाम रूप वाले जगत् का निरूपण करने वाला मन उपरत हो जाता है तब केवल अपनी रूप स्थिति से जो प्रकाशित होता है, पवित्र हृदय रूपी मन्दिर वाले उस भगवान् को नमस्कार है।

सप्तविंशः श्लोकः

मनीषिणोऽन्तर्हृदि संनिवेशितं स्वशक्तिभिर्नवभिश्च त्रिवृद्भिः ।
वह्निं यथा दारुणि पाञ्चदश्यं मनीषया निष्कर्षन्ति गूढम् ।।२७।।

पदच्छेद---

मनीषिणः अन्तः हृदि संनिवेशितम् स्वशक्तिभिः नवभिः च त्रिवृद्भिः ।
वह्निम् यथा दारुणि पाञ्चदश्यम् मनीषया निष्कर्षन्ति गूढम् ।।

शब्दार्थ—

मनीषिणः	६. मनीषी लोग	वह्निम	३. अग्नि को
अन्तः	७. अन्तर्	यथा	१. जिस प्रकार
हृदि	८. हृदय में	दारुणि	२. लकड़ी में स्थित
संनिवेशितम्	९. स्थित	पाञ्च	४. पन्द्रह
स्वशक्तिभि	१३. शक्तियों में	दश्यम्	५. मन्त्रों के द्वारा प्रकट करते हैं वैसे ही
नवभः	१०. नौ का	मनीषया	१५. बुद्धि से (आपको)
च	१२. अर्थात् सत्ताईस	निष्कर्षन्ति	१६. खोजते हैं
त्रिवृद्भिः ।	११. तीन-गुना	गूढम ।।	१४. छिपे हुये

श्लोकार्थ---जिस प्रकार याज्ञिक लोग लकड़ा में स्थित अग्नि को पन्द्रह मन्त्रों के द्वारा प्रकट करते हैं, वैसे ही मनीषी लोग अन्तर् हृदय में स्थित नौ का तीन गुना अर्थात् सत्ताईस शक्तियों में छिपे हुये अपनी बुद्धि से आपको खोजत हैं।

अष्टाविंशः श्लोकः

स वै ममाशेषविशेषमाया निषेधनिर्वाणसुखानुभूतिः । ।
स सर्वनामा स च विश्वरूपः प्रसीदतामनिरुक्तात्मशक्तिः ।।२८।।

पदच्छेद—

सः वै मम अशेष माया निषेध निर्वाण सुख अनुभूतिः ।
सः सर्वनामा सः च विश्वरूपः प्रसीदताम् अनिरुक्त आत्म शक्तिः ।।

शब्दार्थ—

सः	१४. वह आप	सः	१०. स्थित हैं
वै	१३. निश्चित ही	सर्वनामा	७. सारे नामों वाले
मम	१५ मुझ पर	स	६. वह भगवान्
अशेष	१. सम्पूर्ण रूप से	च	८. और
विशेष माया	२. विशेष माया का	विश्वरूपः	९. वे सारे रूपों में
निषेध	३. निषेध कर देने पर	प्रसीदताम्	१६. प्रसन्न हो
निर्वाण सुख	४. मोक्ष के सुख की	अनिरुक्त	१२. निर्वचन नहीं हो सकता
अनुभूतिः ।	५. अनुभूति होती है	आत्म शक्तिः ।।	११. आप की शक्ति का

श्लोकार्थ---सम्पूर्ण रूप से विशेप माया का निषेध कर देने पर मोक्ष के सुख की अनुभूति होती है। वह भगवान् सारे नामों वाले और सारे रूपों में (स्थित) हैं। आपकी शक्ति का निर्वचन नहीं हो सकता। निश्चित ही वह आप मुझ पर प्रसन्न हों।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यद्यन्निरुक्तं वचसा निरूपितं धियाक्षभिर्वा मनसा वोत यस्य।
मा भूत् स्वरूपं गुणरूपं हि तत्तत् स वै गुणापायविसर्गलक्षणः ।।२९।।

पदच्छेद—

यत् यत् निरुक्तम् वचसा निरूपितम् धिया अक्षभिः वा मनसा वा उत यस्य।
मा भूत् स्वरूपम् गुण रूपम् हि तत् तत सः वै गुण अपाय विसर्ग लक्षणः ।।

शब्दार्थ—

यत् यत्	१. जो कुछ	**मा**	१३. नहीं
निरुक्तम्	३. कहा जाता है	**भूत्**	१४. हो सकता
वचसा	२. वाणी से	**स्वरूपम्**	१२. आपका स्वरूप
निरूपितम्	१०. जाना जाता है	**गुण रूपम्**	१६. गुण रूप है (और आप तो)
धिया	५. बुद्धि से	**हि तत् तत्**	१५. क्योंकि वह तो
अक्षभिः	७. इन्द्रियों से	**सः वै**	११. वह निश्चित ही
वा	६. अथवा	**गुण**	१७. गुणों के
मनसा	९. मन से	**अपाय**	१८. प्रलय और
वा उत	८. अथवा	**विसर्ग**	१९. उत्पत्ति के
यस्य।	४. जिसको	**लक्षणः ।।**	२०. स्थान है

श्लोकार्थ— जो कुछ वाणी से कहा जाता है जिसको बुद्धि से अथवा इन्द्रियों से अथवा मन से जाना जाता है, वह निश्चित ही आपका स्वरूप नहीं हो सकता। क्योंकि वह तो गुण रूप है, और आप तो गुणों के प्रलय और उत्पत्ति के स्थान हैं।

त्रिंशः श्लोकः

यस्मिन् यतो येन च यस्य यस्मै यद् यो यथा कुरुते कार्यते च।
परावरेषां परमं प्राक् प्रसिद्धं तद् ब्रह्म तद्धेतुरनन्यदेकम् ।।३०।।

पदच्छेद—

यस्मिन् यतः येन च यस्य यस्मै यद् यः यथा कुरुते कार्यते च।
पर अवर एषाम् परमम् प्राक् प्रसिद्धम् तद् ब्रह्म तत हेतुः अन्यत् एकम् ।।

शब्दार्थ

यस्मिन्	१. जिसमें	**पर**	१०. कार्य और
यतः	२. जिससे	**अवर**	११. कारण (से रहित)
येन	४. जिसके द्वारा	**एषाम्**	१२. इसके
च	३. और	**परमम्**	१४. श्रेष्ठ
यस्य यस्मै	५. जिसका जिसके लिये	**प्राक्**	१३. पहले
यद् यः	६. जो यह संसार है उसका	**प्रसिद्धम्**	१५. स्वयं सिद्ध स्वरूप से
यथा कुरुते	७. जिस प्रकार से निर्माण करते हैं	**तद् ब्रह्म**	१८. उस ब्रह्म को (नमस्कार है)
कार्यते	९. कराते हैं (जो)	**तत् हेतुः**	१६. इस संसार के कारण
च।	८. और	**अन्यत् एकम् ।।**	१७. अद्वितीय एक

श्लोकार्थ—जिसमें, जिससे और जिसके द्वारा, जिसका, जिसके लिये जो यह संसार है, उसका जिस प्रकार से निर्माण करते और कराते हैं, जो कार्य और कारण से रहित हैं। इसके पहले, श्रेष्ठ, स्वयम् सिद्ध स्वरूप से इस संसार के कारण, अद्वितीय, एक, उस ब्रह्म को नमस्कार है।

एकत्रिंशः श्लोकः

यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै विवादसंवादभुवो भवन्ति ।
कुर्वन्ति चैषां मुहुरात्ममोहं तस्मै नमोऽनन्तगुणाय भूम्ने ।।३१।।

पदच्छेद—

यत् शक्तयः वदताम् वादिनाम् वै विवाद संवाद भुवः भवन्ति ।
कुर्वन्ति च एषाम् मुहुः आत्म मोहम् तस्मै नमः अनन्त गुणाय भूम्ने ।।

शब्दार्थ—

यत्	१. जो आपकी	कुर्वन्ति	१४. कर लेती है
शक्तयः	२. शक्तियाँ	च	१०. और
वदताम्	४. वादी	एषाम्	११. ये
वादिनाम्	५. प्रतिवादियों के	मुहुः	१२. बार-बार
वै	३. निश्चित ही	आत्म मोहम्	१३. अपने मोह में
विवाद	६. विवाद और	तस्मै	१५. उस
संवाद	७. संवाद का	नमः	१८. नमस्कार
भुवः	८. विषय	अनन्त गुणाय	१६. अनन्त गुणों वाले
भवन्ति ।	९. होती है	भूम्ने ।।	१७. भगवान् को

श्लोकार्थ— जो आपकी शक्तियाँ निश्चित ही वादी प्रतिवादियों के संवाद का विषय होती हैं और ये बार-बार अपने मोह में कर लेती हैं उस अनन्त गुणों वाले भगवान् को नमस्कार है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

अस्तीति नास्तीति च वस्तुनिष्ठयोरेकस्थयोर्भिन्नविरुद्धधर्मयोः ।
अवेक्षितं किञ्चन योगसांख्ययोः समं परं ह्यनुकूलं बृहत्तत् ।।३२।।

पदच्छेद---

अस्ति इति न अस्ति इति च वस्तुनिष्ठयोः एकस्थयोः भिन्न विरुद्ध धर्मयोः ।
अवेक्षितम् किञ्चन योग सांख्ययोः समम् परम् हि अनुकूलम् बृहत् तत् ।।

शब्दार्थ---

अस्ति इति	८. ऐसा कहते हैं	अवेक्षितम्	१०. देखते हैं (और)
न	११. नहीं है	किञ्चन	५. कुछ
अस्ति	८. हैं	योग	६. योग वाले भगवान् को
इति	१२. इस प्रकार कहते हैं	सांख्ययोः	९. सांख्य योग वाले शरीर से युक्त
च	१०. और	समम्	१६. समान
वस्तु निष्ठयोः	७. शरीर से युक्त	परम्	१७. श्रेष्ठ और
एकस्थयोः	१. एक वस्तु में स्थित	हि	१३. किन्तु
भिन्न	२. अलग-अलग	अनुकूलम्	१५. अनुकूल
विरुद्ध	३. विरोधी	बृहत्	१८. व्यापक हैं
धर्मयोः ।	४. दो धर्म हैं	तत् ।।	१४. आप

श्लोकार्थ— एक वस्तु में स्थित अलग-अलग विरोधी दो धर्म हैं। कुछ योग वाले भगवान् को शरीर से युक्त ऐसा कहते हैं। और सांख्य योग वाले शरीर से युक्त देखते हैं और नहीं हैं इस प्रकार कहते हैं। किन्तु आप अनुकूल, समान, श्रेष्ठ और व्यापक हैं।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

योऽनुग्रहार्थं भजतां पादमूलमनामरूपो भगवाननन्तः।
नामानि रूपाणि च जन्मकर्मभिर्भेजे स मह्यं परमः प्रसीदतु ॥

पदच्छेद---

यः अनुग्रहार्थम् भजताम् पाद मूलम् अनाम रूपः भगवान् अनन्तः।
नामानि रूपाणि च जन्म कर्मभिः भेजे सः महयम् परमः प्रसीदतु ॥

शब्दार्थ---

यः	१. जो मनुष्य	नामानि	१२. अनेक नामों
अनुग्रहार्थम्	२. अनुग्रह के लिये आपके	रूपाणि	१४. अनेक रूपों को
भजताम्	५. भजन करते हैं	च	१३. और
पाद	३. चरण	जन्म	८. जन्म लेकर
मूलम्	४. कमल का	कर्मभिः	९. कर्मो के द्वारा
अनाम	६. नाम रहित	भेजे	१५. धारण करते हैं
रूपः	७. रूप रहित	सः महयम्	१६. वह भगवान् मुझ पर
भगवान्	१०. भगवान्	परमः	१७. अत्यधिक
अनन्तः।	११. अनन्त	प्रसीदतु ॥	१८. प्रसन्न हों

श्लोकार्थ---जो मनुष्य अनुग्रह के लिये आपके चरण कमल का भजन करते हैं। नाम-रहित रूपरहित (स्वयं) जन्म लेकर कर्मो के द्वारा भगवान् अनन्त अनेक नामों और अनेक रूपों को धारण करते हैं, वह भगवान् मुझ पर अत्यधिक प्रसन्न हों।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यः प्राकृतैर्ज्ञानपथैर्जनानां यथाशयं देहगतो विभाति।
यथानिलः पार्थिवमाश्रितो गुणं स ईश्वरो मे कुरुतान्मनोरथम् ॥

पदच्छेद---

यः प्राकृतैः ज्ञान पथैः जनानाम् यथा आशयम् देह गतः विभाति।
यथा अनिलः पार्थिवम् आश्रितः गुणम् सः ईश्वरः मे कुरुतात् मनोरथम् ॥

शब्दार्थ---

यः	४. जो (ईश्वर)	यथा	१०. जिस प्रकार
प्राकृतैः	२. साधारण	अनिल	११. वायु
ज्ञान पथैः	३. ज्ञान मार्ग के द्वारा	पार्थिवम्	१२. गन्ध का
जनानाम्	१. लोगों को	आश्रितः	१३. आश्रय लेकर
यथा	६. अनुसार	गुणम्	१४. सुगन्धित होती हैं
आशयम्	५. उनकी भावना के	सः ईश्वरः	१५. वह ईश्वर
देह	७. हृदय में	मे	१६. मेरे
गतः	८. स्थित होकर	कुरुतात्	१८. पूर्ण करें
विभाति।	९. प्रतीत होता है	मनोरथम् ॥	१७. मनोरथ को

श्लोकार्थ— लोगों को साधारण ज्ञान मार्ग के द्वारा जो ईश्वर उनकी भावना के अनुसार हृदय में स्थित होकर उसी प्रकार प्रतीत होता है जिस प्रकार वायु गन्ध का आश्रय लेकर सुगन्धित होता है॥ वह मेरे मनोरथों को पूर्ण करें।

पंचत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इति स्तुतः संस्तुवतः स तस्मिन्नघमर्षणे ।
आविरासीत् कुरुश्रेष्ठ भगवान् भक्तवत्सलः ।।३५।।

पदच्छेद—

इति स्तुतः संस्तुवतः सः तस्मिन् अघमर्षणे ।
आविरासीत् कुरुश्रेष्ठ भगवान् भक्त वत्सलः ।।

शब्दार्थ—

इति स्तुतः	५. इस प्रकार के स्तोत्र से	आविरासीत्	१०. सामने प्रकट हुये
संस्तुवतः	६. स्तुति की (तब)	कुरुश्रेष्ठ	१. हे परीक्षित् !
सः	४. प्रजापति दक्ष ने	भगवान्	९. भगवान् (उनके)
तस्मिन्	२. उस	भक्त	७. भक्त
अघमर्षणे ।	३. अघमर्षण तीर्थ में (जब)	वत्सलः ।।	८. वत्सल

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! उस अघमर्षण तीर्थ में जब प्रजापति दक्ष नें इस प्रकार के (हंस गुह्यनामक) स्तोत्र से स्तुति की तब भक्त वत्सल भगवान् उनके सामने प्रकट हुये ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

कृतपादः सुपर्णांसे प्रलम्बाष्टमहाभुजः ।
चक्रशङ्खासिचर्मेषुधनुःपाशगदाधरः ।।३६।।

पदच्छेद—

कृत पादः सुपर्ण अंसे प्रलम्ब अष्ट महाभुजः ।
चक्र शङ्ख असि चर्म इषु धनुः पाश गदाधरः ।।

शब्दार्थ—

कृत	४. रक्खे थे (अपनी)	चक्र	८. चक्र
पादः	३. चरण को	शङ्ख	९. शंख
सुपर्ण	१. (वह भगवान्) गरुड़ के	असि	१०. तलवार
अंसे	२. कन्धे पर	चर्म इषु	११. ढाल-बाण
प्रलम्ब	५. विशाल	धनुः	१२. धनुष
अष्ट	६. आठ	पाश	१३. पाश और
महाभुजः ।	७. बड़ी भुजाओं में	गदाधरः ।।	१४. गदा धारण किये थे ।

श्लोकार्थ—वह भगवान् गरुड़ के कन्धे पर चरण को रखे हुए थे । अपनी विशाल आठ बड़ी भुजाओं में चक्र, शंख, तलवार, ढाल, बाण, धनुष, पाश और गदा धारण किये थे ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पतिवासा घनश्यामः प्रसन्नवदनेक्षणः ।
वनमालानिवीताङ्गो लसच्छ्रीवत्सकौस्तुभः ॥३७॥

पदच्छेद—

पतिवासाः घनश्यामः प्रसन्न वदन ईक्षणः ।
वनमाला निवीतअङ्गः लसत् श्रीवत्स कौस्तुभः ॥

शव्दार्थ—

पतिवासाः	१. पीताम्बरधारी	वनमाला	७. वनमाला (तथा)
घनश्यामः	२. बादल के समान श्यामल	निवीताङ्गः	६. घुटनों तक की
प्रसन्न	३. प्रसन्न	लसत्	१०. सुशोभित हो रही थी
वदन	४. मुख मण्डल और	श्रीवत्स	८. श्रीवत्स और
ईक्षणः ।	५. नेत्र वाले भगवान् की	कौस्तुभः ॥	९. कौस्तुभ मणि

श्लोकार्थ— पीताम्वरधारी के समान श्यामल, प्रसन्न, मुखमण्डल और नेत्र वाले भगवान् की घुटनों तक की वनमाला तथा श्रीवत्स और कौस्तुभ मणि सुशोभित हो रही थी।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

महाकिरीटकटकः स्फुरन्मकरकुण्डलः ।
काञ्च्यङ्गलीयवलयनूपुराङ्गदभूषितः ॥३८॥

पदच्छेद—

महाकिरीट कटकः स्फुरन् मकर कुण्डलः ।
काञ्ची अंगुलीय वलय नूपुर अङ्गद भूषितः ॥

शब्दार्थ—

महाकिरीट	१. बहुमूल्य किरीट	काञ्ची	६. करधनी
कटकः	२. कङ्कन और	अंगुलीय	७. अंगूठी
स्फुरन्	५. सुशोभित हो रहे थे (तथा)	वलय	८. कड़े
मकर	३. मकर की आकृति के	नूपुर अङ्गद	९. पायजेब और बाजूबन्द
कुण्डलः ।	४. कुण्डल	भूषितः ॥	१०. सुशोभित थे

श्लोकार्थ— बहुमूल्य किरीट, कङ्कन और मकर की आकृति के कुण्डल सुशोभित हो रहे थे तथा करधनी, अंगूठी, कड़े, पायजेब और बाजूबन्द सुशोभित थे।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

त्रैलोक्यमोहनं रूपं बिभ्रत् त्रिभुवनेश्वरः।
वृतो नारदनन्दाद्यैः पार्षदैः सुरयूथपैः ॥३९॥

पदच्छेद—

त्रैलोक्य मोहनम् रूपम् बिभ्रत् त्रिभुवनईश्वरः।
वृतः नारद नन्द आद्यैः पार्षदैः सुर यूथपैः॥

शब्दार्थ—

त्रैलोक्य	२. तीनों लोकों को	वृतः	१०. घिरे हुये थे
मोहनम्	३. मोहित करने वाला	नारद नन्द	६. नारद नन्द
रूपम्	४. रूप	आद्यैः	७. आदि
बिभ्रत्	५. धारण किया था (वे)	पार्षदैः	८. पार्षदों से (तथा)
त्रिभुवनईश्वरः।	१. त्रिभुवन के स्वामी भगवान् ने	सुर यूथपैः॥	९. देव गणों से

श्लोकार्थ—त्रिभुवन के स्वामी भगवान् ने तीनों लोको को मोहित करने वाला रूप धारण किया था। नारद-नन्द आदि पार्षदों से तथा देवगणों से घिरे हुये थे।

चत्वारिंशः श्लोकः

स्तूयमानोऽनुगायद्भिः सिद्धगन्धर्वचारणैः।
रूपं तन्महदाश्चर्यं विचक्ष्यागतसाध्वसः ॥४०॥

पदच्छेद—

स्तूयमानः अनुगायद्भिः सिद्ध गन्धर्व चारणैः।
रूपम् तत् महद् आश्चर्यम् विचक्ष्य आगत साध्वसः॥

शब्दार्थ—

स्तूयमानः	५. स्तुति कर रहे थे तथा	तद्	९. उनके
अनुगायद्भिः	६. गुणों का गान कर रहे थे	महद्	७. अत्यधिक
सिद्ध	१. सिद्ध	आश्चर्यम्	८. आश्चर्यमय
गन्धर्व	२. गन्धर्व और	विचक्ष्य	११. देखकर (वे दक्ष)
चारणैः	३. चारणादि	आगत	४. आये हुये भगवान् की
रूपम्।	१०. रूप को	साध्वसः।।	१२. सहम गये

श्लोकार्थ—सिद्ध, गन्धर्व और चारणादि आये हुये भगवान् की स्तुति तथा गुणों का गान कर रहे थे। इस प्रकार अत्यधिक आश्चर्यमय उनके रूप को देखकर वे दक्ष सहम गये।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

ननाम दण्डवद् भूमौ प्रहृष्टात्मा प्रजापतिः ।
न किञ्चनोदीरयितुमशकत् तीव्रया मुदा ।
आपूरितमनोद्वारैर्ह्रदिन्य इव निर्झरैः ।।४१।।

पदच्छेद—

ननाम दण्डवत् भूमौ प्रहृष्टात्मा प्रजापतिः ।
न किञ्चन उद्ईरयितुम् अशकत् तीव्रया मुदा ।
आपूरित मनोद्वारैः ह्रदिन्यः इव निर्झरैः ।।

शब्दार्थ—

ननाम	५. प्रणाम किया	अशकत्	९. समर्थ हो सके
दण्डवत्	४. दण्डवत्	तीव्रया मुदा	६. अत्यधिक प्रसन्नता के कारण
भूमौ	३. पृथिवी में	आपूरित	११. भर गई
प्रहृष्टात्मा	२. प्रसन्न मन से	मनोद्वारैः	१०. उनकी इन्द्रियाँ
प्रजापतिः ।	१. प्रजापति दक्ष ने	ह्रदिन्यः	१४. नदियाँ भर जाती हैं
न	८. नहीं	इव	१२. जैसे
किञ्चन उद्ईरयितुम्	७. कुछ भी कहने में	निर्झरैः ।।	१३. झरनों के जल से

श्लोकार्थ—प्रजापति दक्ष ने प्रसन्न मन से पृथिवी में दण्डवत् प्रणाम किया । (वे) अत्यधिक प्रसन्नता के कारण कुछ भी कहने में समर्थ नहीं हो सके । उनकी इन्द्रियाँ भर गईं । जैसे झरनों के जल से नदियां भर जाती हैं ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तं तथावनतं भक्तं प्रजाकामं प्रजापतिम् ।
चित्तज्ञः सर्वभूतानामिदमाह जनार्दनः ।।४२।।

पदच्छेद—

तम् तथा अवनतम् भक्तम् प्रजाकामम् प्रजापतिम् ।
चितज्ञः सर्वभूतानान् इदम् आह जनार्दनः ।।

शब्दार्थ—

तम्	३. उस	चित्तज्ञः	६. हृदय की बात जानने वाले
तथा अवनतम्	५. उस प्रकार झुके हुये (देखकर)	सर्व	८. सम्पूर्ण
भक्तम्	२. अपने भक्त	भूतानाम्	७. प्राणियों के
प्रजाकामम्	१. प्रजा की वृद्धि की इच्छा वाले	इदम् आह	१०. इस प्रकार कहा
प्रजापतिम् ।	४. प्रजापति दक्ष को	जनार्दनः ।।	९. भगवान् ने

श्लोकार्थ—प्रजा की वृद्धि की इच्छा वाले अपने भक्त उस प्रजापति दक्ष को उस प्रकार झुके हुये देखकर सम्पूर्ण प्राणियों के हृदय की बात जानने वाले भगवान् ने इस प्रकार कहा ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच

प्राचेतस महाभाग संसिद्धस्तपसा भवान्।
यच्छ्रद्धया मत्परया मयि भावं परं गतः ॥४३॥

पदच्छेद—

प्राचेतस महाभाग संसिद्धः तपसा भवान्।
यत् श्रद्धया मत्परया मयि भावम् परम् गतः ॥

शब्दार्थ—

प्राचेतस	२. दक्ष	यत् श्रद्धया	६. जो कि श्रद्धा से
महाभाग	१. हे महाभाग्यवान्!	मत्परया मयि	७. मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में
संसिद्धः	५. सिद्ध हो गई	भावम्	९. प्रेम-भाव
तपसा	४. तपस्या	परम्	८. अधिक
भवान्।	३. आपकी	गतः ॥	१०. उदय हो गया है

श्लोकार्थ—हे महाभाग्यवान् दक्ष! आपकी तपस्या सिद्ध हो गई। जो कि श्रद्धा से मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में अधिक प्रेम-भाव उदय हो गया है।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्रीतोऽहं ते प्रजानाथ यत्तेऽस्योद्बृहणं तपः।
ममैष कामो भूतानां यद् भूयासुर्विभूतयः ॥४४॥

पदच्छेद—

प्रीतः अहम् ते प्रजानाथ यत् ते अस्य उद्बृहणम् तपः।
मम एषः कामः भूतानाम् यद् भूयासुः विभूतयः ॥

शब्दार्थ—

प्रीतः	३. प्रसन्न हूँ	मम	८. मेरी
अहम् ते	२. मैं तुम पर	एषः	९. यह
प्रजानाथ	१. हे प्रजापति! दक्ष	कामः	१०. कामना है
यत्-ते	४. जो तुमने	भूतानाम्	१२. समस्त प्राणियों की
अस्य	५. इस संसार की	यद्	११. की
उद्बृंहणम्	६. वृद्धि के लिये	भूयासुः	१३. अभिवृद्धि हो
तपः।	७. तपस्या की है	विभूतयः ॥	१४. और समृद्ध हो

श्लोकार्थ—हे प्रजापति दक्ष! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। जो तुमने इस संसार की वृद्धि के लिए तपस्या की है। मेरी यह कामना है कि समस्त प्राणियों की अभिवृद्धि और समृद्धि हो।

पंचचत्वारिंशः श्लोकः

ब्रह्मा भवो भवन्तश्च मनवो विबुधेश्वराः ।
विभूतयो मम ह्येता भूतानां भूतिहेतवः ॥४५॥

पदच्छेद—

ब्रह्मा भवः भवन्तः च मनवः विबुधेश्वराः ।
विभूतयः मम हि एताः भूतानाम् भूति हेतवः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मा	१. ब्रह्मा	विभूतयः	९. विभूतियाँ है तथा
भवः	२. शंकर	मम	८. मेरी
भवन्तः	३. आप प्रजापति	हि एताः	७. ये सब
च	५. और	भूतानाम्	१०. सभी प्राणियों के
मनवः	४. मनु	भूति	११. कल्याण के
विबुधेश्वराः ।	६. देववण	हेतवः ॥	१२. कारण हैं

श्लोकार्थ—ब्रह्मा, शंकर, आप, प्रजापति, मनु और देवगण ये सब मेरी विभूतियाँ हैं । तथा सभी प्राणियों के कल्याण के कारण हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

तपो मे हृदयं ब्रह्मंस्तनुर्विद्या क्रियाऽऽकृतिः ।
अङ्गानि क्रतवो जाता धर्म आत्मासवः सुराः ॥४६॥

पदच्छेद—

तपः मे हृदयम् ब्रह्मन् तनुः विद्या क्रिया आकृतिः ।
अङ्गानि क्रतवः जाताः धर्म आत्मा असवः सुराः ॥

शब्दार्थ—

तपः	१. तपस्या	अङ्गानि	८. अङ्गों से
मे हृदयम्	२. मेरा हृदय है	क्रतवः	७. यज्ञ
ब्रह्मन्	१४. हे ब्रह्मन्	जाताः	९. उत्पन्न हुये हैं
तनुः	४. शरीर हैं	धर्मः	१०. धर्म
विद्या	३. विद्या	आत्मा	११. मन है तथा
क्रिया	५. कर्म	असवः	१३. प्राण हैं
आकृतिः ।	६. आकृति है	सुराः ॥	१२. देवता

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! तपस्या मेरा हृदय है । विद्या शरीर है, कर्म आकृति है, यज्ञ अङ्गों से उत्पन्न हुए हैं । धर्म मन है, तथा देवता प्राण हैं ।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

अहमेवासमेवाग्रे नान्यत् किञ्चान्तरं बहिः ।
संज्ञानमात्रमव्यक्तं प्रसुप्तमिव विश्वतः ॥४७॥

पदच्छेद—

अहम् एव आसम् एव अग्रे न अन्यत् किञ्च अन्तरम् बहिः ।
संज्ञान मात्रम् अव्यक्तम् प्रसुप्तम् इव विश्वतः ॥

शब्दार्थ—

अहम् एव	२ मैं ही	संज्ञान	८. ज्ञान स्वरूप और
आसम् एव	३. निष्क्रिय रूप में	मात्रम्	७. (मैं) केवल
अग्रे	१. सृष्टि से पहले था	अव्यक्तम्	९. अव्यक्त
न	६. नहीं था	प्रसुप्तम्	११. सोते हुए के
अन्यत् किञ्च	५. दूसरा कुछ	इव	१२. समान प्रतीत हो रहा था
अन्तरम् बहिः ।	४. अन्दर और बाहर	विश्वतः ॥	१०. सब ओर से

श्लोकार्थ—सृष्टि से पहले मैं ही निष्क्रिय रूप में था। अन्दर और बाहर दूसरा कुछ नहीं था। मैं केवल ज्ञान स्वरूप और अव्यक्त सब ओर से सोते हुए के समान प्रतीत हो रहा था।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मय्यनन्तगुणेऽनन्ते गुणतो गुणविग्रहः ।
यदाऽऽसीत् तत एवाद्यः स्वयम्भूः समभूदजः ॥४८॥

पदच्छेद—

मयि अनन्त गुणे अनन्ते गुणतः गुणविग्रहः ।
यदा आसीत् तत एव आद्यः स्वयम्भूः सम् अभूत् अजः ॥

शब्दार्थ—

मयि	१. मैं	यदा	६. जब
अनन्त	२. अनन्त	आसीत्	९. था
गुणे	३. गुणों का आधार तथा	तत एव	१०. तब ही
अनन्ते	४. अनन्त	अद्यः	१२. आदि पुरुष
गुणतः	५. गुणों वाला हूँ	स्वयम्भूः	११. अयोनिजा
गुण	७. गुणमयी	सम् अभूत्	१४. उत्पन्न हुए
विग्रहः ।	८. माया से यह शरीर प्रकट हुआ	अजः ॥	१३. ब्रह्मा जी

श्लोकार्थ—मैं अनन्त गुणों का आधार तथा अनन्त गुणों वाला हूँ। जब गुणमयी माया से यह शरीर प्रकट हुआ था। तब ही अयोनिजा आदि पुरुष ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए।

एकोनपंचाशः श्लोकः

स वै यदा महादेवो मम वीर्योपबृंहितः ।
मेने खिलमिवात्मानमुद्यतः सर्गकर्मणि ॥४९॥

पदच्छेद—

सः वै यदा महादेवः मम वीर्य उपबृंहितः ।
मेने खिलम् इव आत्मानम् उद्यतः सर्गकर्मणि ॥

शब्दार्थ—

सः	३. उन	मेने	१४. पाया
वै	७. निश्चय ही	खिलम्	१३. असमर्थ
यदा	१. जब	इव	१२. उस समय
महादेवः	४. देव शिरोमणि ब्रह्मा में	आत्मानम्	११. अपने को
मम	२. मैंने	उद्यतः	१०. तैयार हुए (उस समय)
वीर्य	५. पराक्रम का	सर्ग	८. सृष्टि
उपबृंहितः ।	६. संचार किया (तब वे)	कर्मणि ॥	९. करने के लिए

श्लोकार्थ—जब मैंने उन देव शिरोमणि ब्रह्मा में पराक्रम का सञ्चार किया तब वे निश्चय ही सृष्टि करने के लिए तैयार हुए (किन्तु) उस समय अपने को असमर्थ पाया ।

पंचाशः श्लोकः

अथ मेऽभिहितो देवस्तपोऽतप्यत दारुणम् ।
नव विश्वसृजो युष्मान् येनादावसृजद् विभुः ॥५०॥

पदच्छेद—

अथ मे अभिहितः देवः तपः अतप्यत दारुणम् ।
नव विश्वसृजः युष्मान् येन आदौ असृजत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. इसके बाद	नव	१२. नौ
मे	२. मैंने	विश्वसृजः	१३. प्रजापतियों की
अभिहितः	४. आज्ञा दी कि	युष्मान्	११. तुम
देवः	३. उन ब्रह्मा को	येन	८. जिससे
तपः	५. तपस्या करो (उन्होंने)	आदौ	१०. पहले-पहल
अतप्यत	७. तपस्या की	असृजत्	१४. सृष्टि की
दारुणम् ।	६. कठोर	विभुः ॥	९. ब्रह्मा ने

श्लोकार्थ—इसके बाद मैंने उन ब्रह्मा को आज्ञा दी कि तपस्या करो । उन्होंने कठोर तपस्या की । जिससे ब्रह्मा ने पहले-पहल तुम नौ प्रजापतियों की सृष्टि की ।

एकपंचाशः श्लोकः

एषा पञ्चजनस्याङ्ग दुहिता वै प्रजापतेः ।
असिक्नी नाम पत्नीत्वे प्रजेश प्रतिगृह्यताम् ॥५१॥

पदच्छेद—

एषा पञ्च जनस्य अङ्ग दुहिता वै प्रजापतेः ।
असिक्नी नाम पत्नीत्वे प्रजेश प्रतिगृह्यताम् ॥

शब्दार्थ---

एषा	३. यह	असिक्नी	६. असिक्नी
पञ्चजनस्य	४. पांच जन	नाम	७. नाम की
अङ्ग	१. हे दक्ष !	पत्नीत्वे	९. पत्नी के रूप में
दुहिता	८. कन्या है (इसे)	प्रजेश	२. प्रजापति
वै प्रजापतेः ।	५. प्रजापति की	प्रतिगृह्यताम् ॥	१०. ग्रहण करो

श्लोकार्थ---हे दक्ष प्रजापति ! यह पञ्चजन प्रजापति की असिक्नी नाम की कन्या है। इसे पत्नी के रूप में ग्रहण करो।

द्विपंचाशः श्लोकः

मिथुनव्यवायधर्मस्त्वं प्रजासर्गमिमं पुनः ।
मिथुनव्यवायधर्मिण्यां भूरिशो भावयिष्यसि ॥५२॥

पदच्छेद—

मिथुन व्यवाय धर्मः त्वम् प्रजासर्गम् इमम् पुनः ।
मिथुन व्यवाय धर्मिण्याम् भूरिशः भावयिष्यसि ॥

शब्दार्थ—

मिथुन	२. सहवास रूप	मिथुन	७. सहवास रूप
व्यवाय	३. गृहस्थ	व्यवाय	८. गृहस्थ के
धर्मः	४. धर्म को	धर्मिण्याम्	९. धर्म कोस्वोकार करें (जिससे तुम)
त्वम्	१. तुम	भूरिशः	१०. अत्यधिक प्रजा वाले
प्रजासर्गम्	५. प्रजा को वृद्धि के लिये (तथा)	भावयिष्यसि ॥	११. हो जाओगे
इमम् पुनः ।	१. यह असिक्नी भी फिर		

श्लोकार्थ—तुम सहवास रूप गृहस्थ धर्म को प्रजा की वृद्धि के लिये तथा यह असिक्नी भी फिर सहवास रूप गहस्थ के धर्म को स्वीकार करें। जिससे तुम अत्यधिक प्रजावाले हो जाओगे।

त्रिपंचाशः श्लोकः

त्वत्तःऽधस्तात् प्रजाः सर्वा मिथुनीभूय मायया।
मदीयया भविष्यन्ति हरिष्यन्ति च मे बलिम् ॥५३॥

पदच्छेद—

त्वत्तः अधस्तात् प्रजाः सर्वाः मिथुनीभूय मायया।
मदीयया भविष्यन्ति हरिष्यन्ति च मे बलिम् ॥

शब्दार्थ—

त्वत्तः	१. तुम्हारे द्वारा	मदीयया	३. किन्तु अब मेरी
अध स्तात्	२. मानसी सृष्टि होती थी	भविष्यन्ति	८. उत्पन्न होगी
प्रजाः	६. प्रजा	हरिष्यन्ति	१२. तत्पर रहेगी
सर्वाः	५. सम्पूर्ण	च	९. और
मिथुनीभूय	७. स्त्री पुरुष के संयोग से	मे	१०. मेरी
मायया।	४. माया के द्वारा	बलिम् ॥	११. सेवा में

श्लोकार्थ—अब तक तुम्हारे द्वारा मानसी सृष्टि होती थी किन्तु अब मेरी माया के द्वारा सम्पूर्ण प्रजा स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न होगी और मेरी सेवा में तत्पर रहेगी।

चतुःपंचाशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इत्युक्त्वा मिषतस्तस्य भगवान् विश्वभावनः।
स्वप्नोपलब्धार्थं इव तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥५४॥

पदच्छेद—

इति उक्त्वा मिषतः तस्य भगवान् विश्वभावनः।
स्वप्न उपलब्धार्थः इव तत्रैव अन्तर्दधे हरिः ॥

शब्दार्थ—

इति	४. ऐसा	स्वप्नः	९. स्वप्न में
उक्त्वा	५. कहकर	उपलब्धार्थम्	१०. प्राप्त हुये धन के
मिषतः	७. सामने	इव	११. समान
तस्य	६. उनके	तत्रैव	८. वहीं
भगवान्	२. भगवान्	अन्तर्दधे	१२. अन्तर्धान हो गये
विश्वभावनः।	१. सम्पूर्ण विश्व को जीवन देने वाले	हरिः ॥	३. श्री हरि

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण विश्व को जीवन देने वाले भगवान् श्री हरि ऐसा कहकर उनके सामने वहीं स्वप्न में प्राप्त हुये धन के समान अन्तर्धान हो गये।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठे स्कन्धे यमपुरुषसंवादे
चतुर्थः अध्यायः ॥४॥

षष्ठः स्कन्धः

पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्री शुक उवाच

तस्यां स पांचजन्यां वै विष्णुमायोपबृंहितः ।
हर्यश्वसंज्ञानयुतं पुत्रानजनयद् विभुः ॥१॥

पदच्छेद—

तस्याम् च पाञ्चजन्यां वै विष्णु माया उपबृंहितः।
हर्यश्व संज्ञान युतम् पुत्रान् अजनयद विभुः॥

शब्दार्थ—

तस्याम् च	४. उस	हर्यश्व	६. हर्यश्व
पाञ्चजन्याम् वै	५. पञ्चजन की पुत्री से निश्चित ही	संज्ञानयुतम्	७. नाम के दस हजार
विष्णु माया	१. भगवान् विष्णु की माया के	पुत्रान्	८. पुत्रों को
उपबृंहितः।	२. सञ्चार से दक्ष प्रजापति	अजनयद्	९. उत्पन्न किया
		विभुः॥	३. समर्थ हो गये

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु की माया के सञ्चार से दक्ष प्रजापति समर्थ हो गये। उस पञ्चजन की कन्या से उन्होंने निश्चित ही हर्यश्व नाम के दस हजार पुत्रों को उत्पन्न किया।

द्वितीयः श्लोकः

अपृथग्धर्मशीलास्ते सर्वे दाक्षायणा नृप ।
पित्रा प्रोक्ताः प्रजासर्गे प्रतीचीं प्रययुर्दिशम् ॥२॥

पदच्छेद—

अपृथक् धर्मशीलाः ते सर्वे दाक्षायणाः नृप।
पित्रा प्रोक्ताः प्रजा सर्गे प्रतीचीम् प्रययुः दिशम्॥

शब्दार्थ—

अपृथक्	५. समान	पित्रा	८. पिता दक्ष ने (उन्हें)
धर्म	६. धर्म (और)	प्रोक्ताः	११. आज्ञा दी (तब वे)
शीलः	७. शील वाले थे	प्रजा	९. प्रजा की
ते	२. वे	सर्गे	१०. सृष्टि के लिये
सर्वे	३. सभी	प्रतीचीम्	१२. पश्चिम
दाक्षायणाः	४. दक्ष के पुत्र	प्रययुः	१४. गये
नृप।	१. हे राजन् परीक्षित् !	दिशम्॥	१३. दिशा को

श्लोकार्थ—हे राजन् परीक्षित् ! वे सभी दक्ष के पुत्र समान धर्म और शील वाले थे। पिता दक्ष ने उन्हें प्रजा को सृष्टि के लिये आज्ञा दी। तब वे पश्चिम दिशा को गये।

तृतीयः श्लोकः

तत्र नारायणसरस्तीर्थं सिन्धुसमुद्रयोः ।
सङ्गमो यत्र सुमहन्मुनिसिद्धनिषेवितम् ।।३।।

पदच्छेद—

तत्र नारायण सरः तीर्थम् सिन्धु समुद्रयोः ।
सङ्गमः यत्र सुमहत् मुनि सिद्ध निषेवितम् ।।

शब्दार्थ—

तत्र	१. वहाँ पश्चिम दिशा में	सङ्गमः	४. संगम पर
नारायण	५. नारायण	यत्र	८. जहाँ
सर	६. सर नाम का	सुमहत्	९. बड़े-बड़े
तीर्थम्	७. तीर्थ है	मुनि	१०. मुनि और
सिन्धु	२. सिन्धु नदी और	सिद्ध	११. सिद्ध
समुद्रयोः ।	३. समुद्र के	निषेवितम् ।।	१२. निवास करते हैं

श्लोकार्थ—वहाँ पश्चिम दिशा में सिन्धु नदी और समुद्र के संगम पर नारायण सर नामका तीर्थ है। जहाँ बड़े-बड़े मुनि और सिद्ध निवास करते हैं।

चतुर्थः श्लोकः

तदुपस्पर्शनादेव विनिर्धूतमलाशयाः ।
धर्मे पारमहंस्ये च प्रोत्पन्नमतयोऽप्युत ।।४।।

पदच्छेद—

तद् उपस्पर्शनात् एव विनिर्धूत मलाशयाः ।
धर्मे पारमहंस्ये च प्रोत्पन्न मतयः अपि उत ।।

शब्दार्थ—

तद्	१. उस सरोवर में	पारमहंस्ये	७. भागवत
उपस्पर्शनात्	२. स्नान करते	च	६. और
एव	३. ही (उनका)	प्रोत्पन्न	१२. उत्पन्न हो गई
विनिर्धूत	५. शुद्ध हो गया	मतयः	११. बुद्धि
मलाशयाः ।	४. अन्तः करण	अपि	९. भी
धर्मे	८. धर्म में	उत ।।	१०. उनकी

श्लोकार्थ—उस सरोवर में स्नान करते ही उनका अन्तः करण शुद्ध हो गया। और भागवत धर्म में भी उनकी बुद्धि उत्पन्न हो गयी।

पंचमः श्लोकः

तेपिरे तप एवोग्रं पित्रादेशेन यन्त्रिताः ।
प्रजाविवृद्धये यत्तान् देवर्षिस्तान् ददर्श ह ।।५।।

पदच्छेद—

तेपिरे तपः एव उग्रम् पित्रा आदेशेन यन्त्रिताः ।
प्रजा विवृद्धये यत् तान् देवर्षिः तान् ददर्श ह ।।

शब्दार्थ—

तेपिरे	५. तपस्या की	प्रजा विवृद्धये	७. प्रजा की वृद्धि के लिये
तपः	९. तप को	यत्	६. तब
एव	१०. ही	तान्	३. उन्होंने
उग्रम्	४. कठोर	देवर्षिः	११. देवर्षि नारद ने
पित्रा	१. पिता के	तान्	८. उनके
आदेशेन यन्त्रिताः ।	२. आदेश से बंधे होने के कारण	ददर्श ह ।।	१२. देखा

श्लोकार्थ—पिता के आदेश से बंधे होने के कारण उन्होंने कठोर तपस्या की। तब प्रजा की वृद्धि के लिये उनके तप को ही देवर्षि नारद ने देखा।

षष्ठः श्लोकः

उवाच चाथ हर्यश्वाः कथं स्रक्ष्यथ वै प्रजाः ।
अदृष्ट्वान्तं भुवो यूयं बालिशा बत पालकाः ।।६।।

पदच्छेद—

उवाच च अथ हर्यश्वाः कथम् स्रक्ष्यथ वै प्रजाः ।
अदृष्ट्वा अन्तम् भुवः यूयम् बालिशाः बत पालकाः ।।

शब्दार्थ—

उवाच	२. कहा	अदृष्ट्वा	१०. बिना देखे
च अथ	१. और इस प्रकार	अन्तम्	९. अन्त को
हर्यश्वाः	३. हे हर्यश्वो !	भुवः	८. पृथिवी के
कथम्	१२. कैसे	यूयम्	४. तुम लोग
स्रक्ष्यथ	१४. सृष्टि करोगे	बालिशाः	७. मूर्ख हो
वै	११. निश्चित ही	बत	६. खेद है कि
प्रजाः ।	१३. प्रजा की	पालकाः ।।	५. प्रजापति हो

श्लोकार्थ—और इस प्रकार कहा—हे हर्यश्वो ! तुम लोग प्रजापति हो। खेद है कि मूर्ख हो। पृथिवी के अन्त को बिना देखे निश्चित ही कैसे प्रजा की सृष्टि करोगे।

सप्तमः श्लोकः

तथैकपुरुषं राष्ट्रं बिलं चादृष्टनिर्गमम् ।
बहुरूपां स्त्रियं चापि पुमांसं पुंश्चलीपतिम् ।।७।।

पदच्छेद—

तथा एक पुरुषम् राष्ट्रम् बिलम् च अदृष्ट निर्गमम् ।
बहु रूपाम् स्त्रियम् च अपि पुमांसम् पुंश्चलीपतिम् ।।

शब्दार्थ—

तथा	१. तथा	बहु	९. अनेक
एक	२. एक	रूपाम्	१०. रूपों वाली
पुरुषम्	३. पुरुष है	स्त्रियम्	११. एक स्त्री है
राष्ट्रम्	४. एक देश है	च	१२. और
विलम्	५. एक बिल है	अपि	१३. भी
च	६. और जिसमें	पुमांसम्	१४. एक पुरुष है जो
अदृष्ट	८. नहीं देखा गया है	पुंश्चली	१५. व्यभिचारणी स्त्री का
निर्गमम् ।	७. बाहर निकलने का रास्ता	पतिम् ।।	१६. पति है

श्लोकार्थ—तथा एक पुरुष है, एक बिल है, एक देश है और जिसमें बाहर निकलने का रास्ता नहीं देखा गया है । अनेक रूपों वाली एक स्त्री है, और एक पुरुष भी है, जो कि व्यभिचारणी स्त्री का पति है ।

अष्टमः श्लोकः

नदीमुभयतोवाहां पञ्चपञ्चाद्भुतं गृहम् ।
क्वचिद्धंसं चित्रकथं क्षौरपव्यं स्वयं भ्रमिम् ।।८।।

पदच्छेद—

नदीम् उभयतः वाहाम् पञ्च-पञ्च अद्भुतम् गृहम् ।
क्वचित् हंसम् चित्रकथम् क्षौर पव्यम् स्वयम् भ्रमिम् ।।

शब्दार्थ—

नदीम्	३. एक नदी है	क्वचित्	७. कहीं
उभयतः	१. दोनों ओर	हंसम्	९. एक हंस है
वाहाम्	२. बहने वाली	चित्रकथम्	८. विचित्र कहानी वाला
पञ्च-पञ्च	४. पच्चीस पदार्थों से बना हुआ	क्षौर पव्यम्	१०. छुरे और वज्र से बना हुआ
अद्भुतम्	५. विचित्र	स्वयम्	११. अपने आप
गृहम् ।	६. एक घर	भ्रमिम् ।।	१२. घूमने वाला एक चक्र है

श्लोकार्थ—दोनों ओर बहने वाली एक नदी है । पच्चीस पदार्थों से बना हुआ विचित्र एक घर है । कहीं विचित्र कहानी वाला एक हंस है । छुरे और वज्र से बना हुआ अपने आप घूमने वाला एक चक्र है ।

नवमः श्लोकः

कथं स्वपितुरादेशमविद्वांसो विपश्चितः ।
अनुरूपमविज्ञाय अहो सर्गं करिष्यथ ॥९॥

पदच्छेद—

कथम् स्वपितुः आदेशम् अविद्वांसः विपश्चितः ।
अनुरूपम् अविज्ञाय अहो सर्गम् करिष्यथ ॥

शब्दार्थ—

कथम्	९. कैसे	अनुरूपम्	६. उपर्युक्त वस्तुओं को
स्वपितुः	३. अपने पिता की	अविज्ञाय	७. बिना देखे
आदेशम्	४. आज्ञा को	अहो	१. हे हर्यश्वों ! आश्चर्य है कि
अविद्वांसः	५. बिना जानें (और)	सर्गम्	८. सृष्टि को
विपश्चितः ।	२. विद्वान्	करिष्यथ ॥	१०. करोगे

श्लोकार्थ—हे हर्यश्वो ! आश्चर्य है कि विद्वान् अपने पिता की आज्ञा को बिना जाने और उपर्युक्त वस्तुओं को बिना देखे सृष्टि को कैसे करोगे ।

दशमः श्लोकः

तन्निशम्याथ हर्यश्वा औत्पत्तिकमनीषया ।
वाचः कूटं तु देवर्षेः स्वयं विममृशुर्धिया ॥१०॥

पदच्छेद—

तत् निशम्य अथ हर्यश्वाः औत्पत्तिक मनीषया ।
वाचः कूटम् तु देवर्षेः स्वयम् विममृशुः धिया ॥

शब्दार्थ—

तत्	६. उस	वाचः	८. वचन को
निशम्य	९. सुनकर	कूटम्	७. गूढ़
अथ	४. इसके बाद	तु	१०. तो
हर्यश्वाः	१. हर्यश्व	देवर्षेः	५. देवर्षि नारद के
औत्पत्तिक	२. जन्म से ही	स्वयम् विममृशुः	१२. स्वयं ही विचार करनें लगे
मनीषया ।	३. बुद्धिमान् थे	धिया ॥	११. अपनी बुद्धि से

श्लोकार्थ—हर्यश्व जन्म से ही बुद्धिमान् थे । इसके बाद देवर्षि नारद के उस गूढ़ वचन को सुनकर तो अपनी बुद्धि से स्वयम् ही (वे) विचार करने लगे ।

एकादशः श्लोकः

भूः क्षेत्रं जीवसंज्ञं यदनादि निजबन्धनम् ।
अदृष्ट्वा तस्य निर्वाणं किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥११॥

पदच्छेद---

भूः क्षेत्रम् जीव संज्ञम् यद् अनादि निज बन्धनम् ।
अदृष्ट्वा तस्य निर्वाणम् किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ---

भूः	३. पृथिवी है	अदृष्ट्वा	९. बिना देखे
क्षेत्रम्	२. यह शरीर	तस्य	८. इसे
जीव संज्ञम्	१. जीव नाम वाला	निर्वाणम्	१०. मोक्ष के लिये
यद्	४. जो	किम्	१३. क्या
अनादि	६. अनादि	असत्	११. अनुपयोगी
निज	५. आत्मा का	कर्मभिः	१२. कर्मों से
बन्धनम् ।	७. बन्धन है	भवेत् ॥	१४. लाभ होगा

श्लोकार्थ—जीव नाम वाला यह शरीर पृथिवी है, जो आत्मा का अनादी बन्धन है। इसे बिना देखे मोक्ष के लिये अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा।

द्वादशः श्लोकः

एक एवेश्वरस्तुर्यो भगवान् स्वाश्रयः परः ।
तमदृष्ट्वाभवं पुंसः किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥१२॥

पदच्छेद—

एक एव ईश्वरः तुर्यः भगवान् स्व आश्रयः परः ।
तम् अदृष्ट्वा अभवम् पुंसः किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

एक एव	२. एक ही है	तम्	९. उसे
ईश्वरः	१. ईश्वर	अदृष्ट्वा	१०. बिना देखे
तुर्यः	३. दूसरा (नहीं है) (वह)	अभवम्	८. प्रकृति से भिन्न है
भगवान्	४. भगवान्	पुंसः	११. जीव को
स्व	५. अपना और	किम्	१३. क्या
आश्रयः	७. आश्रय है	असत् कर्मभिः	१२. अनुपयोगी कर्मों से
परः ।	६. दूसरों का	भवेत् ॥	१४. लाभ होगा

श्लोकार्थ—ईश्वर एक ही है, दूसरा नहीं है। वह भगवान् अपना और दूसरों का आश्रय है, प्रकृति से भिन्न है। उसे बिना देखे जीव को अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा ?

त्रयोदशः श्लोकः

पुमान् नैवैति यद् गत्वा बिलस्वर्गं गतो यथा ।
प्रत्यग्धामाविद इह किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥१३॥

पदच्छेद---

पुमान् न एव एति यद् गत्वा बिल स्वर्गम् गतः यथा ।
प्रत्यक् धाम अविदः इह किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

पुमान्	४. जीव	प्रत्यक्	९. अनन्त
न एव	७. नहीं	धाम	१०. ज्योतिः स्वरूप
एति	८. लौट पाता है (जो)	अविद	११. उसे जाने बिना
यद्	५. वहाँ	इह	१२. इस संसार में
गत्वा	६. जाकर	किम्	१५. क्या
बिल	२. बिल रूपी	असत्	१३. अनुपयोगी
स्वर्गं गतः	३. पाताल में गया हुआ	कर्मभिः	१४. कर्मों से
यथा।	१. जिस प्रकार	भवेत् ॥	१६. लाभ होगा

श्लोकार्थ—जिस प्रकार बिल रूपी पाताल में गया हुआ जीव वहाँ जाकर नहीं लौट पाता है, जो बन्धन ज्योतिः स्वरूप है उसे जाने बिना-इस संसार में अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ है ।

चतुर्दशः श्लोकः

नानारूपाऽऽत्मनो बुद्धिः स्वैरिणीव गुणान्विता ।
तन्निष्ठामगतस्येह किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥१४॥

पदच्छेद—

नाना रूप आत्मनः बुद्धिः स्वैरिणी इव गुण अन्विता ।
तत् निष्ठाम् अगतस्य इह किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

नाना	१. अनेक	तत्	८. उसके
रूप	२. रूपों वाली	निष्ठम्	९. अन्त को
आत्मनः	३. अपनी	अगतस्य	१०. बिना जाने
बुद्धिः	४. बुद्धि	इह	११. इस संसार में
स्वैरिणी इव	७. व्यभिचारणी स्त्री के समान है	किम्	१३. क्या
गुण	५. सत्त्वादि गुणों से	असत् कर्मभिः	१२. अनुपयोगी कर्मों से
अन्विता।	६. युक्त	भवेत् ॥	१४. लाभ होगा

श्लोकार्थ—अनेक रूपों वाली अपनी बुद्धि सत्त्वादि गुणों से युक्त व्यभिचारणी स्त्री के समान है । उसके अन्त को जाने बिना इस संसार में अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा ।

पंचदशः श्लोकः

तत्सङ्गभ्रंशितैश्वर्यं संसरन्तं कुभार्यवत् ।
तद्गतीरबुधस्येह किमसत्कर्मभिर्भवेत् ।।१५।।

पदच्छेद—

तत् सङ्ग भ्रंशित ऐश्वर्यं संसरन्तम् कुभार्यवत् ।
तत् गतिः अबुधस्य इह किम् असत् कर्मभिः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

तत्	१. उसके	तत् गतिः	७. उसकी गतियों को
सङ्ग	२. सङ्ग से	अबुधस्य	८. जाने बिना
भ्रंशित	४. नष्ट हो जाता है	इह	९. इस संसार में
ऐश्वर्यं	३. धन इत्यादि	किम्	११. क्या
संसरन्तम्	६. साथ-साथ चलते हुये	असत् कर्मभिः	१०. अनुपयोगी कर्मों से
कुभार्यवत् ।	५. कुलटा स्त्री के पति के समान	भवेत् ।।	१२. लाभ होगा

श्लोकार्थ—उसके सङ्ग से धन इत्यादि ऐश्वर्य नष्ट हो जाता है । कुलटा स्त्री के पति के समान साथ-साथ चलते हुये उसकी गतियों को जाने बिना इस संसार में अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा ।

षोडशः श्लोकः

सृष्ट्यप्ययकरीं मायां वेलाकूलान्तवेगिताम् ।
मत्तस्य तामविज्ञस्य किमसत्कर्मभिर्भवेत् ।।१६।।

पदच्छेद—

सृष्टि अप्ययकरीम् मायाम् बेलाकूलान्त वेगिताम् ।
मत्तस्य ताम् अविज्ञस्य किम् असत् कर्मभिः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

सृष्टि	१. सृष्टि और	मत्तस्य	८. उन्मत्त जीव को
अप्ययकरीम्	२. प्रलय करने वाली	ताम्	६. उसे
मायाम्	३. माया ही	अविज्ञस्य	७. जाने बिना
बेला कूलान्त	४. दोनों किनारों तक	किम्	१०. क्या
वेगिताम् ।	५. बहने वाली नदी है	असत् कर्मभिः	९. अनुपयोगी कर्मों से
		भवेत् ।।	१. लाभ होगा

श्लोकार्थ—सृष्टि और प्रलय करने वाली माया ही दोनों किनारों तक बहने वाली नदी है । उसे जाने बिना उन्मत्त जीव को अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा ।

सप्तदशः श्लोकः

पञ्चविंशतितत्त्वानां पुरुषोऽद्भुतदर्पणम् ।
अध्यात्ममबुधस्येह किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥१७॥

पदच्छेद

पञ्चविंशति तत्त्वानाम् पुरुषः अद्भुत दर्पणम् ।
अध्यात्मम् अबुधस्य इह किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ

पञ्चविंशति	१. पच्चीस	अध्यात्मम्	६. इस अध्यात्म को
तत्त्वानाम्	२. तत्त्वों वाला ही	अबुधस्य इह	७. जाने बिना इस संसार में
पुरुषः	३. पुरुष का	किम्	९. क्या
अद्भुत	४. अद्भुत	असत् कर्मभिः	८. अनुपयोगी कर्मों से
दर्पणम् ।	५. घर है	भवेत् ॥	१०. लाभ है

श्लोकार्थ—पच्चीस तत्त्वों वाला ही पुरुष का अद्भुत घर है। इस अध्यात्म को जाने बिना इस संसार में अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ है।

अष्टादशः श्लोकः

ऐश्वरं शास्त्रमुत्सृज्य बन्धमोक्षानुदर्शनम् ।
विविक्तपदमज्ञाय किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥१८॥

पदच्छेद—

ऐश्वरं शास्त्रम् उत्सज्य बन्धमोक्ष अनुदर्शनम् ।
विविक्त पदम् अज्ञाय किम् असत् कर्मभिः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

ऐश्वरं	१. ईश्वर सम्बन्धी	विविक्त	८. विवेचन
शास्त्रम्	२. शास्त्र को	पदम्	७. भगवान् के स्वरूप का
उत्सृज्य	३. छोड़कर	अज्ञाय	९. जाने बिना
बन्ध	४. बन्धन और	किम्	११. क्या
मोक्ष	५. मोक्ष को	असत्कर्मभिः	१०. अनुपयोगी कर्मों से
अनुदर्शनम् ।	६. दिखाने वाले (तथा)	भवेत् ॥	१२. लाभ होगा।

श्लोकार्थ—ईश्वर सम्बन्धी शास्त्र को छोड़कर बन्धन और मोक्ष को दिखाने वाले तथा भगवान् के स्वरूप का विवेचन जाने बिना अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ होगा।

एकोनविंश: श्लोक:

कालचक्रं भ्रमिस्तीक्ष्णं सर्वं निष्कर्षयञ्जगत् ।
स्वतन्त्रमबुधस्येह किमसत्कर्मभिर्भवेत् ।।१९।।

पदच्छेद---

काल चकम् भ्रमिः तीक्ष्णम सर्वम् निष्कर्षयन् जगत् ।
स्वतन्त्रम अबुधस्य इह किम् असत कर्मभिः भवेत ।।

शब्दार्थ—

काल चक्रम्	१. काल ही एक चक्र है	स्वतन्त्रम्	७. वह परम स्वतन्त्र है
भ्रमिः	३. घूमता रहता है	अबुधस्य	८. उसे जाने बिना
तीक्ष्णम्	२. जो वज्र के समान तेज है तथा	इह	९. इस संसार में
सर्वम्	४. यह सम्पूर्ण	किम्	११. क्या
निष्कर्षयन्	६. खींच रहा है	असत् कर्मभिः	१०. अनुपयोगी कर्मों से
जगत् ।	५. संसार को	भवेत् ।।	१२. लाभ है

श्लोकार्थ---काल ही एक चक्र है। जो वज्र के समान तेज है तथा घूमता रहता है। यह सम्पूर्ण संसार को खींच रहा है। उसे जाने बिना इस संसार में अनुपयोगी कर्मों से क्या लाभ है।

विंश: श्लोक:

शास्त्रस्य पितुरादेशं यो न वेद निवर्तकम् ।
कथं तदनुरूपाय गुणविश्रम्भ्युपक्रमेत् ।।२०।।

पदच्छेद—

शास्त्रस्य पितुः आदेशम् यः न वेद निवर्तकम् ।
कथम तद अनुरूपाय गुण विश्रम्भी उपक्रमेत् ।।

शब्दार्थ—

शास्त्रस्य	१. शास्त्र रूपी	कथम्	१२. कैसे (कर सकता है)
पितुः आदेशम्	२. पिताके आदेश को	तद्	७. तथा
यः	३. जो	अनुरूपाय	८. अनुरूप
न	५. नहीं	गुण	९. गुण आदि विषयों पर
वेद	६. जानता है	विश्रम्भी	१०. विश्वास कर लेता है वह
निबर्तकम् ।	४. निवृत्तिमार्ग पर ले जाने वाला	उपक्रमेत् ।।	११. आज्ञा का पालन

श्लोकार्थ---शास्त्र रूपी पिता के आदेश को जो निवृत्तिमार्ग पर ले जाने वाला नहीं जानता है तथा उसके अनुरूप गुण आदि विषयों पर विश्वास कर लेता है वह आज्ञा का पालन कैसे कर सकता है।

एकविंशः श्लोकः

इति व्यवसिता राजन् हर्यश्वा एकचेतसः ।
प्रययुस्तं परिक्रम्य पन्थानमनिवर्तनम् ॥२१॥

पदच्छेद---

इति व्यवसिताः राजन् हर्यश्वाः एक चेतसः ।
प्रययुः तम परिक्रम्य पन्थानम अनिवर्तनम् ॥

शब्दार्थ---

इति	२. इस प्रकार	प्रययुः	१०. चले गये
व्यवसिता	५. निश्चय किया	तम्	६. उस नारद को
राजन्	१. हे राजन्	परिक्रम्य	७. परिक्रमा करके
हर्यश्वाः	३. हर्यश्वों ने	पन्थानम्	९. मोक्ष पथ को
एक चेतसः ।	४. एक मत होकर	अनिवर्तनम् ॥	८. जहाँ से लौटना नहीं होता (ऐसे)

श्लोकार्थ---हे राजन् ! इस प्रकार हर्यश्वों ने एक मत होकर निश्चय किया । तदनन्तर वे लोग उस नारद की परिक्रमा करके जहाँ से लौटना नहीं होता ऐसे मोक्ष पथ को चले गये ।

द्वाविंशः श्लोकः

स्वरब्रह्मणि निर्भातहृषीकेशपदाम्बुजे ।
अखण्डं चित्तमावेश्य लोकाननुचरन्मुनिः ॥२२॥

पदच्छेद---

स्वर ब्रह्मणि निर्भात हृषीकेश पद अम्बुजे ।
अखण्डम् चित्तम आवेश्य लोकान अनुचरन् मुनिः ॥

शब्दार्थ---

स्वर	२. स्वर	अखण्डम्	९. अखण्ड रूप से
ब्रह्मणि	३. ब्रह्म में	चित्तम्	८. अपने मन को
निर्भात	४. लग गये	आवेश्य	१०. स्थिर करके
हृषीकेश	५. भगवान् श्रीकृष्ण के	लोकान्	११. लोकों में
पद	६. चरण	अनुचरन्	१२. विचरने लगे
अम्बुजे ।	७. कमलों में	मुनिः ॥	१. पुनः देवर्षि नारद

श्लोकार्थ—पुनः देवर्षि नारद स्वर ब्रह्म में लग गये । तथा भगवान् श्रीकृष्ण के चरण-कमलों में अपने मन को अखण्ड रूप से स्थिर करके लोको में विचरने लगे ।

त्रयोविंशः श्लोकः

नाशं निशम्य पुत्राणां नारदाच्छीलशालिनाम् ।
अन्वतप्यत कः शोचन् सुप्रजस्त्वं शुचां पदम् ॥२३॥

पदच्छेद—

नाशम्, निशम्य पुत्राणाम्, नारदात् शील शालिनाम् ।
अन्वतप्यत कः शोचन् सुप्रजस्त्वम्, शुचाम्, पदम् ॥

शब्दार्थ—

नाशम्	५. नाश	अन्वतप्यत	९. पश्चात्ताप करने लगे
निशम्य	६. सुनकर	कः	७. दक्ष प्रजापति
पुत्राणाम्	४. पुत्रों का	शोचन्	८. शोक से व्याकुल हो गये तथा
नारदात्	१. नारद के उपदेश से	सुप्रजस्त्वम्	१०. अच्छी सन्तान का होना
शील	२. शील	शुचाम्	११. शोक का
शालिनाम् ।	३. युक्त	पदम् ॥	१२. कारण होता है

श्लोकार्थ—नारद के उपदेश से शीलयुक्त पुत्रों का नाश सुनकर दक्ष प्रजापति शोक से व्याकुल हो गये तथा पश्चात्तापकरने लगे। अच्छी सन्तान का हाना शोक का कारण होता है।

चतुर्विंशः श्लोकः

सः भूयः पाञ्चजन्यायामजेन परिसान्त्वितः ।
पुत्रानजनयद् दक्षः शबलाश्वान् सहस्रशः ॥२४॥

पदच्छेद—

सः भूयः पाञ्चजन्यायाम् अजेन परिसान्त्वितः ।
पुत्रान् अजनयत् दक्षः शबलाश्वान् सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

सः	२. उस दक्ष प्रजापत्ति को	पुत्रान्	९. पुत्रों को
भूयः	४. फ़िर से	अजनयत्	१०. उत्पन्न किया
पाञ्चजन्यायाम्	६. पाञ्चजन्य की पुत्री से	दक्षः	५. दक्ष ने
अजेन	१. ब्रह्माजी ने	शबलाश्वान्	७. शबलाश्व नाम के
परिसान्त्वितः ।	३. बड़ी सान्त्वना दी और	सहस्रशः ॥	८. एक हजार

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उस दक्ष प्रजापति को बड़ी सान्त्वना दी और फिर से दक्ष ने पाञ्चजन्य की पुत्री से शबलाश्व नाम के एक हजार पुत्रों को उत्पन्न किया।

पंचविंशः श्लोकः

तेऽपि पित्रा समादिष्टाः प्रजासर्गे धृतव्रताः ।
नारायणसरो जग्मुर्यत्र सिद्धाः स्वपूर्वजाः ॥२५॥

पदच्छेद--

ते अपि पित्रा समादिष्टाः प्रजा सर्गे धृतव्रताः ।
नारायण सरः जग्मुः यत्र सिद्ध स्व पूर्वजाः ॥

शब्दार्थ—

ते अपि	१. वे भी	नारायण	८. नारायण
पित्रा	२. अपने पिता की	सरः	९. सरोवर पर
समादिष्टाः	३. आज्ञा पाकर	जग्मुः	१०. गये
प्रजा	४. प्रजा की	यत्र	११. जहाँ
सर्गे	५. सृष्टि के लिये	सिद्धाः	१४. सिद्धि प्राप्त की थी
धृत	७. धारण करके	स्व	१२. उनके
व्रताः ।	६. तप को	पूर्वजाः ॥	१३. बड़े भाइयों ने

श्लोकार्थ—वे भी अपने पिता की आज्ञा पाकर प्रजा की सृष्टि के लिये तप को धारण करके नारायण सरोवर पर गये । जहाँ उनके बड़े भाइयों ने सिद्धि प्राप्त की थी ।

षड्विंशः श्लोकः

तदुपस्पर्शनादेव विनिर्धूतमलाशयाः ।
जपन्तो ब्रह्मपरमं तेपुस्तेऽत्र महत् तपः ॥२६॥

पदच्छेद--

तत् उपस्पर्शनात् एव विनिर्धूत मलाशयाः ।
जपन्तः ब्रह्म परमम् तेपुः ते अत्र महत् तपः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. उस सरोवर में	जपन्तः	८. जप करते हुये
उपस्पर्शनात् एव	२. स्नान से ही उनके	ब्रह्म परमम्	७. पर ब्रह्म का
विनिर्धूत	५. धुल गया	तेपुः	१०. लग गये
मला	४. सम्पूर्ण मल	ते अत्र	६. वे लोग वहाँ
शयाः ।	३. अन्तः करण	महत् तपः ॥	९. महान् तपस्या में

श्लोकार्थ—उस सरोवर में स्नान से ही उनके अन्तः करण का सम्पूर्ण मल धुल गया । वे लोग वहाँ पर ब्रह्म का जप करते हुये महान् तपस्या में लग गये ।

सप्तविंशः श्लोकः

अब्भक्षाः कतिचिन्मासान् कतिचिद् वायुभोजनाः ।
आराधयन् मन्त्रमिममभ्यस्यन्त इडस्पतिम् ।।२७।।

पदच्छेद—

अब्भक्षः कतिचित् मासान् कतिचित् वायुभोजनाः ।
आराधयन् मन्त्रम् इमम् अभ्यस्यन्त इडस्पतिम् ।।

शब्दार्थ—

अब्भक्षाः	२. जल का भक्षण करके तथा	आराधयन्	९. आराधना करने लगे
कतिचित्मासान्	१. कुछ महीनों तक	मन्त्रम	६. मन्त्र का
कतिचित्	३. कुछ महीनों तक	इमम्	५. इस
वायुभोजनाः ।	४. हवा पीकर	अभ्यस्यन्तः	७. अभ्यास करते हुये भगवान्
		इडस्पतिम् ।।	८. परब्रह्म की

श्लोकार्थ—कुछ महीनों तक जल का भक्षण करके तथा कुछ महीनों तक हवा पीकर इस मन्त्र का अभ्यास करते हुये भगवान् पर ब्रह्म की आराधना करने लगे ।

अष्टाविंशः श्लोकः

ॐ नमो नारायणाय पुरुषाय महात्मने ।
विशुद्धसत्त्वधिष्ण्याय महाहंसाय धीमहि ।।२८।।

पदच्छेद—

ॐ नमः नारायणाय पुरुषाय महात्मनें ।
विशुद्ध सत्त्वधिष्ण्याय महाहंसाय धीमहि ।।

शब्दार्थ—

ॐ	१. ओंकार स्वरूप	विशुद्ध	५. विशुद्ध
नमः	९. नमस्कार पूर्वक	सत्त्व	६. पराक्रम
नारायणाय	४. नारायण	धिष्ण्याय	७. बुद्धि एवम्
पुरुषाय	३. पुरुष	महाहंसाय	८. परम हंस स्वरूप है उनका
महात्मनें ।	२. महा	धीमहि ।।	१०. ध्यान करते हैं ।

श्लोकार्थ—ओंकार स्वरूप महापुरुष नारायण विशुद्ध, पराक्रम, बुद्धि एवम् परमहंस स्वरूप हैं। उनका नमस्कार पूर्वक ध्यान करते है ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

इति तानपि राजेन्द्र प्रतिसर्गधियो मुनिः ।
उपेत्य नारदः प्राह वाचः कूटानि पूर्ववत् ॥२९॥

पदच्छेद—

इति तान् अपि राजेन्द्र प्रति सर्ग धियः मुनिः ।
उपेत्य नारदः प्राह वाचः कूटानि पूर्व वत् ॥

शब्दार्थ—

इति तान्	२. इस प्रकार वे शवलाश्व	उपेत्य	८. (उनके) पास में जाकर
अपि	३. भी	नारदः	७. नारद जी ने
राजेन्द्र	१. हे राजन् !	प्राह	१२. कहा
प्रति सर्ग	४. प्रजा की सृष्टि के लिये	वाचः	११. वचन को
धियः	५. लगे हुये थे	कूटानि	९. पहले के समान
मुनिः ।	६. देवर्षि	पूर्ववत् ॥	१०. कूट

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार वे शवलाश्व भी प्रजा की सृष्टि के लिये लगे हुये थे। पुनः देवर्षि नारद जीने उनके पास जाकर पहले के समान कूट वचन को कहा।

त्रिंशः श्लोकः

दाक्षायणाः संशृणुत गदतो निगमं मम ।
अन्विच्छतानुपदवीं भ्रातॄणां भ्रातृवत्सलाः ॥३०॥

पदच्छेद—

दाक्षायणः संशृणुत गदतः निगमम् मम ।
अन्विच्छता अनुपदवीम् भ्रातॄणाम् भ्रातृवत्सलाः ॥

शब्दार्थ—

दाक्षायणाः	१. हे दक्ष प्रजापति के पुत्रों	अन्विच्छत	१०. अनुसरण करो
संशृणुत	५. सुनो	अनुपदवीम्	९. मार्ग का
गदतः	४. उपदेश को	भ्रातॄणाम्	८. अपने भाइयों के
निगमम्	३. कल्याणकारी	भ्रातृ	६. भाइयों का
मम ।	२. मेरे	वत्सलाः ॥	७. प्रिय करने वाले

श्लोकार्थ—हे दक्ष प्रजापति के पुत्रों ! मेरे कल्याणकारी उपदेश को सुनो। भाइयों का प्रिय करनें वाले तुम लोग अपने भाइयों के मार्ग का अनुसरण करो।

एकत्रिंशः श्लोकः

भ्रातॄणां प्रायणं भ्राता योऽनुतिष्ठति धर्मवित् ।
स पुण्यबन्धुः पुरुषो मरुद्भिः सह मोदते ।।३१।।

पदच्छेद—

भ्रातॄणाम् प्रायणम् भ्राता यः अनुतिष्ठति धर्मवित् ।
सः पुण्यबन्धुः पुरुषः मरुद्भिः सह मोदते ।।

शब्दार्थ—

भ्रातॄणाम्	४. अपने भाइयों के	सः	७. वह
प्रायणम्	५. मार्ग का	पुण्यबन्धुः	८. पुण्यवान्
भ्राता	३. भाई	पुरुषः	९. पुरुष
यः	१. जो	मरुद्भिः	१०. मरुद्गणों के
अनुतिष्ठति	६. अनुसरण करता है	सह	११. साथ
धर्मवित् ।	२. धर्म को जाननें वाला	मोदते ।।	१२. प्रसन्न होता है

श्लोकार्थ—जो धर्म को जानने वाला भाई अपने भाइयों के मार्ग का अनुसरण करता है। वह पुण्यवान् पुरुष मरुद्गणों के साथ प्रसन्न होता है।

द्वात्रिंशः श्लोकः

एतावदुक्त्वा प्रययौ नारदोऽमोघदर्शनः ।
तेऽपि चान्वगमन् मार्गं भ्रातॄणामेव मारिष ।।३२।।

पदच्छेद—

एतावत् उक्त्वा प्रययौ नारदः अमोघ दर्शनः ।
ते अपि च अन्वगमन् मार्गम् भ्रातॄणाम् एव मारिष ।।

शब्दार्थ—

एतावत्	२. इतना	ते अपि	९. उन शबलाश्वों नें भी
उक्त्वा	३. कहकर	च	८. अतः
प्रययौ	५. चले गये	अन्वगमन्	१२. अनुकरण किया
नारदः	४. देवर्षि नारद	मार्गम्	११. मार्ग का
अमोघ	७. व्यर्थ नहीं जाता है	भ्रातॄणाम् एव	१०. अपने भाइयों के ही
दर्शनः ।	६. उनका दर्शन	मारिष ।।	१. हे परीक्षित् !

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इतना कहकर देवर्षि नारद चले गये। उनका दर्शन व्यर्थ नहीं जाता है। अतः उन शबलाश्वों ने भी अपने भाइयों के ही मार्ग का अनुसरण किया।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

सध्रीचीनं प्रतीचीनं परस्यानुपथं गताः ।
नाद्यापि ते निवर्तन्ते पश्चिमा यामिनीरिव ।।३३।।

पदच्छेद—

सध्रीचीनम् प्रतीचीनम् परस्य अनुपथम् गताः ।
न अद्यापि ते निवर्तन्ते पश्चिमाः यामिनीः इव ।।

शब्दार्थ—

सध्रीचीनम्	१. साथ चलने वाले	अद्यापि	१०. आज भी
प्रतीचीनम्	३. पीछे से	ते	२. वे शबलाश्व
परस्य	४. उस पथ के	निवर्तन्ते	१२. लौटे
अनुपथम्	५. पथिक	पश्चिमा	७. बीती हुई
गताः ।	६. वन गये	यामिनीः	८. रात्रि के
न	११. नहीं	इव ।।	९. समान

श्लोकार्थ—साथ चलने वाले वे शबलाश्व पीछे से उस पथ के पथिक वन गये। वे बीती हुई रात्रियों के समान आज भी नहीं लौटे।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एतस्मिन् काल उत्पातान् बहून् पश्यन् प्रजापतिः ।
पूर्ववन्नारदकृतं पुत्रनाशमुपाशृणोत् ।।३४।।

पदच्छेद—

एतस्मिन् काले उत्पातान् बहून पश्यन् प्रजापतिः ।
पूर्ववत् नारद कृतम पुत्र नाशम् उप अशृणोत् ।।

शब्दार्थ—

एतस्मिन्	२. इस	पूर्ववत्	८. पहले के समान
काल	३. समय	नारद	७. नारद के द्वारा
उत्पातान्	५. असगुनों को	कृतम्	९. किये गये
बहून्	४. बहुत से	पुत्र	१०. पुत्रों के
पश्यन्	६. देखा (इतनें में)	नाशम्	११. नाश को
प्रजापतिः ।	१. प्रजापति दक्ष ने	उप अशृणोत् ।।	१२. सुना

श्लोकार्थ—प्रजापति दक्ष ने इस समय बहुत से असगुनों को देखा। तथा इतनें में ही नारद के द्वारा पहले के समान किये गये पुत्रों के नाश को सुना।

पंचत्रिंशः श्लोकः

चुक्रोध नारदायासौ पुत्रशोकविमूर्च्छितः ।
देवर्षिमुपलभ्याह रोषाद्विस्फुरिताधरः ।।३५।।

पदच्छेद—

चुक्रोध नारदाय असौ पुत्र शोक विमूर्च्छितः ।
देवर्षिम् उपलभ्य आह रोषात् विस्फुरित अधरः ।।

शब्दार्थ—

चुक्रोध	५. बहुत क्रोध किया	देवर्षिम्	१०. देवर्षि नारद से
नारदाय	४. नारद जी पर	उपलभ्य आह	९. आवेश से आकार इस प्रकार बोले
असौ	१. वह दक्ष प्रजापति	रोषात्	६. क्रोध से उनके
पुत्र शोक	२. पुत्र के शोक से	विस्फुरित	८. फड़कने लगे
विमूर्च्छितः ।	३. मूर्च्छित हो गये (तथा)	अधरः ।।	७. होठ

श्लोकार्थ---वह दक्ष प्रजापति पुत्र के शोक से मूर्च्छित हो गये तथा नारद जी पर बहुत क्रोध किया । क्रोध से उनके होठ फड़कने लगे । आवेश में आकर देवर्षि नारद से इस प्रकार बोले ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

दक्ष उवाच

अहो असाधो साधूनां साधुलिङ्गेन नस्त्वया ।
असाध्वकार्यर्भकाणां भिक्षोर्मार्गः प्रदर्शितः ।।३६।।

पदच्छेद—

अहो असाधो साधनाम् साधुलिङ्गेन नः त्वया ।
असाधु अकारि अर्भकाणाम् भिक्षोः मार्गः प्रदर्शितः ।।

शब्दार्थ---

अहो	१. अहो	असाधु	११. अपकार
असाधो	२. दुष्ट	अकारि	१२. किया है
साधूनाम्	३. साधुओं का	अर्भकाणाम्	५. हमारे बालकों को
साधुलिङ्गेन	४. वेश पहन कर	भिक्षोः	६. भिक्षुकों को
नः	१०. हमारा	मार्गः	७. मार्ग
त्वया ।	९. तुमने	प्रदर्शितः ।।	८. दिखाकर

श्लोकार्थ---अहो दुष्ट ! साधुओं का वेश पहन कर हमारे बालकों को भिक्षुकों का मार्ग दिखाकर तुमने हमारा अपकार किया है ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

ऋणैस्त्रिभिरमुक्तानाममीमांसितकर्मणाम् ।
विघातः श्रेयसः पाप लोकयोरुभयोः कृतः ॥३७॥

पदच्छेद---

ऋणैः त्रिभिः अमुक्तानाम् अमीमांसित कर्मणाम् ।
विघातः श्रेयसः पाप लोकयोः उभयोः कृतः ॥

शब्दार्थ---

ऋणैः	३. ऋणों से	विघातः	१०. नष्ट
त्रिभिः	२. तीन प्रकार के	श्रेयसः	९. सुख को
अमुक्तानाम्	४. मुक्त न होने वाले	पाप	१. हे पापात्मन् ! तुमने
अमीमांसित	६. नश्वरता के संबंध में न जानने वाले	लोकयोः	८. लोकों के
		उभयोः	७. दोनों
कर्मणाम् ।	५. कर्मफल की	कृतः ॥	११. कर दिया

श्लोकार्थ---हे पापात्मन् ! (तुमने) तीन प्रकार के ऋणों से मुक्त न होने वाले कर्मफल की नश्वरता के सम्बन्ध में जानने वाले दोनों लोको के सुख को नष्ट कर दिया ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

एवं त्वं निरनुक्रोशो बालानां मतिभिद्धरेः ।
पार्षदमध्ये चरसि यशोहा निरपत्रपः ॥३८॥

पदच्छेद---

एवम् त्वम् निर्अनुक्रोशः बालानाम् मतिभित् हरेः ।
पार्षदमध्ये चरसि यशोहा निरपत्रपः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	पार्षद	६. पार्षदों के
त्वम्	३. तुम	मध्य	७. बीच में
निर्अनुक्रोशः	२. दया रहित	चरसि	८. रहते हुये
बालानाम्मतिभित्	४. बालको की बुद्धि को बिगाड़ने वाले हो	यशोहा	१०. (उन भगवान् के) यश में कलंक लगाया हैं
हरेः ।	५. भगवान् के	निरपत्रपः ॥	९. निर्लज्ज तुमने

श्लोकार्थ---इस प्रकार दया रहित तुम बालकों की बुद्धि को बिगाड़ने वाले हो । भगवान् के पार्षदों के बीच में रहते हुये निर्लज्ज तुमने उन भगवान् के यश में कलंक लगाया हैं ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ननु भागवता नित्यं भूतानुग्रहकातराः ।
ऋते त्वां सौहृदघ्नं वै वैरङ्करमवैरिणाम् ।।३९।।

पदच्छेद—

ननु भागवताः नित्यम् भूत अनुग्रह कातराः।
ऋते त्वाम सौहृदघ्नम् वै वैरङ्करम् अवैरिणाम् ।।

शब्दार्थ---

ननु	१. निश्चित हो	ऋते	२. तुम्हारे अलावा
भागवताः	३. भगवान् के अन्य पार्षद	त्वाम्	८. तुम
नित्यम्	४. नित्य ही	सौहृदघ्नम्	९. प्रेम भाव को नष्ट करने वाले
भूत	५. प्राणियों पर	वै	१०. और जो
अनुग्रह	६. दया करने के लिये	वैरङ्करम्	१२. वैर करते हो
कातराः।	७. व्यग्र रहते हैं (किन्तु)	अवैरिणाम् ।।	११. जो किसी के वैरी नही हैं (उनसे)

श्लोकार्थ—निश्चित ही तुम्हारे अलावा भगवान् के अन्य पार्षद नित्य ही प्राणियों पर दया करने के लिये व्यग्र रहते हैं। किन्तु तुम प्रेम भाव को नष्ट करने वाले हो और जो किसी के वैरी नहीं हैं उनसे वैर करते हो।

चत्वारिंशः श्लोकः

नेत्थं पुंसां विरागः स्यात् त्वया केवलिना मृषा ।
मन्यसे यद्युपशमं स्नेहपाशनिकृन्तनम् ।।४०।।

पदच्छेद—

न इत्थम् पुंसाम् विरागः स्यात् त्वया केवलिना मृषा।
मन्यसे यदि उपशमम् स्नेह पाश निकृन्तनम्।।

शब्दार्थ—

न	११. नहीं	मन्यसे	३. ऐसा मानते हो (कि)
इत्थम्	९. इस प्रकार	यदि	१. यदि
पुंसाम् विरागः	१०. पुरुषों को वैराग्य	उपशमम्	४. वैराग्य ही
स्यात्	१२. हो सकता है	स्नेह	५. स्नेह के
त्वया	२. तुम	पाश	६. बन्धन को
केवलिना मृषा।	८. केवल झूठ है	निकृन्तनम् ।।	७. काट सकता है तो यह

श्लोकार्थ—यदि तुम ऐसा मानते हो कि वैराग्य ही स्नेह के बन्धन को काट सकता है तो वह केवल झूठ है। इस प्रकार पुरुषों को वैराग्य नहीं हो सकता है।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

नानुभूय न जानाति पुमान् विषयतीक्ष्णताम् ।
निर्विद्येत स्वयं तस्मान्न तथा भिन्नधीः परैः ॥४१॥

पदच्छेद—

न अनुभूय न जानाति पुमान् विषय तीक्ष्णताम् ।
निर्विद्येत स्वयम् तस्मात् न तथा भिन्नधीः परैः ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं	निर्विद्येत	८. दुःख का
अनुभूय	४. अनुभव	स्वयम्	९. स्वयम् अनुभव होने पर
न	५. किये बिना वैराग्य को	तस्मात्	१०. जैसा वैराग्य होता है
जानाति	७. जान सकता है	न	१४. नहीं होता है
पुमान्	१. पुरुष	तथा	११. उसी प्रकार
विषय	२. विषयों की	भिन्नधीः	१३. बहकाने से
तीक्ष्णताम् ।	३. कटुता का	परैः ॥	१२. दूसरों के

श्लोकार्थ—पुरुष विषयों की कटुता का अनुभव किये बिना वैराग्य को नहीं जान सकता है। दुःख का स्वयम् अनुभव होने पर जैसा वैराग्य होता है उसी प्रकार दूसरों के बहकाने से नहीं होता है।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

यन्नस्त्वं कर्मसन्धानां साधूनां गृहमेधिनाम् ।
कृतवानसि दुर्मर्षं विप्रियं तव मर्षितम् ॥४२॥

पदच्छेद—

यत् नः त्वम् कर्मसन्धानाम् साधूनाम् गृहमेधिनाम् ।
कृतवान् असि दुर्मर्षम् विप्रियम् तव मर्षितम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	५. जो	कृतवान् असि	८. किया था
नः त्वम्	४. हमारा तुमने	दुर्मर्षम्	६. असह्य
कर्म सन्धानाम्	१. कर्मों का पालन करने वाले	विप्रियम्	७. अपकार
साधूनाम्	२. सद्	तव	९. उसको (हमने)
गृहमेधिनाम् ।	३. गृहस्थ	मर्षितम् ॥	१०. सह लिया था

श्लोकार्थ—कर्मों का पालन करने वाले सद्गृहस्थ हमारा तुमने जो (पहले) असह्य अपकार किया था, उसको हमने सह लिया था

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तन्तुकृन्तन यन्नस्त्वमभद्रमचरः पुनः।
तस्माल्लोकेषु ते मूढ न भवेद्भ्रमतः पदम् ॥४३॥

पदच्छेद—

तन्तु कृन्तन यत् नः त्वम् अभद्रम् अचरः पुनः।
तस्मात् लोकेषु ते मूढ न भवेत् भ्रमतः पदम् ॥

शब्दार्थ—

तन्तु	४. वंश परम्परा को	तस्मात्	९. इसलिये
कृन्तन	५. नष्ट करना चाहते हो	लोकेषु	१०. लोकों में
यत् नः	३. जो हमारी	ते	१२. तुम्हारे लिये
त्वम्	२. तुम	मूढ	१. हे मूर्ख
अभद्रम्	७. दुष्टता का	न भवेत्	१४. नही मिलेगा
अचरः	८. व्यवहार किया हैं	भ्रमतः	११. घूमते रहो
पुनः।	६. फिर	पदम् ॥	१३. रुकने को स्थान

श्लोकार्थ—हे मूर्ख ! तुम जो हमारी वंश-परम्परा को नष्ट करना चाहते हो, फिर दुष्टता का व्यवहार किया हैं इसलिये लोको में घूमते रहो तुम्हारे लिये रुकनें को स्थान नहीं मिलेगा।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

प्रतिजग्राह तद् बाढं नारदः साधुसम्मतः।
एतावान् साधुवादो हि तितिक्षेतेश्वरः स्वयम् ॥४४॥

पदच्छेद—

प्रतिजग्राह तत् बाढम् नारदः साधु सम्मतः।
एतावान् साधुवादः हि तितिक्षेत ईश्वरः स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

प्रति जग्राह	५. स्वीकार कर लिया	एतावान्	९. इतना ही
तत्	४. उस शाप को	साधुवादः	१०. साधुता का लक्षण हैं
बाढम्	३. बहुत अच्छा कहकर	हि तितिक्षेत	८. सहन शक्ति रखना
नारदः	२. नारद जी ने	ईश्वरः	७. समर्थ होते हुये भी
साधुसम्मतः।	१. सन्त शिरोमणि	स्वयम् ॥	६. स्वयम्

श्लोकार्थ—सन्त शिरोमणि नारद जी ने बहुत अच्छा कहकर उस शाप को स्वाकार कर लिया। स्वयं समर्थ होते हुए भी सहन शक्ति रखना इतना हो साधुता का लक्षण हैं।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे परमहंस्यां संहितायां
षष्ठस्कन्धे नारदशापो नाम
पञ्चमः अध्यायः ॥५॥

षष्ठः स्कन्धः

षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

ततः प्राचेतसोऽसिक्न्यामनुनीतः स्वयम्भुवा ।
षष्टिं सञ्जनयामासदुहितृः पितृवत्सलाः ॥१॥

पदच्छेद—

ततः प्राचेतसः असिक्न्याम् अनुनीतः स्वयम्भुवा ।
षष्टिम सञ्जनयामास दुहितृः पितृ वत्सलाः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. तदनन्तर	षष्टिम्	६. साठ
प्राचेतसः	४. दक्ष प्रजापति ने	सञ्जनयामास	८. उत्पन्न की (जो)
असिक्न्याम्	५. असिक्नी से	दुहितृः	७. कन्यायें
अनुनीतः	३. अनुनय विनय करने पर	पितृ	९. पिता को
स्वयम्भुवा ।	३. ब्रह्मा जी के द्वारा	वत्सलाः ॥	१०. अति प्यारी थीं

श्लोकार्थ---तदनन्तर ब्रह्मा जी के द्वारा अनुनय विनय करने पर दक्ष प्रजापति ने असिक्नी से साठ कन्यायें उत्पन्न कीं जो पिता को अत्यन्त प्यारी थीं।

द्वितीयः श्लोकः

दश धर्माय कायेन्दोर्द्विषट् त्रिणव दत्तवान् ।
भूताङ्गिरः कृशाश्वेभ्यो द्वे द्वे तार्क्ष्याय चापराः ॥२॥

पदच्छेद—

दश धर्माय काय इन्दोः द्विषट् त्रिणव दत्तवान् ।
भत अङ्गिरः कृशाश्वेभ्यः द्वे द्वे तार्क्ष्याय च अपराः ॥

शब्दार्थ—

दश	१. (प्रजापति दक्ष ने दस कन्यायें)	भूत	७. भूत को
धर्माय	२. धर्म को	अङ्गिरः	८. अङ्गिरा को
काय	४. कश्यप को	कृशाश्वेभ्यः	९. कृशाश्व को
इन्दोः	६. चन्द्रमा को	द्वे द्वे	१०. दो-दो कन्याये
द्विषट्	३. तेरह कन्यायें	तार्क्ष्याय	१३. तार्क्ष्य को
त्रिणव	५. सत्ताईस कन्यायें	च	११. और
दत्तवान् ।	१४. प्रदान कीं	अपराः ॥	१२. शेष

श्लोकार्थ---प्रजापति दक्ष ने दस कन्यायें धर्म को, तेरह कन्यायें कश्यप को, सत्ताईस कन्यायें चन्द्रमा को, भूत, अङ्गिरा, कृशाश्व को दो-दो कन्यायें और शेष तार्क्ष्य को प्रदान कीं।

तृतीयः श्लोकः

नामधेयान्यमूषां त्वं सापत्यानां च मे शृणु ।
यासां प्रसूतिप्रसवैर्लोका आपूरितास्त्रयः ॥३॥

पदच्छेद—

नामधेयानि अमूषाम् त्वम् सापत्यानाम् च मे शृणु ।
यासाम् प्रसूति प्रसवैः लोकाः आपूरिताः त्रयः ॥

शब्दार्थ—

नामधेयानि	५. नामों को	यासाम्	८. इन्हीं की
अमूषाम्	३. इनके	प्रसूति	९. वंश
त्वम्	२. तुम	प्रसवैः	१०. परम्परा से
सापत्यानाम्	४. सन्तानों के	लोकाः	१२. लोक
च	१. और	आपूरिताः	१३. भर गये
मे	६. मुझसे	त्रयः ॥	११. तीनों
शृणु ।	७. सुनो		

शब्दार्थ—और तुम इनके सन्तानों के नामों को मुझसे सुनो। इन्हीं की वंश-परम्परा से तीनों लोक भर गये।

चतुर्थः श्लोकः

भानुर्लम्बा ककुब्जामिर्विश्वा साध्यामरुत्वती ।
वसुर्मुहूर्ता सङ्कल्पा धर्मपत्न्यः सुताञ्शृणु ॥४॥

पदच्छेद—

भानुः लम्बा ककुब्जामिः विश्वा साध्या मरुत्वती ।
वसुः मुहूर्ता सङ्कल्पा धर्म पत्न्यः सुतान् शृणु ॥

शब्दार्थ—

भानुः	१. भानु	वसुः	वसु
लम्बा	२. लम्बा	मुहूर्ता	९. मुहूर्ता (और)
ककुभ्	३. कुकुभ्	सङ्कल्पा	१०. सङ्कल्पा
जामि	४. जामि	धर्म	११. धर्म की
विश्वा	५. विश्वा	पत्न्यः	१२. पत्नियाँ थीं (उनके)
साध्या	६. साध्या	सुतान्	१३. पुत्रों के नाम
मरुत्वती ।	७. मरुत्वती	शृणु ॥	१४. सुनो

शब्दार्थ—भानु-लम्बा-कुकुभ्-जामि-विश्वा-साध्या मरुत्वती-वसु-मुहूर्ता और संकल्पा धर्म की पत्नियाँ थीं। उनके पुत्रों के नाम सुनो।

पंचमः श्लोकः

भानोस्तु देवऋषभ इन्द्रसेनस्ततो नृप ।
विद्योत आसील्लम्बायास्ततश्च स्तनयित्नवः ।।५।।

पदच्छेद—

भानोः तु देवऋषभः इन्द्रसेनः ततः नृप ।
विद्योतः आसीत् लम्बायाः ततः च स्तनयित्नवः ।।

शब्दार्थ—

भानोः	२. भानु का पुत्र	विद्योतः	९. विद्योत था
तु	४. और	आसीत्	७. हुआ
देवऋषभः	३. देवऋषभ	लम्बायाः	८. लम्बा का पुत्र
इन्द्रसेनः	६. इन्द्रसेन	ततः	११. उससे
ततः	५. उससे	च	१०. और
नृप ।	१. हे राजन्	स्तनयित्नवः ।।	१२. मेघगण हुये

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भानु का पुत्र देवऋषभ और उससे इन्द्रसेन हुआ । लम्बा का पुत्र विद्योत था । और उससे मेघगण हुये ।

षष्ठः श्लोकः

ककुभः सङ्कटस्तस्य कीकटस्तनयो यतः ।
भुवो दुर्गाणि जामेयः स्वर्गो नन्दिस्ततोऽभवत् ।।६।।

पदच्छेद—

ककुभः सङ्कटः तस्य कीकटः तनयः यतः ।
भुवः दुर्गाणि जामेयः स्वर्गः नन्दिः ततः अभवत् ।।

शब्दार्थ—

ककुभः	१. ककुभ् का पुत्र	भुवः	७. पृथ्वी के
सङ्कटः	२. संकट	दुर्गाणि	८. दुर्गों के देवता हुये
तस्य	३. उसका	जामेयः	९. जामि का पुत्र
कीकटः	४. कीकट (और)	स्वर्गः	१०. स्वर्ग
तनयः	६. पुत्र	नन्दिः	१२. नन्दि
यतः ।	५. उसके	ततः	११. उससे
		अभवत् ।।	१३. हुआ

श्लोकार्थ—ककुभ् का पुत्र संकट, उसका कीकट और उसके पुत्र पृथ्वी के दुर्गों के देवता हुये । जामि का पुत्र स्वर्ग, उससे नन्दि हुआ ।

सप्तमः श्लोकः

विश्वेदेवास्तु विश्वाया अप्रजांस्तान् प्रचक्षते ।
साध्यो गणस्तु साध्याया अर्थसिद्धिस्तु तत्सुतः ॥७॥

पदच्छेद—

विश्वेदेवाः तु विश्वाया अप्रजान् तान् प्रचक्षते ।
साध्यः गणः तु साध्याया अर्थ सिद्धिः: तु तत् सुतः ॥

शब्दार्थ—

विश्वेदेवाः	२. विश्वेदेव हुये	साध्यः	७. साध्य
तु विश्वाया	१. विश्वा के पुत्र	गणः तु	८. गण थे
अप्रजान्	४. सन्तान रहित	साध्यायाः	६. साध्या के पुत्र
तान्	३. वे	अर्थसिद्धिः	११. अर्थसिद्धि हुआ
प्रचक्षते ।	५. थे	तु तत्	९. उसका
		सुतः ॥	१०. पुत्र

श्लोकार्थ—विश्वा के पुत्र विश्वेदेव हुये । वे सन्तान रहित थे । साध्या के पुत्र साध्यगण थे । उनका पुत्र अर्थसिद्धि हुआ ।

अष्टमः श्लोकः

मरुत्वांश्च जयन्तश्च मरुत्वत्यां बभूवतुः ।
जयन्तो वासुदेवांश उपेन्द्र इति यं विदुः ॥८॥

पदच्छेद—

मरुत्वान् च जयन्तः च मरुत्वत्याम् बभूवतुः ।
जयन्तः वासुदेव अंशः उपेन्द्र इति यम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

मरुत्वान्	३. मरुत्वान्	जयन्तः	७. जयन्त
च	४. और	वासुदेव	८. भगवान् वासुदेव के
जयन्तः	५. जयन्त	अंशः	९. अंश हैं
च	१. और	उपेन्द्रः	११. उपेन्द्र
मरुत्वत्याम	२. मरुत्वती से	इति	१२. ऐसा
बभूवतुः ।	६. पैदा हुये	यम्	१०. जिन्हें
		विदुः ॥	१३. जानते हैं

श्लोकार्थ—और मरुत्वती से मरुत्वान् और जयन्त पैदा हुये । जयन्त भगवान् वासुदेव के अंश हैं । जिन्हें उपेन्द्र ऐसा जानते हैं ।

नवमः श्लोक

मौहूर्तिका देवगणा मुहूर्तायाश्च जज्ञिरे ।
ये वै फलं प्रयच्छन्ति भूतानां स्वस्वकालजम् ॥९॥

पदच्छेद—

मौहूर्तिकाः देवगणाः मुहूर्तायाः च जज्ञिरे ।
ये वै फलम् प्रयच्छन्ति भूतानाम् स्व-स्व कालजम् ॥

शब्दार्थ—

मौहूर्तिकाः	३. मुहूर्त के अभिमानी	ये वै	६. ये लोग
देवगणाः	४. देवगण	फलम्	१०. फल
मुहूर्तायाः	३. मुहूर्ता से	प्रयच्छन्ति	११. देते हैं
च	१. और	भूतानाम्	७. प्राणियों को
जज्ञिरे ।	५. उत्पन्न हुये	स्व-स्व	८. अपने-अपने
		कालजम् ॥	९. कर्मानुसार

श्लोकार्थ—और मुहूर्ता से मुहूर्त के अभिमानी देवगण उत्पन्न हुये। ये लोग प्राणियों को अपने-अपने कर्मानुसार फल देते हैं।

दशमः श्लोकः

सङ्कल्पायाश्च सङ्कल्प कामः सङ्कल्पजः स्मृतः ।
वसवोऽष्टौ वसोः पुत्रास्तेषां नामानि मे शृणु ॥१०॥

पदच्छेद—

सङ्कल्पायाः च सङ्कल्पः कामः सङ्कल्पजः स्मृतः ।
वसवः अष्टौ वसोः पुत्राः तेषाम् नामानि मे शृणु ॥

शब्दार्थ—

सङ्कल्पायाः	१. सकङ्ल्पा का पुत्र	अष्टौ	९. आठ
च	३. और	वसोः	७. वसु के
सङ्कल्पः	२. सकङ्ल्प हुआ	पुत्राः	८. पुत्र
कामः	४. काम	तेषाम्	११. उनके
सङ्कल्पजः	५. सङ्कल्प से उत्पन्न	नामानि	१२. नामों को
स्मृतः ।	६. कहा जाता है	मे	१३. मुझसे
वसवः	१०. वसु हुये	शृणु ॥	१४. सुनो

श्लोकार्थ—सङ्कल्पा का पुत्र सङ्कल्प हुआ, और काम सङ्कल्प से उत्पन्न कहा जाता है। वसु के पुत्र आठ वसु हुये। उनके नामों को मुझसे सुनो।

एकादशः श्लोकः

द्रोणः प्राणो ध्रुवोऽर्कोऽग्निर्दोषो वसुर्विभावसुः ।
द्रोणस्याभिमतेः पत्न्या हर्षशोकभयादयः ॥११॥

पदच्छेद—

द्रोणः प्राणः ध्रुवः अर्कः अग्निः दोषः वसुः विभावसुः ।
द्रोणस्य अभिमतेः पत्न्याः हर्ष शोक भय आदयः ॥

शब्दार्थ—

द्रोणः प्राणः	१. द्रोण, प्राण	द्रोणस्य	८. द्रोण की
ध्रुवः	२. ध्रुव	अभिमतेः	१०. अभिमति था (उससे)
अर्कः	३. अर्क	पत्न्याः	९. पत्नी का नाम
अग्निः	४. अग्नि	हर्ष	११. हर्ष
दोषः	५. दोष	शोक	१२. शोक
वसुः	६. वसु (और)	भय	१३. भय
विभावसुः ।	७. विभावसु था	आदयः ॥	१४. आदि पुत्र हुये

श्लोकार्थ—द्रोण, प्राण, ध्रुव-अर्क, अग्नि, दोष, वसु और विभावसु था । द्रोण की पत्नी का नाम अभिमति था । उससे हर्ष, शोक, भय आदि पुत्र हुये ।

द्वादशः श्लोकः

प्राणस्योर्जस्वती भार्या सह आयुः पुरोजवः ।
ध्रुवस्य भार्या धरणिरसूत विविधाः पुरः ॥१२॥

पदच्छेद—

प्राणस्य ऊर्जस्वती भार्या सह आयुः पुरोजवः ।
ध्रुवस्य भार्या धरणिः असूत विविधाः पुरः ॥

शब्दार्थ—

प्राणस्य	१. प्राण की	ध्रुवस्य	७. ध्रुव की
ऊर्जस्वती	३. ऊर्जस्वती से	भार्या	८. पत्नी
भार्या	२. पत्नी	धरणिः	९. धरणि ने
सहः	४. सह	असूत	१२. पैदा किये
आयुः	५. आयु	विविधाः	१०. अनेक
पुरोजवः ।	६. पुरोजव हुये	पुराः ॥	११. नगरों के देवता

श्लोकार्थ—प्राण की पत्नी ऊर्जस्वती से सह, आयु, पुरोजव हुये । ध्रुव की पत्नीधरणि नें अनेक नगरों के देवता पैदा किये ।

त्रयोदशः श्लोकः

अर्कस्य वासना भार्यापुत्रास्तर्षादयः स्मृताः ।
अग्नेर्भार्या वसोर्धारा पुत्रा द्रविणकादयः ।।१३।।

पदच्छेद—

अर्कस्य वासना भार्या पुत्राः तर्ष आदयः स्मृताः ।
अग्नेः भार्या वसोः धारा पुत्राः द्रविणक आदयः ।।

शब्दार्थ—

अर्कस्य	१. अर्क की	अग्नेः	८. अग्नि नामक
वासना	३. वासना के	भार्या	१०. पत्नी
भार्या	२. पत्नी	वसोः	९. वसु की
पुत्राः	६. पुत्र	धारा	११. धारा से
तर्ष	४. तर्ष	पुत्राः	१४. पुत्र हुये
आदयः	५. आदि	द्रविणक	१२. द्रविणक
स्मृताः ।	७. कहे जाते हैं	आदयः ।।	१३. आदि

श्लोकार्थ—अर्क की पत्नी वासना के तर्ष आदि पुत्र कहे जाते हैं। अग्नि नामक वसु की पत्नी धारा से द्रविणक आदि पुत्र हुये।

चतुर्दशः श्लोकः

स्कन्दश्च कृत्तिकापुत्रो ये विशाखादयस्ततः ।
दोषस्य शर्वरीपुत्रः शिशुमारो हरेः कला ।।१४।।

पदच्छेद—

स्कन्दः च कृत्तिका पुत्रः ये विशाखा आदयः ततः ।
दोषस्य शर्वरी पुत्रः शिशुमारः हरेः कला ।।

शब्दार्थ—

स्कन्दः	४. स्कन्द हुये	ततः ।	५. उनसे
च	१. और	दोषस्य	८. दोष की पत्नी
कृत्तिका	२. कृत्तिका	शर्वरी	९ शर्वरी के
पुत्रः	३. पुत्र	पुत्रः	१०. पुत्र
ये	१२. जो	शिशुमारः	११. शिशुमार हुये
विशाखा	६. विशाखा	हरेः	१२. भगवान् श्री हरि के
आदयः	७. आदि उत्पन्न हुये	कला ।।	१४. कलावतार हैं

श्लोकार्थ—और कृत्तिका के पुत्र स्कन्द हुये। उनसे विशाखा आदि पुत्र उत्पन्न हुये। दोष की पत्नी शर्वरी के पुत्र शिशुमार हुये। जो भगवान् श्री हरि के कलावतार हैं।

पंचदशः श्लोकः

वसोराङ्गिरसीपुत्रो विश्वकर्माऽऽकृतीपतिः ।
ततो मनुश्चाक्षुषोऽभूद् विश्वेसाध्या मनोः सुताः ॥१५॥

पदच्छेद—

वसोः आङ्गिरसी पुत्रः विश्वकर्मा आकृती पतिः ।
ततः मनुः चाक्षुषः अभूत् विश्वेसाध्या मनोः सुताः ॥

शब्दार्थ—

वसोः	१. वसु की पत्नी	ततः	७. उनसे
आङ्गिरसी	२. आङ्गिरसी से	मनुः	९. मनु
पुत्रः	६. पुत्र हुआ	चाक्षुषः	८. चाक्षुष
विश्वकर्मा	५. विश्वकर्मा नामक	अभूत्	१०. हुये
आकृती	३. शिल्प कला के	विश्वेसाध्याः	१२. विश्वेदेव साध्यगण हुये
पतिः ।	४. जानकार	मनोः सुताः ॥	११. मनु के पुत्र

श्लोकार्थ—वसु की पत्नी आङ्गिरसी से शिल्पकला के जानकार विश्वकर्मा नामक पुत्र हुआ। उनसे चाक्षुष मनु हुये। मनु के पुत्र विश्वेदेव साध्यगण हुये।

षोडशः श्लोकः

विभावसोरसूतोषा व्युष्टं रोचिषमातपम् ।
पञ्चयामोऽथ भूतानि येन जाग्रति कर्मसु ॥१६॥

पदच्छेद—

विभावसोः असूत उषा व्युष्टम् रोचिषम् आतपम् ।
पञ्चयामः अथ भूतानि येन जाग्रति कर्मसु ॥

शब्दार्थ—

विभावसोः	१. विभावसु की पत्नी	पञ्चयामः	८. पञ्चयाम पुत्र हुआ
असूत	६. पैदा किया	अथ	७. इसके बाद
उषा	२. उषा ने	भूतानि	१०. सभी प्राणी
व्युष्टम्	३. व्युष्ट	येन	९. जिससे
रोचिषम्	४. रोचिष और	जाग्रति	१२. लगे रहते हैं
आतपम् ।	५. आतप नाम के पुत्रों को	कर्मसु ॥	११. अपने कार्यों में

श्लोकार्थ—विभावसु की पत्नी उषा ने व्युष्ट, रोचिष और आतप नाम के पुत्रों को पैदा किया। इसके बाद पञ्चयाम पुत्र हुआ। जिससे सभी प्राणी अपने कार्यों में लगे रहते हैं।

सप्तदशः श्लोकः

सरूपासूत भूतस्य भार्या रुद्रांश्च कोटिशः ।
रैवतोऽजो भवो भीमो वाम उग्रो वृषाकपिः ।।१७।।

पदच्छेद—

सरूपा असूत भूतस्य भार्या रुद्रान् च कोटिशः ।
रैवतः अजः भवः भीमः वामः उग्रः वृषाकपिः ।।

शब्दार्थ---

सरूपा	३. सरूपा ने	रैवतः	८. रैवत
असूत	६. पैदा किया	अजः	९. अज
भूतस्य	१. भूत की	भवः	१०. भव
भार्या	२. पत्नी	भीमः	११. भीम
रुद्रान्	५. रुद्र गणों को	वामः	१२. वाम
च	७. जो	उग्रः	१३ उग्र
कोटिशः ।	४. करोड़ों	वृषाकपिः ।।	१४. वृषाकपि इत्यादि थे

श्लोकार्थ—भूत की पत्नी सरूपा ने करोड़ों रुद्रगणों को पैदा किया । जो रैवत, अज, भव, भीम, वाम, उग्र, वृषा कपि थे ।

अष्टादशः श्लोकः

अजैकपादहिर्बुध्न्यो बहुरूपो महानिति ।
रुद्रस्य पार्षदाश्चान्ये घोरा भूतविनायकाः ।।१८।।

पदच्छेद---

अजैकपाद् अहिर्बुध्न्यः बहुरूपः महान् इति ।
रुद्रस्य पार्षदाः च अन्ये घोराः भूतविनायकाः ।।

शब्दार्थ—

अजैकपाद्	१. अजैक पाद	पार्षदाः	७. पार्षद हुये
अहिर्बुध्न्यः	२. अहिर्बुध्न्य	च	८. और
बहुरूपः	३. बहुरूप (और)	अन्ये	९. दूसरो पत्नी से
महान्	४. महान्	घोराः	१०. भयंकर
इति ।	५. इत्यादि	भूत	११. भूत
रुद्रस्य	६. रुद्र के	विनायकाः ।।	१२. विनायक आदि हुये

श्लोकार्थ—अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, बहुरूप और महान् इत्यादि रुद्र के पार्षद हुये । और दूसरी पत्नी से भयंकर भूत विनायक आदि हुये ।

एकोनविंश: श्लोक:

प्रजापतेरङ्गिरसः स्वधापत्नी पितृनथ ।
अथर्वाङ्गिरसं वेदं पुत्रत्वे चाकरोत् सती ॥१९॥

पदच्छेद

प्रजापतेः अङ्गिरसः स्वधा पत्नी पितृन् अथ ।
अथर्व अङ्गिरसम् वेदम् पुत्रत्वे च अकरोत् सती ॥

शब्दार्थ

प्रजापतेः	३. प्रजापति की	अथर्वआङ्गिरसम्	९. अथर्वा आङ्गिरस नामक
अङ्गिरसः	२. अङ्गिरा	वेदम्	१०. वेद को
स्वधा	५. स्वधा ने	पुत्रत्वे	११. पुत्र रूप में
पत्नी	४. पत्नी	च	७. और
पितृन्	६. पितरगणों को उत्पन्न किया	अकरोत्	१२. स्वीकार किया
अथ ।	१. इसके बाद	सती ॥	८. सती नाम की दूसरी पत्नी ने

श्लोकार्थ—इसके बाद अङ्गिरा प्रजापति की पत्नी स्वधा ने पितृ गणों को उत्पन्न किया। और सतीनाम की दूसरी ने अथर्वा अङ्गिरस नामक वेद को पुत्र रूप में स्वीकर किया।

विंशः श्लोकः

कृशाश्वोऽर्चिषि भार्यायां धूम्रकेशमजीजनत् ।
धिषणायां वेदशिरो देवलं वयुनं मनुम् ॥२०॥

पदच्छेद

कृशाश्वः अर्चिषि भार्यायाम् धूम्रकेशम् अजीजनत् ।
धिषणायाम् वेदशिरः देवलम् वयुनम् मनुम् ॥

शब्दार्थ

कृशाश्वः	१. कृशाश्व की	धिषणायाम्	६. धिषणा से
अर्चिषि	३. अर्चि से	वेदशिरः	७. वेद शिर
भार्यायाम्	२. पत्नी	देवलम्	८. देवल
धूम्रकेशम्	४. धूम्रकेश का	वयुनम्	९. वयुन और
अजीजनत् ।	५. जन्म हुआ	मनुम् ॥	१०. मनु हुयें

श्लोकार्थ—कृशाश्व की पत्नी अर्चि से धूम्रकेश का जन्म हुआ। धिषणा से वेदशिर, देवल, वयुन और मनु हुये।

एकविंशः श्लोकः

ताक्ष्यर्स्य विनता कद्रूः पतङ्गी यामिनीति च ।
पतङ्ग्यसूत पतगान् यामिनी शलभानथ ।।२१।।

पदच्छेद

ताक्ष्यर्स्य विनता कद्रूः पतङ्गी यामिनी इति च ।
पतङ्गी असूत पतगान् यामिनी शलभान् अथ ।।

शब्दार्थ

ताक्ष्यर्स्य	१. ताक्ष्यर्नामधारी कश्यप की	पतङ्गी	७. पतङ्गी से
विनता	२. विनता	असूत	९. उत्पन्न हुये
कद्रूः	३. कद्रू	पतगान्	८. पक्षी गण
पतङ्गी	४. पतङ्गी	यामिनी	११. यामिनी से
यामिनी	५. यामिनी	शलभान्	१२. पतिंगों का
इति	६. ये स्त्रियाँ थीं	अथ ।।	१३. जन्म हुआ
च ।	१०. और		

श्लोकार्थ—ताक्ष्यर्नामधारी कश्यप की विनता, कद्रू, पतङ्गी, यामिनी ये स्त्रियाँ थीं । पतङ्गी से, पक्षीगण उत्पन्न हुये और यामिनी से पतिंगों का जन्म हुआ।

द्वाविंशः श्लोकः

सुपर्णासूत गरुडं साक्षाद् यज्ञेशवाहनम् ।
सूर्यसूतमनूरुं च कद्रूर्नागाननेकशः ।।२२।।

पदच्छेद

सुपर्णा असूत गरुडम् साक्षात् यज्ञेश वाहनम् ।
सूर्य सूतम् अनूरुम् च कद्रूः नागान् अनेकशः ।।

शब्दार्थ

सुपर्णा	८. विनता ने	सूर्य-सूतम्	६. सूर्य के सारथी
असूत	९. उत्पन्न किया	अनूरुम्	७. अरुण को
गरुडम्	४. गरुड को	च	५. और
साक्षात्	१. साक्षात्	कद्रूः	१०. कद्रू ने
यज्ञेश	२. भगवान् विष्णु के	नागान्	१२. नागों को उपत्न्न किया
वाहनम् ।	३. वाहन	अनेकशः ।।	११. अनेकों

श्लोकार्थ—साक्षात् भगवान् विष्णु के वाहन गरुड़ को और सूर्य के सारथी अरुण को विनता ने उत्पन्न किया। कद्रू ने अनेकों नागों को उत्पन्न किया।

त्रयोविंशः श्लोकः

कृत्तिकादीनि नक्षत्राणीन्दोः पत्न्यस्तु भारत ।
दक्षशापात्सोऽनपत्यस्तासु यक्ष्मग्रहार्दितः ॥२३॥

पदच्छेद—

कृत्तिका आदीनि नक्षत्राणि इन्दोः पत्न्यः तु भारत ।
दक्षशापात् सः अनपत्यः तासु यक्ष्मग्रह अर्दितः ॥

शब्दार्थ—

कृत्तिका	२. कृत्तिका	दक्षशापात्	१०. दक्ष के शाप से
आदीनि	३. आदि	सः	९. वे चन्द्रमा
नक्षत्राणि	४. नक्षत्ररूपिणी देवियाँ	अनपत्यः	८. सन्तान रहित
इन्दोः	५. चन्द्रमा की	तासु	७. उस रोहिणी से अधिक प्रेम के कारण
पत्न्यः	६. पत्नियाँ हैं	यक्ष्मग्रह	११. यक्ष्मा रोग से
तु भारत ।	१. हे परीक्षित् !	अर्दितः ॥	१२. पीड़ित हो गये थे

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! कृत्तिका आदि नक्षत्र रूपिणी देवियाँ चन्द्रमा की पत्नियाँ हैं। उसे रोहिणी से अधिक प्रेम के कारण सन्तान रहित वे चन्द्रमा दक्ष के शाप से क्षय रोग से पीड़ित हो गया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

पुनः प्रसाद्य तं सोमः कला लेभे क्षये दिताः ।
शृणु नामानि लोकानां मातॄणां शङ्कराणि च ॥२४॥

पदच्छेद—

पुनः प्रसाद्य तम् सोमः कला लेभे क्षये दिताः ।
शृणु नामानि लोकानाम् मातृणाम् शंकराणि च ॥

शब्दार्थ—

पुनः	४. फिर से	शृणु	१२. सुनो
प्रसाद्य	५. प्रसन्न करके	नामानि	११. नामों को
तम्	३. उस दक्ष को	लोकानाम्	८. लोकों की
सोमः	२. चन्द्रमा ने	मातृणाम्	९. माताओं के
कला लेभे	६. कलाओं को प्राप्त कर लिया	शङ्कराणि	१०. कल्याणकारी
क्षये दिताः ।	१. क्षीण कलाओं वाले	च ॥	७. पुनः अब

श्लोकार्थ—क्षीण कलाओं वाले चन्द्रमा ने उस दक्ष को फिर से प्रसन्न करके कलाओं को प्राप्त कर लिया । पुनः अब लोकों की माताओं के कल्याणकारी नामों को सुनो ।

पंचविंशः श्लोकः

अथ कश्यपपत्नीनां यत्प्रसूतमिदं जगत् ।
अदितिर्दितिर्दनुः काष्ठा अरिष्टा सुरसा इला ॥२५॥

पदच्छेद—

अथ कश्यपपत्नीनाम् यत प्रसूतम् इदम् जगत् ।
अदितिः दितिः दनुः काष्ठा अरिष्टा सुरसा इला ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. अब	अदितिः	८. अदिति
कश्यप	२. कश्यप की	दितिः	९. दिति
पत्नीनाम्	३. पत्नियों के	दनुः	१०. दनु
यत्	४. जिससे	काष्ठा	११. काष्ठा
प्रसूतम	७. उत्पन्न हुआ (नाम सुनो)	अरिष्टा	१२. अरिष्टा
इदम्	५. यह	सुरसा	१३. सुरसा
जगत् ।	६. संसार	इला ॥	१४. इला इत्यादि हैं

श्लोकार्थ—अब कश्यप की पत्नियों के जिससे यह संसार उत्पन्न हुआ नाम सुनो । अदिति, दिति, दनु, काष्ठा-अरिष्टा, सुरसा, इला इत्यादि हैं ।

षड्विंशः श्लोकः

मुनिः क्रोधवशा ताम्रा सुरभिः सरमा तिमिः ।
तिमेर्यादोगणा आसन् श्वापदाः सरमासुताः ॥२६॥

पदच्छेद—

मुनिः क्रोधवशा ताम्रा सुरभिः सरमा तिमिः ।
तिमेः यादोगणाः आसन् श्वापदाः सरमा सुताः ॥

शब्दार्थ—

मुनिः	१. और मुनि	तिमेः	७. तिमि के
क्रोधवशा	२. क्रोधवशा	यादोगण	८. जलचर जन्तु
ताम्रा	३. ताम्रा	आसन्	९. हुये ओर
सुरभिः	४. सुरभि	श्वापदाः	१२. कुत्ते आदि हुये
सरमा	५. सरमा	सरमा	१०. सरमा के
तिमिः ।	६. तिमि थीं	सुरभिः ॥	११. पुत्र

श्लोकार्थ—और मुनि-क्रोधवशा-ताम्रा-सुरभि-सरमा-तिमि थीं । तिमि के जलचर जन्तु हुये । और सरमा के पत्र कुत्ते आदि हुये ।

सप्तविंशः श्लोकः

सुरभेर्महिषा गावो ये चान्ये द्विशफा नृप।
ताम्रायाः श्येनगृध्राद्या मुनेरप्सरसां गणाः ।।२७।।

पदच्छेद—

सुरभेः महिषाः गावः ये च अन्ये द्विशफाः नृप।
ताम्रायाः श्येन गृध्र आद्याः मुनेः अप्सरसाम् गणाः ।।

शब्दार्थ—

सुरभेः	२. सुरभि के पुत्र	नृप।	१. हे राजन्
महिषाः	३. भैंस	ताम्रायाः	९. ताम्रा के पुत्र
गावः	४. गाय	श्येन-गृध्र	१०. बाज-गीध
ये	६. जो	आद्याः	११. इत्यादि तथा
च	५. और	मुनेः	१२. मुनि से
अन्ये	७. दूसरे	अप्सरसाम्	१३. अप्सराओं का
द्विशफाः	८. दो खुर वाले पशु, हैं उत्पन्न हुये	गणाः ।।	१४. समूह उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—हे राजन्! सुरभि के पुत्र भैंस-गाय और जो दूसरे दो खुर वाले पशु हैं उत्पन्न हुये। ताम्रा के पुत्र बाज-गीध इत्यादि तथा मुनि से अप्सराओं का समूह उत्पन्न हुआ।

अष्टाविंशः श्लोकः

दन्दशूकादयः सर्पा राजन् क्रोधवशात्मजाः।
इलाया भूरुहाः सर्वे यातुधानाश्च सौरसाः ।।२८।।

पदच्छेद—

दन्दशूक आदयः सर्पाः राजन् क्रोधवशा आत्मजाः।
इलाया भूरुहाः सर्वे यातुधानाः च सौरसाः ।।

शब्दार्थ—

दन्दशूकाः	४. विषैले जन्तु	इलायाः	७. इला के पुत्र
आदयः	६. आदि हुये	भूरुहाः	९. वृक्ष
सर्पाः	५. सर्प	सर्वे	८. सभी
राजन्	१. हे राजन्!	यातुधानाः	१२. राक्षस गण हुये
क्रोधवशा	२. क्रोधवशा के	च	१०. और
आत्मजाः।	३. पुत्र	सौरसाः ।।	११. सुरसा के

श्लोकार्थ—हे राजन्! क्रोधवशा के पुत्र विषैले जन्तु सर्प आदि हुये। इला के पुत्र सभी वृक्ष और सुरसा के राक्षसगण हुये।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अरिष्टायाश्च गन्धर्वाः काष्ठाया द्विशफेतराः ।
सुता दनोरेकषष्टिस्तेषां प्राधानिकाञ्शृणु ॥२९॥

पदच्छेद---

अरिष्टायाः च गन्धर्वाः काष्ठायाः द्विशफेतराः ।
सुताः दनोः एकषष्टिः तेषाम् प्राधानिकान् शृणु ॥

शब्दार्थ---

अरिष्टायाः	१. अरिष्टा के	सुताः	८. पुत्र हुये
च	३. और	दनोः	६. दनु के
गन्धर्वाः	२. गन्धर्व	एकषष्टिः	७. इकसठ
काष्ठायाः	४. काष्ठा के	तेषाम्	९. उनमें
द्विशफेतराः ।	५. एक खुर वाले घोड़े आदि हुये	प्राधानिकान्	१०. प्रधान-प्रधान के नाम
		शृणु ॥	११. सुनो

श्लोकार्थ—अरिष्टा के गन्धर्व और काष्ठा के एक खुर वाले घोड़े आदि हुये। दनु के इकसठ पुत्र हुये। उनमें प्रधान-प्रधान के नाम सुनो।

त्रिंशः श्लोकः

द्विमूर्धा शम्बरोऽरिष्टो हयग्रीवो विभावसुः ।
अयोमुखः शङ्कुशिराः स्वर्भानुः कपिलोऽरुणः ॥३०॥

पदच्छेद—

द्विमूर्धा शम्बरः अरिष्टः हयग्रीवः विभावसुः ।
अयोमुखः शङ्कुशिराः स्वर्भानुः कपिलः अरुणः ॥

शब्दार्थ—

द्विमूर्धा	१. वे द्विमूर्धा	अयोमुखः	६. अयोमुख
शम्बरः	२. शम्बर	शङ्कुशिराः	७. शङ्कु शिरा
अरिष्टः	३. अरिष्ट	स्वर्भानुः	८. स्वर्भानु
हयग्रीवः	४. हयग्रीव	कपिलः	९. कपिल और
विभावसुः ।	५. विभावसु	अरुणः ॥	१०. अरुण आदि थे

श्लोकार्थ—वे द्विमूर्धा, शम्बर, अरिष्ट, हयग्रीव, विभावसु, अयोमुख, शङ्कु, शिरा, स्वर्भानु, कपिल और अरुण आदि थे।

एकत्रिंशः श्लोकः

पुलोमा वृषपर्वा च एकचक्रोऽनुतापनः ।
धूम्रकेशो विरूपाक्षो विप्रचित्तिश्च दुर्जयः ।।३१।।

पदच्छेद—

पुलोमा वृषपर्वा च एकचक्रः अनुतापनः ।
धूम्रकेशः विरूपाक्षः विप्रचित्तिः च दुर्जयः ।।

शब्दार्थ—

पुलोमा	२. पुलोमा	धूम्रकेशः	धूम्रकेश
वृषपर्वा	३. वृषपर्वा	विरूपाक्षः	७. विरूपाक्ष
च	१. और	विप्रचित्तिः	८. विप्रचित्ति
एकचक्रः	४. एक चक्र	च	९. और
अनुतापनः ।	५. अनुतापन	दुर्जयः ।।	१०. दुर्जय इत्यादि हुये

श्लोकार्थ--और पुलोमा, वृषपर्वा, एक चक्र, अनुतापन, धूम्रकेश, विरूपाक्ष, विप्रचित्ति और दुर्जय इत्यादि हुये ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

स्वर्भानोः सुप्रभां कन्यामुवाह नमुचिः किल ।
वृषपर्वणस्तु शर्मिष्ठां ययातिर्नहुषो बली ।।३२।।

पदच्छेद—

स्वर्भानोः सुप्रभाम् कन्याम् उवाह नमुचिः किल ।
वृषपर्वणः तु शर्मिष्ठाम् ययातिः नहुषः बली ।।

शब्दार्थ—

स्वर्भानोः	१. स्वर्भानु की	वृषपवर्णः	६. वृर्षपर्वा की पुत्री
सुप्रभाम्	३. सुप्रभा से	तु	५. और
कन्याम्	२. पुत्री	शर्मिष्ठाम्	७. शर्मिष्ठा से
उवाह	१२. विवाह किया	ययातिः	१०. ययाति ने
नमुचिः	४. नमुचि ने	नहुषः	८. नहुष के पुत्र
किल ।	१०. विधि पूर्वक	बली ।।	९. महाबली

श्लोकार्थ—स्वर्भानु की सुप्रभा से नमुचि ने और वृर्पपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा से नहुष के, महाबली पुत्र ययाति ने विधिपूर्वक विवाह किया ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

वैश्वानरसुता याश्च चतस्रश्चारुदर्शनाः ।
उपदानवी हयशिरा पुलोमा कालका तथा ॥३३॥

पदच्छेद—

वैश्वानर सुताः याः च चतस्रः चारुदर्शनाः ।
उपदानवी हयशिरा पुलोमा कालका तथा ॥

शब्दार्थ—

वैश्वानर	१. वैश्वानर की	दर्शनाः	५. देखने में
सुताः	३. कन्यायें थीं	उपदानवी	८. उपदानवी
याः	४. जो	हयशिरा	९. हयशिरा
च	७. और उनके नाम	पुलोमा	१०. पुलोमा
चतस्रः	२. चार	कालका	१२. कालका थे
चारु।	६. सुन्दर थीं	तथा ॥	११. तथा

श्लोकार्थ—वैश्वानर की चार कन्यायें थीं, जो देखने में सुन्दर थीं। और उनके नाम उपदानवी, हयशिरा, पुलोमा तथा कालका थे।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

उपदानवीं हिरण्याक्षः क्रतुर्हयशिरां नृप ।
पुलोमां कालकां च द्वे वैश्वानरसुते तु कः ॥३४॥

पदच्छेद—

उपदानवीम् हिरण्याक्षः क्रतुः हयशिराम् नृप ।
पुलोमाम् कालकाम् च द्वे वैश्वानरसुते तु कः ॥

शब्दार्थ—

उपदानवीम्	२. उपदानवी से	कालकाम्	१२. कालका थीं
हिरण्याक्षः	३. हिरण्याक्ष का (और)	च	६. और
क्रतुः	५. क्रतु का (विवाह हुआ)	द्वे	९. दो
हयशिराम्	४. हयशिरा से	वैश्वानर	७. वैश्वानर की
नृप।	१. हे राजन्	सुते	१०. कन्यायें
पुलोमाम्	११. पुलोमा (तथा)	तु कः ॥	८. शेष

श्लोकार्थ—हे राजन्! उपदानवी से हिरण्याक्ष का और हयशिरा से क्रतु का विवाह हुआ। और वैश्वानर की शेष दो कन्यायें पुलोमा तथा कालका थीं।

पंचत्रिंशः श्लोकः

उपयेमेऽथ भगवान् कश्यपो ब्रह्मचोदितः ।
पौलोमाः कालकेयाश्च दानवा युद्धशालिनः ।।३५।।

पदच्छेद—

उपयेमे अथ भगवान् कश्यपः ब्रह्म चोदितः ।
पौलोमाः कालकेयाः च दानवाः युद्ध शालिनः ।।

शब्दार्थ—

उपयेमे	६. विवाह किया (उन दोनों से)	पौलोमाः	७. पौलोमा
अथ	१. तदनन्तर	कालकेयाः	९. कालकेया
भगवान्	४. भगवान्	च	८. और
कश्यपः	५. कश्यप ने (उनसे)	दानवा	१२. दानव हुये
ब्रह्म	२. ब्रह्मा जी की	युद्ध	१०. युद्ध
चोदितः ।	३. आज्ञा से	शालिनः ।।	११. करने वाले

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्रह्मा जी की आज्ञा से भगवान् कश्यप ने उससे विवाह किया । उन दोनों से पौलोमा और कालकेय युद्ध करने वाले दानव हुये ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

तयोः षष्टिसहस्राणि यज्ञघ्नांस्ते पितुः पिता ।
जघान स्वर्गतो राजन्नेक इन्द्रप्रियङ्करः ।।३६।।

पदच्छेद—

तयोः षष्टि सहस्राणि यज्ञघ्नाः ते पितुः पिता ।
जघान स्वर्गतः राजन् एक इन्द्र प्रियङ्करः ।।

शब्दार्थ—

तयोः	५. उन लोगों को	जघान	१२. मार डाला
षष्टि	३. साठ	स्वर्गतः	८. स्वर्ग में
सहस्राणि	४. हजार	राजन्	१. हे राजन् परीक्षित् !
यज्ञघ्नाः	२. यज्ञ को नष्ट करने वाले	एक	११. अकेले ही
ते पितुः	६. तुम्हारे-पिता के	इन्द्र	९. इन्द्र को
पिता ।	७. पिता (अर्जुन ने)	प्रियङ्करः ।।	१०. प्रसन्न करने के लिये

श्लोकार्थ—हे राजन् परीक्षित् ! यज्ञ को नष्ट करने वाले साठ हजार उन लोगों को तुम्हारे पिता के पिता अर्जुन ने स्वर्ग में इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये अकेले ही मार डाला ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

विप्रचित्तिः सिंहिकाया शतं चैकमजीजनत् ।
राहुज्येष्ठं केतुशतं ग्रहत्वं य उपागतः ॥३७॥

पदच्छेद—

विप्रचित्तिः सिंहिकायाम् शतम् च एकम् अजीजनत् ।
राहु ज्येष्ठम् केतु शतम् ग्रहत्वम् यः उपागतः ॥

शब्दार्थ—

विप्रचित्तिः	१. विप्रचित्ति की पत्नी	राहुः	६. राहु
सिंहिकायाम्	२. सिंहिका ने	ज्येष्ठम्	७. सबसे से बड़ा था
शतम् च	४ सौ पुत्रों को	केतु शतम्	८. केतु सौ थे
		ग्रहत्वम्	१०. ग्रहत्व को
एकम्	३ एक	यः	९. जो
अजीजनत् ।	५. पैदा किया उनमें	उपागतः ॥	११. प्राप्त हुये

श्लोकार्थ—विप्रचित्ति की पत्नी सिंहिका ने एक सौ पुत्रों को पैदा किया। उनमें राहु सबसे बड़ा था। केतु सौ थे, जो ग्रहत्व को प्राप्त हुये।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

अथातः श्रूयतां वंशो योऽदितेरनुपूर्वशः ।
यत्र नारायणो देवः स्वांशेनावतरद् विभुः ॥३८॥

पदछेच्द—

अथअतः श्रूयताम् वंशः यः अदितेः अनुपूर्वशः ।
यत्र नारायणः देवः स्वअंशेन अवतरत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

अथ	२. अब	यत्र	८. जहाँ
अतः	१. इसलिये	नारायणः	११. नारायण ने
श्रूयताम्	७. सुनो	देवः	१०. भगवान्
वंशः	६. वंश परम्परा को	स्वअंशेन	१२. अपने अंश से
यः	३. उस	अवतरत्	१३. अवतार लिया था
अदितेः	४. अदिति की	विभुः ॥	९. सर्व व्यापक
अनुपूर्वशः ।	५. क्रमशः		

श्लोकार्थ—इसलिये अब उस अदिति की क्रमशः वंश पराम्परा को सनो। जहाँ सर्वव्यापक भगवान् नारायण ने अपने अंश से अवतार लिया था।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

विवस्वानर्यमा पूषा त्वष्टाथ सविता भगः।
धाता विधाता वरुणो मित्रः शक्र उरुक्रमः ।।३९।।

पदच्छेद—

विवस्वान् अर्यमा पूषा त्वष्टा अथ सविता भगः।
धाता विधाता वरुणः मित्रः शक्रः उरुक्रमः।।

शब्दार्थ—

विवस्वान्	२. विवस्वान्	**धाता**	७. धाता
अर्यमा	३. अर्यमा	**विधाता**	८. विधाता
पूषा	४. पूषा	**वरुणः**	९. वरुण
त्वष्टा	५. त्वष्टा	**मित्रः**	१०. मित्र
अथ	१. इसके बाद	**शक्रः**	११. शक्र और
सविता भगः।	६. सविता, भग	**उरुक्रमः।।**	१२. उरुक्रम आदि अदिति के पुत्र हुये।

श्लोकार्थ—इसके बाद विवस्वान्, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग, धाता, विधाता, वरुण, मित्र, शक्र और उरुक्रम आदि अदिति के पुत्र हुये।

चत्वारिंशः श्लोकः

विवस्वतः श्राद्धदेवं संज्ञासूयत वै मनुम्।
मिथुनं च महाभागा यमं देवं यमीं तथा।
सैव भूत्वाथ वडवा नासत्यौ सुषुवे भुवि ।।४०।।

पदच्छेद—

विवस्वतः श्राद्धदेवम् संज्ञा असूयत वै मनुम्।
मिथुनम् च महाभागा यमम् देवम् यमीम् तथा।
सा एव भूत्वा अथ वडवा नासत्यौ सुषुवे भुवि।।

शब्दार्थ—

विवस्वतः	१. विवस्वान् की पत्नी	**देवम्**	७. देवता
श्राद्धदेवम्	४. श्राद्धदेव	**यमीम्**	१०. यमी के
संज्ञा	३. संज्ञा ने	**तथा।**	९. तथा
असूयत	१३. उत्पन्न किया	**सा एव**	१५. वह संज्ञा ही
वै	१२. निश्चित ही	**भूत्वा**	१७. होकर
मनुम्।	५. मनु को	**अथ**	१४. तदनन्तर
मिथुनम्	१०. जोड़े को	**वडवा**	१६. घोड़ी
च	६. और	**नासत्यौ**	१९. अश्विनी कुमारों को
महाभागा	२. महाभाग्यवती	**सुषुवे**	२०. पैदा किया
यमम्	८. यम	**भुवि।।**	१८. इस भूलोक में

श्लोकार्थ—विवस्वान् की पत्नी महाभाग्यवती संज्ञा ने श्राद्धदेव मनु को और देवता यम तथा यमी के जोड़े को निश्चित ही उत्पन्न किया। तदनन्तर वह संज्ञा ही घोड़ी होकर इस भूलोक में अश्विनीकुमारों को पैदा किया।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

छाया शनैश्चरं लेभे सावर्णिं च मनुं ततः ।
कन्यां च तपतीं या वै वव्रे संवरणं पतिम् ।।४१।।

पदच्छेद—

छाया शनैश्चरम् लेभे सावर्णिं च मनुम् ततः ।
कन्याम् च तपतीम् या वै वव्रे संवरणम् पतिम् ।।

शब्दार्थ—

छाया	१. छाया ने	कन्याम्	८. कन्या को
शनैश्चरम्	२. शनि को	च	१०. और
लेभे	९. उत्पन्न किया	तपतीम्	७. तपती नाम की
सावर्णिं	४. सावर्णि	या वै	११. उस कन्या ने निश्चित ही
च	३. और	वव्रे	१४. स्वीकार किया
मनुम्	५. मनु को	संवरणम्	१२. संवरण को
ततः ।	६. उसके वाद	पतिम् ।।	१३. पति रूप में

श्लोकार्थ---छाया ने शनि को और सावर्णि मनु को उसके वाद तपती नाम की कन्या को उत्पन्न किया । और उस कन्या ने निश्चित ही संवरण को पति रूप में स्वीकार किया ।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अर्यम्णो मातृका पत्नी तयोश्चर्षणयः सुताः ।
यत्र वै मानुषी जातिर्ब्रह्मणा चोपकल्पिता ।।४२।।

पदच्छेद—

अर्यम्णः मातृका पत्नी तयोः चर्षणयः सुताः ।
यत्र वै मानुषी जातिः ब्रह्मणा च उपकल्पिता ।।

शब्दार्थ—

अर्यम्णः	१. अर्यमा की	यत्र वै	८. उन्हीं से
मातृका	३. मातृका थी	मानुषी	१०. मानुषी
पत्नी	२. पत्नी	जातिः	११. जाति की
तयोः	४. उन दोनों से	ब्रह्मणा	९. ब्रह्मा जी ने
चर्षणयः	५. चर्षणि नाम के	च	७. और
सुताः ।	६. पुत्र हुये	उपकल्पिता ।।	१२. कल्पना की

श्लोकार्थ---अर्यमा की पत्नी मातृका थी । उन दोनों से चर्षणि नाम के पुत्र हुये । और उन्हीं से ब्रह्मा जी ने मानुषी जाति की कल्पना की ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

पूषानपत्यः पिष्टादो भग्नदन्तोऽभवत् पुरा ।
योऽसौ दक्षाय कुपितं जहास विवृतद्विजः ।।४३।।

पदच्छेद—

पूषा अनपत्यः पिष्टादः भग्नदन्तः अभवत् पुरा ।
यः असौ दक्षाय कुपितम् जहास विवृत द्विजः ।।

शब्दार्थ—

पूषा	१. पूषा	**यः**	४. (जब) शंकर जी
अनपत्यः	२. सन्तान रहित थे	**असौ**	८. यह पूषा
पिष्टादः	१४. पिसा अन्य खाते हैं	**दक्षाय**	५. दक्ष के ऊपर
भग्न	१३. तोड़ दिये जाने पर ये	**कुपितम्**	६. क्रोधित
दन्तः	१२. वीरभद्र के द्वारा दाँतों के	**जहास**	११. हंसने लगे थे
अभवत्	७. हुये थे (तब)	**विवृत**	१०. दिखाकर
पुरा ।	३. प्राचीन काल में	**द्विजः ।।**	९. दांत

श्लोकार्थ—पूषा सन्तान रहित थे। प्राचीन काल में जब शंकर जी दक्ष के ऊपर क्रोधित हुये थे तब यह पूषा दांत दिखाकर हंसने लगे थे। वीरभद्र के द्वारा दाँतों के तोड़ दिये जाने पर ये पिसा अन्य खाते हैं।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

त्वष्टुर्दैत्यानुजा भार्या रचना नाम कन्यका ।
संनिवेशस्तयोर्जज्ञे विश्वरूपश्च वीर्यवान् ।।४४।।

पदच्छेद—

त्वष्टुः दैत्य अनुजा भार्या रचना नाम कन्यका ।
संनिवेशः तयोः जज्ञे विश्वरूपः च वीर्यवान् ।।

शब्दार्थ —

त्वष्टुः	५. त्वष्टा की	**संनिवेश**	८. संनिवेश
दैत्य	१. दैत्यों की	**तयोः**	७. उन दोनों ने
अनुजा	२. छोटी वहन	**जज्ञे**	१२. उत्पन्न किया
भार्या	६. पत्नी थी	**विश्वरूपः**	११. विश्व रूप को
रचना नाम	४. रचना	**च**	९. और
कन्यका ।	३. कुमारी	**वीर्यवान् ।।**	११. पराक्रमी

श्लोकार्थ—दैत्यों की छोटी वहन कुमारी रचना त्वष्टा की पत्नी थीं। उन दोनों नें संनिवेश और प्रराक्रमी विश्व रूप को उत्पन्न किया।

पंचचत्वारिंशः श्लोकः

तं वव्रिरे सुरगणाः स्वस्रीयं द्विषतामपि ।
विमतेन परित्यक्ता गुरुणाऽऽङ्गिरसेन यत् ॥४५॥

पदच्छेद

तम् वव्रिरे सुरगणाः स्वस्रीयम् द्विषताम् अपि ।
विमतेन परित्यक्ता गुरुणा आङ्गिरसेन यत् ॥

शब्दार्थ

तम्	१०. उन विश्वरूप को	विमतेन	५. अपमानित होने
वव्रिरे	११. पुरोहित बनाया	परित्यक्ता	८. परित्याग कर दिया (तब)
सुरगणाः	९. देवताओं ने	गुरुणा	६. देव गुरु
स्वस्रीयम्	२. भानजे थे	आङ्गिरसेन	७. बृहस्पति ने देवताओं का
द्विषताम्	१. शत्रुओं के	यत् ॥	४. जब
अपि ।	३. फिर भी		

श्लोकार्थ—विश्वरूप शत्रुओं के भानजे थे । फिर भी जब अपमानित होने से देवगुरु बृहस्पति ने देवताओं का परित्याग कर दिया तब देवताओं ने उन विश्व रूप को पुरोहित बनाया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठस्कन्धे
षष्ठः अध्यायः ॥६॥

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच

कस्य हेतोः परित्यक्ता आचार्येणात्मनः सुराः ।
एतदाचक्ष्व भगवञ्छिष्याणामक्रमं गुरौ ।।१।।

पदच्छेद---

कस्य हेतोः परित्यक्ता आचार्येण आत्मनः सुराः।
एतद् आचक्ष्व भगवन् शिष्याणाम् अक्रमम् गुरौ ।।

शब्दार्थ---

कस्य	६. किस	एतद्	११. उस प्रसङ्ग को हमें
हेतोः	७. कारण से	आचक्ष्व	१२. सुनाइये
परित्यक्ता	८. परित्याग कर दिया था (अथवा)	भगवन्	१. हे भगवन् !
आचार्येण	२. आचार्य बृहस्पति जी ने	शिष्याणाम्	४. शिष्य
आत्मनः	३. अपने	अक्रमम्	१०. अपराध था
सुराः।	५. देवताओं का	गुरौ ।।	९. गुरुदेव का क्या

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आचार्य बृहस्पति जी ने अपने शिष्य देवताओं का किस कारण से परित्याग कर दिया था। अथवा गुरुदेव का क्या अपराध था उस प्रसङ्ग को हमें सुनाइये।

द्वितीयः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

इन्द्रस्त्रिभुवनैश्वर्यं मदोल्लङ्घितसत्पथः ।
मरुद्भिर्वसुभी रुद्रैरादित्यैर्ऋभुभिर्नृप ।।२।।

पदच्छेद—

इन्द्रः त्रिभुवन ऐश्वर्य मद उल्लङ्घित सत्पथः।
मरुद्भिः वसुभिः रुद्रैः आदित्यैः ऋभुभिः नृप ।।

शब्दार्थ—

इन्द्रः	२. इन्द्र	मरुद्भिः	८. मरुद्गणों
त्रिभुवन	३. तीनों लोकों के	वसुभिः	९. वसुओं
ऐश्वर्य	४. एश्वर्य के	रुद्रैः	१०. रुद्रगणों
मद	५. मद से	आदित्यैः	११. आदित्यों और
उल्लङ्घित	७. उल्लङ्घन करने लगे थे (वे)	ऋभुभिः	१२. ऋभुओं से सेवित थे
सत्पथः।	६. सदाचार का	नृप ।।	१. हे राजन् !

श्लोकार्थ---हे राजन् ! इन्द्र तीनों लोकों के ऐश्वर्य के मद से सदाचार का उल्लङ्घन करने लगे थे। वे मरुद्-गणों, रुद्रगणों, आदित्यों और ऋभुओं से सेवित थे।

तृतीयः श्लोकः

विश्वेदेवैश्च साध्यैश्च नासत्याभ्यां परिश्रितः ।
सिद्धचारणगन्धर्वैर्मुनिभिर्ब्रह्म वादिभिः ॥३॥

पदच्छेद—

विश्वेदेवैः च साध्यैः च नासत्याभ्याम् परिश्रितः ।
सिद्ध चारण गन्धर्वैः मुनिभिः ब्रह्मवादिभिः ॥

शब्दार्थ—

विश्वेदेवैः	१. विश्वेदेव	परिश्रितः	१०. सेवा में लगे थे
च	२. और	सिद्धचारण	६. सिद्ध, चारण
साध्यैः	३. साध्यगण	गन्धर्वैः	७. गन्धर्व
च	४. और	मुनिभि.	८. मुनिगण (तथा)
नासत्याभ्याम् ।	५. दोनों अश्विनी कुमार	ब्रह्मवादिभिः ॥	९. ब्रह्मवादी (इन्द्र की)

श्लोकार्थ---विश्वेदेव और साध्यगण और दोनों अश्विनी कुमार, सिद्ध, चारण, गन्धर्व और मुनिगण तथा ब्रह्मवादी इन्द्र की सेवा में लगे थे।

चतुर्थः श्लोकः

विद्याधराप्सरोभिश्च किन्नरैः पतगोरगैः ।
निषेव्यमाणो मघवान् स्तूयमानश्च भारत ॥४॥

पदच्दछे---

विद्याधर अप्सरोभिः च किन्नरैः पतग उरगैः ।
निषेव्यमाणः मघवान् स्तूयमानः च भारत ॥

शब्दार्थ---

विद्याधर	२. विद्याधर	**निषेव्यमाणः**	८. सेवा करते हुये
अप्सरोभिः	३. अप्सरायें	**मघवान्**	७. इन्द्र की
च	५. और	**स्तूयमानः च**	९. स्तुति कर रहे थे
किन्नरैः पतग	४. किन्नर गण, पक्षी	**भारत ॥**	१. हे परीक्षित् !
उरगैः ।	६. नागगण		

श्लोकार्थ---हे परीक्षित् ! विद्याधर, अप्सरायें, किन्नरगण, पक्षी और नागगण इन्द्र की सेवा करते हुये स्तुति कर रहे थे।

पंचमः श्लोकः

उपगीयमानो ललितमास्थानाध्यासनाश्रितः ।
पाण्डुरेणातपत्रेण चन्द्रमण्डलचारुणा ।।५।।

पदच्छेद---

उपगीयमानः ललितम् आस्थान अध्यासन आश्रितः ।
पाण्डुरेण आतपत्रेण चन्द्रमण्डल चारुणा ।।

शब्दार्थ—

उपगीयमानः	८. गान हो रहा था	आश्रितः	९. सुशोभित थे
ललितम्	७. जहाँ सुन्दर	पाण्डुरेण	३. श्वेत
आस्थान	५. सभा मण्डप में	आतपत्रेण	४. छत्र से युक्त
अध्यासन।	६. सिंहासन पर	चन्द्रमण्डल	१. चन्द्रमण्डल के समान
		चारुणा ।।	७. सुन्दर

श्लोकार्थ---चन्द्रमण्डल के समान सुन्दर श्वेत छत्र से युक्त, सभामण्डप में सिंहसन पर, जहाँ सुन्दर गान हो रहा था, सुशोभित थे।

षष्ठः श्लोकः

युक्तश्चान्यैः पारमेष्ठ्यैश्चामरव्यजनादिभिः ।
विराजमानः पौलोम्या सहार्धासनया भृशम् ।।६।।

पदच्छेद—

युक्तः च अन्यैः पारमेष्ठ्यैः चामर व्यजन आदिभिः ।
विराजमानः पोलोम्या सह अर्धासनया भृशम् ।।

शब्दार्थ—

युक्तः	६. युक्त	विराजमानः	१०. विराजमान थे
च अन्यैः	३. और दूसरी	पोलोम्या	७. शची के
पारमेष्ठ्यैः	५. सामग्रियों से	सह	८. साथ
चामर-व्यजन	१. चँवर-पंखा	अर्धासनया	९. आधे सिंहासन पर
आदिभिः।	२. आदि	भृशम् ।।	४. अत्यधिक

श्लोकार्थ—चँवर, पंखा आदि और दूसरी अत्यधिक सामग्रियों से युक्त शची के साथ आधे सिंहासन पर विराजमान थे।

सप्तमः श्लोकः

स यदा परमाचार्यं देवानामात्मनश्च ह ।
नाभ्यनन्दत संप्राप्तं प्रत्युत्थानासनादिभिः ।।७।।

पदच्छेद—

सः यदा परमआचार्यम् देवानाम् आत्मनः च ह ।
न अभिअनन्दत संप्राप्तम् प्रति उत्थान आसन आदिभिः ।।

शब्दार्थ—

सः	६. (वहाँ आये तब)	न	१२. नहीं
यदा	१. जब	अभिअनन्दत	११. अभिनन्दन किया
परमआचार्यम्	५. परम आचार्य बृहस्पति	संप्राप्तम्	७. आये हुये (बृहस्पति का)
देवानाम्	२. देवताओं के	प्रति उत्थान	८. उठने से तथा
आत्मनः	४. इन्द्र के भी	आसन	९. आसन
च ह ।	३. और	आदिभिः ।।	१०. आदि से भी

श्लोकार्थ—जब देवताओं के और इन्द्र के भी परम आचार्य बृहस्पति वहाँ आये तब उस इन्द्र ने आये हुये बृहस्पति का उठने से तथा आसन आदि से भी अभिनन्दन नहीं किया ।

अष्टमः श्लोकः

वाचस्पतिं मुनिवरं सुरासुरनमस्कृतम् ।
नोच्चचालासनादिन्द्रः पश्यन्नपि सभागतम् ।।८।।

पदच्छेद—

वाचस्पतिम् मुनिवरम् सुर असुर नमस्कृतम् ।
नउत्चचाल आसनात् इन्द्रः पश्यन् अपि सभाआगतम् ।।

शब्दार्थ—

वाचस्पतिम्	५. उन बृहस्तपति जी को	आसनात्	१०. आसन से
मुनिवरम्	१. मुनियों में श्रेष्ठ	इन्द्रः	९. इन्द्र अपने
सुर	२. देवताओं और	पश्यन्	७. देखकर
असुर	३. असुरों से	न अपि	८. भी
नमस्कृतम् ।	४. नमस्कार किये जाते हुये	सभा आगतम् ।।	६. सभा में आये हुये
न उत् चचाल	११. नहीं उठे		

श्लोकार्थ—मुनियों में श्रेष्ठ देवताओं और असुरों से नमस्कार किये जाते हुये उन बृहस्पति को सभा में आये हुये देखकर भी इन्द्र अपने आसन से नहीं उठे ।

नवमः श्लोकः

ततो निर्गत्य सहसा कविराङ्गिरसः प्रभुः ।
आययौ स्वगृहं तूष्णीं विद्वान् श्रीमदविक्रियाम् ॥६॥

पदच्छेद—

ततः निर्गत्य सहसा कविः आङ्गिरसः प्रभुः ।
आययौ स्वगृहम् तूष्णीम् विद्वान् श्रीमद विक्रियाम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	८. वहाँ से	आययौ	१२. चले आये
निर्गत्य	९. निकलकर	स्वगृहम्	११. अपने घर को
सहसा	७. अकस्मात्	तूष्णीम्	१०. चुप-चुप
कविः	४. त्रिकालदर्शी	विद्वान्	५. विद्वान्
आङ्गिरसः	६. वृहस्पति	श्रीमद	१. ऐश्वर्य मद के
प्रभुः ।	३. सामर्थ्यवान्	विक्रियाम् ॥	२. विकार को (जानकर)

श्लोकार्थ—इन्द्र के ऐश्वर्यमद के विकार को जानकर सामर्थ्यवान्, त्रिकालदर्शी, विद्वान् वृहस्पतिजी अकस्मात् वहाँ से निकलकर चुपचाप अपने घर को चले आये ।

दशमः श्लोकः

तर्ह्येव प्रतिबुद्ध्येन्द्रो गुरुहेलनमात्मनः ।
गर्हयामास सदसि स्वयमात्मानमात्मना ॥१०॥

पदच्छेद—

तर्हि एव प्रतिबुद्ध्य इन्द्रः गुरुहेलनम् आत्मनः ।
गर्हयामास सदसि स्वयम् आत्मानम् आत्मना ॥

शब्दार्थ—

तर्हि एव	१. तभी	गर्हयामास	११. निन्दा करने लगे
प्रतिबुद्ध्य	६. जानकर	सदसि	७. सभा में
इन्द्रः	२. इन्द्र ने	स्वयम्	८. अपने आप
गुरु	४. गुरुदेव वृहस्पति की	आत्मानम्	९. अपनी
हेलनम्	५. अवहेलना	आत्मना ॥	१०. बुद्धि की
आत्मनः ।	३. अपनें द्वारा किये हुये		

श्लोकार्थ—तभी इन्द्र नें अपनें द्वारा किये हुये गुरुदेव बृहस्पति की अवहेलना जानकर सभा में अपने आप अपनी बुद्धि की निन्दा करने लगे ।

एकादशः श्लोकः

अहो बत ममासाधु कृतं वै दभ्रबुद्धिना ।
यन्मयैश्वर्यमत्तेन गुरुः सदसि कात्कृतः ।।११।।

पदच्छेद—

अहो बत मम असाधु कृतम् वै दभ्र बुद्धिना ।
यत्मया ऐश्वर्यमत्तेन गुरुः सदसि कात्कृतः ।।

शब्दार्थ—

अहो	१. आश्चर्य है और	बुद्धिना ।	६. बुद्धि से
बत	२. खेद है कि	यत्मया	९. जो मैंने
मम	४. मैंने	ऐश्वर्य	१०. धन के
असाधु	७. बुरा कार्य	मत्तेन	११. मद से
कृतम्	८. किया है	गुरुः	१३. गुरुदेव वृहस्पति का
वै	३. निश्चित ही	सदसि	१२. सभा में
दभ्र	५. मूर्ख	कात्कृतः ।।	१४. तिरस्कार किया

श्लोकार्थ—आश्चर्य है और खेद है कि निश्चित ही मैंनें मूर्ख बुद्धि से बुरा कार्य किया है । जो मैंने धन के मद से सभा में गुरुदेव वृहस्पति का तिरस्कार किया ।

द्वादशः श्लोकः

को गृध्येत् पण्डितो लक्ष्मीं त्रिविष्टपपतेरपि ।
ययाहमासुरं भावं नीतोऽद्य विबुधेश्वरः ।।१२।।

पदच्छेद—

कः गृध्येत् पण्डितः लक्ष्मीम् त्रिविष्टपपतेः अपि ।
यया अहम् आसुरम् भावम् नीतः अद्य विबुधईश्वरः ।।

शब्दार्थ—

कः	४. कौन	यया	८. जिसके द्वारा
गृध्येत्	७. ग्रहण करेगा	अहम्	९. मैं
पण्डितः	५. विद्वान्	आसुरम्	१२. असुरों के
लक्ष्मीम्	६. राज्य लक्ष्मी को	भावम्	१३. भाव को
त्रिविष्टप	१. स्वर्ग का	नीतः	१४. प्राप्त हुआ हूँ
पतेः	२. स्वामी	अद्य	११. आज
अपि ।	३. होता हुआ भी	विबुधेश्वरः ।।	१०. देवराज इन्द्र

श्लोकार्थ—स्वर्ग के स्वामी की भी राज्य लक्ष्मी को कौन विद्वान् ग्रहण करेगा । जिसके द्वारा मैं देवराज इन्द्र आज असुरों के भाव को प्राप्त हुआ हूँ ।

त्रयोदशः श्लोकः

ये पारमेष्ठ्यं धिषणमधितिष्ठन् न कश्चन ।
प्रत्युत्तिष्ठेदिति ब्रूयुर्धर्मं ते न परं विदुः ।।१३।।

पदच्छेद---

ये पारमेष्ठ्यम् धिषणम् अधितिष्ठन् न कश्चन ।
प्रतिउत्तिष्ठेत् इति ब्रूयुः धर्मम् ते न परम् विदुः ।।

शब्दार्थ—

ये	१. जो लोग	प्रतिउत्तिष्ठेत्	८. उठता है
पारमेष्ठ्यम्	५. सार्वभौम सम्राट्	इति ब्रूयुः	२. इस प्रकार
धिषणम्	३. सिंहासन पर	धर्मम्	१०. धर्म के
अधितिष्ठन्	४. बैठा हुआ	ते न	९. वे नहीं
न	७. नहीं	परम्	११. स्वरूप को
कश्चन ।	६. किसी के आने पर	विदुः ।।	१२. जानते हैं

श्लोकार्थ---जो लोग इस प्रकार कहते हैं कि सिंहासन पर बैठा हुआ सार्वभौम सम्राट् किसी के आने पर नहीं उठता है, वे धर्म के स्वरूप को नहीं जानते हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

तेषां कुपथदेष्टॄणां पततां तमसि ह्यधः ।
ये श्रद्दध्युर्वचस्ते वै मज्जन्त्यश्मप्लवा इव ।।१४।।

पदच्छेद—

तषाम् कुपथ देष्टॄणाम् पतताम् तमसि हि अधः ।
ये श्रद्दध्युः वचःते वै मज्जन्ति अश्मप्लवाः इव ।।

शब्दार्थ---

तेषाम्	१. उनका	ये	७. जो लोग
कुपथ	३. कुमार्ग पर (ले जाने वाला है)	श्रद्दध्युः	१०. विश्वास करते हैं
देष्टॄणाम्	२. उपदेश	वचः	९. बात पर
पतताम्	६. गिरते हैं	ते	८. उनकी
तमसि	४. वे घोर	वै	११. वे निश्चित ही
हि अधः ।	५. नरक में	मज्जन्ति	१३. डूब जाते हैं
		अश्मप्लवाः इव ।।	१२. पत्थर की नाव के समान

श्लोकार्थ---उनका उपदेश कुमार्ग पर ले जाने वाला है। वे घोर नरक में गिरते हैं। जो लोग उनकी बात पर विश्वस करते हैं, वे निश्चित ही पत्थर की नाव के समान डूब जाते हैं।

पंचदशः श्लोकः

अथाहममराचार्यमगाधधिषणं द्विजम् ।
प्रसादयिष्ये निशठः शीर्ष्णा तच्चरणं स्पृशन् ।।१५।।

पदच्छेद---

अथ अहम् अमर आचार्यम् अगाध धिषणम् द्विजम् ।
प्रसादयिष्ये निशठः शीर्ष्णा तत् चरणम् स्पृशन् ।।

शब्दार्थ---

अथ	१. तथा	प्रसादयिष्ये	१३. प्रसन्न करूँगा
अहम्	२. हमारे और	निशठः	८. दुष्ट मैं (अब)
अमर	३. देवताओं के	शीर्ष्णा	११. सिर से
आचार्यम्	४. गुरु	तत्	९. उनके
अगाध	५. अथाह	चरणम्	१० चरणों को
धिषणम्	६. बुद्धि वाले	स्पृशन् ।।	१२. छूता हुआ (उन्हें)
द्विजम् ।	७. ब्राह्मण बृहस्पति हैं		

श्लोकार्थ—तथा हमारे और देवताओं के गुरु अथाह बुद्धि वाले, ब्राह्मण बृहस्पति हैं। दुष्ट मैं अब उनके चरणों को सिर से छूता हुआ उन्हें प्रसन्न करूँगा।

षोडशः श्लोकः

एवं चिन्तयतस्तस्य मघोनो भगवान् गृहात् ।
बृहस्पतिर्गतोऽदृष्टां गतिमध्यात्ममायया ।।१६।।

पदच्छेद—

एवम् चिन्तयतः तस्य मघोनः भगवान् गृहात् ।
बृहस्पतिः गतः अदृष्टाम् गतिम् अध्यात्म मायया ।।

शब्दार्थ—

एवम्	२. इस प्रकार	बृहस्पतिः	५. बृहस्पति जी
चिन्तयतः	३. सोच रहे थे कि	गतः	८. निकल कर
तस्य	६. अपने	अदृष्टाम्	१२. अन्तर्ध्यान हो गये
मोघनः	१. इन्द्र	गतिम्	११. योगबल से
भगवान्	४. भगवान्	अध्यात्म	९. अध्यात्म
गृहात् ।	७. घर से	मायया ।।	१०. माया के

शब्दार्थ—इन्द्र इस प्रकार सोच रहे थे कि भगवान् बृहस्पति जी अपने घर से निकलकर अध्यात्म माया के योगबल से अन्तर्ध्यान हो गये।

सप्तदशः श्लोकः

गुरोर्नाधिगतः संज्ञां परीक्षन् भगवान् स्वराट् ।
ध्यायन् धिया सुरैर्युक्तः शर्म नालभतात्मनः ।।१७।।

पदच्छेद—

गुरोः न अधिगतः संज्ञाम् परीक्षन् भगवान् स्वराट् ।
ध्यायन् धिया सुरैः युक्तः शर्म न अलभत आत्मनः ।।

शब्दार्थ—

गुरोः	३. गुरुदेव	ध्यायन्	११. चिन्ता करते हुये (इन्द्र)
न	६. नहीं	धिया	१०. बुद्धि से
अधिगतः	७. पता चला	सुरैः युक्तः	८. देवताओं के साथ
संज्ञाम्	५. वृहस्पति का	शर्म	१२. शान्ति को
परीक्षन्	२. ढूंढ़ने पर भी	न	१३. नहीं
भगवान्	४. भगवान्	अलभत	१४. प्राप्त हुये
स्वराट् ।	१. देवराज इन्द्र के द्वारा	आत्मनः ।।	९. अपनी

श्लोकार्थ—देवराज इन्द्र के द्वारा ढूंढ़ने पर भी गुरुदेव भगवान् वृहस्पति का पता नहीं चला । तब देवताओं के साथ अपनी बुद्धि से चिन्ता करते हुये इन्द्र शान्ति को नहीं प्राप्त हुये ।

अष्टादशः श्लोकः

तच्छ्रुत्वैवासुराः सर्व आश्रित्यौशनसं मतम् ।
देवान् प्रत्युद्यमं चक्रुर्दुर्मदा आततायिनः ।।१८।।

पदच्छेद—

तत् श्रुत्वा एव असुराः सर्वे आश्रित्य औशनसम् मतम् ।
देवान् प्रतिउद्यमम् चक्रुः दुर्मदाः आततायिनः ।।

शब्दार्थ—

तत्	५. उस प्रसङ्ग को	औशनसम्	८. शुक्राचार्य के
श्रुत्वा	६. सुनकर	मतम् ।	९. आदेश के
एव	७. ही	देवान्	१२. देवताओं पर
असुराः	४. दैत्यों ने	प्रतिउद्यमम्	११. विजय पानें के लिये
सर्वे	३. सभी	चक्रुः	१३. चढ़ाई कर दी
आश्रित्य	१०. अनुसार	दुर्मदः	१. मदोन्मत्त
		आततायिनः ।।	२. आततायी

श्लोकार्थ—मदोन्मत्त, आततायी सभी दैत्यों ने उस प्रसङ्ग को सुनकर ही शुक्राचार्य के आदेश के अनुसार विजय पाने के लिये देवताओं पर चढ़ाई कर दी ।

एकोनविंशः श्लोकः

तैर्विसृष्टेषुभिस्तीक्ष्णैर्निर्भिन्नाङ्गोरुबाहवः ।
ब्रह्माणं शरणं जग्मुः सहेन्द्रा नतकन्धराः ।।१९।।

पदच्छेद—

तैः विसृष्ट इषुभिः तीक्ष्णैः निर्भिन्न अङ्ग ऊरु बाहवः ।
ब्रह्माणम् शरणम् जग्मुः सह इन्द्राः नत कन्धराः ।।

शब्दार्थ—

तैः	१. उनके द्वारा	ब्रह्माणम्	१२. ब्रह्मा की
विसृष्ट	२. छोड़े हुयें	शरणम्	१४. शरण में
इषुभिः	४. वाणों से देवताओं के	जग्मुः	१५. गये
तीक्ष्णैः	३. तीखे	सह	९. साथ
निर्भिन्न	७. कटने लगीं (तब वे)	इन्द्राः	८. इन्द्र के
अङ्ग ऊरु	५. मस्तक-जङ्घा	नत	११. झुका कर
बाहवः ।	६. भुजायें	कन्धराः ।।	१०. सिर को

श्लोकार्थ—उनके द्वारा छोड़े हुये तीखे बाणों से देवताओं के मस्तक, जङ्घा और भुजाय कटने लगीं । तब वे इन्द्र के साथ सिर को झुकाकर ब्रह्मा की शरण में गये ।

विंशः श्लोकः

तांस्तथाभ्यर्दितान् वीक्ष्य भगवानात्मभूरजः ।
कृपया परया देव उवाच परिसान्त्वयन् ।।२०।।

पदच्छेद---

तान् तथा अर्भ्यादितान् वीक्ष्य भगवान् आत्मभूः अजः ।
कृपया परया देवः उवाच परि सान्त्वयन् ।।

शब्दार्थ---

तान्	४. उन दवताओं को	अजः ।	३. अजन्मा ब्रह्मा जी
तथा	५. इस प्रकार	कृपया	९. कृपा से
अर्भ्यादितान्	६. दुःखित	परया	८. परम
वीक्ष्य	७. देखकर	देवः	१०. वे
भगवान्	१. भगवान्	उवाच	१२. बोले
आत्मभूः	२. स्वयम्भूः	परिसान्त्यन् ।।	११. सान्त्वना देते हुये

श्लोकार्थ—भगवान् स्वयम्भू अजन्मा ब्रह्माजी उन देवताओं को इस प्रकार दुःखित देखकर परम कृपा से वे सान्त्वना देते हुये बोले ।

एकविंशः श्लोकः

अहो बत सुरश्रेष्ठा ह्यभद्रं वः कृतं महत् ।
ब्रह्मिष्ठं ब्राह्मणं दान्तमैश्वर्यान्नाभ्यनन्दत ।।२१।।

पदच्छेद---

अहो बत सुरश्रेष्ठाः हि अभद्रम् वः कृतम् महत् ।
ब्रह्मिष्ठं ब्राह्मणंदान्तम् ऐश्वर्यात् न अभ्यनन्दत ।।

शब्दार्थ—

अहो बत	२. आश्चर्य है और खेद है कि	ब्रह्मिष्ठम्	७. ब्रह्मज्ञानी (और)
सुरश्रेष्ठाः	१. हे श्रेष्ठ देवताओ	ब्राह्मणम्	९. ब्राह्मण का
हि अभद्रम्	५. बुरा कार्य	दान्तम्	८. संयमी
वः	३. आप लोगों नें	ऐश्वर्यात्	१०. धन के मद से
कृतम्	६. किया है (जो)	न	११. नहीं
महत् ।	४. बहुत	अभ्यनन्दत ।।	१२. अभिनन्दन किया

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ देवताओ ! आश्चर्य है और खेद है कि आप लोगों ने बहुत बुरा कार्य किया है । जो ब्रह्मज्ञानी और संयमी ब्राह्मण का धन के मद से अभिनन्दन नहीं किया ।

द्वाविंशः श्लोकः

तस्यायमनयस्यासीत् परेभ्यो वः पराभवः ।
प्रक्षीणेभ्यः स्ववैरिभ्यः समृद्धानां च यत् सुराः ।।२२।।

पदच्छेद--

तस्य अयम् अनयस्य आसीत् परेभ्यः वः पराभवः ।
प्रक्षीणेभ्यः स्ववैरिभ्यः समृद्धानाम् च यत् सुराः ।।

शब्दार्थ—

तस्य	२. तुम लोगों की	प्रक्षीणेभ्यः	९. निर्बल
अयम्	४. यह	स्व	१०. अपने
अनयस्य	३. दुष्टता का	वैरिभ्यः	११. शत्रुओं के
आसीत्	५. फल है	समृद्धानाम्	७. समृद्धिशाली
परेभ्यः	१२. सामने	च	८. और
वः	१३. तुम लोगों को	यत्	६. जो कि
पराभवः ।	१४. पराजय प्राप्त हुआ	सुराः ।।	१. हे देवताओं !

श्लोकार्थ—हे देवताओ ! तुम लोगों की दुष्टता का यह फल है, जो कि समृद्धिशाली और निर्बल अपने शत्रुओं के सामने तुम लोगों को पराजय प्राप्त हुआ ।

त्रयोविंशः श्लोकः

मघवन् द्विषतः पश्य प्रक्षीणान्गुर्वतिक्रमात् ।
तम्प्रत्युपचितान् भूयः काव्यमाराध्य भक्तितः ।
आददीरन् निलयनं ममापि भृगुदेवताः ।।२३।।

पदच्छेद—

मघवन् द्विषतः पश्य प्रक्षीणान् गुरु अतिक्रमात् ।
तम् प्रति उपचितान् भूयः काव्यम् आराध्य भक्तितः ।
आददीरन् निलयनम् मम अपि भृगु देवताः ।।

शब्दार्थ—

मघवन्	१. हे इन्द्र !	भूयः	१२. फिर से (शक्तिशाली हो गये)
द्विषतां पश्य	२. शत्रुओं को देखो	काव्यम्	८. शुक्राचार्य के
प्रक्षीणाम्	५. निर्बल हो गये थे	आराध्य	७. आराध्यदेव
गुरु	३. जो गुरु का	भक्तितः ।	१०. भक्ति पूर्वक
अतिक्रमात् ।	४. तिरस्कार करने से	आददीरन्	१६. छीन लेंगे (ऐसा लगता है)
तम्	६. उस अपने गुरु	निलयनम्	१५. ब्रह्मलोक को
प्रति	९. प्रति	मम अपि	१४. मेरे भी
उपचितान्	११. आराधना करने से	भृगु देवताः ।।	१३. ये दैत्यगण

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! शत्रुओं को देखो जो गुरु का तिरस्कार करने से निर्बल हो गये थे। उस अपने गुरु आराध्यदेव शुक्राचार्य के प्रति भक्तिपूर्वक आराधना करने से फिर से शक्तिशाली हो गये। ये दैत्यगण मेरे भी ब्रह्मलोक को छीन लेंगे ऐसा लगता है।

चतुर्विंशः श्लोकः

त्रिविष्टपं किं गणयन्त्यभेद्यमन्त्रा भृगूणामनुशिक्षितार्थाः ।
न विप्रगोविन्दगवीश्वराणां भवन्त्यभद्राणि नरेश्वराणाम् ।।२४।।

पदच्छेद—

त्रिविष्टपम् किम् गणयन्ति अभेद्य मन्त्राः भृगूणाम् अनुशिक्षित अर्थाः ।
न विप्रगोविन्द गवीईश्वराणाम् भवन्ति भद्राणि नरेश्वराणाम् ।।

शब्दार्थ—

त्रिविष्टपम्	६. स्वर्ग को	न	१५. नहीं
किम्	७. कुछ नहीं	विप्र	१०. ब्राह्मण
गणयन्ति	८. समझते हैं	गोविन्द	११. गोविन्द और
अभेद्य	५. गुप्त होती हैं (वे)	गवी	१२. गायों को
मन्त्राः	४. मन्त्रणा	ईश्वराणाम्	१३. सर्वस्व मानते हैं उनका
भृगुणाम्	१. भृगुवंशियों ने इन्हें	भवन्ति	१६. होता है
अनुशिक्षित	३. शिक्षा दी है (इन दैत्यों की	अभद्राणि	१४. अमङ्गल
अर्थाः ।	२. अर्थशास्त्र की	नरेश्वराणाम् ।।	९. जो श्रेष्ठ मनुष्य

श्लोकार्थ—भृगुवंशियों ने इन्हें अर्थशास्त्र की शिक्षा दी है। इन दैत्यों की मन्त्रणा गुप्त होती है। वे स्वग को कुछ नहीं समझते हैं। जो श्रेष्ठ मनुष्य ब्राह्मण, गोविन्द और गायों को सर्वस्व मानते हैं, उनका अमङ्गल नहीं होता है।

पंचविंशः श्लोकः

तद् विश्वरूपं भजताशु विप्रं तपस्विनं त्वाष्ट्रमथात्मवन्तम् ।
सभाजितोऽर्थान् स विधास्यते वो यदि क्षमिव्यध्वमुतास्यष्कर्म ।।२५।।

पदच्छेद—

तद् विश्वरूपम् भजत आशु विप्रम् तपस्विनम् त्वाष्ट्रम् अथ आत्मवन्तम् ।
सभाजितः अर्थान् सः विधास्यते वः यदि क्षमिष्यध्वम् उत अस्य कर्म ।।

शब्दार्थ—

तद्	६. उस	अर्थान्	१७. मनोरथ को
विश्वरूपम्	७. विश्वरूप की	सः	१६. वे आपके
भजत आशु	९. सेवा करो	विधास्यते	१८. पूर्ण करेंगे
विप्रम्	८. शीघ्र ही	वः	११. आप लोग
तपस्विनम्	२. ब्राह्मण	यदि	१०. यदि
त्वाष्ट्रम्	३. तपस्वी	क्षमिष्यध्वम्	१३. क्षमा कर सकोगे
अथ	५. त्वष्टा के पुत्र	उत	१४. अथवा
आत्मवन्तम्	१. इसके वाद (तुम लोग)	अस्य कर्म ।।	१२. उनके आसुरी कर्म को
सभाजितः ।	१५. सम्मान करोगे तो		

श्लोकार्थ—इसके वाद तुम लोग ब्राह्मण, तपस्वी, संयमी, त्वष्टा के पुत्र उस विश्वरूप की शीघ्र ही सेवा करो। यदि आप लोग उनके आसुरी कर्म को क्षमा कर सकोगे अथवा सम्मान करोगे तो वे आपके मनोरथ को पूर्ण करेंगे।

षड्विंशः श्लोकः

त एव मुदिता राजन् ब्रह्मणा विगतज्वराः ।
ऋषिं त्वाष्ट्रमुपव्रज्य परिष्वज्येदमब्रुवन् ।।२६।।

पदच्छेद—

ते एवम् उदिता राजन् ब्रह्मणा विगत ज्वराः ।
ऋषिम् त्वाष्ट्रम् उपव्रज्य परिष्वज्य इदम्अब्रुवन् ।।

शब्दार्थ—

ते	३. उन देवताओं से	ऋषिम्	९ ऋषि के
एवम्	४. इस प्रकार	त्वाष्ट्रम्	८. त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप
उदिता	५. कहा (तब उनकी)	उपव्रज्य	१०. पास जाकर
राजन्	१. हे राजन् परीक्षत् !	परिष्वज्य	११. हृदय से लगाकर
ब्रह्मणो	२. ब्रह्मा जो ने	इदम्	१२. यह
विगत	७. दूर हो गई उन्होने	अब्रुवन् ।।	१३. कहा
ज्वराः ।	६. चिन्ता		

श्लोकार्थ—हे राजन् परीक्षित् ! ब्रह्मा जी ने उन देवताओं से इस प्रकार कहा तब उनकी चिन्ता दूर हो गई। उन्होंने त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप ऋषि के पास जाकर हृदय से लगा कर यह कहा।

सप्तविंशः श्लोकः

वयं तेऽतिथयः प्राप्ता आश्रमं भद्रमस्तु ते ।
कामः सम्पाद्यतां तात पितॄणां समयोचितः ।।२७।।

पदच्छेद—

वयम् ते अतिथयः प्राप्ताः आश्रमम् भद्रम् अस्तु ते ।
कामः सम्पाद्यताम् तात पितॄणाम् समयोचितः ।।

वयम्	४. हम लोग	ते ।	२. तुम्हारा
ते	५. तुम्हारे	कामः	११. कार्य को
अतिथयः	७. अतिथि रूप में	सम्पाद्यताम्	१२. पूर्ण करो
प्राप्ताः	८. आये हैं (तथा)	तात	१. हे तात ! विश्वरूप
आश्रमम्	६. आश्रम पर	पितॄणाम्	९. तुम्रारे पितर हैं हमारे
भद्रम् अस्तु	३. कल्याण हो	समयोचितः ।।	१०. समयानुसार उचित

श्लोकार्थ—हे तात ! विश्वरूप तुम्हारा कल्याण हो । हम लोग तुम्हारे आश्रम पर अतिथि रूप में आये हैं। तथा तुम्हारे पितर हैं । हमारे समयानुसार उचित कार्य को पूर्ण करो ।

अष्टाविंशः श्लोकः

शब्दार्थ—

पुत्राणां हि परो धर्मः पितृशुश्रूषणं सताम् ।
अपि पुत्रवतां ब्रह्मन् किमुत ब्रह्मचारिणाम् ।।२८।।

पदच्छेद---

पुत्राणाम् हि परः धर्मः पितृ शुश्रूषणम् सताम् ।
अपि पुत्रवताम् ब्रह्मन् किमुत ब्रह्मचारिणाम् ।।

शब्दार्थ---

पुत्राणाम्	४. पुत्रों का	अपि	२. जिन्हें
हि परः	५. सबसे बड़ा	पुत्रवताम्	३. सन्तान हो गई है (ऐसे)
धर्मः	६. धर्म है कि	ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !
पितृ	७. माता-पिता और	किम्-उत	१२. क्या कहना
शूश्रूषणम्	९. सेवा करे	ब्रह्म	१०. जो ब्रह्म
सताम्	८. गुरुजनों की	चारिणाम् ।।	११. चारी हैं (उनके लिये)

श्लोकर्थ—हे ब्रह्मन् ! जिन्हें सन्तान हो गई हैं, ऐसे पुत्रों का सबसे बड़ा धर्म है कि माता, पिता और गुरुजनों की सेवा करें । जो ब्रह्मचारी हैं उनके लिए क्या कहना ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः पितामूर्तिः प्रजापतेः ।
भ्राता मरुत्पतेर्मूर्तिर्माता साक्षात् क्षितेस्तनुः ॥२९॥

पदच्छेद—

आचार्यः ब्रह्मणः मूर्तिः पिता मूर्तिः प्रजापतेः ।
भ्राता मरुत्पतेः मूर्तिः माता साक्षात् क्षितेः तनुः ॥

शब्दार्थ—

आचार्याः	१. आचार्य	भ्राता	७. भाई
ब्रह्मणः	२. पर ब्रह्म की	मरुत्पतेः	८. इन्द्र की
मर्तिः	३. मूर्ति है	मूर्तिः	९. मूर्ति है (और)
पिता	४. पिता	माता	१०. माता
मूर्तिः	६. मूर्ति है	साक्षात्	११. साक्षात्
प्रजापतेः ।	५. प्रजापति ब्रह्मा की	क्षितेः तनुः ॥	१२. पृथ्वी की मूर्ति है ।

श्लोकार्थ—आचार्य पर ब्रह्म की मूर्ति है। पिता प्रजा पति ब्रह्मा को मूर्ति है। भाई इन्द्र की मूर्ति है। और माता साक्षात् पृथ्वी की मूर्ति है।

त्रिंशः श्लोकः

दयाया भगिनी मूर्तिर्धर्मस्यात्मातिथिः स्वयम् ।
अग्नेरभ्यागतो मूर्तिः सर्वभूतानि चात्मनः ॥३०॥

पदच्छेद—

दयाया भगिनी मूर्तिः धर्मस्य आत्मा अतिथिः स्वयम् ।
अग्नेः अभ्यागतः मूर्तिः सर्व भूतानि च आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

दयायाः	२. दया को	अग्नेः	९. अग्नि की
भगिनी	१. वहन	अभ्यागतः	८. अभ्यागत
मूर्तिः	३. मूर्ति है	मूर्तिः	१०. मूर्ति है
धर्मस्य	६. धर्म की	सर्व	१२. सभी
आत्मा	७. मूर्ति है	भूतानि	१३. प्राणी
अतिथिः	४. अतिथि	च	११. और
स्वयम् ।	५. स्वयम्	आत्मनः ॥	१४. आत्मा की मूर्ति है

श्लोकार्थ—वहन दया की मूर्ति है। अतिथि स्वयम् धर्म की मूर्ति हैं। अभ्यागत अग्नि को मूर्ति है। और सभी प्राणी आत्मा की मूर्ति हैं।

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्मात् पितृणामार्तानामार्तिं परपराभवम् ।
तपसापनयंस्तात सन्देशं कर्तुमर्हसि ।।३१।।

पदच्छेद

तस्मात् पितृणाम् आर्तानाम् आर्तिं पर पराभवम् ।
तपसा अपनयन् तात सन्देशम् कर्तुम् अर्हसि ।।

शब्दार्थ

तस्मात्	७. इसलिये	तपसा	८. अपनी तपस्या से उसे
पितृणाम्	३. पितर	अपनयन्	९. दूर करो (हमारी)
आर्तानाम्	२. दुःखी	तात	१. हे तात विश्वरूप ! हम तुम्हारे
आर्तिम्	६. कष्ट को प्राप्त हैं	सन्देशम्	१०. आज्ञा का
पर	४. शत्रुओं से	कर्तुम्	११. पालन करना
पराभवम् ।	५. पराजित एवम	अर्हसि ।।	१२. चाहिये

श्लोकार्थ—हे तात ! विश्वरूप ! हम तुम्हारे दुःखी पितर शत्रुओं से पराजित एवम् कष्ट को प्राप्त हैं। इसलिय अपनी तपस्या से उसे दूर करो हमारी आज्ञा का पालन करना चाहिये।

द्वात्रिंशः श्लोकः

वृणीमहे त्वोपाध्यायं ब्रह्मिष्ठं ब्राह्मणं गुरुम् ।
यथाञ्जसा विजेष्यामः सपत्नांस्तव तेजसा ।।३२।।

पदच्छेद

वृणीमहे त्वा उपाध्यायम् ब्रह्मिष्ठम् ब्राह्मणम् गुरुम् ।
यथा अञ्जसा विजेष्यामः सपत्नान् तव तेजसा ।।

शब्दार्थ

वृणीमहे	३. वरण करता हूं (आप)	यथा	७. जिससे (हमलोग)
त्वा	१. आपको	अञ्जसा	१०. आसानी से
उपाध्यायम्	२. आचार्य के रूप में	विजेष्यामः	१२. विजय प्राप्त कर लेंगे
ब्रह्मिष्ठम्	४. ब्रह्मनिष्ठ	सपत्नान्	११. शत्रुओं पर
ब्राह्मणम्	५. ब्राह्मण (और)	तव	८. आपकी
गुरुम् ।	६. गुरु हो	तेजसा ।।	९. शक्ति से

श्लोकार्थ—आपको आचार्य के रूप में वरण करता हूं। आप ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण और गुरु हो। जिससे (हमलोग) आपकी शक्ति से आसानी से शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेंगे।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न गर्हयन्ति ह्यर्थेषु यविष्ठाङ्घ्र्यभिवादनम् ।
छन्दोभ्योऽन्यत्र न ब्रह्मन् वयो ज्यैष्ठ्यस्य कारणम् ॥३३॥

पदच्छेद—

न गर्हयन्ति हि अर्थेषु यविष्ठ अङ्घ्रि अभिवादनम् ।
छन्दोभ्यः अन्यत्र न ब्रह्मन् वयः ज्यैष्ठ्यस्य कारणम् ॥

शब्दार्थ—

न	७. नहीं है	छन्दोभ्यः	८. वेद ज्ञान के
गर्हयन्ति	६. निन्दनीय	अन्यत्र	९. अतिरिक्त
हि अर्थेषु	२. आवश्यकता पड़ने पर	न	१२. नहीं होती हैं
यविष्ठ	३. छोटों का	ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !
अङ्घ्रि	४. पैर	वयः ज्यैष्ठ्यस्य	१०. अवस्था बड़प्पन का
अभिवादनम् ।	५. छूना भी	कारणम् ॥	११. कारण

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! आवश्यकता पड़ने पर छोटों का पैर छूना भी निन्दनीय नहीं हैं। वेद ज्ञान के अतिरिक्त अवस्था बड़प्पन का कारण नहीं है।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अभ्यर्थितः सुरगणैः पौरोहित्ये महातपाः ।
स विश्वरूपस्तानाह प्रसन्नः श्लक्ष्णया गिरा ॥३४॥

पदच्छेद—

अभ्यर्थितः सुरगणैः पौरोहित्ये महातपाः ।
सः विश्वरूपः तान् आह प्रसन्नः श्लक्ष्णया गिरा ॥

शब्दार्थ—

अभ्यर्थितः	५. प्रार्थना की	विश्वरूपः	७. विश्वरूप
सुरगणैः	१. देवताओं ने	तान्	८. उन देवताओं से
पौरोहित्ये	४. पुरोहिती करने के लिये	आह	१२. बोले
महा	२. महान्	प्रसन्नः	११. प्रसन्न होकर
तपाः ।	३. तपस्वी विश्व रूप से	श्लक्ष्णया	९. मधुर
सः	६. वे	गिरा ॥	१०. वाणी में

श्लोकार्थ—देवताओं ने महान् तपस्वी विश्व रूप से पुरोहिती करने के लिये प्रार्थना की। वे विश्वरूप उन देवताओं से मधुर वाणी में बोले।

पंचत्रिंशः श्लोकः

विश्वरूप उवाच--

विगर्हितं धर्मशीलैर्ब्रह्मवर्चउपव्ययम् ।
कथं नु मद्विधो नाथा लोकेशैरभियाचितम् ।।
प्रत्याख्यास्यति तच्छिष्यः स एव स्वार्थ उच्यते ।।३५।।

पदच्छेद—

विगर्हितम् धर्मशीलैः ब्रह्मवर्च उपव्ययम् ।
कथम् नु मद्विधः नाथाः लोकेशैः अभियाचितम् ।
प्रत्याख्यास्यति तत् शिष्यः सः एव स्वार्थ उच्यते ।।

शब्दार्थ—

विगर्हितम्	४. निन्दा की है (आप)	लोकेशैः	७. संसार के स्वामी होकर
धर्मशीलैः	३. धर्मशील महात्माओं ने इसकी	अभियाचितम्	८. याचना कर रहे हैं
ब्रह्मवर्च	१. ब्रह्म तेज को	प्रत्याख्यास्यति	११. प्रति उत्तर दे सकता है
उपव्ययम् ।	२. नष्ट करने वाला है	तत्	१२. हम आपके
कथम्	१०. कैसे	शिष्यः	१३. शिष्य
नु	५. हमारे	सः एव	१४. यही
मद्विधः	९. मुझ जैसा व्यक्ति	स्वार्थः	१५. हमारा स्वाथ
नाथाः	६. स्वामी (और)	उच्यते ।।	१६. है

श्लोकार्थ—विश्वरूप ने कहा पुरोहिती का काम ब्रह्म तेज को नष्ट करने वाला है। धर्मशील महात्माओं ने इसकी निन्दा की है। आप हमारे स्वामी हैं और संसार के स्वामी होकर याचना कर रहे हैं। मुझ जैसा व्यक्ति कैसे प्रति उत्तर दे सकता है। हम आपके शिष्य हैं। यही हमारा स्वार्थ है।

षट्त्रिंशः श्लोकः

अकिञ्चनानां हि धनं शिलोञ्छनं तेनेह निर्वर्तितसाधुसत्क्रियः ।
कथं विगर्ह्यं नु करोम्यधीश्वराः, पौरोधसं हृष्यति येन दुर्मतिः ।।३६।।

पदच्छेद—

अकिञ्चनानाम् हि धनम् शिलोञ्छनम् तेनइह निर्वर्तित साधु सत्क्रियः ।
कथम् विगर्ह्यम् नु करोमि अधीश्वराः पौरोधसम् हृष्यति येन दुर्मतिः ।।

शब्दार्थ—

अकिञ्चनानाम्	२. हम अकिञ्चनों का	कथम	९. कैसे
हि धनम्	३. धन	विगर्ह्यम्	११. निन्दनीय वृत्ति
शिलोञ्छनम्	४. खेती करने पर गिरा अन्न ही है	नु	१०. मैं
तन-इह	५. उसी के द्वारा यहाँ	करोमि	१२. करूं
निर्वर्तित	८. सम्पन्न करता हूं	अधीश्वराः	१. हे देवताओ !
साधु	६. सज्जनों की	पौरोधसम्	१४. पुरोहिती से
सत्क्रियाः ।	७. सत्क्रियाओं को	हृष्यति	१५. प्रसन्न होते हैं
		येन दुर्मतिः ।।	१३. जिनकी बुद्धि विगड़ गई है वे

श्लोकार्थ—हे देवताओ ! हम अकिञ्चनों का धन खेती कटने पर गिरा अन्न ही है। उसी के द्वारा यहाँ सज्जनों की सत्क्रियाओं को सम्पन्न करता हुं। क्यों मैं निन्दनीय वृत्ति करूं ? जिनकी बुद्धि विगड़ गई है वे ही पुरोहिती से प्रसन्न होते हैं।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तथापि न प्रतिब्रूयां गुरुभिः प्रार्थितं कियत् ।
भवतां प्रार्थितं सर्वं प्राणैरर्थैश्च साधये ॥३७॥

पदच्छेद—

तथापि न प्रतिब्रूयाम् गुरुभिः प्रार्थितम् कियत् ।
भवताम् प्रार्थितम् सर्वम् प्राणैः अर्थैः च साधये ॥

शब्दार्थ—

तथापि	१. फिर भी	भवताम्	७. आप लोगों की
न	२. नहीं	प्रार्थितम्	९. प्रार्थना को
प्रतिब्रूयाम्	३. प्रति उत्तर दूंगा	सर्वम्	८. सम्पूर्ण
गुरुभिः	४. आप लोगों की	प्राणैः	१०. प्राणों
प्रार्थितम्	५. प्रार्थना ही	अर्थैः	१२. धन से
कियत् ।	६. कितनी है	च	११. और
		साधये ॥	१३. पूरा करूँगा

श्लोकार्थ—फिर भी प्रति उत्तर नहीं दूंगा। आप लोगों की प्रार्थना ही कितनी है। आप लोगों की सम्पूण प्रार्थना को प्राणों और धन से पूरा करूँगा।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

तेभ्य एवं प्रतिश्रुत्य विश्वरूपो महातपाः ।
पौरोहित्यम् वृतः चक्रे परमेण समाधिना ॥३८॥

पदच्छेद—

तभ्यः एवम् प्रतिश्रुत्य विश्वरूपः महातपाः ।
पौरोहित्यम् वृतः चक्रे परमेण समाधिना ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	३. उन देवताओं से	पौरोहित्यम्	८. पुरोहिती
एवम्	४. इस प्रकार	वृतः	९. वृत्ति को
प्रतिश्रुत्य	५. प्रतिज्ञा करके	चक्रे	१०. करने लगे
विश्वरूपः	२. विश्वरूप	परमेण	६. अत्यधिक
महातपाः ।	१. महातपस्वी	समा धना ॥	७. लगन के साथ

श्लोकार्थ—महातपस्वी विश्वरूप उन दवताओं से इस प्रकार प्रतिज्ञा करके अत्यधिक लगन के साथ पुरोहिती वृत्ति को करने लगे।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सुरद्विषां श्रियं गुप्तामौशनस्यापि विद्यया ।
आच्छिद्यादान्महेन्द्राय वैष्णव्या विद्यया विभुः ।।३९।।

पदच्छेद—

सुरद्विषाम् श्रियम् गुप्ताम् औशनस्यापि विद्यया ।
आच्छिद्य अदात् महेन्द्राय वैष्णव्या विद्यया विभुः ।।

शब्दार्थ—

सुरद्विषाम्	४. असुरों की	आच्छिद्य	१०. छीनकर
श्रियम्	५. लक्ष्मी को	अदात्	१२. दिला दी
गुप्ताम्	६. सुरक्षित कर दिया था (फिर भी)	महेन्द्राय	११. देवराज इन्द्र को
औशनस्य	२. शुक्राचार्य ने	वैष्णव्या	८. वैष्णवी
अपि	१. यद्यपि	विद्यया ।	९. विद्या के प्रभाव से उसे
विद्यया	३. अपनी विद्या से	विभुः ।।	७. समर्थ विश्वरूप ने

श्लोकार्थ—यद्यपि शुक्राचार्य ने अपनी विद्या असुरों की लक्ष्मी को सुरक्षित कर दिया था। फिर भी समर्थ विश्वरूप ने वैष्णवी विद्या के प्रभाव से उसे छीनकर देवराज इन्द्र को दिला दी

चत्वारिंशः श्लोकः

यया गुप्तः सहस्राक्षो जिग्येऽसुरचमूर्विभुः ।
तां प्राह स महेन्द्राय विश्वरूप उदारधीः ।।४०।।

पदच्छेद---

यया गुप्तः सहस्राक्षः जिग्ये असुर चमूः विभुः ।
ताम् प्राह सः महेन्द्राय विश्वरूप उदारधीः ।।

शब्दार्थ—

यया	१. हे राजन् ! विद्या से	ताम्	७. उस विद्या को
गुप्तः	२. सुरक्षित होकर	प्राह	१२. कहा था
सहस्राक्षः	४. देवराज इन्द्र ने	सः	८. उन
जिग्ये	६. जीत लिया था	महेन्द्राय	११. इन्द्र के लिये
असुर चमूः	५. असुरों की सेना को	विश्वरूपः	१०. विश्वरूप ने
विभुः ।	३. प्रभु	उदारधीः ।।	९. उदार बुद्धि वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् परीक्षित् ! जिस विद्या से सुरक्षित होकर देवराज इन्द्र ने असुरों की सेना को जीत लिया था। उस विद्या को उन उदार बुद्धि वाले विश्वरूप ने इन्द्र के लिये कहा था।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठे स्कन्धे
सप्तमः अध्यायः ।।७।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच

यया गुप्तः सहस्राक्षः सवाहान् रिपुसैनिकान् ।
क्रीडन्निव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजे श्रियम् ।।१।।

पदच्छेद—

यया गुप्तः सहस्राक्षः स वाहान् रिपु सैनिकान् ।
क्रीडन् इव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजे श्रियम् ।।

शब्दार्थ—

यया	१. जिस विद्या से	क्रीडन्	९. खेल-खल में
गुप्तः	२. सुरक्षित होकर	इव	८. ही
सहस्राक्षः	३. देवराज इन्द्र ने	विनिर्जित्य	९. जीतकर
सवाहान्	५. चतुरंगिणी	त्रिलोक्या	१०. त्रैलोक्य की
रिपु	४. शत्रुओं का	बभुजे	१२. उपभाग किया
सनिकान् ।	६. सेना को	श्रियम् ।।	११. लक्ष्मी का

श्लोकार्थ—जिस विद्या से सुरक्षित होकर देवराज इन्द्र ने शत्रुओं की चतुरंगिणी सेना को खेल-खेल में ही जीतकर त्रैलोक्य की लक्ष्मी का उपभोग किया।

द्वितीयः श्लोकः

भगवंस्तन्ममाख्याहि वर्म नारायणात्मकम् ।
यथाऽऽततायिनः शत्रून् येन गुप्तोऽजयन्मृधे ।।२।।

पदच्छेद—

भगवन् तत् मम आख्याहि वर्म नारायण आत्मकम् ।
यथा आततायिनः शत्रून् येन गुप्तः अजयन् मृधे ।।

शब्दार्थ—

भगवन्	१. हे भगवान् !	यथा	१०. जिस प्रकार
तत्	२. उस	आततायिनः	१२. आततायी
मम	६. मुझसे	शत्रून्	१३. शत्रुओं पर
आख्याहि	७. कहो	येन	८. जिस विद्या के द्वारा
वर्म	५. कवच को	गुप्तः	९. सुरक्षित होकर
नारायण	३. नारायण	अजयत्	१४. विजय प्राप्त किया
आत्मकम् ।	४. सम्बन्धी	मृधे ।।	११. रणभूमि में

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! उस नारायण सम्बन्धी कवच को मुझसे कहो। जिस विद्या के द्वारा सुरक्षित होकर जिस प्रकार रणभूमि में आततायी शत्रुओं पर विजय प्राप्त किया।

तृतीय: श्लोक:

श्रीशुक उवाच

वृतः पुरोहितस्त्वाष्ट्रो महेन्द्रायानुपृच्छते ।
नारायणाख्यं वर्माह तदिहैकमनाः शृणु ॥३०॥

पदच्छेद—

वृतः पुरोहितः त्वाष्ट्रः महेन्द्राय अनुपृच्छते।
नारायण आख्यम् वर्म आह तद् इह एकमनाः शृणु ॥

शब्दार्थ—

वृतः	३. बनाये जाने पर	आख्यम्	७. नामक
पुरोहितः	२. पुरोहित	वर्म	८. कवच
त्वाष्ट्रः	१. त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप को	आह	९. बताया
महेन्द्राय	४. देवराज इन्द्र के द्वारा	तद् इह	१०. उसको यहाँ पर
अनुपृच्छते।	५. प्रश्न करने पर (उन्होंने)	एकमनाः	११. एकाग्र चित्त से
नारायण	६. नारायण	शृणु ॥	१२. सुनो

श्लोकार्थ---त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप को पुरोहित बनाये जाने पर देवराज इन्द्र के द्वारा प्रश्न करने पर उन्होंने नारायण नामक कवच बताया। उसको यहाँ पर एकाग्रचित्त से सुनो ।

चतुर्थः श्लोकः

श्रीविश्वरूप उवाच

धौताङ्घ्रिपाणिराचम्य सपवित्र उदङ्मुखः ।
कृतस्वाङ्गकरन्यासो मन्त्राभ्यां वाग्यतः शुचिः ॥४॥

पदच्छेद—

धौतअङ्घ्रिपाणिः आचम्य सपवित्रः उदङ् मुखः ।
कृत स्व अङ्ग करन्यासः मन्त्राभ्याम् वाग्यतः शुचिः ॥

शब्दार्थ—

धौत	१. धोकर	कृत	१३. करे
अङ्घ्रिपाणिः	२. हाथ को पैर को	स्व अङ्ग	११. अङ्ग न्यास (और)
आचम्य	४. आचमन करके	करन्यासः	१२. करन्यास
सपवित्र	५. पवित्री धारण करके	मन्त्राभ्याम्	१०. मन्त्रों के द्वारा
उदङ्	६. उत्तर की ओर	वाग्यतः	९. मौन, भाव से
मुखः।	७. मुख करके बैठे	शुचिः ॥	८. पवित्र होकर

श्लोकार्थ---परको और हाथ को धोकर आचमन करके पवित्री धारण करके उत्तर की ओर मुख करके बैठे। पवित्र होकर मौन भाव से मन्त्रों के द्वारा अङ्गन्यास और करन्यास करे।

पंचमः श्लोक

नारायणमयं वर्म सन्नह्येद्भय आगते।
पादयोर्जानुनोरूर्वोरुदरे हृद्यथोरसि ।।५।।

पदच्छेद—

नारायणमयम् वर्म सन्नह्येत् भये आगते।
पादयोः जानुनोः ऊर्वोः उदरे हृदि अथ उरसि ।।

शब्दार्थ—

नारायण मयम्	३. नारायणमय	पादयोः	६. पैरों
वर्म	४. कवच को	जानुनोः	७. घुटनों
सन्नह्येत्	५. धारण करे	ऊर्वोः	८. जाँघों
भये	१. भय	उदरे	९. पेट
आगते।	२. आने पर	हृदि अथ	१०. हृदय और
		उरसि ।।	११. वक्षः स्थल में न्यास करे

श्लोकार्थ---भय आने पर नारायणमय कवच को धारण करे। पैरों, घुटनों, जाँघों, पेट, हृदय और वक्षः स्थल में न्यास करे।

षष्ठः श्लोकः

मुखे शिरस्यानुपूर्व्यादोङ्कारादीनि विन्यसेत्।
ॐ नमोनारायणायेति विपर्ययमथापि वा ।।६।।

पदच्छेद—

मुखे शिरसि आनुपूर्व्यात् ओंकार आदीनि विन्यसेत्।
ॐ नमः नारायणाय इति विपर्ययम् अथ अपि वा ।।

शब्दार्थ—

मुखे	१. मुख और	ॐ नमः	८. ॐ नमः
शिरसि	२. सिर में	नारायणाय	९. नारायणाय
आनुपूर्व्यात्	३. क्रमशः	इति	१०. इस मन्त्र को
ओंकार	४. ॐ कार	विपर्ययम्	११. विपरीत क्रम से
आदीनि	५. आदि का	अथ, अपि	१२. फिर से न्यास करे
विन्यसेत्।	६. न्यास करना चाहिये	वा ।।	७. और

श्लोकार्थ---मुख और सिर में क्रमशः ॐ कार आदि का न्यास करना चाहिये। और ॐ नमः नारायणाय इस मन्त्र को विपरीत क्रम से फिर से न्यास करे।

सप्तमः श्लोकः

करन्यासं ततः कुर्याद् द्वादशाक्षरविद्यया ।
प्रणवादियकारान्तमङ्गुल्यङ्गुष्ठपर्वसु ॥७॥

पदच्छेद—

करन्यासम् ततः कुर्याद् द्वादश अक्षर विद्यया।
प्रणव आदि यकारान्तम् अङ्गुली अङ्गुष्ठ पर्वसु ॥

शब्दार्थ—

करन्यासम्	५. करन्यास	प्रणव	७. प्रणव
ततः	१. इस के बाद	आदि	८. आदि से लेकर
कुर्यात्	६. करना चाहिये	यकारान्तम्	९. यकार तक
द्वादश	२. द्वादश	अङ्गुली	१०. अंगुली से लेकर
अक्षर	३. अक्षर के	अङ्गुष्ठ	११. अंगूठे की
विद्यया ।	४. मन्त्र का	पर्वसु ॥	१२. गाठों तक में न्यास करे

श्लोकार्थ—इसके बाद द्वादश अक्षर के मन्त्र का करन्यास करना चाहिये। प्रणव आदि से लेकर यकार तक अंगुली से लेकर अंगूठे की गाठों तक में न्यास करे।

अष्टमः श्लोकः

न्यसेद्धृदय ओङ्कारं विकारमनु मूर्धनि ।
षकारं तु भ्रुवोर्मध्ये णकारं शिखया दिशेत् ॥८॥

पदच्छेद---

न्यसेत् हृदय ओङ्कारम् विकारम् अनु मूर्धनि।
षकारम् तु भ्रुवः मध्ये णकारम् शिखया दिशेत् ॥

शब्दार्थ---

न्यसेत्	३. न्यास करे	तु	९. और
हृदय	२. हृदय में	भ्रुवोः	७. भौंहों के
ओङ्कारम्	१. ॐ का	मध्ये	८. बीच में
विकारम्	४. वि का	णकारम	१०. ण का
अनुमूर्धनि ।	५. ब्रह्मरन्ध्र में	शिखया	११. चोटी में
षकारम्	६. ष का	दिशेत् ॥	१२. न्यास करना चाहिये

श्लोकार्थ—ॐ का हृदय में न्यास करे। वि का ब्रह्मरन्ध्र में, व का भौंहों के बीच में और ण का चोटी में न्यास करना चाहिये।

नवमः श्लोकः

वेकारं नेत्रयोर्युञ्ज्यान्नकारं सर्वसन्धिषु ।
मकारमस्त्रमुद्दिश्य मन्त्रमूर्तिर्भवेद् बुधः ।।६।।

पदच्छेद

वेकारम् नेत्रयोः युञ्ज्यात् न कारम् सर्व सन्धिषु ।
मकारम् अस्त्रम् उद्दिश्य मन्त्रमूर्तिः भवेत् बुधः ।।

शब्दार्थ

वेकारम्	१. वे का	मकारम्	७. मकार के साथ
नेत्रयोः	२. नेत्रों में	अस्त्रम्	८. अस्त्र को
युञ्ज्यात्	६. न्यास करना चाहिये	उद्दिश्य	९. कहे मः अस्त्राय फट्
नकारम्	३. न का	मन्त्रमूर्तिः	११. मन्त्र स्वरूप
सर्व	४. सभी	भवेद्	१२. हो जाता है
सन्धिषु ।	५. गाँठों में	बुधः ।।	१०. उसे जानने वाला मनुष्य

श्लोकार्थ—वे का नेत्रों में, न का सभी गाँठों में न्यास करना चाहिये। मकार के साथ अस्त्र को कहे—मः अस्त्राय फट्। इसे जानने वाला मनुष्य मन्त्र स्वरूप हो जाता है।

दशमः श्लोकः

सविसर्गं फडन्तं तत् सर्वदिक्षु विनिर्दिशेत् ।
ॐ विष्णवे नम इति ।।१०।।

पदच्छेद

सविसर्गम् फडन्तम् तत् सर्व दिक्षु विनिर्दिशेत् ।
ॐ विष्णवे नमः इति ।।

शब्दार्थ

सविसर्गम्	१. विसर्ग के साथ (मकार के)	विनिर्दिशेत् ।	१०. न्यास करे
फडन्तम्	२. फट् के अन्त तक	ॐ	६. ॐ
तत्	३. उस अस्त्राय का	विष्णवे	७. विष्णवे
सर्व	४. सभी	नमः	८. नमः
दिक्षु	५. दिशाओं में	इति ।।	९. इस मन्त्र का

श्लोकार्थ—विसर्ग के साथ मकार का, फट् के अन्त तक उस अस्त्राय का, सभी दिशाओं में ओं विष्णवे नमः इस मन्त्र का न्यास करें।

एकादश श्लोकः

आत्मानं परमं ध्यायेद्ध्येयं षट्शक्तिभिर्युतम् ।
विद्यातेजस्तपोमूर्तिमिमं मन्त्रमुदाहरेत् ॥११॥

पदच्छेद—

आत्मानम् परमम् ध्यायेद् ध्ययम् षट् शक्तिभिः युतम् ।
विद्या तेजः तपः मूर्तिम् इमम् मन्त्रम् उदाहरेत् ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	४. अपने को भी	विद्या	७. विद्या
परमम्	५. तद् रूप	तेजः	८. तेज
ध्यायेद्	६. चिन्तन करे	तपः मूर्तिम्	९. तपः स्वरूप
ध्येयम्	३. ध्यान करे	इमम्	१०. इस
षट् शक्तिभिः	१. छः ऐश्वर्य से	मन्त्रम्	११. कवच का
युतम् ।	२. युक्त (भगवान् का)	उदाहरेत् ॥	१२. पाठ करे

श्लोकार्थ—छः एश्वर्य से युक्त भगवान् का ध्यान करे अपने को भी तद् रूप चिन्तन करे। विद्या, तेज, तपः स्वरूप इस कवच का पाठ करे।

द्वादशः श्लोकः

ॐ हरिर्विदध्यान्मम सर्वरक्षां न्यस्ताङ्घ्रिपद्मः पतगेन्द्रपृष्ठे ।
दरारिचर्मासिगदेषुचापपाशान् दधानोऽष्टगुणोऽष्टबाहुः ॥१२॥

पदच्छेद—

ओं हरि. विदध्यात् मम सर्व रक्षाम् न्यस्त अङ्घ्रिपद्मः पतगेन्द्र पृष्ठे ।
दरअरि चर्म असि गदा इषु चाप पाशान् दधानः अष्ट गुणः अष्ट बाहुः ॥

शब्दार्थ—

ओं	१७. ओं कार स्वरूप	दरअरि	८. शंख, चक्र
हरिः	१८. भगवान् श्री हरि	चर्म	९. ढाल
विदध्यात्	२२. करें	असि	१०. तलवार
मम	२०. मेरी	गदा	११. गदा
सर्व	१९. सभी प्रकार	इषु	१२. बाण
रक्षाम्	२१. रक्षा	चाप	१३. धनुष और
न्यस्त	५. रक्खे हुये	पाशान्	१४. पाश
अङ्घ्रि	३. चरण	दधानः	१५. धारण किये हुये
पद्मः	४. कमल को	अष्टगुणः	१६. आठ गुणों वाले
पतगेन्द्र	१. गरुड़ जी की	अष्ट	६. अपनी आठों
पृष्ठः ।	२. पीठ पर	बाहुः ॥	७. भुजाओं में

श्लोकार्थ—गरुड़ जी की पीठ पर चरण कमल को रक्खे हुये अपनी आठों भुजाओं में शंख, चक्र, ढाल, तलवार, गदा, बाण, धनुष और पाश धारण किये हुये, ओंकार स्वरूप भगवान् श्री हरि सभी प्रकार से मेरी रक्षा करें।

त्रयोदशः श्लोकः

जलेषु मां रक्षतु मत्स्यमूर्तिर्यादोगणेभ्यो वरुणस्य पाशात् ।
स्थलेषु मायावटुवामनोऽव्यात् त्रिविक्रमः खेऽवतु विश्वरूपः ।।१३।।

पदच्छेद—

जलेषु माम् रक्षतु मत्स्यमूर्तिः यादो गणेभ्यः वरुणस्य पाशात् ।
स्थलेषु मायावटुवामनः अव्यात् त्रिविक्रमः खे अवतु विश्वरूपः ।।

शब्दार्थ—

जलेषु	२. जल में	स्थलेषु	९. स्थल में
माम्	७. मेरी	माया	१०. माया से
रक्षतु	८. रक्षा करें	वटुवामनः	११. ब्रह्मचारी वामन रूपधारण करनेवाले
मत्स्यमर्तिः	१. भगवान् मत्स्यमूर्ति	अव्यात्	१२. रक्षा करें
यादो	३. जल	त्रिविक्रमः	१४. त्रिविक्रम भगवान्
गणेभ्यः	४. जन्तुओं से (और)	खे	१३. आकाश में
वरुणस्य	५. वरुण के	अवतु	१६. रक्षा करें
पाशात् ।	६. पाश से	विश्वरूपः ।।	१५. विश्वरूप

श्लोकार्थ—भगवान् मत्स्यमूर्ति जल में जल जन्तुओं से और वरुण के पाश से मेरी रक्षा करें। स्थल में माया से ब्रह्मचारी वामन रूप धारण करने वाले रक्षा करे तथा आकाश में त्रिविक्रम भगवान् विश्वरूप रक्षा करें।

चतुर्दशः श्लोकः

दुर्गेष्वटव्याजिमुखादिषु प्रभुः पायान्नृसिंहोऽसुरयूथपारिः ।
विमुञ्चतो यस्य महाट्टहासं दिशो विनेदुर्न्यपतंश्च गर्भाः ।।१४।।

पदच्छेद—

दुर्गेषु अटवी आजिमुख आदिषु प्रभुः पायात् नृसिहः असुरयूथपारिः ।
विमुञ्चतः यस्य महाट्टहासम् दिशः विनेदुः न्यपतन् च गर्भाः ।।

शब्दार्थ—

दुर्गेषु	१४. किलों में	विमुञ्चतः	४. करनें पर
अटवी	१५. जंगल में	यस्य	१. जिनके
आजिमुख	१६. रणभूमि	महा	२. घोर
आदिषु	१७. आदि में (मेरी)	अट्टहासम्	३. अट्टहास
प्रभुः	१२. भगवान्	दिशः	५. दिशायें
पायात्	१८. रक्षा करें	विनेदुः	६. कांप उठी थीं
नृसिह	१३. नृसिह	न्यपतन्	९. गिर गये थे (वे)
असुर यूथप	१०. दैत्य-समूहों के	च	७. और
अरिः ।	११. शत्रु	गर्भाः ।।	८. दैत्य पत्नियों के गर्भ

श्लोकार्थ—जिनके घोर अट्टहास करने पर दिशायें काँप उठी थों और दैत्य पत्नियों के गर्भ गिर गये थे, वे दैत्य-समूहों के शत्रु भगवान् नसिंह किलों में, जंगल में रणभूमि आदि में मेरी रक्षा करें।

पंचदशः श्लोकः

रक्षत्वसौ माध्वनि यज्ञकल्पः स्वदंष्ट्रयोन्नीतधरो वराहः ।
रामोऽद्रिकूटेष्वथ विप्रवासे सलक्ष्मणोऽव्याद्भरताग्रजोऽस्मान् ॥१५॥

पदच्छेद—

रक्षतु असौ मा अध्वनि यज्ञकल्पः स्वदंष्ट्रया उन्नीतधरः वराहः ।
रामः अद्रि कूटेषु अथ विप्रवासे सलक्ष्मणः अव्यात् भरत अग्रजः अस्मान् ॥

शब्दार्थ—

रक्षतु	९. रक्षा करें	रामः	१०. परशुराम जी
अस	५. वह	अद्रि कूटेषु	११. पर्वतों की चोटियों पर
मा	८. मेरी	अथ	१०. तदनन्तर
अध्वनि	७. मार्ग में	विप्रवासे	१३. वनवास के समय
यज्ञ	३. यज्ञ	सलक्ष्मणः	१४. लक्ष्मण जी के सहित
कल्पः	४. मूर्ति	अव्यात्	१८. रक्षा करें
स्वदंष्ट्रया	१. अपनी दाढ़ों पर	भरत	१५. भरत के
उन्नीतधरः	२. पृथ्वी को धारण करने वाले	अग्रजः	१६. बड़े भाई भगवान् राम
वराहः ।	६. भगवान् वराह	अस्मान् ॥	१७. हमारी

श्लोकार्थ—अपनी दाढ़ों पर पृथ्वी को धारण करने वाले यज्ञमूर्ति वह भगवान् मार्ग में मेरी रक्षा करें। परशुराम जी पर्वत की चोटियों पर तदनन्तर वनवास के समय लक्ष्मण जी के सहित भरत के बड़े भाई भगवान् राम हमारी रक्षा करें।

षोडशः श्लोकः

मामुग्रधर्मादखिलात् प्रमादान्नारायणः पातु नरश्च हासात् ।
दत्तस्त्वयोगादथ योगनाथः पायाद् गुणेशः कपिलः कर्मबन्धात् ॥१६॥

पदच्छेद—

माम् उग्रधर्मात् अखिलात् प्रमादात् नारायणः पातु नरः च हासात् ।
दत्तः तु अयोगात् अथ योगनाथः पायात् गुणेशः कपिलः कर्मबन्धात् ॥

शब्दार्थ—

माम्	६. मेरी	दत्तः	१३. दत्तात्रेय
उग्रधर्मात्	१. भयंकर-धर्मों से	तु	१५. और
अखिलात्	३. सम्पूर्ण	अयोगात्	१४. योग के विघ्नों से
प्रमादात्	४. प्रमादों से भगवान्	अथ	११. तथा
नारायणः	५. नारायण	योगनाथः	१२. योगेश्वर
पातु	७. रक्षा करें	पायात्	२०. रक्षा करें
नरः	८. भगवान् नर	गुणेशः	१६. गुणों के स्वामी
च	२. और	कपिलः	१७. भगवान् कपिल मुनि
हासात् ।	९. गर्व से	कर्म	१८. कर्मों के
		बन्धात् ॥	१९. बन्धन से मेरी

श्लोकार्थ—मारण, मोहनादि भयंकर धर्मों से, सम्पूर्ण प्रमादों से, भगवान् नारायण मेरी रक्षा करें। भगवान् नर गर्व से तथा योगेश्वर दत्तात्रेय योग के विघ्नों से और गुणों के स्वामी भगवान् कपिल मुनि कर्मों के बन्धन से मेरी रक्षा करें।

सप्तदशः श्लोकः

सनत्कुमारोऽवतु कामदेवाद्धयशीर्षा मां पथि देवहेलनात् ।
देवर्षिवर्यः पुरुषार्चनान्तरात् कूर्मो हरिर्मां निरयादशेषात् ।।१७।।

पदच्छेद—

सनत्कुमारः अवतु कामदेवात् हयशीर्षा माम् पथिदेवहेलनात् ।
देवर्षि वर्यः पुरुष अर्चन अन्तरात् कूर्मः हरिः मां निरयात् अशेषात् ।।

शब्दार्थ---

सनत्कुमारः	१. सनत्कुमार	वर्यः	९. श्रेष्ठ (नारद)
अवतु	८. रक्षा करें	पुरुष	११. भगवान् के
कामदेवात्	२. कामदेव से (तथा)	अर्चन	१२. पूजनादि के
हयशीर्षा	३. भगवान् हयग्रीव	अन्तरात्	१३. अपराध से (तथा)
माम्	७. मेरी	कूर्मः	१५. कच्छप
पथि	४. रास्ते में	हरिः	१४. भगवान्
देव	५. देवताओं की	मा	१८. मेरी (रक्षा करें)
हेलनात् ।	६. अवहेलना से	निरयात्	१७. नरकों से
देवर्षि	१०. देवर्षियों में	अशेषात् ।।	१६. सम्पूर्ण

श्लोकार्थ—सनत्कुमार कामदेव से तथा भगवान् हयग्रीव रास्ते में देवताओं की अवहेलना से मेरी रक्षा करें। देवर्षियों में श्रेष्ठ भगवान् के पूजानादि के अपराध से तथा भगवान् कच्छप सम्पूर्ण नरकों से मेरी रक्षा करें।

अष्टादशः श्लोकः

धन्वन्तरिर्भगवान् पात्वपथ्याद्, द्वन्द्वाद्भयादृषभो निर्जितात्मा ।
यज्ञश्च लोकादवताज्जनान्ताद् बलो गणात् क्रोधवशादहीन्द्रः ।।१८।।

पदच्छेद---

धन्वन्तरिः भगवान् पातु अपथ्यात् द्वन्द्वात् भयात् ऋषभः निर्जित आत्मा ।
यज्ञः च लोकात् अवतात जनान्तात् गणात् क्रोधवशात् अहीन्द्रः ।।

शब्दार्थ—

धन्वन्तरिः	२. धन्वन्तरि	यज्ञः	१०. यज्ञ भगवान
भगवान्	१. भगवान्	च	१२. और
पातु	९. रक्षा करें	लोकात्	११. लोकापवाद से
अपथ्यात्	३. कुपथ्य से	अवतात्	१५. रक्षा करें
द्वन्द्वात्	८. द्वन्द्वादि से (मेरी)	जनान्तात्	१४. मनुष्य के द्वारा किये कष्टों से
भयात्	७. भय देने वाले	बलः	१३. बलराम जी
ऋषभः	६. ऋषभ देव	गणात्	१८. गणों से (मेरी)
निर्जित	४. जितेन्द्रिय	क्रोधवशात्	१७. क्रोधवश नामक सर्पों के
आत्मा ।	५. भगवान्	अहीन्द्रः ।।	१६. शेषनाग जी

श्लोकार्थ—भगवान् धन्वन्तरि कुपथ्य से, जितेन्द्रिय भगवान् ऋषभदेव भय देने वाले द्वन्द्वादि से मेरी रक्षा करें। यज्ञ भगवान् लोकापवाद से और बलराम जी मनुष्य के द्वारा किये कष्टों से, शेष नाग जी क्रोधवशनामक सर्पों के गणों से मेरी रक्षा करें।

एकोनविंशः श्लोकः

द्वैपायनो भगवानप्रबोधाद् बुद्धस्तु पाखण्डगणात् प्रमादात् ।
कल्किः कलेः कालमलात् प्रपातु धर्मावनायोरुकृतावतारः ॥१९॥

पदच्छेद—

द्वैपायनः भगवान् अप्रबोधात् बुद्धः तु पाखण्ड गणात् प्रमादात् ।
कल्किः कलेः काल मलात् प्रपातु धर्मावनाया उरुकृत अवतारः ॥

शब्दार्थ—

द्वैपायनः	२. द्वैपायन	कल्किः	११. भगवान् कल्कि
भगवान्	१. भगवान्	कलेः	१२. कलियुग के
अप्रबोधात्	३. अज्ञान से	कालमलात्	१३. अत्यधिक पाप समूह से (मेरी)
बुद्ध	४. बुद्ध भगवान्	प्रयातु	१४. रक्षा करें
तु	६. और	धर्मावनाया	८. धर्म की रक्षा के लिये
पाखण्डगणात्	५. पाखण्डियों से	उरुकृत	१०. धारण करने वाले
प्रमादात् ।	७. प्रमाद से	अवतारः ॥	९. अवतार

श्लोकार्थ—भगगान् द्वैपायन अज्ञान से, बुद्ध भगवान् पाखण्डियों से और प्रमाद से, धर्म की रक्षा के लिये अवतार धारण करने वाले भगवान् कल्कि कलियुग के अत्यधिक पाप समूह से मेरी रक्षा करें ।

विंशः श्लोकः

मां केशवो गदया प्रातरव्याद् गोविन्द आसङ्गवमात्तवेणुः ।
नारायणः प्राह्ण उदात्तशक्तिर्मध्यन्दिने विष्णुररीन्द्रपाणिः ॥२०॥

पदच्छेद—

माम् केशवः गदया प्रातः अव्यात् गोविन्दः आसङ्गवम् आत्तवेणुः ।
नारायणः प्राह्णे उदात्तशक्तिः मध्यन्दिने विष्णुः अरीन्द्र पाणिः ॥

शब्दार्थ—

माम्	१६. मेरी रक्षा करें	नारायणः	९. भगवान् नारायण
केशवः	१. भगवान् केशव	प्राह्णे	८. दोपहर के पहले तक
गदया	३. अपनी गदा लेकर	उदात्त	१०. तीक्ष्ण
प्रातः अव्यात्	२. प्रातः काल होने पर	शक्तिः	११. शक्ति लेकर
गोविन्दः	४. गोविन्द भगवान्	मध्यन्दिने	१२. मध्याह्न के समय
आसङ्गवम्	५. कुछ दिन चढ़ने पर	विष्णुः	१३. विष्णु भगवान्
आत्त	७. लेकर	अरीन्द्र	१५. श्रेष्ठ चक्र सुदर्शन लेकर
वेणुम् ।	६. बाँसुरी	पाणिः ॥	१४. हाथ में

श्लोकार्थ—भगवान् केशव प्रातः काल होने पर अपनी गदा लेकर, गोविन्द भगवान् कुछ दिन चढ़ने पर बाँसुरी लेकर, दोपहर के पहले तक भगवान् नारायण तीक्ष्ण शक्ति लेकर, मध्याह्न के समय विष्णु भगवान् हाथ में श्रेष्ठ चक्र सुदर्शन लेकर मेरी रक्षा करें ।

एकविंशः श्लोकः

देवोऽपराह्णे मधुहोग्रधन्वा सायं त्रिधामावतु माधवो माम् ।
दोषे हृषीकेश उतार्धरात्रे निशीथ एकोऽवतु पद्मनाभः ।।२१।।

पदच्छेद—

देवः अपराह्णे मधुहा उग्रधन्वा सायम् त्रिधामा अवतु माधवः माम् ।
दोषे हृषीकेशः उत अर्धरात्रे निशीथे एकः अवतु पद्मनाभः ।।

शब्दार्थ—

देवः	१. भगवान्	माम् ।	१५. मेरी
अपराह्णे	४. दोपहर के बाद (तथा)	दोषें	९. प्रदोष के समय
मधुहा	२. मधुसूदन	हृषीकेशः	१०. हृषीकेश भगवान्
उग्रधन्वा	३. प्रचण्डधनुष लेकर	उत अर्धरात्रे	११. अर्धरात्रि के पहले (तथा)
सायम्	७. सायंकाल में (मेरी)	निशीथें	१२. अर्ध रात्रि में
त्रिधामा	५. त्रिमूर्तिधारी	एकः	१३. अकेले
अवतु	८. रक्षा करें	अवतु	१६. रक्षा करें
माधवः	६. माधव भगवान्	पद्मनाभः ।	१४. पद्मनाभ भगवान्

श्लोकार्थ—भगवान् मधुसूदन प्रचण्डधनुष् लेकर दोपहर के बाद तथा त्रिमूर्तिधारी माधव भगवान् सायंकाल में मेरी रक्षा करें। प्रदोष के समय हृषीकेश भगवान्, अर्धरात्रि के पहले तथा अर्धरात्रि में अकेले पद्नाभ भगवान् मेरी रक्षा करें।

द्वाविंशः श्लोकः

श्रीवत्सधामापररात्र ईशः प्रत्यूष ईशोऽसिधरो जनार्दनः ।
दामोदरोऽव्यादनुसन्ध्यं प्रभाते विश्वेश्वरो भगवान् कालमूर्तिः ।।२२।।

पदच्छेद—

श्रीवत्सधाम अपररात्रे ईशः प्रत्यूषे ईशः असिधरः जनार्दनः ।
दामोदरः अव्याद् अनुसन्ध्यम् प्रभाते विश्वेश्वरः भगवान् कालमूर्तिः ।।

शब्दार्थ—

श्रीवत्स	२. श्रीवत्स	दामोदरः	१०. भगवान् दामोदर
धाम	३. लाञ्लन	अव्यात्	१६. रक्षा करें
अपररात्रें	४. रात्रि के तीसरे पहर	अनुसन्ध्यम्	११. सम्पूर्ण सन्ध्याओं में
ईशः	१. भगवान्	प्रभातें	९. प्रातः काल
प्रत्यूष	८. उषाकाल में	विश्वेश्वरः	१५. विश्वेश्वर मेरी
ईशः	६. भगवान्	भगवान्	१४. भगवान्
असिधरः	५. खड्गधारी	काल	१२. काल
जनार्दनः ।	७. जनार्दन	मूर्तिः ।।	१३. मूर्ति

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीवत्स लाञ्छन रात्रि के तीसरे पहर में, खड्गधारी भगवान् जनार्दन उषाकाल में, प्रातः काल भगवान् दामोदर, सम्पूर्ण सन्ध्याओ म, कालमूर्ति भगवान् विश्वेश्वर मेरी रक्षा करें।

त्रयोविंशः श्लोकः

चक्रं युगान्तानलतिग्मनेमि भ्रमत् समन्ताद्भगवत्प्रयुक्तम् ।
दन्दग्धि दन्दग्ध्यरिसैन्यमाशु कक्षं यथा वातसखो हुताशः ।।२३।।

पदच्छेद—

चक्रम् युगान्त अनलतिग्मनेमि भ्रमत् समन्ताद् भगवत् प्रयुक्तम् ।
दन्दग्धि दन्दग्धि अरिसैन्यम् आशु कक्षम् यथा वातसखः हुताशः ।।

शब्दार्थ—

चक्रम्	१. हे सुदर्शन चक्र !	दन्दग्धि	१५. जला डालती है (वैसे ही)
युगान्त	३. प्रलय कालीन	दन्दग्धि	१८. जला डालिये आप
अनल	४. अग्नि के समान	अरिसैन्यम्	१७. हमारे शत्रुओं की सेनाओं को
तिग्म	५. तीक्ष्ण है	आशु	१६. शीघ्र ही
नेमि	२. आपके चक्र के किनारे का भाग	कक्षम्	१४. सुखे घास के ढेर को
भ्रमत्	९. घूमते रहते हैं	यथा	१०. जैसे
समन्ताद्	८. सब ओर	वात	११. वायु की
भगवत्	६. भगवान् की	सखः	१२. सहायता से
प्रयुक्तम् ।	७. प्रेरणा से (आप)	हुताशः ।।	१३. अग्नि

श्लोकार्थ—हे सुदर्शन चक्र ! आपके चक्र के किनारे का भाग प्रलयकालीन अग्नि के समान तीक्ष्ण है । भगवान् की प्रेरणा से आप सब ओर घूमते रहते हैं । जैसे वायु की सहायता से अग्नि सुखे घास के ढेर को जला डालती है वैसे ही शीघ्र ही हमारे शत्रुओं की सेनाओं को जला डालिये ।

चतुर्विंशः श्लोकः

गदेऽशनिस्पर्शनविस्फुलिङ्गे निष्पिण्ढि निष्पिण्ढ्यजितप्रियासि ।
कूष्माण्डवैनायकयक्षरक्षो भूतग्रहांश्चूर्णय चूर्णयारीन् ।।२४।।

पदच्छेद—

गदे अशनि स्पर्शन विस्फुलिङ्गे निष्पिण्ढि निष्पिण्ढि अजित प्रियासि ।
कूष्माण्ड वैनायक यक्षरक्षः भूतग्रहान् चूर्णय चूर्णय अरीन् ।।

शब्दार्थ—

गदे	१. हे कौमोदकी गदा ! आपका	कूष्माण्ड	६. कूष्माण्ड
अशनि स्पर्शन	३. स्पर्श वज्र के समान है	वैनायक	७. वैनायक
विस्फुलिङ्गे	२. चिनगारियों का	यक्षरक्षः	८. यक्ष-राक्षस
निष्पिण्ढि	१०. कुचल डालिये	भूतग्रहान्	९. भूत-प्रेतादि ग्रहों को
निष्पिण्ढि	११. कुचल डालिये (तथा)	चूर्णय	१३. चूर्ण
अजित	४. आप भगवान् अजित की	चूर्णय	१४. चूण कर डालिये
प्रियासि ।	५. प्रिया हैं	अरीन् ।।	१२. हमारे शत्रुओं को

श्लोकार्थ—हे कौमोद की गदा ! आपकी चिनगारियों का स्पर्श वज्र के समान है । आप भगवान् अजित की प्रिया है । कूष्माण्ड, वैनायक, यज्ञ, राक्षस, भूत, प्रेतादि ग्रहों को कुचल डालिये कुचल डालिये तथा हमारे शत्रुओं को चूर्ण-चूर्ण कर डालिये ।

पंचविंशः श्लोकः

त्वं यातुधानप्रमथप्रेतमातृपिशाचविप्रग्रहघोरदृष्टीन् ।
दरेन्द विद्रावय कृष्णपूरितो भीमस्वनोऽरेर्हृदयानि कम्पयन् ॥२५॥

पदच्छेद—

त्वम् यातुधान प्रमथ प्रेतमातृ पिशाच विप्रग्रह घोरदृष्टीन् ।
दरेन्द्र विद्रावय कृष्णपूरितः भीमस्वनः अरेः हृदयानि कम्पयन् ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२. आप	**दरेन्द्र**	१. हे श्रेष्ठ शंख !
यातुधान	९. राक्षस	**विद्रावय**	१६. भगा दीजिये
प्रमथ	१०. प्रमथ	**कृष्ण**	३. भगवान् कृष्ण के द्वारा
प्रेंत, मातृ	११. प्रेत, मातृका	**पूरितः**	४. फूँकने पर
विशाच	१२. पिशाच	**भीमस्वनः**	५. भयंकर शब्द करके
विप्र, ग्रह	१३. ब्रह्म-राक्षस आदि	**अरेः**	६. शत्रुओं के
घोर	१४. भयावने	**हृदयानि**	७. हृदय को
दृष्टीन् ।	१५. प्राणियों को	**कम्पयन् ॥**	८. कंपा दीजिये (तथा)

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठशंख ! आप भगवान् कृष्ण के द्वारा फूंकने पर भयंकर शब्द करके शत्रुओं के हृदय को कंपा दीजिये तथा राक्षस, प्रमथ, प्रेत, मातृका, पिशाच, ब्रह्म राक्षस आदि भयावने प्राणियों को भगा दीदिये ।

षड्विंशः श्लोकः

त्वं तिग्मधारासिवरारिसैन्यमीशप्रयुक्तो मम छिन्धि छिन्धि ।
चक्षूंषि चर्मञ्छतचन्द्र छादय द्विषामघोनां हर पापचक्षुषाम् ॥२६॥

पदच्छेद—

त्वम् तिग्मधार असि वरअरि सैन्यम् ईश प्रयुक्तः मम छिन्धि छिन्धि ।
चक्षूंषि चर्मन्शतचन्द्र छादय द्विषाम् अघोनाम् हर पाप चक्षुषाम् ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	३. आपकी	**चक्षूंषि**	१४. नेत्रों को
तिग्म	५. तीक्ष्ण है (आप)	**चर्मन्**	१०. हेढाल ! आप
धार	४. धार	**शतचन्द्र**	११. सैकड़ों चन्द्रमा के समान
असि	२. तलवार	**छादय**	१५. ढक दीजिये (तथा)
वर	१. हे श्रेष्ठ !	**द्विषाम्**	१३. शत्रुओं के
सैन्यम्	८. शत्रुओं की सेना को	**अघोनाम्**	१२. पापी
ईश प्रयुक्तः	६. भगवान् की प्रेरणा से	**हर**	१८. हरण कर लीजिये
मम	७. मेरे	**पाप**	१६. पाप
छिन्धि छिन्धि ।	९. छिन्न-भिन्न कर दीजिये	**चक्षुषाम् ॥**	१७. दृष्टि का

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ तलवार ! आपकी धार तीक्ष्ण हैं । आप भगवान् की प्रेरणा से मेरे शत्रुओं की सेना को छिन्न- भिन्न कर दीजिये । हे ढाल ! आप सैकड़ों चन्द्रमा के समान हैं । पापी शत्रुओं के नेत्रों को ढक दीजिए । तथा पाप दृष्टि का हरण कर लीजिये ।

सप्तविंशः श्लोकः

यन्नो भयं ग्रहेभ्योऽभूत् केतुभ्यो नृभ्य एव च ।
सरीसृपेभ्यो दंष्ट्रिभ्यो भूतेभ्योंऽहोभ्य एव वा ॥२७॥

पदच्छेद—

यत नः भयम् ग्रहेभ्यः अभूत् केतुभ्यः नृभ्य एव च ।
सरीसृपेभ्यः दंष्ट्रिभ्यः भूतेभ्यः अंहोभ्यः एव वा ॥

शब्दार्थ—

यत् नः	१०. जो हम लोगों को	सरीसृपेभ्यः	४. रेंगने वाले
भयम्	११. भय देने वाले हैं (वे नष्ट)	दंष्ट्रिभ्यः	५. दाढ़ों वाले हिंसक पशु आदि
ग्रहेभ्यः	१. ग्रहादि	भूतेभ्यः	६. भूत प्रेतादि
अभूत्	१२. होवे	अंहोभ्यः	८. पापी लोग
केतुभ्यः	२. धूमकेतु आदि	एव	९. हो
नृभ्य एव च ।	३. दुष्ट मनुष्य और	वा ॥	७. अथवा

श्लोकार्थ---ग्रहादि धूमकेतु आदि दुष्ट मनुष्य और रेंगने वाले सर्पादि-दाढ़ों वाले हिंसक पशु आदि, भूत प्रेतादि अथवा पापी लोग ही जो हम लोगों को भय देने वाले हैं वे नष्ट होवें ।

अष्टाविंशः श्लोकः

सर्वाण्येतानि भगवन्नामरूपास्त्रकीर्तनात् ।
प्रयान्तु संक्षयं सद्यो ये नः श्रेयः प्रतीपकाः ॥२८॥

पदच्छेद---

सर्वाणि एतानि भगवन् नामरूप अस्त्र कीर्तनात् ।
प्रयान्तु संक्षयम् सद्यः ये नः श्रेयः प्रतीपकाः ॥

शब्दार्थ---

सर्वाणि	६. सभी	प्रयान्तु	१४. प्राप्त होवें ।
एतानि	५. वे	संक्षयम्	१३. क्षय को
भगवान्	७. भगवान् के	सद्यः	१२. तत्काल
नाम	८. नाम	ये	१. जो
रूप	९. स्वरूप	नः	२. हम लोगों के
अस्त्र	१०. अस्त्र के	श्रेयः	३. कल्याण के
कीर्तनात् ।	११. कीर्तन से	प्रतीपकाः ॥	४. विरोधी हैं

श्लोकार्थ—जो हम लोगों के कल्याण के विरोधी हैं, वे सभी भगवान् के नाम स्वरूप अस्त्र के कीर्तन से तत्काल क्षय को प्राप्त होवें ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

गरुडो भगवान् स्तोत्रस्तोभश्छन्दोमयः प्रभुः ।
रक्षत्वशेषकृच्छ्रेभ्यो विष्वक्सेनः स्वनामभिः ।।२६।।

पदच्छेद---

गरुडः भगवान् स्तोत्र स्तोभः छन्दोमयः प्रभुः ।
रक्षतु अशेषकृच्छ्रेभ्यः विष्वक्सेनः स्व नामभिः ।।

शब्दार्थ---

गरुडः	६. गरुड़ (और)	रक्षतु	१२. रक्षा कर
भगवान्	५. भगवान्	अशेष	१०. सम्पूर्ण
स्तोत्र	३. स्तुति की जाती है (वे)	कृच्छ्रेभ्यः	११. विपत्तियों से (हमारी)
स्तोभः	१. सामवेदीय स्तोत्र से	विष्वक्सेनः	७. विष्वक्सेन जी
छन्दोमयः	४. वेदमूर्ति	स्व	८. अपने
प्रभुः ।	२. जिस भगवान् की	नामभिः ।।	९. नामोच्चारण के प्रभाव से

श्लोकार्थ—सामवेदीय स्तोत्र से जिस भगवान् की स्तुति की जाती है, वे वेदमूर्ति भगवान् गरुड़ और विष्वक्सेन जी अपने नामोच्चारण के प्रभाव से सम्पूर्ण विपत्तियों से हमारी रक्षा करें।

त्रिंशः श्लोकः

सर्वापद्भ्यो हरेर्नामरूपयानायुधानि नः ।
बुद्धीन्द्रियमनः प्राणान् पान्तु पार्षदभूषणाः ।।३०।।

पदच्छेद—

सर्व आपद्भ्यः हरेः नाम रूप यान आयुधानि नः ।
बुद्धि इन्द्रिय मनः प्राणान् पान्तु पार्षद भूषणाः ।।

शब्दार्थ—

सर्व	१३. सम्पूर्ण	बुद्धि	८. बुद्धि
आपद्भ्यः	१२. आपत्तियों से	इन्द्रिय	९. इन्द्रिय
हरेः	१. भगवान् श्री हरि के	मनः	१०. मन और
नाम	२. नाम	प्राणान्	११. प्राणों की
रूपयान	३. रूप-वाहन	पान्तु	१४. रक्षा करें
आयुधानि	४. आयुध (और)	पार्षद	६. पार्षद
नः ।	७. हमारी	भूषणः ।।	५. भगवान् के श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के नाम, रूप, वाहन, आयुध और भगवान् के श्रेष्ठ पार्षद हमारी बुद्धि, इन्द्रियों, मन और प्राणों की सम्पूर्ण विपत्तियों रक्षा से करें।

एकत्रिंशः श्लोकः

यथाहि भगवानेव वस्तुतः सदसच्च यत् ।
सत्येनानेन नः सर्वे यान्तु नाशमुपद्रवाः ।।३१।।

पदच्छेद—

यथाहि भगवान् एव वस्तुतः सत् असत् च यत् ।
सत्येन अनेन नः सर्वे यान्तु नाशम् उपद्रवाः ।।

शब्दार्थ—

यथाहि	१. जितना	सत्येन	९. सत्य के प्रभाव से
भगवान्	६. भगवान्	अनेन	८. इस
एव	७. ही हैं	नः	१०. हमारे
वस्तुतः	५. वास्तव में	सर्वे	११. सम्पूर्ण
सत्	२. कार्य	यान्तु	१४. हो जावें
असत्	३. कारण रूप	नाशम्	१३. नष्ट
च यत् ।	४. और जो संसार है	उपद्रवाः ।।	१२. उपद्रव

श्लोकार्थ---जितना कार्य कारण रूप और जो संसार है, वास्तव में भगवान् ही हैं। इस सत्य के प्रभाव से हमारे सम्पूर्ण उपद्रव नष्ट हो जायें।

द्वात्रिंशः श्लोकः

यथैकात्म्यानुभावानां विकल्परहितः स्वयम् ।
भूषणायुधलिङ्गाख्याधत्ते शक्तीः स्वमायया ।।३२।।

पदच्छेद—

यथा ऐक आत्म्य अनुभावानाम् विकल्प रहितः स्वयम् ।
भूषण आयुधलिङ्गाख्या धत्ते शक्तीः स्वमायया ।।

शब्दार्थ—

यथा	४. जिस प्रकार	भूषण	१०. आभूषण
एक	३. एकता का	आयुध	११. आयुध (और)
आत्म्य	२. ब्रह्म और आत्मा की	लिङ्गाख्या	१२. रूप नामक
अनुभावानाम्	५. अनुभव कर चुके हैं (वे)	धत्ते	१४. धारण करते हैं
विकल्प	६. भेदों से	शक्तीः	१३. शक्तियों को
रहितः	७. रहित	स्व	८. अपनी
स्वयम् ।	१. जो लोग स्वयम्	मायया ।।	९. माया शक्ति के द्वारा

श्लोकार्थ---जो लोग स्वयम् ब्रह्म और आत्मा की एकता का जिस प्रकार से अनुभव कर चुके हैं, वे भेदों से रहित हैं। अपनी माया शक्ति के द्वारा आभूषण, आयुध और रूप नामक शक्तियों को धारण करते हैं।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तेनैव सत्यमानेन सर्वज्ञो भगवान् हरिः।
पातु सर्वैः स्वरूपैर्नः सदा सर्वत्र सर्वशः ।।३३।।

पदच्छेद—

तेन एव सत्यम् अनेन सर्वज्ञः भगवान् हरिः।
पातु सर्वैः स्वरूपैर्न सदा सर्वत्र सर्वगः ।।

शब्दार्थ—

तेन	१. उसी प्रकार	पातु	१४. रक्षा करें
एव	२. ही	सर्वैः	११. सभी
सत्यम्	४. सत्य है (कि)	स्व	१०. अपने
अनेन	३. निश्चित रूप से	रूपैर्नः	१२. स्वरूपों से हमारी
सर्वज्ञः	५. सर्वज्ञ	सदा	१३. हमेशा
भगवान्	७. भगवान्	सर्वत्र	९. सभी जगह
हरिः।	८. श्रीहरि	सर्वगः ।।	६. सर्वव्यापक

श्लोकार्थ—उसी प्रकार ही निश्चित रूप से सत्य है कि सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, भगवान् श्री हरि सभी जगह अपने सभी स्वरूपों से हमारी रक्षा करें।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

विदिक्षु दिक्षूर्ध्वमधः समन्तादन्तर्बहिर्भगवान् नारसिंहः।
प्रहापयँल्लोकभयं स्वनेन स्वतेजसा ग्रस्तसमस्ततेजाः ।।३४।।

पदच्छेद—

विदिक्षु दिक्षु ऊर्ध्वम् अधः समन्तात् अन्तर्बहिः भगवान् नारसिंहः।
प्रहापयन् लोकभयम् स्वनेन स्वतेजसा ग्रस्तसमस्त तेजाः ।।

शब्दार्थ—

विदिक्षु	११. विदिशाओं में	प्रहापयम्	५. भगा देते हैं (और)
दिक्षु	१२. दिशाओं में	लोकभयम	४. लोगों के भय को
ऊर्ध्वम्	१३. ऊपर	स्वनेन	३. अपने अट्टहास से
अधः	१४. नीचे	स्व	६. अपने
समन्तात्	१६. चारों ओर (हमारी रक्षा करें)	तेजसा	७. तेज से
अन्तर्बहिः	१५. अन्दर-वाहर	ग्रस्त	१०. ग्रस लेते है (वे भगवान्)
भगवान्	१. भगवान्	समस्त	८. सम्पूर्ण
नारसिंहः।	२. नृसिंह	तेजाः ।।	९. तेजों को

श्लोकार्थ—भगवान् नृसिंह अपने अट्टहास से लोगों के भय को भगा देते हैं और अपने तेज से सम्पूर्ण तेजों को ग्रस लेते हैं। वे भगवान् विदिशाओं में, दिशाओं में, ऊपर-नीचे, अन्दर बाहर, चारों ओर हमारी रक्षा करें।

पंचत्रिंशः श्लोकः

मघवन्निदमाख्यातं वर्म नारायणात्मकम् ।
विजेष्यस्यञ्जसा येन दंशितोऽसुरयूथपान् ॥३५॥

पदच्छेद--

मघवन् इदम् आख्यातम् वर्म नारायण आत्मकम् ।
विजेष्यसि अञ्जसा येन दंशितः असुर यूथपान् ॥

शब्दार्थ—

मघवन्	१. हे इन्द्र !	विजेष्यसि	१२. विजय प्राप्त कर लोगे
इदम्	२. इस	अञ्जसा	११. अनायास ही
आख्यातम्	६. सुनाया (जिससे)	येन	१०. इसके द्वारा
वर्म	५. कवच को	दंशितः	७. सुरक्षित होकर
नारायण	३. नारायण	असुर	८. राक्षसों के
आत्मकम् ।	४. सम्बन्धी	यूथपान् ॥	९. यूथपतियों पर

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! इस नारायण सम्बन्धी कवच को सुनाया, जिससे सुरक्षित होकर राक्षसों के यूथपतियों पर इसके द्वारा अनायास ही विजय प्राप्त कर लोगे ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतद् धारयमाणस्तु यं यं पश्यति चक्षुषा ।
पदा वा संस्पृशेत् सद्यः साध्वसात् स विमुच्यते ॥३६॥

पदच्छेद---

एतद् धारयामाणः तु यम्-यम् पश्यति चक्षुषा ।
पदा वा संस्पृशेत् सद्यः साध्वसात् सः विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

एतद्	१. इस कवच को	वा	५. अथवा
धारयामाणः	२. धारण करने वाला पुरुष	संस्पृशेत्	७. स्पर्श कर लेता है
तु यम्-यम्	३. जिस-जिसको	सद्यः	९. शीघ्र ही
पश्यति	५. देखता है	साध्वसात्	१०. भयों से
चक्षुषा ।	४. अपनी आँखों से	सः	८. वह
पदा	६. पैरों से	विमुच्यते ॥	११. मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—इस कवच को धारण करने वाला पुरुष जिस-जिस को अपनी आँखों से देखता है अथवा पैरों से स्पर्श कर लेता है, वह शीघ्र ही भयों से मुक्त हो जाता है ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

न कुतश्चिद् भयं तस्य विद्यां धारयतो भवेत् ।
राजदस्युग्रहादिभ्यो व्याघ्रादिभ्यश्च कर्हिचित् ।।३७।।

पदच्छेद—

न कुतः चिद् भयम् तस्य विद्याम् धारयतः भवेत् ।
राजदस्यु ग्रहादिभ्यः व्याघ्र आदिभ्यः च कर्हि चित् ।।

शब्दार्थ—

न	१३. नहीं	**राज**	४. राजा
कुतः चिद्	११. किसी प्रकार का	**दस्यु**	५. डाकू
भयम्	१२. भय	**ग्रहादिभ्यः**	६. प्रेत-पिशाच
तस्य	३. इसे	**व्याघ्र**	८. बाघ
विद्याम्	१. इस विद्या को	**आदिभ्यः**	९. आदि का
धारयतः	२. जो धारण करता है	**च**	७. और
भवेत् ।	१४. होता है	**कर्हिचित् ।।**	१०. कभी भी

श्लोकार्थ—इसी विद्या को जो धारण करता है उसे राजा, डाकू, प्रेत, पिशाच, और बाघ आदि का कभी भी किसी प्रकार का भय नहीं होता है ।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

इमां विद्यां पुरा कश्चित् कौशिको धारयन् द्विजः ।
योगधारणया स्वाङ्गं जहौ स मरुधन्वनि ।।३८।।

पदच्छेद—

इमाम् विद्याम् पुरा कश्चित् कौशिकः धारयन् द्विजः ।
योगधारणया स्व अङ्गम् सः मरुधन्वनि ।।

शब्दार्थ—

इमाम्	५. इस	**योग**	८. योग
विद्याम्	६. विद्या को	**धारणया**	९. धारणा से
पुरा	१. प्राचीन काल में	**स्व**	१३. अपने
कश्चित्	२. कोई	**अङ्गम् जहौ**	१४. शरीर को त्याग दिया
कौशिकः	३. कौशिक गोत्र का	**सः**	१०. वह
धारयन्	७. धारण करके	**मरु**	११. मरु
द्विजः ।	४. ब्राह्मण	**धन्वनि ।।**	१२. स्थल में

श्लोकार्थ—प्राचीन काल में कोई कौशिक गोत्र का ब्राह्मण इस विद्या को धारण करके योग धारणा से वह मरु स्थल में अपने शरीर को त्याग दिया ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तस्योपरि विमानेन गन्धर्वपतिरेकदा ।
ययौ चित्ररथः स्त्रीभिर्वृतो यत्र द्विजक्षयः ॥३९॥

पदच्छेद—

तस्य उपरि विमानेन गन्धर्व पतिः एकदा ।
ययौ चित्ररथः स्त्रीभिः वृतः यत्र द्विजक्षयः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१०. उसके	चित्ररथः	३. चित्ररथ (अपनी)
उपरि	११. ऊपर से	स्त्रीभिः	४. स्त्रियों से
विमानेन	६. विमान पर बैठ कर	वृतः	५. घिरा हुआ
गन्धर्वपतिः	२. गन्धर्वराज	यत्र	७. जहाँ (उस)
एकदा।	१. एक बार	द्विज	८. ब्राह्मण का
ययौ	१२. निकला	क्षयः ॥	९. शरीर नष्ट हुआ था

श्लोकार्थ—एक बार गन्धर्वराज चित्ररथ अपनी स्त्रियों से घिरा हुआ विमान पर बैठकर जहाँ उस ब्राह्मण का शरीर नष्ट हुआ था, उसके ऊपर से निकला।

चत्वारिंशः श्लोकः

गगनान्न्यपतत् सद्यः सविमानो ह्यवाक्शिराः ।
स बालखिल्यवचनादस्थीन्यादाय विस्मितः ।
प्रास्य प्राचीसरस्वत्यां स्नात्वा धाम स्वमन्वगात् ॥४०॥

पदच्छेद—

गगनात् न्यपतत् सद्यः सविमानः हि अवाक्शिराः ।
सः बालखिल्य वचनात् अस्थीनि आदाय विस्मितः ॥
प्रास्य प्राचीसरस्वत्याम् स्नात्वा धाम स्वम् अन्वगात् ॥

शब्दार्थ---

गगनात्	४. आकाश से	आदाय	११. ले जाकर
न्यपतत्	५. गिर पड़ा	विस्मितः।	९. आश्चर्य चकित होकर उसने
सद्यः	३. तत्काल ही	प्रास्य	१४. बहा कर (तथा)
सविमानः	२. विमान के सहित	प्राची	१२. पूर्ववाहिनी
हि अवाक्शिराः।	१. वह नीचे सिर किये	सरस्वत्याम्	१३. सरस्वती नदी में
सः	६. उसे	स्नात्वा	१५. स्नान करके
बालखिल्य	७. बाल खिल्य ऋषियों ने	धाम	१७. लोक को
वचनात्	८. बाताया (तब)	स्वम्	१६. अपने
अस्थीनि	१०. हड्डियों को	अन्वगात् ॥	१८. चला गया

श्लोकार्थ—वह चित्ररथ नीचे सिर किये हुये विमान के सहित तत्काल ही आकाश से गिर पड़ा। उसे बाल खिल्य ऋषियों ने बताया। तब आश्चर्य चकित होकर अपने हड्डियों को ले जाकर पूर्ववाहिनी सरस्वती नदी में बहाकर तथा स्नान करके अपने लोक को चला गया।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

य इदं शृणुयात् काले यो धारयति चादृतः ।
तं नमस्यन्ति भूतानि मुच्यते सर्वतो भयात् ।।४१।।

पदच्छेद—

यः इदम् शृणुयात् काले यः धारयति च आदृतः ।
तम् नमस्यन्ति भूतानि मुच्यते सर्वतः भयात् ।।

शब्दार्थ—

यः	१. जो मनुष्य	आदृतः ।	७. आदर पूर्वक
इदम्	२. इस कवच को	तम्	९. उसे
शृणुयात्	४. सुनता है	नमस्यन्ति	११. नमस्कार करते हैं (वह)
काले	३. समय पर	भूतानि	१०. सभी प्राणी
यः	६. जो	मुच्यते	१४. मुक्त हो जाता है
धारयति	८. धारण करता है	सर्वतः	१२. सभी प्रकार के
च	५. और	भयात् ।।	१३. भयों से

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस कवच को समय पर सुनता है और जो आदर पूर्वक धारण करता है, उसे सभी प्राणी नमस्कार करते हैं। वह सभी प्रकार के भयों से मुक्त हो जाता है।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

एतां विद्यामधिगतो विश्वरूपाच्छतक्रतुः ।
त्रैलोक्यलक्ष्मीं बुभुजे विनिर्जित्य मृधेऽसुरान् ।।४२।।

पदच्छेद—

एताम् विद्याम् अधिगतः विश्वरूपात् शतक्रतुः ।
त्रैलोक्य लक्ष्मीम् बुभुजे विनिर्जित्य मृधे असुरान् ।।

शब्दार्थ—

एताम्	३. इस	त्रैलोक्य	९. त्रैलोक्य की
विद्याम्	४. विद्या को	लक्ष्मीम्	१०. लक्ष्मी का
अधिगतः	५. प्राप्त करके	बुभुजे	११. उपभोग किया
विश्वरूपात्	२. विश्वरूप से	विनिर्जित्य	८. जीतकर
शतक्रतुः ।	१. इन्द्र ने	मृधे	७. रणभूमि में
		असुरान् ।।	६. असुरों को

श्लोकार्थ—इन्द्र ने विश्वरूप से इस विद्या को प्राप्त करके, असुरों को रणभूमि में जीतकर त्रैलोक्य की लक्ष्मी का उपभोग किया।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे
नारायणवर्मकथनं नाम
अष्टमः अध्यायः ।।८।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

तस्यासन् विश्वरूपस्य शिरांसि त्रीणि भारत ।
सोमपीथं सुरापीथमन्नादमिति शुश्रुम ॥१॥

पदच्छेद—

तस्य आसन् विश्वरूपस्य शिरांसि त्रीणि भारत ।
सोमपीथम् सुरापीथम् अन्नादम् इति शुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

तस्य	४. उस	सोमपीथम्	९. (एक से) सोमरस
आसन्	८. थे	सुरापीथम्	१०. (दूसरे से) सुरापान
विश्वरूपस्य	५. विश्वरूप के	अन्नादम्	११. (तीसरे से) अन्न खाते थे
शिरांसि	७. सिर	इति	२. ऐसा
त्रीणि	६. तीन	शुश्रुम ॥	३. हमने सुना है कि
भारत ।	१. हे परीक्षित् !		

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! ऐसा हमने सुना है कि विश्वरूप के तीन सिर थे । वे एक से सोमरस, दूसरे से सुरापान और तीसरे से अन्न खाते थे ।

द्वितीयः श्लोकः

स वै बर्हिषि देवेभ्यो भागम् प्रत्यक्षमुच्चकैः ।
अवदद् यस्य पितरो देवाः सप्रश्रयम् नृप ॥२॥

पदच्छेद—

स वै बर्हिषि देवेभ्यः भागम् प्रत्यक्षम् उच्चकैः ।
अवदत् यस्य पितरः देवाः सप्रश्रयम् नृप ॥

शब्दार्थ—

सः	६. वे	अवदत्	१०. बोलकर
वै	४. निश्चित ही	यस्य	२. उनके
बर्हिषि	७. यज्ञ के समय	पितरः	३. पिता
देवेभ्यः	१२. देवताओं को	देवाः	५. बारह आदित्य देवता थे
भागम्	१३. आहुति देते थे	सप्रश्रयम्	११. बड़े विनय के साथ
प्रत्यक्षम्	८. प्रत्यक्ष रूप से	नृप ॥	१. हे राजन् !
उच्चकैः ।	९. ऊँचे स्वर से		

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उनके पिता निश्चित ही बारह आदित्य देवता थे । वे यज्ञ के समय प्रत्यक्ष रूप से ऊँचे स्वर से बोलकर बड़े विनय के साथ देवताओं को आहुति देते थे ।

तृतीयः श्लोकः

स एव हि ददौ भागं परोक्षमसुरान् प्रति ।
यजमानोऽवहद् भागं मातृस्नेहवशानुगः ।।३।।

पदच्छेद---

सः एव हि ददौ भागम् परोक्षम् असुरान् प्रति ।
यजमानः अवहत् भागम् मातृ स्नेह वश अनुगः ।।

शब्दार्थ—

सः	१. वे	यजमानः	१२. यज्ञ करते समय
एव-हि	२. ही निश्चित रूप से	अवहत्	१४. पहुँचाया करते थे
ददौ	७. दिया करते थे	भागम्	१३. असुरों का भाग
भागम्	६. आहुति	मातृ	८. माता के
परोक्षम्	३. परोक्ष रूप में	स्नेह	९. प्रेम के
असुरान्	४. असुरों के	वश	१०. वश में
प्रति ।	५. प्रति भी	अनुगः ।।	११. होकर

श्लोकार्थ—वे ही निश्चत रूप से परोक्ष रूप में असुरों के प्रति भी आहुति दिया करते थे। माता के प्रेम के वश में होकर यज्ञ करते समय असुरों का भाग पहुँचाया करते थे।

चतुर्थः श्लोकः

तद् देवहेलनं तस्य धर्मालीकं सुरेश्वरः ।
आलक्ष्य तरसा भीतस्तच्छीर्षाण्यच्छिनद् रुषा ।।४।।

पदच्छेद—

तत् देवहेलनम् तस्य धर्म अलीकम् सुरेश्वरः ।
आलक्ष्य तरसा भीतः तत् शीर्षाणि अच्छिनत् रुषा ।।

शब्दार्थ—

तत्	१. (इस प्रकार)	आलक्ष्य	८. देखकर (और)
देव	४. देवताओं का	तरसा	१०. शीघ्रता से
हेलनम्	५. अपराध कर रहे थे	भीतः	९. डर कर
तस्य	६. उस	तत्	१२. उनके
धर्म	२. धर्म की	शीर्षाणि	१३. सिरों को
अलीकम्	३. आड़ में	अच्छिनत्	१४. काट लिया
सुरेश्वरः ।	७. देवराज इन्द्र ने (यह)	रुषा ।।	११. क्रोध में भरकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार वे धर्म की आड़ में देवताओं का अपराध कर रहे थे। उस देवराज इन्द्र ने यह देखकर और डरकर शीघ्रता से क्रोध में भरकर उनके सिरों को काट लिया।

पंचमः श्लोकः

सोमपीथं तु यत् तस्य शिर आसीत् कपिञ्जलः ।
कलविङ्कः सुरापीथमन्नादं यत् स तित्तिरः ॥५॥

पदच्छेद—

सोमपीथम् तु यत् तस्य शिर आसीत् कपिञ्जलः ।
कलविङ्कः सुरापीथम् अन्नादम् यत् सः तित्तिरः ॥

शब्दार्थ—

सोमपीथम्	३. सोमरस पीने वाला	कलविङ्कः	८. गौरैया (तथा)
तु-यत्	२. तो-जो	सुरापीथम्	७. सुरापान करने वाला
तस्य	१. उस विश्वरूप का	अन्नादम्	१०. अन्न खाने वाला
शिरः	४ शिर	यत्	९. जो शिर
आसीत्	५. था (वह)	सः	११. वह
तित्तिरः॥	६. पपीहा	कपिञ्जलः॥	१२. तीतर हो गया

श्लोकार्थ—उन विश्वरूप का तो जो सोमरस पीने वाला शिर था, वह पपीहा, सुरापान करने वाला गौरैया तथा जो सिर अन्न खाने वाला था वह तीतर हो गया।

षष्ठः श्लोकः

ब्रह्महत्यामञ्जलिना जग्राह यदपीश्वरः ।
संवत्सरान्ते तदघं भूतानां स विशुद्धये ।
भूम्यम्बुद्रुमयोषिद्भ्यश्चतुर्धा व्यभजद्धरिः ॥६॥

पदच्छेद—

ब्रह्महत्याम् अञ्जलिना जग्राह यद् अपि ईश्वरः ।
संवत्सरअन्ते तद् अघम् भूतानाम् सः विशुद्धये ।
भूमि अम्बु द्रुम योषिद्भ्यः चतुर्धा व्यभजत् हरिः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्महत्याम्	५. ब्रह्महत्या को	स	३. वह
अञ्जलिना	४. लगी हुये	विशुद्धये।	८. अपनी शुद्धि के लिये
जग्राह	६. दूरकर सकते थे। किन्तु	भूमि	१३. पृथ्वी
यद्	१. यदि	अम्बु	१४. जल
अपि ईश्वरः।	२. इन्द्र चाहते तो	द्रुमं	१५. वृक्ष (और)
संवत्सरान्ते	७. एक वर्ष तक	योषिद्भ्यः	१६. स्त्री इन
तद्	१०. उस	चतुर्धा	१७. चार हिस्सों में उसे
अघम्	११. पाप का नहीं किया प्रायश्चित्त	व्यभजत्	१८. बाँट दिया
भुतानाम्	९. प्राणियों के सामने	हरिः॥	१२. पुनः इन्द्र ने

श्लोकार्थ—यदि इन्द्र चाहते तो वह लगी हुई ब्रह्महत्या दूरकर सकते थे। किन्तु एक वर्ष तक अपनी शुद्धि के लियें प्राणियों के सामने उस पाप का प्रायश्चित्त नहीं किया। पुनः इन्द्र ने अपनी शुद्धि के लिये पृथ्वी, जल, वृक्ष और स्त्री इन चार हिस्सों में उसे बाँट दिया।

सप्तमः श्लोकः

भूमिस्तुरीयं जग्राह खातपूरवरेण वै ।
ईरिणं ब्रह्महत्याया रूपं भूमौ प्रदृश्यते ।।७।।

पदच्छेद—

भूमिः तुरीयम् जग्राह खात पूरवरेण वै ।
ईरिणम् ब्रह्महत्यायाः रूपम् भूमौ प्रपद्यते ।।

शब्दार्थ—

भूमिः	१. पृथ्वी ने (बदले में यह वरदान लेकर)	ईरिणम्	८. असर के
तुरीयम्	६. चतुर्थांश भाग की	ब्रह्महत्यायाः	५. ब्रह्महत्या का
जग्राह	७. स्वीकार कर लिया (वही)	रूपम्	९. रूप में
खात	२. जहाँ गड्ढा होगा	भूमौ	११. पृथ्वी पर
पूरवरेण	४. भर जायेगा (इन्द्र की)	प्रपद्यते ।।	११. दिखाई पड़ती है
वै ।	३. समय पर		

श्लोकार्थ—पृथ्वी ने बदले में यह वरदान लेकर कि जहाँ गड्ढा होगा समय पर भर जायेगा, इन्द्र की ब्रह्म हत्या का चतुर्थांश भाग स्वीकार कर लिया। वही ऊसर के रूप में पृथ्वी पर दिखाई पड़ता है ।

अष्टमः श्लोकः

तुर्यं छेदविरोहेण वरेण जगृहुर्द्रुमाः ।
तेषां निर्यासरूपेण ब्रह्महत्या प्रदृश्यते ।।८।।

पदच्छेद—

तुर्यम् छेद विरोहेण वरेण जगृहुः द्रुमाः ।
तेषाम् निर्यासिरूपेण ब्रह्महत्या प्रदृश्यते ।।

शब्दार्थ—

तुर्यम	१. दूसरा चतुर्थांश	तषाम्	७. उनमें
छेद	५. कोई भी हिस्सा कटने पर	निर्यास	८. गोंद के
विरोहेण	६. पुनः जम आयेगा।	रूपेण	९. रूप में
वरेण	४. वर लिया कि	ब्रह्महत्याम्	१०. आज भी ब्रह्म हत्या
जगृहुः	३. ग्रहण किया (और)	प्रदृश्यते ।।	११. दिखाई देती है
द्रुमाः ।	२. वृक्षों ने		

श्लोकार्थ—दूसरा चतुर्थांश वृक्षों ने ग्रहण किया और वर लिया कि कोई भी हिस्सा कटने पर पुनः जम आयेगा। उनमें गोंद के रूप में आज भी ब्रह्महत्या दिखलाई देती है ।

नवमः श्लोकः

शश्वत्कामवरेणांहस्तुरीयं जगृहुः स्त्रियः ।
रजोरूपेण तास्वंहो मासि मासि प्रदृश्यते ।।९।।

पदच्छेद—

शश्वत् कामवरेण अंहः तुरीयम् जगृहुः स्त्रियः ।
रजः रूपेण तासु अंहः मासि मासि प्रदृश्यते ।।

शब्दार्थ—

शश्वत्	३. सर्वदा	रजः	१२. रज के
काम	४. पुरुषों का सहवास कर	रूपेण	१३. रूप में
वरेणम्	२. यह वर प्राप्त करके कि	तासु	८. उनकी
अंहः	५. ब्रह्म हत्या का (तीसरा)	अंहः	९. ब्रह्महत्या
तुरीयम्	६. चतुर्थांश	मासि	१०. महीनें
जगृहुः	७. स्वीकार किया	मासि	११. महीने में
स्त्रियः।	१. स्त्रियों ने	प्रदृश्यते ।।	१४. दिखाई देती है

श्लोकार्थ—स्त्रियों नें यह वर प्राप्त करके कि सर्वदा पुरुषों का सहवास करें। ब्रह्महत्या का तीसरा चतुर्थांश स्वीकार किया। उनकी ब्रह्महत्या महीने-महीने रज के रूप में दिखाई देती है।

दशमः श्लोकः

द्रव्यभूयोवरेणापस्तुरीयं जगृहुर्मलम् ।
तासु बुद्बुद्फेनाभ्यां दृष्टं तद्धरति क्षिपन् ।।१०।।

पदच्छेद—

द्रव्यभूयः वरेण आपः तुरीयम् जगृहुः मलम् ।
तासु बुद्-बुद फेनाभ्याम् दृष्टम् तद्हरति क्षिपन् ।।

शब्दार्थ—

द्रव्य	३. खर्च करने पर भी	तासु	८. वही ब्रह्महत्या
भूयः	४. वृद्धि होती रहे	बुद्-बुद	१०. बुद्-बुद के रूप में
वरेण	२. यह वर प्राप्त करके कि	फेनाभ्याम्	९. फेन और
आपः	१. जल ने	दृष्टम्	११. दिखायी पड़ती है
तुरीयम्	६. चतुर्थांश	तद्	१२. उसे
जगृहुः	७. स्वीकार किया	हरति	१४. जल ग्रहण करते हैं
मलम्	५. ब्रह्महत्या का चौथा	क्षिपन् ।।	१३. हटा कर (मनुष्य)

श्लोकार्थ—जल ने यह वर प्राप्त करके कि खर्च करने पर भी वृद्धि होती रहे। ब्रह्महत्या का चौथा चतुर्थांश स्वीकार किया। वही ब्रह्महत्या फेन बुद्-बुद के रूप में दिखाई पड़ती है। उसे हटाकर मनुष्य जल ग्रहण करते हैं।

एकादशः श्लोकः

हतपुत्रस्ततस्त्वष्टा जुहावेन्द्राय शत्रवे ।
इन्द्रशत्रो विवर्धस्व मा चिरं जहि विद्विषम् ॥११॥

पदच्छेद—

हत पुत्रः ततः त्वष्टा जुहाव इन्द्राय शत्रवे ।
इन्द्रशत्रो विवर्धस्व मा चिरम् जहि विद्विषम् ॥

शब्दार्थ—

हत	२. मृत्यु के	शत्रवे ।	११. शत्रु उत्पन्न करने के लिये
पुत्रः	१. पुत्र की	इन्द्रशत्रो	५. हे इन्द्रशत्रो
ततः	३. पश्चात्	विवर्धस्व	६. तुम्हारी अभिवृद्धि हो
त्वष्टा	४. त्वष्टा	मा चिरम्	७. शीघ्र ही
जुहाव	१२. हवन करने लगे	जहि	९. मार डालो (इस प्रकार)
इन्द्राय	१०. इन्द्र का	विद्विषम् ॥	८. अपने शत्रु को

श्लोकार्थ—पुत्र की मृत्यु के पश्चात् त्वष्टा हे इन्द्रशत्रो ! शीघ्र ही अपनें शत्रु को मार डालो इस प्रकार इन्द्र का शत्रु उत्पन्न करनें के लिये हवन करने लगे।

द्वादशः श्लोकः

अथान्वाहार्यपचनादुत्थितो घोरदर्शनः ।
कृतान्त इव लोकानां युगान्तसमये यथा ॥१२॥

पदच्छेद—

अथ अन्वाहार्य पचनात् उत्थितः घोर दर्शनः ।
कृतान्तः इव लोकानाम् युगान्त समये यथा ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. इसके वाद	कृतान्तः	११. काल होता है (ठीक)
अन्वाहार्य	२. अन्वाहार्य	इव	१२. उसी के समान था
पचनात्	३. दक्षिणाग्नि से	लोकानाम्	१०. लोकों का नाश करने वाला
उत्थितः	६. प्रकट हुआ	युगान्त	८. प्रलय के
घोर	४. भयंकर	समये	९. समय में
दर्शनः ।	५. दीखने वाला (दैत्य)	यथा ॥	७. जैसे

श्लोकार्थ—इसके वाद अन्वाहार्य दक्षिणाग्नि से भयंकर दोखने वाला दैत्य प्रकट हुआ। जैसे प्रलय के समय लोकों का नाश करने वाला काल होता है, ठीक उसी के समान था।

त्रयोदशः श्लोकः

विष्वग्विवर्धमानं तमिषुमात्रं दिनेदिने ।
दग्धशैलप्रतीकाशं सन्ध्याभ्रानीकवर्चसम् ॥१३॥

पदच्छेद—

विष्वक् विवर्धमानम् तम् इषु मात्रम् दिने-दिने ।
दग्ध शैल प्रतीकाशम् सन्ध्या अभ्रअनीक वर्चसम् ॥

शब्दार्थ—

विष्वक्	३ शरीर के सब ओर	दग्ध	७. (वह) जले हुये
विवर्धमानम्	६. बढ़ जाया करता था	शैल	८. पहाड़ के समान
तम्	१. वह	प्रतीकाशम्	९. लम्बा-चौड़ा था
इषु	४ वाण के	सन्ध्या	१०. सन्ध्या कालिन
मात्रम्	५. बराबर	अभ्रअनीक	११. बादलों के समान
दिनें-दिनें ।	२. दिन-प्रतिदिन	वर्चसम् ॥	१२. दीप्ति निकलती थी

श्लोकार्थ—वह दिन, प्रतिदिन अपने शरीर के सब ओर वाण के बराबर बढ़ जाया करता था। वह जले हुये पहाड़ के समान लम्बा-चौड़ा था। उसमें से सन्ध्याकालीन बादलों के समान दीप्ति निकलती थी।

चतुर्दशः श्लोकः

तप्तताम्रशिखाश्मश्रुं मध्याह्नार्कोग्रलोचनम् ॥१४॥

पदच्छेद---

तप्त ताम्र शिखा श्मश्रुं मध्याह्न अर्क उग्रलोचनम् ॥

शब्दार्थ—

तप्त	३. तपे हुये	मध्याह्न	६. दोपहर के
ताम्र	४. तांबे के समान थीं	अर्क	७. सूर्य के समान
शिखा	१. उसके शिर के बाल	उग्र	८. प्रचण्ड थीं
श्मश्रुं	२. दाढ़ी-मूछें	लोचनम् ॥	५. आँखें

श्लोकार्थ—उसके शिर के बाल, दाढ़ी-मूछें तपे हुये तांबे के समान थीं और आँखें दोपहर के सूर्य के समान प्रचण्ड थीं।

पंचदशः श्लोकः

देदीप्यमाने त्रिशिखे शूल आरोप्य रोदसी ।
नृत्यन्तमुन्नदन्तं च चालयन्तं पदा महीम् ।।१५।।

पदच्छेद—

देदीप्यमानें त्रिशिखे शूले आरोप्य रोदसी।
नृत्यन्तम् उन्नदन्तम् च चालयन्तम् पदा महीम् ।।

शब्दार्थ—

देदीप्यमानें	१. चमकते हुये	**उन्नदन्तम्**	६. चिल्लाने लगता जा (तब)
त्रिशिखे	२. तीन नोकों वाले	**च**	९. और (ऐसा लगता था जैसे उसने)
शूले	३. त्रिशूल को लेकर	**चालयन्तम्**	८. कांपने लगती थी
आरोप्य	११. उठा रखा हो	**यदा**	४. जब-वह
रोदसी।	१०. अन्तरिक्ष को	**महीम् ।।**	७. पृथ्वी
नृत्यन्तम्	५. नाचने		

श्लोकार्थ---चमकते हुये तीन नोकों वाले त्रिशूल को लेकर जब वह नाचने और चिल्लाने लगता था तब पृथ्वी कांपने लगती थी और ऐसा लगता था जैसे उसने अन्तरिक्ष को उठा रखा हो।

षोडशः श्लोकः

दरीगम्भीरवक्त्रेण पिबता च नभस्तलम् ।
लिहता जिह्वयर्क्षाणि ग्रसता भुवनत्रयम् ।।१६।।

पदच्छेद—

दरी गम्भीर वक्त्रेण पिबता च नभः तलम्।
लिहता जिह्वया ऋक्षाणि ग्रसता भुवन त्रयम् ।।

शब्दार्थ—

दरी	१. कन्दरा के समान (उसका)	**लिहता**	१०. चाट जायेगा
गम्भीर	२. गम्भीर	**जिह्वया**	८. जीभ से
वक्त्रेण	३. मुख खुलता था	**ऋक्षाणि**	९. सम्पूर्ण नक्षत्रों को
पिबता	७. पी जायेगा (तथा)	**ग्रसता**	१३. निगल जायेगा
च	४. और तब जान पड़ता था	**भुवन**	१२. लोकों को
नभः	५. कि सम्पूर्ण आकाश	**त्रयम् ।।**	११. तीनों
तलात्।	६. तल को		

श्लोकार्थ---कन्दरा के समान उसका गम्भीर मुख खुलता था और तब जान पड़ता था कि सम्पूर्ण आकाश तल को पी जायेगा, जीभ से सम्पूर्ण नक्षत्रों को चांट जायेगा तथा तीनों लोकों को निगल जायेगा।

सप्तदशः श्लोकः

महता रौद्रदंष्ट्रेण जृम्भमाणं मुहुर्मुहुः ।
वित्रस्ता दुद्रुवुर्लोका वीक्ष्य सर्वे दिशो दश ॥१७॥

पदच्छेद—

महता रौद्र दंष्ट्रेण जृम्भमाणम् मुहुः-मुहुः ।
वित्रस्ताः दुद्रुवुः लोकाः वीक्ष्य सर्वे दिशो दश ॥

शब्दार्थ—

महता	२. बड़ी	दुद्रुवुः	१२. भागने लगे
रौद्र	३. विकराल	लोकाः	८. लोग
दंष्ट्रेण	४. दाढ़ों से	वीक्ष्य	६. देखकर
जृम्भमाणम्	५. जम्भाई लेता था (यह)	सर्वे	७. सभी
मुहुः-मुहुः ।	१. वह बार-बार	दिशः	११. दिशाओं में
वित्रस्ताः	९. डर गये (और)	दश ॥	१०. दसो

श्लोकार्थ---वह बार-बार बड़ी विकराल दाढ़ों से जम्भाई लेता था। यह देखकर सभी लोग डर गये। और दसो दिशाओं में भागने लगे।

अष्टादशः श्लोकः

येनावृता इमे लोकास्तमसा त्वाष्ट्रमूर्तिना ।
स वै वृत्र इति प्रोक्तः पापः परमदारुणः ॥१८॥

पदच्छेद—

येन आवृताः इमे लोकाः तमसा त्वाष्ट्र मूर्तिना ।
सः वै वृत्रः इति प्रोक्तः पापः परम दारुणः ॥

शब्दार्थ—

येन	७. जिससे	सः	९. वह
आवृताः	६. घेर लिया था	वै	८. निश्चित ही
इमे	४. इन सम्पूर्ण	वृत्र	१३. वृत्रासुर
लोकाः	५. लोकों को	इति प्रोक्तः	१४. ऐसा कहा गया
तमसा	१. तमो गुण	पापः	१२. पापी
त्वाष्ट्र	३. त्वष्टा के पुत्र ने	परम	१०. अत्यधिक
मूर्तिना ।	२. शरीरधारी	दारुणः ॥	११. क्रूर

श्लोकार्थ---तमो गुण शरीरधारी त्वष्टा के पुत्र ने इन सम्पूर्ण लोकों को घेर लिया था। जिससे निश्चित हा वह अत्यधिक क्रर, पापी, वृत्रासुर ऐसा कहा गया।

एकोनविंशः श्लोकः

तं निजघ्नुरभिद्रुत्य सगणा विबुधर्षभाः ।
स्वैः स्वैर्दिव्यास्त्रशस्त्रौघैः सोऽग्रसत् तानि कृत्स्नशः ॥१९॥

पदच्छेद—

तम् निजघ्नुः अभिद्रुत्य सगणाः विबुधऋषभाः ।
स्वैः स्वैः दिव्य अस्त्र शस्त्रौघैः सः अग्रसत् तानि कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

तम्	९. उसे	अस्त्र	६. अस्त्र
निजघ्नुः	१०. मारने लगे (किन्तु)	शस्त्र	७. शस्त्रों के
अभिद्रुत्य	३. एक साथ ही	ओघैः	८. समूह से
सगणाः	२. अपने गणों के साथ	सः	११. वह वृत्रासुर
विबुधऋषभाः ।	१. बड़े-बड़े देवता	अग्रसत्	१४. निगल गया
स्वैः स्वैः	४. अपने-अपने	तानि	१३. उन शस्त्रों को
दिव्य	५. दिव्य	कृत्स्नशः ॥	१२. सम्पूर्ण

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े देवता अपने गणों के साथ अपने-अपने दिव्य अस्त्र-शस्त्रों के समूह से मारने लगे किन्तु वह वृत्रासुर उन सम्पूर्ण अस्त्र शस्त्रों को निगल गया ।

विंशः श्लोकः

ततस्ते विस्मिताः सर्वे विषण्णा ग्रस्ततेजसः ।
प्रत्यञ्चमादिपुरुषमुपतस्थुः समाहिताः ॥२०॥

पदच्छेद—

ततः ते विस्मिताः सर्वे विषण्णाः ग्रस्त तेजसः ।
प्रत्यञ्चम् आदि पुरुषम् उपतस्थुः समाहिताः ॥

शब्दार्थ—

ततः	६. इसके वाद	तेजसाः	२. तेजों के
ते	७. वे	प्रत्यञ्चम्	९. हृदय में विराजमान
विस्मिताः	५. आश्चर्य चकित हो गये	आदि	१०. आदि
सर्वे	१. सभी देवता	पुरुषम्	११ पुरुष नारायण की
विषण्णाः	४. दुःखी तथा	उपतस्थुः	१२. शरण में गये
ग्रस्त	३. नष्ट हो जानें से	समाहिताः	८. एकत्र होकर

श्लोकार्थ—सभी देवता तेजों के नष्ट हो जाने से दुःखी तथा आश्चर्यचकित हो गये । इसके वाद वे एकत्र होकर हृदय में विराजमान आदि पुरुष नारायण की शरण में गये ।

एकविंशः श्लोकः

देवा ऊचुः वाय्वम्बराग्न्यप्क्षितयस्त्रिलोका ब्रह्मादयो ये वयमुद्विजन्तः ।
हराम यस्मै बलिमन्तकोऽसौ बिभेति यस्मादरणं ततो नः ॥२१॥

पदच्छेद—वायु अम्बर अग्नि अप्क्षितयः त्रिलोकाः ब्रह्म आदयः ये वयम् उद्विजन्तः ।
हराम यस्मै बलिम् अन्तकः असौ बिभेति यस्मात् अरणम् ततः नः ॥

शब्दार्थ—

वायु-अम्बर	१.	वायु-आकाश	यस्मै	९.	जिसे
अग्नि	२.	अग्नि	बलिम्	१०.	पूजा सामग्री
अप्क्षितयः	३.	जल-पृथ्वी	अन्तकः	१३.	काल
त्रिलोकाः	४.	तीनों लोक	असौ	१२.	वह
ब्रह्म-आदयः	५.	ब्रह्मा आदि	बिभेति	१५.	डरता रहता है
ये	६.	उनके अधिकारी	यस्मात्	१४.	जिस परमात्मा से
वयम्	७.	हम लोग	अरणम्	१८.	रक्षक हों
उद्विजन्तः ।	८.	भयभीत होते हुये	ततः	१६.	वही (भगवान्)
हराम	११.	भेंट देते हैं	नः ॥	१७.	हमारे

श्लोकार्थ—वायु, आकाश, अग्नि, जल, पृथ्वी, तीनों लोक, ब्रह्मा आदि उनके अधिकारी हम लोग भयभीत होते हुये जिसे पूजा सामग्री भेंट देते हैं वह काल जिस परमात्मा से डरता रहता है, वही भगवान् हमारे रक्षक हों ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अविस्मितं तं परिपूर्णकामं स्वेनैव लाभेन समं प्रशान्तम् ।
विनोपसर्पत्यपरं हि बालिशः श्वलाङ्गुलेनातितितर्ति सिन्धुम् ॥२२॥

पदच्छेद— अविस्मितम् तम् परिपूर्ण कामम् स्वेन एव लाभेन समम् प्रशान्तम् ।
विना उपसर्पति अपरम् हि बालिशः श्वलाङ्गुलेन अतितितर्ति सिन्धुम् ॥

शब्दार्थ—

अविस्मितम्	२.	विस्मित नहीं होते	उपसर्पति	१२.	शरण लेता है (वह)
तम्	१.	आप कभी	अपरम्	११.	दूसरे की
परिपूर्णकामम्	५.	सर्वथा पूर्णकाम	हि	९.	जो
स्वेन एव	३.	अपने स्वरूप के ही	बालिशः	१०.	मूर्ख
लाभेन	४.	साक्षात्कार से	श्व	१३.	कुत्ते की
समम्	६.	सम एवम्	लाङ्गुलेन	१४.	पूंछ पकड़ कर
प्रशान्तम् ।	७.	शान्त हैं	अतितितर्ति	१६.	पार करना चाहता है
विना	८.	आपको छोड़कर	सिन्धुम् ॥	१५.	समुद्र को

श्लोकार्थ—आप कभी विस्मित नहीं होते। अपने स्वरूप के ही साक्षात्कार से सर्वथा पूर्णकाम, सम एवम् शान्त हैं। आपको छोड़कर जो मूर्ख दूसरे की शरण लेता है, वह कुत्ते की पूंछ पकड़कर समुद्र को पार करना चाहता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यस्योरुशृङ्गे जगतीं स्वनावं मनुर्यथाऽऽबध्य ततार दुर्गम् ।
स एव नस्त्वाष्ट्रभयाद् दुरन्तात् त्राताऽऽश्रितान् वारिचरोऽपि नूनम् ।।२३।।

पदच्छेद—यस्य ऊरुशृङ्गे जगतीम् स्वनावम् मनुः यथा आबध्य ततार दुर्गम् ।
सः एव नः त्वाष्ट्र भयात् दुरन्तात् त्राता आश्रितान् वारिचरः अपि नूनम् ।।

शब्दार्थ—

यस्य	३.	जिसके	सः एव	११.	वे ही
ऊरु	४.	विशाल	नः	१४.	हम
शृङ्गे	५.	सींग में	त्वाष्ट्र	१७.	वृत्रासुर के
जगतीम्	६.	पृथ्वीरूप	भयात्	१६.	भय से
स्वनावम्	७.	अपनी नौका को	दुरन्तात्	१८.	दुस्तर
मनुः	२.	वैवस्वत मनु	त्राता	२०.	रक्षा करेंगे
यथा	१.	जिस प्रकार	आश्रितान्	१५.	शरणागतों को
आबध्य	८.	बाँधकर	वारिचरः	१२.	मत्स्य भगवान्
ततार	१०.	पार कर गये थे	अपि	१६.	भी
दुर्गम् ।	९.	प्रलयकालीन संकट को	नूनम् ।।	१३.	अवश्य ही

श्लोकार्थ—जिस प्रकार वैवस्वत मनु जिसके विशाल सींग में पृथ्वीरूप अपनी नौका बाँधकर प्रलय कालीन संकट को पार कर गये थे, वे ही मत्स्य भगवान् अवश्य ही हम शरणागतों को भी वृत्रासुर के दुस्तर भय से रक्षा करेंगे ।।

चतुर्विंशः श्लोकः

पुरा स्वयम्भूरपि संयमाम्भस्युदीर्णवातोर्मिरवैः कराले ।
एकोऽरविन्दात् पतितस्ततार तस्माद् भयाद् येन स नोऽस्तु पारः ।।२४।।

पदच्छेद—पुरा स्वयम्भूः अपि संयम अम्भसि उदीर्ण वात ऊर्मि रवैः कराले ।
एकः अरविन्दात् पतितः ततार तस्माद् भयाद् येन सः नः अस्तु पारः ।।

शब्दार्थ—

पुरा	१.	प्राचीनकाल में	एकः अरविन्दात्	८.	भगवान् की नाभिकमल से
स्वयम्भूः अपि	७.	ब्रह्मा जी भी	पतितः	१२.	गिर गये थे
संयम	१०.	प्रलय कालीन	ततार	१५.	बच गये
अम्भसि	११.	जल में	तस्मात्	१३.	तथापि
उदीर्ण	४.	उठी हुई	भयात्	९.	भयानक
वातः	३.	पवन से	येन	१४.	जिनकी कृपा से
ऊर्मि	५.	तरङ्गों की	सः नः	१६.	वे ही भगवान् हम लोगों को
रवैः	६.	गर्जना के कारण	अस्तु	१८.	करें
कराले ।	२.	प्रचण्ड	पारः ।।	१७.	पार

श्लोकार्थ—प्राचीनकाल में प्रचण्ड पवन से उठी हुई तरङ्गों की गर्जना के कारण ब्रह्मा जी भी भगवान् के नाभि-कमल से भयानक प्रलय कालीन जल में गिर गये थे । तथापि जिनकी कृपा से बच गये, वे ही भगवान् हम लोगों को पार करें ।।

पञ्चविंशः श्लोकः

य एक ईशो निजमायया नः ससर्ज येनानुसृजाम विश्वम् ।
वयं न यस्यापि पुरः समीहतः पश्याम लिङ्गं पृथगीशमानिनः ॥२५॥

पदच्छेद— यः एकः ईशः निजमायया नः ससर्ज येन अनुसृजाम विश्वम् ।
वयम् न यस्य अपि पुरः समीहतः पश्यामः लिङ्गम् पृथक् ईश मानिनः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	वयम् न	१४.	हम लोग नहीं
एकः	३.	अकेले	यस्य	१५.	उनके स्वरूप को
ईशः	२.	ईश्वर ने	अपि	१०.	ही
निज मायया	४.	अपनी माया से	पुरः	९.	हमारे सामने
नः ससर्ज	५.	हमारी रचना की	समीहतः	११.	चेष्टा कर रहे हैं (फिर भी)
येन	६.	जिसकी कृपा से (हम लोग)	पश्यामः	१६.	देख पाते हैं
अनुसृजाम	८.	सञ्चालन करते हैं	लिङ्गम् पृथक्	१२.	अपने शरीर को अलग से
विश्वम् ।	७.	सृष्टि का	ईश मानिनः ॥	१३.	ईश्वर मानने के कारण

श्लोकार्थ—जो ईश्वर अकेले ही अपनी माया से हमारी रचना की। जिसकी कृपा से हम लोग सृष्टि का संचालन करते हैं। वे भगवान् हमारे सामने ही चेष्टाकर रहे हैं। फिर भी अपने शरीर को अलग से ईश्वर मानने के कारण हम लोग उनके स्वरूप को नहीं देख पाते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

यो नः सपत्नैर्भृशमर्द्यमानान् देवर्षितिर्यङ्नृषु नित्य एव ।
कृतावतारस्तनुभिः स्वमायया कृत्वाऽऽत्मसात् पाति युगे युगे च ॥२६॥

पदच्छेद— यः नः सपत्नैः भृशम् अर्द्यमानान् देवर्षि तिर्यक् नृषु नित्य एव ।
कृत अवतारः तनुभिः स्वमायया कृत्वा आत्मसात् पाति युगे युगे च ॥

शब्दार्थ—

यः नः	१.	वे प्रभु हम	कृत	१५.	लेते हैं
सपत्नैः	२.	देवों को शत्रुओं से	अवतारः	१४.	अवतार
भृशम्	३.	अत्यधिक	तनुभिः	१३.	योनियों में
अर्द्यमानान्	४.	पीडित देखकर	स्वमायया	७.	अपनी माया का
देवर्षि	१०.	देवता ऋषि	कृत्वा	९.	लेकर
तिर्यक्	११.	पशु पक्षी	आत्मसात्	८.	आश्रय
नृषु	१२.	मनुष्यादि	पाति	१८.	रक्षा करते हैं
नित्य	५.	निर्विकार होते हुये	युगे-युगे	१७.	युग युग में
एव ।	६.	भी	च ॥	१६.	और

श्लोकार्थ—वे प्रभु हम देवों को शत्रुओं से अत्यधिक पीडित देखकर निर्विकार होते हुये भी अपनी माया का आश्रय लेकर देवता, ऋषि, पशु, पक्षी, मनुष्यादि योनियों में अवतार लेते हैं, और युग युग में रक्षा करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तमेव देवं वयमात्मदैवतं परं प्रधानं पुरुषं विश्वमन्यम् ।
व्रजाम सर्वे शरणं शरण्यं स्वानां स नो धास्यति शं महात्मा ।।२७।।

पदच्छेद— तम् एव देवम् वयम् आत्म दैवतम् परम् प्रधानम् पुरुषम् विश्वम् अन्यम् ।
व्रजाम सर्वे शरणम् शरण्यम् स्वानाम् स नः धास्यति शम् महात्मा ।।

शब्दार्थ—

तम् एव	१.	वे ही	**व्रजाम**	१३.	जाते हैं
देवम्	५.	देव हैं	**सर्वे**	१०.	हम सभी
वयम् आत्म	२.	हम लोगों की आत्मा	**शरणम्**	१२.	शरण में
दैवतम्	४.	आराध्य	**शरण्यम्**	११.	शरणागत वत्सल भगवान् की
परम्	३.	परम	**स्वानाम्**	१६.	निज जन जानकर
प्रधानम्	६.	प्रधान	**सः नः**	१५.	वह श्री हरि हम देवताओं का
पुरुषम्	७.	पुरुष रूप	**धास्यति**	१८.	करेंगे
विश्वम्	८.	विश्व के कारण और	**शम्**	१७.	कल्याण
अन्यम् ।	९.	पृथक् भी हैं	**महात्मा ।।**	१४.	उदार शिरोमणि

श्लोकार्थ—वे ही हम लोगों की आत्मा परम आराध्य देव हैं । प्रधान पुरुषरूप विश्व के कारण और पृथक् भी हैं । हम सभी शरणागत वत्सल भगवान् की शरण में जाते हैं । उदार शिरोमणि वह श्रीहरि हम देवताओं को निज जन जानकर कल्याण करेंगे ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

इति तेषां महाराज सुराणामुपतिष्ठताम् ।
प्रतीच्यां दिश्यभूदाविः शङ्खचक्रगदाधरः ।।२८।।

पदच्छेद— इति तेषाम् महाराज सुराणाम् उपतिष्ठताम् ।
प्रतीच्याम् दिशि अभूत् आविः शङ्ख चक्र गदाधरः ।।

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	**दिशि**	१०.	दिशा में
तेषाम्	४.	उन भगवान् की	**अभूत्**	१२.	हुए
महाराज	१.	हे महाराज परीक्षित् !	**आविः**	११.	प्रकट
सुराणाम्	२.	जब देवताओं ने	**शङ्ख**	६.	शंख
उपतिष्ठताम्	५.	स्तुति की (तब वे)	**चक्र**	७.	चक्र
प्रतीच्याम् ।	९.	पश्चिम	**गदाधरः ।।**	८.	गदाधारी भगवान्

श्लोकार्थ—हे महाराज परीक्षित् ! जब देवताओं ने इस प्रकार उन भगवान् की स्तुति की । तब वे शंख, चक्र, गदाधारी भगवान् पश्चिम दिशा में प्रकट हुये ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

आत्मतुल्यैः षोडशभिर्विना श्रीवत्सकौस्तुभौ ।
पर्युपासितमुन्निद्रशरदम्बुरुहेक्षणम् ॥२९॥

पदच्छेद— आत्म तुल्यैः षोडशभिः बिना श्रीवत्स कौस्तुभैः ।
पर्युपासितम् उन्निद्र शरद् अम्बुरुह ईक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

आत्म	१.	भगवान् के ही	पर्युपासितम्	४.	उनकी सेवा में लगे हुये थे
तुल्यैः	२.	समान	उन्निद्र	११.	खिले हुये थे
षोडशभिः	३.	सोलह पार्षद	शरद्	९.	शरत्कालीन
विना	७.	रहित थे	अम्बुरुह	१०.	कमल के समान
श्रीवत्स	३.	वे श्रीवत्स चिह्न	ईक्षणम् ॥	८.	भगवान् के नेत्र
कौस्तुभौ ।	६.	कौस्तुभमणि से			

श्लोकार्थ—भगवान् के ही समान सोलह पार्षद उनकी सेवा में लगे हुये थे । वे श्रीवत्स चिह्न और कौस्तुभ मणि से रहित थे । भगवान् के नेत्र शरत्कालीन कमल के समान खिले थे ॥

त्रिंशः श्लोकः

दृष्ट्वा तमवनौ सर्व ईक्षणाह्लादविक्लवाः ।
दण्डवत् पतिता राजञ्छनैरुत्थाय तुष्टुवुः ॥३०॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा तम् अवनौ सर्वे ईक्षण आह्लाद विक्लवाः ।
दण्डवत् पतिताः राजन् शनैः उत्थाय तुष्टुवुः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	३.	देखकर	दण्डवत्	१०.	दण्डवत् प्रणाम किया फिर
तम्	२.	भगवान् को	पतिताः	९.	गिर कर (लोट कर)
अवनौ	८.	पृथ्वी पर	राजन्	१.	हे परीक्षित् !
सर्वे	४.	सभी देवता	शनैः	११.	धीरे से
ईक्षण	५.	दर्शन के	उत्थाय	१२.	उठकर
आह्लाद	६.	आनन्द से	तुष्टुवुः ॥	१३.	स्तुति करने लगे
विक्लवाः ।	७.	विह्वल हो गये			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! भगवान् को देखकर सभी देवता दर्शन के आनन्द से विह्वल हो गये तथा पृथ्वी पर लोट कर दण्डवत् प्रणाम किया । फिर धीरे से उठकर स्तुति करने लगे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

नमस्ते यज्ञवीर्याय वयसे उत ते नमः ।
नमस्ते ह्यस्तचक्राय नमः सुपुरुहूतये ॥३१॥

पदच्छेद— नमस्ते यज्ञ वीर्याय वयसे उत ते नमः ।
नमः ते हि अस्त चक्राय नमः सुपुरुहूतये ॥

शब्दार्थ—

नमस्ते	१.	आपको नमस्कार है	नमः	८.	नमस्कार है
यज्ञ वीर्याय	२.	यज्ञ शक्ति स्वरूप	ते हि	७.	आपको
वयसे	६.	काल स्वरूप	अस्त	१०.	प्रयोग करने वाले तथा
उत	५.	तथा	चक्राय	९.	चक्र का
ते	३.	आपको	नमः	१२.	नमस्कार है
नमः ।	४.	नमस्कार है	सुपुरुहूतये ॥	११.	असीमित नाम वाले आपको

श्लोकार्थ—आपको नमस्कार है। यज्ञ शक्ति स्वरूप आपको नमस्कार है। काल स्वरूप आपको नमस्कार है। चक्र का प्रयोग करने वाले तथा असीमित नाम वाले आपको नमस्कार है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यत् ते गतीनां तिसृणामीशितुः परमं पदम् ।
नार्वाचीनो विसर्गस्य धातर्वेदितुमर्हति ॥३२॥

पदच्छेद— यत् ते गतीनाम् तिसृणाम् ईशितुः परमम् पदम् ।
न अर्वाचीनः विसर्गस्य धातः वेदितुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

यत्	३.	जो	न	१०.	नहीं
ते	५.	उसको	अर्वाचीनः	९.	आधुनिक प्राणी
गतीनाम्	४.	गतियां हैं	विसर्गस्य	८.	इस कार्य रूप सृष्टि को
तिसृणाम्	२.	सत्त्व, रज, तम (तीनों गुणों के अनुसार)	धातः	१.	हे विधाता !
ईशितुः	६.	आप है	वेदितुम्	११.	जान
परमम् पदम् ।	७.	आपके परम पद	अर्हति ॥	१२.	सकता है

श्लोकार्थ—हे विधाता ! सत्त्व, रज, तम, तीनों गुणों के अनुसार जो गतियाँ हैं, उनको बनाने वाले आप हैं। आपके परम पद इस कार्य रूप सृष्टि को आधुनिक प्राणी नहीं जान सकता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ॐ नमस्तेऽस्तु भगवन् नारायण वासुदेवादिपुरुष महापुरुष महानुभाव परममङ्गल परमकल्याण परमकारुणिक केवल जगदाधार लोकैकनाथ सर्वेश्वर लक्ष्मीनाथ परमहंस-परिव्राजकैः परमेणात्मयोगसमाधिना परिभावितपरिस्फुटपारमहंस्यधर्मेणोद्घाटिततमःकपाटद्वारे चित्तेऽपावृत आत्मलोके स्वयमुपलब्धनिजसुखानुभवो भवान् ॥३३॥

पदच्छेद—ॐ नमः ते अस्तु भगवन् नारायण वासुदेव आदि पुरुष महापुरुष महानुभाव परममङ्गल परमकल्याण परमकारुणिक केवल जगदाधार लोक एक नाथ सर्वेश्वर लक्ष्मीनाथ परमहंस परिव्राजकैः परमेण आत्मयोग समाधिना परिभावित परिस्फुट पारमहंस्य धर्मेण उद्घाटित तमः कपाटद्वारे चित्ते अपावृते आत्मलोके स्वयम् उपलब्ध निज सुख अनुभवः भवान् ॥

शब्दार्थ—

ॐ	३१. ॐकार स्वरूप	परमेण	१४. अत्यधिक
नमः	३३. नमस्कार	आत्मयोग	१५. आत्म संयमरूप
ते	३२. आपको	समाधिना	१६. परम समाधि से
अस्तु	३४. है	परिभावित	१७. भलीभाँति (चिन्तन करते हैं तब)
भगवन् नारायण	१. हे भगवन् ! आप नारायण	परिस्फुट	२०. उदय होता है
वासुदेव	२. वासुदेव	पारमहंस्य	१८. परमहंसों के
आदिपुरुष	३. आदि पुरुष	धर्मेण	१९. धर्म का
महापुरुष	४. महापुरुष	उद्घाटित	२४. खुल जाते हैं
महानुभाव	५. महानुभाव	तमः	२२. अज्ञानरूप
परममङ्गल	६. परममंगल	कपाटद्वारे	२३. किवाड़ दरवाजे
परमकल्याण	७. परमकल्याणरूप	चित्ते	२१. (उनके) हृदय के
परम कारुणिक	८. परमकारुणिकरूप	अपावृत	२७. विना किसी आवरण के
केवल जगदाधार	९. सम्पूर्ण जगत् के आधार	आत्मलोके	२५. उनके आत्मलोक में आप
लोक एक नाथ	१०. संसार के एक स्वामी	स्वयम्	२६. आत्मानन्दरूप से
सर्वेश्वरलक्ष्मीनाथ	११. सर्वेश्वर तथा लक्ष्मीपति	उपलब्ध	२८. प्रकट हो जाते हैं (और वे)
परमहंस	१२. परमहंस	निजसुख	३०. आत्मसुख को (प्राप्त हो जाते हैं)
परिव्राजकैः ।	१३. परिव्राजक महात्मा जब	अनुभवः भवान् ॥	२९. आपका अनुभव करके

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप नारायण, वासुदेव, आदि पुरुष, महापुरुष, महानुभाव, परममङ्गल, परमकल्याणरूप, परमकारुणिक स्वरूप, सम्पूर्ण जगत् के आधार, संसार के एक स्वामी, सर्वेश्वर तथा लक्ष्मीपति हैं। परमहंस, परिव्राजक महात्मा जब अत्यधिक आत्मसंयमरूप, परम समाधि से भलीभाँति आपका चिन्तन करते हैं। उनके हृदय के अज्ञानरूप किवाड़ दरवाजे खुल जाते हैं। उनके आत्मलोक में आप आत्मानन्दरूप से विना किसी आवरण के प्रकट हो जाते हैं। और वे आपका अनुभव करके आत्मसुख को प्राप्त हो जाते हैं। ॐकार स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

दुरवबोध इव तवायं विहारयोगो यदशरणोऽशरीर इदमनवेक्षितास्मत्समवाय आत्मनैवा विक्रियमाणेन सगुणमगुणः सृजसि पासि हरसि ॥३४॥

पदच्छेद—दुरवबोध इव तव अयम् विहार योगो यत् अशरणः अशरीरः इदम् अनवेक्षित अस्मत् समवाय आत्मना एव अविक्रियमाणेन सगुणम् अगुणः सृजसि पासि हरसि ॥

शब्दार्थ—

दुरवबोध	४.	कठिनाई से जानने योग्य है	अनवेक्षित	६.	अपेक्षा न करके
इव	३.	बड़ी ही	अस्मत् समवाय	८.	हम लोगों के सहयोग की
तव अयम्	१.	आपकी इस	आत्मनः एव	१२.	स्वयम् ही
विहार योगः	२.	लीला का रहस्य	अविक्रियमाणेन	११.	निर्विकार होने पर भी
यत्	५.	क्योंकि (आप)	सगुणम्	१४.	सगुण जगत् की
अशरणः	६.	विना किसी आश्रय के	अगुणः	१०.	निर्गुण
अशरीर	७.	प्राकृतिक शरीर के	सृजसि पासि	१५.	सृष्टि रक्षा और
इदम् ।	१३.	इस	हरसि ॥	१६.	संहार करते हैं

श्लोकार्थ—आपकी इस लीला का रहस्य बड़ी ही कठिनाई से जानने योग्य है। क्योंकि आप विना किसी आश्रय के प्राकृतिक शरीर के हमलोगों के सहयोग की अपेक्षा न करके निर्गुण, निर्विकार होने पर भी स्वयम् ही इस सगुण जगत् की सृष्टि, रक्षा और संहार करते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अथ तत्र भवान् किं देवदत्तवदिह गुणविसर्गपतितः पारतन्त्र्येण स्वकृतकुशलाकुशलं फलमुपाददात्याहोस्विदात्माराम उपशमशीलः समञ्जसदर्शन उदास्त इति ह वाव न विदामः ॥३५॥

पदच्छेद—अथ तत्र भवान् किम् एव देवदत्त वत् इह गुणविसर्ग पतितः पारतन्त्र्येण स्वकृत कुशल अकुशलम् फलम् उपाददाति अहोस्वित् आत्मारामः उपशमशीलः समञ्जसदर्शनः उदास्ते इति ह वाव न विदामः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तथा हे भगवन् ! हम लोग	फलम् उपाददाति	१३.	फल भोगते हैं
तत्रभवान्	५.	वहाँ सृष्टि कर्म में आप	अहोस्वित्	१४.	अथवा आप
किम्	४.	क्या	आत्माराम	१५.	आत्माराम
देवदत्तवत्	६.	देवदत्त के समान	उपशमशीलः	१६.	शान्त स्वभाव (और)
इह	८.	इस जगत् में	समञ्जस	१७.	उदासीन रहते हैं
गुणविसर्ग	७.	गुणों के कार्यरूप में	दर्शनः	२०.	देखते हैं
पतितः	६.	प्रकट हो जाते हैं (तथा)	उदास्ते	१६.	सबको समान रूप में
पारतन्त्र्येण	१०.	कर्मों के अधीश्वर होकर	इति	२.	यह बात भी
स्वकृतकुशल	११.	अपने किये हुये अच्छे	ह वाव	१८.	तथा
अकुशलम् ।	१२.	बुरे कर्मों का	न विदामः ॥	३.	नहीं जान पाते हैं

श्लोकार्थ—तथा हे भगवन् ! हम लोग यह बात भी नहीं जानते हैं। क्या वहाँ सृष्टि कर्म में आप देवदत्त के समान गुणों के कार्यरूप से इस जगत् में प्रकट हो जाते हैं। तथा कर्मों के अधीश्वर होकर अपने किये हुये अच्छे बुरे कर्मों का फल भोगते हैं। अथवा आप आत्माराम शान्त स्वभाव और उदासीन रहते हैं तथा सबको समानरूप में देखते हैं ॥

षष्टत्रिंशः श्लोकः

न विरोध उभयं भगवत्यपरिगणितगुणगणे ईश्वरेऽनवगाह्यमाहात्म्येऽर्वाचीन-विकल्पवितर्कविचारप्रमाणाभासकुतर्कशास्त्रकलिलान्तःकरणाश्रयदुरवग्रहवादिनां विवादानवसर उपरतसमस्तमायामये केवल एवात्ममायामन्तर्धाय को न्वर्थो दुर्घट इव भवति स्वरूपद्वयाभावात् ॥३६॥

पदच्छेद—नहि विरोध उभयम् भगवति अपरिगणित गुणगणे ईश्वरे अनवगाह्य माहात्म्ये अर्वाचीन विकल्प वितर्क विचार प्रमाण आभास कुतर्क शास्त्र कलिल अन्तः करण आश्रय दुरवग्रह वादिनाम् विवाद अनवसर उपरत समस्त मायामये केवल एव आत्म मायाम् अन्तर्धाय कः नु अर्थः दुर्घटः इव भवति स्वरूप द्वय अभावात् ॥

शब्दार्थ—

न हि	३.	नहीं है (आप)	अन्तः करण	१८.	अपने हृदय को
विरोधः	२.	विरोध	आश्रय	१७.	सहारा लेकर
उभयम्	१.	दोनों बातें होने पर भी आपमें	दुरवग्रह	२०.	दुराग्रही
भगवति	४.	स्वयम् भगवान् हैं	वादिनाम्	२१.	हो जाते हैं (उनके)
अपरिगणित	६.	अगणित हैं (आप)	विवाद	२२.	विवाद के लिये आपके पास
गुणगणे	५.	आपके गुणों का समूह	अनवसर	२३.	अवसर ही नहीं है
ईश्वरे	७.	सर्वशक्तिमान् हैं	उपरत	२६.	पदार्थों से परे
अनवगाह्य	९.	अगाध है	समस्त	२४.	सम्पूर्ण
माहात्म्ये	८.	आपकी महिमा	मायामये	२५.	मायामय
अर्वाचीन	१०.	आधुनिक लोग	केवल एव	२७.	केवल आप ही हैं
विकल्प	११.	अनेक प्रकार के विकल्प	आत्ममायाम्	२८.	आप अपनी माया को
वितर्कविचार	१२.	तर्क वितर्क विचारों वाले	अन्तर्धाय	२९.	छिपा लेते हैं
प्रमाण	१४.	प्रमाण	कः नु	३०.	कौन निश्चित ही (आप)
आभास	१३.	झूठे	अर्थः	३२.	ऐसी बात है जो आपमें
कुतर्क	१५.	कुतर्क पूर्ण	दुर्घट इव	३१.	महापुरुषों के समान
शास्त्र	१६.	शास्त्रों का	भवति	३३.	रहते हैं
कलिल	१९.	दूषित (कर लेते हैं अतः वे)	स्वरूप	३५.	स्वरूपों के
			द्वय	३४.	दोनों
			अभावात् ॥	३६.	अभाव से (उदासीन)

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! दोनों बातें होने पर भी आपमें विरोध नहीं हैं। आप स्वयम् भगवान् हैं। आपके गुणों का समूह अगणित है। आप सर्वशक्तिमान् हैं। आपकी महिमा अगाध है। आधुनिक लोग अनेक प्रकार के विकल्प और तर्क-वितर्क विचारों वाले झूठे प्रमाण, कुतर्क पूर्ण शास्त्रों का सहारा लेकर अपने हृदय को दूषित कर लेते हैं। अतः वे दुराग्रही हो जाते हैं। उनके विवाद के लिये आपके पास अवसर ही नहीं है। सम्पूर्ण मायामय पदार्थों से परे केवल आप ही हैं। आप अपनी माया को छिपा लेते हैं। कौन ऐसी बात है जो आपमें नहीं है। निश्चित ही आप महापुरुषों के समान दोनों स्वरूपों के अभाव में उदासीन रहते हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

समविषममतीनां मतमनुसरसि यथा रज्जुखण्डः सर्पादिधियाम् ।।३७।।

पदच्छेद— सम विषम मतीनाम् मतम् अनुसरसि ।
यथा रज्जु खण्डः सर्पादि धियाम् ।।

शब्दार्थ—

सम	१.	हे भगवन् ! आप सम	**यथा**	६.	जैसे
विषम	२.	विषम	**रज्जु**	७.	रस्सी के
मतीनाम्	३.	बुद्धि वालों के लिये अनेक रूपों में दिखाई पड़ते है	**खण्डः**	८.	टुकड़े में
मतम्	४.	सभी की बुद्धि का	**सर्पादि**	९.	सर्पादि की
अनुसरसि ।	५.	अनुसरण करते है	**धियाम् ।।**	१०.	बुद्धि हो जाती है

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप सम, विषम बुद्धि वालों के लिये अनेक रूपों में दिखाई पड़ते हैं। सभी की बुद्धि का अनुसरण करते हैं। जैसे रस्सी के टुकड़े में सर्प आदि की बुद्धि हो जाती है ।।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

स एव हि पुनः सर्ववस्तुनि वस्तुस्वरूपः सर्वेश्वरः सकलजगत्कारणकारणभूतः
सर्वप्रत्यगात्मत्वात् सर्वगुणाभासोपलक्षित एक एव पर्यवशेषितः ।।३८।।

पदच्छेद—सः एव हि पुनः सर्व वस्तुनि वस्तु स्वरूपः सर्वेश्वरः सकल जगत्कारण कारणभूतः ।
सर्व प्रत्यक् आत्मत्वात् सर्व गुण आभास उपलक्षितः एकः एव पर्यवशेषितः ।।

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	**कारणभूतः**	८.	प्रकृति आदि के भी कारण
एव हि	२.	ही	**सर्व प्रत्यक्**	१०.	सबके अन्तर्यामी (और)
पुनः	३.	फिर से	**आत्मत्वात्**	११.	अन्तरात्मा हैं (जो)
सर्ववस्तुनि	४.	समस्त वस्तुओं में	**सर्वगुण**	१२.	सभी गुणों की
वस्तु स्वरूपः	५.	वस्तु स्वरूप से है	**आभासः**	१३.	प्रतीति
सर्वेश्वरः	९.	सभी के स्वामी हैं	**उपलक्षित**	१५.	होने पर भी
सकल जगत्	६.	सम्पूर्ण संसार के	**एक एव**	१४.	एक आप ही
कारण ।	७.	कारण, ब्रह्मा	**पर्यवशेषितः ।।**	१६.	शेष रह जाते हैं

श्लोकार्थ—वह ही फिर से समस्त वस्तुओं में वस्तु स्वरूप से है। सम्पूर्ण संसार के कारण ब्रह्मा प्रकृति आदि के भी कारण और सभी के स्वामी हैं। सबके अन्तर्यामी और अन्तरात्मा हैं। सभी गुणों की प्रतीति होने पर भी अन्त में एक आप ही शेष रह जाते हैं ।।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अथ ह वाव तव महिमामृतरससमुद्रविप्रुषा सकृदवलीढया स्वमनसि निष्यन्दमानानवरतसुखेन विस्मारितदृष्टश्रुतविषयसुखलेशाभासाः परमभागवता एकान्तिनो भगवति सर्वभूतप्रियसुहृदि सर्वात्मनि नितरां निरन्तरं निर्वृतमनसः कथमु ह वा एते मधुमथन पुनः स्वार्थकुशला ह्यात्मप्रियसुहृदः साधवस्त्वच्चरणाम्बुजानुसेवां विसृजन्ति न यत्र पुनरयं संसारपर्यावर्तः ।।३९।।

पदच्छेद—**अथ ह वाव तव महिमा अमृत रस समुद्र विप्रुषा सकृत् अवलीढया स्वमनसि निष्यन्दमान अनवरत सुखेन विस्मारित दृष्टश्रुत विषय सुखलेश आभासाः परमभागवताः एकान्तिनः भगवति सर्वभूत प्रियसुहृदि सर्वात्मनि नितराम् निरन्तरं निर्वृत मनसः कथम् उ ह वा एते मधु मथन पुनः स्वार्थ कुशलाः हि आत्मप्रिय सुहृदः साधवः त्वत् चरण अम्बुज अनुसेवाम् विसृजन्ति न यत्र पुनः अयम् संसार पर्यावर्तः ।।**

शब्दार्थ—

अथ ह वाव	१.	तदनन्तर पुनः	**सर्वात्मनि**	१६.	सभी की आत्मा
तव महिमा	२.	आपकी महिमा	**नितराम्**	२०.	अत्यधिकरूप से
अमृतरस	३.	अमृतमय रस का	**निरन्तरं निर्वृत**	२२.	हमेशा लगाये रखते हैं
समुद्र	४.	अनन्त समुद्र है (इसकी)	**मनसः**	२१.	अपने मन को
विप्रुषा सकृत्	५.	एकबूंद का एक बार भी	**कथम् उ ह**	२९.	भला कैसे
अवलीढया	६.	स्वाद चख लेने से	**वा**	३४.	अथवा
स्वमनसि	७.	अपने हृदय में	**एते**	२८.	वे
निष्यन्दमान	९.	धारा बहने लगती है (जिसने)	**मधुमथन**	२३.	हे मधुसूदन ! भगवान्
अनवरतसुखेन	८.	निरन्तर परम सुख की	**पुनः स्वार्थ**	२४.	फिर स्वार्थ में
बिस्मारित	१३.	भुला दिया है	**कुशलाः हि**	२५.	कुशल
दृष्टश्रुत	१२.	देखा सुना है अथवा	**आत्मप्रिय**	२६.	आपके प्यारे
विषय सुख	१०.	विषय सुखों को	**सुहृदः साधवः**	२७.	मित्र भक्त जन
लेशआभासाः	११.	लेशमात्र भी अनुभव किया है	**त्वत्**	३०.	आपके
परमभागवताः	१७.	परमैश्वर्य निधि	**चरण अम्बुज**	३१.	चरण कमलों का
एकान्तिनः	१८.	एकान्तवासी	**अनुसेवाम्**	३२.	सेवन
भगवति	१९.	भगवान् में	**विसृजन्ति**	३३.	त्याग सकते हैं
सर्वभूत	१४.	सम्पूर्ण प्राणियों के	**न यत्र पुनः अयम्**	३४.	जिससे पुनः इस
प्रियसुहृदि	१५.	प्रियहितैषी	**संसारपर्यावर्तः ।।**	३५.	संसार चक्र में नहीं आना पड़े

श्लोकार्थ—तदनन्तर पुनः आपकी महिमा अमृतमय रस का अनन्त समुद्र है। इसकी एकबूंद का एक बार भी स्वाद चख लेने से अपने हृदय में निरन्तर परमसुख की धारा बहने लगती है। जिसने विषय सुखों को लेशमात्र भी अनुभव किया है, देखा और सुना है अथवा भुला दिया है। सम्पूर्ण प्राणियों के प्रियहितैषी सभी की आत्मा, परमऐश्वर्य निधि, एकान्तवासी, भगवान् में अत्यधिकरूप से अपने मन को हमेशा लगाये रखते हैं। मधुसूदन भगवान् ! फिर स्वार्थ में कुशल आपके प्यारे मित्र भक्त जन वे भला कैसे आपके चरण-कमलों का सेवन त्याग सकते हैं, जिससे पुनः इस संसार चक्र में नहीं आना पड़े ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

त्रिभुवनात्मभवन त्रिविक्रम त्रिनयन त्रिलोकमनोहरानुभाव तवैव विभूतयो दितिजदनुजादयश्चापि तेषामनुपक्रमसमयोऽयमिति स्वात्ममायया सुरनरमृगमिश्रितजलचराकृतिभिर्यथापराधं दण्डं दण्डधर दधर्थ एवमेनमपि भगवञ्जहि त्वाष्ट्रमुत यदि मन्यसे ।।४०।।

पदच्छेद—त्रिभुवन आत्म भवन त्रिविक्रम त्रिनयन त्रिलोक मनोहर अनुभाव तव एव विभूतयः दितिज दनुज आदयः च अपि तेषाम् अनुपक्रम समयः अयम् इति स्व आत्ममायया सुर नर मृग मिश्रित जलचर आकृतिभिः यथा अपराधम् दण्डम् दण्डधर दधर्थ एवम् एनम् अपि भगवन् जहि त्वाष्ट्रम् उत यदि मन्यसे ।

शब्दार्थ—

त्रिभुवन	१.	तीनों लोकों के	**आत्म**	२१.	योग
आत्म	२.	आत्मा (और)	**मायया**	२२.	माया से
भवन	३.	आश्रय	**सुर नर**	२३.	देवता मनुष्य
त्रिविक्रम	४.	तीन डग वाले	**मृग**	२४.	पशु
त्रिनयन	५.	तीनों लोकों के संचालक हैं	**मिश्रित**	२५.	नरसिंहादि मिश्रित
त्रिलोक	७.	तीनों लोकों के	**जलचर**	२६.	जलचरादि की
मनोहर	८.	मनको हरने वाली है	**आकृतिभिः**	२७.	आकृति ग्रहण करते हैं
अनुभाव	६.	आपकी महिमा	**यथा**	२९.	अनुसार
तव एव	१३.	आपकी ही	**अपराधम्**	२८.	अपराध के
विभूतयः	१४.	विभूतियाँ हैं	**दण्डम्**	३०.	दण्ड
दितिज	९.	दैत्य	**दण्डधर**	३३.	हे दण्डधारी
दनुज	१०.	दानव	**दधर्थ**	३१.	देते हैं
आदयः	११.	आदि	**एवम्**	३२.	इस प्रकार
च अपि	१२.	और भी (असुरादि)	**एनम्**	३७.	इस
तेषाम्	१७.	उनकी	**अपि**	३९.	भी
अनुपक्रम	१८.	उन्नति का नहीं है	**भगवन्**	३४.	भगवन्
समयः	१६.	समय	**जहि**	४०.	मार डालिये
अयम्	१५.	यह	**त्वाष्ट्रम्**	३८.	वृत्रासुर का
इति	१९.	ऐसा समझकर	**उत यदि**	३५.	यदि
स्व	२०.	अपनी	**मन्यसे ।।**	३६.	जंचे तो

श्लोकार्थ—तीनों लोकों के आत्मा और आश्रय, तीन डगवाले, तीनों लोकों के संचालक हैं। आपकी महिमा तीनों लोकों के मन को हरने वाली है। दैत्य, दानव आदि और भी असुरादि आपकी ही विभूतियाँ हैं। यह समय उनकी उन्नति का नहीं है। ऐसा समझ कर अपनी योगमाया से देवता, मनुष्य, पशु, नरसिंहादि मिश्रित जलचरादि की आकृति ग्रहण करते हैं। अपराध के अनुसार दण्ड देते हैं। इस प्रकार हे दण्डधारी ! भगवन् ! यदि जंचे तो इस वृत्रासुर को भी मार डालिये ।।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

अस्माकं तावकानां तव नतानां तत ततामह तव चरणनलिनयुगलध्यानानुबद्धहृदयनिगडानां स्वलिङ्गविवरणेनात्मसात् कृतानामनुकम्पानुरञ्जितविशदरुचिरशिशिरस्मितावलोकेन विगलित-मधुरमुखरसामृतकलया चान्तस्तापमनघार्हसि शमयितुम् ॥४१॥

पदच्छेद—**अस्माकम् तावकानाम् तव नतानाम् तत ततामह तव चरण नलिन युगल ध्यान अनुबद्ध हृदय निगडानाम् स्वलिङ्ग विवरणेन आत्मसात् कृतानाम् अनुकम्पा अनुरञ्जित विशद रुचिर शिशिर स्मित अवलोकेन विगलित मधुर मुखरस अमृत कलया च अन्तः तापम् अनघ अर्हसि शमयितुम् ॥**

शब्दार्थ—

अस्माकम्	२.	हम	**अनुकम्पा**	२१.	दया से युक्त होकर
तावकानाम्	३.	बालकों के (आप	**अनुरञ्जित**	२२.	प्रार्थना करते हैं
तव	७.	आप से	**विशद**	२३.	विशद
नतानाम्	८.	विनम्र हैं	**रुचिर**	२४.	सुन्दर
तत	४.	पिता-	**शिशिर**	२५.	शीतल
ततामह	५.	पितामह हैं	**स्मित**	२७.	मुसकान युक्त
तव	६.	आपके	**अवलोकेन**	२८.	चितवन से
चरण	११.	चरण	**विगलित**	२९.	टपकते हुये
नलिन	१२.	कमलों का	**मधुर**	३०.	मनोहर
युगल	१०.	दोनों	**मुख**	३१.	मुख के
ध्यान	१३.	ध्यान	**रस**	३३.	रस की
अनुबद्ध	१४.	करते करते (हमारा)	**अमृत**	३२.	अमृत
हृदय	१५.	हृदय	**कलया**	३४.	बूंद से (हमारे)
निगडानाम्	१६.	बंध गया है (आपने)	**च**	२६.	और
स्वलिङ्ग	१७.	अपना शरीर	**अन्तः**	३५.	हृदय के
विवरणेन	१८.	प्रकट करके	**तापम्**	३६.	ताप को
आत्मसात्	१९.	अपना	**अनघ**	१.	हे भगवन् !
कृतानाम् ।	२०.	बना लिया है (हम लोग)	**अर्हसि**	३८.	कीजिये
			शमयितुम् ॥	३७.	शान्त

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! हम बालकों के आप पिता, पितामह हैं। हम आपके प्रति विनम्र हैं। आपके दोनों चरण कमलों का ध्यान करते करते हमारा हृदय बंध गया है। आपने अपना शरीर प्रकट करके अपना बना लिया है। हम लोग दया से युक्त होकर प्रार्थना करते हैं। विशद, सुन्दर, शीतल और मुसकान युक्त चितवन से टपकते हुये मनोहर मुख के अमृत रस की बूंद से हमारे हृदय के ताप को शान्त कीजिये ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

अथ भगवंस्तवास्माभिरखिलजगदुत्पत्तिस्थितिलयनिमित्तायमानदिव्यमायाविनोदस्य सकलजीवनिकायानामन्तर्हृदयेषु बहिरपि च ब्रह्मप्रत्यगात्मस्वरूपेण प्रधानरूपेण च यथा देश-कालदेहावस्थानविशेषं तदुपादानोपलम्भकतयानुभवतः सर्वप्रत्ययसाक्षिण आकाशशरीरस्य साक्षात्परब्रह्मणः परमात्मनः कियानिह वा अर्थविशेषो विज्ञापनीयः स्याद् विस्फुलिङ्गादिभिरिव हिरण्यरेतसः ।।४२।।

पदच्छेद—**अथ भगवन् तव अस्माभिः अखिल जगत् उत्पत्ति स्थिति लय निमित्तायमान दिव्य माया विनोदस्य सकल जीव निकायानाम् अन्तः हृदयेषु बहिः अपि च ब्रह्म प्रत्यक् आत्म स्वरूपेण प्रधानरूपेण च यथा देशकाल देह अवस्थान विशेषम् तद् उपादान उपलम्भक तया अनुभवतः सर्व प्रत्यय साक्षिणः आकाश शरीरस्य साक्षात् परब्रह्मणः परमात्मनः कियान् इह वा अर्थ विशेषः विज्ञापनीयः स्यात् विस्फुलिङ्ग आदिभिः इव हिरण्यरेतसः ।।**

शब्दार्थ—

अथ भगवन्	१. इसके बाद हे भगवन् !	**विशेषम्**	२८. विशेषादि हैं
तव	८. आपको	**तद् उपादान**	२९. उसके उपादान
अस्माभिः	५. हम लोग भी	**उपलम्भकतया**	३०. प्रकाशक के रूप में
अखिल जगत्	१३. सम्पूर्ण संसार के	**अनुभवतः**	३१. उनका अनुभव करते रहते हैं
उत्पत्ति	१४. उत्पत्ति स्थिति (और)	**सर्व प्रत्यय**	३२. सभी वृत्तियों के
लयनिमित्तायमान	१५. लय करने वाली	**साक्षिणः**	३३. साक्षी हैं
दिव्यमाया	१६. दिव्यमाया के साथ (आप)	**आकाश शरीरस्य**	३४. आकाश के समान व्याप्त है
विनोदस्य	१७. विनोद करते रहते हैं	**साक्षात्परब्रह्मणः**	३५. साक्षात् परब्रह्म
सकल जीव	१९. सम्पूर्ण जीवों के	**परमात्मनः**	३६. परमात्मा हैं
निकायानाम्	२१. विराजमान रहते हैं संसार में	**कियान्**	११. असमर्थ
अन्तः हृदयेषु	२०. अन्तः हृदय में	**इह**	७. यहाँ
बहिः अपि	२२. बाहर भी	**वा**	६. उसी प्रकार
च	१८. और	**च अर्थ विशेषः**	९. अपना स्वार्थ विशेष
ब्रह्म प्रत्यक्	२३. ब्रह्म अन्तर्यामी	**विज्ञापनीयः**	१०. निवेदन करने में
आत्मस्वरूपेण	२४. अपने स्वरूप में (और)	**स्यात्**	१२. हैं (आप)
प्रधान रूपेण च	२५. प्रकृति के रूप में तथा	**विस्फुलिङ्ग**	३. चिनगारियों
यथा देशकाल	२६. जितने भी देशकाल	**आदिभिः इव**	४. इत्यादि के समान
देह अवस्थान	२७. शरीर अवस्था	**हिरण्यरेतसः ।।**	२. अग्नि की

श्लोकार्थ—इसके बाद हे भगवन् ! अग्नि की चिनगारियों इत्यादि के समान हम लोग भी उसी प्रकार यहाँ आपको अपना स्वार्थ विशेष निवेदन करने में असमर्थ हैं। आप सम्पूर्ण संसार की उत्पत्ति स्थिति और लय करने वाली दिव्य माया के साथ आप विनोद करते रहते हैं और सम्पूर्ण जीवों के अन्तः हृदय में विराजमान रहते हैं। संसार में बाहर भी ब्रह्म अन्तर्यामी अपने स्वरूप में और प्रकृति के रूप में तथा जितने भी देश, काल, शरीर, अवस्था विशेषादि हैं, उसके उपादान प्रकाशक के रूप में उनका अनुभव करते हैं। सभी वृत्तियों के साक्षी हैं। आकाश के समान व्याप्त हैं। साक्षात् पर ब्रह्म परमात्मा हैं।

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

अत एव स्वयं तदुपकल्पयास्माकं भगवतः परमगुरोस्तव चरणशतपलाशच्छायां विविधवृजिनसंसारपरिश्रमोपशमनीमुपसृतानां वयं यत्कामेनोपसादिताः ।।४३।।

पदच्छेद—अत एव स्वयम् तत् उपकल्पया अस्माकम् भगवतः परमगुरोः तव चरण शतपलाश छायाम् विविधवृजिन संसार परिश्रम उपशमनीम् उपसृतानाम् वयम् यत्, कामेन उपसादिताः ।।

शब्दार्थ—

अत एव	१.	अत एव	छायाम्	१५.	छत्र छाया में (हमलोग आये हैं)
स्वयम्	३.	आपसे	विविध	१६.	जो अनेक
तत्	४.	उसे	वृजिन	१७.	पापों के
उपकल्पय	५.	निवेदन करें	संसार	१९.	संसार में
अस्माकम्	२	हम लोग	परिश्रम	१८	परिश्रम को
भगवतः	१०.	भगवन् आप संसार के	उपशमनीम्	२०.	मिटाने वाली है
परमगुरोः	११.	परमगुरु हैं	उपसृतानाम्	८.	आपके पास आये हैं
तव	१२.	आपके	वयम्	७.	हम लोग
चरण	१३.	चरण	यत् कामेन	६.	जिस अभिलाषा को लेकर
शतपलाश	१४.	कमलों की	उपसादिताः ।।	९.	उसे पूर्ण कीजिये

श्लोकार्थ— अत एव हम लोग आपसे उसे निवेदन करें। जिस अभिलाषको लेकर हम लोग आपके पास आये हैं उसे पूर्ण कीजिये। भगवन् आप संसार के परमगुरु हैं। आप के चरण कमलों की छत्र छाया में हमलोग आये हैं। जो अनेक पापों के परिश्रम को संसार में मिटाने वाली हैं ।।

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

अथो ईश जहि त्वाष्ट्रं ग्रसन्तं भुवनत्रयम् ।
ग्रस्तानि येन नः कृष्ण तेजांस्यस्त्रायुधानि च ।।४४।।

पदच्छेद— अथो ईश जहि त्वाष्ट्रम् ग्रसन्तम् भुवन त्रयम् ।
ग्रस्तानि येन नः कृष्ण तेजांसि अस्त्र आयुधानि च ।।

शब्दार्थ—

अथो	३.	तदनन्तर	ग्रस्तेन	९.	निगल लिया है (तथा)
ईश	१.	हे भगवन् !	येन	१३.	उसे
जहि	१४.	मार डालियें	नः	५.	हमारे
त्वाष्ट्रम्	४.	वृत्रासुर ने	कृष्ण	२.	हे श्रीकृष्ण !
ग्रसन्तम्	१२.	ग्रस रहा है (आप)	तेजांसि	६.	प्रभाव को
भुवन अयुधानि	११.	लोकों को	अस्त्र	८.	अस्त्र शस्त्रों को
त्रयम् ।	१०.	तीनों	च ।।	७.	औंर

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! हे श्रीकृष्ण ! तदनन्तर वृत्रासुर ने हमारे प्रभाव को और अस्त्र-शस्त्रों को निगल लिया है। तथा तीनों लोकों को ग्रस रहा है। आप उसे मार डालिये ।।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

हंसाय दहनिलयाय निरीक्षकाय कृष्णाय मृष्टयशसे निरुपक्रमाय ।
सत्संग्रहाय भवपान्थनिजाश्रमाप्तावन्ते परीष्टगतयेहरये नमस्ते ।।४५।।

पदच्छेद— हंसाय दह निलयाय निरीक्षकाय कृष्णाय मृष्ट यशसे निरुपक्रमाय ।
सत् संग्रहाय भवपान्थ निज आश्रम आप्तौ अन्ते परीष्ट गतये हरये नमस्ते ।।

शब्दार्थ—

हंसाय	१. आप शुद्ध स्वरूप	संग्रहाय	९. संग्रह करते हैं
दहनिलयाय	२. हृदय में स्थित	भवपान्थ	१०. संसार के पथिक
निरीक्षकाय	३. सबके साक्षी	निज आश्रम	११. जब आपकी शरण में
कृष्णाय	४. अनादि	आप्तौ अन्ते	१२. पहुँचते हैं तब अन्त में
मृष्ट	५. उज्ज्वल	परीष्ट	१३. आप अभीष्ट
यशसे	६. कीर्ति सम्पन्न (और)	गतये	१४. फल देते हैं
निरुपक्रमाय ।	७. अनन्त हैं	हरये	१५. हे प्रभो ! आपको
सत्	८. सन्तजन (आपका)	नमस्ते ।।	१६. नमस्कार है

श्लोकार्थ—आप शुद्ध स्वरूप हृदय में स्थित, सबके साक्षी, अनादि, उज्ज्वल कीर्ति सम्पन्न और अनन्त हैं। सन्तजन आपका संग्रह करते हैं। संसार के पथिक जब आपकी शरण में पहुँचते हैं तब अन्त में आप अभीष्ट फल देते हैं। हे प्रभो ! आपको नमस्कार है।।

षट्चत्वारिंशः श्लोक

अथैवमीडितो राजन् सादरं त्रिदशैर्हरिः ।
स्वमुपस्थानमाकर्ण्य प्राह तानभिनन्दितः ।।४६।।

पदच्छेद— अथ एवम् ईडितः राजन् सादरम् त्रिदशैः हरिः ।
स्वयम् उपस्थानम् आकर्ण्य प्राह तान् अभिनन्दितः ।।

शब्दार्थ—

अथ	२. इसके बाद	स्वयम्	८. तब अपनी
एवम्	४. इस प्रकार	उपस्थानम्	९. स्तुति
ईडितः	७. प्रार्थना की	आकर्ण्य	१०. सुनकर
राजन्	१. हे परीक्षित् !	प्राह	१३. कहने लगे
सादरम्	५. आदर के साथ	तान्	१२. उनसे
त्रिदशैः	३. जब देवताओं ने	अभिनन्दितः ।।	११. वे प्रसन्न होकर
हरिः ।	६. भगवान् की		

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इसके बाद जब देवताओं ने इस प्रकार आदर के साथ भगवान् की प्रार्थना की तब अपनी स्तुति सुनकर वे प्रसन्न होकर कहने लगे ।।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—प्रीतोऽहं वः सुरश्रेष्ठा मदुपस्थानविद्यया ।
आत्मैश्वर्यस्मृतिः पुंसां भक्तिश्चैव यया मयि ॥४७॥

पदच्छेद— प्रीतः अहम् वः सुरश्रेष्ठाः मद् उपस्थान विद्यया ।
आत्म ऐश्वर्य स्मृतिः पुंसाम् भक्तिः च एव यया मयि ॥

शब्दार्थ—

प्रीतः	४.	प्रसन्न हूँ (तुमने)	आत्म	१०.	अपने
अहम्	२.	मैं	ऐश्वर्य	११.	वास्तविक स्वरूप की
वः	३.	तुम लोगों पर	स्मृतिः	१२.	स्मृति
सुरश्रेष्ठाः	१.	हे श्रेष्ठ देवताओ !	पुंसाम्	९.	जीवों को
मद्	५.	मेरी	भक्तिः	१५.	भक्ति (प्राप्त होती है)
उपस्थान	६.	स्तुतियुक्त	च एव	१३.	और
विद्यया ।	७.	उपासना की है	यया	८.	जिस स्तुति के द्वारा
			मयि ॥	१४.	मेरी

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ देवताओ ! मैं तुमलोगों पर प्रसन्न हूँ । तुमने मेरी स्तुति युक्त उपासना की है । जिस स्तुति के द्वारा जीवों को अपने वास्तविकस्वरूप की स्मृति और मेरी भक्ति प्राप्त होती है ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

किं दुरापं मयि प्रीते तथापि विबुधर्षभाः ।
मय्येकान्तमतिर्नान्यन्मत्तो वाञ्छति तत्त्ववित् ॥४८॥

पदच्छेद— किम् दुरापम् मयि प्रीते तथापि विबुध ऋषभाः ।
मयि एकान्तमतिः न अन्यत् मत्तः वाञ्छति तत्त्ववित् ॥

शब्दार्थ—

किम्	४.	कोई भी वस्तु	मयि	७.	मेरे
दुरापम्	५.	दुर्लभ नहीं होती	एकान्तमतिः	८.	अनन्य प्रेमी
मयि	२.	मेरे	न अन्यत्	११.	नहीं अतिरिक्त और कुछ भी
प्रीते	३.	प्रसन्न हो जाने पर	मत्तः	१०.	मुझसे
तथापि	६.	फिर भी	वाञ्छति	१२.	चाहते हैं
विबुधऋषभाः ।	१.	हे श्रेष्ठ देवताओ	तत्त्ववित् ॥	९.	तत्त्ववेत्ता भक्त जन

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ देवताओं ! मेरे प्रसन्न हो जाने पर कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं होती । फिर भी मेरे अनन्य प्रेमी तत्त्ववेत्ता भक्तजन मुझसे अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहते हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

न वेद कृपणः श्रेय आत्मनो गुणवस्तुदृक् ।
तस्य तानिच्छतो यच्छेद् यदि सोऽपि तथाविधः ॥४६॥

पदच्छेद— न वेद कृपणः श्रेयः आत्मनः गुण वस्तु दृक् ।
तस्य तान् इच्छतः यच्छेत् यदि सः अपि तथा विधः ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं	तस्य	६.	उसके द्वारा
वेद	८.	जानता है	तान्	११.	उन वस्तुओं को
कृपणः	४.	नासमझ	इच्छतः	१०.	चाही गई
श्रेयः	६.	कल्याण को	यच्छेत्	१३.	दे दिया जाता है
आत्मनः	५.	अपने वास्तविक	यदि	१२.	यदि
गुण	२.	गुण	सः	१५.	वह
वस्तु	१.	जगत् की वस्तुओं में	अपि	१४.	तो भी
दृक् ।	३.	देखने वाला	तथा विधः ॥	१६.	वैसा ही नासमझ बना रहता है

श्लोकार्थ—जगत् की वस्तुओं में गुण देखने वाला नासमझ कल्याण को नहीं जानता है। उनके द्वारा चाही गई उन वस्तुओं को यदि दे दिया जाता है तो भी वह वैसा ही नासमझ बना रहता है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

स्वयं निःश्रेयसं विद्वान् न वक्त्यज्ञाय कर्म हि ।
न राति रोगिणोऽपथ्यं वाञ्छतो हि भिषक्तमः ॥५०॥

पदच्छेद— स्वयम् निःश्रेयसम् विद्वान् न वक्ति अज्ञाय कर्म हि ।
न राति रोगिणः अपथ्यम् वाञ्छतः हि भिषक्तमः ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्	१.	स्वयम्	न	१३.	नहीं
निःश्रेयसम्	२.	मुक्ति के स्वरूप को जानने वाला	राति	१४.	देता है
विद्वान्	३.	विद्वान्	रोगिणः	६.	रोगी के
न	६.	नहीं	अपथ्यम्	१२.	कुपथ्य
वक्ति	७.	उपदेश देता	वाञ्छतः	१०.	चाहने पर भी
अज्ञाय	४.	अज्ञानी को	हि	८.	जैसे
कर्म हि ।	५.	कर्मों में फँसने का	भिषक्तमः ॥	११.	सद्वैद्य

श्लोकार्थ—स्वयम् मुक्ति के स्वरूप को जानने वाला विद्वान् अज्ञानी को कर्मों में फंसने का उपदेश नहीं देता, जैसे रोगी के चाहने पर भी सद्वैद्य कुपथ्य नहीं देता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

मघवन् यात भद्रं वो दध्यञ्चमृषिसत्तमम् ।
विद्याव्रततपःसारं गात्रं याचत मा चिरम् ॥५१॥

पदच्छेद— मघवन् यात भद्रम् वः दध्यञ्चम् ऋषि सत्तमम् ।
विद्याव्रत तपः सारं गात्रम् याचत मा चिरम् ॥

शब्दार्थ—

मघवन्	१.	हे देवराज इन्द्र	विद्या-व्रत	१०.	उपासना-व्रत और
यात	९.	जाओ (उनसे)	तपः	११.	तपस्या के कारण
भद्रम्	३.	कल्याण हो (अव)	सारम्	१२.	अत्यन्त दृढ
वः	२.	तुम लोगों का	गात्रम्	१३.	उनका शरीर
दध्यञ्चम्	८.	दधीचि के पास	याचत	१४.	माँग लें
ऋषि	६.	ऋषि	मा	५.	मत करो
सत्तमम् ।	७.	शिरोमणि	चिरम् ॥	४.	देर

श्लोकार्थ—हे देवराज इन्द्र ! तुम लोगों का कल्याण हो । अब देर मत करो । ऋषि शिरोमणि दधीचि के पास जाओ। उनसे उपासना, व्रत और तपस्या के कारण अत्यन्त दृढ उनका शरीर माँग लो ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

स वा अधिगतो दध्यङ्ङश्विभ्यां ब्रह्मनिष्कलम् ।
यद् वा अश्वशिरो नाम तयोरमरतां व्यधात् ॥५२॥

पदच्छेद— स वा अधिगतः दध्यङ् अश्विभ्याम् ब्रह्म निष्कलम् ।
यद् वा अश्वशिरः नाम तयोः अमरताम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

सः वा	१.	उन	यद् वा	७.	इसी कारण
अधिगतः	६.	प्राप्त कर लिया	अश्वशिरः	९.	अश्वशिर हुआ
दध्यङ्	२.	दधीचि ऋषि ने	नाम	८.	उनका नाम
अश्विभ्याम्	३.	अश्विनी कुमारों से	तयोः	१०.	इसी से
ब्रह्म	५.	ब्रह्म ज्ञान	अमरताम्	११.	वे अमर
निष्कलम् ।	४.	शुद्ध	व्यधात् ॥	१२.	हो गये

श्लोकार्थ—उन दधीचि ऋषि ने अश्विनीकुमारों से शुद्ध ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है। इसी कारण उनका नाम अश्वशिर हुआ। इसी से वे अमर हो गये ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

दध्यङ्ङाथर्वणस्त्वष्ट्रे वर्माभेद्यं मदात्मकम् ।
विश्वरूपाय यत् प्रादात् त्वष्टा यत् त्वमधास्ततः ॥५३॥

पदच्छेद— दध्यङ् अथर्वणः त्वष्ट्रे वर्म अभेद्यम् मत् आत्मकम् ।
विश्वरूपाय यत् प्रादात् त्वष्टा यत् त्वम् अधाः ततः ॥

शब्दार्थ—

दध्यङ्	२.	दधीचि ऋषि ने	विश्वरूपाय	१०.	विश्वरूप को
अथर्वणः	१.	अथर्ववेदी	यत्	८.	जिसे
त्वष्ट्रे	७.	त्वष्टा को (उपदेश दिया)	प्रादात्	११.	दिया
वर्म	६.	नारायण कवच का	त्वष्टा	९.	त्वष्टा ने
अभेद्यम्	५.	अभेद्य	यत्-त्वम्	१४.	जो तुम्हें
मत्	३.	मेरे	अधाः	१३.	मिला
आत्मकम् ।	४.	स्वरूप भूत	ततः ॥	१२.	उससे

श्लोकार्थ—अथर्ववेदी दधीचि ऋषि ने मेरे स्वरूप भूत अभेद्य नारायण कवच का त्वष्टाको उपदेश दिया । जिसे त्वष्टा ने विश्वरूप को दिया । उससे तुम्हें मिला ॥

चतुः पञ्चाशः श्लोकः

युष्मभ्यं याचितोऽश्विभ्यां धर्मज्ञोऽङ्गानि दास्यति ।
ततस्तैरायुधश्रेष्ठो विश्वकर्मविनिर्मितः ।
येन वृत्रशिरो हर्ता मत्तेजउपबृंहितः ॥५४॥

पदच्छेद— युष्मभ्यम् याचितः अश्विभ्याम् धर्मज्ञः अङ्गानि दास्यति ।
ततः तैः आयुध श्रेष्ठः विश्वकर्म विनिर्मितः ।
येन वृत्रशिरः हर्ता मत्तेज उपबृंहितः ॥

शब्दार्थ—

युष्मभ्यम्	२.	वे तुम लोगों को	श्रेष्ठः	९.	एक श्रेष्ठ
याचितः	४.	मांगने पर	विश्वकर्म	८.	विश्वकर्मा के द्वारा
अश्विभ्याम्	३.	अश्विनी कुमारों के	विनिर्मितः ।	११.	बनवा लेना
धर्मज्ञः	१.	धर्म के मर्म को जानने वाले	येन	१२.	जिससे
अङ्गानि	५.	शरीर के अङ्ग	वृत्रशिरः	१५.	वृत्रासुर का शिर
दास्यति ।	६.	अवश्य दे देंगे	हर्ता	१६.	काट लोगे
ततः तैः	७.	इसके बाद उन अङ्गो से	मत्तेज	१३.	मेरी शक्ति से
आयुध ।	१०.	आयुध	उपबृंहितः ॥	१४.	युक्त होकर

श्लोकार्थ—धर्म के मर्म को जानने वाले वे तुम लोगों को अश्विनीकुमारों के माँगने पर शरीर के अङ्ग अवश्य दे देंगे । इसके बाद उन अङ्गों से विश्वकर्मा के द्वारा एक श्रेष्ठ आयुध बनवा लेना । जिससे मेरी शक्ति से युक्त होकर वृत्रासुर का शिर काट लोगे ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

तस्मिन् विनिहते यूयं तेजोऽस्त्रायुधसम्पदः ।
भूयः प्राप्स्यथ भद्रं वो न हिंसन्ति च मत्परान् ।।५५।।

पदच्छेद— तस्मिन् विनिहते यूयम् तेजः अस्त्र आयुध सम्पदः ।
भूयः प्राप्स्यथ भद्रम् वः न हिंसन्ति च मत् परान् ।।

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस वृत्रासुर के	भूयः	८.	फिर से
विनिहते	२.	मर जाने पर	प्राप्स्यथ	९.	प्राप्त हो जायेंगी
यूयम्	३.	तुम लोगों को	भद्रम्	११.	कल्याण हो
तेजः	४.	तेज	वः	१०.	तुम लोगों का
अस्त्र	५.	अस्त्र	न हिंसन्ति	१४.	कोई नहीं सता सकता
आयुध	६.	शस्त्र और	च	१२.	और
सम्पदः ।	७.	सम्पत्तियाँ	मत्परान् ।।	१३.	मेरे शरणागतों को

श्लोकार्थ—उस वृत्रासुर के मर जाने पर तुम लोगों को तेज अस्त्र-शस्त्र और सम्पत्तियाँ फिर से प्राप्त हो जायेंगी, तुम लोगों का कल्याण हो । और मेरे शरणागतों को कोई नहीं सता सकता ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे
नवमः अध्यायः ।।९।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

दशमः अध्यायः

प्रथम श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इन्द्रमेवं समादिश्य भगवान् विश्वभावनः ।
पश्यतामनिमेषाणां तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥१॥

पदच्छेद— इन्द्रम् एवम् समादिश्य भगवान् विश्व भावनः ।
पश्यताम् अनिमेषाणाम् तत्र एव अन्तः दधे हरिः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रम्	५.	इन्द्र को	पश्यताम्	९.	देवताओं के सामने
एवम्	६.	इस प्रकार	अनिमेषाणाम्	१०.	देखते ही देखते
समादिश्य	७.	आदेश देकर	तत्र एव	८.	वहीं पर
भगवान्	३.	भगवान्	अन्तः दधे	११.	अन्तर्ध्यान हो गये
विश्व	१.	विश्व के	हरिः ॥	४.	श्रीहरि
भावनः ।	२.	जीवनदाता			

श्लोकार्थ—विश्व के जीवनदाता भगवान् श्रीहरि इन्द्र को इस प्रकार आदेश देकर वहीं पर देवताओं के देखते ही देखते अन्तर्ध्यान हो गये ॥

द्वितीयः श्लोकः

तथाभियाचितो देवैर्ऋषिराथर्वणो महान् ।
मोदमान उवाचेदं प्रहसन्निव भारत ॥२॥

पदच्छेद— तथा अभियाचितः देवैः ऋषिः आथर्वणः महान् ।
मोदमानः उवाच इदम् प्रहसन् इव भारत ॥

शब्दार्थ—

तथा	२.	उस प्रकार	**मोदमानः**	८.	आनन्दित होते हुये तथा
अभियाचितः	४.	याचना करने पर	**उवाच**	१२.	कहा
देवैः	३.	देवताओं के द्वारा	**इदम्**	११.	यह
ऋषिः	७.	ऋषि दधीचि ने	**प्रहसन्**	९.	हंसते हुये
आथर्वणः	६.	अथर्ववेदी	**इव**	१०.	से
महान् ।	५.	उदार शिरोमणि	**भारत ॥**	१.	हे परीक्षित्

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! देवताओं के द्वारा उस प्रकार याचना करने पर उदार शिरोमणि अथर्ववेदी ऋषि दधीचि ने आनन्दित होते हुये तथा हंसते हुये से यह कहा ॥

तृतीयः श्लोकः

अपि वृन्दारका यूयं न जानीथ शरीरिणाम् ।
संस्थायां यस्त्वभिद्रोहो दुःसहश्चेतनापहः ॥३॥

पदच्छेद— अपि वृन्दारकाः यूयम् न जानीथ शरीरिणाम् ।
संस्थायाम् यः तु अभिद्रोहः दुःसहः चेतना अपहः ॥

शब्दार्थ—

अपि	३.	भी	संस्थायाम्	७.	मरते समय
वृन्दारकाः	१.	हे देवताओ !	यः तु	८.	जो
यूयम्	२.	आप लोगों को	अभिद्रोहः	९.	महान् कष्ट होता है वह
न	४.	नहीं	दुःसहः	१०.	असहनीय है और
जानीथ	५.	मालूम है कि	चेतना	११.	चेतना को
शरीरिणाम् ।	६.	प्राणियों को	अपहः ॥	१२.	नष्ट कर देने वाला होता है

श्लोकार्थ—हे देवताओ ! आप लोगों को भी नहीं मालूम है कि प्राणियों को मरते समय जो महान् कष्ट होता है, वह असहनीय है और चेतना को नष्ट करने वाला होता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

जिजीविषूणां जीवानामात्मा प्रेष्ठ इहेप्सितः ।
क उत्सहेत तं दातुं भिक्षमाणाय विष्णवे ॥४॥

पदच्छेद— जिजीविषूणाम् जीवानाम् आत्मा प्रेष्ठः इह ईप्सितः ।
कः उत्सहेत तम् दातुम् भिक्षमाणाय विष्णवे ॥

शब्दार्थ—

जिजीविषूणाम्	३.	जीवित रहने की इच्छा वालों के लिये	**कः**	१०.	कौन
जीवानाम्	२.	इस जीव-जगत् में	**उत्सहेत**	१२.	साहस करेगा
आत्मा	४.	यह शरीर	**तम्**	९.	उसे
प्रेष्ठः	५.	प्रियतम (एवम्)	**दातुम्**	११.	देने के लिये
इह	१.	यहाँ	**भिक्षमाणाय**	८.	मांगने पर भी
ईप्सितः ।	६.	अभीष्ट वस्तु है (किन्तु)	**विष्णवे ॥**	७.	विष्णु भगवान् द्वारा

श्लोकार्थ—यहाँ इस जीव जगत् में जीवित रहने की इच्छा वालों के लिये यह शरीर प्रियतम एवम् अभीष्ट वस्तु है। किन्तु विष्णु भगवान् द्वारा मांगने पर भी उसे कौन देने के लिये साहस करेगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

देवा ऊचुः— किं नु तद् दुस्त्यजं ब्रह्मन् पुंसां भूतानुकम्पिनाम् ।
भवद्विधानां महतां पुण्यश्लोकेड्यकर्मणाम् ॥५॥

पदच्छेद— किम् नु तद् दुस्त्यजम् ब्रह्मन् पुंसाम् भूत अनुकम्पिनाम् ।
भवद् विधानाम् महताम् पुण्य श्लोक ईड्य कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

किम्	११.	कौन सी वस्तु	भवद्	७.	आप
नु तद्	१०.	जो कि ऐसी	विधानाम्	८.	जैसे
दुस्त्यजम्	१२.	नहीं दे सकते	महताम्	९.	महापुरुष
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	पुण्यश्लोक	४.	यशस्वी
पुंसाम्-भूत	२.	प्राणियों और जीवो पर	ईड्य	५.	स्तुत्य
अनुकम्पिनाम्	३.	दया रखने वाले	कर्मणाम् ॥	६.	कर्म करने वालों पर

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! प्राणियों और जीवों पर दया रखने वाले, यशस्वी और स्तुत्य कर्म करने वाले आप जैसे महापुरुष ऐसी कौन सी वस्तु है, जो कि नहीं दे सकते ॥

षष्ठः श्लोकः

ननु स्वार्थपरो लोको न वेद परसंकटम् ।
यदि वेद न याचेत नेति नाह यदीश्वरः ॥६॥

पदच्छेद— ननु स्वार्थ परः लोकः न वेद पर संकटम् ।
यदि वेद न याचेत न इति न आह यद् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

ननु	१.	निश्चय ही	यदि	७.	यदि
स्वार्थ परः	३.	स्वार्थी होते हैं (वे)	वेद	८.	जानते होते
लोकः	२.	संसार के लोग	न याचेत	९.	तो नहीं मांगते (और)
न वेद	६.	नहीं जानते हैं	न इति	११.	मेरे पास नहीं है (ऐसा)
पर	४.	दूसरों की	न आह	१२.	नहीं कहते
संकटम् ।	५.	कठिनाई को	यदीश्वरः ॥	१०.	जो ऐश्वर्य सम्पन्न हैं वे भी

श्लोकार्थ—निश्चय ही संसार के लोग स्वार्थी होते हैं। वे दूसरों की कठिनाई को नहीं जानते हैं। यदि जानते होते तो नहीं मांगते और जो ऐश्वर्य सम्पन्न हैं, वे भी मेरे पास नहीं है, ऐसा नहीं कहते ॥

सप्तमः श्लोकः

धर्मं वः श्रोतुकामेन यूयं मे प्रत्युदाहृताः ।
एष वः प्रियमात्मानं त्यजन्तं संत्यजाम्यहम् ॥७॥

पदच्छेद:— धर्मम् वः श्रोतु कामेन यूयम् मे प्रति उदाहृताः ।
एषः वः प्रियम् आत्मानम् त्यजन्तम् संत्यजामि अहम् ॥

शब्दार्थ—

धर्मम्	२.	धर्म की वात	एषः	९.	इस
वः	१.	हे देवताओ ! आप लोगों से	वः	८.	आप लोगों के लिये
श्रोतुम्	३.	सुनने की	प्रियम्	१०.	प्यारे
कामेन	४.	इच्छा से ही	आत्मानम्	११.	शरीर को
यूयम्	६.	आपके प्रति	त्यजन्तम्	१२.	जो मुझे स्वयम् छोड़ देगा
मे	५.	मैंने	संत्यजामि	१४.	छोड़ देता हूँ
प्रतिउदाहृताः ।	७.	उपेक्षा दिखाई थी	अहम् ॥	१३.	मैं

श्लोकार्थ—हे देवताओ ! आप लोगों से धर्म की बात सुनने के लिये ही मैंने आपके प्रति उपेक्षा दिखाई थी । आप लोगों के लिये इस प्यारे शरीर को जो मुझे छोड़ देगा मैं छोड़ देता हूँ ॥

अष्टमः श्लोकः

योऽध्रुवेणात्मना नाथा न धर्मं न यशः पुमान् ।
ईहेत भूतदयया स शोच्यः स्थावरैरपि ॥८॥

पदच्छेद:— यः अध्रुवेण आत्मना नाथाः न धर्मम् न यशः पुमान् ।
ईहेत भूतदयया स शोच्यः स्थावरैः अपि ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	ईहेत	१०.	इच्छा करता है
अध्रुवेण	३.	अनित्य	भूत	६.	प्राणियों पर
आत्मना	४.	शरीर का	दयया	७.	दया करके
नाथाः	५.	स्वामी बनकर	सः	११.	वह
न धर्मम्	६.	न धर्म (और)	शोच्यः	१२.	शोचनीय है (और)
न यशः	९.	न यश की	स्थावरैः	१३.	पेड़ पौधों से
पुमान् ।	२.	मनुष्य	अपि ॥	१४.	भी गया बीता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य अनित्य शरीर का स्वामी बन कर प्राणियों पर दया करके न धर्म और न यश की इच्छा करता है, वह शोचनीय है और पेड़-पौधों से भी गया बीता है ॥

नवमः श्लोकः

एतावानव्ययो धर्मः पुण्यश्लोकैरुपासितः ।
यो भूतशोकहर्षाभ्यामात्मा शोचति हृष्यति ॥९॥

पदच्छेद— एतावान् अव्ययः धर्मः पुण्यश्लोकैः उपासितः ।
यः भूत शोक हर्षाभ्याम् आत्मा शोचति हृष्यति ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	२.	इसी	भूत	८.	प्राणियों के
अव्ययः	३.	अविनाशी	शोक	९.	दुःख और
धर्मः	४.	धर्म की	हर्षाभ्याम्	१०.	सुख में
पुण्यश्लोकैः	१.	बड़े-बड़े महात्माओं ने	आत्मा	७.	शरीर से
उपासितः ।	५.	उपासना की है	शोचति	११.	दुःखी और
यः	६.	जो	हृष्यति ॥	१२.	सुखी होता

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े महात्माओं ने इसी अविनाशी धर्म की उपासना की है । जो शरीर से प्राणियों के दुःख और सुख में दुःखी और सुखी होता है ॥

दशमः श्लोकः

अहो दैन्यमहो कष्टं पारक्यैः क्षणभङ्गुरैः ।
यन्नोपकुर्यादस्वार्थैर्मर्त्यः स्वज्ञातिविग्रहैः ॥१०॥

पदच्छेद— अहो दैन्यम् अहो, कष्टम् पारक्यैः क्षण भङ्गुरैः ।
यत् न उपकुर्यात् अस्वार्थैः मर्त्यः स्वज्ञाति विग्रहैः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है	यत्	५.	कि
दैन्यम्	२.	कैसी कृपणता है	न उपकुर्यात्	१२.	उपकार नहीं करता है
अहो	३.	कितने	अस्वार्थैः	११.	स्वार्थ रहित होकर
कष्टम्	४.	दुःख की बात है	मर्त्यः	१०.	मरण धर्मा मनुष्य
पारक्यैः	६.	दूसरों के काम आने वाले	स्वज्ञाति	६.	अपने परिवार
क्षणभङ्गुरैः ।	९.	क्षणभङ्गुर पदार्थों से	विग्रहैः ॥	७.	शरीर और

श्लोकार्थ—आश्चर्य है, कैसी कृपणता है, कितने दुःख की बात है कि दूसरों के काम आने वाले अपने परिवार शरीर और क्षणभङ्गुर पदार्थों से मरणधर्मा मनुष्य स्वार्थ रहित होकर उपकार नहीं करता है ॥

एकादशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एवं कृतव्यवसितो दध्यङ्ङाथर्वणस्तनुम् ।
परे भगवति ब्रह्मण्यात्मानं सन्नयञ्जहौ ॥११॥

पदच्छेद— एवम् कृत व्यवसितः दध्यङ्आथर्वणः तनुम् ।
परे भगवति ब्रह्मणि आत्मानम् सन्नयन् जहौ ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	परे	८.	पर
कृत	५.	करके	भगवति	१०.	भगवान् में
व्यवसितः	४.	निश्चय	ब्रह्मणि	९.	ब्रह्म
दध्यङ्	३.	दधीचि ऋषि ने	आत्मानम्	६.	स्वयम्
आथर्वणः	२.	अथर्ववेदी	सन्नयन्	११.	लीन करके
तनुम् ।	७.	अपना शरीर	जहौ ॥	१२.	त्याग दिया

श्लोकार्थ—इस प्रकार अथर्ववेदी दधीचि ऋषि ने निश्चय करके स्वयम् अपना शरीर ब्रह्म भगवान् में लीन करके त्याग दिया ॥

द्वादशः श्लोकः

यताक्षासुमनोबुद्धिस्तत्त्वदृग् ध्वस्तबन्धनः ।
आस्थितः परमं योगं न देहं बुबुधे गतम् ॥१२॥

पदच्छेद— यत अक्ष असुमनः बुद्धिः तत्त्व दृक्ध्वस्त बन्धनः ।
आस्थितः परमम् योगम् देहम् बुधुधे गतम् ॥

शब्दार्थ—

यत	४.	संयत थे	आस्थितः	१०.	स्थित हो गये (उन्हें)
अक्ष	१.	उनकी इन्द्रियाँ	परमम्	८.	परमात्मा से
असुमनः	२.	प्राण-मन	योगम्	९.	युक्त होकर
बुद्धिः	३.	बुद्धि	न	१३.	नहीं
तत्त्व-दृक्	५.	तत्त्व-द्रष्टा (दधीचि के)	देहम्	१२.	शरीर का
ध्वस्त	७.	कट चुके थे (वे)	बुबुधे	१४.	स्मरण रहा
बन्धनः ।	६.	सारे बन्धन	गतम् ॥	११.	छोड़े हुये

श्लोकार्थ—उनकी इन्द्रियाँ, प्राण, मन संयत थे । तत्त्वद्रष्टा दधीचि के सारे बन्धन कट चुके थे । वे परमात्मा से युक्त होकर स्थित हो गये । उन्हें छोड़े हुये शरीर का स्मरण नहीं रहा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अथेन्द्रो वज्रमुद्यम्य निर्मितं विश्वकर्मणा ।
मुनेः शुक्तिभिरुत्सिक्तो भगवत्तेजसान्वितः ॥१३॥

पदच्छेद— अथ इन्द्रः वज्रम् उद्यम्य निर्मितम् विश्व कर्मणा ।
मुनेः शुक्तिभिः उत्सिक्तः भगवत् तेजसा अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	मुनेः	५.	दधीचि ऋषि की
इन्द्रः	१२.	इन्द्र तैयार हो गये	शक्तिभिः	६.	हड्डियों से
वज्रम्	१०.	व्रज को	उत्सिक्तः	७.	युक्त (एवं)
उद्यम्य	११.	उठाकर	भगवत्	२.	भगवान्
निर्मितम्	९.	बनाये हुये	तेजसा	३.	शक्ति
विश्वकर्मणाः	८.	विश्वकर्मा द्वारा	अन्वितः ॥	४.	प्राप्त करके (तथा)

श्लोकार्थ—इसके बाद भगवान् की शक्ति प्राप्त करके तथा दधीचि ऋषि की हड्डियों से युक्त एवं विश्वकर्मा द्वारा बनाये हुये व्रज्र को उठा कर इन्द्र तैयार हो गये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

वृतो देवगणैः सर्वैर्गजेन्द्रोपर्यशोभत ।
स्तूयमानो मुनिगणैस्त्रैलोक्यं हर्षयन्निव ॥१४॥

पदच्छेद— वृतः देवगणैः सर्वैः गजेन्द्र उपरिअशोभत ।
स्तूयमानः मुनिगणैः त्रैलोक्यम् हर्षयन् इव ॥

शब्दार्थं—

वृतः	३.	घिरे हुये (इन्द्र)	स्तूयमानः	७.	स्तुति किये जाते हुये
देवगणैः	२.	देवताओं से	मुनिगणैः	६.	मुनिजनों के द्वारा
सर्वैः	१.	सभी	त्रैलोक्यम्	८.	तीनों लोकों को
गजेन्द्रः	४.	गजराज ऐरावत के	हर्षयन्	९.	हर्षित
उपरिअशोभत ।	५.	ऊपर सुशोभित हुये (और)	इव ॥	१०.	सा करने लगे

श्लोकार्थ—सभी देवताओं से घिरे हुये इन्द्र गजराज ऐरावत के ऊपर सुशोभित हुये । और मुनिजनों के द्वारा स्तुति किये जाते हुये तीनों लोकों को हर्षित सा करने लगे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

वृत्रमभ्यद्रवच्छेत्तुमसुरानीकयूथपैः ।
पर्यस्तमोजसा राजन् क्रुद्धो रुद्र इवान्तकम् ॥१५॥

पदच्छेद— वृत्रम् अभ्यद्रवत् छेत्तुम् असुर अनीक यूथपैः ।
पर्यस्तम् ओजसा राजन् क्रुद्धः रुद्रः इव अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

वृत्रम्	१०.	वृत्रासुर के वध के लिये	पर्यस्तम्	६.	चारों ओर से
अभ्यद्रवत्	११.	आक्रमण	ओजसा	५.	पूरी शक्ति लगाकर
छेत्तुम्	१२.	कर दिया	राजन्	१.	हे राजन् !
असुर	७.	दैत्यों की	क्रुद्धः	४.	क्रोधित होकर
अनीक	८.	सेना और	रुद्र इव	३.	रुद्र के समान
यूथपैः	९.	सेनापतियों से घिरे हुये	अन्तकम् ॥	२.	काल पर (आक्रमक्ष करने वाले)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! काल पर आक्रमण करने वाले रुद्र के समान क्रोधित होकर पूरी शक्ति लगाकर चारों ओर से दैत्यों की सेना और सेनापतियों से घिरे हुये वृत्रासुर के वध के लिये आक्रमण कर दिया ॥

षोडशः श्लोकः

ततः सुराणामसुरै रणः परमदारुणः ।
त्रेतामुखे नर्मदायामभवत् प्रथमे युगे ॥१६॥

पदच्छेद— ततः सुराणाम् असुरैः रणः परम दारुणः ।
त्रेता मुखे नर्मदायाम् अभवत् प्रथमे युगे ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसके बाद	त्रेतामुखे	३.	त्रेतायुग के
सुराणाम्	६.	देवताओं (और)	नर्मदायाम्	५.	नर्मदा के तट पर
असुरैः	७.	दैत्यों के साथ	अभवत्	१०.	हुआ
रणः	९.	संग्राम	प्रथमे	४.	आरम्भ में
परमदारुणः ।	८.	अत्यन्त भयंकर	युगे ॥	२.	चतुर्युगी के

श्लोकार्थ—इसके बाद चतुर्युगी के त्रेतायुग के आरम्भ में नर्मदा के तट पर देवताओं और दैत्यों के साथ अत्यन्त भयंकर संग्राम हुआ ॥

सप्तदशः श्लोकः

रुद्रैर्वसुभिरादित्यैरश्विभ्यां पितृवह्निभिः ।
मरुद्भिर्ऋभुभिः साध्यैर्विश्वेदेवैर्मरुत्पतिम् ॥१७॥

पदच्छेद— रुद्रैः वसुभिः आदित्यैः अश्विभ्याम् पितृवह्निभिः ।
मरुद्भिः ऋभुभिः साध्यैः विश्वेदेवैः मरुत् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

रुद्रैः	१.	रुद्र	मरुद्भिः	६.	मरुत् गण
वसुभिः	२.	वसु	ऋभुभिः	७.	साध्यगण
आदित्यैः	३.	आदित्य	साध्यैः	८.	साध्यगण
अश्विभ्याम्	४.	दोनों अश्विनी कुमार	विश्वेदेवैः	९.	विश्वदेव आदि के साथ
पितृवह्निभिः ।	५.	पितृगण, अग्नि	मरुत्पतिम् ॥	१०.	इन्द्र शोभित थे

श्लोकार्थ—रुद्र, वसु, आदित्य, दोनों अश्विनीकुमार, पितृगण, अग्नि, मरुत्गण, ऋभुगण, साध्यगण, विश्वेदेव आदि के साथ इन्द्र शोभित थे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

दृष्ट्वा वज्रधरं शक्रं रोचमानं स्वयाश्रिया ।
नामृष्यन् असुराः राजन् मृधे वृत्रपुरः सराः ॥१८॥

पदच्छेद— दृष्टवा वज्रधरम् शक्रम् रोचमानम् स्वया श्रिया ।
न अमृश्यन् असुराः राजन् मृधे वृत्र पुरः सराः ॥

शब्दार्थ—

दृष्टवा	१०.	देखकर	न अमृष्यन्	११.	और भी अधिक क्रुद्ध हुआ
वज्रधरम्	७.	वज्रधारण करने वाले	असुराः	३.	दैत्य
शक्रम्	८.	इन्द्र को	राजन्	१.	हे राजन्
रोचमानम्	६.	सुशोभित होते हुये	मृधे	८.	युद्ध में
स्वया	४.	अपनी	वृत्र	२.	वृत्रासुर
श्रिया ।	५.	कान्ति से	पुरः सराः ॥	९.	सामने आया

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वृत्रासुर दैत्य, अपनी कान्ति से सुशोभित होते हुये वज्र धारण करने वाले इन्द्र को युद्ध में सामने आया देखकर और क्रुद्ध हुआ ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नमुचिः शम्बरोऽनर्वा द्विमूर्धा ऋषभोऽम्बरः ।
हयग्रीवः शङ्कुशिराः विप्रचित्तिरयोमुखः ॥१९॥

पदच्छेद— नमुचिः शम्बरः अनर्वा द्विमूर्धा ऋषभः अम्बरः ।
हयग्रीवः शङ्कुशिराः विप्रचित्तिः अयोमुखः ॥

शब्दार्थ—

नमुचिः	१. नमुचि	अम्बरः ।	६. अम्बरः
शम्बरः	२. शम्बर	हयग्रीवः	७. हयग्रीव
अनर्वा	३. अनर्वा	शङ्कुशिराः	८. शङ्कुशिरा
द्विमूर्धाः	४. द्विमूर्धा	विप्रचित्तिः	९. विप्रचित्ति (और)
ऋषभः	५. ऋषभ	अयोमुखः ॥	१०. अयोमुख आदि थे

श्लोकार्थ—नमुचि, शम्बर, अनर्वा, द्विमूर्धा, ऋषभ, हयग्रीव, शङ्कुशिरा, विप्रचित्ति, अयोमुख आदि थे ॥

विंशः श्लोकः

पुलोमा वृषपर्वा च प्रहेतिर्हेतिरुत्कलः ।
दैतेया दानवा यक्षा रक्षांसि च सहस्रश ॥२०॥

पदच्छेद— पुलोमा वृषपर्वा च प्रहेतिः हेतिः उत्कलः ।
दैतेयाः दानवाः यक्षाः रक्षांसि च सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

पुलोमा	१. पुलोमा	दैतेयाः	७. दैत्य
वृषपर्वा	२. वृषपर्वा	दानवाः	८. दानव
च	३. और	यक्षाः	९. यक्ष
प्रहेतिः	४. प्रहेति	रक्षांसि	१२. राक्षस थे
हेतिः	५. हेति	च	१०. और
उत्कलः ।	६. उत्कल	सहस्रशः ॥	११. हजारों

श्लोकार्थ—पुलोमा, वृषपर्वा, और प्रहेति, हेति, उत्कल, दैत्य, दानव, यक्ष, और हजारों राक्षस थे ॥

एकविंशः श्लोकः

सुमालिमालिप्रमुखाः कार्तस्वरपरिच्छदाः ।
प्रतिषिध्येन्द्रसेनाग्रं मृत्योरपि दुरासदम् ॥२१॥

पदच्छेद— सुमालि यालि प्रमुखाः कार्तस्वर परिच्छदाः ।
प्रतिषिध्य इन्द्र सेनाग्रम मृत्योः अपि दुरासदम् ॥

शब्दार्थ—

सुमालि	१.	सुमाली	प्रतिषिध्य	८.	रोकने लगे
मालि	२.	माली आदि	इन्द्र	६.	इन्द्र की
प्रमुखाः	३.	सभी मुख्य-मुख्य दैत्य दानव	सेनाअग्रम्	७.	सेनाको (आगे बढ़ने से)
कार्तस्वरः	४.	सोने के	मृत्योः अपि	६.	वह मृत्यु के लिये भी
परिच्छदाः ।	५.	साज-सामान से युक्त होकर	दुरासदम् ॥	१०.	अजेय थी

श्लोकार्थ—सुमाली, माली, आदि सभी प्रमुख दैत्य-दानव सोने के साज सामान से युक्त होकर इन्द्र की सेना को आगे बढ़ने से रोकने लगे वह देवताओं की सेना मृत्यु के लिये भी अजेय थी ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अभ्यर्दयन्न संभ्रान्ताः सिंहनादेन दुर्मदाः ।
गदाभिः परिघैर्बाणैः प्रासमुद्गरतोमरैः ॥२२॥

पदच्छेद— अभ्यर्दयन् असम्भ्रान्ताः सिंह नादेन दुर्मदाः ।
गदाभिः परिघैः बाणैः प्रास मुद्गर तोमरैः ॥

शब्दार्थ—

अभ्यर्दयन्	१०.	प्रहार करने लगे	परिघैः	५.	परिघ
असम्भ्रान्ताः	३.	बड़ी सावधानी से	बाणैः	६.	बाण
सिंहनादेन	२.	सिंहनाद करते हुये	प्रास	७.	भाले
दुर्मदा.	१.	वे घमण्डी असुर	मुद्गर	८.	मुद्घर और
गदाभिः ।	४.	गदा	तोमरैः ॥	६.	तोमरों से

श्लोकार्थ—वे घमण्डी असुर सिंहनाद करते हुये बड़ी सावधानी से गदा, परिघ, बाण, भाले, मुद्गर और तोमरों से प्रहार करने लगे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

शूलैः परश्वधैः खड्गैः शतघ्नीभिर्भुशुण्डिभिः ।
सर्वतोऽवाकिरन् शस्त्रैरस्त्रैश्च विबुधर्षभान् ॥२३॥

पदच्छेद— शूलैः परश्वधैः खड्गैः शतघ्नीभिः भुशुण्डिभिः ।
सर्वतः अवाकिरन् शस्त्रैः अस्त्रैः च विबुधर्षभान् ॥

शब्दार्थ

शूल	१.	उन्होंने शूल	सर्वतः	९.	सब ओर से
परश्वधैः	२.	फरसे	अवाकिरन्	१०.	ढक लिया
खड्गैः	३.	तलवार	शस्त्रैः	७.	शस्त्रों से
शतघ्नीभिः	४.	तोप	अस्त्रैः च	६.	अस्त्रों और
भुशुण्डिभिः ।	५.	भुशुण्डि आदि	विबुधर्षभान् ॥	८.	देवताओं को

श्लोकार्थ—उन्होंने शूल, फरसे, तलवार, तोप, भुशुण्डि (बंदूक) आदि अस्त्रों और शस्त्रों से देवताओं को सब ओर से ढक लिया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

न तेऽदृश्यन्त संछन्नाः शरजालैः समन्ततः ।
पुङ्खानुपुङ्खपतितैर्ज्योतींषीव नभोघनैः ॥२४॥

पदच्छेद— न ते अदृश्यन्त संछन्नाः शरजालैः समन्ततः ।
पुङ्खानुपुङ्खपतितैः ज्योतींषि इव नभो घनैः ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	नहीं	पुङ्खानु	५.	बाण पर
ते	१२.	वे	पुङ्ख	६.	बाण
अदृश्यन्त	१४.	दिखाई पड़ते थे	पतितैः	७.	गिरने के कारण
संछन्नः	४.	ढक जाने के कारण (तथा)	ज्योतींषि	१०.	तारों के
शर	२.	बाणों के	इव	११.	समान
जालैः	३.	जाल से	नभो	९.	आकाश के
समन्ततः ।	१.	चारों ओर से आ रहे	घनैः ॥	८.	बादलों से ढके

श्लोकार्थ—चारों ओर से आ रहे बाणों के जाल से ढक जाने के कारण तथा बाण पर बाण गिरने के कारण बादलों से ढके आकाश में तारों के समान वे नहीं दिखाई पड़ते थे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

न ते शस्त्रास्त्रवर्षौघा ह्यासेदुः सुरसैनिकान् ।
छिन्नाः सिद्धपथे देवैर्लघुहस्तैः सहस्रधा ॥२५॥

पदच्छेद— न ते शस्त्र अस्त्र वर्षौघाः हि आसेदुः सुर सैनिकान् ।
छिन्नाः सिद्ध पथे देवैः लघु हस्तैः सहस्रधा ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं	सैनिकान्	६.	सैनिकों को
ते	१.	वह	छिन्नाः	१४.	टुकड़े कर दिये
शस्त्र	२.	शस्त्रों और	सिद्ध पथे	१०.	आकाश में ही
अस्त्र	३.	अस्त्रों की	देवैः	६.	देवताओं ने
वर्षौघाः	४.	वर्षा	लघु	१२.	लाघव से
हि आसेदुः	८.	छू सकी	हस्तैः	११.	अपने हस्त
सुर	५.	देव	सहस्रधा ॥	१३.	उनके हजार-हजार

श्लोकार्थ—वह शस्त्रों और अस्त्रों की वर्षा देव सैनिकों को नहीं छू सकी । देवताओं ने अपने हस्त लाघव से उनके हजार-हजार टुकड़े कर दिये ॥

षड्विंशः श्लोकः

अथ क्षीणास्त्रशस्त्रौघा गिरिशृङ्गद्रुमोपलैः ।
अभ्यवर्षन् सुरबलं चिच्छिदुस्तांश्च पूर्ववत् ॥२६॥

पदच्छेद— अथ क्षीण अस्त्र शस्त्र ओघाः गिरिशृङ्ग द्रुम उपलैः ।
अभ्यवर्षन् सुरबलम् चिच्छिदुः तान् च पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	अभ्यवर्षन्	११.	वर्षाने लगे
क्षीण	५.	समाप्त हो जाने पर	सुर	६.	देवताओं की
अस्त्र	२.	अस्त्रों और	बलम्	७.	सेना पर
शस्त्र	३.	शस्त्रों का	चिच्छिदुः	१६.	काट गिराया
ओघाः	४.	समूह	तान्	१५.	उन्हें भी देवताओं ने
गिरिशृङ्ग	८.	पर्वतों के शिखर	च	१२.	और
द्रुम	६.	वृक्ष और	पूर्व	१३.	पहले के
उपलैः ।	१०.	पत्थर	वत् ॥	१४.	समान

श्लोकार्थ—इसके बाद अस्त्रों और शस्त्रों का समूह समाप्त हो जाने पर देवताओं की सेना पर पर्वतों के शिखर, वृक्ष और पत्थर वर्षाने लगे । और पहले के समान उन्हें भी देवताओं ने काट गिराया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तानक्षतान् स्वस्तिमतो निशाम्य शस्त्रास्त्रपूगैरथ वृत्रनाथाः ।
द्रुमैर्दृषद्भिर्विविधाद्रिशृङ्गैरविक्षतांस्तत्रसुरिन्द्रसैनिकान् ॥२७॥

पदच्छेद— तान् अक्षतान् स्वस्ति मतः निशाम्य शस्त्र अस्त्र पूगैः अथ वृत्रनाथाः ।
द्रुमैः दृषद्भिः विविध अद्रिशृङ्गैः अविक्षतान् तत्रसुः इन्द्र सैनिकान् ॥

शब्दार्थ—

तान्	६. उन्हें	वृत्रनाथाः	२. वृत्रासुर के अनुयायी
अक्षतान्	७. घावरहित (तथा)	द्रुमैः	११. वृक्षों
स्वस्ति	८. कल्याण	दृषद्भिः	१२. चट्टानों (और)
मतः	९. युक्त	विविध	१३. अनेक
निशाम्य	१०. सुनकर	अद्रिशृङ्गैः	१४. पर्वत शिखरों से भी
शस्त्र	४. शस्त्र के	अविक्षतान्	१५ घाव रहित
अस्त्र	३. अस्त्र	तत्रसुः	१८. बहुत डर गये
पूगैः	५. समूहों से	इन्द्र	१६. इन्द्र
अथ	१. तदनन्तर	सैनिकान्	१७. सैनिकों को (देखकर)

श्लोकार्थ—तदनन्तर वृत्रासुर के अनुयायी अस्त्र-शस्त्र के समूहों से उन्हें घाव रहित तथा कल्याण युक्त सुनकर तथा वृक्षों, चट्टानों और अनेक पर्वत शिखरों से भी घावरहित इन्द्र सैनिकों को देखकर बहुत डर गये ।

अष्टाविंशः श्लोकः

सर्वे प्रयासा अभवन् विमोघाः कृताः कृता देवगणेषु दैत्यैः ।
कृष्णानुकूलेषु यथा महत्सु क्षुद्रैः प्रयुक्ता रुशती रूक्षवाचः ॥२८॥

पदच्छेद— सर्वे प्रयासाः अभवन् विमोघाः कृताः कृताः देवगणेषु दैत्यैः ।
कृष्ण अनुकूलेषु यथा महत्सु क्षुद्रैः प्रयुक्ताः रुशती रूक्षवाचः ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	४. सभी	कृष्ण	९. श्रीकृष्ण द्वारा
प्रयासाः	५. प्रयास	अनुकूलेषु	१०. सुरणित भक्त
अभवन्	७. हो गये	यथा	८. जैसे
विमोघाः	६. निष्फल	क्षुद्रैः महत्सु	११. सज्जनों पर
कृताः कृताः	३. बार-बार किये गये	प्रयुक्ताः	१३. क्षुद्र मनुष्या के द्वारा प्रयुक्त
देवगणेषु	२. देवताओं के प्रति	रुशती	१४. अमङ्गलमय
दैत्यैः ।	१. दैत्यों द्वारा	रूक्षवाचः ॥	१५. कठोरवाणी व्यर्थ हो जाती है

श्लोकार्थ—दैत्यों द्वारा देवताओं के प्रति बार-बार किये गये सभी प्रयास निष्फल हो गये । जैसे कृष्ण द्वारा सुरक्षित भक्त सज्जनों पर क्षुद्र मनुष्यों के द्वारा प्रयुक्त अमङ्गलमय कठोर वाणी व्यर्थ हो जाती है ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ते स्वप्रयासं वितथं निरीक्ष्य हरावभक्ता हतयुद्धदर्पाः ।
पलायनायाजिमुखे विसृज्य पतिं मनस्ते दधुरात्तसाराः ॥२९॥

पदच्छेद— ते स्व प्रयासम् वितथम् निरीक्ष्य हरौ अभक्ताः हत युद्ध दर्पाः ।
पलायनाय आजिमुखे विसृज्य पतिम् मनस्ते दधुः आत्तसाराः ॥

शब्दार्थ—

ते	६. वे (असुर)	दर्पाः	२. घमंड
स्व	२. अपने	पलायनाय	१४. भाग खड़े हुये (देवताओं ने)
प्रयासम्	८. प्रयत्न को	आजिमुखे	१२. युद्ध भूमि में ही
वितथम्	९. असफल हुआ	विसृज्य	१३. छोड़कर
निरीक्ष्य	१०. देख कर	पतिम्	११. अपने स्वामी वृत्रासुर को
हरौ	४. भगवान् से	मनः	१६. मन का
अभक्ताः	५. विमुख	ते	१५. उनके
हत	३. नष्ट हो चुका है	दधुः	१८. छीन लिया था
युद्ध	१. जिनका वीरता का	आत्तसाराः ॥	१७. सारा बल-पौरुष

श्लोकार्थ—जिनका वीरता का घमंड नष्ट हो चुका है, ऐसे भगवान् से विमुख वे असुर अपने प्रयत्न को असफल हुआ देखकर अपने स्वामी वृत्रासुर को युद्ध भूमि में ही छोड़कर भाग खड़े हुये । देवताओं ने उनके मन का सारा बल पौरुष छीन लिया था ।

त्रिंशः श्लोकः

वृत्रोऽसुरांस्ताननुगान् मनस्वी प्रधावतः प्रेक्ष्य बभाष एतत् ।
पलायितं प्रेक्ष्य बलं च भग्नं भयेन तीव्रेण विहस्य वीरः ॥३०॥

पदच्छेद— वृत्रः असुरान् तान् अनुगान् मनस्वी प्रधावतः प्रेक्ष्य बभाषे एतत् ।
पलायितम् प्रेक्ष्य बलम् च भग्नम् भयेन तीव्रेण विहस्य वीरः ॥

शब्दार्थ—

वृत्रः	२. वृत्रासुर ने	पलायितम्	११. भागते हुये
असुरान्	५. असुरों को	प्रेक्ष्य	१५. देखकर वह
तान्	३. उन	बलम्	१४. बल को
अनुगान्	४. अनुयायी	च	१२. और
मनस्वी	१. धीर-वीर	भग्नम्	१३. टूटे हुये
प्रधावतः	६. भागते हुये	भयेन	१०. भय से
प्रेक्ष्य	७. देखकर	तीव्रेण	१७. अत्यधिक जोर से
बभाषे	९. कहा	विहस्य	१८. हंसा
एतत् ।	८. यह	वीरः ॥	१६. वीर

श्लोकार्थ—धीर-वीर वृत्रासुर ने उन अनुयायी असुरों को भागते हुये देखकर यह कहा। भय से भागते हुये और टूटे हुये बल को देख कर वह वीर अत्यधिक जोर से हँसा ।

एकत्रिंशः श्लोकः

कालोपपन्नां रुचिरां मनस्विनामुवाच वाचं पुरुषप्रवीरः ।
हे विप्रचित्ते नमुचे पुलोमन् मयानर्वञ्छम्बर मे शृणुध्वम् ॥३१॥

पदच्छेद— काल उपपन्नाम् रुचिराम् मनस्विनाम् उवाच वाचम् पुरुष प्रवीरः ।
हे विप्रचित्ते नमुचे पुलोमन् मय अनर्वन् शम्बर मे शृणुध्वम् ॥

शब्दार्थ—

कालः	२. समय के	हे विप्रचित्ते !	८. हेविप्रचित्ते !
उपपन्नम्	३. अनुसार	नमुचे	९. नमुचि
रुचिराम्	५. सुन्दर	पुलोमन्	१०. पुलोमा
मनस्विनाम्	४. वीरोचित	मय अनर्वन्	११. मय, अनर्वा
उवाच	७. कहा	शम्बर	१२. शम्बर
वाचम्	६. वाणी से	मे	१३. मेरी
पुरुषप्रवीरः	१. वीरशिरोमणि वृत्रासुर ने	शृणुध्वम् ॥	१४. बात को सुनो

श्लोकार्थ—वीरशिरोमणि वृत्रासुर ने समय के अनुसार वीरोचित सुन्दर वाणी से कहा। हे विप्रचित्ते ! नमुचे, पुलोमा, मय, अनर्वा, शम्बर मेरी बात को सुनो ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

जातस्य मृत्युर्ध्रुव एष सर्वतः प्रतिक्रिया यस्य न चेह क्लृप्ता ।
लोको यशश्चाथ ततो यदि ह्यमुं को नाम मृत्युं न वृणीत युक्तम् ॥३२॥

पदच्छेद— जातस्य मृत्युः ध्रुव एव सर्वतः प्रतिक्रिया यस्य न च इह क्लृप्ता ।
लोकः यशः च अथ ततः यदि हि अमुम् कः नाम मृत्युम् न वृणीत युक्तम् ॥

शब्दार्थ—

जातस्य	१. उत्पन्न हुये व्यक्ति की	लोकः	१३. स्वर्गादि लोक
मृत्युः	२. मृत्यु	यशः	१५. सुयश मिल रहा है
ध्रुवः	३. निश्चित है	च अथ	१४. और
एष सर्वतः	४. यह सब जानते हैं	ततः	१६. तो
प्रतिक्रिया	६. उपाय	यदि	१२. यदि
यस्य	५. जिसका	हि अमुम्	११. ऐसी स्थिति में
न	९. नहीं	कः नाम	१७. कौन व्यक्ति
च	८. और	मृत्युम्	१९. मृत्यु को
इह	७. इस संसार में	न वृणीत	२०. नहीं अपनायेगा
क्लृप्ता ।	१०. बताया है	युक्तम् ।	१८. उत्तम

श्लोकार्थ—उत्पन्न हुये व्यक्ति की मृत्यु निश्चित है। यह सब जानते हैं। जिसका उपाय इस संसार में और नहीं बताया है। ऐसी स्थिति में यदि स्वर्गादिलोक और सुयश मिल रहा है तो कौन व्यक्ति उत्तम मृत्यु को नहीं अपनायेगा ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

द्वौ संमताविह मृत्यू दुरापौ यद् ब्रह्मसंधारणया जितासुः ।
कलेवरं योगरतो विजह्याद् यदग्रणीर्वीरशयेऽनिवृत्तः ।।३३।।

पदच्छेद— द्वौ संमतौ इह मृत्यू दुरापौ यद् ब्रह्म संधारणया जित असुः ।
कलेवरम् योगरतः विजह्याद् यद् अग्रणीः वीरशये अनिवृत्तः ।।

शब्दार्थ—

द्वौ	२. दो प्रकार की	कलेवरम्	१०. शरीर का
संयतौ	५. मानी गई है	योगरतः	६. योगी पुरुष का
इह	१. इस संसार में	विजह्याद्	११. परित्याग करना
मृत्यू	३. मृत्यु	यद्	१२. और दूसरा
दुरापौ	४. परम दुर्लभ	अग्रणीः	१४. आगे रह कर
यद्	६. एक तो		
ब्रह्मसंधारणया	७. ब्रह्म चिन्तन के द्वारा	वीरशये	१३. युद्ध भूमि में
जित	९. जीत कर	अनिवृत्तः ।	१५. प्राण त्यागना
असुः ।।	८. प्राणों को		

श्लोकार्थ—इस संसार में दो प्रकार की मृत्यु परम दुर्लभ मानी गई है। एक तो योगी पुरुष का ब्रह्मचिन्तन के द्वारा प्राणों को जीत कर शरीर का परित्याग करना । और दूसरा युद्धभूमि में आगे रह कर प्राण त्यागना ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठस्कन्धे इन्द्रवृत्रासुरवधवर्णनं नाम दशमः अध्यायः ।।१०।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— त एवं शंसतो धर्मं वचः पत्युरचेतसः ।
नैवागृह्णन् भयत्रस्ताः पलायनपरा नृप ॥१॥

पदच्छेद— ते एवम् शंशतः धर्मम् वचः पत्युः अचेतसः ।
न एव अगृह्णन् भय त्रस्ताः पलायनपराः नृप ॥

शब्दार्थ—

ते	८. उस	न एव	१३. नहीं
एवम्	२. इस प्रकार	अगृह्णन्	१४. ग्रहण किया
शंसतः	११. अनुकूल	भय	३. भय से
धर्मम्	१०. धर्म के	त्रस्ताः	४. डरी हुई
वचः	१२. वचनों को	पलायन	६. भागती हुई
पत्युः	९. स्वामी के	पराः	७. सेना ने
अचेतसः	५. अचेत हो रही (तथा)	नृप ॥	१०. हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार भय से डरी हुई, अचेत हो रही तथा भागती हुई सेना ने उस स्वामी के धर्म के अनुकूल वचनों को ग्रहण नहीं किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

विशीर्यमाणां पृतनामासुरीमसुरर्षभः ।
कालानुकूलैस्त्रिदशैः काल्यमानामनाथवत् ॥२॥

पदच्छेद— विशीर्यमाणाम् पृतनाम् आसुरीम् असुरर्षभः ।
काल अनुकूलैः त्रिदशैः काल्यमानाम् अनाथवत् ॥

शब्दार्थ—

विशीर्यमाणाम्	६. छिन्न-भिन्न होती हुई	अनुकूलैः	३. अनुकूलता के कारण
पृतनाम्	१०. सेना को (देखा)	त्रिदशैः	४. देवताओं के द्वारा
आसुरीम्	७. असुरों की	काल्यमानाम्	५. ख़देड़ी जा रही तथा
असुरर्षभः ।	१. असुरों के स्वामी ने	अनाथ	८. अनाथ
काल	२. समय की	वत् ॥	९. जैसी

श्लोकार्थ—असुरों के स्वामी ने समय की अनुकूलता के कारण देवताओं के द्वारा खदेड़ी जा रही तथा छिन्न-भिन्न होती हुई असुरों की अनाथ जैसी सेना को देखा ॥

तृतीयः श्लोकः

दृष्ट्वातप्यत संक्रुद्ध इन्द्रशत्रुरमर्षितः ।
तान् निवार्यौजसा राजन् निर्भर्त्स्येदमुवाच ह ।।३।।

पदच्छेद— दृष्ट्वा अतप्यत संक्रुद्धः इन्द्र शत्रुः अमर्षितः ।
तान् निवार्य ओजसा राजन् निर्भर्त्स्य इदम् उवाच ह ।।

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	२. देखकर	तान्	९. उस देव-सेना को
अतप्यत	७. तिलमिला उठा	निवार्य	१०. रोकते हुये (तथा)
संक्रुद्धः	६. क्रोध के कारण	ओजसा	८. वेगपूर्वक
इन्द्र	३. इन्द्र का	राजन्	१. हे राजन् ! यह
शत्रुः	४. शत्रु (वृत्रासुर)	निर्भर्त्स्य	११. डाट कर
अमर्षितः ।	५. असहिष्णुता (और)	इदम्	१२. यह
		उवाच ह ।।	१३. कहा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यह देखकर इन्द्र का शत्रु वृत्रासुर असहिष्णुता और क्रोध के कारण तिलमिला उठा। बलपूर्वक उस देव-सेना को रोकते हुये तथा डाट कर यह कहा।

चतुर्थः श्लोकः

किं व उच्चरितैर्मातुर्धावद्भिः पृष्ठतो हतैः ।
न हि भीतवधः श्लाघ्यो न स्वर्ग्यः शूरमानिनाम् ।।४।।

पदच्छेद— कि वः उच्चरितैः मातुः धावद्भिः पृष्ठतः हतैः ।
न हि भीत वधः श्लाघ्यः न स्वर्ग्यः शूरमानिनाम् ।।

शब्दार्थ—

किम्	६. क्या लाभ है	न हि	१२. नहीं है
वः	१. तुम लोग तो	भीत	७. भय भीत को
उच्चरितैः	३. मल-मूत्र जैसे (अति तुच्छ हो)	वधः	८. मारना
मातुः	२. माता के	एवम् श्लाघ्यः	१०. प्रशंसनीय
धावद्भिः	४. भागते हुये असुरों को	न स्वर्ग्य	११. नहीं है और स्वर्ग देने वाला भी
पृष्ठतः हतैः ।	५. पीछे से मारने से	शूर मानिनाम् ।।	९. शूरवीर और स्वाभिमानियों के लिये

श्लोकार्थ—तुम लोग तो माता के मल-मूत्र जैसे अति तुच्छ हो एवम् भागते हुये असुरों को पीछे से मारने से क्या लाभ है। भयभीत को मारना शूरवीर और स्वाभिमानियों के लिये प्रशंसनीय नहीं है। और स्वर्ग देने वाला भी नहीं है ।।

पञ्चमः श्लोकः

यदि वः प्रधने श्रद्धा सारं वा क्षुल्लका हृदि ।
अग्रे तिष्ठत मात्रं मे न चेद् ग्राम्यसुखे स्पृहा ।।५।।

पदच्छेद— यदि वः प्रधने श्रद्धा सारम् वा क्षुल्लका हृदि ।
अग्रे तिष्ठत मात्रम् मे न चेत् ग्राम्य सुखे स्पृहा ।।

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि	अग्रे	१५.	सामने
वः	२.	तुम लोगों के	तिष्ठत	१६.	आ जाओ
प्रधने	४.	युद्ध करने की	मात्रम्	१३.	थोड़ी देर के लिये
श्रद्धा	७.	उत्साह है	मे	१४.	मेरे
सारम्	५.	शक्ति	न चेत्	१२.	नहीं है तो
वा	६.	और	ग्राम्य	८.	विषय
क्षुल्लका	१०.	थोड़ी सी भी	सुखे	९.	सुख में
हृदि ।	३.	मन में	स्पृहा ।।	११.	लालसा

श्लोकार्थ—यदि तुम लोगों के मन में युद्ध करने की शक्ति और उत्साह है, विषय सुख में थोड़ी सी भी लालसा नहीं है तो थोड़ी देर के लिये मेरे सामने आ जाओ ।।

षष्ठः श्लोकः

एवं सुरगणान् क्रुद्धो भीषयन् वपुषा रिपून् ।
व्यनदत् सुमहाप्राणो येन लोका विचेतसः ।।६।।

पदच्छेद— एवम् सुरगणान् क्रुद्धः भीषयन् वपुषा रिपून् ।
व्यनदत् सुमहाप्राणः येन लोकाः विचेतसः ।।

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार वह	व्यनदत्	८.	सिंह नाद किया
सुरगणान्	४.	देवताओं को	सुमहाप्राणः	७.	इतने जोर से
क्रुद्धः	६.	क्रोध में भर कर	येन	९.	जिससे
भीषयन्	५.	भयभीत करने लगा (उसने)	लोकाः	१०.	बहुत से लोग
वपुषा	२.	अपने शरीर से	विचेतसः ।।	११.	अचेत हो गये
रिपून् ।	३.	शत्रु			

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह अपने शरीर से शत्रु देवताओं को भयभीत करने लगा । उसने इतने जोर से सिंहनाद किया, जिससे बहुत से लोग अचेत हो गये ।।

सप्तमः श्लोकः

तेन देवगणाः सर्वे वृत्रविस्फोटनेन वै ।
निपेतुर्मूर्च्छिता भूमौ यथैवाशनिना हताः ॥७॥

पदच्छेद— तेन देव गणाः सर्वे वृत्र विस्फोटनेन वै ।
निपेतुः मूर्च्छिता भूमौ यथैव अशनिना हताः ॥

शब्दार्थ—

तेन	३.	उस	**निपेतुः**	९.	गिर पड़े
देवगणाः	६.	देव समूह	**मूर्च्छिताः**	७.	मूर्च्छित होकर
सर्वे	५.	सभी	**भूमौ**	८.	पृथ्वी पर
वृत्र	२.	वृत्रासुर की	**यथैव**	१०.	जैसे उन पर
विस्फोटनेन	४.	गर्जना से	**अशनिना**	११.	वज्र का
वै ।	१.	निश्चय ही	**हताः ॥**	१२.	प्रहार हुआ हो

श्लोकार्थ—निश्चय ही उस वृत्रासुर की गर्जना से सभी देव समूह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े जैसे उन पर वज्र का प्रहार हुआ हो ॥

अष्टमः श्लोकः

ममर्द पद्भ्यां सुरसैन्यमातुरं निमीलिताक्षं रणरङ्गदुर्मदः ।
गां कम्पयन्नुद्यतशूल ओजसा नालं वनं यूथपतिर्यथोन्मदः ॥८॥

पदच्छेद— ममर्द पद्भ्याम् सुरसैन्यम् आतुरम् निमीलितअक्षम् रणरंग दुर्मदः ।
गाम् कम्पयन् उद्यत शूलः ओजसा नालम् वनम् यूथपतिः यथा उन्मदः ॥

शब्दार्थ—

ममर्द	१८.	रौंदने लगा	**गाम्**	१०.	पृथ्वी को
पद्भ्याम्	१७.	अपने पैरों से	**कम्पयन्**	११.	कँपाता हुआ
सुर	१५.	देव	**उद्यत**	७.	तीक्ष्ण
सैन्यम्	१६.	सेना को	**शूलः**	८.	त्रिशूल लेकर
आतुरम्	१४.	भयभीत	**ओजसा**	९.	वेग से
निमीलित	१२.	भय से बन्द	**नालम्**	३.	नरकट का
अक्षम्	१३.	आँखों वाली	**वनम्**	४.	वन (रौंद डालता है वैसे ही
रणरंग	६.	रणबाँकुरा (वृत्रासुर)	**यूथपतिः**	२.	गजराज
दुर्मदः ।	५.	उन्मत्त	**यथा उन्मदः ॥**	१.	जैसे मदोन्मत्त

श्लोकार्थ—जैसे मदोन्मत्त गजराज नरकट का वन रौंद डालता है । वैसे ही उन्मत्त रणबाँकुरा वृत्रासुर तीक्ष्ण त्रिशूल लेकर वेग से पृथ्वी को कँपाता हुआ भय से बन्द आँखों वाली भयभीत देवसेना को अपने पैरों से रौंदने लगा ॥

नवमः श्लोकः

विलोक्य तं वज्रधरोऽत्यमर्षितः, स्वशत्रवेऽभिद्रवते महागदाम् ।
चिक्षेप तामापततीं सुदुःसहां, जग्राह वामेन करेण लीलया ॥९॥

पदच्छेद—**विलोक्य तम् वज्रधरः अति अमर्षितः स्वशत्रवे अभिद्रवते महागदाम् ।**
चिक्षेप ताम् आपततीम् सुदुःसहाम्, जग्राह वामेन करेण लीलया ॥

शब्दार्थ—

विलोक्य	३.	देखकर	चिक्षेप	१०.	चलाई गई (तथा)
तम्	२.	उसे	ताम्	९.	उस
वज्रधरः	१.	वज्र पाणि इन्द्र ने	आपततीम्	११.	आने वाली
अति	४.	और भी	सुदुःसहाम्	१२.	असहनीय गदा को (उसने)
अमर्षित	५.	चिढ़ कर	जग्राह	१६.	पकड़ लिया
स्वशत्रवे	६.	अपने शत्रु पर	वामेन	१४.	बायें
अभिद्रवते	८.	प्रहार किया	करेण	१३.	हाथ से ही
महागदाम् ।	७.	बहुत बड़ी गदा से	लीलया ॥	१३.	लीला पूर्वक

श्लोकार्थ—वज्रपाणि इन्द्र ने उसे देखकर और भी चिढ़कर अपने शत्रु पर बहुत बड़ी गदा से प्रहार किया। उस चलाई गई तथा आनेवाली असहनीय गदा को उसने लीलापूर्वक बायें हाथ से ही पकड़ लिया ॥

दशमः श्लोकः

स इन्द्रशत्रुः कुपितो भृशंतया, महेन्द्रवाहं गदयोग्रविक्रमः ।
जघान कुम्भस्थल उन्नदन्मृधे, तत्कर्म सर्वे समपूजयन्नृप ॥१०॥

पदच्छेद—**सः इन्द्र शत्रुः कुपितः भृशम् तया, महेन्द्र वाहम् गदया उग्रविक्रमः ।**
जघान कुम्भस्थले उन्नदन् मृधे, तत् कर्म सर्वे सम् अपूजयन् नृप ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	उसने	**जघान**	१३.	प्रहार किया (और)
इन्द्र शत्रुः	३.	इन्द्र का शत्रु (वृत्रासुर	**कुम्भस्थल**	११.	मस्तक पर
कुपितः	५.	क्रुद्ध हुआ	**उन्नदन्**	१२.	गरजने लगा
भृशम्	४.	अत्यधिक	**मृधे**	१४.	युद्ध भूमि में
तया	९.	उसी	**तत्**	१५.	उस के
महेन्द्र	२.	इन्द्र के	**कर्म**	१६.	कार्य की
वाहम्	८.	वाहन ऐरावत के	**सर्वे**	१७.	सभी लोग
गदया	१०.	गदा से	**सम्अपूजयन्**	१८.	प्रशंसा करने लगे
उग्रविक्रमः ।	२.	परम पराक्रमी	**नृप ॥**	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! परम पराक्रमी इन्द्र का शत्रु वृत्रासुर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ। उसने इन्द्र के वाहन ऐरावत के उसी गदा से गरजते हुये मस्तक पर प्रहार किया। युद्धभूमि में उसके कार्य की सभो लोग प्रशंसा करने लगे ॥

एकादशः श्लोकः

ऐरावतो वृत्रगदाभिमृष्टो विघूर्णितोऽद्रिः कुलिशाहतो यथा ।
अपासरद् भिन्नमुखः सहेन्द्रो मुञ्चन्नसृक् सप्तधनुर्भृशार्तः ॥११॥

पदच्छेद—**ऐरावतः वृत्रगदा अभिमृष्टः विघूर्णितः अद्रिः कुलिश आहतः यथा ।**
अपासरद् भिन्नमुखः सहेन्द्रः मुञ्चन् असृक् सप्तधनुः भृशार्तः ॥

शब्दार्थ—

ऐरावतः	४.	ऐरावत हाथी	**यथा ।**	८.	समान
वृत्र	१.	वृत्रासुर की	**अपासरद्**	१६.	पीछे हट गया
गदा	२.	गदा के	**भिन्नमुखः**	१०.	सिर के फट जाने से (वह)
अभिमृष्टः	३.	आघात से	**सहेन्द्रः**	१४.	इन्द्र सहित
विघूर्णितः	९.	तिलमिला उठा	**मुञ्चन्**	१३.	गिराता हुआ
अद्रिः	७.	पर्वत के	**असृक्**	१२.	रक्त
कुलिश	५.	वज्र से	**सप्तधनुः**	१५.	सात धनुष (सत्ताइस हाथ)
आहतः	६.	आहत	**भृशार्तः ॥**	११.	अत्यन्त व्याकुल हो गया (और)

श्लोकार्थ—वृत्रासुर की गदा के आघात से ऐरावत हाथी वज्र से आहत पर्वत के समान तिलमिला उठा । सिर के फट जाने से वह अत्यन्त व्याकुल हो गया । और रक्त गिराता हुआ इन्द्र सहित सात धनुष एवम् सत्ताइस हाथ पीछे हट गया ॥

द्वादशः श्लोकः

न सन्नवाहाय विषण्णचेतसे प्रायुङ्क्त भूयः स गदां महात्मा ।
इन्द्रोऽमृतस्यन्दिकराभिमर्शवीतव्यथक्षतवाहोऽवतस्थे ॥१२॥

पदच्छेद—**न सन्न वाहाय विषण्ण चेतसे, प्रायुङ्क्त भूयः स गदाम् महात्मा ।**
इन्द्रः अमृतस्यन्दि कर अभिमर्श, वीतव्यथ क्षतवाहः अवतस्थे ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	**इन्द्रः**	१०.	इन्द्र ने
सन्न	३.	मूर्च्छित हो जाने से	**अमृतस्यन्दि**	११.	अमृत बहाने वाले
अवाहाय	२.	अपने वाहन ऐरावत के	**कर**	१२.	हाथ के
विषण्ण चेतसे	४.	दुःखी इन्द्र पर	**अभिशर्म**	१३.	स्पर्श से
प्रायुङ्क्त	९.	चलाया	**वीत**	१७.	मिटा दी (और)
भूयः	७.	फिर से	**व्यथ**	१६.	व्यथा
सः	५.	उस	**क्षत**	१४.	घायल
गदाम्	६.	गदा को	**वाहः**	१५.	ऐरावत की
महात्मा ।	१.	महात्मा इन्द्र ने	**अवतस्थे ॥**	१८.	वे फिर रण भूमि में आ गये

श्लोकार्थ—महात्मा इन्द्र ने अपने महान् ऐरावत के मूर्च्छित हो जाने से दुःखी इन्द्र पर उस गदा को फिर से नहीं चलाया । इन्द्र ने अमृत बहाने वाले हाथ के स्पर्श से घायल ऐरावत की व्यथा मिटा दी । और फिर रणभूमि में आ गये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

स तं नृपेन्द्राहवकाम्यया रिपुं वज्रायुधं भ्रातृहणं विलोक्य ।
स्मरंश्च तत्कर्म नृशंसमंहः शोकेन मोहेन हसञ्जगाद ॥१३॥

पदच्छेद— सः तम् नृपेन्द्र आहव काम्यया रिपुम् वज्र आयुधम् भ्रातृहणम् विलोक्य ।
स्मरन् च तत् कर्म नृशंसम् अंहः शोकेन मोहेन हसन् जगाद ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उस वृत्रासुर ने	स्मरन्	१३.	स्मरण करके
तम्	३.	उस	च तत्	६.	और उनके उस
नृपेन्द्र	५.	महाराज इन्द्र को	कर्म	१२.	कर्म का
आहव काम्यया	६.	युद्ध की कामना से	नृशंसम्	१०.	क्रूर तथा
रिपुम्	४.	शत्रु	अंहः	११.	अहंकार युक्त
वज्र आयुधम्	७.	वज्र रूप शस्त्र (लिये हुये)	शोकेन	१४.	शोक और
भ्रातृहणम्	२.	भाई विश्व रूप का वध करने वाले	मोहेन	१५.	मोह से युक्त होकर
विलोक्य ।	८.	देखकर	हसन् जगाद ॥	१६.	हँसते हुये (ऐसा) कहा

श्लोकार्थ—उस वृत्रासुर ने भाई विश्व रूप का वध करने वाले उस शत्रु महाराज इन्द्र को युद्ध की कामना से वज्र हाथ में लिये हुये देखकर और उनके उस क्रूर तथा अहंकार युक्त कर्म का स्मरण करके शोक और मोह से युक्त होकर हँसते हुये ऐसा कहा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

वृत्र उवाच—दिष्टया भवान् मे समवस्थितो रिपुर्यो ब्रह्महा गुरुहा भ्रातृहा च ।
दिष्ट्यानृणोऽद्याहमसत्तम त्वया मच्छूलनिर्भिन्नदृषद्‌धृदाचिरात् ॥१४॥

पदच्छेद— दिष्ट्या भवान् मे सम्‌अवस्थितः रिपुः यः ब्रह्महा गुरुहा भ्रातृहा च ।
दिष्ट्या अनृणः अद्य अहम् असत्तम, त्वया मत् शूल निर्भिन्न दृषत् हृदाअचिरात् ॥

शब्दार्थ—

दिष्ट्या	१.	भाग्य से	दिष्टया	१२.	भाग्य से
भवान्	२.	आप	अनृणः	२१.	उऋण हो जाऊँगा
मे सम्	३.	मेरे सामने	अद्य	१८.	आज ही
अवस्थितः	४.	खड़े हैं	अहम्	२९.	मैं
रिपुः	१०.	शत्रु हैं	असत्तम	११.	अरे दुष्ट
यः	५.	जो	त्वया	१४.	तेरे
ब्रह्महा	६.	ब्राह्मण का हत्यारा	मत् शूल	१७.	अपने शूल से
गुरुहा	७.	गुरु को मारने वाला	निर्भिन्न	१६.	विदीर्ण करके
भ्रातृहा	६.	भाई का वध करने वाला	दृषत्	१५.	पत्थर के समान कठोर
च ।	८.	और	हृदा	१६.	हृदय को
			अचिरात् ॥	१३.	शीघ्र ही

श्लोकार्थ—भाग्य से आप मेरे सामने खड़े हैं। जो ब्राह्मण का हत्यारा, गुरु को मारने वाला और भाई का वध करने वाला शत्रु है। अरे दुष्ट, भाग्य से शीघ्र ही तेरे पत्थर के समान कठोर हृदय को अपने शूल से आज ही विदीर्ण करके मैं उऋण हो जाऊँगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

योनोऽग्रजस्यात्मविदो द्विजातेर्गुरोरपापस्य च दीक्षितस्य ।
विश्रम्य खड्गेन शिरांस्यवृश्चत् पशोरिवाकरुणः स्वर्गकामः ॥१५॥

पदच्छेद— यः नः अग्रजस्य आत्मविदः द्विजातेः गुरोः अपापस्य च दीक्षितस्य ।
विश्रम्य खड्गेन न शिरांसि अवृश्चत् पशोः इव अकरुणः स्वर्गकामः ॥

शब्दार्थ—

यः नः	१.	जो मेरा	विश्रम्य	९.	विश्वास दिलाकर
अग्रजस्य	२.	बड़ा भाई	खड्गेन	१०.	तलवार से
आत्मविदः	३.	आत्मवेत्ता	शिरांसि	११.	तीनों सिर
द्विजातेः	४.	ब्राह्मण (और)	अवृश्चत्	१२.	काट लिये
गुरोः	५.	गुरु	पशोः	१६.	पशु का (सिर) काट लेता है
अपापस्य	६.	पाप रहित	इव	१३.	जैसे
च	७.	और	अकरुणः	१४.	निर्दयी
दीक्षितस्य ।	८.	यज्ञ में दीक्षित था (उसे)	स्वर्गकामः ॥	१५.	स्वर्गकामी पुरुष

श्लोकार्थ—जो मेरा बड़ा भाई आत्मवेत्ता ब्राह्मण और गुरु, पाप रहित और यज्ञ में दीक्षित था। उसे विश्वाश दिलाकर तलवार से तीनों सिर काट लिये; जैसे निर्दयी स्वर्गकामी पशु का सिर काट लेता है ॥

षोडशः श्लोकः

ह्रीश्रीदयाकीर्तिभिरुज्झितं त्वां स्वकर्मणा पुरुषादैश्च गर्ह्यम् ।
कृच्छ्रेण मच्छूलविभिन्नदेहमस्पृष्टवह्निं समदन्ति गृध्राः ॥१६॥

पदच्छेद— ह्रीश्रीदयाकीर्तिभिरुज्झितं त्वां स्वकर्मणा पुरुषादैश्च गहर्चम् ।
कृच्छ्रेण मत् शूल विभिन्न देहम् अस्पृष्ट वह्निम् समदन्ति गृध्राः ॥

शब्दार्थ—

ह्री श्री	१.	लज्जा लक्ष्मी	कृच्छ्रेण	१३.	पूर्णरूप से
दया कीर्तिभिः	२.	दया कीर्ति ने	मत्	१०.	मेरे
उज्झितम्	४.	छोड़ दिया है	शूल	११.	त्रिशूल से
त्वाम्	३.	तुम्हें	विभिन्न	१४.	छिन्न भिन्न हो जायेगा
स्व	५.	अपने	देहम्	१२.	तुम्हारा शरीर
कर्मणा	६.	कर्मों के कारण	अस्पृष्ट	१६.	स्पर्श भी नहीं कर सकती
पुरुषादैः	७.	नरभक्षी-राक्षस	वह्निम्	१५.	अग्नि तुम्हारा
च	८.	भी (तुम्हारी)	समदन्ति	१८.	नोच-नोच कर खायेंगे
गहर्चम् ।	९.	निन्दा करते हैं	गृध्राः ॥	१७.	तुम्हें गीध

श्लोकार्थ - हे इन्द्र लज्जा-लक्ष्मी-दया-कीर्ति ने तुम्हें छोड़ दिया है। अपने कर्मों के कारण नरभक्षी राक्षस भी तुम्हारी निन्दा करते हैं। मेरे त्रिशूल से तुम्हारा शरीर पूर्णरूप से छिन्न-भिन्न हो जायेगा। अग्नि तुम्हारा स्पर्श भी नहीं कर सकती। तुम्हें गीध नोच-नोच कर खायेंगे ॥

सप्तदशः श्लोकः

अन्येऽनु ये त्वेह नृशंसमज्ञा ये ह्युद्यतास्त्राः प्रहरन्ति मह्यम् ।
तैर्भूतनाथान् सगणान् निशातत्रिशूलनिर्भिन्नगलैर्यजामि ॥१७॥

पदच्छेद— अन्ये अनु ये त्वा इह नृशंसम् अज्ञाः ये हि उद्यत अस्त्राः प्रहरन्ति मह्यम् ।
तैः भूत नाथान् सगणान् निशात त्रिशूल निर्भिन्न गलैः यजामि ॥

शब्दार्थ—

अन्ये	२.	दूसरे	मह्यम् ।	१०.	मुझपर
अनु	७.	अनुयायी बन कर	तैः	१२.	उनकी
ये	१.	जो	भूत	१८.	भैरव इत्यादि
त्वा	६.	तेरे	नाथान्	१९.	भूत नाथों को
इह	५.	यहाँ	सगणान्	१७.	गणों के सहित
नृशंसम्	३.	क्रूर	निशात	१४.	तीक्ष्ण
अज्ञाः	४.	अज्ञानी देवता	त्रिशूल	१५.	त्रिशूल से
ये हि	८.	जो	निर्भिन्न	१६.	काट कर
उद्यत अस्त्राः	९.	प्रचण्ड शस्त्रों से	गलैः	१३.	गर्दनों को
प्रहरन्ति	११.	प्रहार कर रहे हैं	यजामि ॥	२०.	बलि चढ़ाऊँगा

श्लोकार्थ –जो दूसरे क्रूर अज्ञानी देवता यहाँ तेरे अनुयायी बनकर प्रचण्ड शस्त्रों से मुझपर प्रहार कर रहे हैं, उनकी गर्दनों को तीक्ष्ण त्रिशूल से काट कर गणों के सहित भैरव इत्यादि भूत नाथों को बलि चढ़ाऊँगा ॥

अष्टादशः श्लोकः

अथो हरे मे कुलिशेन वीर हर्ता प्रमथ्यैव शिरो यदीह ।
तत्रानृणो भूतबलिं विधाय मनस्विनां पादरजः प्रपत्स्ये ॥१८॥

पदच्छेद— अथो हरे मे कुलिशेन वीरहर्ता प्रमथ्य एव शिरो यदीह ।
तत्र अनृणः भूत बलिम् विधाय मनस्विनाम् पादरजः प्रपत्स्ये ॥

शब्दार्थ—

अथो	३.	तदनन्तर	तत्र	१०.	तब मैं
हरे	२.	इन्द्र	अनृणः	१४.	ऋण मुक्त हो जाऊँगा (और)
मे	६.	मेरी सेना को	भूत	११.	पशु-पक्षियों को अपने
कुलिशेन	५.	वज्र से	बलिम्	१२.	शरीर की बलि
वीर	१.	हे वीर	विधाय	१३.	देकर
हर्ता	९.	हरण कर ले	मनस्विनाम्	१५.	महापुरुषों की
प्रमथ्य	७.	छिन्न-भिन्न करके	पाद	१६.	चरण
एवशिरो	८.	मेरा ही शिर	रजः	१७.	रज
यदीह ।	४.	सम्भव है अपने	प्रपत्स्ये ॥	१८.	प्राप्त करूँगा

श्लोकार्थ—हे वीर ! इन्द्र, तदनन्तर सम्भव है अपने ब्रह्म से मेरी सेना को छिन्न-भिन्न करके मेरा ही शिर हरण कर ले । तब मैं पशु-पक्षियों को अपने शरीर की बलि देकर ऋण मुक्त हो जाऊँगा । और महापुरुषों की चरण रज प्राप्त करूँगा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

सुरेश कस्मान्न हिनोषि वज्रं पुरः स्थिते वैरिणि मय्यमोघम् ।
मा संशयिष्ठा न गदेव वज्रं स्यान्निष्फलं कृपणार्थेव याच्ञा ॥१९॥

पदच्छेद— सुरेश कस्मात् न हिनोषि वज्रम्, पुरः स्थिते वैरिणि मयि अमोघम् ।
मा संशयिष्ठाः न गदा इव वज्रम्, स्यात् निष्फलम् कृपणार्था इव याच्ञा ॥

शब्दार्थ—

सुरेश	१.	हे देवराज ! इन्द्र	मा	११.	मत करो
कस्मात् न	८.	क्यों नहीं	संशयिष्ठाः	१०.	सन्देह
हिनोषि	९.	छोड़ते हो	न	१६.	नहीं
वज्रम्	७.	वज्र को	गदा इव वज्रम्	१५.	गदा के तुल्य यह वज्र
पुरः	२.	सामने	स्यात्	१८.	जायेगा
स्थिते	३.	स्थित	निष्फलम्	१७.	निष्फल
वैरिणि	५.	शत्रु पर	कृपणार्था	१२.	कञ्जूस पुरुष से की गई
मयि	४.	मुझ	इव	१४.	समान
अमोघम् ।	६.	निष्फल न होने वाले	याच्ञा ॥	१३.	याचना के

श्लोकार्थ—हे देवराज ! इन्द्र, सामने स्थित मुझ शत्रु पर निष्फल न होने वाले वज्र को क्यों नहीं छोड़ते हो । सन्देह मत करो, कञ्जूष पुरुष से की गई याचना के समान गदा के तुल्य यह वज्र निष्फल नहीं जायेगा ॥

विंशः श्लोकः

नन्वेष वज्रस्तव शक्र तेजसा हरेर्दधीचेस्तपसा च तेजितः ।
तेनैव शत्रुं जहि विष्णुयन्त्रितो यतो हरिर्विजयः श्रीर्गुणास्ततः ॥२०॥

पदच्छेद— ननु एष वज्रः तव शक्र तेजसा, हरेः दधीचेः तपसा च तेजितः ।
तेन एव शत्रुम् जहि विष्णु यन्त्रितः, यतः हरिः विजयः श्रीः गुणाः ततः ॥

शब्दार्थ—

ननु	२.	निश्चित ही	तेजितः ।	१०.	शक्तिमान् हो रहा है
एष वज्रः	४.	यह वज्र	तेन एव	१३.	इस शक्ति से ही
तव	३.	तेरा	शत्रुम् जहि	१४.	मुझ शत्रु को मार डालो
शक्र	१.	हे इन्द्र !	विष्णु	११.	भगवान् विष्णु द्वारा
तेजसा	६.	तेज से	यन्त्रितः	१२.	नियन्त्रित
हरेः	५.	श्री हरि के	यतः	१५.	क्योंकि जहाँ
दधीचेः	८.	दधीचि ऋषि की	हरिः	१६.	श्रीहरि हैं
तपसा	९.	तपस्या से	विजयः श्रीः	१७.	विजय लक्ष्मी और
च	७.	और	गुणाः ततः ॥	१८.	सारे गुण भी वहीं पर हैं

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! निश्चित ही तेरा यह वज्र श्रीहरि के तेज से और दधीचि ऋषि की तपस्या से शक्तिमान् हो रहा है। भगवान् विष्णु द्वारा नियन्त्रित इस शक्ति से ही मुझ शत्रु को मार डालो, क्योंकि जहाँ श्रीहरि हैं वि

एकविंशः श्लोकः

अहं समाधाय मनो यथाऽऽह सङ्कर्षणस्तच्चरणारविन्दे ।
त्वद्वज्ररंहोलुलितग्राम्यपाशो गतिं मुने याम्यपविद्धलोकः ॥२१॥

पदच्छेद— अहम् समाधाय मनः यथा आह सङ्कर्षणः तत् चरणारविन्दे ।
त्वद् वज्र रंहः लुलित ग्राम्य पाशः गतिम् मुने यामि अपविद्धलोकः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	४.	मैं	त्वद्	९.	तुम्हारे
समाधाय	८.	समाहित कर दूंगा (तब)	वज्ररंहः	१०.	वज्र का वेग (मेरे)
मनः	५.	मन को	लुलित	१२.	काट देगा (और मैं)
यथा	२.	जिस प्रकार	ग्राम्यपाशः	११.	विषय भोग रूपी फन्दे को
आह	३.	कहा (था)	गतिम्	१५.	गति को
सङ्कर्षणः	१.	भगवान् सङ्कर्षण ने	मुनेः	१४.	मुनि जनोचित
तत्	६.	उनके	यामि	१६.	प्राप्त करूँगा
चरणारविन्दे ।	७.	चरण कमलों में	अपविद्ध लोकः ॥	१३.	शरीर त्याग कर

श्लोकार्थ—भगवान् सङ्कर्षण ने जिस प्रकार कहा था । मैं मन को उनके चरण कमलों में समाहित कर दूँगा । तब तुम्हारे वज्र का वेग मेरे विषय भोग रूपी फन्दे को काट देगा । और मैं शरीर त्याग कर मुनि जनोचित गति को प्राप्त करूँगा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

पुंसां किलैकान्तधियां स्वकानां याः सम्पदो दिवि भूमौ रसायाम् ।
न राति यद् द्वेष उद्वेग आधिर्मदः कलिर्व्यसनं संप्रयासः ॥२२॥

पदच्छेद— पुंसाम् किल एकान्तधियाम् स्वकानाम् याः सम्पदः दिवि भूमौ रसायाम् ।
न राति यत् द्वेषः उद्वेग आधिः, मदः कलिः व्यसनम् संप्रयासः ॥

शब्दार्थ—

पुंसाम्	२.	जो पुरुष भगवान् से	न राति	१०.	नहीं देते हैं
किल	१.	निश्चय ही	यत्	११.	क्योंकि उनसे
एकान्त	३.	अनन्य	द्वेषः	१२.	द्रोह
धियाम्	४.	प्रेम करने वाले हैं (वे)	उद्वेग	१३.	व्याकुलता
स्वकानाम्	५.	उनके निज जन हैं	आधिः	१४.	मानसिक व्यथा
याः	६.	जो	मदः	१५.	अभिमान
सम्पदः	७.	सम्पत्तियाँ	कलिः	१६.	कलह
दिवभूमौ	८.	स्वर्ग और पृथ्वी पर (तथा)	व्यसनम्	१७.	दुःख और
रसायाम् ।	९.	रसातल में हैं (वे)	संप्रयासः ॥	१८.	परिश्रम आदि उत्पन्न होते हैं

श्लोकार्थ—निश्चय ही जो पुरुष भगवान् से अनन्य प्रेम करने वाले हैं। वे उनके निज जन हैं। जो सम्पत्तियाँ स्वर्ग और पृथ्वी पर तथा रसातल में हैं वे नहीं देते हैं। क्योंकि उनसे द्रोह, व्याकुलता, मानसिक व्यथा, अभिमान, कलह, दुःख और परिश्रम आदि उत्पन्न होते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

त्रैवर्गिकायासविघातमस्मत्पतिर्विधत्ते पुरुषस्य शक्र ।
ततोऽनुमेयो भगवत्प्रसादो यो दुर्लभोऽकिञ्चनगोचरोऽन्यैः ॥२३॥

पदच्छेद - त्रैवर्गिक आयास विघातम् अस्मत् पतिः विधत्ते पुरुषस्य शक्र ।
ततः अनुमेयः भगवत् प्रसादः यः दुर्लभः अकिञ्चन गोचरः अन्यैः ॥

शब्दार्थ—

त्रैवर्गिक	५.	धर्म अर्थ काम सम्बन्धी	ततः	९.	उससे
आयास	६.	प्रयास को	अनुमेयः	११.	अनुमान होता है
विघातम्	७.	नष्ट	भगवत् प्रसादः	१०.	भगवान् की कृपा का
अस्मत्	२.	हमारे	यः	१२.	जो कृपा
पतिः	३.	स्वामी	दुर्लभः	१६.	दुर्लभ है
विधत्ते	८.	कर देते हैं	अकिञ्चन	१३.	अकिञ्चन भक्तों के
पुरुषस्य	४.	अपने भक्तों के	गोचरः	१४.	अनुमान में आने योग्य तथा
शक्र ।	१.	हे इन्द्र !	अन्यैः ॥	१५.	दूसरों के लिये

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! हमारे स्वामी अपने भक्तों के धर्म,अर्थ, काम सम्बन्धी प्रयास को नष्ट कर देते हैं। उससे भगवान् की कृपा का अनुमान होता है। जो कृपा अकिञ्चन भक्तों के अनुमान में आने योग्य तथा दूसरों के लिये दुर्लभ है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अहं हरे तव पादैकमूलदासानुदासो भवितास्मि भूयः ।
मनः स्मरेतासुपतेर्गुणांस्ते गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः ॥२४॥

पदछेन्द— अहम् हरे तव पाद एकमूल दास अनुदासः भविता अस्मि भूयः ।
मनः स्मरेत असुपतेः गुणान् ते गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	२.	मैं	मनः	१०.	मेरा मन
हरे	१.	हे भगवन् !	स्मरेत	१४.	स्मरण करें
तव	३.	आपके	असुपतेः	१२.	प्राण पति के
पाद	४.	चरणों के	गुणान्	१३.	गुणों का
एकमूल	५.	अनन्य प्रेमी	ते	११.	आप
दास	६.	सेवकों का	गृणीत्	१६.	उच्चारण करें (और)
अनुदासः	७.	सेवक	वाक्	१५.	मेरी वाणी आपके नामों का
भवितास्मि	८.	होऊँ	कर्म	१८.	सेवा
भूयः ।	९.	पुनः	करोतु	२९.	करें
			कायः ॥	१७.	मेरा शरीर आपकी ही

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! मैं आपके चरणों के अनन्य प्रेमी सेवकों का सेवक होऊँ। पुनः मेरा मन आप प्राणपति के गुणों का स्मरण करे। मेरी वाणी आपके नामों का उच्चारण करें। और मेरा शरीर आपकी ही सेवा करें ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

न नाकपृष्ठं न च पारमेष्ठ्य' न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम् ।
न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा समञ्जस त्वा विरहय्य काङ्क्षे ॥२५॥

पदच्छेद— न नाक पृष्ठम् न च पारमेष्ठ्यम् न सार्व भौमम नरसाधिपत्यम् ।
न योगसिद्धिः पुनः भवम् वा समञ्जस त्वा विरहय्य काङ्क्षे ॥

शब्दार्थ—

न	४. नहीं		न	१३. नहीं
नाक पृष्ठम्	५. स्वर्ग को		योगसिद्धीः	१४. योग की सिद्धियों को
न च	६. नहीं		अपुनर्भवम्	१६. मोक्ष को भी नहीं
पारमेष्ठ्यम्	७. ब्रह्मलोक को		वा	१५. अथवा
न	८. न		समञ्जस	१. हे सौभाग्यनिधे ! मैं
सार्व	१०. साम्राज्य को		त्वा	२. आपको
भौमम्	९. भूमण्डल के		विरहय्य	३. छोड़कर
न	११. नहीं		काङ्क्षे ॥	१७. चाहता हूँ
रसाधिपत्यम् ।	१२. रसातल के स्वामित्व को			

श्लोकार्थ— हे सौभाग्यनिधे ! मैं आपको छोड़कर नहीं स्वर्ग को, नहीं ब्रह्मलोक को, न भूमण्डल के साम्राज्य को, नहीं रसातल के स्वामत्विको नहीं योग की सिद्धियों को अथवा मोक्ष को भी नहीं चाहता हूँ ॥

षड्विंशः श्लोकः

अजातपक्षा इव मातरं खगाः स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः ।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा मनोऽरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम् ॥२६॥

पदच्छेद— अजातपक्षाः इव मातरम् खगाः स्तन्यम् यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः ।
प्रियम् प्रिया इव व्युषितम् विषण्णा मनः अरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम् ॥

शब्दार्थ—

अजातपक्षाः	३. पंखहीन		प्रियम्	१२. प्रियतम के लिये
इव	२. जैसे		प्रिय इव	१०. प्रियतमा जैसे
मातरम्	५. माता को		व्युषितम्	११. परदेश में गये
खगाः	४. पक्षी		विषण्ण	१३. उत्कंठित रहती है (वैसे ही)
स्तन्यम्	९. दूध को (और)		मनः	१४. मेरा मन
यथा	६. जैसे		अरविन्दाक्ष	१. हे कमलनयन !
वत्सतराः	८. बछड़े		दिदृक्षते	१६. देखने के लिये उत्कंठित है
क्षुधार्ताः ।	७. भूख से पीडित		त्वाम् ॥	१५. आपका

श्लोकार्थ—हे कमल नयन ! जैसे पंखहीन पक्षी माता को, जैसे भूख से पीडित बछड़े दूध को और जैसे प्रियतमा परदेश में गये प्रियतम के लिये उत्कंठित रहती है वैसे ही मेरा मन आपको देखने के लिये उत्कंठित है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ममोत्तमश्लोकजनेषु सख्यं संसारचक्रे भ्रमतः स्वकर्मभिः ।
त्वन्माययाऽऽत्मात्मजदारगेहेष्वासक्तचित्तस्य न नाथ भूयात् ॥

पदच्छेद— **मम उत्तमश्लोक जनेषु सख्यम् संसार चक्रे भ्रमतः स्वकर्मभिः ।**
त्वत् मायया आत्मा आत्मजदार गेहेषु आसक्त चित्तस्य न नाथ भूयात् ॥

शब्दार्थ—

मम	२.	मेरी	**मायया**	१३.	माया से
उत्तमश्लोक	४.	भगवान् के	**आत्मा**	१४.	शरीर
जनेषु	५.	भक्त जनों से	**आत्मज**	१५.	पुत्र
सख्यम्	३.	मित्रता	**दार**	१६.	स्त्री
संसार	९.	संसार के	**गेहेषु**	१७.	घर आदि में
चक्रे	१०.	चक्कर में	**आसक्त**	१८.	आसक्त
भ्रमतः	११.	घूमते हुये (और)	**चित्तस्य**	१९.	चित्त वालों के साथ
स्व	७.	अपने	**न**	२०.	नहीं (होवे)
कर्मभिः ।	८.	कर्मों द्वारा	**नाथ**	१.	हे प्रभो !
त्वत्	१२.	आपकी	**भूयात् ॥**	६.	होवे

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! मेरी मित्रता भगवान् के भक्त जनों से होवे । अपने कर्मों द्वारा संसार के चक्कर में घूमते हुये और आपकी माया से शरीर, पुत्र, स्त्री, घर आदि में आसक्त चित्तवालों के साथ नहीं होवे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे
वृत्रस्य इन्द्रोपदेशो नाम एकादशः अध्यायः ॥११॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
षष्ठः स्कन्धः
द्वादशः अध्यायः
प्रथम श्लोकः

एवं जिहासुर्नृप देहमाजौ मृत्युं वरं विजयान्मन्यमानः ।
शूलं प्रगृह्याभ्यपतत् सुरेन्द्रं यथा महापुरुषं कैटभोऽप्सु ॥१॥

पदच्छेद— एवम् जिहासुः नृप देहम् आजौ मृत्युम् वरम् विजयात् मन्यमानः ।
शूलम् प्रगृह्य अभ्यपतत् सुरेन्द्रम् यथा महापुरुषम् कैटभः अप्सु ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२. इस प्रकार	शूलम्	१०. त्रिशूल को
जिहासुः	५. त्यागने का इच्छुक	प्रगृह्य	११. उठा कर
नृप	१. हे राजन् !	अभ्यपतत्	१३. टूट पड़ा
देहम्	४. शरीर को	सुरेन्द्रम्	१२. देवराज इन्द्र पर
आजौ	३. युद्ध में	यथा	१४. जिस प्रकार
मृत्युम्	६. मृत्यु को	महा	१६. महान्
वरम्	८. श्रेष्ठ	पुरुषम्	१७. पुरुष विष्णु के ऊपर
विजयात्	७. विजय से	कैटभः	१८. कैटभासुर (टूट पड़ा था)
मन्यमानः ।	९. मानता हुआ (वह)	अप्सु ॥	१५. जल में

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार युद्ध में शरीर को त्यागने का इच्छुक, मृत्यु को विजय से श्रेष्ठ मानता हुआ वह वृत्रासुर त्रिशूल को उठा कर देवराज इन्द्र पर टूट पड़ा । जिस प्रकार जल में महान् पुरुष विष्णु के ऊपर कैटभासुर टूट पड़ा था ॥

द्वितीयः श्लोकः

ततो युगान्ताग्निकठोरजिह्वमाविध्य शूलं तरसासुरेन्द्रः ।
क्षिप्त्वा महेन्द्राय विनद्य वीरो हतोऽसि पापेति रुषा जगाद ॥२॥

पदच्छेद— ततः युगान्त अग्नि कठोर जिह्वम् आविध्य शूलम् तरसा असुरेन्द्रः ।
क्षिप्त्वा महेन्द्राय विनद्य वीरः हतः असि पाप इति रुषा जगाद ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उसके बाद	असुरेन्द्रः ।	१०. वृत्रासुर ने
युगान्त	२. प्रलय कालीन	क्षिप्त्वा	१२. फेंककर (और)
अग्नि	३. अग्नि की	महेन्द्राय	११. इन्द्र पर
कठोर	५. तीक्ष्ण	विनद्य	१३. गर्जन करके
जिह्वम्	४. लपटों के समान	वीरः	९. वीर
आविध्य	७. घुमाकर	हतः असि	१५. तू मार गया है
शूलम्	६. त्रिशूल को	पाप	१४. रे पापी
तरसा	८. बड़े वेग से	इति	१६. इस प्रकार
		रुषा जगाद ॥	१७. क्रोध से कहा

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रलय कालीन अग्नि की लपटों के समान तीक्ष्ण त्रिशूल को घुमाकर बड़े वेग से वीर वृत्रासुर ने इन्द्र पर फेंक कर और गर्जन करके रे पापी तू मारा गया है । इस प्रकार क्रोध से कहा ॥

तृतीयः श्लोकः

ख आपतत् तद् विचलद् ग्रहोल्कवन्निरीक्ष्य दुष्प्रेक्ष्यमजातविक्लवः ।
वज्रेण वज्री शतपर्वणाच्छिनद् भुजं च तस्योरगराजभोगम् ।।३।।

पदच्छेदः—खे आपतत् तद् विचलत् ग्रह उल्कवत् निरीक्ष्य दुष्प्रेक्ष्यम् अजात विक्लवः ।
वज्रेण वज्री शतपर्वणा अच्छिनत् भुजम् च तस्य उरगराज भोगम् ।।

शब्दार्थ—

खे आपतत्	१.	आकाश में गिरते हुये	**वज्रेण**	१३.	वज्र से
तद्	७.	उस (त्रिशूल को)	**वज्री**	११.	इन्द्र ने
विचलत्	५.	चक्कर काटते हुये	**शतपर्वणा**	१२.	सौ गांठों वाले अपने
ग्रहः	२.	ग्रह	**अच्छिनत्**	१८.	काट दिया
उल्कावत्	४.	उल्का के समान	**भुजम्**	१७.	भुजा को
निरीक्ष्य	८.	देखकर	**च**	३.	और
दुष्प्रेक्ष्यम्	६.	कठिनाई से देखे जाने योग्य	**तस्य**	१६.	उस वृत्रासुर की
अजात	१०.	रहित	**उरगराज**	१४.	सर्पराज वासुकि के)
विक्लवः ।	९.	अधीरता से	**भोगम् ।।**	१५.	शरीर के समान

श्लोकार्थ—आकाश में गिरते हुये ग्रह और उल्का के समान चक्कर काटते हुये कठिनाई से देखे जाने योग्य उस त्रिशूल को देखकर अधीरता से रहित इन्द्र ने सौ गांठों वाले अपने वज्र से सर्पराज वासुकि के शरीर के समान उस वृत्रासुर की भुजा को काट दिया ।।

चतुर्थः श्लोकः

छिन्नैकबाहुः परिघेण वृत्रः संरब्ध आसाद्य गृहीतवज्रम् ।
हनौ तताडेन्द्रमथामरेभं वज्रं च हस्तान्न्यपतन्मघोनः ।।४।।

पदच्छेदः— छिन्न एक बाहुः परिघेण वृत्रः संरब्धः आसाद्य गृहीत वज्रम् ।
हनौ तताड इन्द्रम् अथ अमरेभम् वज्रम् च हस्तात् न्यपतत् मघोनः ।।

शब्दार्थ—

छिन्न	१.	उस कटी हुई	**तताड**	१३.	प्रहार किया
एक बाहुः	२.	एक भुजा वाले	**इन्द्रम्**	८.	इन्द्र की
परिघेण	१२.	गदा से	**अथ**	१०.	और
वृत्रः	३.	वृत्रासुर ने	**अमरेभम्**	११.	ऐरावत पर
संरब्धः	४.	क्रुद्ध होकर	**वज्रम्**	१७.	बज्र
आसाद्य	५.	पास में जाकर	**च**	१४.	तथा
गृहीत	७.	लिये हुये	**हस्तात्**	१६.	हाथ से
वज्रम् ।	६.	वज्र	**न्यपतत्**	१८.	गिर पड़ा
हनौ	९.	ठोड़ी पर	**मघोनः ।।**	१५.	इन्द्र के

श्लोकार्थ—उस कटी हुई एक भुजा वाले वृत्रासुर ने क्रुद्ध होकर पास में जाकर वज्र लिये हुये इन्द्र की ठोड़ी पर और ऐरावत पर गदा से प्रहार किया तथा इन्द्र के हाथ से वज्र गिर पड़ा ।।

पञ्चमः श्लोकः

वृत्रस्य कर्मातिमहाद्भुतं तत् सुरासुराश्चारणसिद्धसङ्घाः ।
अपूजयंस्तत् पुरुहूतसंकटं निरीक्ष्य हा हेति विचुक्रुशुर्भृशम् ॥५॥

पदच्छेद— वृत्रस्य कर्म अति महा अद्भुतम् तत् सुर असुराः चारणसिद्ध सङ्घाः ।
अपूजयन् तत् पुरुहूत संकटम् निरीक्ष्य हा हा इति विचुक्रुशुः भृशम् ॥

शब्दार्थ—

वृत्रस्य	१.	वृत्रासुर के	अपूजयन्	१०.	प्रशंसा करने लगे
कर्म	६.	कार्य की	तत्	११.	उस
अति	३.	अत्यन्त	पुरुहूत	१२.	इन्द्र की
महा	४.	महान्	संकटम्	१३.	विपत्ति को
अद्भुतम्	५.	अलौकिक	निरीक्ष्य	१४.	देखकर
तत्	२.	उस	हाहा	१५.	हाय-हाय
सुर-असुर	७.	देवता राक्षस	इति	१६.	कह कर
चारण-सिद्ध	८.	चारण-शिद्धों के	विचुक्रुशुः	१८.	चिल्लाने लगे
सङ्घाः ।	९.	समूह	भृशम् ॥	१७.	बारम्बार

श्लोकार्थ—वृत्रासुर के उस अत्यन्त महान् अलौकिक कार्य को देवता, राक्षस, चारण, सिद्धों के समूह प्रशंसा करने लगे। उस इन्द्र की विपत्ति को देखकर हाय-हाय कहकर बारम्बार चिल्लाने लगे ॥

षष्ठः श्लोकः

इन्द्रो न वज्रं जगृहे विलज्जितश्च्युतं स्वहस्तादरिसन्निधौ पुनः ।
तमाह वृत्रो हर आत्तवज्रो जहि स्वशत्रुं न विषादकालः ॥६॥

पदच्छेद— इन्द्रः न वज्रम् जगृहे विलज्जितः च्युतम् स्वहस्ताद् अरि सन्निधौ पुनः ।
तम् आह वृत्रः हरे आत्त वज्रः जहि स्व शत्रुम् च विषाद कालः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः	६.	देवराज इन्द्र ने	तम्	११.	उस (इन्द्र से)
न	८.	नहीं	आह	१२.	कहा
वज्रम्	४.	वज्र को	वृत्रः	१०.	वृत्रासुर ने
जगृहे	९.	उठाया (तब)	हरे	१३.	हे इन्द्र !
विलज्जितः	५.	लज्जित	आत्त वज्रः	१४.	वज्र उठा कर
च्युतम्	३.	गिरे हुये	जहि	१६.	मार डालो (यह)
स्वहस्ताद्	२.	अपने हाथ से	स्वशत्रुम्	१५.	अपने शत्रु को
अरि सन्निधौ	१.	शत्रु के समीप	न	१८.	नहीं है
पुनः ।	७.	फिर से	विषादकालः ॥	१७.	विषाद करने का

श्लोकार्थ—शत्रु के समीप अपने हाथ से गिरे हुये वज्र को लज्जित देवराज इन्द्र ने फिर से नहीं उठाया। तब वृत्रासुर ने उस इन्द्र से कहा। हे इन्द्र ! वज्र उठा कर अपने शत्रु को मार डालो। यह विषाद करने का समय नहीं है ॥

सप्तमः श्लोकः

युयुत्सतां कुत्रचिदाततायिनां जयः सदैकत्र न वै परात्मनाम् ।
विनैकमुत्पत्तिलयस्थितीश्वरं सर्वज्ञमाद्यं पुरुषं सनातनम् ॥७॥

पदच्छेद— युयुत्सताम् कुत्र चित् आततायिनाम् जयः सदा एकत्र न वै परात्मनाम् ।
विना एकम् उत्पत्ति लय स्थिति ईश्वरम् सर्वज्ञम् आद्यम् पुरुषम् सनातनम् ॥

शब्दार्थ—

युयुत्सताम्	१.	युद्ध करने के इच्छुक	**एकम्**	८.	एकमात्र
कुत्रचित्	४.	कहीं भी	**उत्पत्ति**	९.	सृष्टि
आततायिनाम्	३.	आततायियों की	**लय**	१०.	प्रलय
जयः	६.	विजय	**स्थिति**	११.	स्थिति करने में
सदा एकत्र	५.	सर्वदा ही	**ईश्वरम्**	१२.	समर्थ
न वै	७.	नहीं होती (केवल)	**सर्वज्ञम्**	१३.	सब कुछ जानने वाले
परात्मनाम् ।	२.	देहाभिमानी	**आद्यम्**	१४.	प्रथम
विना	१७.	छोड़ कर	**पुरुषम्**	१५.	पुरुष
			सनातनम् ॥	१६.	सदा रहने वाले (भगवान् को)

श्लोकार्थ—युद्ध करने के इच्छुक देहाभिमानी आततायियों की कहीं भी सर्वदा ही विजय नहीं होती । केवल एक मात्र सृष्टि, प्रलय, स्थिति करने में समर्थ, सब कुछ जानने वाले, प्रथम पुरुष, सदा रहने वाले भगवान् को छोड़ कर ॥

अष्टमः श्लोकः

लोकाः सपाला यस्येमे श्वसन्ति विवशा वशे ।
द्विजा इव शिचा बद्धाः स काल इह कारणम् ॥८॥

पदच्छेद— लोकाः सपालाः यस्य इमे श्वसन्ति विवशाः वशे ।
द्विजा इव शिचाः बद्धाः सःकाल इह कारणम् ॥

शब्दार्थ—

लोकाः	२.	लोक (और)	**द्विजाः**	६.	पक्षियों के
सपालाः	३.	लोकपाल	**इव**	७.	समान
यस्य	८.	जिसके	**शिचाः**	४.	जाल में
इमे	१.	ये	**बद्धाः**	५.	बंधे हुये
श्वसन्ति	११.	साँस लेते हैं	**सः**	१२.	वह
विवशः	१०.	विवश होकर	**कालः**	१३.	काल ही
वशे ।	९.	अधीन	**इह कारणम् ॥**	१४.	इसमें कारण है

श्लोकार्थ—ये लोक और लोकपाल जाल में बंधे हुये पक्षियों के समान जिसके अधीन विवश होकर साँस लेते हैं वह काल ही इसमें कारण हैं ।

नवमः श्लोकः

ओजः सहो बलं प्राणममृतं मृत्युमेव च ।
तमज्ञाय जनो हेतुमात्मानं मन्यते जडम् ॥९॥

पदच्छेद— ओजः सहः बलम् प्राणम् अमृतम् मृत्युम् एव च ।
तम् अज्ञाय जनः हेतुम् आत्मानम् मन्यते जडम् ॥

शब्दार्थ—

ओजः	१.	तेज	तम्	७.	काल को
सहः	२.	सामर्थ्य	अज्ञाय	८.	न जानकर
बलम् प्राणम्	३.	शक्ति-प्राण	जनः	९.	मनुष्य
अमृतम्	४.	जीवन	हेतुम्	१३.	कारण
मृत्युम्	६.	मृत्यु रूप में स्थित	आत्मानम्	११.	शरीर को
एव	१२.	ही	मन्यते	१४.	मानता है
च ।	५.	और	जडम् ॥	१०.	जड़

श्लोकार्थ—तेज, सामर्थ्य, शक्ति, प्राण, जीवन और मृत्युरूप में स्थित काल को न जानकर मनुष्य जड शरीर को ही कारण मानता है ॥

दशमः श्लोकः

यथा दारुमयी नारी यथा यन्त्रमयो मृगः ।
एवं भूतानि मघवन्नीशतन्त्राणि विद्धि भोः ॥१०॥

पदच्छेद— यथा दारुमयी नारी यथा यन्त्रमयः मृगः ।
एवम् भूतानि मघवन् ईश तन्त्राणि विद्धि भोः ॥

शब्दार्थ—

यथा	३.	जैसे	भूतानि	९.	प्राणियों को
दारुमयी नारी	४.	लड़की बनी स्त्री (कठपुतली)	मघवन्	२.	इन्द्र
यथा	५.	जैसे (और)	ईश	१०.	परमात्मा के
यन्त्रमयः	६.	यन्त्र का बना	तन्त्राणि	११.	अधीन
मृगः	७.	मृग (दूसरे के अधीन होता है)	विद्धि	१२.	जानो
एवम् ।	८.	उसी प्रकार	भोः ॥	१.	हे

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! जैसे लकड़ी की बनी स्त्री (कठपुतली) और जैसे यन्त्र का बना मृग दूसरे के अधीन रहता है, उसी प्रकार प्राणियों को परमात्मा के अधीन जानो ॥

एकादशः श्लोकः

पुरुषः प्रकृतिर्व्यक्तमात्मा भूतेन्द्रियाशयाः ।
शक्नुवन्त्यस्य सर्गादौ न विना यदनुग्रहात् ॥११॥

पदच्छेद— पुरुष प्रकृतिः व्यक्तम् आत्मा भूत इन्द्रिय आशयाः ।
शक्नुवन्ति अस्य सर्ग आदौ न विनायत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

पुरुषः	४.	पुरुष	शक्नुवन्ति	१४.	समर्थ हो सकते
प्रकृतिः	५.	प्रकृति	अस्य	११.	इस संसार की
व्यक्तम्	६.	महत्तत्त्व	सर्ग आदौ	१२.	सृष्टि आदि करने में
आत्मा	७.	अहंकार	न	१३.	नहीं
भूत	८.	पञ्चभूत	विना	३.	बिना
इन्द्रिय	९.	इन्द्रिय (और)	यत्	१.	जिस परमात्मा की
आशयाः ।	१०.	अन्तः करण (चतुष्टय)	अनुग्रहात् ॥	२.	कृपा के

द्वादशः श्लोकः

अविद्वानेवमात्मानं मन्यतेऽनीशमीश्वरम् ।
भूतैः सृजति भूतानि ग्रसते तानि तैः स्वयम् ॥१२

पदच्छेद— अविद्वान् एवम् आत्मानम् मन्यते अनीशम् ईश्वरम् ।
भूतैः सृजति भूतानि ग्रसते तानि तैः स्वयम् ॥

श्लोकार्थ—जिस परमामा की कृपा के विना पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, पञ्चभूत, इन्द्रिय और अन्तः करण चतुष्टय इस संसार की सृष्टि आदि करने में समर्थ नहीं हो सकते ॥

शब्दार्थ—

अविद्वान्	२.	मूर्ख पुरुष ही	भूतैः	८.	प्राणियों से
एवम्	१.	इस प्रकार	सृजति	१०.	सृष्टि करते हैं (और)
आत्मानम्	३.	जीवात्मा को	भूतानि	९.	प्राणियों की
मन्यते	६.	मानता है (वस्तुतः)	ग्रसते	१२.	संहार करते हैं
अनीशम्	४.	स्वामी से रहित	तानि तैः	११.	उनका, उनके द्वारा ही
ईश्वरम् ।	५.	समर्थ	स्वयम् ॥	७.	साक्षात् परमात्मा ही

श्लोकार्थ—इस प्रकार मूर्ख पुरुष ही जीवात्मा को स्वामी से रहित समर्थ मानता है । वस्तुतः साक्षात् परमामा ही प्राणियों की सृष्टि करते हैं । और उनका उनके द्वारा ही संहार करते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

आयुः श्रीः कीर्तिरैश्वर्यमाशिषः पुरुषस्य याः ।
भवन्त्येव हि तत्काले यथानिच्छोर्विपर्ययाः ॥१३॥

पदच्छेद— आयुः श्रीः कीर्तिः एश्वर्यम् आशिषः पुरूषस्य याः ।
भवन्ति एव हि तत् काले यथ अनिच्छः विपर्ययाः ॥

शब्दार्थ—

आयुः	३.	आयु	भवन्ति	१४.	मिलती हैं
श्रीः	४.	लक्ष्मी	एव हि	१२.	वही
कीर्तिः	५.	यश	तत्	९.	अनुकूल
एश्वर्यम्	६.	विभव	काले	१०.	समय में
आशिषः	७.	आर्शीबाद	यथा	१.	जैसे
पुरूषस्य	२.	रुरूष को	अनिच्छः	११.	न चाहने पर भी मिल जाती हैं
याः ।	८.	जो ये सब वस्तुयें	विपर्ययाः ॥	१३.	प्रतिकूल समय में चाहने पर भी नहीं

श्लोकार्थ—जैसे पुरूष को आयु, लक्ष्मी, यश, आर्शीवाद जो ये सब वस्तुयें हैं। अनुकूल समय में न चाहने पर भी मिल जाती हैं। वही प्रतिकूल समय में चाहने पर भी नहीं मिलती हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

तस्मादकीर्तियशसोर्जयापजययोरपि ।
समः स्यात् सुखदुःखाभ्यां मृत्युजीवितयोस्तथा ॥१४॥

पदच्छेद— तस्मात् अकीर्ति यशसः जय अपजययोः अपि ।
समः स्यात् सुख दुःखाभ्याम् मृत्यु जीवितयोः तथा ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	समः	१२.	सम भाव से
अकीर्ति	२.	अपयश (और)	स्यात्	१३.	रहना चाहिये
यशसः	३.	यश में	सुख	६.	सुख (और)
जय	४.	जय (और)	दुःखाभ्याम्	७.	दुःख में
अपजययोः	५.	पराजय में	मृत्यु	९.	मरण और
अपि	११.	भी	जीवितयोः	१०.	जीवन में
			तथा ॥	८.	उसी प्रकार

श्लोकार्थ—इसलिए अपयश और यश में जय और पराजय में, सुख और दुःख में उसी प्रकार मरण और जीवन में भी समभाव से रहना चाहिये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति प्रकृतेर्नात्मनो गुणः ।
तत्र साक्षिणमात्मानं यो वेद न स बध्यते ।।१५।।

पदच्छेद— सत्त्वम् रजः तमः इति प्रकृतेः नः आत्मनः गुणः ।
तत्र साक्षिणम् आत्मानम् यः वेद न सः बध्यते ।।

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	१.	सत्त्वगुण	तत्र	१०.	उसमें
रजः	२.	रजोगुण	साक्षिणम्	१२.	साक्षी
तमः	३.	तमोगुण	आत्मानम्	१०.	आत्मा को
इति	४.	ये	यः	९.	जो मनुष्य
प्रकृतेः	५.	प्रकृति के (गुण हैं)	वेद	१३.	जानता है
न	८.	नहीं है	न	१५.	नहीं
आत्मनः	६.	आत्मा के	सः	१४.	वह गुणदोष से
गुणाः ।	७.	गुण	बध्यते ।।	१६.	बँधता है

श्लोकार्थ—सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण ये प्रकृति के गुण हैं । आत्मा के गुण नहीं है । जो मनुष्य उसमें आत्मा को साक्षी जानता है । वह गुण दोष से नहीं बँधता है ।।

षोडशः श्लोकः

पश्य मां निर्जितं शक्र वृक्णायुधभुजं मृधे ।
घटमानं यथाशक्ति तव प्राणजिहीर्षया ।।१६।।

पदच्छेद— पश्य माम् निर्जितम् शक्र वृक्ण आयुध भुजम् मृधे ।
घटमानम् यथा शक्ति तव प्राण जिहीर्षया ।।

शब्दार्थ—

पश्य	८.	देखो (कि मैं)	मृधे ।	२.	युद्ध में
माम्	७.	मुझे	घटमानम्	१४.	प्रयत्न कर रहा हूँ
निर्जितम्	३.	परास्त हुये (तथा)	यथा	१०.	अनुसार
शक्र	१.	हे इन्द्र !	शक्ति	९.	शक्ति के
वृक्ण	४.	कटे हुये	तव	११.	तुम्हारे
आयुध	५.	अस्त्र (और)	प्राण	१२.	प्राणों का
भुजम्	६.	भुजा वाले	जिहीर्षया ।।	१३.	हरण करने की इच्छा से

श्लोकार्थ—हे इन्द्र ! युद्ध में परास्त हुये तथा कटे हुये अस्त्र और भुजा वाले मुझे देखो कि मैं शक्ति के अनुसार तुम्हारे प्राणों का हरण करने की इच्छा से प्रयत्न कर रहा हूँ ।।

सप्तदशः श्लोकः

प्राणग्लहोऽयं समर इष्वक्षो वाहनासनः ।
अत्र न ज्ञायतेऽमुष्य जयोऽमुष्य पराजयः ॥१७॥

पदच्छेद— प्राण ग्लहः अयम् समरः इषु अक्षः वाहन असनः ।
अत्र न ज्ञायते अमुष्य जयः अमुष्य पराजयः ॥

शब्दार्थ—

प्राणग्लहः	३.	प्राणों की बाजी है	अत्र	८.	इसमें
अयम्	१.	यह	न	९.	नहीं
समरः	२.	जुये का खेल है (जिसमें)	ज्ञायते	१०.	जाना जाता है कि
इषु	४.	बाणों के	अमुष्य	११.	इसकी
अक्षः	५.	पासे हैं (और)	जयः	१२.	विजय होगी (या)
वाहन	६.	हाथी, घोड़े आदि	अमुष्य	१४.	इसकी
असनः ।	७.	चौसर हैं	पराजयः ॥	१३.	पराजय होगी

श्लोकार्थ—यह जुये का खेल है; जिसमें प्राणों की बाजी है; बाणों के पासे हैं; और इसमें नहीं जाना जाता है कि, इसकी विजय होगी या इसकी पराजय होगी ॥

अष्टदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच इन्द्रो वृत्रवचः श्रुत्वा गतालीकमपूजयत् ।
गृहीतवज्रः प्रहसंस्तमाह गतविस्मयः ॥१८॥

पदच्छेद— इन्द्रः वृत्र वचः श्रुत्वा गत अलीकम् अपूजयत् ।
गृहीत वज्रः प्रहसन् तम् आह गत विस्मयः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः	१.	देवराज इन्द्र ने	गृहीत	८.	उठाकर
वृत्र	२.	वृत्रासुर की	वज्रः	७.	वज्र को
वचः	४.	वाणी	प्रहसन्	९.	हंसते हुये
श्रुत्वा	५.	सुनकर (उसकी)	तत्	१०.	उस वृत्रासुर से
गत् अलीकम्	३.	निष्कपट	आह	१२.	कहा
अपूजयत् ।	६.	प्रशंसा की (और)	गतविस्मयः ॥	११.	आश्चर्य रहित होकर

श्लोकार्थ—देवराज इन्द्र ने वृत्रासुर की निष्कपट वाणी सुनकर उसकी प्रशंसा की और वज्र को उठाकर हंसते हुये उस वृत्रासुर से आश्चर्य रहित होकर कहा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अहो दानव सिद्धोऽसि यस्य ते मतिरीदृशी ।
भक्तः सर्वात्मनाऽऽत्मानं सुहृदं जगदीश्वरम् ॥१९॥

पदच्छेद— अहो दानव सिद्धः असि यस्य ते मतिः ईदृशी ।
भक्तः सर्व आत्मना आत्मानम् सुहृदम् जगदीश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है कि	ईदृशी ।	८.	ऐसी निर्मल है (क्योंकि तुम)
दानव	२.	हे असुर ! तुम	भक्तः	१४.	भक्त हो
सिद्धः	३.	सिद्ध पुरुष	सर्व	९.	सब
असि	४.	हो	आत्मनः	१०.	प्रकार से
यस्य	५.	जिससे	आत्मनाम्	११.	आत्मस्वरूप (सबके)
ते	६.	तुम्हारी	सुहृदम्	१२.	बन्धु (और)
मतिः ।	७.	बुद्धिः	जगदीश्वरम् ॥	१३.	संसार के स्वामी ईश्वर

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि हे असुर ! तुम सिद्ध पुरुष हो । जिससे तुम्हारी बुद्धि ऐसी निर्मल है । क्योंकि तुम सब प्रकार से आत्मस्वरूप, सबके बन्धु और संसार के स्वामी ईश्वर के भक्त हो ॥

विंशः श्लोकः

भवानतार्षीन्मायां वै वैष्णवीं जनमोहिनीम् ।
यद् विहायासुरं भावं महापुरुषतां गतः ॥२०॥

पदच्छेद— भवान् अतार्षीत् मायाम् वै वैष्णवीम् जन मोहनीम् ।
यद् विहाय आसुरम् भावम् महापुरुषताम् गतः ॥

शब्दार्थ—

भवान्	१.	आप	यद्	८.	जिससे तुम
अतार्षीत्	७.	पार कर गये हैं ।	विहाय	११.	छोड़ कर
मायाम्	६.	माया को	आसुरम्	९.	आसुरी
वै	२.	निश्चित रूप से	भावम्	१०.	भाव को
वैष्णवीम्	५.	भगवान् विष्णु की	महा	१२.	महा
जन	३.	लोगों को	पुरुषताम्	१३.	पुरुष
मोहिनीम् ।	४.	मोहित करने वाली	गतः ॥	१४.	हो गये हो

श्लोकार्थ—आप निश्चित रूप से लोगों को मोहित करने वाली भगवान् विष्णु की माया को पार कर गये हो । जिससे तुम आसुरी भाव को छोड़ कर महा पुरुष हो गये हो ॥

एकविंशः श्लोकः

खल्विदं महदाश्चर्यं यद् रजः प्रकृतेस्तव ।
वासुदेवे भगवति सत्त्वात्मनि दृढा मतिः ॥२१॥

पदच्छेद— खलु इदम् महत् आश्चर्यम् यद् रजः प्रकृतेः तव ।
वासुदेवे भगवति सत्त्व आत्मनि दृढा मतिः ॥

शब्दार्थ—

खलु	१.	निश्चित रूप से	तव ।	८.	तुम्हारी
इदम्	२.	यह	वासुदेवे	१३.	विष्णु में
महद्	३.	महान्	भगवति	१२.	भगवान्
आश्चर्यम्	४.	आश्चर्य है	सत्त्व	१०.	सत्त्व
यद्	५.	जो कि	आत्मनि	११.	स्वरूप
रजः	६.	रजोगुणी	दृढा	१४.	निश्चल हो गई है
प्रकृतेः ।	७.	स्वभाव के होने से भी	मतिः ॥	९.	बुद्धि

श्लोकार्थ—निश्चित रूप से यह महान् आश्चर्य है जो कि रजोगुणी स्वभाव के होने से भी तुम्हारी बुद्धि सत्त्व स्वरूप भगवान् विष्णु में निश्चल हो गई है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यस्य भक्तिर्भगवति हरौ निःश्रेयसेश्वरे ।
विक्रीडतोऽमृताम्भोधौ किं क्षुद्रैः खातकोदकैः ॥२२॥

पदच्छेद— यस्य भक्तिः भगवति हरौ निःश्रेयस ईश्वरे ।
विक्रीडतः अमृत अम्भोधौ किम् क्षुद्रैः खातक उदकैः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिसका	विक्रीडतः	९.	विहार करने वाले मनुष्य का
भक्तिः	२.	अनुराग	अमृत	७.	अमृत के
भगवति	५.	भगवान्	अम्भोधौ	८.	समुद्र में
हरौ	६.	श्री हरि में है (उसे)	किम्	१२.	क्या प्रयोजन है
निःश्रेयस	३.	कल्याण के	क्षुद्रैः	१०.	छोटे
ईश्वरे ।	४.	स्वामी	खातक उदकैः ॥	११.	गड्ढे के जल से

श्लोकार्थ—जिसका अनुराग कल्याण के स्वामी भगवान् श्री हरि में है, उसे सांसारिक भोगों से क्या प्रयोजन है, जैसे, अमृत के समुद्र में विहार करने वाले मनुष्य को छोटे गड्ढे के जल से क्या प्रयोजन है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच इति ब्रुवाणावन्योन्यं धर्मजिज्ञासया नृप।
युयुधाते महावीर्याविन्द्रवृत्रौ युधाम्पती ॥२३॥

पदच्छेद— इति ब्रुवाणौ अन्योन्यम् धर्म जिज्ञासया नृप।
युयुधाते महावीर्यौ इन्द्र वृत्रौ युधाम्पती ॥

शब्दार्थ—

इति	४.	इस प्रकार	युयुधाते	१२.	युद्ध करने लगे
ब्रुवाणौ	६.	बोलते हुये	महा	७.	महा
अन्योन्यम्	५.	परस्पर	वीर्यौ	८.	पराक्रमी (और)
धर्म	२.	धर्म को	इन्द्र	१०.	इन्द्र (तथा)
जिज्ञासया	३.	जानने की इच्छा से	वृत्र	११.	वृत्रासुर
नृप।	१.	हे राजन्!	युधाम्पती ॥	९.	योद्धाओं में श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—हे राजन्! धर्म को जानने की इच्छा से इस प्रकार परस्पर बोलते हुये महापराक्रमी योद्धाओं में श्रेष्ठ इन्द्र तथा वृत्रासुर युद्ध करने लगे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

आविध्य परिघं वृत्रः कार्ष्णायसमरिन्दमः।
इन्द्राय प्राहिणोद् घोरं वामहस्तेन मारिष ॥२४॥

पदच्छेद— आविध्य परिघम् वृत्रः कार्ष्णायसम् अरिन्दमः।
इन्द्राय प्राहिणोत् घोरम् वाम हस्तेन मारिष ॥

शब्दार्थ—

आविध्य	८.	घुमाकर	इन्द्राय	९.	इन्द्रपर
परिघम्	७.	गदा को	प्राहिणोत्	१०.	प्रहार किया
वृत्रः	३.	वृत्रासुर ने	घोरम्	५.	भयानक
कार्ष्णायसम्	६.	लोहे की बनी	वाम हस्तेन	४.	बायें हाथ से
अरिन्दमः।	२.	शत्रु दमनकारी	मारिष ॥	१.	हे राजन्।

श्लोकार्थ—हे राजन्! शत्रु दमनकारी वृत्रासुर ने बायें हाथ से भयानक लोहे की बनी गदा को घुमा कर इन्द्र पर प्रहार किया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स तु वृत्रस्य परिघं करं च करभोपमम् ।
चिच्छेद युगपद् देवो वज्रेण शतपर्वणा ॥२५॥

पदच्छेद— सः तु वृत्रस्य परिघं करं च करभोपमम् ।
चिच्छेद युगपत् वज्रेण शत पर्वणा ॥

शब्दार्थ—

सः तु	१. किन्तु उस	चिच्छेद	१२. काट दिया
वृत्रस्य	३. वृत्रासुर की	युगपद्	११. एक साथ ही
परिघम्	४. गदा को	देवः	२. देव राज इन्द्र ने
करम्	७. भुजा को	वज्रेण	१०. वज्र से
च	५. और	शत	८. सौ
करभ उपमम् ।	६. हाथी की सूंड़ के समान	पर्वणा ॥	९. गांठों वाले

श्लोकार्थ—किन्तु उस देवराज इन्द्र ने वृत्रासुर की गदा को और हाथी की सूंड़ के समान भुजा को सौ गांठों वाले वज्र से एक साथ ही काट दिया ॥

षड्विंशः श्लोकः

दोर्भ्यामुत्कृत्तमूलाभ्यां बभौ रक्तस्रवोऽसुरः ।
छिन्नपक्षो यथा गोत्रः खाद् भ्रष्टो वज्रिणा हतः ॥२६॥

पदच्छेद— दोर्भ्याम् उत्कृत्त मूलाभ्याम् बभौ रक्त स्रवः असुरः ।
छिन्न पक्षः यथा गोत्रः खात् भ्रष्टः वज्रिणा हतः ॥

शब्दार्थ—

दोर्भ्याम्	३. भुजाओं से	छिन्नपक्षः	९. पंख कट जाने पर
उत्कृत्त	१. कटे हुये	यथा	१३. समान
मूलाभ्याम्	२. मूल भाग वाली	गोत्रः	१२. पर्वत के
बभौ	१४. शोभित हुआ	खात्	१०. आकाश से
रक्त	५. रक्त वाला	भ्रष्टः	११. गिरे हुये
स्रवः	४. बहते हुये	वज्रिणा	७. इन्द्र के द्वारा
असुरः ।	६. वृत्रासुर	हतः ॥	८. आहत (तथा)

श्लोकार्थ—कटे हुये मूल भाग वाली भुजाओं से बहते हुये रक्त वाला वृत्रासुर इन्द्र के द्वारा आहत तथा पंख कट जाने पर आकाश से गिरे हुये पर्वत के समान शोभित हुआ ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कृत्वाधरां हनुं भूमौ दैत्यो दिव्युत्तरां हनुम् ।
नभोगम्भीरवक्त्रेण लेलिहोल्बणजिह्वया ॥२७॥

पदच्छेद— कृत्वा अधराम् हनुम् भूमौ दैत्यः दिवि उत्तराम् हनुम् ।
नभः गम्भीर वक्त्रेण लेलिह उल्बण जिह्वया ॥

शब्दार्थ—

कृत्वा	८.	लगा करके	हनुम् ।	६.	ठोड़ी को
अधराम्	२.	नीचे की	नभः	९.	आकाश के समान
हनुम्	३.	ठोड़ी को	गम्भीर	१०.	गहरे
भूमौ	४.	पृथ्वी पर (और)	वक्त्रेण	११.	मुख से तथा
दैत्यः	१.	वृत्रासुर ने	लेलिह	१२.	लपलपाती हुई
दिवि	७.	आकाश में	उल्बण	१३.	भयंकर
उत्तराम्	५.	ऊपर की	जिह्वया ॥	१४.	जीभ से (निगलता हुआ)

श्लोकार्थ—वृत्रासुर नीचे की ठोड़ी को पृथ्वी पर और ऊपर की ठोड़ी को आकाश में लगा करके आकाश के समान गहरे मुख से तथा लपलपाती हुई भयंकर जीभ से निगलता हुआ सा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

दंष्ट्राभिः कालकल्पाभिर्ग्रसन्निव जगत्त्रयम् ।
अतिमात्रमहाकाय आक्षिपंस्तरसा गिरीन् ॥२८॥

पदच्छेद— दंष्ट्राभिः काल कल्पाभिः ग्रसन् इव जगत् त्रयम् ।
अति मात्र महाकायः अक्षिपन् तरसा गिरीन् ॥

शब्दार्थ—

दंष्ट्राभिः	४.	डाढ़ों से	त्रयम् ।	५.	तीनों
काल	१.	काल के	अतिमात्र	८.	अत्यन्त
कल्पाभिः	३.	भयानक	महाकायः	९.	विशाल शरीर वाला (वृत्रासुर)
ग्रसन्	७.	ग्रसता हुआ	आक्षिपन्	१२.	उलटता, पलटता हुआ आया
इव	२.	समान	तरसा	११.	वेग से
जगत्	६.	लोकों को	गिरीन् ॥	१०.	पर्वतों को

श्लोकार्थ—काल के समान भयानक डाढ़ों से तीनों लोकों को ग्रसता हुआ अत्यन्त विशाल शरीर वाला वृत्रासुर वेग से पर्वतों को उलटता-पलटता हुआ आया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

गिरिराट् पादचारीव पद्भ्यां निर्जरयन् महीम् ।
जग्रास स समासाद्य वज्रिणं सहवाहनम् ॥२९॥

पदच्छेद - गिरिराट् पादचारी इव पद्भ्याम् निर्जरयन् महीम् ।
जग्रास सः समासाद्य वज्रिणम् सह वाहनम् ॥

शब्दार्थ—

गिरिराट्	२.	पर्वतराज के	जग्रास	१२.	निगल गया
पादचारी	१.	पैरों से चलने फिरने वाले	सः	४.	वह वृत्रासुर
इव	३.	समान	समासाद्य	८.	पास जाकर
पद्भ्याम्	५.	पैरों से	वज्रिणम्	९.	इन्द्र को
निर्जरयन्	७.	रौंदता हुआ	सह	११.	साथ
महीम् ।	६.	पृथ्वी को	वाहनम् ॥	१०.	वाहन ऐरावत के

श्लोकार्थ—पैरों से चलने फिरने वाले पर्वतराज के समान वह वृत्रासुर पैरों से पृथ्वी को रौंदता हुआ पास जाकर इन्द्र को वाहन ऐरावत के साथ निगल गया ॥

त्रिंशः श्लोकः

महाप्राणो महावीर्यो महासर्प इव द्विपम् ।
वृत्रग्रस्तं तमालक्ष्य सप्रजापतयः सुराः ।
हा कष्टमिति निर्विण्णाश्चुक्रुशुः समहर्षयः ॥३०॥

पदच्छेद— महाप्राणः महावीर्यः महासर्पः इव द्विपम् ।
वृत्र ग्रस्तम् तम् आलक्ष्य स प्रजापतयः सुराः ।
हा कष्टम् इति निर्विण्णाः चुक्रुशुः समहर्षयः ॥

शब्दार्थ—

महाप्राणः	२.	महाशक्तिशाली	स प्रजापतयः	१०.	प्रजापतियों सहित
महावीर्यः	३.	महाबलवान्	सुराः ।	११.	देवगण
महासर्पः	४.	महा अजगर	हा	१२.	हाय-हाय
इव	१.	मानों	कष्टम्	१३.	कष्ट है
द्विपम् ।	५.	हाथी को निगल गया	इति	१४.	कहते हुये
वृत्र	६.	वृत्रासुर से	निर्विण्णाः	१५.	अत्यंत दुःखी होकर
ग्रस्तम्	७.	ग्रसे हुये	चुक्रुशुः	१८.	विलाप करने लगे
तम्	८.	उस इन्द्र को	स	१७.	सहित
आलक्ष्य	९.	देखकर	महर्षयः ॥	१६.	महर्षियों

श्लोकार्थ—मानों महाशक्तिशाली, महाबलवान् महा अजगर हाथी को निगल गया हो । इस प्रकार वृत्रासुर से ग्रसे हुये उस इन्द्र को देखकर प्रजापतियों सहित देवगण हाय-हाय कष्ट है कहते हुए अत्यन्त दुःखी होकर महर्षियों सहित विलाप करने लगे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

निगीर्णोऽप्यसुरेन्द्रेण न ममारोदरं गतः ।
महापुरुषसन्नद्धो योगमायाबलेन च ॥३१॥

पदच्छेद— निगीर्णः अपि असुरेन्द्रेण न ममार उदरम् गतः ।
महापुरुष सन्नद्धः योगमाया बलेन च ॥

शब्दार्थ

निगीर्णः	२.	निगल जाने पर	महापुरुष	७.	महापुरुष की विद्या (नारायण कवच से)
अपि	३.	भी (इन्द्र)	सन्नद्धः	१२.	युक्त था
असुरेन्द्रेण	१.	वृत्रासुर के द्वारा	योग	६.	योग
न ममार	४.	नहीं मरा (उसके)	माया	१०.	माया के
उदरम्	४.	पेट में	बलेन	११.	बल से
गतः ।	६.	चला गया क्योंकि ।	च ॥	८.	एवम्

श्लोकार्थ—वृत्रासुर के द्वारा निगल जाने पर भी इन्द्र नहीं मरा । उसके पेट में चला गया । क्योंकि (वह) महापुरुष की विद्या (नारायण कवच) से एवम् योग माया के बल से युक्त था ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

भित्त्वा वज्रेण तत्कुक्षिं निष्क्रम्य बलभिद् विभुः ।
उच्चकर्त शिरः शत्रोर्गिरिशृङ्गमिवौजसा ॥३२॥

पदच्छेद— भित्त्वा वज्रेण तत् कुक्षिम् निष्क्रम्य बलभित् विभुः ।
उच्चकर्त शिरः शत्रोः गिरिशृङ्गम् इव ओजसा ॥

शब्दार्थ—

भित्त्वा	५.	फाड़ करके (और)	उच्चकर्त	१२.	काट डाला
वज्रेण	४.	वज्र से	शिरः	१०.	सिर को
तत् कुक्षिम्	३.	उसके पेट को	शत्रोः	६.	शत्रु के
निष्क्रम्य	६.	बाहर निकल कर	गिरिशृङ्गम्	७.	पहाड़ की चोटी के
बलभित्	२.	इन्द्र ने	इव	८.	समान
विभुः ।	१.	भगवान्	ओजसा ॥	११.	शीघ्रता से

श्लोकार्थ—भगवान् इन्द्र ने उसके पेट को वज्र से फाड़ करके और बाहर निकल कर पहाड़ की चोटी के समान शत्रु के सिर को शीघ्रता से काट डाला ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

वज्रस्तु तत्कन्धरमाशुवेगः कृन्तन् समन्तात् परिवर्तमानः ।
न्यपातयत् तावदहर्गणेन यो ज्योतिषामयने वार्त्रहत्ये ॥३३॥

पदच्छेद— वज्रः तु तत् कन्धरम् आशुवेगः कृन्तन् समन्तात् परिवर्तमानः ।
न्यपातयत् यत् तावत् अहर्गणेन यः ज्योतिषाम् अयने वार्त्रहत्ये ॥

शब्दार्थ—

वज्रः	३.	वज्र ने	न्यपातयत्	१४.	गिरा दिया
तु तत्	११.	उसकी	तावत्	४.	उतने
कन्धरम्	१२.	गर्दन को	अहर्गणेन	५.	दिन समूह में
आशुवेगः	२.	तीव्र वेगशाली	यः	६.	जितने में
कृन्तन्	१३.	काटकर	ज्योतिषाम्	७.	ग्रहों के दो
समन्तात्	१०.	चारों ओर से	अयने	८.	अयनकाल बीतता है
परिवर्तमानः ।	१.	घूमते हुये (उस	वार्त्रहत्ये ॥	९.	वृत्रासुर के वध का योग आने पर

श्लोकार्थ—घूमते हुये उस तीव्र वेगशाली वज्र ने उतने दिन समूह में जितने में ग्रहों के दो अयनकाल (दक्षिणायन और उत्तरायण एक वर्ष का समय (बीतता है, वृत्रासुर के वध का योग आने पर चारों ओर से उसकी गर्दन को काटकर गिरा दिया ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तदा च खे दुन्दुभयो विनेदुर्गन्धर्वसिद्धाः समहर्षिसङ्घाः ।
वार्त्रघ्नलिङ्गैस्तमभिष्टुवाना मन्त्रैर्मुदा कुसुमैरभ्यवर्षन् ॥३४॥

पदच्छेद— तदा च खे दुन्दुभयः विनेदुः गन्धर्व सिद्धाः समहर्षि सङ्घाः ।
वार्त्रघ्नलिङ्गैः तम् अभिष्टुवानाः मन्त्रैः मुदा कुसुमैः अभ्यवर्षन् ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	तब	वार्त्रघ्न	९.	वृत्रासुर को मारने वाले
च	६.	और	लिङ्गैः	१०.	इन्द्र की पराक्रम सूचक
खे	२.	आकाश में	तम्	१२.	उनकी
दुन्दुभयः	३.	दुन्दुभियां	अभिष्टुवानाः	१३.	स्तुति करते हुये
विनेदुः	४.	बजने लगीं	मन्त्रैः	११.	मन्त्रों से
गन्धर्व सिद्धाः	५.	गन्धर्व सिद्धगण	मुदा	१४.	प्रसन्नता पूर्वक
समहर्षि	७.	महर्षियों के	कुसुमैः	१५.	पुष्पों की
सङ्घाः ।	८.	साथ	अभ्यवर्षन् ॥	१६.	वर्षा करने लगे

श्लोकार्थ—तब आकाश में दुन्दुभियां बजने लगीं । गन्धर्व, विधाधर और महर्षियों के साथ वृत्रासुर को मारने वाले इन्द्र के पराक्रम सूचक मन्त्रों से उनकी स्तुति करते हुये, प्रसन्नतापूर्वक पुष्पो की वर्षा करने लगे ॥

षञ्चत्रिंशः श्लोकः

वृत्रस्य देहान्निष्क्रान्तमात्मज्योतिररिन्दम ।
पश्यतां सर्वलोकानामलोकं समपद्यत ॥३५॥

पदच्छेद— वृत्रस्य देहात् निष्क्रान्तम् आत्म ज्योतिः अरिन्दम ।
पश्यताम् सर्व लोकानाम् अलोकम् समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

वृत्रस्य	२.	वृत्रासुर के	**पश्यताम्**	९.	देखते ही देखते
देहात्	३.	शरीर से	**सर्व**	७.	सभी
निष्क्रान्तम्	४.	बाहर निकला हुआ	**लोकानाम्**	८.	प्राणियों के
आत्म	५.	आत्म	**अलोकम्**	१०.	लोकातीत भगवान् में
ज्योतिः	६.	प्रकाश	**समपद्यत ।।**	११.	लीन हो गया
अरिन्दम ।	१.	हे शत्रुदमनकारी हे परीक्षित्			

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमनकारी परीक्षित् ! वृत्रासुर के शरीर से बाहर निकला हुआ आत्म प्रकाश सभी प्राणियों के देखते ही देखते लोकातीत भगवान् में लीन हो गया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
षष्ठस्कन्धे वृत्रवधो नाम द्वादशः अध्यायः ॥१२॥



प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच वृते हते त्रयो लोका विना शक्रेण भूरिद ।
सपाला ह्यभवन् सद्यो विज्वरा निर्वृ तेन्द्रियाः ।।१।।

पदच्छेद— वृत्रे हते त्रयः लोकाः विना शक्रेण भूरिद ।
सपालाः हि अभवन् सद्यः विज्वराः निर्वृ त इन्द्रियाः ।।

शब्दार्थ—

वृत्रे	२.	वृत्रासुर के	सपालाः	६.	लोकपाल सहित
हते	३.	मार दिये जाने पर	हि अभवन्	१२.	हो गये
त्रयःलोकाः	७.	तीनों लोक	सद्यः	८.	तत्क्षण
विना	५.	छोड़ कर	विज्वराः	९.	सन्ताप रहित (एवम्)
शक्रेण	४.	इन्द्र को	निर्वृ त	१०.	परम
भूरिद ।	१.	हे महाराज परीक्षित् !	इन्द्रियाः ।।	११.	प्रसन्न

श्लोकार्थ—हे महाराज परीक्षित् ! वृत्रासुर के मार दिये जाने पर इन्द्र को छोड़कर लोकपाल सहित तीनों लोक तत्क्षण सन्तापरहित एवम् परम प्रसन्न हो गये ।।

द्वितीयः श्लोकः

देवर्षिपितृभूतानि दैत्या देवानुगाः स्वयम् ।
प्रतिजग्मुः स्वधिष्ण्यानि ब्रह्मेशेन्द्रादयस्ततः ।।२।।

पदच्छेद— देवर्षि पितृ भूतानि दैत्याः देव अनुगाः स्वयम् ।
प्रति जग्मुः स्वधिष्ण्यानि ब्रह्म ईश इन्द्र आदयः ततः ।।

शब्दार्थ—

देवर्षि	१.	देवता-ऋषि	प्रति जग्मुः	९.	लौट गये
पितृ	२.	पितर	स्वधिष्ण्यानि	८.	अपने घरों को
भूतानि	३.	भूत	ब्रह्म	११.	ब्रह्मा
दैत्याः	४.	दैत्य	ईश	१२.	शंकर
देव	५.	देवताओं के	इन्द्र	१३.	इन्द्र
अनुगाः	६.	अनुचर (गन्धर्वादि)	आदयः	१४.	आदि भी (चले गये)
स्वयम् ।		अपने-आप ही	ततः ।।		उसके बाद

श्लोकार्थ—देवता, ऋषि, पितर, भूत, दैत्य, देवताओं के अनुचर गन्धर्वादि अपने आप ही अपने घरों को लौट गये । इसके बाद ब्रह्मा, शंकर, इन्द्र आदि भी चले गये ।

तृतीयः श्लोकः

राजोवाच — इन्द्रस्यानिर्वृतेर्हेतुं श्रोतुमिच्छामि भो मुने ।
येनासन् सुखिनो देवा हरेर्दुःखं कुतोऽभवत् ।३॥

पदच्छेद— इन्द्रस्य अनिर्वृतेः हेतुम् श्रोतुम् इच्छामि भोः मुने ।
येन आसन् सुखिनः देवाः हरेः दुःखम् कुतः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रस्य	२.	इन्द्र की	आसन्	१०.	हुये (और)
अनिर्वृतेः	३.	अप्रसन्नता का	सुखिनः	९.	सुखी
हेतुम्	४.	कारण	देवाः	८.	देवता
श्रोतुम्	५.	सुनना	हरेः	११.	इन्द्र को
इच्छामि	६.	चाहता हूँ	दुःखम्	१३.	दुःख
भोः मुने ।	१.	हे मुनि !	कुतः	१२.	क्यों
येन	७.	जिससे सभी	अभवत् ॥	१४.	हुआ

श्लोकार्थ—हे मुनि ! इन्द्र की अप्रसन्नता का कारण सुनना चाहता हूँ । जिससे सभी देवता सुखी हुये । और इन्द्र को क्यों दुःख हुआ ॥

चतुर्थः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— वृत्रविक्रमसंविग्नाः सर्वे देवाः सहर्षिभिः ।
तद्वधायार्थयन्निन्द्रं नैच्छद् भीतो बृहद्वधात् ॥४॥

पदच्छेद— वृत्र विक्रम संविग्नाः सर्वे देवाः सह ऋषिभिः ।
तत् वधाय अर्थयन् इन्द्रम् न ऐच्छत् भीतः बृहत् वधात् ॥

शब्दार्थ—

वृत्र	५.	वृत्रासुर के	तत्	८.	उस वृत्रासुर को
विक्रम	६.	पराक्रम से	वधाय	९.	मारने की
संविग्नाः	७.	भयभीत हो गये (तथा)	अर्थयन्	११.	प्रार्थना की (किन्तु)
सर्वे	१.	सभी (उन्होंने)	इन्द्रम्	१०.	इन्द्र से
देवाः	२.	देवगण	न ऐच्छत्	१४.	नहीं इच्छा की
सह	४.	सहित	भीतः	१३.	डर से (इन्द्र ने उसे मारने की)
ऋषिभिः ।	३.	ऋषियों के	बृहत् वधात् ॥	१२.	ब्रह्म हत्या के

श्लोकार्थ—सभी देवगण ऋषियों के सहित वृत्रासुर के पराक्रम से भयभीत हो गये । तथा उन्होंने उस वृत्रासुर को मारने की इन्द्र से प्रार्थना की किन्तु ब्रह्महत्या के डर से इन्द्र ने उसे मारने की इच्छा नहीं की ॥

पञ्चमः श्लोकः

इन्द्र उवाच— स्त्रीभूजलद्रुमैरेनो विश्वरूपवधोद्भवम् ।
विभक्तमनुगृह्णद्भिर्वृत्रहत्यां क्व मार्ज्म्यहम् ॥५॥

पदच्छेद— स्त्रीभूः जल द्रुमैः एनः विश्वरूप वध उद्भवम् ।
विभक्तम् अनुगृह्णद्भिः वृत्र हत्याम् क्व मार्ज्मि अहम् ॥

शब्दार्थ—

स्त्री	५.	स्त्री	विभक्तम्	९.	बाँट लिया (अब)
भूः	६.	पृथ्वी और	अनुगृह्णद्भिः	८.	कृपा करके
जलद्रुमैः	७.	जल और वृक्षों ने	वृत्र	१०.	वृत्रासुर की
एनः	४.	पाप को	हत्याम्	११.	हत्या को
विश्वरूप	१.	विश्वरूप के	क्व	१३.	कहाँ
वध	२.	वध से	मार्ज्मि	१४.	धोऊँगा
उद्भवम् ।	३.	उत्पन्न	अहम् ॥	१२.	मैं

श्लोकार्थ—विश्वरूप के वध से उत्पन्न पाप को स्त्री, पृथ्वी, जल और वृक्षों ने कृपा करके बाँट लिया। अब वृत्रासुर की हत्या को मैं कहाँ धोऊँगा ॥

षष्ठः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— ऋषयस्तदुपाकर्ण्य महेन्द्रमिदमब्रुवन् ।
याजयिष्याम भद्रं ते हयमेधेन मा स्म भैः ॥६॥

पदच्छेद— ऋषयः तत् उपाकर्ण्य महेन्द्रम् इदम् अब्रुवन् ।
याजयिष्यामः भद्रम् ते हयमेधेन मा स्म भैः ॥

शब्दार्थ—

ऋषयः	१.	ऋषियों ने	याजयिष्यामः	१०.	यज्ञ करायेंगे (तुम)
तत्	२.	वह	भद्रम्	८.	कल्याण हो (हमलोग)
उपाकर्ण्य	३.	सुनकर	ते	७.	तुम्हारा
महेन्द्रम्	४.	इन्द्र से	हयमेधेन	९.	अश्वमेध
इदम्	५.	यह	मा स्म	१२.	मत करो
अब्रुवन् ।	६.	कहा (कि)	भैः ॥	११.	भय

श्लोकार्थ—ऋषियों ने वह सुनकर इन्द्र से यह कहा; कि तुम्हारा कल्याण हो हम लोग अश्वमेध यज्ञ करायेंगे। तुम भय मत करो ॥

सप्तमः श्लोकः

हयमेधेन पुरुषं परमात्मानमीश्वरम् ।
इष्ट्वा नारायणं देवं मोक्ष्यसेऽपि जगद्वधात् ।।७।।

पदच्छेद— हयमेधेन पुरुषम् परमात्मानम् ईश्वरम् ।
इष्ट्वा नारायणम् देवम् मोक्ष्यसे अपि जगत् वधात् ।।

शब्दार्थ—

हयमेधेन	१.	अश्वमेध यज्ञ के द्वारा	देवम्	६.	देव का
पुरुषम्	२.	सनातन पुरुष	मोक्ष्यसे	११.	मुक्त हो जाओगे
परमात्मानम्	३.	परमात्मा	अपि	१०.	भी
ईश्वरम् ।	४.	सर्वशक्तिमान्	जगत्	८.	संसार के
इष्ट्वा	७.	यज्ञ करके (तुम)	वधात् ।।	९.	वध के (पाप से)
नारायणम्	५.	नारायण			

श्लोकार्थ—अश्वमेध यज्ञ के द्वारा सनातन पुरुष परमात्मा सर्व शक्तिमान् नारायण देव का यजन करके तुम संसार के वध के पाप से भी मुक्त हो जाओगे ।।

अष्टमः श्लोकः

ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो मातृहाऽऽचार्यहाघवान् ।
श्वादः पुल्कसको वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात् ।।८।।

पदच्छेद— ब्रह्महा पितृहा गोघ्नः मातृहा आचार्यहा अघवान् ।
श्वादः पुल्कसकः वा अपि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात् ।।

शब्दार्थ—

ब्रह्महा	१.	ब्रह्मघाती	श्वादः	७.	कुत्ते का मांस खाने वाला
पितृहा	२.	पितृघाती	पुल्कसकः	९.	चाण्डाल
गोघ्नः	३.	गोघाती	वा	८.	अथवा
मातृहा	४.	मातृघाती (और)	अपि	१०.	भी
आचार्यहा	५.	आचार्य का हत्यारा	शुद्ध्येरन्	१३.	शुद्ध हो जाते हैं
अघवान्	६.	पापी	यस्य	११.	जिसके
			कीर्तनात्।।	१२.	कीर्तन से

श्लोकार्थ —ब्रह्मघाती, पितृघाती, गोघाती, मातृघाती और आचार्य का हत्यारा, पापी कुत्ते का मांस खाने वाला अथवा चाण्डाल भी जिसके कीर्तन से शुद्ध हो जाते हैं ।।

नवमः श्लोकः

तमश्वमेधेन महामखेन श्रद्धान्वितोऽस्माभिरनुष्ठितेन ।
हत्वापि सब्रह्म चराचरं त्वं न लिप्यसे किं खलनिग्रहेण ॥९॥

पदच्छेद— तम् अश्वमेधेन महामखेन, श्रद्धा अन्वितः अस्माभिः अनुष्ठितेन ।
हत्या अपि सब्रह्म चराचरम् त्वम् नलिप्यसे किम् खल निग्रहेण ॥

शब्दार्थ—

तम	८.	उस महापुरुष की आराधना करोगे तो	अपि	१२.	भी (तुम पाप से)
अश्वमेधेन	१.	अश्वमेध नामक	सब्रह्म	९.	ब्रह्म सहित
महामखेन	२.	महायज्ञ का	चराचरम्	१०.	चर-अचर जगत् को
श्रद्धा	५.	श्रद्धा से	त्वम्	७.	तुम
अन्वितः	६.	युक्त होकर	न लिप्यसे	१३.	नहीं लिप्त होगे (इस)
अस्माभिः	३.	हम लोगों के द्वारा	किम्	१६.	क्या (पाप होगा)
अनुष्ठितेन ।	४.	अनुष्ठान किये जाने पर	खल	१४.	दुष्ट को
हत्वा	११.	मारकर	निग्रहेण ॥	१५.	दण्ड देने से

श्लोकार्थ—अश्वमेध नामक महान् यज्ञ का हम लोगों के द्वारा अनुष्ठान किये जाने पर श्रद्धा से युक्त होकर तुम उस महापुरुष की आराधना करोगे तो ब्रह्म सहित चर-अचर जगत् को मार कर भी तुम पाप से नहीं लिप्त होगे। इस दुष्ट को दण्ड देने से क्या पाप होगा ॥

दशमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— एवं सञ्चोदितो विप्रैर्मरुत्वानहनद्रिपुम् ।
ब्रह्महत्या हते तस्मिन्नाससाद वृषाकपिम् ॥१०॥

पदच्छेद— एवम् संचोदितः विप्रैः मरुत्वान् अहनत् रिपुम् ।
ब्रह्म हत्या हते तस्मिन् आससाद वृषा कपिम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	ब्रह्म हत्या	९.	ब्रह्महत्या
संचोदितः	३.	प्रेरणा पाकर	हते	८.	मारे जाने पर
विप्रैः	२.	ब्राह्मणों से	तस्मिन्	७.	उसके
मरुत्वान्	४.	इन्द्र ने	आससाद	११.	पास आई
अहनत्	६.	मार दिया	वृषाकपिम् ॥	१०.	इन्द्र के
रिपुम् ।	५.	शत्रु (वृत्रासुर) को			

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्राह्मणों से प्रेरणा पाकर इन्द्र ने शत्रु वृत्रासुर को मार दिया। उसके मारे जाने पर ब्रह्महत्या इन्द्र के पास आई ॥

एकादशः श्लोकः

तयेन्द्रः स्मासहत् तापं निर्वृतिर्नामुमाविशत् ।
ह्रीमन्तं वाच्यतां प्राप्तं सुखयन्त्यपि नो गुणाः ॥११॥

पदच्छेद— तया इन्द्रः स्म असहत् तापम् निर्वृतिः नः अमुम् आविशात् ।
ह्रीमन्तम् वाच्यताम् प्राप्तम् सुखयन्ति अपि नो गुणाः ॥

शब्दार्थ—

शब्दार्थ—

तया	१.	उसके कारण	ह्रीमन्तम्	९.	लज्जाशील को
इन्द्रः	२.	इन्द्र को	वाच्यताम्	१०.	कलंक
स्म असहत्	४.	सहन करना पड़ा	प्राप्तम्	११.	लग जाने पर
तापम्	३.	क्लेश	सुखयन्ति	१५.	सुखी कर पाते हैं
निर्वृति	६.	चैन	अपि	१३.	भी
न	७.	नहीं	नो	१४.	नहीं
अमुम्	५.	उस इन्द्र को	गुणाः ॥	१२.	गुण
आविशत् ।	८.	पड़ता था			

श्लोकार्थ—उसके कारण इन्द्र को क्लेश सहन करना पड़ा। उस इन्द्र को चैन नहीं पड़ता था। लज्जाशील को कलंक लग जाने पर गुण भी नहीं सुखी कर पाते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

तां ददर्शानुधावन्तीं चाण्डालीमिव रूपिणीम् ।
जरया वेपमानाङ्गीं यक्ष्मग्रस्तामसृक्पटाम् ॥१२॥

पदच्छेद— ताम् ददर्श अनुधावन्तीम् चाण्डालीम् इव रूपिणीम् ।
जरया वेपमान अङ्गीम् यक्ष्म ग्रस्ताम् असृक् पटाम् ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१२.	उस ब्रह्महत्या को (इन्द्रने)	जरया	५.	बुढ़ापे के कारण
ददर्श	१३.	देखा	वेपमान	६.	कांपते हुये
अनुधावन्तीम्	१.	पीछे-पीछे दौड़ती हुई	अङ्गीम्	७.	अङ्गों वाली
चाण्डालीम्	२.	चाण्डाली के	यक्ष्म	८.	क्षय रोग से
इव	३.	समान	ग्रस्ताम्	९.	ग्रस्त
रूपिणीम् ।	४.	रूपवाली	असृक्	१०.	रक्त से सने
			पटाम् ॥	११.	वस्त्र वाली

श्लोकार्थ—पीछे-पीछे दौड़ती हुई, चाण्डाली के समान रूप वाली, बुढ़ापे के कारण कांपते हुये अङ्गों वाली, क्षय रोग से ग्रस्त, रक्त से सने वस्त्र वाली उस ब्रह्म हत्या को इन्द्र ने देखा ॥

त्रयोदशः श्लोकः

विकीर्य पलितान् केशांस्तिष्ठ तिष्ठेति भाषिणीम् ।
मीनगन्ध्यसुगन्धेन कुर्वतीं मार्गदूषणम् ॥१३॥

पदच्छेद— विकीर्य पलितान् केशान् तिष्ठ-तिष्ठ इति भाषिणीम् ।
मीनगन्धी असुगन्धेन कुर्वतीम् मार्ग दूषणम् ॥

शब्दार्थ—

विकीर्य	३.	बिखेर कर	भाषिणीम् ।	६.	कहती हुई
पलितान्	१.	सफेद	मीनगन्धी	७.	मछली की सी
केशान्	२.	बालों को	असुगन्धेन	८.	दुर्गन्ध वाली (और)
तिष्ठ-तिष्ठ	४.	ठहर-ठहर	कुर्वतीम्	१०.	करती हुई उस (को देखा)
इति	५.	इस प्रकार	मार्गदूषणम् ॥	९.	मार्ग को अपवित्र

श्लोकार्थ—सफेद बालों को बिखेर कर ठहर-ठहर इस प्रकार कहती हुई, मछली की सी दुर्गन्ध वाली और मार्ग को अपवित्र करती हुई उसको देखा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नभो गतो दिशः सर्वाः सहस्राक्षो विशाम्पते ।
प्रागुदीचीं दिशं तूर्णं प्रविष्टो नृप मानसम् ॥१४॥

पदच्छेद— नभः गतः दिशः सर्वाः सहस्राक्षः विशाम्पते ।
प्राक् उदीचीम् दिशम् तूर्णम् प्रविष्टः नृप मानसम् ॥

शब्दार्थ—

नभः	३.	आकाश में (और)	प्राक्	८.	पूर्व (और)
गतः	६.	गये (अन्त में)	उदीचीम्	९.	उत्तर की
दिशः	५.	दिशाओं में	दिशम्	१०.	दिशा (ईशान कोण में स्थित)
सर्वाः	४.	सभी	तूर्णम्	१२.	शीघ्र ही
सहस्राक्षः	२.	इन्द्र (उसके भय से)	प्रविष्टः	१३.	प्रवेश कर गये
विशाम्पते ।	१.	हे राजन् !	नृप	७.	राजन्
			मानसम् ॥	११.	मानसरोवर में

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इन्द्र उसके भय से आकाश में और सभी दिशाओं में गये । नृप ! अन्त में पूर्व और उत्तर की दिशा ईशान कोण में स्थित राजन् मानसरोवर में शीघ्र ही प्रवेश कर गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

स आवसत्पुष्करनालतन्तूनलब्धभोगो यदिहाग्निदूतः ।
वर्षाणि साहस्रमलक्षितोऽन्तः स चिन्तयन् ब्रह्मवधाद् विमोक्षम् ।।१५।।

पदच्छेद - सः आवसत् पुष्कर नाल तन्तुन् अलब्धभोगः यत् इह अग्नि दूतः ।
वर्षाणि साहस्रम् अलक्षितः अन्तः सः चिन्तयन् ब्रह्मवधात् विमोक्षम् ।।

शब्दार्थ

सः	१. वे देवराज इन्द्र	दूतः	१०. भोजन पाने वाले थे
आवसत्	४. प्रविष्ट हो गये (और)	वर्षाणि	१३. वर्षों तक
पुष्कर	२. कमल	साहस्रम्	१२. हजार
नाल तन्तुन्	३. नाल के-तन्तुओं में	अलक्षितः	१५. छिपे रहे (तथा)
अलब्ध	६. नहीं पाते थे	अन्तः	१४. अन्दर
भोगः	५. भोग पदार्थ	सः	११. वे
यत्	७. क्योंकि	चिन्तयन्	१८. सोचते हुये
इह	८ यहाँ इस लोक से	ब्रह्मवधात्	१६. ब्रह्महत्या से
अग्नि	९. अग्नि के द्वारा	विमोक्षम् ।।	१७. मुक्ति पाने का उपाय

श्लोकार्थ—वे देवराज इन्द्र कमल नाल के तन्तुओं में प्रविष्ट हो गये। और भोग पदार्थ नहीं पाते थे। क्योंकि यहाँ इस लोक में अग्नि के द्वारा भोजन पाने वाले थे। वे हजार वर्षों तक अन्दर छिपे रहे। तथा ब्रह्म हत्या से मुक्ति पाने का उपाय सोचते रहे ।।

षोडशः श्लोकः

तावत्त्रिणाकं नहुषः शशास विद्यातपोयोगबलानुभावः ।
स सम्पदैश्वर्यमदान्धबुद्धिर्नीतस्तिरश्चां गतिमिन्द्रपत्न्या ।।१६।।

पदच्छेद— तावत् त्रिणाकम् नहुषः शशास विद्या तपः योगबल अनुभावः ।
सः सम्पत् ऐश्वर्य मद अन्धबुद्धिः नीतः तिरश्चाम् गतिम् इन्द्रपत्न्या ।।

शब्दार्थ—

तावत्	१. तब-तक	सः सम्पद्	९. सम्पत्ति (और)
त्रिणाकम्	७. स्वर्ग का	ऐश्वर्य	१०. ऐश्वर्य के
नहुषः	२. नहुष	मद	११. मद से (उनकी)
शशास	८. शासन करते रहे	अन्धबुद्धि	१२. भ्रष्ट बुद्धि हो गई (वे)
विद्या	३. विद्या	नीतः	१६. प्राप्त करा दिये गये
तपः	४. तपस्या (और)	तिरश्चाम्	१४. साँप की
योगबल	५. योगबल के	गतिम्	१५. गति को
अनुभावः ।	६. प्रभाव से	इन्द्र पत्न्या ।।	१३. इन्द्राणी के द्वारा

श्लोकार्थ—तब तक नहुष, विद्या, तपस्या और योगबल के प्रभाव से स्वर्ग का शासन करते रहे। सम्पत्ति और ऐश्वर्य के मद से उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। वे इन्द्राणी के द्वारा सांप की गति को प्राप्त करा दिये गये ।।

सप्तदशः श्लोकः

ततो गतो ब्रह्मगिरोपहूत ऋतम्भरध्यानानिवारिताघः ।
पापस्तु दिग्देवतया हतौजास्तं नाभ्यभूदवितं विष्णुपत्न्या ।१७॥

पदच्छेद — ततः गतः ब्रह्मगिरः उपहूतः ऋतम्भर ध्यान निवारित अघः ।
पापः तु दिग्देवतया हत ओजाः तम् न अभ्यभूत् अवितम् विष्णुपत्न्या ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	पापः तु	११.	पाप से
गतः	४.	स्वर्गलोक में गये	दिग्देवतया	९.	दिशाओं के देवताओं द्वारा
ब्रह्मगिरा	२.	ब्राह्मणों के द्वारा	हतओजाः	१०.	निस्तेज किये गये
उपहूतः	३.	बुलवाने पर (इन्द्र)	तम् न	१४.	इन्द्र पर नहीं
ऋतम्भर	५.	भगवान् के	अभ्यभूत्	१५.	आक्रमण किया
ध्यान	६.	ध्यान से (उनका)	अवितम्	१३.	सुरक्षित
निवारित	८.	नष्ट हो गया था (और)	विष्णुपत्न्या ॥	१२.	लक्ष्मी जी के द्वारा
अघः ।	७.	पाप			

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्राह्मणों के द्वारा बुलवाने पर इन्द्र स्वर्गलोक में गये । भगवान् के ध्यान से उनका पाप नष्ट हो गया था । और दिशाओं के देवताओं द्वारा निस्तेज किये गये पाप ने लक्ष्मी जी के द्वारा सुरक्षित इन्द्र पर आक्रमण नहीं किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

तं च ब्रह्मर्षयोऽभ्येत्य हयमेधेन भारत ।
यथावद्दीक्षयाञ्चक्रुः पुरुषाराधनेन ह ॥१८॥

पदच्छेद— तम् च ब्रह्मर्षयः अभ्येत्य हयमेधेन भारत ।
यथावत् दीक्षयान् चक्रुः पुरुष आराधनेन ह ॥

शब्दार्थ—

तम् च	३.	उस इन्द्र के	यथावत्	८.	विधिपूर्वक
ब्रह्मर्षयः	२.	ब्रह्मर्षियों ने	दीक्षयान्	९.	दीक्षा
अभ्येत्य	४.	पास जाकर	चक्रुः	१०.	दी
हयमेधेन	५.	अश्वमेध यज्ञ के द्वारा	पुरुष	६.	भगवान् की
भारत ।	१.	हे परीक्षित् !	आराधनेन ह ॥	७.	आराधना के लिये

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! ब्रह्मर्षियों ने उस इन्द्र के पास जाकर अश्वमेध यज्ञ के द्वारा भगवान् की आराधना के लिये विधिपूर्वक दीक्षा दी ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अथेज्यमाने पुरुषे सर्वदेवमयात्मनि ।
अश्वमेधे महेन्द्रेण वितते ब्रह्मवादिभिः ॥१९॥

पदच्छेद— अथ इज्यमाने पुरुषे सर्वदेवमय आत्मनि ।
अश्वमेधे महेन्द्रेण वितते ब्रह्म वादिभिः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	अश्वमेधे	५.	अश्वमेध यज्ञ में
इज्यमाने	१०.	आराधना किये जाने पर (पाप नष्ट हो गया)	महेन्द्रेण	६.	देवराज इन्द्र के द्वारा
पुरुषे	९.	भगवान् की	वितते	४.	अनुष्ठित
सर्वदेवमय	७.	सर्वदेव	ब्रह्म	२.	ब्रह्म
आत्मनि ।	८.	स्वरूप	वादिभिः ॥	३.	वादी ऋषियों के द्वारा

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्रह्मवादि ऋषियों के द्वारा अनुष्ठित अश्वमेध यज्ञ में देवराज इन्द्र के द्वारा सर्वदेव स्वरूप भगवान् की आराधना किये जाने पर पाप नष्ट हो गया ॥

विंशः श्लोकः

स वै त्वाष्ट्रवधो भूयानपि पापचयो नृप ।
नीतस्तेनैव शून्याय नीहार इव भानुना ॥२०॥

पदच्छेद— सः वै त्वाष्ट्र वधः भूयान् अपि पाप चयः नृप ।
नीतः तेनैव शून्याय नीहारः इव भानुना ॥

शब्दार्थ—

सः	४.	वह	नीतः	१०.	हो गई
वै	७.	निश्चित ही	तेनैव	८.	उसी प्रकार से
त्वाष्ट्र	२.	वृत्रासुर के	शून्याय	९.	नष्ट
वधः	३.	वध से उत्पन्न	नीहारः	१३.	कुहरा (नष्ट हो जाता है)
भूयान् अपि	५.	बहुत बड़ी	इव	११.	जैसे
पाप चयः	६.	पापराशि	भानुना ॥	१२.	सूर्योदय से
नृप ।	१.	हे राजन् !			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वृत्रासुर के वध से उत्पन्न वह बहुत बड़ी पापराशि निश्चित ही उसी प्रकार नष्ट हो गई, जैसे सूर्योदय से कुहरा नष्ट हो जाता है ॥

एकविंशः श्लोकः

स वाजिमेधेन यथोदितेन वितायमानेन मरीचिमिश्रैः ।
इष्ट्वाधियज्ञं पुरुषं पुराणमिन्द्रो महानास विधूतपापः ॥२१॥

पदच्छेद— सः वाजिमेधेन यथा उदितेन वितायमानेन मरीचि मिश्रैः ।
इष्ट्वा अधियज्ञम् पुरुषम् पुराणम् इन्द्रः महान् आस विधूत पापः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह इन्द्र	अधियज्ञम्	७.	यज्ञपति
वाजिमेधेन	६.	अश्वमेध यज्ञ से	पुरुषम्	६.	भगवान् की
यथा उदितेन	४.	विधि पूर्वक	पुराणम्	८.	सनातन
वितायमानेन	५.	कराये गये	इन्द्रः	११.	(वे) इन्द्र
मरीचि	२.	मरीचि आदि	महान् आस	१४.	पूजनीय हो गये
मिश्रैः ।	३.	मुनीश्वरों के द्वारा	विधूत्	१३.	रहित होकर
इष्ट्वा	१०.	आराधना करके	पापः ॥	१२.	पाप से

श्लोकार्थ—वह इन्द्र मरीचि आदि मुनीश्वरों के द्वारा विधिपूर्वक कराये गये अश्वमेध यज्ञ से यज्ञपति सनातन भगवान् की आराधना करके वे इन्द्र पाप से रहित हो गये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

इदं महाख्यानमशेषपाप्मनां प्रक्षालनं तीर्थपदानुकीर्तनम् ।
भक्त्युच्छ्रयं भक्तजनानुवर्णनं महेन्द्रमोक्षं विजयं मरुत्वतः ॥२२॥

पदच्छेद— इदम् महा आख्यानम् अशेष पाप्मनाम् प्रक्षालनम् तीर्थपद अनुकीर्तनम् ।
भक्ति उच्छ्रयम् भक्तजन अनुवर्णनम् महेन्द्रमोक्षम् विजयम् मरुत्वतः ॥

शब्दार्थ—

इदम्	१.	यह	भक्ति	६.	भक्ति को
महा	२.	श्रेष्ठ	उच्छ्रयम्	१०.	बढ़ाने वाला
आख्यानम्	३.	आख्यान	भक्तजन	११.	भक्त जनों का
अशेष	४.	समस्त	अनुवर्णनम्	१२.	गुणानुवाद करने वाला
पाप्मनाम्	५.	पापों को	महेन्द्र	१३.	इन्द्र को
प्रक्षालनम्	६.	धोने वाला	मोक्षम्	१४.	मुक्ति (तथा)
तीर्थपद	७.	भगवान् का	विजयम्	१६.	विजय दिलाने वाला है
अनुकीर्तनम् ।	८.	कीर्तन करने वाला	मरुत्वतः ॥	१५.	वृत्रासुर से

श्लोकार्थ—यह श्रेष्ठ आख्यान समस्त पापों को धोनेवाला भगवान् का कीर्तन करने वाला, भक्ति को बढ़ाने वाला, भक्त जनों का गुणानुवाद करने वाला, इन्द्र को मुक्ति तथा वृत्रासुर से विजय दिलाने वाला है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पठेयुराख्यानमिदं सदा बुधाः शृण्वन्त्यथो पर्वणि पर्वणीन्द्रियम् ।
धन्यं यशस्यं निखिलाघमोचनं रिपुञ्जय स्वस्त्ययनं तथाऽऽयुषम् ।।२३।।

पदच्छेद— पठेयुः आख्यानम् इदम् सदा बुधाः शृण्वन्ति अथो पर्वणि पर्वणि इन्द्रियम् ।
धन्यम् यशस्यम् निखिल अघ मोचनम् रिपुञ्जयम् स्वस्त्ययनम् तथा आयुषम् ।।

शब्दार्थ—

पठेयुः	५.	पढ़ें	**धन्यम्**	१०.	धन देने वाली
आख्यानम्	३.	कथा को	**यशस्यम्**	११.	यश देने वाली
इदम्	२.	इस	**निखिल**	१२.	सम्पूर्ण
सदा	४.	सर्वदा	**अघ**	१३.	पापों से
बुधाः	१.	विद्वान् पुरुष	**मोचनम्**	१४.	छुड़ाने वाली
शृण्वन्ति	८.	सुनें	**रिपुञ्जयम्**	१५.	शत्रु पर विजय दिलाने वाली
अथो	६.	तदनन्तर	**स्वस्त्ययनम्**	१७.	कल्याणकारी (और)
पर्वणि पर्वणि	७.	पर्व-पर्व पर	**तथा**	१६.	तथा
इन्द्रियम् ।	९.	इन्द्र सम्बन्धी यह कथा	**आयुषम् ।।**	१८.	आयु बढ़ाने वाली है

श्लोकार्थ—विद्वान् पुरुष इस कथा को सर्वदा पढ़ें । तदनन्तर पर्व-पर्व पर सुनें । इन्द्र सम्बन्धी यह कथा धन देने वाली, यश देने वाली, सम्पूर्ण पापों से छुड़ाने वाली, शत्रु पर विजय दिलाने वाली तथा कल्याणकारी और आयु बढ़ाने वाली है ।।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठे स्कन्धे
इन्द्रविजयो नाम त्रयोदशः अध्यायः ।।१३।।



चतुर्दश अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

परीक्षिदुवाच— रजस्तमःस्वभावस्य ब्रह्मन् वृत्रस्य पाप्मनः ।
नारायणे भगवति कथमासीद् दृढा मतिः ॥१॥

पदच्छेद— रजःतमः स्वभावस्य ब्रह्मन् वृत्रस्य पाप्मनः ।
नारायणे भगवति कथम् आसीत् दृढा मतिः ॥

शब्दार्थ—

रजः	२.	रजोगुणी (तथा)	नारायणे	८.	नारायण में
तमः	३.	तमोगुणी	भगवति	७.	भगवान्
स्वभावस्य	४.	स्वभाव वाले	कथम्	११.	कैसे
ब्रह्मन्	१.	हे भगवान्	आसीत्	१२.	हुई
वृत्रस्य	६.	वृत्रासुर की	दृढा	९.	दृढ
पाप्मनः ।	५.	पापी	मतिः ॥	१०.	भक्ति

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! रजोगुणी तथा तपोगुणी स्वभाव वाले, पापी वृत्रासुर की भगवान् नारायण में दृढ़ भक्ति कैसे हुई ॥

द्वितीयः श्लोकः

देवानां शुद्धसत्त्वानामृषीणां चामलात्मनाम् ।
भक्तिर्मुकुन्दचरणे न प्रायेणोपजायते ॥२॥

पदच्छेद— देवानाम् शुद्ध सत्त्वानाम् ऋषीणाम् च अमल आत्मनाम् ।
भक्तिः मुकुन्द चरणे न प्रायेण उप जायते ॥

शब्दार्थ—

देवानाम्	३.	देवताओं की	भक्तिः	८.	भक्ति
शुद्ध	१.	शुद्ध	मुकुन्द	९.	भगवान् श्री कृष्ण के
सत्त्वानाम्	२.	सत्त्वगुण वाले	चरणे	१०.	चरणों में
ऋषीणाम्	७.	ऋषियों की भी	न	१२.	नहीं
च	४.	और	प्रायेण	११.	प्रायः
अमल	५.	निर्मल	उपजायते ॥	१३.	उत्पन्न होती है
आत्मनाम् ।	६.	अन्तःकरण वाले			

श्लोकार्थ—शुद्ध सत्त्वगुण वाले देवताओं की और निर्मल अन्तःकरण वाले ऋषियों की भी भक्ति भगवान् श्री कृष्ण में प्रायः उत्पन्न नहीं होती है ॥

तृतीयः श्लोकः

रजोभिः समसंख्याताः पार्थिवैरिह जन्तवः ।
तेषां ये केचनेहन्ते श्रेयो वै मनुजादयः ॥ ३ ॥

पदच्छेद— रजोभिः सम संख्याताः पार्थिवैः इह जन्तवः ।
तेषाम् ये केचन ईहन्ते श्रेयः वै मनुज आदयः ॥

शब्दार्थ—

रजोभिः	३. धूल के कणों के	ये	५. जो
सम	४. समान	केचन	९. कुछ
संख्याताः	६. असंख्य	ईहन्ते	१४. इच्छा करते हैं
पार्थिवैः	२. पृथ्वी सम्बन्धी	श्रेयः	१३. कल्याण की
इह	१. यहाँ	वै	१०. ही
जन्तवः ।	७. प्राणी (हैं)	मनुज	१२. मनुष्य
तेषाम्	८. उनमें से	आदयः ॥	१२. आदि

श्लोकार्थ—यहाँ पृथ्वी सम्बन्धी के कणों के समान जो असंख्य प्राणी हैं, उनमें से कुछ ही मनुष्य आदि कल्याण की इच्छा करते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

प्रायो मुमुक्षवस्तेषां केचनैव द्विजोत्तम ।
मुमुक्षूणां सहस्रेषु कश्चिन्मुच्येत सिध्यति ॥ ४ ॥

पदच्छेद— प्रायः मुमुक्षवः तेषाम् केचन एव द्विजोत्तम ।
मुमुक्षूणाम् सहस्रेषु कश्चित् मुच्येत सिध्यति ॥

शब्दार्थ—

प्रायः	४. विरले	मुमुक्षूणाम्	७. मुक्ति चाहने वाले
मुमुक्षवः	६. मोक्ष को चाहने वाले होते हैं	सहस्रेषु	८. हजारों में
तेषाम्	२. उनमें से	कश्चित्	९. कोई
केचन	३. कुछ	मुच्येत	१०. मुक्ति अथवा
एव	५. ही	सिध्यति ॥	११. सिद्धि पाता है
द्विजोत्तम ।	१. हे श्रेष्ठ ब्रह्मन् !		

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ ब्रह्मन् ! उनमें से कुछ विरले ही को चाहने वाले होते हैं। मुक्ति चाहने वाले हजारों में कोई मुक्ति अथवा सिद्धि पाता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

मुक्तानामपि सिद्धानां नारायणपरायणः ।
सुदुर्लभः प्रशान्तात्मा कोटिष्वपि महामुने ॥५॥

पदच्छेद— मुक्तानाम् अपि सिद्धानाम् नारायण परायणः ।
सुदुर्लभः प्रशान्त आत्मा कोटिषु अपि महामुने ॥

शब्दार्थ—

मुक्तानाम्	४.	मुक्त पुरुषों में	सुदुर्लभः	१०.	अत्यन्त दुर्लभ हैं
अपि	५.	भी	प्रशान्त आत्मा	६.	शान्तचित्त पुरुष
सिद्धानाम्	६.	सिद्ध (एवम्)	कोटिषु	२.	करोड़ों में
नारायण	७.	भगवान् नारायण में	अपि	३.	भी
परायणः ।	८.	निरत रहने वाले	महामुने ॥	१.	हे महामुनि !

श्लोकार्थ—हे महामुनि ! करोड़ों में भी मुक्त पुरुषों में भी सिद्ध एवम् भगवान् नारायण में निरत रहने वाले शान्तचित्त पुरुष अत्यन्त दुर्लभ है ॥

षष्ठः श्लोकः

वृत्रस्तु स कथं पापः सर्वलोकोपतापनः ।
इत्थं दृढमतिः कृष्ण आसीत् संग्राम उल्बणे ॥६॥

पदच्छेद— वृत्रः तु सः कथम् पापः सर्व लोक उपतापनः ।
इत्थम् दृढमतिः कृष्णे आसीत् संग्राम उल्बणे ॥

शब्दार्थ—

वृत्रः	२.	वृत्रासुर	उपतापनः	७.	सताने वाला था (तब)
तु	३.	तो	इत्थम्	१२.	इस प्रकार
सः	१.	वह	दृढमतिः	६.	निश्चल भक्ति
कथम्	८.	कैसे (उसकी)	कृष्णे	१३.	श्रीकृष्ण में
पापः	४.	पापी (एवम्)	आसीत्	१४.	लगी थी
सर्व	५.	सभी	संग्राम	११.	संग्राम में भी
लोक	६.	लोगों को	उल्बणे ॥	१०.	भयंकर

श्लोकार्थ—वह वृत्रासुर तो पापी एवम् सभी लोगों को सताने वाला था। तब कैसे उसकी निश्चल भक्ति भयंकर संग्राम में भी इस प्रकार श्री कृष्ण में लगी थी ॥

सप्तमः श्लोकः

अत्र नः संशयो भूयाच्छ्रोतुं कौतूहलं प्रभो ।
यः पौरुषेण समरे सहस्राक्षमतोषयत् ॥७॥

पदच्छेद— अत्र नः संशयः भूयान् श्रोतुम् कौतूहलम् प्रभो ।
यः पौरुषेण समरे सहस्राक्षम् अतोषयत् ॥

शब्दार्थ—

अत्र	२.	यहाँ इस विषय में	प्रभो ।	१.	हे स्वामी !
नः	३.	हमें	यः	८.	जिसने
संशयः	५.	सन्देह (है और)	पौरुषेण	९.	अपने पराक्रम से
भूयान्	४.	बहुत	समरे	१०.	युद्ध में
श्रोतुम्	६.	सुनने के लिये	सहस्राक्षम्	११.	इन्द्र को
कौतूहलम्	७.	कौतूहल (है कि)	अतोषयत् ॥	१२.	सन्तुष्ट कर दिया

श्लोकार्थ—हे स्वामी ! यहाँ इस विषय में हमें बहुत सन्देह है और सुनने के लिये कौतूहल है कि जिसने अपने पराक्रम से युद्ध में इन्द्र को सन्तुष्ट कर दिया ॥

अष्टमः श्लोकः

सूत उवाच— परीक्षितोऽथ संप्रश्नं भगवान् बादरायणिः ।
निशम्य श्रद्दधानस्य प्रतिनन्द्य वचोऽब्रवीत् ॥८॥

पदच्छेद— परीक्षितः अथ सम्प्रश्नं भगवान् बादरायणिः ।
निशम्य श्रद्दधानस्य प्रतिनन्द्य वचः अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

परीक्षितः	३.	परीक्षित् का	निशम्य	५.	सुनकर
अथ	१.	इसके बाद	श्रद्दधानस्य	२.	श्रद्धालु
सम्प्रश्नम्	४.	श्रेष्ठ प्रश्न	प्रतिनन्द्य	८.	अभिनन्दन करके यह
भगवान्	६.	भगवान्	वचः	९.	बात
बादरायणिः ।	७.	शुकदेव जी ने	अब्रवीत् ॥	१०.	कही

श्लोकार्थ—इसके बाद श्रद्धालु परीक्षित् का श्रेष्ठ प्रश्न सुनकर भगवान् शुकदेव जी ने यह बात कही ॥

नवमः श्लोकः

शृणुष्वावहितो राजन्नितिहासमिमं यथा ।
श्रुतं द्वैपायनमुखान्नारदाद्देवलादपि ॥ ६ ॥

पदच्छेद— शृणुष्व अवहितः राजन् इतिहासम् इमम् यथा ।
श्रुतम् द्वैपायन मुखात् नारदात् देवलात् अपि ॥

शब्दार्थ—

शृणुष्व	५. सुनो	श्रुतम्	१२. सुना है
अवहितः	४. सावधान होकर	द्वैपायन	७. व्यास जी के
राजन्	१. हे राजन् !	मुखात्	८. मुख से (तथा)
इतिहासम्	३. इतिहास को	नारदात्	६. नारद जी से (और)
इमम्	२. इस	देवलात्	१०. देवल से
यथा ।	६. जिस प्रकार मैंने	अपि ॥	११. भी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस इतिहास को सावधान होकर सुनो । जिस प्रकार मैंने व्यास जी के मुख से तथा नारद जी से और देवल से भी सुना है ।

दशमः श्लोकः

आसीद्राजा सार्वभौमः शूरसेनेषु वै नृप ।
चित्रकेतुरिति ख्यातो यस्यासीत् कामधुङ्महो ॥१०॥

पदच्छेद— आसीत् राजा सार्वभौमः शूरसेनेषु वै नृप ।
चित्रकेतुः इति ख्यातः यस्य आसीत् कामधुक् मही ॥

शब्दार्थ—

आसीत्	८. था	चित्रकेतु	३. चित्रकेतु
राजा	७. राजा	इति	४. इस नाम से
सार्वभौमः	६. एक चक्रवर्ती	ख्यातः	५. प्रसिद्ध
शूरसेनेषु	२. शूरसेन देश में	यस्य	१०. जिसके राज्य में
वै	१०. निश्चित रूप से	आसीत्	१३. थी
नृप ।	१. हे राजन् !	कामधुक्	१२. इच्छानुसार अन्नादि देने वाली
		मही ॥	११. पृथ्वी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! शूरसेन देश में चित्रकेतु इस नाम से प्रसिद्ध एक चक्रवर्ती राजा था । निश्चित रूप से जिसके राज्य में पृथ्वी इच्छानुसार अन्नादि देने वाली थी ॥

एकादशः श्लोकः

तस्य भार्यासहस्राणां सहस्राणि दशाभवन् ।
सान्तानिकश्चापि नृपो न लेभे तासु सन्ततिम् ॥११॥

पदच्छेद— तस्य भार्या सहस्राणाम् सहस्राणि दश अभवन् ।
सान्तानिकः च अपि नृपः न लेभे तासु सन्ततिम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस राजा की	च	७.	और
भार्या	५.	स्त्रियाँ	अपि	६.	भी
सहस्राणाम्	२.	हजारों की	नृपः	१०.	उस राजा ने
सहस्राणि	४.	हजार (एक करोड़)	न	१३.	नहीं
दश	३.	दश	लेभे	१४.	प्राप्त किया
अभवन् ।	६.	थीं	तासु	११.	उनसे
सान्तानिकः	८.	सन्तान पैदा करने में समर्थ	सन्ततिम् ॥	१२.	सन्तान को

श्लोकार्थ—उस राजा की हजारों की दस हजार (एक करोड़) स्त्रियाँ थीं । और सन्तान पैदा करने में समर्थ होने पर भी उस राजा ने उनसे सन्तान को नहीं प्राप्त किया ॥

द्वादशः श्लोकः

रूपौदार्यवयोजन्मविद्यैश्वर्यश्रियादिभिः ।
सम्पन्नस्य गुणैः सर्वैश्चिन्ता वन्ध्यापतेरभूत् ॥१२॥

पदच्छेद— रूप औदार्य वयः जन्म विद्या ऐश्वर्य श्रीआदिभिः ।
सम्पन्नस्य गुणैः सर्वैः चिन्ता वन्ध्या पतेः अभूत् ॥

शब्दार्थ—

रूप	१.	सुन्दरता	सम्पन्नस्य	१०.	सम्पन्न
औदार्य	२.	उदारता	गुणैः	९.	गुणों से
वयः	३.	अवस्था	सर्वैः	८.	सभी
जन्म	४.	कुलीनता	चिन्ता	१३.	चिन्ता
विद्या	५.	विद्या	वन्ध्या	११.	बाँझ के
ऐश्वर्य	६.	वैभव	पतेः	१२.	पति (राजा चित्रकेतु को)
श्री आदिभिः ।	७.	सम्पत्ति-आदि	अभूत् ॥	१४.	रहती थी

श्लोकार्थ—सुन्दरता, उदारता, अवस्था, कुलीनता, विद्या, वैभव, सम्पत्ति आदि सभी गुणों से सम्पन्न, बाँझ के पति राजा चित्रकेतु को चिन्ता रहती थी ॥

त्रयोदशः श्लोकः

न तस्य संपदः सर्वा महिष्यो वामलोचनाः ।
सार्वभौमस्य भूश्चेयमभवन् प्रीतिहेतवः ॥१३॥

पदच्छेद— न तस्य सम्पदः सर्वाः महिष्यः वाम लोचनाः ।
सार्वभौमस्य भूः च इयम् अभवत् प्रीति हेतवः ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	सार्वभौमस्य	२.	चक्रवर्ती समाट् की
तस्य	१.	उस	भूः	८.	पृथ्वी
सम्पदः	४.	सम्पत्तियाँ	च इयम्	७.	और यह
सर्वाः	३.	सभी	अभवन्	१२.	हो सकीं
महिष्यः	६.	रानियाँ	प्रीतिः	९.	सुख का
वामलोचनाः ।	५.	सुन्दरी	हेतवः ॥	१०.	कारण

श्लोकार्थ—उस चक्रवर्ती समाट् की सभी सम्पत्तियाँ, सुन्दरी रानियाँ और यह पृथ्वी सुख का कारण नहीं हो सकीं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्यैकदा तु भवनमङ्गिरा भगवानृषिः ।
लोकाननुचरन्नेतानुपागच्छद्यदृच्छया ॥१४॥

पदच्छेद— तस्य एकदा तु भवनम् अङ्गिराः भगवान् ऋषिः ।
लोकान् अनुचरन् एतान् उपागच्छत् यदृच्छया ॥

शब्दार्थ

तस्य	२.	उस राजा के	लोकान्	८.	लोकों में
एकदा	१.	एक दिन	अनुचरन्	९.	विचरण करते हुये
तु भवनम्	३.	घर में	एतान्	७.	इन
अङ्गिराः	५.	अंगिरा	उपागच्छत्	११.	आये
भगवान्	४.	भगवान्	यदृच्छया ॥	१०.	अपनी इच्छा से
ऋषिः ।	६.	ऋषि			

श्लोकार्थ—एक दिन उस राजा के घर में भगवान् अंगिरा ऋषि इन लोकों में विचरण करते हुये अपनी इच्छा से आये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तं पूजयित्वा विधिवत्प्रत्युत्थानार्हणादिभिः ।
कृतातिथ्यमुपासीदत्सुखासीनं समाहितः ॥१५॥

पदच्छेद — तम् पूजयित्वा विधिवत् प्रत्युत्थान अर्हण आदिभिः ।
कृत आतिथ्यम् उपासीदत् सुख आसीनं समाहितः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१. उस ऋषि की	**कृत**	८. किया (और)
पूजयित्वा	६. पूजा कर के	**आतिथ्यम्**	७. अतिथि सत्कार
विधिवत्	२. विधिपूर्वक	**उपासीदत्**	१२. समीप में बैठ गये
प्रत्युत्थान	३. अगवानी (और)	**सुख**	९. सुखपूर्वक
अर्हण	४. अर्घ्य	**आसीनम्**	१०. मुनि के बैठ जाने पर
आदिभिः ।	५. आदि से	**समाहितः ॥**	११. (राजा भी) शान्त भाव से

श्लोकार्थ—उस ऋषि की विधिपूर्वक अगवानी और अर्घ्य आदि से पूजा करके अतिथि सत्कार किया और सुखपूर्वक मुनि के बैठ जाने पर राजा भी शान्त भाव से समीप में बैठ गये ॥

षोडशः श्लोकः

महर्षिस्तमुपासीनं प्रश्रयावनतं क्षितौ ।
प्रतिपूज्य महाराज समाभाष्येदमब्रवीत् ॥१६॥

पदछेन्द— महर्षिः तम् उपासीनम् प्रश्रय अवनतम् क्षितौ ।
प्रतिपूज्य महाराज सम् आभाष्य इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

महर्षिः	१. महर्षि अंगिरा ने	**प्रतिपूज्य**	७. अभिनन्दन करके
तम्	६. उस राजा का	**महाराज**	८. हे महाराज !
उपासीनम्	५. पास में बैठे हुये	**सम्**	९. इस प्रकार
प्रश्रय	३. विनय से	**आभाष्य**	१०. सम्बोधित करके
अवनतम्	४. झुके हुये (और)	**इदम्**	११. यह
क्षितौ ।	२. पृथ्वी पर	**अब्रवीत् ॥**	१. कहा

श्लोकार्थ—महर्षि अंगिरा ने पृथ्वी पर विनय से झुके हुये और पास में बैठे हुये उस राजा का अभिनन्दन करके हे महाराज ! इस प्रकार सम्बोधित करके यह कहा ॥

सप्तदशः श्लोकः

अङ्गिरा उवाच— अपि तेऽनामयं स्वस्ति प्रकृतीनां तथाऽऽत्मनः ।
यथा प्रकृतिभिर्गुप्तः पुमान् राजापि सप्तभिः ॥१७॥

पदच्छेद— अपि ते अनामयम् स्वस्ति प्रकृतीनाम् तथा आत्मनः ।
यथा प्रकृतिभिः गुप्तः पुमान् राजापि सप्तभिः ॥

शब्दार्थ—

अपि	१.	हे राजन् ! क्या	यथा	८.	जैसे
ते	२.	तुम्हारा	प्रकृतिभिः	१२.	प्रकृतियों से
अनामयम्	६.	कुशल	गुप्तः	१३.	सुरक्षित रहता है
स्वस्ति	७.	मङ्गल (तो है न)	पुमान्	९.	जीवमहत्तत्त्वादि
प्रकृतीनाम्	३.	प्रजाओं का	राजापि	११.	राजा भी (सात)
तथा	४.	और	सप्तभिः ॥	१०.	सात आवरणों से युक्त होता है वैसे ही
आत्मनः ।	५.	अपना भी			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! क्या तुम्हारा, प्रजाओं का और अपना भी कुशल मङ्गल तो है न । जैसे जीव महत्तत्त्वादि सात आवरणों से युक्त होता है वैसे ही राजा भी सात (गुरु, मन्त्री, राष्ट्र, दुर्ग, कोष, सेना और मन्त्री) इन प्रकृतियों से सुरक्षित रहता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

आत्मानं प्रकृतिष्वद्धा निधाय श्रेय आप्नुयात् ।
राज्ञा तथा प्रकृतयो नरदेवाहिताधयः ॥१८॥

पदच्छेद— आत्मानम् प्रकृतिषु अद्धा निधाय श्रेयः आप्नुयात् ।
राज्ञा तथा प्रकृतयो नरदेव आहत आधयः ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	२.	अपने को	राज्ञा	१०.	राजा को
प्रकृतिषु	४.	प्रजाओं के अनुकूल	तथा	१२.	कल्याण प्राप्त करती है
अद्धा	३.	पूर्ण रूप से	प्रकृतयः	८.	प्रजा भी
निधाय	५.	रख कर	नरदेव	१.	हे नरेन्द्र ! जैसे
श्रेयः	६.	कल्याण	आहित	११.	सौंप कर
आप्नुयात् ।	७.	प्राप्त करता है (वैसे ही)	आधयः ॥	९.	अपनी रक्षा का भार

श्लोकार्थ—हे नरेन्द्र ! जैसे अपने को पूर्णरूप से प्रजाओं के अनुकूल रखकर कल्याण प्राप्त करता है वैसे ही प्रजा भी अपनी रक्षा का भार राजा को सौंप कर कल्याण प्राप्त करती है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अपि दाराः प्रजामात्या भृत्याः श्रेण्योऽथ मन्त्रिणः ।
पौरा जानपदा भूपा आत्मजा वशवर्तिनः ॥१९॥

पदच्छेद— अपि दाराः प्रजाः अमात्याः भृत्याः श्रेण्यः अथ मन्त्रिणः ।
पौराः जानपदाः भूपाः आत्मजाः वश वर्तिनः ॥

शब्दार्थ—

अपि	१. हे राजन् क्या तुम्हारी	अथ मन्त्रिणः	७. और सलाहकार
दाराः	२. रानियाँ	पौराः	८. नागरिक
प्रजाः	३. प्रजायें	जानपदाः	९. देशवासी
अमात्याः	४. मन्त्रिगण	भूपाः	१०. सामन्त राजा (और)
भृत्याः	५. सेवक	आत्मजाः	११. पुत्र
श्रेण्यः	६. व्यापारी	वशर्वातिनः ॥	१२. आज्ञाकारी हैं न

श्लोकार्थ—हे राजन् ! क्या तुम्हारी रानियाँ, प्रजायें, मन्त्रीगण, सेवक, व्यापारी, और सलाहकार, नागरिक, देशवासी, सामन्त, राजा और पुत्र आज्ञाकारी हैं न ?

विंशः श्लोकः

यस्यात्मानुवशश्चेत्स्यात्सर्वे तद्वशगा इमे ।
लोकाः सपाला यच्छन्ति सर्वे बलिमतन्द्रिताः ॥२०॥

पदच्छेद— यस्य आत्मा अनुवशः चेत्स्यात् सर्वे तत् वशगाः इमे ।
लोकाः सपालाः यच्छन्ति सर्वे बलिम् अतन्द्रिताः ॥

शब्दार्थं—

यस्य	१. जिसका	इमे	६. ये
आत्मा	३. मन	लोकाः	९. लोक
अनुवशः	४. वश में	सपालाः	१०. पाल सहित
चेत्	३. यदि	यच्छन्ति	१४. देते हैं
स्यात्	५. हो तो	सर्वे	११. सभी (लोक)
सर्वे तत्	७. सभी उनके	बलिम्	१३. भेंट
वशगाः	८. वशीभूत होते हैं (तथा)	अतन्द्रिताः ॥	१२. आलस्य रहित होकर

श्लोकार्थ—जिसका मन यदि वश में हो तो ये समी वशीभूत होते हैं। तथा लोकपाल सहित सभो लोक आलस्य रहित होकर भेंट देते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

आत्मनः प्रीयते नात्मा परतः स्वत एव वा ।
लक्षयेऽलब्धकामं त्वां चिन्तया शबलं मुखम् ॥२१॥

पदच्छेद— आत्मनः प्रीयते न आत्मा परतः स्वतः एव वा ।
लक्षये अलब्ध कामम् त्वाम् चिन्तया शबलम् मुखम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मनः	१.	तुम अपने	वा ।	५.	अथवा
प्रीयते	३.	प्रसन्न	लक्षये	१४.	देख रहा हूँ
न	४.	नहीं हो	अलब्ध कामम्	९.	कोई अपूर्ण कामना है
आत्मा	२.	आप से	त्वाम्	१०.	तुम्हारे
परतः	६.	दूसरे से (और)	चिन्तया	११.	चिन्ता से
स्वतः	७.	स्वयम् से भी प्रसन्न	शबलम्	१२.	युक्त
एव	८.	नहीं हो	मुखम् ॥	१३.	मुख को

श्लोकार्थ—तुम अपने आप से प्रसन्न नहीं हो । अथवा दूसरे से और स्वयम् से भी प्रसन्न नहीं हो। कोई अपूर्ण कामना है । तुम्हारे चिन्ता से युक्त मुख को देख रहा हूँ ॥

द्वाविंशः श्लोकः

एवं विकल्पितो राजन् विदुषा मुनिनापि सः ।
प्रश्रयावनतोऽभ्याह प्रजाकामस्ततो मुनिम् ॥२२॥

पदच्छेद— एवम् विकल्पितः राजन् विदुषा मुनिना अपि सः ।
प्रश्रय अवनतः अभि आह प्रजाकामः ततः मुनिम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५.	इस प्रकार	प्रश्रय	११.	विनम्रता से
विकल्पितः	६.	तर्क वितर्क पूर्वक पूछने पर	अवनतः	१२.	झुक कर
राजन्	१.	हे राजन् !	अभिआह	१४.	कहा
विदुषा	३.	विद्वान्	प्रजा	७.	प्रजा की
मुनिना	४.	मुनि के द्वारा	कामः	८.	कामना वाले
अपि	१०.	भी	ततः	२.	तब
सः ।	९.	उस राजा ने	मुनिम् ॥	१३.	मुनि से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तब विद्वान् मुनि के द्वारा इस प्रकार तर्क-वितर्क पूर्वक पूछने पर प्रजा की कामना वाले उस राजा ने भी विनम्रता से झुक कर मुनि से कहा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

चित्रकेतुरुवाच— भगवन् किं न विदितं तपोज्ञानसमाधिभिः ।
योगिनां ध्वस्तपापानां बहिरन्तः शरीरिषु ॥२३॥

पदच्छेद— भगवन् किम् न विदितम् तपः ज्ञान समाधिभिः ।
योगिनाम् ध्वस्त पापानाम् बहिः अन्तः शरीरिषु ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१.	हे भगवन् !	समाधिभिः	७.	समाधि के द्वारा
किम्	११.	क्या	योगिनाम्	४.	योगी
न	१२.	नहीं	ध्वस्त	२.	नष्ट हुये
विदितम्	१३.	जान लेते हैं	पापानाम्	३.	पाप वाले
तपः	५.	तपस्या	बहिः	१०.	बाहर
ज्ञान	६.	ज्ञान (और)	अन्तः	९.	अन्दर
			शरीरिषु ॥	८.	प्राणियों के

श्लोकार्थं— हे भगवन् ! नष्ट हुये पाप वाले योगी तपस्या और ज्ञान तथा समाधि के द्वारा प्राणियों के अन्दर-बाहर क्या नहीं जान लेते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तथापि पृच्छतो ब्रूयां ब्रह्मन्नात्मनि चिन्तितम् ।
भवतो विदुषश्चापि चोदितस्त्वदनुज्ञया ॥२४॥

पदच्छेद— तथापि पृच्छतः ब्रूयाम् ब्रह्मन् आत्मनि चिन्तितम् ।
भवतः विदुषः च अपि चोदितः त्वत् अनुज्ञया ॥

शब्दार्थ—

तथापि	२.	तो भी	भवतः	३.	आप
पृच्छतः	५.	पूछने पर	विदुषः	४.	विद्वान् के द्वारा
ब्रूयाम्	१३.	कहूँगा	च	६.	और
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	अपि	१०.	भी (मैं)
आत्मनि	११.	अपनी	चोदितः	९.	प्रेरित होकर
चिन्तितम् ।	१२.	चिन्ता को	त्वत्	७.	आपकी
			अनुज्ञया ॥	८.	आज्ञा से

श्लोकार्थं—हे ब्रह्मन् ! तो भी आप विद्वान् के द्वारा पूछने पर और आपकी आज्ञा से प्रेरित होकर भी मैं अपनी चिन्ता को कहूँगा ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

लोकपालैरपि प्रार्थ्याः साम्राज्यैश्वर्यसम्पदः ।
न नन्दयन्त्यप्रजं मां क्षुत्तृट्काममिवापरे ॥२५॥

पदच्छेद— लोकपालैः अपि प्रार्थ्याः साम्राज्य ऐश्वर्य सम्पदः ।
न नन्दयन्ति अप्रजम् माम् क्षुत्तृट्कामम् इव अपरे ॥

शब्दार्थ—

लोकपालैः	१.	लोकपालों के द्वारा	न	९.	नहीं
अपि	६.	भी	नन्दयन्ति	१०.	आनन्दित कर रही हैं
प्रार्थ्याः	२.	याचना करने योग्य	अप्रजम्	७.	सन्तान से रहित
साम्राज्य	३.	पृथ्वी का राज्य	माम्	८.	मुझको
ऐश्वर्य	४.	वैभव और	क्षुत्तृट्कामम्	९.	भूख-प्यास की कामना वाले को
सम्पदः ।	५.	सम्पत्तियाँ	इव	१२.	जैसे
			अपरे ॥	१३.	दूसरे (योग आनन्दित नहीं करते हैं)

श्लोकार्थ—लोकपालों के द्वारा याचना करने योग्य पृथ्वी का राज्य, वैभव और सम्पत्तियाँ भी सन्तान से रहित मुझको आनन्दित नहीं कर रही हैं। जैसे भूख-प्यास की कामना वाले को दूसरे योग आनन्दित नहीं करते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

ततः पाहि महाभाग पूर्वैः सह गतं तमः ।
यथा तरेम दुस्तारं प्रजया तद् विधेहि नः ॥२६॥

पदच्छेद— ततः पाहि महाभाग पूर्वैः सह गतम् तमः ।
यथा तरेम दुस्तारम् प्रजया तत् विधेहि नः ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	इसलिये	यथा	९.	जिस प्रकार
पाहि	३.	रक्षा करें	तरेम	११.	पार कर जाऊँ
महाभाग	१.	हे महाभाग !	दुस्तारम्	८.	कठिनाई से पार होने योग्य
पूर्वैः	४.	पितरों के	प्रजया	१०.	सन्तान के द्वारा
सह	५.	साथ	तत्	१२.	वह
गतम्	७.	प्राप्त	विधेहि	१४.	कीजिये
तमः ।	६.	नरक को	नः ॥	१३.	हमारे लिये

श्लोकार्थ—हे महाभाग ! इसलिये रक्षा करें। पितरों के साथ नरक को प्राप्त तथा कठिनाई से पार होने योग्य हम जिस प्रकार सन्तान के द्वारा पार कर जायें, वह हमारे लिये कीजिये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच-- इत्यर्थितः स भगवान् कृपालुर्ब्रह्मणः सुतः ।
श्रपयित्वा चरुं त्वाष्ट्रं त्वष्टारमयजद् विभुः ।।२७।।

पदच्छेद-- इति अर्थितः सः भगवान् कृपालुः ब्रह्मणः सुतः ।
श्रपयित्वा चरुम् त्वाष्ट्रम् त्वष्टारम् अयजद् विभुः ।।

शब्दार्थ--

इति	१.	इस प्रकार	श्रपयित्वा	१०.	पकाकर
अर्थितः	२.	प्रार्थना करने पर	चरुम्	६.	खीर को
सः	३.	उस	त्वाष्ट्रम्	८.	त्वष्टा देवता के योग्य
भगवान्	५.	भगवान्	त्वष्टारम्	११.	त्वष्टा देवता का
कृपालुः	४.	दयालु	अयजद्	१२.	यजन, किया
ब्रह्मणः सुतः ।	६.	ब्रह्मा के पुत्र	विभुः ।।	६.	प्रभु अङ्गिरा ने

श्लोकार्थ--इस प्रकार प्रार्थना करने पर उस दयालु भगवान् ब्रह्मा के पुत्र प्रभु अङ्गिरा ने त्वष्टा देवता के योग्य खीर को पकाकर त्वष्टा देवता का यजन किया ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

ज्येष्ठा श्रेष्ठा च या राज्ञो महिषीणां च भारत ।
नाम्ना कृतद्युतिस्तस्यै यज्ञोच्छिष्टमदाद् द्विजः ।।२८।।

पदच्छेद-- ज्येष्ठा श्रेष्ठा च या राज्ञः महिषीणाम् च भारत ।
नाम्ना कृतद्युतिः तस्यै यज्ञ उच्छिष्टम् अदात् द्विजः ।।

शब्दार्थ--

ज्येष्ठा	५.	ज्जेष्ठ	नाम्ना	६.	नाम की पत्नी थी
श्रेष्ठा	७.	श्रेष्ठ	कृतद्युतिः	८.	कृतद्युति
च	६.	और	तस्यै	११.	उसको
या	४.	जो	यज्ञ	१२.	यज्ञ का
राज्ञः	२.	राजा की	उच्छिष्टम्	१३.	अवशेष प्रसाद
महिषीणाम् च	३.	रानियों में	अदात्	१४.	दिया
भारत ।	१.	हे परीक्षित् !	द्विजः ।।	१०.	ब्राह्मण अङ्गिरा ने

श्लोकार्थ--हे परीक्षित् ! राजा की रानियों में जो ज्येष्ठ और श्रेष्ठ कृतद्युति नाम की पत्नी थी, ब्राह्मण अङ्गिरा ने उसको यज्ञ का अवशेष प्रसाद दिया ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अथाह नृपतिं राजन् भवितैकस्तवात्मजः ।
हर्षशोकप्रदस्तुभ्यमिति ब्रह्मसुतो ययौ ॥२९॥

पदच्छेद— अथ आह नृपतिम् राजन् भविता एकः तव आत्मजः ।
हर्ष-शोक प्रदः तुभ्यम् इति ब्रह्म सुतः ययौ ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तब उन्होंने	हर्ष	६.	हर्ष (और)
आह	३.	कहा	शोक	७.	शोक
नृपतिम्	२.	राजा चित्रकेतु से	प्रदः	८.	प्रदान करने वाला
राजन्	४.	हे राजन् !	तुभ्यम्	९.	तुमको
भविता	१२.	होगा	इति	१३.	ऐसा कह कर
एकः	१०.	एक	सुतः	१४.	ब्रह्मा के पुत्र
तव	५.	तुम्हें	ययौ ॥	१५.	अङ्गिरा चले गये
आत्मजः ।	११.	पुत्र			

श्लोकार्थ—तब उन्होंने राजा चित्रकेतु से कहा; हे राजन् ! तुम्हें हर्ष और शोक प्रदान करने वाला तुमको एक पुत्र होगा । ऐसा कह कर ब्रह्मा के पुत्र अङ्गिरा चले गये ॥

त्रिंशः श्लोकः

सापि तत्प्राशनादेव चित्रकेतोरधारयत् ।
गर्भं कृतद्युतिर्देवी कृत्तिकाग्नेरिवात्मजम् ॥३०॥

पदच्छेद— सः अपि तत् प्राशनात् एव चित्रकेतोः अधारयत् ।
गर्भम् कृतद्युतिः देवी कृत्तिका अग्नेः इव आत्मजम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उस	गर्भम्	९.	गर्भ को
अपि	४.	भी	कृतद्युतिः	३.	कृतद्युति ने
तत्	५.	उस चरु के	देवी	२.	महारानी
प्राशनात्	६.	खाने से	कृत्तिका	१२.	कृत्तिका ने
एव	७.	ही	अग्नेः	१३.	अग्नि से
चित्रकेतोः	८.	चित्रकेतु से	इव	११.	जैसे
अधारयत् ।	१०.	धारण किया	आत्मजम् ॥	१४	पुत्र को (धारण किया था)

श्लोकार्थ—उस महारानी कृतद्युति ने भी उस चरु के खाने से ही चित्रकेतु से गर्भ को धारण किया, जैसे कृत्तिका ने अग्नि से पुत्र को धारण किया था ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्या अनुदिनं गर्भः शुक्लपक्ष इवोडुपः ।
ववृधे शूरसेनेशतेजसा शनकैर्नृप ॥३१॥

पदच्छेद— तस्याः अनुदिनम् गर्भः शुक्लपक्षे इव उडुपः ।
ववृधे शूरसेन ईश तेजसा शनकैः नृप ॥

शब्दार्थ—

तस्याः	२.	उस (कृतद्युति का)	ववृधे	८.	बढ़ने लगा
अनुदिनम्	८.	दिनों-दिन	शूरसेन	४.	शूरसेन देश के
गर्भः	३.	गर्भ	ईश	५.	स्वामी के
शुक्लपक्षे	११.	शुक्लपक्ष में	तेजसा	६.	तेज से
इव	१०.	जैसे	शनकैः	७.	क्रमशः
उडुपः ।	१२.	चन्द्रमा बढ़ता है	नृप ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस कृतद्युतिका गर्भ शूरसेन देश के स्वामी के तेज से क्रमशः दिनों-दिन बढ़ने लगा, जैसे शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अथ काल उपावृत्ते कुमारः समजायत ।
जनयन् शूरसेनानां शृण्वतां परमां मुदम् ॥३२॥

पदच्छेद— अथ काले उपावृत्ते कुमारः सम् अजायत ।
जनयन् सूरसेनानाम् शृण्वताम् परमाम् मुदम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	जनयन्	८.	उत्पन्न करते हुये
काले	२.	समय	शूरसेनानाम्	५.	शूरसेन देश के निवासियों को
उपावृत्ते	३.	आने पर	शृण्वताम्	४.	सुनने वाले
कुमारः	९.	बालक का	परमाम्	६.	बहुत
समजायत ।	१०.	जन्म हुआ	मुदम् ॥	७.	आनन्द

श्लोकार्थ—तदनन्तर समय आने पर सुनने वाले शूरसेन देश के निवासियों को बहुत आनन्द उत्पन्न करते हुये बालक का जन्म हुआ ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

हृष्टो राजा कुमारस्य स्नातः शुचिरलंकृतः ।
वाचयित्वाऽऽशिषो विप्रैः कारयामास जातकम् ॥३३॥

पदच्छेद— हृष्टः राजा कुमारस्य स्नातः शुचिः अलंकृतः ।
वाचयित्वा आशिषः विप्रैः कारयामास जातकम् ॥

शब्दार्थ—

हृष्टः	१.	हर्षित	वाचयित्वा	८.	कहला कर
राजा	२.	राजा चित्रकेतु ने	आशिषः	७.	आशीर्वादों को
कुमारस्य	९.	राजकुमार का	विप्रैः	६.	ब्राह्मणों से
स्नातः	३.	स्नान करके	कारयामास	११.	कराया
शुचिः	४.	पवित्र (होकर)	जातकम् ॥	१०.	जात कर्म संस्कार
अलंकृतः ।	५.	आभूषण धारण करके			

श्लोकार्थ—हर्षित राजा चित्रकेतु ने स्नान करके पवित्र होकर आभूषण धारण करके ब्राह्मणों से आशीर्वादों को कहलाकर जातकर्म संस्कार कराया ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तेभ्यो हिरण्यं रजतं वासांस्याभरणानि च ।
ग्रामान् हयान् गजान् प्रादाद्धेनूनामर्बुदानि षट् ॥३४॥

पदच्छेद— तेभ्यः हिरण्यम् रजतम् वासांसि आभरणानि च ।
ग्रामान् हयान् गजान् प्रादात् धेनूनाम् अर्बुदानि षट् ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	१.	उन ब्राह्मणों को	ग्रामान्	६.	गांव
हिरण्यम्	२.	सोना	हयान्	७.	घोड़े
रजतम्	३.	चाँदी	गजान्	८.	हाथी
वासांसि	४.	वस्त्र	प्रादात्	१३.	दान दी
आभरणानि	५.	आभूषण	धेनूनाम्	१२.	गौएँ
च ।	९.	और	अर्बुदानि	११.	अरब
			षट् ॥	१०.	छः

श्लोकार्थ—उन ब्राह्मणों को सोना, चाँदी, वस्त्र, आभूषण, गांव, घोड़े, हाथी और छः अरब गौएँ दान दीं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ववर्ष काममन्येषां पर्जन्य इव देहिनाम् ।
धन्यं यशस्यमायुष्यं कुमारस्य महामनाः ।।३५।।

पदच्छेद— ववर्ष कामम् अन्येषाम् पर्जन्यः इव देहिनाम् ।
धन्यम् यशस्यम् आयुष्यम् कुमारस्य महामनाः ।।

शब्दार्थ—

ववर्ष	११.	दी	देहिनाम् ।	६.	शरीरधारी
कामम्	१०.	मुँहमांगी वस्तुयें	धन्यम्	३.	धन
अन्येषाम्	७.	दूसरेमनुष्यों को भी	यशस्यम्	४.	यश और
पर्जन्यः	८.	मेघ के	आयुष्यम्	५.	आयु की वृद्धि के लिये
इव	९.	समान	कुमारस्य	२.	राजकुमार के
			महामनाः ।।	१.	उदार शिरोमणि (राजा ने)

श्लोकार्थ—उदार शिरोमणि राजा ने राजकुमार के धन, यश और आयु की वृद्धि के लिये शरीरधारी दूसरे मनुष्यों को भी मेघ के समान मुँहमांगी वस्तुयें दीं ।।

षट्त्रिंशः श्लोकः

कृच्छ्लब्धेऽथ राजर्षेस्तनयेऽनुदिनं पितुः ।
यथा निःस्वस्य कृच्छ्राप्ते धने स्नेहोऽन्ववर्धत ।।३६।।

पदच्छेद— कृच्छ्र लब्धे अथ राजर्षेः तनये अनुदिनम् पितुः ।
यथा निःस्वस्य कृच्छ्र आप्ते धने स्नेहः अन्ववर्धत ।।

शब्दार्थ—

कृच्छ्र	४.	कठिनाई से	यथा	१०.	जैसे
लब्धे	५.	प्राप्त	निःस्वस्य	११.	दीन मनुष्य को
अथ	१.	तदनन्तर	कृच्छ्र	१२.	कठिनाई से
राजर्षेः	२.	राजर्षि	आप्ते	१३.	प्राप्त
तनये	६.	पुत्र के प्रति	धने	१४.	धन के प्रति होता है
अनुदिनम्	७.	दिनों दिन	स्नेहः	८.	अनुराग
पितुः ।	३.	पिता का	अन्ववर्धत ।।	९.	बढ़ने लगा

श्लोकार्थ—तदनन्तर राजर्षि पिता का कठिनाई से प्राप्त पुत्र के प्रति दिनों दिन अनुराग बढ़ने लगा, जैसे दीन मनुष्य को कठिनाई से प्राप्त धन के प्रति होता है ।।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

मातुस्त्वतितरां पुत्रे स्नेहो मोहसमुद्भवः ।
कृतद्युतेः सपत्नीनां प्रजाकामज्वरोऽभवत् ॥३७॥

पदच्छेद— मातुः तु अतितराम् पुत्रे स्नेहः मोह समुद्भवः ।
कृतद्युतेः सपत्नीनाम् प्रजाकाम ज्वरः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

मातुः	१. माता का	समुद्भवः	५. उत्पन्न
तु	२. तो	कृतद्युतेः	८. कृतद्युति की
अतितराम्	६. अत्यन्त	सपत्नीनाम्	९. सौतों को
पुत्रे	३. पुत्र के प्रति	प्रजाकाम	१०. सन्तान की कामना से
स्नेहः	७. प्रेम था (किन्तु)	ज्वरः	११. सन्ताप
मोह ।	४. मोह से	अभवत् ॥	१२. उत्पन्न हो गया

श्लोकार्थ माता का तो पुत्र के प्रति मोह से उत्पन्न अत्यन्त प्रेम था । किन्तु कृतद्युति की सौतों को सन्तान की कामना से सन्ताप उत्पन्न हो गया ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

चित्रकेतोरतिप्रीतिर्यथा दारे प्रजावति ।
न तथान्येषु सञ्जज्ञे बालं लालयतोऽन्वहम् ॥३८॥

पदच्छेद— चित्रकेतोः अति प्रीतिः यथा दारे प्रजावति ।
न तथा अन्येषु सञ्जज्ञे बालम् लालयतः अन्वहम् ॥

शब्दार्थ—

चित्रकेतोः	४. राजा चित्रकेतु का	न	१२. नहीं
अति	८. अत्यन्त	तथा	१०. उस प्रकार
प्रीतिः	९. प्रेम था	अन्येषु	११. दूसरी स्त्रियों में
यथा	५. जिस प्रकार	सञ्जज्ञे	१३. था
दारे	७. स्त्री में	बालम्	१. बालक को
प्रजावति ।	६. पुत्रवती	लालयतः	३. लाड़-प्यार करते हुये
		अन्वहम् ॥	२. प्रति दिन

श्लोकार्थ—बालक को प्रति दिन लाड़-प्यार करते हुये राजा चित्रकेतु का जिस प्रकार पुत्रवती स्त्री में अत्यन्त प्रेम था, उस प्रकार दूसरी स्त्रियों में नहीं था ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ताः पर्यतप्यन्नात्मानं गर्हयन्त्योऽभ्यसूयया ।
आनपत्येन दुःखेन राज्ञोऽनादरणेन च ।।३९।।

पदच्छेद— ताः पर्यतप्यत् आत्मानम् गर्हयन्त्यः अभ्यसूयया ।
आनपत्येन दुःखेन राज्ञः अनादरणेन च ।।

शब्दार्थ —

ताः	१. वे रानियाँ	आनपत्येन	६. सन्तान न होने के
पर्यतप्यत्	५. जलने लगीं (तथा)		
आत्मानम्	२. अपने को	दुःखेन	७. दुःख से
गर्हयन्त्यः	३. धिक्कारती हुई	राज्ञः	९. राजा के
अभ्यसूयया ।	४. डाह से	अनादरणेन	१०. अनादर से भी दुःखी थीं
		च ।।	८. और

श्लोकार्थ—वे रानियाँ अपने को धिक्कारती हुई डाह से जलने लगीं । तथा सन्तान न होने के दुःख से और राजा के अनादर से दुःखी थीं ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

धिगप्रजां स्त्रियं पापां पत्युश्चागृहसम्मताम् ।
सुप्रजाभिः सपत्नीभिर्दासीमिव तिरस्कृताम् ।।४०।।

पदच्छेद— धिग् अप्रजाम् स्त्रियम् पापाम् पत्युः च अगृह सम्मताम् ।
सुप्रजाभिः सपत्नीभिः दासीम् इव तिरस्कृताम् ।।

शब्दार्थ—

धिग्	१३. धिक्कार है	सम्मताम्	५. तिरस्कृत
अप्रजाम्	१. सन्तानहीन	सुप्रजाभिः	७. सुन्दर सन्तान वालो
स्त्रियम्	१२. स्त्री को	सपत्नीभिः	८. सौतों के द्वारा
पापाम्	२. पापिनी	दासीम्	९. दासी के
पत्युः	३. पति से	इव	१०. समान
च	६. और	तिरस्कृताम् ।।	११. अपमानित
अगृह	४. घर में		

श्लोकार्थ—सन्तानहीन पापिनी पति से घर में तिरस्कृत और सुन्दर सन्तान वाली सौतों के द्वारा दासी के समान अपमानित स्त्री को धिक्कार है ।।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

दासीनां को नु सन्तापः स्वामिनः परिचर्यया ।
अभीक्ष्णं लब्धमानानां दास्या दासीव दुर्भगाः ॥४१॥

पदच्छेद— दासीनाम् कः नु सन्तापः स्वामिनः परिचर्यया ।
अभीक्षणम् लब्धमानानाम् दास्याः दासीव दुर्भगाः ॥

शब्दार्थ—

दासीनाम्	१.	दासियों को	अभीक्षणम्	६.	निरन्तर
कः नु	२.	क्या	लब्ध	८.	प्राप्त करने वाली हैं
सन्तापः	३.	दुःख है (वे तो)	मानानाम्	७.	सम्मान
स्वामिनः	४.	स्वामी की	दास्याः	६.	(हम लोग तो) दासी की
परिचर्यया ।	५.	सेवा से	दासीव	१०.	दासी के समान
			दुर्भगाः ॥	११.	अभागिन हैं

श्लोकार्थ—दासियों को क्या दुःख है। वे तो स्वामी की सेवा से सम्मान प्राप्त करने वाली हैं। हम लोग तो दासी की दासी के समान अभागिन हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

एवं सन्दह्यमानानां सपत्न्याः पुत्रसम्पदा ।
राज्ञोऽसम्मतवृत्तीनां विद्वेषो बलवानभूत् ॥४२॥

पदच्छेद— एवम् सन्दह्यमानानाम् सपत्न्याः पुत्र सम्पदा ।
राज्ञः असम्मत वृत्तीनाम् विद्वेषः बलवान् अभूत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	राज्ञः	७.	राजा के द्वारा
सन्दह्य	५.	जलती	असम्मत	८.	अवहेलना
मानानाम्	६.	हुई (और)	वृत्तीनाम्	६.	पाने वाली स्त्रियों को
सपत्न्याः	२.	सौत की	विद्वेषः	११.	द्वेष
पुत्र	३.	पुत्ररूपी	बलवान्	१०.	अत्यधिक
सम्पदा ।	४.	सम्पत्ति से	अभूत् ॥	१२.	हुआ

श्लोकार्थ—इस प्रकार सौत की पुत्र रूपी सम्पत्ति से जलती हुई, और राजा के द्वारा अवहेलना पाने वाली स्त्रियों को अत्यधिक द्वेष हुआ ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

विद्वेषनष्टमतयः स्त्रियो दारुणचेतसः ।
गरं ददुः कुमाराय दुर्मर्षा नृपतिं प्रति ।।४३।।

पदच्छेद— विद्वेष नष्ट मतयः स्त्रियः दारुण चेतसः ।
गरम् ददुः कुमाराय दुर्मर्षाम् नृपतिम् प्रति ।।

शब्दार्थ—

विद्वेष	१.	अत्यन्त द्वेष के कारण	गरम्	११.	विष
नष्ट	२.	नष्ट	ददुः	१२.	दे दिया
मतयः	३.	बुद्धि वाली	कुमाराय	१०.	बालक को
स्त्रियः	६.	स्त्रियों ने	दुर्मर्षाम्	९.	असहनशील होने से
दारुण	४.	क्रूर	नृपतिम्	७.	राजा के
चेतसः ।	५.	चित्त वाली	प्रति ।।	८.	प्रति

श्लोकार्थ—अत्यन्त द्वेष के कारण नष्ट बुद्धिवाली, क्रूर चित्त वाली स्त्रियों ने राजा के प्रति असहनशील होने से बालक को विष दे दिया ।।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

कृतद्युतिरजानन्ती सपत्नीनामघं महत् ।
सुप्त एवेति सञ्चिन्त्य निरीक्ष्य व्यचरद् गृहे ।४४।।

पदच्छेद— कृतद्युतिः अजानन्ती सपत्नीनाम् अघम् महत् ।
सुप्तः एव इति सञ्चिन्त्य निरीक्ष्य व्यचरत् गृहे ।।

शब्दार्थ—

कृतद्युतिः	५.	महारानी कृतद्युति	एव	७.	ही है
अजानन्ती	४.	न जानती हुई	इति	८.	ऐसा
सपत्नीनाम्	१.	सौतों के	सञ्चिन्त्य	९.	सोचकर (और)
अघम्	३.	पाप को	निरीक्ष्य	१०.	देखकर
महत्	२.	महा	व्यचरत्	१२.	घूमने लगी
सुप्तः ।	६.	बालक सोया	गृहे ।।	११.	घर में

श्लोकार्थ—सौतों के महापाप को न जानती हुई महारानी कृतिद्युति बालक सोया ही है ऐसा सोचकर और देखकर घर में घूमने लगी ।।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

शयानं सुचिरं बालमुपधार्य मनीषिणी ।
पुत्रमानय मे भद्रे इति धात्रीमचोदयत् ।।४५।।

पदच्छेद— शयानम् सुचिरम् बालम् उपधार्य मनीषिणी ।
पुत्रम् आनय मे भद्रे इति धात्रीम् अचोदयत् ।।

शब्दार्थ—

शयानम्	३. सोया हुआ	आनय	९. ले आओ
सुचिरम्	१. बहुत देर से	मे	७. मेरे
बालम्	२. बालक को	भद्रे	६. कल्याणि
उपधार्य	४. जानकर	इति	१०. इस प्रकार
मनीषिणी ।	५. बुद्धिमती (रानी ने)	धात्रीम्	११. धाय से
पुत्रम्	८. पुत्र को	अचोदयत् ।।	१२. कहा

श्लोकार्थ—बहुत देर से बालक को सोया हुआ जानकर बुद्धिमती रानी ने कल्याणि ! मेरे पुत्र को ले आओ इस प्रकार धाय से कहा ।।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

सा शयानमुपव्रज्य दृष्ट्वा चोत्तारलोचनम् ।
प्राणेन्द्रियात्मभिस्त्यक्तं हतास्मीत्यपतद् भुवि ।।४६।।

पदच्छेद— सा शयानम् उपव्रज्य दृष्ट्वा च उत्तार लोचनम् ।
प्राण इन्द्रिय आत्मभिः त्यक्तम् हता अस्मि इति अपतत् भुवि ।।

शब्दार्थ—

सा	१. वह (धाय)	इन्द्रिय	८. इन्द्रिय और
शयानम्	२. सोते हुये (बालक के)	आत्मभिः	९. जीवात्मा से
उपव्रज्य	३. पास जाकर	त्यक्तम्	१०. छोड़े हुये (बालक को)
दृष्ट्वा	११. देखकर	हता	१२. हाय
च	४. और	अस्मि	१३. मैं मारी गई
उत्तार	५. उल्टी हुई	इति	१४. इस प्रकार कहकर
लोचनम्	६. आँख की पुतली (तथा)	अपतत्	१६. गिर पड़ी
प्राण ।	७. प्राण	भुवि ।।	१५. धरती पर

श्लोकार्थ—वह धाय सोते हुये बालक के पास जाकर और उल्टी हुई आँख की पुतली तथा प्राण, इन्द्रिय और जीवात्मा से छोड़े हुये बालक को देखकर हाय मैं मारी गई इस प्रकार कहकर धरती पर गिर पड़ी ।।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तस्यास्तदाऽऽकर्ण्य भृशातुरं स्वरं घ्नन्त्याः कराभ्यामुर उच्चकैरपि ।

प्रविश्य राज्ञी त्वरयाऽऽत्मजान्तिकं ददर्श बालं सहसा मृतं सुतम् ।।४७।।

पदच्छेद— तस्याः तदा आकर्ण्य भृश आतुरम् स्वरम् घ्नन्त्याः कराभ्याम् उरः उच्चकैः अपि ।
प्रविश्य राज्ञी त्वरया आत्मज अन्तिकम्, ददर्श बालम् सहसा मृतम् सुतम् ।।

शब्दार्थ—

तस्याः	२.	उस धाय का	**प्रविश्य**	१२	प्रवेश करके
तदा	१.	तब	**राज्ञी**	१०.	रानी कृतद्युति ने
आकर्ण्य	९.	सुनकर	**त्वरया**	११.	शीघ्रता से
भृश आतुरम्	७.	अत्यन्त व्याकुल	**आत्मज**	१३.	पुत्र के
स्वरम्	८.	स्वर में (रोना)	**अन्तिकम्**	१४.	पास में जाकर
घ्नन्त्याः	६.	पीट कर	**ददर्श**	१८.	देखा
कराभ्याम्	३.	हाथों से	**बालम्**	१७.	बालक को
उरः	५.	छाती को	**सहसा मृतम्**	१५.	एकाएक मरे हुये
उच्चकैः अपि ।	४.	जोर-जोर से	**सुतम् ।।**	१६.	पुत्र

श्लोकार्थ—तब उस धाय का हाथों से जोर-जोर से छाती को पीटकर अत्यन्त व्याकुल स्वर में रोना सुनकर कृतद्युति ने शीघ्रता से प्रवेश करके पुत्र के पास जाकर एकाएक मरे हुये पुत्र बालक को देखा ।।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

पपात भूमौ परिवृद्धया शुचा ।

मुमोह विभ्रष्टशिरोरुहाम्बरा ।।४८।।

पदच्छेद— पपात भूमौ परिवृद्धया शुचा, ।
मुमोह विभ्रष्ट शिरोरुह अम्बरा ।।

शब्दार्थ—

पपात	४.	गिर पड़ी (और)	**मुमोह**	५.	मूर्च्छित हो गई (उसके)
भूमौ	३.	भूमि पर	**विभ्रष्ट**	८.	अस्त-व्यस्त हो गये
परिवृद्धया	१.	अपने बढ़े हुये	**शिरोरुह**	६.	केश और
शुचा ।	२.	शोक से (वह)	**अम्बरा ।।**	७.	वस्त्र

श्लोकार्थ—अपने बढ़े हुये शोक से वह भूमि पर गिर पड़ी और मूर्च्छित हो गई। उसके केश और वस्त्र अस्त-व्यस्त हो गये ।।

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

ततो नृपान्तः पुरवर्तिनो जना नराश्च नार्यश्च निशम्य रोदनम् ।
आगत्य तुल्यव्यसनाः सुदुःखितास्ताश्च व्यलीकं रुरुदुः कृतागसः ।।४९।।

पदच्छेद— ततः नृप अन्तः पुरवर्तिनः जनाः नराः च नार्यः च निशम्य रोदनम् ।
आगत्य तुल्य व्यसनाः सुदुःखिता ताः च व्यलीकम् रुरुदुः कृत आगसः ।।

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	आगत्य	९.	वहाँ पहुँचकर
नृप	२.	राजा के	तुल्य	१०.	समान
अन्तः पुर	३.	अन्तः पुर में	व्यसनाः	११.	विपत्ति वाली
वर्तिनः	४.	रहने वाले	सुदुःखिताः	१३.	अत्यन्त दुःखी हो गई
जनाः	५.	लोग	च	१४.	वे
नराः च नार्यः	६.	पुरुष और स्त्रियाँ	व्यलीकम्	१७.	झूठ-मूठ
च	१२.	तथा	रुरुदुः	१८.	रोने लगीं
निशम्य	८.	सुनकर	कृत	१६.	करने वाली रानियाँ भी
रोदनम् ।	७.	रोना	आगसः ।।	१५.	अपराध

श्लोकार्थ—तदनन्तर राजा के अन्तः पुर में रहने वाले लोग पुरुष और स्त्रियाँ रोना सुनकर वहाँ पहुँचकर समान विपत्ति वाली तथा अत्यन्त दुःखी हो गई । वे अपराध करने वाली रानियाँ भी झूठ-मूठ रोने लगीं ।।

पञ्चाशः श्लोकः

श्रुत्वा मृतं पुत्रमलक्षितान्तकं विनष्टदृष्टिः प्रपतन् स्खलन् पथि ।
स्नेहानुबन्धैधितया शुचा भृशं विमूर्च्छितोऽनुप्रकृतिर्द्विजैर्वृतः ।।५०।।

पदच्छेद— श्रुत्वा मृतम् पुत्रम् अलक्षिता अन्तकम् विनष्ट दृष्टिः प्रपतन् स्खलन् पथि ।
स्नेह अनुबन्ध एधितया शुचा भृशम् विमूर्च्छितः अनुप्रकृतिः द्विजैः वृतः ।।

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	५.	सुन कर	पथि	११.	रास्ते में
मृतम्	४.	मरे हुये	स्नेह अनुबन्ध	१४.	प्रेम के बन्धन से
पुत्रम्	३.	पुत्र को	एधितया	१५.	बढ़े हुये
अलक्षित	१.	अकारण	शुचा	१७.	शोक से (राजा चित्रकेतु)
अन्तकम्	२.	मृत्यु को प्राप्त	भृशम्	१६.	अत्यन्त
विनष्ट	६.	नष्ट	विमूर्च्छितः	१८.	मूर्च्छित हो गये
दृष्टिः	७.	दृष्टि वाले (तथा)	अनुप्रकृतिः	८.	मन्त्रियों (और)
प्रपतन्	१२.	लड़खड़ाते हुये	द्विजैः	९.	ब्राह्मणों से
स्खलन्	१३.	गिरते हुये	वृतः ।।	१०.	घिर कर

श्लोकार्थ—अकारण मृत्यु को प्राप्त पुत्र को मरे हुये सुनकर नष्ट दृष्टि वाले तथा मन्त्रियों और ब्राह्मणों से घिर कर रास्ते में लड़खड़ाते और गिरते हुये, प्रेम के बन्धन से बढ़े हुये अत्यन्त शोक से राजा चित्रकेतु मूर्च्छित हो गये ।।

एकपञ्चाशः श्लोकः

पपात बालस्य स पादमूले मृतस्य विस्रस्तशिरोरुहाम्बरः ।
दीर्घं श्वसन् बाष्पकलोपरोधतो निरुद्धकण्ठो न शशाक भाषितुम् ।।५१।।

पदच्छेद— **पपात बालस्य सः पाद मूले मृतस्य विस्रस्त शिरोरुह अम्बरः ।**
दीर्घं श्वसन् बाष्पकला उपरोधतः निरुद्धकण्ठः न शशाक भषितुम् ।।

शब्दार्थ—

पपात	५.	गिर पड़े (उनके)	दीर्घ	९.	लम्बी
बालस्य	३.	बालक के	श्वसन्	१०.	सांस लेने लगे
सः	१.	वह राजा	बाष्पकला	११.	आँसुओं की
पादमूले	४.	पैर के पास	उपरोधतः	१२.	अधिकता के कारण
मृतस्य	२.	मरे हुये	निरुद्धकण्ठः	१३.	उनका कण्ठ अवरुद्ध हो गया
विस्रस्त	८.	बिखर गये (वे)	न	१५.	नहीं
शिरोरुह	६.	बाल और	शशाक	१६.	सके
अम्बरः ।	७.	वस्त्र	भाषितुम् ।।	१४.	(वे) बोल

श्लोकार्थ—वह राजा मरे हुये बालक के पैर के पास गिर पड़े । उनके बाल और वस्त्र बिखर गये । वे लम्बी साँस भरने लगे; आँसुओं की अधिकता के कारण उनका कण्ठ अवरुद्ध हो गया । वे बोल नहीं सके ।।

द्विपञ्चाशः श्लोकः

पतिं निरीक्ष्योरुशुचार्पितं तदा मृतं च बालं सुतमेकसन्ततिम् ।
जनस्य राज्ञी प्रकृतेश्च हृद्रुजं सती दधाना विललाप चित्रधा ।।५२।।

पदच्छेद— **पतिम् निरीक्ष्य उरु शुचार्पितम् तदा मृतम् च बालम् सुतम् एक सन्ततिम् ।**
जनस्य राज्ञी प्रकृतेः च हृद्रुजम् सती दधाना विललाप चित्रधा ।।

शब्दार्थ—

पतिम्	१.	पति को	जनस्य	१२.	लोगों की
निरीक्ष्य	८.	देख कर	राज्ञी	१६.	रानी कृतद्युति
उरु शुचार्पितम्	२.	बहु शोक से युक्त	प्रकृतेः	१०.	मन्त्री
तदा	३.	तथा	च	११.	तथा
मृतम्	७.	मरे हुये	हृद्रुजम्	१३.	मानसिक व्यथा
च	९.	और	सती	१५.	पतिव्रता
बालम् सुतम्	६.	बालक पुत्र को	दधाना	१४.	धारण करती हुई
एक	४.	एक	विललाप	१८.	विलाप करने लगी
सन्ततिम् ।	५.	मात्र सन्तान	चित्रधा ।।	१७.	अनेक प्रकार से

श्लोकार्थ—पति को बहुत शोक से युक्त तथा एक मात्र सन्तान बालक पुत्र को मरे हुये देख कर और मन्त्री तथा लोगों की मानसिक व्यथा धारण करती हुई पतिव्रता रानी कृतद्युति अनेक प्रकार से विलाप करने लगी ।।

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

स्तनद्वयं कुङ्कुमगन्धमण्डितं निषिञ्चती साञ्जनबाष्पबिन्दुभिः ।
विकीर्य केशान् विगलत्स्रजः सुतं शुशोच चित्रं कुररीव सुस्वरम् ॥५३॥

पदच्छेद—स्तनद्वयम् कुङ्कुम गन्ध मण्डितम् निषिञ्चती स अञ्जन बाष्प बिन्दुभिः ।
विकीर्य केशान् विगलत् स्रजः सुतम् शुशोच चित्रम् कुररीव सुस्वरम् ॥

शब्दार्थ—

स्तनद्वयम्	४. दोनों स्तनों को	विकीर्य	१३. बिखेर कर
कुङ्कुम	१. केसर की	केशान्	१२. बालों को
गन्ध	२. सुगन्ध से	विगलत्	१०. गिरते हुये
मण्डितम्	३. शोभित	स्रजः	११. माला वाले
निषिञ्चती	९. सींचती हुई	सुतम्	१६. पुत्र के लिये
स	६. सहित	शुशोच	१८. विलाप करने लगी
अञ्जन	५. अञ्जन	चित्रम्	१७. अनेक प्रकार से
बाष्प	७. आँसुओं के	कुररीव	१४. कुररी पक्षी के समान
बिन्दुभिः ।	८. बिन्दुओं से	सुस्वरम् ॥	१५. उच्च स्वर से

श्लोकार्थ—केसर की सुगन्ध से शोभित दोनों स्तनों को अञ्जन सहित आँसुओं के बिन्दुओं से सींचती हुई तथा गिरते हुये माला वाले बालों को बिखेर कर कुररी पक्षी के समान उच्चस्वर से पुत्र के लिये अनेक प्रकार से विलाप करने लगी ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

अहो विधातस्त्वमतीव बालिशो यस्त्वात्मसृष्ट्यप्रतिरूपमीहसे ।
परेऽनुजीवत्यपरस्य या मृतिर्विपर्ययश्चेत्त्वमसि ध्रुवः परः ॥५४॥

पदच्छेद—अहो विधातः त्वम् अतीव बालिशः यः तु आत्म सृष्टि अप्रतिरूपम् ईहसे ।
परे अनुजीवति अपरस्य या मृतिः विपर्ययः चेत् त्वम् असि ध्रुवः परः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. अरे	अनुजीवति	१०. जीवित रहते हुये
विधातः	२. विधाता	अपरस्य	११. दूसरे (बालकों की)
त्वम् अतीव	३. तू अत्यन्त	या	१२. जो
बालिशः	४. मूर्ख है	मृतिः	१३. मृत्यु होती है
यः तु	५. जो	विपर्ययः	१५. विपरीत क्रम रहे तो
आत्मसृष्टि	६. अपनी सृष्टि के	चेत्	१४. यदि यही
अप्रतिरूपम्	७. प्रतिकूल	त्वम्	१६. तुम (जीवों के)
ईहसे ।	८. चेष्टा करता है	असि	१८. हो
परे	९. पहले के (बुड्ढों के)	ध्रुवः परः ॥	१७. निश्चित ही शत्रु

श्लोकार्थ—अरे विधाता तू अत्यन्त मूर्ख है। जो अपनी सृष्टि के प्रतिकूल चेष्टा करता है। पहले के बुड्ढों के जीवित रहते हुये दूसरे (बालकों) की मृत्यु होती है। यदि यही विपरीत क्रम रहे तो तुम जीवों के निश्चित ही शत्रु हो ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

न हि क्रमश्चेदिह मृत्युजन्मनोः शरीरिणामस्तु तदाऽऽत्मकर्मभिः ।
यः स्नेहपाशो निजसर्गवृद्धये स्वयं कृतस्ते तमिमं विवृश्चसि ॥५५॥

पदच्छेद— नहि क्रमः चेत् इह मृत्यु जन्मनोः शरीरिणाम् अस्तु तदा आत्मकर्मभिः ।
यः स्नेहपाशः निज सर्गवृद्धये स्वयम् कृतः ते तम् इमम् विवृश्चसि ॥

शब्दार्थ—

न हि	६.	नहीं (है)	**यः**	१२.	जो
क्रमः	५.	क्रम	**स्नेहपाशः**	१३.	स्नेह बन्धन
चेत्	२.	यदि	**निजसर्गः**	१०.	अपनी सृष्टि की
इह	१.	यहाँ (इस लोक में)	**वृद्धये**	११.	वृद्धि के लिये
मृत्यु जन्मनोः	४.	मरने और जीने का	**स्वयम् कृतः**	१५.	स्वयम् बनाया है
शरीरिणाम्	३.	प्राणियों के	**ते**	१४.	आपने
अस्तु	९.	ही रहे	**तम्**	१६.	उसी को
तदा	७.	तो	**इमम्**	१७.	आप
आत्मकर्मभिः ।	८.	अपने कर्मों के अनुसार	**विवृश्चसि ॥**	१८.	काटते हो

श्लोकार्थ—यहाँ इस लोक में यदि प्राणियों के मरने और जीने का क्रम नहीं है तो अपने कर्मों के अनुसार ही रहे। अपनी सृष्टि की वृद्धि के लिये जो स्नेह बन्धन आपने स्वयम् बनाया है, उसी को आप काटते हो ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

त्वं तात नार्हसि च मां कृपणामनाथां त्यक्तुं विचक्ष्व पितरं तव शोकतप्तम् ।
अञ्जस्तरेम भवताप्रजदुस्तरं यद् ध्वान्तं न याह्यकरुणेन यमेन दूरम् ।५६॥

पदच्छेद—त्वं तात न अर्हसि च माम् कृपणाम् अनाथाम् त्यक्तुम् विचक्ष्व पितरम् तव शोके ।
अञ्जः तरेम भवता अप्रज दुस्तरम् यद्ध्वान्तम् न याहि अकरुणेन यमेन दूरम् ॥

शब्दार्थं—

त्वम्	२.	तुम	**अञ्जः**	१४.	अनायास ही
तात	१.	हे बेटा !	**तरेम**	१५.	पार कर लेंगे
न अर्हसि	६.	योग्य नहीं हो	**भवता**	१३.	तुम्हारे द्वारा हम
च	४.	और	**अप्रज**	१०.	सान्तनहीन के द्वारा
मामकृपणाम्	३.	मुझ कृपण	**दुस्तरम्**	११.	कठिनाई से पार करने योग्य
अनाथाम् त्यक्तुम्	५.	अनाथ को छोड़ने	**यद्ध्वान्तम्**	१२.	जो नरक है (उसे)
विचक्ष्व	९.	देखो	**न याहि**	१८.	मत जाओ
पितरम्	८.	पिता को	**अकरुणेन**	१६.	तुम निर्दयी
तवशोकतप्तम् ।	७.	अपने शोक सन्तप्त	**यमेन दूरम् ॥**	१७.	यम के साथ दूर

श्लोकार्थ—हे बेटा ! तुम मुझ कृपण और अनाथ को छोड़ने योग्य नहीं हो। अपने शोक सन्तप्त पिता को देखो। सन्तानहीन के द्वारा कठिनाई से पार करने योग्य जो नरक है उसे तुम्हारे द्वारा हम अनायास ही पार कर लेंगे। तुम निर्दयी यम के साथ दूर मत जाओ ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

उत्तिष्ठ तात त इमे शिशवो वयस्यास्त्वामाह्वयन्ति नृपनन्दन संविहर्तुम् ।
सुप्तश्चिरं ह्यशनया च भवान् परीतो भुङ्क्ष्व स्तनं पिब शुचो हर नः स्वकानाम् ।।५७।।

पदच्छेद—उत्तिष्ठ तात ते इमे शिशवः वयस्याः त्वाम् आह्वयन्ति नृपनन्दन संविहर्तुम् ।
सुप्तः चिरम् हि अशनया च भवान् परीतः भुङ्क्ष्व स्तनम् पिब शुचः हर नः स्वकानाम् ।।

शब्दार्थ—

उत्तिष्ठ	२.	उठो	सुप्तः	११.	सोये हो
तात	१.	हे बेटा !	चिरम्	१०.	बहुत देर से
ते इमे	४.	तुम्हारे ये	हि अशनया	१३.	भूख
शिशवः	६.	बच्चे	च	१५.	और
वयस्याः	५.	साथी	भवान्	१२.	तुम को
त्वाम्	७.	तुम्हें	परीतः भुङ्क्ष्व	१४.	लगी होगी खाओ
आह्वयन्ति	९.	बुला रहे हैं (तुम)	स्तनम् पिब	१६.	स्तन का दूध पियो
नृपनन्दन	३.	राजकुमार	शुचः हर	१८.	शोक को हरण करो
संविहर्तुम् ।।	८.	खेलने के लिये	नः स्वकानाम्	१७.	हम लोगों के अपने सम्बन्धी

श्लोकार्थ—हे बेटा ! उठो, राजकुमार ! तुम्हारे ये साथी बच्चे तुम्हें खेलने के लिये बुला रहे हैं । तुम बहुत देर से सोये हो, तुमको भूख लगी होगी ःखाओ, और स्तन का दूध पियो, अपने सम्बन्धी हम लोगों के शोक को हरण करो ।।

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

नाहं तनूज ददृशे हतमङ्गला ते मुग्धस्मितं मुदितवीक्षणमाननाब्जम् ।
किं वा गतोऽस्य पुनरन्वयमन्यलोकं नीतोऽघृणेन न शृणोमि कला गिरस्ते ।।५८।।

पदच्छेद—न अहम् तनूज ददृशे हतमङ्गला ते मुग्धस्मितम् मुदितवीक्षणम् आनन अब्जम् ।
किम् वा गतः असि अपुनः अन्वयम् अन्यलोकम् नीतः अघृणेन न शृणोमि कला गिरः ते ।।

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	किम् वा	१०.	क्या तुम
अहम्	२.	मैं	गतः असि	१४.	चले गये हो (क्या)
तनूज	१.	हे पुत्र !	अपुनः	११.	जहाँ से
ददृशे	९.	देख रही हूँ	अन्वयम्	१२.	लौटना नहीं होता ऐसे
हतमङ्गला	३.	अभागिन	अन्यलोकम्	१३.	दूसरे लोक को
ते मुग्ध	४.	तुम्हारो भोली	नीतः	१६.	ले गया है
स्मितम् मुदित	५.	मुसकराहट (तथा आनन्द भरी	अघृणेन	१५.	निर्दयी यमराज (तुम्हें)
वीक्षणम्	६.	चितवन से युक्त	न शृणोमि	१९.	नहीं सुन रही हूँ
आननअब्जम् ।	७.	मुख कमल को	कला गिरः	१८.	सुन्दर वाणी
			ते ।।	१७.	मैं तुम्हारी

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! मैं अभागिन भोली मुसकराहट तथा आनन्द भरी चितवन से युक्त मुख कमल को नहीं देख रही हूँ । क्या तुम जहाँ से लौटना नहीं होता है ऐसे दूसरे लोक को चले गये हो । क्या निर्दयी यमराज तुम्हें ले गया है । मैं तुम्हारी सुन्दर वाणी नहीं सुन रही हूँ ।।

एकोनषष्टितमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— विलपन्त्या मृतं पुत्रमिति चित्रविलापनैः ।
चित्रकेतुर्भृशं तप्तो मुक्तकण्ठो रुरोद ह ॥५९॥

पदच्छेदः— विलपन्त्याः मृतम् पुत्रम् इति चित्र विलापनैः ।
चित्रकेतुः भृशम् तप्तः मुक्त कण्ठः रुरोद ह ॥

शब्दार्थ—

विलपन्त्याः	६.	विलाप करती हुई रानी को देखकर	चित्रकेतुः	७.	राजा चित्रकेतु
मृतम्	२.	मरे हुये	भृशम्	८.	अत्यन्त
पुत्रम्	३.	पुत्र के लिये	तप्तः	९.	सन्तप्त होकर
इति	१.	इस प्रकार	मुक्त	१०.	मुक्त
चित्र	४.	अनेक प्रकार के	कण्ठ	११.	कण्ठ से
विलापनैः ।	५.	विलापों से	रुरोद ह ॥	१२.	रोने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार मरे हुये पुत्र के लिये अनेक प्रकार के विलापों से विलाप करती हुई रानी को देखकर राजा चित्रकेतु अत्यन्त सन्तप्त होकर मुक्त कण्ठ से रोने लगे ॥

षष्टितमः श्लोकः

तयोर्विलपतोः सर्वे दम्पत्योस्तदनुव्रताः ।
रुरुदुः स्म नरा नार्यः सर्वमासीदचेतनम् ॥६०।

पदच्छेदः— तयोः विलपतोः सर्वे दम्पत्योः तत् अनुव्रताः ।
रुरुदुः स्म नराः नार्यः सर्वम् आसीत् अचेतनम् ॥

शब्दार्थ—

तयोः	१.	उन दोनों	रुरुदुःस्म	९.	रोने लगे
विलपतोः	३.	विलाप करते हुये देखकर	नराः	७.	पुरुष और
सर्वे	५.	सभी	नार्यः	८.	स्त्रियाँ
दम्पत्योः	२.	पति-पत्नी को	सर्वम्	१०.	सारा नगर
तत्	४.	उनके	आसीत्	१२.	हो गया
अनुव्रताः ।	६.	अनुयायी	अचेतनम् ॥	११.	अचेद सा

श्लोकार्थ—उन दोनों पति-पत्नी को विलाप करते हुये देखकर उनके सभी अनुयायी पुरुष और स्त्रियाँ रोने लगे । सारा नगर अचेत सा हो गया ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

एवं कश्मलमापन्नं नष्टसंज्ञमनायकम् ।
ज्ञात्वाङ्गिरा नाम मुनिराजगाम सनारदः ॥६१॥

पदच्छेद— एवम् कश्मलम् आपन्नम् नष्ट संज्ञम् अनायकम् ।
ज्ञात्वा अङ्गिराः नाम मुनिः आजगाम स नारदः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	ज्ञात्वा	७.	जानकर
कश्मलम्	२.	मोह को	अङ्गिराः	८.	अङ्गिरा
आपन्नम्	३.	प्राप्त	नाम	९.	नाम के
नष्ट	५.	हीन	मुनिः	१०.	ऋषि
संज्ञम्	४.	चेतना	आजगाम	१३.	आये
अनायकम् ।	६.	राजा को आधार रहित	स	१२.	साथ
			नारदः ॥	११.	नारद जी के

श्लोकार्थ—इस प्रकार मोह को प्राप्त, चेतनाहीन राजा को आधाररहित जानकर अङ्गिरा नाम के ऋषि नारद जी के साथ आये ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे चित्रकेतुविलापो नाम चतुर्दशः अध्यायः ॥१४॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—ऊचतुर्मृतकोपान्ते पतितं मृतकोपमम् ।
शोकाभिभूतं राजानं बोधयन्तौ सदुक्तिभिः ॥ १ ॥

पदच्छेद— ऊचतुः मृतक उपान्ते पतितम् मृतक उपमम् ।
शोक अभिभूतम् राजानम् बोधयन्तौ सत् उक्तिभिः ॥

ऊचतुः	१२.	कहा	शोक	६.	शोक
मृतक	१.	मृत बालक के	अभिभूतम्	७.	ग्रस्त
उपान्ते	२.	पास	राजानम्	८.	राजा को
पतितम्	५.	गिरे हुए	बोधयन्तौ	११.	समझाते हुए
मृतक	३.	मृतक के	सत्	९.	सुन्दर
उपमम् ।	४.	समान	उक्तिभिः ॥	१०.	युक्तियों से

श्लोकार्थ—महर्षि अङ्गिरा ने मृत बालक के पास मृतक के समान गिरे हुए शोकग्रस्त राजा को सुन्दर युक्तियों से समझाते हुए कहा ॥

शब्दार्थ—

द्वितीयः श्लोकः

कोऽयं स्यात् तव राजेन्द्र भवान् यमनुशोचति ।
त्वं चास्य कतमः सृष्टौ पुरेदानीमतः परम् ॥ २ ॥

पदच्छेद— कः अयम् स्यात् तव राजेन्द्र भवान् यम् अनुशोचति ।
त्वम् च अस्य कतमः सृष्टौ पुरा इदानीम् अतः परम् ॥

शब्दार्थ—

कः	७.	कौन	त्वम्	१२.	तुम
अयम्	५.	वह	च-अस्य	११.	और इसके
स्यात्	८.	था	कतमः	१३.	कौन थे
तव	६.	तुम्हारा	सृष्टौ	१०.	जन्म में
राजेन्द्र	१.	हे महाराज !	पुरा	९.	पहले
भवान्	२.	आप	इदानीम्	१४.	इस समय कौन हो
यम्	३.	जिसके लिए	अतः	१५.	इसके बाद
अनुशोचति ।	४.	शोक कर रहे हैं	परम् ॥	१६.	कौन होगे (और)

श्लोकार्थ—हे महाराज ! आप जिसके लिये शोक कर रहे हैं, वह तुम्हारा कौन था ? पहले जन्म में तुम इसके कौन थे ? और इस समय कौन हो ? इसके बाद कौन होगे ॥

तृतीयः श्लोकः

यथा प्रयान्ति संयान्ति स्रोतोवेगेन वालुकाः ।
संयुज्यन्ते वियुज्यन्ते तथा कालेन देहिनः ॥३॥

पदच्छेद— यथा प्रयान्ति संयान्ति स्रोतः वेगेन वालुकाः ।
संयुज्यन्ते वियुज्यन्ते तथा कालेन देहिनः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जिस प्रकार	संयुज्यन्ते	१०. जुड़ते (और)
प्रयान्ति	५. जुड़ते और	वियुज्यन्ते	११. बिछुड़ते हैं
संयान्ति	६. बिछुड़ते हैं	तथा	७. उसी प्रकार
स्रोतः	२. जल के	कालेन	९. समय के अनुसार
वेगेन	३. वेग से	देहिनः ॥	८. प्राणी
वालुकाः ।	४. बालू के कण		

श्लोकार्थ—जिस प्रकार जल के वेग से बालू के कण जुड़ते और बिछुड़ते हैं उसी प्रकार प्राणी समय के अनुसार जुड़ते और बिछुड़ते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

यथा धानासु वै धाना भवन्ति न भवन्ति च ।
एवं भूतेषु भूतानि चोदितानीशमायया ॥४॥

पदच्छेद— यथा धानासु वै धानाः भवन्ति न भवन्ति च ।
एवम् भूतेषु भूतानि चोदितानि ईश मायया ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	च ।	६. और
धानासु	३. बीजों से	एवम्	९. वैसे ही
वै	२. निश्चित रूप से	भूतेषु	१३. प्राणियों से
धानाः	४. बीज	भूतानि	१४. प्राणी (उत्पन्न होते और नहीं भी होते हैं)
भवन्ति	५. उत्पन्न होते हैं	चोदितानि	१२. प्रेरित होकर
न	७. नहीं (भी)	ईश	१०. भगवान् की
भवन्ति	८. होते हैं	मायया ॥	११. माया से

श्लोकार्थ—जैसे निश्चित ही बीजों से बीज उत्पन्न होते हैं और नहीं भी होते हैं वैसे ही भगवान् की माया से प्रेरित होकर प्राणी उत्पन्न होते हैं और नहीं भी होते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

वयं च त्वं च ये चेमे तुल्यकालाश्चराचराः ।
जन्ममृत्योर्यथा पश्चात् प्राङ्नैवमधुनापि भोः ॥५॥

पदच्छेद— वयम् च त्वम् च ये च इमे तुल्यकालाः चराचराः ।
जन्म मृत्योः यथा पश्चात् प्राक् न एवम् अधुना अपि भोः ॥

शब्दार्थ—

वयम्	२. हम	जन्म	११. जन्म (और)
च	३. और	मृत्योः	१२. मृत्यु के
त्वम्	४. तुम	यथा	१०. वे जिस प्रकार
च	५. और	पश्चात्	१५. बाद में भी (नहीं होंगे)
ये च	६. जो	प्राक्	१३. पहले और
इमे	७. ये वर्तमान	न एवम्	१४. नहीं थे वैसे ही
तुल्यकालाः	८. समय के	अधुना अपि	१६. इस समय भी नहीं हैं
चराचराः ।	९. जङ्गमस्थावर प्राणी हैं	भोः ॥	१. हे राजन्

श्लोकार्थ—हे राजन् ! हम और तुम और ये जो वर्तमान समय के जङ्गमस्थावर प्राणी हैं, वे जिस प्रकार जन्म और मृत्यु के पहले नहीं थे, वैसे बाद में भी नहीं होंगे और इस समय भी नहीं हैं ।

षष्ठः श्लोकः

भूतैर्भूतानि भूतेशः सृजत्यवति हन्त्यजः ।
आत्मसृष्टैरस्वतन्त्रैरनपेक्षोऽपि बालवत् ॥६॥

पदच्छेद— भूतैः भूतानि भूतेशः सृजति अवति हन्ति अजः ।
आत्म सृष्टैः अस्वतन्त्रैः अनपेक्षः अपि बालवत् ॥

शब्दार्थ—

भूतैः	८. प्राणियों से	आत्म	५. भगवान् अपने आप
भूतानि	९. प्राणियों की	सृष्टैः	७. रचे हुए
भूतेशः	३. प्राणियों के स्वामी	अस्वतन्त्रैः	४. पराधीन
सृजति	१०. सृष्टि करते हैं	अनपेक्षः	२. अपेक्षा रहित
अवति	११. रक्षा करते हैं और	अपि	१२. भी
हन्ति	१३. संहार करते हैं	बालवत्	६. बालक के समान
अजः ॥	१. अजन्मा		

श्लोकार्थ—अजन्मा, अपेक्षा रहित, प्राणियों के स्वामी, भगवान् अपने आप बालक के समान रचे हुए पराधीन प्राणियों से प्राणियों की सृष्टि, रक्षा और संहार भी करते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

देहेन देहिनो राजन् देहाद्देहोऽभिजायते ।
बीजादेव यथा बीजं देह्यर्थ इव शाश्वतः ॥७॥

पदच्छेद— देहिन देहेनः राजन् देहात् देहः अभिजायते ।
बीजात् एव यथा बीजम् देही अर्थः इव शाश्वतः ॥

शब्दार्थ—

देहेन	७.	देह के द्वारा	बीजात् एव	३.	बीज से
देहिनः	६.	प्राणी का	यथा	२.	जैसे
राजन्	१.	हे राजन् !	बीजम्	४.	बीज उत्पन्न होता है
देहात्	५.	देह से	देही अर्थः	१०.	जीव पृथ्वी के
देहः	८.	शरीर	इव	११.	समान
अभिजायते ।	९.	उत्पन्न होता है (वैसे ही)	शाश्वतः ॥	१२.	नित्य है ।

श्लोकार्थ हे राजन् ! जैसे बीज से बीज उत्पन्न होता है वैसे देह से प्राणी का शरीर उत्पन्न होता है । वैसे ही जीव पृथ्वी के समान नित्य है ॥

अष्टमः श्लोकः

देहदेहिविभागोऽयमविवेककृतः पुरा ।
जातिव्यक्तिविभागोऽयं यथा वस्तुनि कल्पितः ॥८॥

पदच्छेद— देह देहि विभागः अयम् अविवेक कृतः पुरा ।
जाति व्यक्ति विभागः अयम् यथा वस्तुनि कल्पितः ॥

शब्दार्थ—

देह	२.	शरीर और	जाति	१०.	जाति और
देहि	३.	शरीर का	व्यक्ति	११.	व्यक्ति का
विभागः	४.	विभाग	विभागः	१३.	विभाग
अयम्	१.	यह	अयम्	१२.	ये
अविवेक	६.	अविवेक के द्वारा	यथा	८.	जैसे
कृतः	७.	किया गया है	वस्तुनि	९.	वस्तु में
पुरा ।	५.	पहले	कल्पितः ॥	१४.	कल्पित है

श्लोकार्थ—यह शरीर और शरीर का विभाग पहले अविवेक के द्वारा किया गया है जैसे वस्तु में जाति और व्यक्ति का विभाग कल्पित है ॥

नवमः श्लोकः

शुक उवाच—एवमाश्वासितो राजा चित्रकेतुर्द्विजोक्तिभिः ।
प्रमृज्य पाणिना वक्त्रमाधिम्लानमभाषत ॥९॥

पदच्छेद— एवम् आश्वासितः राजा चित्रकेतुः द्विज उक्तिभिः ।
प्रमृज्य पाणिना वक्त्रम् आधिम्लानम् अभाषत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	प्रमृज्य	११. पोंछ कर
आश्वासितः	४. आश्वासन दिये गये	पाणिना	१०. हाथ से
राजा	५. राजा	वक्त्रम्	९. मुख के आंसुओं को
चित्रकेतुः	६. चित्रकेतु ने	आधिम्लानम्	८. शोक से मुरझाये
द्विज	२. ब्राह्मणों के	अभाषत ॥	१२. कहा
उक्तिभिः ।	३. वचनों से		

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्राह्मणों के वचनों से आश्वासन दिये गये राजा चित्रकेतु ने शोक से मुरझाये मुख के आँसुओं को हाथ से पोंछकर कहा ॥

दशमः श्लोकः

राजोवाच—कौ युवां ज्ञानसम्पन्नौ महिष्ठौ च महीयसाम् ।
अवधूतेन वेषेण गूढाविह समागतौ ॥१०॥

पदच्छेद— कौ युवाम् ज्ञान सम्पन्नौ महिष्ठौ च महीयसाम् ।
अवधूतेन वेषेण गूढौ इह समागतौ ॥

शब्दार्थ—

कौ	९. कौन	अवधूतेन	६. अवधूत के
युवाम्	५. आप दोनों	वेषेण	७. वेष में
ज्ञान	३. ज्ञान से	गूढौ	८. छिपे हुए
सम्पन्नौ	४. युक्त	इह	१०. यहाँ
महिष्ठौ च	२. अतिमहान् और	समागतौ ।	११. आये हैं
महीयसाम् ॥	१. महान् से भी		

श्लोकार्थ—महान् से भी अति महान् और ज्ञान से युक्त आप दोनों अवधूत के वेष में छिपे हुये कौन यहां आये हैं ॥

एकादशः श्लोकः

चरन्ति ह्यवनौ कामं ब्राह्मणा भगवत्प्रियाः ।
मादृशां ग्राम्यबुद्धीनां बोधायोन्मत्तलिङ्गिनः ॥११॥

पदच्छेद— चरन्ति हि अवनौ कामम् ब्राह्मणाः भगवत् प्रियाः ।
मादृशाम् ग्राम्य बुद्धीनाम् बोधाय उन्मत्त लिङ्गिनः ॥

शब्दार्थ—

चरन्ति	१२.	विचरण करते हैं	मादृशाम्	७.	मेरे जैसे
हि अवनौ	११.	पृथ्वी पर	ग्राम्य	८.	विषयासक्त
कामम्	४.	अपनी इच्छा से	बुद्धीनाम्	९.	बुद्धि वालों को
ब्राह्मणाः	३.	ब्राह्मण	बोधाय	१०.	उपदेश देने के लिये
भगवत्	१.	भगवान् के	उन्मत्त	५.	अवधूत वेष को
प्रियाः ।	२.	प्रिय	लिङ्गिनः ॥	६.	धारण करके

श्लोकार्थ—भगवान् के प्रिय ब्राह्मण अपनी इच्छा से अवधूत वेष को धारण करके मेरे जैसे विषयासक्त बुद्धि वालों को उपदेश देने के लिए पृथ्वी पर विचरण करते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

कुमारो नारद ऋभुरङ्गिरा देवलोऽसितः ।
अपान्तरतमो व्यासो मार्कण्डेयोऽथ गौतमः ॥१२॥

पदच्छेद— कुमारः नारदः ऋभुः अङ्गिराः देवलः असितः ।
अपान्तरतमः व्यासः मार्कण्डेयः अथ गौतमः ॥

शब्दार्थ—

कुमारः	१.	सनत् कुमार	अपान्तरतमः	७.	अपान्तरतम
नारदः	२.	नारद	व्यासः	८.	व्यास
ऋभुः	३.	ऋभु	मार्कण्डेयः	९.	मार्कण्डेय
अङ्गिराः	४.	अङ्गिरा	अथ	१०.	और
देवलः	५,	देवल	गौतमः ॥	११.	गौतम आदि
असितः ।	६.	असित			

श्लोकार्थ—सनत्कुमार, नारद, ऋभु, अङ्गिरा, देवल, असित, अपान्तरतम, व्यास, मार्कण्डेय और गौतम आदि ॥

त्रयोदशः श्लोकः

वसिष्ठो भगवान् रामः कपिलो बादरायणिः ।
दुर्वासा याज्ञवल्क्यश्च जातूकर्ण्यस्तथाऽऽरुणिः ॥१३॥

पदच्छेद— वसिष्ठः भगवान् रामः कपिलः बादरायणिः ।
दुर्वासाः याज्ञवल्क्यः च जातूकर्ण्यः तथा आरुणिः ॥

शब्दार्थ—

वसिष्ठः	१.	वसिष्ठ	दुर्वासाः	६.	दुर्वासा
भगवान्	२.	भगवान्	याज्ञवल्क्यः	७.	याज्ञवल्क्य
रामः	३.	परशुराम	च	८.	और
कपिलः	४.	कपिलदेव	जातूकर्ण्यः	९.	जातूकर्ण्य
बादरायणिः ।	५.	शुकदेव	तथा	१०.	तथा
			आरुणिः ॥	११.	आरुणि (आये।

श्लोकार्थ—वसिष्ठ, भगवान् परशुराम, कपिलदेव, शुकदेव, दुर्वासा, याज्ञवल्क्य और जातूकर्ण्य तथा आरुणि आये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

रोमशश्च्यवनो दत्त आसुरिः सपतञ्जलिः ।
ऋषिर्वेदशिरा बोध्यो मुनिः पञ्चशिरास्तथा ॥१४॥

पदच्छेद— रोमशः च्यवनः दत्तः आसुरिः सपतञ्जलिः ।
ऋषिः वेदशिराः बोध्यः मुनिः पञ्चशिराः तथा ॥

शब्दार्थ—

रोमशः	१.	रोमश	ऋषिः	६.	ऋषि
च्यवनः	२.	च्यवन	वेदशिराः	७.	वेदशिरा
दत्तः	३.	दत्तात्रेय	बोध्यः	८.	बोध्य
आसुरिः	४.	आसुरि	मुनिः	९.	मुनि
सपतञ्जलिः ।	५.	पतञ्जलि	पञ्चशिराः	११.	पञ्चशिरा भी आये ॥
			तथा ॥	१०.	तथा

श्लोकार्थ—रोमश, च्यवन, दत्तात्रेय, आसुरि, पतञ्जलि, ऋषि वेदशिरा, बोध्यमुनि तथा पञ्चशिरा भी आये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

हिरण्यनाभः कौसल्यः श्रुतदेव ऋतध्वजः ।
एते परे च सिद्धेशाश्चरन्ति ज्ञानहेतवः ॥१५॥

पदच्छेद— हिरण्य नाभः कौसल्यः श्रुतदेवः ऋतध्वजः ।
एते परे च सिद्धेशाः चरन्ति ज्ञान हेतवः ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यनाभः	१.	हिरण्यनाभ	च	५.	और
कौसल्यः	२.	कौसल्य	सिद्धेशाः	८.	सिद्धेश्वर
श्रुतदेवः	३.	श्रुतदेव	चरन्ति	११.	विचरण करते हैं
ऋतध्वजः ।	४.	ऋतध्वज	ज्ञान	९.	ज्ञान
एते	६.	ये	हेतवः ॥	१०.	देने के लिए

श्लोकार्थ—हिरण्यनाभ, कौशल्य, श्रुतदेव, ऋतध्वज और ये दूसरे सिद्धेश्वर ज्ञान देने के लिये विचरण करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

तस्माद्युवां ग्राम्यपशोर्मम मूढधियः प्रभू ।
अन्धे तमसि मग्नस्य ज्ञानदीप उदीर्यताम् ॥१६॥

पदच्छेद— तस्मात् युवाम् ग्राम्यपशोः मम मूढ धियः प्रभू ।
अन्धे तमसि मग्नस्य ज्ञान दीप उदीर्यताम् ॥

शब्दार्थ—

तस्माद्	१.	इसलिये	अन्धे	७.	अज्ञान के
युवाम्	२.	आप दोनों	तमसि	८.	अन्धकार में
ग्राम्यपशोः	४.	विषयासक्त	मग्नस्य	९.	डूबे हुये
मम	१०.	मुझे	ज्ञान	११.	ज्ञान रूपी
मूढ	५.	मूढ	दीप	१२.	दीपक का
धियः	६.	बुद्धि (और)	उदीर्यताम्	१३.	प्रकाश दीजिये
प्रभू ।	३.	प्रभु			

श्लोकार्थ—इसलिये आप दोनों प्रभु विषयासक्त, मूढबुद्धि और अज्ञान के अन्धकार में डुबे हुये मुझे ज्ञान रूपी दीपक का प्रकाश दीजिये ॥

सप्तदशः श्लोकः

अङ्गिरा उवाच—अहं ते पुत्रकामस्य पुत्रदोऽस्म्यङ्गिरा नृप ।
एष ब्रह्मसुतः साक्षान्नारदो भगवानृषिः ॥१७॥

पदच्छेद— अहम् ते पुत्रकामस्य पुत्रदः अस्मि अङ्गिराः नृप ।
एष ब्रह्म सुतः साक्षात् नारदः भगवान् ऋषिः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	६.	मैं	एषः	९.	यह
ते	४.	तुझे	ब्रह्म	१०.	ब्रह्मा के
पुत्र	२.	पुत्र की	सुतः	११.	पुत्र
कामस्य	३.	कामना वाले	साक्षात्	१२.	साक्षात्
पुत्रदः	५.	पुत्र देने वाला	नारदः	१४.	नारद
अस्मि	८.	हूँ	भगवान्	१३.	भगवान्
अङ्गिराः	७.	अङ्गिरा	ऋषिः ॥	१५.	ऋषि हैं ।
नृप	१.	हे राजन् !			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पुत्र की कामना वाले तुझे पुत्र देने वाला मैं अङ्गिरा हूँ । यह ब्रह्मा के पुत्र साक्षात् भगवान् नारद ऋषि हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

इत्थं त्वां पुत्रशोकेन मग्नं तमसि दुस्तरे ।
अतदर्हमनुस्मृत्य महापुरुषगोचरम् ॥१८॥

पदच्छेद— इत्थम् त्वाम् पुत्र शोकेन मग्नम् तमसि दुस्तरे ।
अतदर्हम् अनुस्मृत्य महापुरुष गोचरम् ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	दुस्तरे ।	४.	घने (अज्ञान रूप)
त्वाम्	९.	तुम्हें	अतदर्हम्	१०.	शोक करने के अयोग्य
पुत्र	२.	पुत्र के	अनुस्मृत्य	११.	समक्ष करके (हम आये हैं)
शोकेन	३.	शोक से	महापुरुष	७.	महापुरुष
मग्नम् ।	६.	डूबे हुये	गोचरम् ॥	८.	दिखाई देने वाले
तमसि	५.	अन्धकार में			

श्लोकार्थ—इस प्रकार पुत्र-शोक से घने अज्ञान रूपी अन्धकार में डूबे हुये, महापुरुष दिखाई देने वाले तुम्हें शोक करने के अयोग्य समक्ष कर हम आये हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अनुग्रहाय भवता प्राप्तावावामिह प्रभो ।
ब्रह्मण्यो भगवद्भक्तो नावसीदितुमर्हति ॥१९॥

पदच्छेद—

अनुग्रहाय भवतः प्राप्तौ आवाम् इह प्रभो ।
ब्रह्मण्यः भगवत् भक्तः न अवसीदितुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

अनुग्रहाय	३.	कृपा करने के लिये	ब्रह्मण्यः	७.	ब्राह्मण (और)
भवतः	२.	आप पर	भगवत्	८.	भगवान् का
प्राप्तौ	६.	आये हैं	भक्तः	९.	भक्त होकर
आवाम्	४.	हम दोनों	न अवसीदितुम्	१०.	नहीं शोक करने के
इह	७.	यहाँ	अर्हति ॥	११.	योग्य हो
प्रभो ।	१.	हे राजन् !			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आप पर कृपा करने के लिये हम दोनों यहाँ आये हैं । आप ब्राह्मण और भगवान् के भक्त होकर शोक करने के योग्य नहीं हो ॥

विंशः श्लोकः

तदैव ते परं ज्ञानं ददामि गृहमागतः ।
ज्ञात्वान्याभिनिवेशं ते पुत्रमेव ददावहम् ॥२०॥

पदच्छेद—

तदा एव ते परम् ज्ञानम् ददामि गृहम् आगतः ।
ज्ञात्वा अन्य अभिनिवेशम् पुत्रम् एव ददौ अहम् ॥

शब्दार्थ—

तदा-एव	१.	उसी समय	ज्ञात्वा अन्य	८.	जान कर-दूसरी वस्तु में
ते	२.	तुम्हें	अभिनिवेशम्	९.	आग्रह
परम्	३.	उत्तम	ते	११.	तुम्हें
ज्ञानम्	४.	ज्ञान	पुत्रम्	१२.	पुत्र
ददामि	५.	देता जब	एव	१३.	ही
गृहम्	६.	घर पर	ददौ	१४.	दिया
आगतः ।	७.	आया था (किन्तु)	अहम् ॥	१०.	मैंने

श्लोकार्थ—उसी समय तुम्हें उत्तम ज्ञान देता, जब पहले घर पर आया था । किन्तु दूसरी वस्तु में आग्रह जानकर मैंने तुम्हें पुत्र ही दिया ॥

एकविंशः श्लोकः

अधुना पुत्रिणां तापो भवतैवानुभूयते।
एवं दारा गृहा रायो विविधैश्वर्यसम्पदः ॥२१॥

पदच्छेद— अधुना पुत्रिणाम् तापः भवतः एव अनुभूयते।
एवम् दाराः गृहाः रायः विविध ऐश्वर्य सम्पदः ॥

शब्दार्थ—

अधुना	१. इस समय	एवम्	७. इसी प्रकार
पुत्रिणाम्	२. पुत्रवानों का	दाराः	८. स्त्री
तापः	३. संताप	गृहाः	९. घर
भवतः	४. आप	रायः	१०. धन
एव	५. ही	विविध	११. अनेक प्रकार के
अनुभयते।	६. अनुभव कर रहे हैं	ऐश्वर्य	१२. ऐश्वर्य और
		सम्पदः ॥	१३. सम्पत्तियों (में भी सन्ताप होता है)

श्लोकार्थ—इस समय पुत्रवानों का संताप आप ही अनुभव कर रहे हैं। इसी प्रकार स्त्री, घर, धन अनेक प्रकार के ऐश्वर्य और सम्पत्तियों में भी सन्ताप होता है॥

द्वाविंशः श्लोकः

शब्दादयश्च विषयाश्चला राज्यविभूतयः।
मही राज्यं बलं कोशो भृत्यामात्याः सुहृज्जनाः ॥२२॥

पदच्छेद— शब्द आदयः च विषयाः चलाः राज्य विभूतयः।
मही राज्यम् बलम् कोशः भृत्य अमात्यः सुहृद् जनाः ॥

शब्दार्थ—

शब्द	१. शब्द (रूप रस)	मही	६. पृथ्वी
आदयः	२. आदि	राज्यम्	७. राज्य
च	१२. और	बलम्	८. सेना
विषयाः	३. विषय	कोशः	९. खजाना
चलाः	१४. अस्थिर हैं	भृत्य	१०. सेवक
राज्य	४. राज्य का	अमात्याः	११. मन्त्री
विभूतयः।	५. वैभव	सुहृद् जनाः ॥	१३. इष्ट मित्र (ये सब)

श्लोकार्थ—शब्द, रूप, रस आदि विषय, राज्य का वैभव, पृथ्वी, राज्य, सेना, खजाना, सेवक, मन्त्री, इष्ट-मित्र ये सब अस्थिर हैं॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सर्वेऽपि शूरसेनेमे शोकमोहभयार्तिदाः ।
गन्धर्वनगरप्रख्याः स्वप्नमायामनोरथाः ॥२३॥

पदच्छेद— सर्वे अपि शूरसेन इमे शोक मोह भय आर्तिदाः ।
गन्धर्व नगर प्रख्याः स्वप्न माया मनोरथाः ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	३.	सब	गन्धर्व	७.	गन्धर्व
अपि	४.	भी	नगर	८.	नगर
शूरसेन	१.	हे राजा चित्रकेतु !	प्रख्याः	१२.	समान (मिथ्या है)
इमे	२.	ये	स्वप्न	९.	स्वप्न
शोक-मोह	५.	शोक-मोह	माया	१०.	माया तथा
भय-आर्तिदाः।	६.	भय-दुःख देने वाले हैं	मनोरथाः ॥	११.	कामनाओं के

श्लोकार्थ—हे राजा चित्रकेतु ! ये सभी भी शोक, मोह, भय और दुःख देने वाले हैं। गन्धर्व नगर, माया तथा कामनाओं के समान मिथ्या हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

दृश्यमाना विनार्थेन न दृश्यन्ते मनोभवाः ।
कर्मभिर्ध्यायतो नानाकर्माणि मनसोऽभवन् ॥२४॥

पदच्छेद— दृश्यमानाः विना अर्थेन न दृश्यन्ते मनोभवाः ।
कर्मभिः ध्यायतः नाना कर्माणि मनसः अभवन् ॥

शब्दार्थ—

दृश्यमानाः	२.	दिखाई देते (हुये भी)	कर्मभिः	७.	कर्म वासनाओं से
विना अर्थेन	१.	विना तत्त्व के	ध्यायतः	८.	चिन्तन करने वालों के
न	५.	नहीं	नाना	९.	अनेक
दृश्यन्ते	६.	दिखाई पड़ते हैं	कर्माणि	१०.	कर्म
मनो	३.	मन में	मनसः	११.	मन से ही
भवाः ।	४.	उत्पन्न होने वाले पदार्थ	अभवन् ॥	१२.	उत्पन्न हो जाते हैं ।

श्लोकार्थ—बिना तत्त्व के दिखाई देते हुये भी मन में उत्पन्न होने वाले पदार्थ वस्तुतः नहीं दिखाई पड़ते हैं। कर्म वासनाओं से चिन्तन करने वालों के अनेक प्रकार के कर्म मन से ही उत्पन्न हो जाते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अयं हि देहिनो देहो द्रव्यज्ञानक्रियात्मकः ।
देहिनो विविधक्लेशसन्तापकृदुदाहृतः ॥२५॥

पदच्छेद— अयम् हि देहिनः देहः द्रव्य ज्ञान क्रियात्मकः ।
देहिनः विविध क्लेश सन्ताप कृत् उदाहृतः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१.	यह	आत्मकः ।	८.	समूह है
हि	२.	निश्चितरूप से	देहिनः	९.	प्राणियों को
देहिनः	३.	प्राणी का	विविध	१०.	अनेक प्रकार के
देहः	४.	शरीर	क्लेश	११.	क्लेश और
द्रव्य	५.	पञ्चभूत	सन्ताप	१२.	सन्ताप
ज्ञान	६.	ज्ञानेन्द्रिय और	कृत्	१३.	देने वाला
क्रिया	७.	कर्मेन्द्रिय का	उदाहृतः ॥	१४.	कहा गया है

श्लोकार्थ—यह निश्चितरूप से प्राणी का शरीर पञ्चभूत ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय का समूह है। यह प्राणियों को अनेक प्रकार के क्लेश और सन्ताप देने वाला कहा गया है।

षड्विंशः श्लोकः

तस्मात् स्वस्थेन मनसा विमृश्य गतिमात्मनः ।
द्वैते ध्रुवार्थविश्रम्भं त्यजोपशममाविश ॥२६॥

पदच्छेद— तस्मात् स्वस्थेन मनसा विमृश्य गतिम् आत्मनः ।
द्वैते ध्रुव अर्थ विश्रम्भम् त्यज उपशमम् आविश ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इस लिए	द्वैते	७.	द्वैत-भाव में
स्वस्थेन	२.	एकाग्र	ध्रुव	८.	नित्य
मनसा	३.	चित्त से	अर्थ	९.	पदार्थ के
विमृश्य	६.	जानकर	विश्रम्भम्	१०.	विश्वास को
गतिम्	५.	गति को	त्यज	११.	छोड़ दो और
आत्मनः ।	४.	आत्मा की	उपशमम्	१२.	शान्ति को
			आविश ॥	१३.	धारण करो ।

श्लोकार्थ—इसलिए एकाग्रचित्त से आत्मा की गति को जानकर द्वैत-भाव में नित्य पदार्थ के विश्वास को छोड़ दो, और शान्ति को धारण करो ॥

सप्तविंशः श्लोकः

नारद उवाच एतां मन्त्रोपनिषदं प्रतीच्छ प्रयतो मम ।
यां धारयन् सप्तरात्राद् द्रष्टा सङ्कर्षणं प्रभुम् ॥२७॥

पदच्छेद— एताम् मन्त्र उपनिषदम् प्रतीच्छ प्रयतो मम् ।
याम् धारयन् सप्त रात्राद् द्रष्टा सङ्कर्षणम् प्रभुम् ॥

शब्दार्थ—

एताम्	२.	इस	याम	६.	जिसको
मन्त्रउपनिषदम्	३.	मन्त्रउपनिषद् को	धारयन्	७.	धारण करने से
प्रतीच्छ	५.	ग्रहण करो	सप्त रात्राद्	८.	सात रात में (तुम)
प्रयतः	१.	पवित्र होकर	द्रष्टा	१०.	देखोगे
मम ।	४.	मुझसे	सङ्कर्षणम् प्रभुम् ॥	९.	सङ्कर्षण भगवान् को

श्लोकार्थ—पवित्र होकर इस मन्त्रोपनिषद् को मुझसे ग्रहण करो, जिसको धारण करने से सात रात में तुम सङ्कर्षण भगवान् को देखोगे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

यत्पादमूलमुपसृत्य नरेन्द्र पूर्वे शर्वादयो भ्रममिमं द्वितयं विसृज्य ।
सद्यस्तदीयमतुलानधिकं महित्वं प्रापुर्भवानपि परं नचिरादुपैति ॥२८॥

पदच्छेद—यत् पादमूलम् उप सृत्य नरेन्द्रपूर्वे शर्व आदयः भ्रमम् इमम् द्वितयम् विसृज्य ।
सद्यः तदीयम् अतुल अनधिकन् महित्वम् प्रापुः भवान् अपि परम् नचिरात् उपैति ॥

शब्दार्थ—

यत्पादमूलम्	२.	जिनके चरणों का	सद्यः	१०.	तत्काल
उपसृत्य	३.	आश्रय लेकर	तदीयम्	११.	उन परमात्मा के
नरेन्द्र	१.	हे राजन् !	अतुल	१२.	अनुपम (एवम्)
पूर्वे	४.	पहले	अनधिकम्	१३.	बहुत अधिक
शर्व आदयः	५.	शंकर आदि ने	महित्वम् प्रापुः	१४.	महिमा को प्राप्त किया
भ्रमम्	८.	भ्रम को	भवान् अपि	१५.	आपभी
इमम्	६.	इस	परम्	१७.	परमपद को
द्वितयम्	७.	द्वैत भाव के	नचिरात्	१६.	शीघ्र ही
विसृज्य ।	९.	त्याग कर	उपैति ॥	१८.	प्राप्त करोगे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जिनके चरणों का आश्रय लेकर पहले शंकर आदि ने इस द्वैत-भाव के श्रम को त्याग कर तत्काल उन परमात्मा के अनुपम एवम् बहुत अधिक महिमा को प्राप्त किया । आप भी शीघ्र ही परम पद को प्राप्त करोगे ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे चित्रकेतु-
सान्त्वनं नाम पञ्चदशः अध्यायः ॥१५॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

षोडशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच — अथ देवऋषी राजन् सम्परेतं नृपात्मजम्।
दर्शयित्वेति होवाच ज्ञातीनामनुशोचताम् ॥ १ ॥

पदच्छेद— अथ देवऋषी राजन् सम्परेतम् नृप आत्मजम्।
दर्शयित्वा इति ह उवाच ज्ञातीनाम् अनुशोचताम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	२.	तदनन्तर	दर्शयित्वा	६.	दिखाकर
देवऋषी	३.	देवर्षियों ने	इति ह	९.	इस प्रकार
राजन्	१.	हे राजन्!	उवाच	१०.	कहा
सम्परेतम्	४.	मरे हुए	ज्ञातीनाम्	८.	स्वजनों के सामने
नृप	५.	राज	अनुशोचताम् ॥	७.	शोक करते हुये
आत्मजम्।	११.	कुमार को			

श्लोकार्थ—हे राजन्! तदनन्तर देवर्षियों ने मरे हुए राजकुमार को दिखाकर शोक करते हुए स्वजनों के सामने इस प्रकार कहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

नारद उवाच— जीवात्मन् पश्य भद्रं ते मातरं पितरं च ते।
सुहृदो बान्धवास्तप्ताः शुचा त्वत्कृतया भृशम् ॥२॥

पदच्छेद— जीव आत्मन् पश्य भद्रम् ते मातरम् पितरम् च ते।
सुहृदः बान्धवाः तप्ताः शुचा त्वत् कृतया भृशम् ॥

शब्दार्थ

जीव आत्मन्	१.	हे जीवात्मा!	सुहृदः	९.	मित्र
पश्य	४.	देखो	बान्धवाः	१०.	बन्धु
भद्रम्	३.	कल्याण हो	तप्ताः	१५.	व्याकुल हो रहे हैं
ते	२	तुम्हारा	शुचा	१४.	शोक से
मातरम्	६.	माता	त्वत्	११.	तुम्हारे
पितरम्	७.	पिता	कृतया	१२.	कारण
च	८.	और	भृशम् ॥	१३.	अत्यन्त
ते।	५.	तुम्हारे			

श्लोकार्थ—हे जीवात्मा! तुम्हारा कल्याण हो। देखो तुम्हारे माता-पिता और मित्र-बन्धु तुम्हारे कारण अत्यन्त शोक से व्याकुल हो रहे हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

कलेवरं स्वमाविश्य शेषमायुः सुहृद्वृतः ।
भुङ्क्ष्व भोगान् पितृप्रत्तानधितिष्ठ नृपासनम् ॥ ३ ॥

पदच्छेद— कलेवरम् स्वम् आविश्य शेषम् आयुः सुहृद् वृतः ।
भुङ्क्ष्व भोगान् पितृ प्रत्तान् अधितिष्ठ नृप आसनम् ॥

शब्दार्थ—

कलेवरम्	२.	शरीर में	भुङ्क्ष्व	१०.	भोगो (और)
स्वम्	१.	अपने	भोगान्	९.	भोगों को
आविश्य	३.	आकर	पितृ	७.	पिता के
शेषम्	४.	शेष	प्रत्तान्	८.	दिये हुए
आयुः	५.	आयु को	अधितिष्ठ	१२.	बैठो
सुहृद्वृतः ।	६.	सगे-सम्बन्धियों के साथ	नृपआसनम् ।	११.	राजसिंहासन पर

श्लोकार्थ—अपने शरीर में आकर शेष आयु को सगे-सम्बधियों के साथ पिता के दिये हुए भोगों को भोगो और राज सिंहासन पर बैठो ॥

चतुर्थः श्लोकः

कस्मिञ्जन्मन्यमी मह्यं पितरो मातरोऽभवन् ।
जीव उवाच— कर्मभिर्भ्राम्यमाणस्य देवतिर्यङ्नृयोनिषु ॥ ४ ॥

पदच्छेद— कस्मिन् जन्मनि अमी मह्यं पितरः मातरः अभवन् ।
कर्मभिः भ्राम्यमाणस्य देव तिर्यक् नृ योनिषु ॥

शब्दार्थ—

कस्मिन्	७.	किसी	**कर्मभिः**	१.	कर्मों के अनुसार
जन्मनि	८.	जन्म में	**भ्राम्यमाणस्य**	६.	भटकते हुए
अमी	९.	ये	**देव**	२.	देवता
मह्यम्	१०.	मेरे	**तिर्यक्**	३.	पशु-पक्षी
पितरः	११.	पिता	**नृ**	४.	मनुष्य
मातरः	१२.	माता	**योनिषु ।**	५.	योनियों में
अभवन् ।	१३.	हुये			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कर्मों के अनुसार देवता, पशु, पक्षी और मनुष्य योनियों में भटकते हुए किसी जन्म में मेरे पिता-माता हुये ॥

पञ्चमः श्लोकः

बन्धुज्ञात्यरिमध्यस्थमित्रोदासीनविद्विषः ।
सर्व एव हि सर्वेषां भवन्ति क्रमशो मिथः ॥ ५ ॥

पदच्छेद— बन्धु ज्ञाति अरि मध्यस्थ मित्र उदासीन विद्विषः ।
सर्वे एव हि सर्वेषाम् भवन्ति क्रमशः मिथः ॥

शब्दार्थ—

बन्धु	१.	(अनेक जन्मों में) सम्बन्धी	सर्वे	८.	ये सब
ज्ञाति	२.	नाती-गोती	एव हि	९.	ही
अरि	३.	शत्रु	सर्वेषाम्	१०.	सबके
मध्यस्थ	४.	मध्यस्थ	भवन्ति	१३.	होते हैं
मित्र	५.	मित्र	क्रमशः	११.	क्रमशः
उदासीन	६.	उदासीन	मिथः ॥	१२.	एक दूसरे के
विद्विषः ।	७.	द्वेषी			

श्लोकार्थ—अनेक जन्मों में सम्बन्धी नाती-गोती; शत्रु, मध्यस्थ, मित्र, उदासीन, द्वेषी ये सब ही सबके क्रमशः एक दूसरे के होते हैं ।

षष्ठः श्लोकः

यथा वस्तूनि पण्यानि हेमादीनि ततस्ततः ।
पर्यटन्ति नरेष्वेवं जीवो योनिषु कर्तृषु ॥ ६ ॥

पदच्छेद— यथा वस्तूनि पण्यानि हेम आदीनि ततः ततः ।
पर्यटन्ति नरेषु एवम् जीवः योनिषु कर्तृषु ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	पर्यटन्ति	८.	आती जाती रहती हैं
वस्तूनि	६.	वस्तुयें	नरेषु	२.	मनुष्यों के हाथ में
पण्यानि	५.	बाजार की	एवम्	९.	वैसे ही
हेम	३.	सोने	जीवः	१०.	जीवात्मा
आदीनि	४.	आदि	योनिषु	१२.	योनियों में आता (जाता रहता है)
ततः ततः ।	७.	इधर उधर	कर्तृषु ॥	११.	भिन्न-भिन्न

श्लोकार्थ—जैसे मनुष्यों के हाथ में सोने आदि बाजार की वस्तुएं इधर उधर आती जाती रहती हैं, वैसे ही जीवात्मा भिन्न-भिन्न योनियों में आता जाता रहता है ।

सप्तमः श्लोकः

नित्यस्यार्थस्य सम्बन्धो ह्यनित्यो दृश्यते नृषु ।
यावद्यस्य हि सम्बन्धो ममत्वं तावदेव हि ॥ ७ ॥

पदच्छेद— नित्यस्य अर्थस्य सम्बन्धः हि अनित्यः दृश्यते नृषु ।
यावत् यस्य हि सम्बन्धः ममत्वम् तावत् एव हि ॥

शब्दार्थ—

नित्यस्य	१.	अधिक दिन ठहरने वाली	यावत्	८.	जब-तक
अर्थस्य	२.	वस्तु का	यस्य हि	७.	जिसका
सम्बन्धः	३.	सम्बन्ध	सम्बन्धः	९.	सम्बन्ध रहता है (उनमें)
हि अनित्यः	५.	क्षणिक	ममत्वम्	१२.	ममता रहती है
दृश्यते	६.	दिखाई पड़ता है	तावत्	१०.	तब-तक
नृषु ।	४.	मनुष्यों के पास	एव हि ॥	११.	ही

श्लोकार्थ—अधिक दिन ठहरने वाली वस्तु का सम्बन्ध मनुष्यों के पास क्षणिक दिखाई पड़ता है। जिसका जब-तक सम्बन्ध रहता है, उसमें तब-तक ही ममता रहती है ॥

अष्टमः श्लोकः

एवं योनिगतो जीवः स नित्यो निरहङ्कृतः ।
यावद्यत्रोपलभ्येत तावत्स्वत्वं हि तस्य तत् ॥ ८ ॥

पदच्छेद— एवम् योनिगतः जीवः सः नित्यः निरहङ्कृतः ।
यावत् यत्र उपलभ्तये तावत् स्वत्वम् हि तस्य तत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	यावत्	८.	जब-तक
योनि	२.	योनि को	यत्र	९.	जिस (शरीर में)
गतः	३.	प्राप्त	उपलभ्येत	१०.	रहता है
जीवः	५.	जीव	तावत्	११.	तब-तक
सः	४.	वह	स्वत्वम्	१४.	अपनापन रहता है
नित्यः	६.	सदा रहने वाला (और)	हि तस्य	१२.	उस जीव का
निरहङ्कृतः ।	७.	अहंकार रहित है	तत्॥	१३.	उस पर

श्लोकार्थ—इस प्रकार योनि को प्राप्त वह जीव सदा रहने वाला और अहंकार रहित है। जब-तक जिस शरीर में रहता है, तब-तक उस जीव का उस पर अपनापन रहता है ॥

नवमः श्लोकः

एष नित्योऽव्ययः सूक्ष्म एष सर्वाश्रयः स्वदृक् ।
आत्ममायागुणैर्विश्वमात्मानं सृजति प्रभुः ॥ ६ ॥

पदच्छेद— एषः नित्यः अव्ययः सूक्ष्मः एषः सर्व आश्रयः स्वदृक् ।
आत्म माया गुणैः विश्वम् आत्मानम् सृजति प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	यह जीव	**आत्म**	६.	अपनी
नित्यः	२.	नित्य	**माया**	१०.	माया के
अव्ययः	३.	अविनाशी	**गुणैः**	११.	गुणों से
सूक्ष्मः	४.	सूक्ष्म	**विश्वम्**	१३.	विश्व के रूप में
एषः	७.	यह	**आत्मानम्**	१२.	अपने आप को
सर्वाश्रयः	५.	सबका आश्रय और	**सृजति**	१४.	सृष्टि करता है
स्वदृक् ।	६.	स्वयम् प्रकाश है	**प्रभुः ॥**	८.	ईश्वर रूप जीव

श्लोकार्थ—यह जीव नित्य, अविनाशी, सूक्ष्म, सबका आश्रय और स्वयम् प्रकाश है। यह ईश्वर रूप जीव अपने आप को विश्व के रूप में सृष्टि करता है ॥

दशमः श्लोकः

न ह्यस्यातिप्रियः कश्चिन्नाप्रियः स्वः परोऽपिवा ।
एकः सर्वधियां द्रष्टा कर्तृणां गुणदोषयोः ॥ १० ॥

पदच्छेद— न हि अस्य अति प्रियः कश्चित् न अप्रियः स्वः परः अपि वा ।
एकः सर्व धियाम् द्रष्टा कर्तृणाम् गुण दोषयोः ॥

शब्दार्थ—

न हि	३.	नहीं	**वा**	७.	अथवा
अस्य	१.	इसका	**एकः**	१०.	अकेला ही
अति प्रियः	४.	बहुत प्यारा है	**सर्व**	१४.	सब प्रकार की
कश्चित्	२.	कोई	**धियाम्**	१५.	बुद्धि वालों को
न अप्रियः	५.	(और न) अप्रिय (है)	**द्रष्टा**	१६.	देखने वाला है
स्वः	६.	अपना	**कर्तृणाम्**	१३.	करने वाले
परः	८.	पराया	**गुण**	११.	गुण और
अपि ।	६.	भी (नहीं है) क्योंकि)	**दोषयोः ॥**	१२.	दोष

श्लोकार्थ—इसका कोई बहुत प्यारा नहीं है। और न अप्रिय है। अपना अथवा पराया भी नहीं है। क्योंकि गुण और दोष करने वाले सब प्रकार की बुद्धि वालों को यह अकेला ही देखने वाला है ॥

एकदशः श्लोकः

नादत्त आत्मा हि गुणं न दोषं न क्रियाफलम् ।
उदासीनवदासीनः परावरदृगीश्वरः ॥ ११ ॥

पदच्छेद— न आदत्ते हि गुणम् न दोषम् च क्रिया फलम् ।
उदासीनवत् आसीनः परावर दृक् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

न	२.	नहीं	फलम्	६.	फल को
आदत्ते	७.	स्वीकार करता है (तथा)	उदासीनवत्	८.	उदासीन के समान
आत्मा	१.	जीवात्मा	आसीनः	९.	स्थित रहता है (और)
हि गुणम्	३.	गुण को	परावर	१०.	विश्व के
न दोषम्	४.	न दोष को	दृक्	११.	देखने वाला
न क्रिया	५.	न कर्म	ईश्वरः ॥	१२.	प्रभु है

श्लोकार्थ—जीवात्मा नहीं गुण को, न दोष को, न कर्म फल को स्वीकार करता है। तथा उदासीन के समान स्थित रहता है। और विश्व को देखने वाला प्रभु है ॥

द्वादशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्युदीर्य गतो जीवो ज्ञातयस्तस्य ते तदा ।
विस्मिता मुमुचुः शोकं छित्त्वाऽऽत्मस्नेहशृङ्खलाम् ॥ १२ ॥

पदच्छेद— इति उदीर्य गतः जीवः ज्ञातयः तस्य ते तदा ।
विस्मिता मुमुचुः शोकम् छित्त्वा आत्म स्नेह शृङ्खलाम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	ऐसा	विस्मिताः	८.	आश्चर्य चकित होकर
उदीर्य	२.	कह कर (वह)	मुमुचुः	१०.	छोड़ दिया (और)
गतः	४.	चला गया	शोकम्	९.	शोक को
जीवः	३.	जीवात्मा	छित्त्वा	१४.	काट दिया
ज्ञातयः	७.	सगे-सम्बन्धियों ने	आत्म	११.	अपने
तस्य ते	६.	उसके उन	स्नेह	१२.	स्नेह के
तदा ।	५.	तब	शृङ्खलाम् ॥	१३.	बन्धन को

श्लोकार्थ—ऐसा कह कर वह जीवात्मा चला गया। तब उसके उन सगे सम्बन्धियों ने आश्चर्यचकित होकर शोक को छोड़ दिया और अपने स्नेह के बन्धन को काट दिया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

निर्हृत्य ज्ञातयो ज्ञातेर्देहं कृत्वोचिताः क्रियाः ।
तत्यजुर्दुस्त्यजं स्नेहं शोकमोहभयार्तिदम् ॥ १३ ॥

पदच्छेद— निर्हृत्य ज्ञातयः ज्ञातेः देहम् कृत्वा उचिताः क्रियाः ।
तत्यजुः दुस्त्यजम् स्नेहम् शोक मोह भय आर्तिदम् ॥

शब्दार्थ—

निर्हृत्य	४.	ले जाकर	**तत्यजुः**	१४.	त्याग दिया
ज्ञातयः	१.	सगे-सम्बन्धियों ने	**दुस्त्यजम्**	८.	कठिनाई से त्यागने योग्य
ज्ञातेः	२.	मृत बालक के	**स्नेहम्**	१३.	स्नेह को
देहम्	३.	शरीर को	**शोक**	९.	शोक
कृत्वा	७.	की (और)	**मोह**	१०.	मोह
उचिताः	५.	तत्कालोचित	**भय**	११.	भय और
क्रियाः ।	६.	और्ध्वदैहिक क्रिया	**आर्तिदम् ॥**	१२.	दुःख देने वाले

श्लोकार्थ—सगे सम्बन्धियों ने मृत बालक के शरीर को ले जाकर तत्कालोचित और्ध्वदैहिक क्रिया की। और कठिनाई से त्यागने योग्य शोक, मोह, भय और दुःख देने वाले स्नेह त्याग दिया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

बालघ्न्यो व्रीडितास्तत्र बालहत्याहतप्रभाः ।
बालहत्याव्रतं चेरुर्ब्राह्मणैर्यन्निरूपितम् ।
यमुनायां महाराज स्मरन्त्यो द्विजभाषितम् ॥ १४ ॥

पदच्छेद— बालघ्न्यः व्रीडिताः तत्र बालहत्या हत प्रभाः ।
बालहत्या व्रतम् चेरुः ब्राह्मणैः यत् निरूपितम् ॥
यमुनायाम् महाराज स्मरन्त्यः द्विज भाषितम् ॥

शब्दार्थ—

बालघ्न्यः	१.	बालहत्या करने वाली (रानियाँ)	**ब्राह्मणैः**	१०.	ब्राह्मणों ने
व्रीडिताः	३.	लज्जित (एवम्)	**यत्**	११.	जैसा
तत्र	२.	वहाँ	**निरूपितम्**	१२.	कहा (उसी प्रकार
बालहत्या	४.	बालक की हत्या से	**यमुनायाम्**	१३.	यमुना में
हत प्रभाः ।	५.	श्री हीन हो गई	**महाराज**	६.	हे महाराज
बालहत्या	१४.	बाल हत्या का	**स्मरन्त्यः**	९.	स्मरण करती हुई (उन्होंने)
व्रतम्	१५.	प्रायश्चित्त	**द्विज**	७.	ब्राह्मणों के
चेरुः	१६.	किया	**भाषितम् ॥**	८.	वचन का

श्लोकार्थ—बालहत्या करने वाली रानियाँ वहाँ लज्जित (एवम्) बालक की हत्या से श्री हीन हो गईं। हे महाराज ! ब्राह्मणों के वचन का स्मरण करती हुई उन्होंने ब्राह्मणों ने जैसा कहा उसी प्रकार यमुना में बालहत्या का प्रायश्चित्त किया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

स इत्थं प्रतिबुद्धात्मा चित्रकेतुर्द्विजोक्तिभिः ।
गृहान्धकूपान्निष्क्रान्तः सरः पङ्कादिव द्विपः ॥ १५ ॥

पदच्छेद— सः इत्थम् प्रति बुद्धात्मा चित्रकेतुः द्विज उक्तिभिः ।
गृह अन्धकूपात् निष्क्रान्तः सरः पङ्कात् इव द्विपः ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वह	गृह	७.	घर गृहस्थी के
इत्थम्	१.	इस प्रकार	अन्धकूपात्	८.	अन्धेरे कुएँ से
प्रतिबुद्धात्मा	३.	विवेकबुद्धि सम्पन्न	निष्क्रान्तः	९.	बाहर निकल आया
चित्रकेतुः	४.	चित्रकेतु	सरः	११.	सरोवर के
द्विज	५.	ब्राह्मणों के	पङ्कात्	१२.	कीचड़ से
उक्तिभिः ।	६.	कहने से	इव	१०.	जैसे
			द्विपः ॥	१३.	हाथी निकल आता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह विवेक बुद्धि सम्पन्न चित्रकेतु ब्राह्मणों के कहने से घर गृहस्थी के अन्धेरे कुएँ से बाहर निकल आया, जैसे सरोवर के कीचड़ से हाथी निकल आता है ॥

षोडशः श्लोकः

कालिन्द्यां विधिवत् स्नात्वा कृतपुण्यजलक्रियः ।
मौनेन संयतप्राणो ब्रह्मपुत्राववन्दत ॥ १६ ॥

पदच्छेद— कालिन्द्याम् विधिवत् स्नात्वा कृत पुण्य जलक्रिया ।
मौनेन संयत प्राणः ब्रह्म पुत्रौ अवन्दत ॥

शब्दार्थ—

कालिन्द्याम्	१.	यमुना में	मौनेन	७	मौन रह कर
विधिवत्	२.	विधिपूर्वक	संयत	९.	वश में करके
स्नात्वा	३.	स्नान करके	प्राणः	८.	इन्द्रियों को
कृत	६.	की	ब्रह्म	१०.	ब्रह्मा के
पुण्य	४.	पवित्र	पुत्रौ	११.	पुत्रों अङ्गिरा और नारद की
जल क्रियाः	५.	(सन्ध्या, तर्पणादि)जल क्रियायें	अवन्दत ॥	१२.	वन्दना की

श्लोकार्थ—यमुना में विधिपूर्वक स्नान करके पवित्र सन्ध्या तर्पणादि जल क्रियायें कीं । मौन रह कर इन्द्रियों को वश में करके ब्रह्मा के पुत्रों अङ्गिरा और नारद की वन्दना की ॥

सप्तदशः श्लोकः

अथ तस्मै प्रपन्नाय भक्ताय प्रयतात्मने ।
भगवान्नारदः प्रीतो विद्यामेतामुवाच ह ॥ १७ ॥

पदच्छेद— अथ तस्मै प्रपन्नाय भक्ताय प्रयत आत्मने ।
भगवान् नारदः प्रीतः विद्याम् एताम् उवाच ह ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	भगवान्	७.	भगवान्
तस्मै	२.	उस	नारदः	८.	नारद ने
प्रपन्नाय	५.	शरणागत	प्रीतः	९.	प्रसन्न होकर
भक्ताय	६.	भक्त से	विद्याम्	११.	विद्या को
प्रयत	३.	पवित्र	एताम्	१०.	इस
आत्मने ।	४.	आत्मा	उवाच ह ॥	१२.	कहा

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस पवित्र आत्मा, शरणागत भक्त से भगवान् नारद ने प्रसन्न होकर इस विद्या को कहा ॥

अष्टादशः श्लोकः

ॐ नमस्तुभ्यं भगवते वासुदेवाय धीमहि ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय नमः सङ्कर्षणाय च ॥ १८ ॥

पदच्छेद— ॐ नमः तुभ्यम् भगवते वासुदेवाय धीमहि ।
प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय नमः सङ्कर्षणाय च ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप	प्रद्युम्नाय	६.	प्रद्युम्न को
नमः	५.	नमस्कार है	अनिरुद्धाय	७.	अनिरुद्ध को
तुभ्यम्	२.	आप	नमः	१०.	नमस्कार है (हम आप) सबका
भगवते	३.	भगवान्	सङ्कर्षणाय	९.	सङ्कर्षण को
वासुदेवाय	४.	वासुदेव को	च ॥	८.	और
धीमहि ।	११.	ध्यान करते हैं			

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप आप भगवान् वासुदेव को नमस्कार है। प्रद्युम्न को, अनिरुद्ध को और सङ्कर्षण को नमस्कार है। हम आप सबका ध्यान करते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नमो विज्ञानमात्राय परमानन्दमूर्तये ।
आत्मारामाय शान्ताय निवृत्तद्वैतदृष्टये ॥१६॥

पदच्छेद— नमः विज्ञान मात्राय परमानन्द मूर्तये ।
आत्मा रामाय शान्ताय निवृत्त द्वैत दृष्टये ॥

शब्दार्थ—

नमः	११.	नमस्कार है	आत्मा	५.	आत्मा में
विज्ञान	१.	विज्ञान	रामाय	६.	रमण करने वाले
मात्राय	२.	स्वरूप को	शान्ताय	७.	शान्त स्वरूप को (तथा)
परमानन्द	३.	परमानन्द की	निवृत्त	१०.	रहित को
मूर्तये ।	४.	मूर्ति को	द्वैत	८.	द्वैत भाव की
			दृष्टये ॥	९.	दृष्टि से

श्लोकार्थ—विज्ञान स्वरूप को, परमानन्द की मूर्ति को, आत्मा में रमण करने वाले, शान्त स्वरूप को तथा द्वैत-भाव की दृष्टि से रहित को नमस्कार है ॥

विंशः श्लोकः

आत्मानन्दानुभूत्यैव न्यस्तशक्त्यूर्मये नमः ।
हृषीकेशाय महते नमस्ते विश्वमूर्तये ॥२०॥

पदच्छेद— आत्मानन्द अनुभूत्या एव न्यस्त शक्ति उर्मये नमः ।
हृषीकेशाय महते नमः ते विश्व मूर्तये ॥

शब्दार्थ—

आत्मानन्द	१.	अपने स्वरूप भूत	नमः ।	७.	नमस्कार है
अनुभूत्या	२.	आनन्द के अनुभव से	हृषीकेशाय	८.	हृषीकेश भगवान् को और
एव	३.	ही	महते	९.	महान्
न्यस्त	६.	त्यागने वाले आपको	नमः	१२.	नमस्कार है
शक्ति	४.	माया की	ते	११.	आपको
ऊर्मये	५.	तरंगों की	विश्वमूर्तये ।	१०.	विराट् स्वरूप

श्लोकार्थ—अपने स्वरूप भूत आनन्द के अनुभव से ही माया की तरंगों को त्यागने वाले आपको नमस्कार है । हृषीकेश भगवान् और महान् विराट् स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

एकविंशः श्लोकः

वचस्युपरतेऽप्राप्य य एको मनसा सह।
अनामरूपश्चिन्मात्रः सोऽव्यान्नः सदसत्परः ॥२१॥

पदच्छेद — वचसि उपरते अप्राप्य यः एकः मनसा सह।
अनाम रूपः चिन्मात्रः सः अव्यात् नः सत् असत्परः ॥

शब्दार्थ—

वचसि	६. वाणी के	अनामरूपः	८. नाम रूप से रहित
उपरते	७. लौट जाने पर	चिन्मात्र	९. चेतनमात्र
अप्राप्य	१. जिसे न पाकर	सः	१०. वह
यः	२. जो	अव्यात्	१४. रक्षा करें
एकः	३. अकेला ही	नः	१३. हमारी
मनसा	४. मन के	सत्	१०. सत् और
सह।	५. सहित	असत्परः ॥	११. असत् से परे है

श्लोकार्थ—जिसे न पाकर जो अकेला ही मन के सहित वाणी के लौट जाने पर नाम रूप से रहित, चेतनमात्र, सत् और असत् से परे है, वही हमारी रक्षा करे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यस्मिन्निदं यतश्चेदं तिष्ठत्यप्येति जायते।
मृण्मयेष्विव मृज्जातिस्तस्मै ते ब्रह्मणे नमः ॥२२॥

पदच्छेद— यस्मिन् इदम् यतः च इदम् तिष्ठति अपि एति जायते।
मृण्मयेषु इव मृत्जातिः तस्मै ते ब्रह्मणे नमः ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	५. जिसमें	मृण्मयेषु	१०. मिट्टी की वस्तुओं में व्याप्त
इदम्	६. यह	इव	९. जैसे
यतः	१. जिससे	मृत्जातिः	११. मिट्टी के समान सब में ओत-प्रोत है
च	४. और	तस्मै	१२. उस
इदम्	२. यह संसार	ते	१३. आप
तिष्ठति	७. स्थित रहता है (तथा)	ब्रह्मणे	१४. ब्रह्म को
अपि एति	८. लीन हो जाता है	नमः ॥	१५. नमस्कार है
जायते।	३. उत्पन्न होता है		

श्लोकार्थ – जिससे यह संसार उत्पन्न होता है, और जिसमें यह स्थित रहता है तथा लीन हो जाता है, जैसे मिट्टी की वस्तुओं में व्याप्त मिट्टी के समान सब में ओत-प्रोत है, उस आप ब्रह्म को नमस्कार है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यन्न स्पृशन्ति न विदुर्मनोबुद्धीन्द्रियासवः ।
अन्तर्बहिश्च विततं व्योमवत्तन्नतोऽस्म्यहम् ॥२३॥

पदच्छेद— यत् न स्पृशन्ति न विदुः मनः बुद्धि इन्द्रिय असवः ।
अन्तः बहिः च विततम् व्योमवत् तत् नतः अस्मि अहम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	५.	जिसका	अन्तः	११.	भीतर
न	६.	नहीं	बहिः	१२.	बाहर
स्पृशन्ति	७.	स्पर्श करते हैं (तथा)	च	१०.	और (जो)
न	८.	नहीं	विततम्	१४.	व्याप्त है
विदुः	९.	जानते हैं	व्योमवत्	१३.	आकाश के समान
मनः	१.	मन	तत्	१५.	उसको
बुद्धि	२.	बुद्धि	नतः	१७.	नमस्कार
इन्द्रिय	३.	इन्द्रिय और	अस्मि	१८.	करता हूँ
असवः ।	४.	प्राण	अहम् ॥	१६.	मैं

श्लोकार्थ—मन; बुद्धि; इन्द्रिय और प्राण जिसका स्पर्श नहीं करते हैं तथा नहीं जानते हैं और जो भीतर-बाहर आकाश के समान व्याप्त है, उसको मैं नमस्कार करता हूँ ।

चतुर्विंशः श्लोकः

देहेन्द्रियप्राणमनोधियोऽमी यदंशविद्धाः प्रचरन्ति कर्मसु ।
नैवान्यदा लोहमिवाप्रतप्तं स्थानेषु तद् द्रष्ट्रपदेशमेति ॥२४॥

पदच्छेद— देहेन्द्रिय प्राण मनः धियः अमी यत् अंशविद्धाः प्रचरन्ति कर्मसु ।
न एव अन्यदा लोहम् इव अप्रतप्तम् स्थानेषु तद् द्रष्टृ अपदेशम् एति ॥

शब्दार्थ—

देहेन्द्रिय	१.	शरीर इन्द्रिय	लोहम्	१२.	लोहा (नहीं जलाता है)
प्राण मन	२.	प्राण मन	इव	१०.	जैसे
धियः अमी	३.	बुद्धि ये	अप्रतप्तम्	११.	न तपा हुआ
यत् अंश	४.	जिस परमात्मा के अंश से	स्थानेषु	१४.	स्थानों में
विद्धः	५.	युक्त होकर	तद्	१३.	वही
प्रचरन्ति	७.	विचरण करते हैं	द्रष्टृ	१५.	साक्षी के
कर्मसु ।	६.	कर्मों में	अपदेशम्	१६.	व्यवहार को
न एव	९.	नहीं (करते हैं) (और)	एर्ति ॥	१७.	प्राप्त करता है
अन्यदा	८.	युक्त न होने पर			

श्लोकार्थ—शरीर, इन्द्रिय, प्राण, मन, बुद्धि ये जिस परमात्मा के अंश से युक्त होकर कर्मों में विचरण करते हैं और युक्त न होने पर नहीं करते हैं । जैसे न तपा हुआ लोहा नहीं जलाता है । वही स्थानों में साक्षी के व्यवहार को प्राप्त करता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ॐ नमो भगवते महापुरुषाय महानुभावाय महाविभूतिपतये सकलसात्वत-परिवृढनिकरकरकमलकुड्मलोपलालितचरणारविन्दयुगल परमपरमेष्ठि-न्नमस्ते ॥२५॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते महापुरुषाय महानुभावाय महाविभूतिपतये सकल सात्वपरिवृढ निकरकर कमलकुड्मल उपलालित चरण अरविन्द युगल परमपरमेष्ठिन्नमस्ते ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप	निकर	११.	समूह के
नमः	७.	नमस्कार है	करकमल	१२.	कर कमलों की
भगवते	६.	भगवान् को	कुड्मल	१३.	कलियों से
महापुरुषाय	२.	महापुरुष	उपलालित	१४.	सेवित
महानुभावाय	३.	महान् प्रभावशाली	चरण	१६.	चरण
महाविभूति	४.	महान् विभूतियों के	अरविन्द	१७.	कमल वाले
पतये	५.	स्वामी	युगल	१५.	दोनों
सकल	८.	समस्त	परम	१८.	सबसे
सात्वत	१०.	भक्तों के	परमेष्ठिन्	१९.	श्रेष्ठ
परिवृढ	९.	श्रेष्ठ	नमः	२१.	नमस्कार है
			ते ॥	२०.	आपको

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप महापुरुष, महान् प्रभावशाली, महान्विभूतियों के स्वामी भगवान् को नमस्कार है। समस्त श्रेष्ठ भक्तों के समूह के कर कमलों की कलियों से सेवित दोनों चरण कमल वाले सबसे श्रेष्ठ आपको नमस्कार है ॥

षड्विंशः श्लोकः

शुक उवाच—भक्तायैतां प्रपन्नाय विद्यामादिश्य नारदः ।
ययावङ्गिरसा साकं धाम स्वायम्भुवं प्रभो ॥२६॥

पदच्छेद - भक्ताय एताम् प्रपन्नाय विद्याम् आदिश्य नारदः ।
ययौ अङ्गिरसा साकम् धाम स्वायम्भुवम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

भक्ताय	४.	भक्त को	ययौ	१२.	चले गये
एताम्	५,	इस	अङ्गिरसा	८.	अङ्गिरा मुनि के
प्रपन्नाय	३.	शरणागत	साकम्	९.	साथ
विद्याम्	६.	विद्या का	धाम	११.	लोक को
आदिश्य	७.	उपदेश करके	स्वायम्भुवम्	१०.	ब्रह्मा के
नारदः ।	२.	नारद जी	प्रभो ।	१.	हे परीक्षित् !

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! नारद जी शरणागत भक्त को इस विद्या का उपदेश करके अङ्गिरा मुनि के साथ ब्रह्मा के लोक को चले गये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

चित्रकेतुस्तु विद्यां तां यथा नारदभाषिताम् ।
धारयामास सप्ताहमब्भक्षः सुसमाहितः ॥२७॥

पदच्छेद— चित्रकेतुः तु विद्याम् ताम् यथा नारद भाषिताम् ।
धारयामास सप्ताहम् अब्भक्षः सुसमाहितः ॥

शब्दार्थ—

चित्रकेतुः तु	१.	चित्रकेतु ने तो	भाषिताम्	६.	कहा था
विद्याम्	३.	विद्या को	धारयामास	१०.	धारण किया
ताम्	२.	उस	सप्ताहम्	७.	एक सप्ताह तक
यथा	४.	जैसे	अब्भक्षः	८.	जल पी कर
नारद	५.	नारद जी ने	सुसमाहितः ॥	१०.	समाधि लगा कर

श्लोकार्थ—चित्रकेतु ने तो उस विद्या को जैसे नारद जी ने कहा था, एक सप्ताह तक जल पी कर समाधि लगा कर धारण किया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

ततश्च सप्तरात्रान्ते विद्यया धार्यमाणया ।
विद्याधराधिपत्यं स लेभेऽप्रतिहतं नृपः ॥२८॥

पदच्छेद— ततः च सप्त रात्र अन्ते विद्यया धार्य माणया ।
विद्याधर अधिपत्यम् सः लेभे अप्रतिहतम् नृपः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	विद्याधर	८.	विद्याधरों के
च	२.	और	आधिपत्यम्	११.	स्वामित्व को
सप्त	४.	सात	सः	९.	उस
रात्रअन्ते	५.	रात्रि के अन्त में	लेभे	१२.	प्राप्त किया
विद्यया	६...	उस विद्या से	अप्रतिहतम्	१०.	अखण्ड
धार्यमाणया ।	३.	धारण की जाती हुई	नृपः ॥	७.	राजा चित्रकेतु ने

श्लोकार्थ—तदनन्तर और धारण की जाती हुई सात रात्रि के अन्त में उस विद्या से राजा चित्रकेतु ने विद्याधरों के अखण्ड स्वामित्व को प्राप्त किया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ततः कतिपयाहोभिर्विद्ययेद्ध मनोगतिः ।
जगाम देवदेवस्य शेषस्य चरणान्तिकम् ॥२९॥

पदच्छेद— ततः कतिपय अहोभिः विद्यया इद्ध मनोगतिः ।
जगाम देव देवस्य शेषस्य चरण अन्तिकम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	जगाम	१२.	पहुँच गये
कतिपय	२.	कुछ ही	देव	७.	देवताओं के
अहोभिः	३.	दिनों में (उस)	देवस्य	८.	देवता
विद्यया	४.	विद्या के	शेषस्य	९.	शेष भगवान्
इद्ध	५.	प्रभाव से	चरण	१०.	चरणों के
मनोगतिः ।	६.	मन शुद्ध हो गया (और) वे	अन्तिकम् ॥	११.	समीप में

श्लोकार्थ—तदन्तर कुछ ही दिनों में उस विद्या के प्रभाव से मन शुद्ध हो गया और वे देवताओं के देवता शेष भगवान् के चरणों के समीप में पहुँच गये ॥

त्रिंशः श्लोकः

मृणालगौरं शितिवाससं स्फुरत्किरीटकेयूरकटित्रकङ्कणम् ।
प्रसन्नवक्त्रारुणलोचनं वृतं ददर्श सिद्धेश्वरमण्डलैः प्रभुम् ॥३०॥

पदच्छेद— मृणाल गौरं शिति वाससम् स्फुरत् किरीट केयूर कटित्र कङ्कणम् ।
प्रसन्न वक्त्र अरुण लोचनम् वृतम् ददर्श सिद्धेश्वर मण्डलैः प्रभुम् ॥

शब्दार्थ—

मृणाल	१.	उन्होंने कमल तन्तु के समान	प्रसन्न	१०.	प्रसन्न
गौरम्	२.	गौरवर्ण	वक्त्र	११.	मुख
शिति	३.	स्वच्छ	अरुण	१२.	लाल
वाससम्	४.	वस्त्र वाले	लोचनम्	१३.	आँखों वाले
स्फुरत्	५.	चमकते	वृतम्	१६.	घिरे हुये
किरीट	६.	मुकुट	ददर्श	१८.	देखा
केयूर	७.	बाजूबन्द	सिद्धेश्वर	१४.	सिद्धेश्वरों की
कटित्र	८.	करधनी और	मण्डलैः	१५.	मण्डिलियों से
कङ्कणम् ।	९.	कङ्गन से युक्त	प्रभुम् ॥	१७.	भगवान् को

श्लोकार्थ—उन्होंने कमल तन्तु के समान, गौरवर्ण, स्वच्छ वस्त्रवाले, चमकते मुकुट, बाजूवन्द, करधनी और कङ्गन से युक्त, प्रसन्न मुख, लाल आंखों वाले, सिद्धेश्वरों की मण्डलियों से घिरे हुये भगवान् को देखा ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तद्दर्शनध्वस्तसमस्तकिल्बिषः स्वच्छामलान्तःकरणोऽभ्ययान्मुनिः ।
प्रवृद्धभक्त्या प्रणयाश्रुलोचनः प्रहृष्टरोमानमनादिपूरुषम् ॥३१॥

पदच्छेद—तत् दर्शन ध्वस्त समस्त किल्बिषः स्वच्छ अमल अन्तःकरणः अभ्ययात् मुनिः ।
प्रवृद्ध भक्त्या प्रणय अश्रुलोचनः प्रहृष्ट रोमानम् अनादि पुरुषम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उनके	प्रवृद्ध	१२.	बढ़ गई
दर्शन्	२.	दर्शन से (राजा की)	भक्त्या	१०.	भक्ति
ध्वस्त	५.	धुल गई	प्रणय	११.	प्रेम के कारण
समस्त	३.	सम्पूर्ण	अश्रु	१४.	आँसू छलक आये
किल्बिषः	४.	पाप राशि	लोचनः	१३.	आँखों में
स्वच्छ अमल	६.	स्वच्छ निर्मल हो गया	प्रहृष्ट	१५.	अत्यन्त हर्ष से
अन्तःकरणः	५.	अन्तःकरण	रोमानम्	१६.	रोमाञ्चित हो गये (उन्होंने)
अभ्ययात्	८.	पास गये (उनकी)	अनादि	१७.	अनादि
मुनिः ।	७.	ऐसे मुनि भगवान् के	पूरुषम् ॥	१८.	पुरुष भगवान् को प्रणाम किया

श्लोकार्थ—उनके दर्शन से राजा की सम्पूर्ण पापराशि धुल गई। अन्तःकरण स्वच्छ और निर्मल हो गया। ऐसे मुनि भगवान् के पास गये। प्रेम के कारण भक्ति बढ़ गई। आँखों में आँसू छलक आये। अत्यन्त हर्ष से रोमाञ्चित हो गये। उन्होंने अनादि पुरुष भगवान् को प्रणाम किया ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

स उत्तमश्लोकपदाब्जविष्टरं प्रेमाश्रुलेशैरुपमेहयन्मुहुः ।
प्रेमोपरुद्धाखिलवर्णनिर्गमो नैवाशकत्तं प्रसमीडितुं चिरम् ॥३२॥

पदच्छेद—सः उत्तमश्लोक पदाब्ज विष्टरम् प्रेम अश्रुलेशैः उपमेहयन् मुहुः ।
प्रेम उपरुद्ध अखिल वर्ण निर्गमः न एव अशकत् तम् प्रसम् ईडितुम चिरम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	**अखिल**	११.	समूह
उत्तम श्लोक	२.	भगवान् के	**वर्ण**	१०.	अक्षरों का
पदाब्ज	३.	चरण कमलों की	**निर्गमः**	१३.	निकला (तथा)
विष्टरम्-प्रेम	४.	चौकी को प्रेम के	**न एव**	१२.	नहीं
अश्रु-लेशैः	५.	आँसुओं की अधिकता से	**अशकत्**	१८.	सके
उपमेहयन्	७.	सींचने लगे (और)	**तम्**	१५.	उन भगवान् की
मुहुः ।	६.	बार-बार	**प्रसम्**	१६.	स्तुति न
प्रेम	८.	प्रेम के कारण	**ईडितुम्**	१७.	कर
उपरुद्ध	९.	अवरुद्ध कण्ठ से	**चिरम् ॥**	१४.	बहुत देर तक

श्लोकार्थ—वह भगवान् के चरण कमलों की चौकी को प्रेम के आंसुओं की अधिकता से बार-बार सींचने लगे। और प्रेम के कारण अवरुद्ध कण्ठ से अक्षरों का समूह नहीं निकला। तथा बहुत देर-तक उन भगवान् की स्तुति न कर सके ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ततः समाधाय मनो मनीषया बभाष एतत्प्रतिलब्धवागसौ ।
नियम्य सर्वेन्द्रियबाह्यवर्तनं जगद्गुरुं सात्वतशास्त्रविग्रहम् ॥३३ ॥

पदच्छेद— ततः समाधाय मनः मनीषया बभाषे एतत् प्रति लब्ध वाग् असौ ।
निशम्य सर्वे इन्द्रिय बाह्य वर्तनम् जगद्गुरुम् सात्वत शास्त्र विग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	निशम्य	१२.	रोककर
समाधाय	५.	समाहित करके	सर्वइन्द्रिय	९.	सभी इन्द्रियों की
मनः	४.	मन को	बाह्य	१०.	बाहर की
मनीषया	३.	विवेक बुद्धि से	वर्तनम्	११.	वृत्ति को
बभाषे	१७.	बोले	जगद्गुरुम्	१३.	संसार के गुरु (और)
एतत्	२.	इस प्रकार	सात्वत	१४.	भक्ति
प्रतिलब्ध	७.	प्राप्त करके	शास्त्र	१५.	शास्त्र के
वाग्	६.	वाणी को	विग्रहम् ॥	१६.	स्वरूप (भगवान् से)
असौ ।	८.	वह राजा			

श्लोकार्थ—तदनन्तर इस प्रकार विवेक बुद्धि से मन को समाहित करके वाणी को प्राप्त करके वह राजा सभी इन्द्रियों की बाहर की वृत्ति को रोककर संसार के गुरु और भक्ति शास्त्र के स्वरूप भगवान् से बोले ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अजित जितः सममतिभिः साधुभिर्भवान् जितात्मभिर्भवता ।
विजितास्तेऽपि च भजतामकामात्मनां य आत्मदोऽतिकरुणः ॥३४॥

पदच्छेद— अजितजितः सममतिभिः साधुभिः भवान् जितआत्मभिः भवता ।
विजिताः ते अपि च भजताम् अकाम आत्मनाम् यः आत्मदः अतिकरुणः ॥

शब्दार्थ—

अजित	१.	हे अजित !	ते	१०.	वे लोग
जितः	७.	जीत लिया है	अपि	९.	भी
सम	३.	समान	च	१२.	और
मतिभिः	४.	मतिवाले	भजताम्	१५.	भजन करने वालों को
साधुभिः	५.	साधुओं ने	अकाम्	१३.	निष्काम
भवान्	६.	आपको	आत्मनाम्	१४.	भाव से
जितआत्मभिः	२.	जितेन्द्रिय (एवम्)	यः	१७.	जो आप
भवता ।	८.	आपसे	आत्मदः	१८.	अपने आपको दे देते हैं
विजिताः	११.	जीत लिये गये हैं	अतिकरुणः ॥	१६.	अति दयालु

श्लोकार्थ—हे अजित ! जितेन्द्रिय एवम् समान मति वाले साधुओं ने आपको जीत लिया है। आपसे भी वे लोग जीत लिये गये हैं। और निष्काम भाव से भजन करने वालों को अति दयालु जो आप अपने आप तक को दे देते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तव विभवः खलु भगवन् जगदुदयस्थितिलयादीनि ।
विश्वसृजस्तेंऽशांशास्तत्र मृषा स्पर्धन्ते पृथगभिमत्या ॥३५॥

पदच्छेद— तव विभवः खलु भगवन् जगत् उदय स्थिति लय आदीनि ।
विश्व सृजः ते अंशांशाः तत्र मृषा स्पर्धन्ते पृथक् अभिमत्या ॥

शब्दार्थ—

तव	८. आपकी	विश्व	१०. विश्व के
विभवः	९. ऐश्वर्यशक्ति है	सृजः	११. निर्माता (ब्रह्मादि)
खलु	७. निश्चित रूप से	ते	१२. आपके
भगवन्	१. भगवन्	अंशांशाः	१३. अंशों के भी अंश हैं
जगत्	२. संसार की	तत्र	१४. फिर भी (अपने को)
उदय	३. उत्पत्ति	मृषा	१७. व्यर्थ ही
स्थिति	४. स्थिति	स्पर्धन्ते	१८. स्पर्धा करते हैं
लय	५. लय	पृथक्	१६. अलग मानकर
आदीनि ।	६. आदि	अभिमत्या ॥	१५. अभिमान के कारण

श्लोकार्थ—भगवन् ! संसार की उत्पत्ति, स्थिति, लय आदि निश्चित रूप से आपकी ऐश्वर्य शक्ति है । विश्व के निर्माता ब्रह्मादि आपके अंशों के भी अंश हैं । फिर भी वे अपने को अभिमान के कारण अलग मानकर व्यर्थ ही स्पर्धा करते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

परमाणुपरममहतोस्त्वमाद्यन्तान्तरवर्ती त्रयविधुरः ।
आदावन्तेऽपि च सत्त्वानां यद् ध्रुवं तदेवान्तरालेऽपि ॥३६॥

पदच्छेद— परम अणु परम महतोः त्वम् आदि अन्त अन्तरवर्ती त्रयविधुरः ।
आदौ अन्ते अपि च सत्त्वानाम् यत् ध्रुवम् तत् एव अन्तराले अपि ॥

शब्दार्थ—

परम	१. अत्यन्त छोटे-छोटे	आदौ	११. आदि
अणु	१. परमाणु से लेकर	अन्ते	१३. अन्त में
परम	३. बड़े से बड़े	अपि	१४. भी
महतोः	४. महत्तत्त्व पर्यन्त (वस्तुओं के)	च	१२. और
त्वम्	७. आप हैं (तथा)	सत्त्वानाम्	१०. पदार्थों के
आदि अन्तः	५. आदि-अन्त और	यत् ध्रुवम्	१५. जो वस्तु स्थित रहती है
अन्तरवर्ती	६. मध्य में रहने वाले	तत् एव	१६. वही
त्रय	८. इन तीनों से	अन्तराले	१७. बीच में
विधुरः ।	९. रहित भी हैं	अपि ॥	१८. भी (रहती है)

श्लोकार्थ—अत्यन्त छोटे-छोटे परमाणु से लेकर बड़े से बड़े महत्तत्त्व पर्यन्त वस्तुओं के आदि-अन्त और मध्य में रहने वाले आप हैं । तथा इन तीनों से रहित भी हैं । पदार्थों के आदि-अन्त में भी और जो वस्तु रहती है, वही बीच में भी रहती है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

क्षित्यादिभिरेष किलावृतः सप्तभिर्दशगुणोत्तरैराण्डकोशः ।
यत्र पतत्यणुकल्पः सहाण्डकोटिकोटिभिस्तदनन्तः ॥३७॥

पदच्छेद— क्षिति आदिभिः एषः किल आवृतः सप्तभिः दशगुण उत्तरैः आण्डकोशः ।
यत्र पतति अणु कल्पः सह अण्ड कोटिकोटिभिः तत् अनन्तः ॥

शब्दार्थ —

क्षिति	१.	पृथ्वी	**यत्र**	१०.	आप में
आदिभिः	२.	आदि एक-एक से	**पतति**	१६.	घूमता रहता है
एषः	६.	यह	**अणु**	१४.	परमाणु के
किल	८.	निश्चितरूप से	**कल्पः**	१५.	समान
आवृतः	९.	घिरा हुआ है	**सह**	१३.	साथ
सप्तभिः	५.	सात (आवरणों से	**अण्ड**	१२.	ब्रह्माण्डों के
दशगुण	३.	दशगुने	**कोटि-कोटिभिः**	११.	करोड़ों-करोड़ों
उत्तरैः	४.	अधिक	**तत्**	१७.	इसलिये आप
आण्डकोशः ।	७.	ब्रह्माण्ड कोश	**अनन्तः ॥**	१८.	अनन्त हैं

श्लोकार्थ—पृथ्वी आदि एक-एक से दशगुने अधिक सात आवरणों से यह ब्रह्माण्ड कोश निश्चितरूप से घिरा हुआ है । और आप में करोड़ों-करोड़ों ब्रह्माण्डों के साथ परमाणु के समान घूमता रहता है। इसलिये भी आप अनन्त हैं ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

विषयतृषो नरपशवो य उपासते विभूतीर्न परं त्वाम् ।
तेषामाशिष ईश तदनु विनश्यन्ति यथा राजकुलम् ॥३८॥

पदच्छेद— विषय तृषः नर पशवः ये उपासते विभूतीः न परम् त्वाम् ।
तेषाम् आशिषः ईश तद् अनु विनश्यन्ति यथा राजकुलम् ॥

शब्दार्थ—

विषय	१.	विषय भोग की	**त्वाम् ।**	९.	आपकी
तृषः	२.	लालसा वाले	**तेषाम्**	१२.	उनके
नर	५.	मनुष्य	**आशिषः**	१३.	भोग
पशवः	४.	पशु तुल्य	**ईश**	११.	हे प्रभो !
ये	३.	जो	**तद्**	१४.	उनविभूतियों के नष्ट होने के
उपासते	७.	उपासना करते हैं	**अनु**	१५.	पश्चात्
विभूतीः	६.	आपकी विभूतियों की	**विनश्यन्ति**	१६.	नष्ट हो जाते हैं
न	१०.	नहीं करते हैं	**यथा**	१७.	जैसे (बड़े राजा के नष्ट होने पर)
परम्	८.	किन्तु	**राजकुलम् ॥**	१८.	उनके अनुयायी राजाओं का समूह (नष्ट हो जाता है)

श्लोकार्थ—विषय भोग की लालसा वाले जो पशु तुल्य मनुष्य आपकी विभूतियों की उपासना करते हैं किन्तु आपकी नहीं करते हैं । हे प्रभो ! उनके भोग उनविभूतियों के नष्ट होने के पश्चात् नष्ट हो जाते हैं । जैसे बड़े राजा के नष्ट होने पर उनके अनुयायी राजाओं का समूह नष्ट हो जाता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कामधियस्त्वयि रचिता न परम रोहन्ति यथा करम्भबीजानि ।
ज्ञानात्मन्यगुणमये गुणगणतोऽस्य द्वन्द्वजालानि ॥३९॥

पदच्छेदः — कामधियः त्वयि रचिता न परम रोहन्ति यथा करम्भ बीजानि ।
ज्ञान आत्मनि अगुणमये गुणगणतः अस्य द्वन्द्व जालानि ॥

शब्दार्थ—

कामधियः	३. सकाम बुद्धि से	ज्ञान	१४. ज्ञान
त्वयि	२. आप में	आत्मनि	१५. स्वरूप (एवम्)
रचिताः	४. किये गये कर्म	अगुणमये	१६. निर्गुण (आप से नहीं हो सकते)
न	६. नहीं (देते हैं)	गुण	१२. गुणों के
परम	१. हे परमात्मन् !	गणतः	१३. समूह से ही (उत्पन्न होते हैं)
रोहन्ति	५. उसी प्रकार फल	अस्य	९. इस जीव के
यथा करम्भ	७. जैसे भुने	द्वन्द्व	१०. सुख-दुःखादि के
बीजानि ।	८. बीज अंकुरित नहीं होते हैं	जालानि ॥	११. समूह (सत्त्वादि)

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! आप में सकाम बुद्धि से किये गये कर्म उसी प्रकार फल नहीं देते हैं, जैसे भुने चने अंकुरित नहीं होते हैं । इस जीव के सुख-दुःखादि के समूह सत्त्वादि गुणों के समूह से ही उत्पन्न होते हैं । ज्ञान स्वरूप एवम् निर्गुण आप से नहीं होते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

जितमजित तदा भवता यदाऽऽह भागवतं धर्ममनवद्यम् ।
निष्किञ्चना ये मुनय आत्मारामा यमुपासतेऽपवर्गाय ॥४०॥

पदच्छेद— जितम् अजित तदा भवता यदा आह भागवतम् धर्मम् अनवद्यम् ।
निष्किञ्चनाः ये मुनयः आत्मारामाः यम् उपासते अपवर्गाय ॥

शब्दार्थ—

जितम्	४. जीत लिया	निष्किञ्चनाः	१०. अकिञ्चन (और)
अजित	१. हे अजित !	ये	१३. वे
तदा	३. तब ही (सबको)	मुनयः	१४. मुनि गण
भवता	२. आपने	आत्मा	११. आत्मा में
यदा	५. जब	रामाः	१२. रमण करने वाले
आह	९. किया था (क्योंकि)	यम्	१६. उसी (भागवत धर्म की)
भागवतम्	७. भागवत	उपासते	१७. उपासना करते हैं
धर्मम्	८. धर्म का उपदेश	अपवर्गाय ॥	१५. मोक्ष प्राप्त करने के लिये
अनवद्यम् ।	६. विशुद्ध		

श्लोकार्थ—हे अजित ! आपने तब ही सबको जीत लिया, जब विशुद्ध भागवत धर्म का उपदेश किया था । क्योंकि अकिञ्चन और आत्मा में रमण करने वाले वे मुनि गण मोक्ष प्राप्त करने के लिये उसी भागवत धर्म की उपासना करते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

विषममतिर्न यत्र नृणां त्वमहमिति मम तवेति च यदन्यत्र ।
विषमधिया रचितो यः स ह्यविशुद्धः क्षयिष्णुरधर्मबहुलः ॥४१॥

पदच्छेद— विषममतिः न यत्र नृणाम् त्वम् अहम् इति मम तव इति च यद् अन्यत्र ।
विषम धिया रचितः यः स हि अविशुद्धः क्षयिष्णुः अधर्म बहुलः ॥

शब्दार्थ—

विषममतिः	३.	अशुद्ध बुद्धि	अन्यत्र ।	१०.	दूसरे सकाम धर्मों में होती है
न	४.	नहीं (होती है)	विषम	११.	विपरीत
यत्र	१.	यहाँ इस (भागवत धर्म में)	धिया	१२.	बुद्धि से
नृणाम्	२.	मनुष्यों की	रचितः	१४.	किया गया है
त्वम्-अहम्	५.	यह तू, यह मैं	यः	१३.	जो कर्म
इति-मम	६.	यह मेरा	सः हि	१५.	वह तो
तव	८.	तेरा है (इस प्रकार)	अविशुद्धः	१६.	अशुद्ध
इति	७.	यह	क्षयिष्णुः	११.	नाशवान्
च	१८.	और	अधर्म	१९.	अधर्मों से
यत्	९.	जो कि	बहुलः ॥	२०.	भरा होता है

श्लोकार्थ—यहाँ इस भागवत धर्म में अशुद्ध बुद्धि नहीं होती है । यह तू, यह मैं, यह मेरा, यह तेरा है । इस प्रकार जोकि दूसरे सकाम धर्मों में होती है । विपरीत बुद्धि से जो कर्म किया जाता है, वह तो अशुद्ध, नाशवान् और अधर्मों से भरा होता है ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

कः क्षेमो निजपरयोः कियानर्थः स्वपरद्रुहा धर्मेण ।
स्वद्रोहात्तव कोपः परसम्पीडया च तथाधर्मः ॥४२॥

पदच्छेद— कः क्षेमः निज परयोः कियान् अर्थः स्व परद्रुहा धर्मेण ।
स्व द्रोहात् तव कोपः पर सम्पीडया च तथा अधर्मः ॥

शब्दार्थ—

कः	६.	क्या	स्व	११.	अपना
क्षेमः	७.	कल्याण होगा	द्रोहात्	१२.	अहित करने से
निज	४.	अपना (और)	तव	१३.	आपको
परयोः	५.	दूसरे का	कोपः	१४.	क्रोध होता है
कियान्	९.	कितना	पर	१६.	दूसरे को
अर्थः	१०.	प्रयोजन सिद्ध होगा ?	सम्पीडया	१७.	पीड़ा पहुँचाने से
स्व	१.	अपना (और)	च	१५.	और
परद्रुहा	२.	दूसरे का अहित करने वाले	तथा	८.	तथा
धर्मेण ।	३.	सकाम धर्म से	अधर्मः ॥	१८.	अधर्म होता है

श्लोकार्थ—अपना और दूसरे का अहित करने वाले सकाम धर्म से अपना और दूसरे का क्या कल्याण होगा ? तथा कितना प्रयोजन सिद्ध होगा ? अपना अहित करने से आपको क्रोध होता है । और दूसरे को पीड़ा पहुँचाने से अधर्म होता है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

न व्यभिचरति तवेक्षा यया ह्यभिहितो भागवतो धर्मः ।
स्थिरचरसत्त्वकदम्बेष्वपृथग्धियो यमुपासते त्वार्याः ॥४३॥

पदच्छेद— न व्यभिचरति तव ईक्षा यया हि अभिहितः भागवतः धर्मः ।
स्थिर चर सत्त्व कदम्बेषु पृथक् धियो यम् उपासते तु आर्याः ॥

शब्दार्थं—

न	७.	नहीं (परमार्थ से)	स्थिर	१०.	अचल
व्यभिचरति	८.	विचलित होती है (अतः)	चर	९.	चल
तव	१.	आपने	सत्त्व	११.	प्राणियों के
ईक्षा	३.	दृष्टि से	कदम्बेषु	१२.	समूह में
यया हि	२.	जिस	अपृथक्धियो	१३.	सम दृष्टि रखने वाले
अभिहितः	६.	उपदेश दिया है (वह दृष्टि)	यम्	१५.	उस (भागवत धर्म की)
भागवतः	४.	भागवत	उपासते	१६.	उपासना करते हैं
धर्मः	५.	धर्म का	तु आर्याः ॥	१४.	संत पुरुष

श्लोकार्थं—आपने जिस दृष्टि से भागवत धर्म का उपदेश दिया है, वह दृष्टि परमार्थ से विचलित नहीं होती है। अतः चल अचल प्राणियों के समूह में सम दृष्टि रखने वाले संत पुरुष उस भागवत धर्म की उपासना करते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

न हि भगवन्नघटितमिदं त्वद्दर्शनान्नृणामखिलपापक्षयः ।
यन्नामसकृच्छ्रवणात् पुल्कसकोऽपि विमुच्यते संसारात् ॥४४॥

पदच्छेद— न हि भगवन् अघटितम् इदम् त्वम् दर्शनात् नृणाम् अखिल पापक्षयः ।
यत् नाम सकृत् श्रवणात् पुल्कसकः अपि विमुच्यते संसारात् ॥

शब्दार्थ—

न हि	४.	नहीं है (क)	क्षयः ।	१०.	नाश हो जाता है
भगवन्	१.	हे भगवन् !	यत्	११.	आप के
अघटितम्	३.	असम्भव	नाम	१२.	नाम का
इदम्	२.	यह	सकृत्	१३.	एक बार
त्वत्	५.	आपके	श्रवणात्	१४.	श्रवण करने से
दर्शनात्	६.	दर्शन से	पुल्कसकः	१५.	चाण्डाल
नृणाम्	७.	मनुष्यों के	अपि	१६.	भी
अखिल	८.	समस्त	विमुच्यते	१८.	मुक्त हो जाता है
पाप	९.	पापों का	संसारात् ॥	१७.	संसार के (बन्धन से)

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! यह असम्भव नहीं है कि आपके दर्शन से मनुष्यों के समस्त पापों का नाश हो जाता है। आपके नाम का एक बार श्रवण करने से चाण्डाल भी संसार के बन्धन से मुक्त हो जाता है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

अथ भगवन् वयमधुना त्वदवलोकपरिमृष्टाशयमलाः ।
सुरऋषिणा यदुदितं तावकेन कथमन्यथा भवति ॥४५॥

पदच्छेद — अथ भगवन् वयम् अधुना त्वद् अवलोक परिमृष्ट आशय मलाः ।
सुर ऋषिणा यत् उदितम् तावकेन कथम् अन्यथा भवति ॥

शब्दार्थ -

अथ	१.	इसके बाद	**मलाः ।**	८.	पाप
भगवन्	२.	हे भगवन्	**सुरऋषिणा**	११.	देवर्षि नारद जी ने
वयम्	६.	हम लोगों के	**यत्**	१२.	जो
अधुना	३.	अब	**उदितम्**	१३.	कहा था (वह)
त्वद्	४.	आपके	**तावकेन**	१०.	आप से
अवलोक	५.	दर्शन से	**कथम्**	१४.	कैसे
परिमृष्ट	९.	धुल गये हैं	**अन्यथा**	१५.	मिथ्या
आशय	७.	चित्त के	**भवति ॥**	१६.	हो सकता है

श्लोकार्थ—इसके बाद हे भगवन् ! अब आपके दर्शन से हम लोगों के चित्त के पाप धुल गये हैं । आपसे देवर्षि नारद जी ने जो कहा था । वह कैसे मिथ्या हो सकता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

विदितमनन्त समस्तं तव जगदात्मनो जनैरिहाचरितम् ।
विज्ञाप्यं परमगुरोः कियदिव सवितुरिव खद्योतैः ॥४६॥

पदच्छेद— विदितम् अनन्त समस्तम् तव जगत् आत्मनः जनैः इह आचरितम् ।
विज्ञाप्यम् परमगुरोः कियत् इव सवितुः इव खद्योतैः ॥

शब्दार्थ—

विदितम्	२.	ज्ञात है कि	**आचरितम् ।**	९.	जो आचरण हैं (उसे)
अनन्त	१.	हे अनन्त !	**विज्ञाप्यम्**	१०.	आप जानते हैं
समस्तम्	३.	सम्पूर्ण	**परमगुरोः**	११.	परम गुरु आपसे
तव	५.	आपकी	**कियत्**	१२.	कुछ कहना
जगत्	४.	संसार	**इव**	१३.	वैसा ही है
आत्मनः	६.	आत्मा है	**सवितुः**	१५.	सूर्य को
जनैः	८.	लोग	**इव**	१४.	जैसे
इह	७.	यहाँ	**खद्योतैः ॥**	१६.	जुगनू का प्रकाश देना

श्लोकार्थ—हे अनन्त ! ज्ञात है कि संसार आपका अत्मा है । यहाँ लोग जो आचरण करते हैं, उसे आप जानते हैं । परमगुरु आप से कुछ कहना वैसा ही है । जैसे सूर्य को जुगनू का प्रकाश देना ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

नमस्तुभ्यं भगवते सकलजगत्स्थितिलयोदयेशाय ।
दुरवसितात्मगतये कुयोगिनां भिदा परमहंसाय ॥४७॥

पदच्छेद— नमः तुभ्यम् भगवते सकल जगत् स्थिति लय उदय ईशाय ।
दुरवस्थित आत्मगतये कुयोगिनाम् भिदा परम हंसाय ॥

शब्दार्थ—

नमः	१४.	नमस्कार है	उदयईशाय ।	५.	उत्पत्ति के स्वामी (तथा)
तुभ्यम्	१२.	आप	दुरवस्थित	८.	न जानने योग्य
भगवते	१३.	भगवान् को	आत्मगतये	९.	अज्ञात स्वरूप वाले
सकल	१.	सम्पूर्ण	कुयोगिनाम्	६.	कुयोगियों की
जगत्	२.	संसार की	भिदा	७.	भेद दृष्टि के कारण
स्थति	३.	स्थिति	परम	१०.	परम
लय	४.	प्रलय	हंसाय ॥	११.	हंस स्वरूप

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण संसार की स्थिति, प्रलय, उत्पत्ति के स्वामी तथा कुयोगियों की भेद दृष्टि के कारण न जानने योग्य अज्ञात स्वरूप वाले परम हंस स्वरूप आप भगवान् को नमस्कार है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यं वै श्वसन्तमनु विश्वसृजः श्वसन्ति यं चेकितानमनु चित्तय उच्चकन्ति ।
भूमण्डलं सर्षपायति यस्य मूर्ध्नि तस्मै नमो भगवतेऽस्तु सहस्रमूर्ध्ने ॥४८॥

पदच्छेद—यम् वै श्वसन्तम् अनु विश्वसृजः श्वसन्ति यम् चेकितानम् अनुच्चित्तये उच्चकन्ति ।
भूमण्डलम् सर्षपायति यस्य मूर्ध्नि तस्मै नमः भगवते अस्तु सहस्र मूर्ध्ने ॥

शब्दार्थ—

यम् वै	१.	जिसके	भूमण्डलम्	१२.	पृथ्वी मण्डल
श्वसन्तम् अनु	२.	सांस लेने के पश्चात्	सर्षपायति	१३.	सरसों के दाने के समान मालूम होता है
विश्वसृजः	३.	लोकपाल	यस्य	१०.	जिसके
श्वसन्ति	४.	सांस लेते हैं	मूर्ध्नि	११.	सिर पर
यम्	५.	जिसके	तस्मै	१४.	उस
चेकितानम्	६.	जानने के	नमः	१७.	नमस्कार
अनु	७.	पश्चात्	भगवते	१६.	भगवान् को
चित्तये	८.	ज्ञानेन्द्रियाँ	अस्तु	१८.	है
उच्चकन्ति ।	९.	जानने में समर्थ होती हैं	सहस्रमूर्ध्ने ॥	१५.	हजार सिर वाले

श्लोकार्थ—जिसके सांस लेने के पश्चात् लोकपाल सांस लेते हैं। जिसके जानने के पश्चात् ज्ञानेन्द्रियाँ जानने में समर्थ होती हैं। जिसके सिर पर पृथ्वीमण्डल सरसों के दाने के समान मालूम होता है; उस हज.र सिर वाले भगवान् को नमस्कार है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— संस्तुतो भगवानेवमनन्तस्तमभाषत ।
विद्याधरपतिं प्रीतश्चित्रकेतुं कुरूद्वह ॥४६॥

पदच्छेद— संस्तुतः भगवान् एवम् अनन्तः तम् अभाषत ।
विद्याधर पतिम् प्रीतः चित्रकेतुम् कुरूद्वह ॥

शब्दार्थ—

संस्तुतः	३.	स्तुति किये जाने पर	विद्याधर	८.	विद्याधरों के
भगवान्	५.	भगवान् ने	पतिम्	६.	स्वामी
एवम्	२.	इस प्रकार	प्रीतः	६.	प्रसन्न होकर
अनन्तः	४.	अनन्त	चित्रकेतुम्	१०.	चित्रकेतु से
तम्	७.	उस	कुरूद्वह ॥	१.	हे परीक्षित् !
अभाषत ।	११.	कहा			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इस प्रकार स्तुति किये जाने पर अनन्त भगवान् ने प्रसन्न होकर उस विद्याधरों के स्वामी चित्रकेतु से कहा ॥

पञ्चाशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—यन्नारदाङ्गिरोभ्यां ते व्याहृतं मेऽनुशासनम् ।
संसिद्धोऽसि तया राजन् विद्यया दर्शनाच्च मे ॥५०॥

पदच्छेद— यत् नारद अङ्गिरोभ्याम् ते व्याहृतम् मे अनु शासनम् ।
संसिद्धः असि तया राजन् विद्यया दर्शनात् च मे ॥

शब्दार्थ—

यत्	४.	जो	संसिद्धः असि	१४.	भली-भाँति शुद्ध हो चुके हो
नारद	२.	नारद (और)	तया	६.	उस
अङ्गिरोभ्याम्	३.	अङ्गिरा ने	राजन्	१.	हे राजन् !
ते	५.	तुम्हें	विद्यया	१०.	विद्या से
व्याहृतम्	८.	उपदेश दिया है	दर्शनात्	१३.	दर्शन से (तुम)
मे	६.	मेरी	च	११.	और
अनुशासनम् ।	७.	विद्या का	मे ॥	१२.	मेरे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! नारद और अङ्गिरा ने जो तुम्हें मेरी विद्या का उपदेश दिया है, उस विद्या से और मेरे दर्शन से तुम भली-भाँति शुद्ध हो चुके हो ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

अहं वै सर्वभूतानि भूतात्मा भूतभावनः ।
शब्दब्रह्म परं ब्रह्म ममोभे शाश्वती तनू ॥५१॥

पदच्छेद— अहम् वै सर्वभूतानि भूत आत्मा भूत भावनः ।
शब्द ब्रह्म परम् ब्रह्म मम उभे शाश्वती तनू ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१.	मैं	भावनः ।	८.	पालन कर्ता हूँ
वै	२.	निश्चित रूप से	शब्द ब्रह्म	९.	शब्द ब्रह्म (और)
सर्व	३.	सभी	परं ब्रह्म	१०.	परं ब्रह्म में
भूतानि	४.	प्राणियों का स्वरूप	मम	१२.	मेरे
भूत	५.	प्राणियों की	उभे	११.	दोनों
आत्मा	६.	आत्मा (और)	शाश्वती	१३.	सनातन
भूत	७.	प्राणियों का	तनू ॥	१४.	शरीर हैं

श्लोकार्थ—मैं निश्चित रूप से सभी प्राणियों का स्वरूप, प्राणियों की आत्मा और प्राणियों का पालनकर्ता हूँ। शब्द ब्रह्म और परं ब्रह्म ये दोनों मेरे सनातन शरीर हैं ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

लोके विततमात्मानं लोकं चात्मनि सन्ततम् ।
उभयं च मया व्याप्तं मयि चैवोभयं कृतम् ॥५२॥

पदच्छेद— लोके विततम् आत्मानम् लोकम् च आत्मनि सन्ततम् ।
उभयम् च मया व्याप्तम् मयि च एव उभयम् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

लोके	१.	संसार में	च	८.	और
विततम्	३.	व्याप्त है	मया	१०.	मैं
आत्मानम्	२.	आत्मा	व्याप्तम्	११.	व्याप्त हूँ
लोकम्	६.	संसार	मयि	१३.	मुझ में
च	४.	और	च	१२.	और
आत्मनि	५.	आत्मा में	एव	१४.	ही
सन्ततम् ।	७.	स्थित है	उभयम्	१५.	ये दोनों
उभयम्	९.	इन दोनों (कार्य-कारण रूप जगत् में)	कृतम् ॥	१६.	कल्पित हैं

श्लोकार्थ—संसार में आत्मा व्याप्त है। और आत्मा में संसार स्थित है। और इन दोनों कार्य-कारण रूप जगत् में मैं व्याप्त हूँ। और मुझ में ही ये दोनों कल्पित हैं ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

यथा सुषुप्तः पुरुषो विश्वं पश्यति चात्मनि ।
आत्मानमेकदेशस्थं मन्यते स्वप्न उत्थितः ॥५३॥

पदच्छेद— यथा सुषुप्तः पुरुषः विश्वम् पश्यति च आत्मनि ।
आत्मानम् एक देश स्थम् मन्यते स्वप्न उत्थितः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	**आत्मानम्**	१०. अपने को
सुषुप्तः	२. सोया हुआ	**एक**	११. एक
पुरुषः	३. पुरुष	**देश**	१२. भाग में
विश्वम्	४. संसार को	**स्थम्**	१३. स्थित
पश्यति	६. देखता है	**मन्यते**	१४. मानता है
च	७. और	**स्वप्न**	८. स्वप्न
आत्मनि ।	५. अपने में	**उत्थितः ॥**	९. टूट जाने पर

श्लोकार्थ—जैसे सोया हुआ पुरुष संसार को अपने में देखता है। और स्वप्न टूट जाने पर अपने को एक देश में स्थित मानता है ।

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

एवं जागरणादीनि जीवस्थानानि चात्मनः ।
मायामात्राणि विज्ञाय तद्द्रष्टारं परं स्मरेत् ॥५४॥

पदच्छेद— एवम् जागरण आदीनि जीव स्थानामि च आत्मनः ।
माया मात्राणि विज्ञाय तद् द्रष्टारम् परम् स्मरेत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२. इस प्रकार	**माया**	८. माया
जागरण	४. जाग्रत्	**मात्राणि**	९. मात्र
आदीनि	५. आदि	**विज्ञाय**	१०. जानकर
जीव	३. जीव की	**तद्**	११. सब के
स्थानीय	६. अवस्थाओं को	**द्रष्टारम्**	१२. साक्षी
च	१. और	**परम्**	१३. परमेश्वर का
आत्मनः ।	७. परमात्मा की	**स्मरेत् ॥**	१४. स्मरण करे

श्लोकार्थ—और इस प्रकार जाग्रत् आदि जीव की अवस्थाओं को परमात्मा की माया मात्र जानकर सबके साक्षी परमेश्वर का स्मरण करे ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

येन प्रसुप्तः पुरुषः स्वापं वेदात्मनस्तदा ।
सुखं च निर्गुणं ब्रह्म तमात्मानमवेहि माम् ॥५५॥

पदच्छेद — येन प्रसुप्तः पुरुषः स्वापम् वेद आत्मनः तदा ।
सुखम् च निर्गुणम् ब्रह्म तम् आत्मानम् अवेहि माम् ।।

शब्दार्थ—

येन	२.	जिससे	**सुखम्**	८.	सुख को
प्रसुप्तः	३.	सोया हुआ	**च**	७.	और
पुरुषः	४.	मनुष्य	**निर्गुणम्**	१२.	निर्गुण
स्वापम्	६.	निद्रा	**ब्रह्म**	१३.	ब्रह्म को
वेद	९.	जानता है	**तम्**	१०.	उस
आत्मनः	५.	अपनी	**आत्मानम्**	१४.	अपनी आत्मा
तदा ।	१.	तब	**अवेहि**	१५.	समझो
			माम् ।।	११.	मुझ

श्लोकार्थ—तब जिससे सोया हुआ मनुष्य अपनी निद्रा और सुख को जानता है; उस मुझ निर्गुण ब्रह्म को अपनी आत्मा समझो ।।

षष्ठपञ्चाशः श्लोकः

उभयं स्मरतः पुंसः प्रस्वापप्रतिबोधयोः ।
अन्वेति व्यतिरिच्येत तज्ज्ञानं ब्रह्म तत् परम् ॥५६॥

पदच्छेद— उभयम् स्मरतः पुंसः प्रस्वाप प्रति बोधयोः ।
अन्वेति व्यतिरिच्येत तत् ज्ञानम् ब्रह्म तत् परम् ।।

शब्दार्थ—

उभयम्	४.	इन दोनों (अवस्थाओं का)	**व्यतिरिच्येत**	७.	अलग है
स्मरतः	५.	अनुभव करता हुआ	**तत्**	८.	वही
पुंसः	१.	पुरुष (इसमें)	**ज्ञानम्**	९.	ज्ञान
प्रस्वाप	२.	निद्रा और	**ब्रह्म**	१२.	ब्रह्म है
प्रतिबोधयोः ।	३.	जाग्रत्	**तत्**	१०.	वही
अन्वेति	६.	युक्त होते हुये भी वस्तु में उससे	**परम्**	११.	परम्

श्लोकार्थ—पुरुष निद्रा और जाग्रत् इन दोनों अवस्थाओं का अनुभव करता हुआ, इनसे युक्त होते हुये भी वास्तव में उससे अलग है । वही ज्ञान है, वही परम् ब्रह्म है ।।

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

यदेतद्विस्मृतं पुंसो मद्भावं भिन्नमात्मनः ।
ततः संसार एतस्य देहाद्देहो मृतेर्मृतिः ।।५७।।

पदच्छेद— यत् एतत् विस्मृतम् पुंसः मद् भावम् भिन्नम् आत्मनः ।
ततः संसारे एतस्य देहात् देहः मृतेः मृतिः ।।

शब्दार्थ—

यत्	१.	जो	ततः	८.	उससे
एतत्	३.	इस	संसार	१०.	संसार चक्र में आना पड़ता है (तथा)
विस्मृतम्	५.	भूल जाता है (और)	एतस्य	९.	इस जीवन को
पुंसः मद्	२.	पुरुष मेरे	देहात्	११.	शरीर से
भावम्	४.	स्वरूप को	देहः	१२.	शरीर की (और)
भिन्नम्	७.	अलग (मानता है)	मृतेः	१३.	मृत्यु से
आत्मनः ।	६.	अपने को	मृतिः ।।	१४.	मृत्यु की (प्राप्ति होती रहती है)

श्लोकार्थ—जो पुरुष मेरे इस स्वरूप को भूल जाता है । और अपने को अलग मानता है । उससे इस जीव को संसार चक्र में आना पड़ता है । तथा शरीर से शरीर की और मृत्यु से मृत्यु की प्राप्ति होती है ।।

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

लब्ध्वेह मानुषीं योनिं ज्ञानविज्ञानसम्भवाम् ।
आत्मानं यो न बुद्ध्येत न क्वचिच्छममाप्नुयात् ।।५८।।

पदच्छेद— लब्ध्वा इह मानुषीम् योनिम् ज्ञान विज्ञान सम्भवाम् ।
आत्मानम् यः न बुद्धयेत न क्वचित् शमम् आप्नुयात् ।।

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	७.	प्राप्त करके	आत्मानम्	९.	अपने को
इह	१.	इस संसार में	यः	८.	जो
मानुषीम्	५.	मनुष्य	न बुद्धयेत	१०.	नहीं जानता है (वह)
योनिम्	६.	योनि को	न	१३.	नहीं
ज्ञान	२.	ज्ञान (और)	क्वचित्	११.	कहीं (भी)
विज्ञान	३.	विज्ञान के	शमम्	१२.	शान्ति को
सम्भवाम् ।	४.	उत्पत्ति स्थान	आप्नुयात् ।।	१४.	पा सकता है

श्लोकार्थ—इस संसार में ज्ञान और विज्ञान के उत्पत्ति-स्थान, मनुष्य योनि को प्राप्त करके जो अपने को नहीं जानता है, वह कहीं भी शान्ति नहीं पा सकता है ।।

एकोनषष्टितमः श्लोकः

स्मृत्वेहायां परिक्लेशं ततः फलविपर्ययम् ।
अभयं चाप्यनीहायां सङ्कल्पाद्विरमेत्कविः ॥५९॥

पदच्छेद— स्मृत्वा ईहायाम् परिक्लेशम् ततः फलविपर्ययम् ।
अभयम् च अपि अनीहायाम् सङ्कल्पात् विरमेत् कविः ॥

शब्दार्थ—

स्मृत्वा	१.	स्मरण करके	अभयम्	११.	निर्भयता होती है (अतः)
ईहायाम्	२.	इच्छा करने पर	च	८.	और
परि	३.	परम	अपि	९.	भी
क्लेशम्	४.	दुःख (तथा)	अनीहायाम्	१०.	इच्छा न करने पर
ततः	५.	उसके बाद	सङ्कल्पात्	१३.	संकल्प से
फल	७.	फल मिलता है	विरमेत्	१४.	उपरत हो जाय
विपर्ययम् ।	६.	विपरीत	कविः ॥	१२.	विद्वान् मनुष्य

श्लोकार्थ—सांसारिक वस्तुओं का स्मरण करके इच्छा करने पर परम दुःख तथा उसके बाद विपरीत फल मिलता है। और भी इच्छा न करने पर निर्भयता होती है। अतः विद्वान् मनुष्य सङ्कल्प से उपरत हो जाय ॥

षष्टितमः श्लोकः

सुखाय दुःखमोक्षाय कुर्वाते दम्पती क्रियाः ।
ततोऽनिवृत्तिरप्राप्तिर्दुःखस्य च सुखस्य च ॥६०॥

पदच्छेद— सुखाय दुःख मोक्षाय कुर्वाते दम्पती क्रियाः ।
ततः अनिवृत्तिः अप्राप्तिः दुःखस्य च सुखस्य च ॥

शब्दार्थ—

सुखाय	१.	सुख के लिये (और)	ततः	७.	उस
दुःख	२.	दुःख से	अनिवृत्तिः	९.	छुटकारा नहीं मिलता है
मोक्षाय	३.	मुक्ति पाने के लिए	अप्राप्तिः	१२.	प्राप्ति नहीं होती है
कुर्वाते	६.	करते हैं (किन्तु)	दुःखस्य च	८.	दुःख से
दम्पती	४.	स्त्री पुरुष	सुखस्य	११.	सुख की
क्रियाः ।	५.	कर्म	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—सुख के लिये और दुःख से मुक्ति पाने के लिये स्त्री पुरुष कर्म करते हैं। किन्तु उस दुःख से छुटकारा नहीं मिलता है। और सुख की प्राप्ति नहीं होती है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

एवं विपर्ययं बुद्ध्वा नृणां विज्ञाभिमानिनाम् ।
आत्मनश्च गतिं सूक्ष्मां स्थानत्रयविलक्षणाम् ॥६१॥

पदच्छेद— एवम् विपर्ययम् बुद्ध्वा नृणाम् विज्ञअभिमानिनाम् ।
आत्मनः च गतिम् सूक्ष्माम् स्थान त्रय विलक्षणाम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	आत्मनः	७.	आत्मा की
विपर्ययम्	५.	विपरीत फल मिलता है	च	१०.	तथा
बुद्ध्वा	६.	ऐसा समझना चाहिये	गतिम्	८.	गति
नृणाम्	४.	मनुष्यों को	सूक्ष्माम्	९.	सूक्ष्म है
विज्ञ	२.	अपने को बुद्धिमान्	स्थान	१२.	अवस्थाओं से
अभिमानिनाम् ।	३.	जानने वाले	त्रय	११.	जाग्रत्, स्वप्न, सुषप्ति, इन तीनों
			विलक्षणाम् ॥	१३.	विचित्र है

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने को बुद्धिमान् जानने वाले मनुष्यों को विपरीत फल मिलता है । ऐसा समझना चाहिये । क्योंकि आत्मा की गति सूक्ष्म है । तथा जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं से विचित्र है ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

दृष्टश्रुताभिर्मात्राभिर्निर्मुक्तः स्वेन तेजसा ।
ज्ञानविज्ञानसन्तुष्टो मद्भक्तः पुरुषो भवेत् ॥६२॥

पदच्छेद— दृष्ट श्रुताभिः मात्राभिः निर्मुक्तः स्वेन तेजसा ।
ज्ञान विज्ञान सन्तुष्टः मद् भक्तः पुरुषः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट	४.	देखे हुये	ज्ञान	८.	ज्ञान (और)
श्रुताभिः	५.	सुने हुये	विज्ञान	९.	विज्ञान से
मात्राभिः	६.	विषय भोगों से	सन्तुष्ट	१०.	सन्तुष्ट होकर
निर्मुक्तः	७.	मुक्त हो जावे (तथा)	मद्	११.	मेरा
स्वेन	२.	अपनी	भक्तः	१२.	भक्त
तेजसा ।	३.	विवेक बुद्धि के द्वारा	पुरुषः	१.	मनुष्य
			भवेत् ॥	१३.	हो जाये

श्लोकार्थ—मनुष्य अपनी विवेक बुद्धि के द्वारा देखे हुये, सुने हुये विषय भोगों से मुक्त हो जाये । तथा ज्ञान और विज्ञान से सन्तुष्ट होकर मेरा भक्त हो जाये ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

एतावानेव मनुजैर्योगनैपुणबुद्धिभिः ।
स्वार्थः सर्वात्मना ज्ञेयो यत्परात्मैकदर्शनम् ॥६३॥

पदच्छेद— एतावान् एव मनुजैः योग नैपुण बुद्धिभिः ।
स्वार्थः सर्वात्मना ज्ञेयः यत् परआत्मा एक दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	५.	इतना	स्वार्थः	८.	अपना स्वार्थ
एव	६.	ही	सर्वात्मना	७.	सब प्रकार से
मनुजैः	४.	मनुष्यों को	ज्ञेयः	९.	जानना चाहिये
योग	१.	योग मार्ग में	यत् परआत्मा	१०.	कि परमात्मा, जीवात्मा की
नैपुण	२.	निपुण	एक	११.	एकता का
बुद्धिभिः ।	३.	बुद्धि वाले	दर्शनम् ॥	१२.	अनुभव करे

श्लोकार्थ—योग मार्ग में निपुण बुद्धि वाले मनुष्यों को इतना ही सब प्रकार से अपना स्वार्थ जानना चाहिये कि जीवात्मा, परमात्मा का अनुभव करे ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

त्वमेतच्छ्रद्धया राजन्नप्रमत्तो वचो मम ।
ज्ञानविज्ञानसम्पन्नो धारयन्नाशु सिध्यसि ॥६४॥

पदच्छेद— त्वम् एतत् श्रद्धया राजन् अप्रमत्तः वचः मम ।
ज्ञान विज्ञान सम्पन्नः धारयन् आशु सिध्यति ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	तुम	ज्ञान	९.	ज्ञान
एतत्	३.	यह	विज्ञान	१०.	विज्ञान से
श्रद्धया	७.	श्रद्धा से	सम्पन्नः	११.	सम्पन्न होकर
राजन्	१.	हे राजन् ! यदि	धारयन्	८.	धारण करोगे तो
अप्रमत्तः	६.	सावधान होकर	आशु	१२.	शीघ्र ही
वचः	५.	वचन	सिध्यति ॥	१३.	सिद्ध हो जाओगे
मम ।	४.	मेरा			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यदि तुम यह मेरा वचन सावधान होकर श्रद्धा से धारण करोगे तो ज्ञान,विज्ञान से सम्पन्न होकर शीघ्र ही सिद्ध हो जाओगे ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

आश्वास्य भगवानित्थं चित्रकेतुं जगद्गुरुः ।
पश्यतस्तस्य विश्वात्मा ततश्चान्तर्दधे हरिः ॥६५॥

पदच्छेद — आश्वास्य भगवान् इत्थम् चित्रकेतुम् जगद् गुरुः ।
पश्यतः तस्य विश्वात्मा ततः च अन्तः दधे हरिः ॥

शब्दार्थ—

आश्वास्य	८. समझा बुझाकर	तस्य	१०. उसके
भगवान्	४. भगवान्	विश्वात्मा	३. विश्वरूप
इत्थम्	७. इस प्रकार	ततः	१. तदनन्तर
चित्रकेतुम्	६. चित्रकेतु को	च	९. और
जगद् गुरुः ।	२. संसार के गुरु	अन्तः दधे	१२. अन्तर्ध्यान हो गये
पश्यतः	११. देखते-देखते	हरिः ॥	५. विष्णु

श्लोकार्थ—तदनन्तर संसार के गुरु विश्वरूप भगवान् विष्णु चित्रकेतु को इस प्रकार समझा बुझाकर और उसके देखते-देखते अन्तर्ध्यान हो गये ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठे स्कन्धे चित्रकेतोः परमात्मदर्शनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥



षष्ठः स्कन्धः

सप्तदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

यतश्चान्तर्हितोऽनन्तस्तस्यै कृत्वा दिशे नमः ।
विद्याधरश्चित्रकेतुश्चचार गगनेचरः ॥ १ ॥

पदच्छेद— यतः च अन्तर्हितः अनन्तः तस्यै कृत्वा दिशे नमः ।
विद्याधरः चित्रकेतुः चचार गगने चरः ॥

शब्दार्थ—

यतः	२.	जिधर	दिशे	६.	दिशा को
च	१.	और	नमः ।	७.	नमस्कार
अन्तर्हितः	४.	अन्तर्ध्यान हुये थे	विद्याधरः	९.	विद्याधर
अनन्तः	३.	भगवान् अनन्त	चित्रकेतुः	१०.	चित्रकेतु
तस्यै	५.	उस	चचार	१२.	विचरने लगा
कृत्वा	८.	करके	गगनेचरः ॥	११.	आकाश मार्ग में

श्लोकार्थ—और जिधर भगवान् अनन्त अन्तर्ध्यान हुये थे, उस दिशा को नमस्कार करके विद्याधर चित्रकेतु आकाश मार्ग में विचरने लगा ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—स लक्षं वर्षलक्षाणामव्याहतबलेन्द्रियः ।
स्तूयमानो महायोगी मुनिभिः सिद्धचारणैः ॥ २ ॥

पदच्छेद— सः लक्षम् वर्ष लक्षाणाम् व्याहृत बल इन्द्रियः ।
स्तूयमानः महायोगी मुनिभिः सिद्ध चारणैः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	इन्द्रियः ।	७.	इन्द्रियों से
लक्षम्	३.	लाख	स्तूयमानः	१२.	स्तुति किया जाता हुआ (विचरने लगा)
वर्ष	५.	(करोड़ों) वर्षों तक	महायोगी	२.	महान् योगी (चित्रकेतु)
लक्षाणाम्	४.	लाखों	मुनिभिः	९.	मुनियों
अव्याहत	८.	युक्त रह कर	सिद्ध	१०.	सिद्धों और
बल	६.	बल और	चारणैः ॥	११.	चारणों से

श्लोकार्थ—वह महान् योगी चित्रकेतु लाख-लाखों (करोड़ों) वर्षों तक बल और इन्द्रियों से युक्त रह कर मुनियों, सिद्धो और चारणों से स्तुति किया जाता हुआ विचरने लगा ॥

तृतीयः श्लोकः

कुलाचलेन्द्रद्रोणीषु नानासङ्कल्पसिद्धिषु।
रेमे विद्याधरस्त्रीभिर्गापयन् हरिमीश्वरम्॥ ३॥

पदच्छेद— कुला चलेन्द्र द्रोणीषु नाना सङ्कल्प सिद्धिषु।
रेमे विद्याधर स्त्रीभिः गापयन् हरिम् ईश्वरम्॥

शब्दार्थ –

कुल	४.	कुल	**रेमे**	७.	विहार करते हुये
अचलेन्द्र	५.	पर्वतों में श्रेष्ठ (सुमेरु पर्वत की)	**विद्याधर**	८.	विद्याधर
द्रोणीषु	६.	घाटियों में	**स्त्रीभिः**	९.	स्त्रियों के साथ
नाना	१.	अनेक प्रकार के	**गापयन्**	१२.	लीलाओं का गायन करता रहा
सङ्कल्प	२.	मनोरथों को	**हरिम्**	११.	विष्णु की
सिद्धिषु।	३.	देने वाली	**ईश्वरम्॥**	१०.	प्रभु भगवान्

श्लोकार्थ—अनेक प्रकार के मनोरथों को देने वाली कुल पर्वतों में श्रेष्ठ सुमेरु पर्वत की घाटियों में विहार करते हुये विद्याधर स्त्रियों के साथ प्रभु भगवान् विष्णु की लीलाओं का गायन करता रहा॥

चतुर्थः श्लोकः

एकदा स विमानेन विष्णुदत्तेन भास्वता।
गिरिशं ददृशे गच्छन् परीतं सिद्धचारणैः॥ ४॥

पदच्छेद— एकदा सः विमानेन विष्णुदत्तेन भास्वता।
गिरिशम् ददृशे गच्छन् परीतम् सिद्ध चारणैः॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक बार	**गिरीशम्**	११.	महादेव जी को
सः	७.	उसने	**ददृशे**	१२.	देखा
विमानेन	५.	विमान से	**गच्छन्**	६.	जाते हुये
विष्णु	२.	विष्णु के	**परीतम्**	१०.	घिरे हुये
दत्तेन	३.	दिये हुये	**सिद्ध**	८.	सिद्ध (और)
भास्वतः।	४.	चमकीले	**चारणैः॥**	९.	चारणों से

श्लोकार्थ—एक बार विष्णु के दिये हुये चमकीले विमान से जाते हुये उसने सिद्ध और चारणों से घिरे महादेव जी को देखा॥

पञ्चमः श्लोकः

आलिङ्गयाङ्कीकृतां देवीं बाहुना मुनिसंसदि।
उवाच देव्याः शृण्वत्या जहासोच्चैस्तदन्तिके॥ ५॥

पदच्छेद — आलिङ्ग्य अङ्कीकृतम् देवीम् बाहुना मुनिसंसदि।
उवाच देव्याः शृण्वत्याः जहास उच्चैः तद् अन्तिके॥

शब्दार्थ

आलिङ्ग्य	६.	आलिङ्गन बद्ध (किये देखकर)	उवाच	१२.	बोला
अङ्कीकृताम्	४.	गोद में बैठा कर	देव्याः	७.	देवी पार्वती को
देवीम्	३.	पार्वती जी को	शृण्वत्याः	८.	सुना कर (और)
बाहुना	५.	एक हाथ से	जहास	११.	हंसा (और)
मुनि	१.	मुनियों की	उच्चैः	१०.	उच्च स्वर से
संसदि।	२.	सभा में (शंकर द्वारा)	तद् अन्तिके॥	९.	उनके पास जाकर

श्लोकार्थ—वह मुनियों की सभा में शंकर द्वारा पार्वती जी को गोद में बैठा कर एक हाथ से आलिङ्गनबद्ध देखकर देवी पार्वती को सुनाकर और उनके पास जाकर उच्च स्वर से हंसा और बोला॥

षष्ठः श्लोकः

चित्रकेतुरुवाच—एष लोकगुरुः साक्षाद्धर्मं वक्ता शरीरिणाम्।
आस्ते मुख्यः सभायां वै मिथुनीभूय भार्यया॥ ६॥

पदच्छेद— एष लोक गुरुः साक्षात् धर्मं वक्ता शरीरिणम्।
आस्ते मुख्यः सभायाम् वै मिथुनीभूय भार्यया॥

शब्दार्थ—

एष	१.	ये	आस्ते	१०.	विराजमान हैं
लोकगुरुः	२.	संसार के गुरु	मुख्यः	६.	श्रेष्ठ होकर
साक्षात्	३.	साक्षात्	सभायाम् वै	७.	सभा में
धर्म वक्ता	४.	धर्म के शिक्षक	मिथुनीभूय	९.	गोद में बैठा कर
शरीरिणाम्।	५.	प्राणियों में	भार्यया॥	८.	पत्नी को

श्लोकार्थ—ये संसार के गुरु साक्षात् धर्म के शिक्षक प्राणियों में श्रेष्ठ होकर सभा में पत्नी को गोद में बैठा कर विराजमान हैं॥

सप्तमः श्लोकः

जटाधरस्तीव्रतपा　　　ब्रह्मवादिसभापतिः ।
अङ्कीकृत्य स्त्रियं चास्ते गतह्रीः प्राकृतो यथा ॥ ७ ॥

पदच्छेद— जटाधरः तीव्र तपाः ब्रह्मवादि सभापतिः ।
अङ्कीकृत्य स्त्रियम् च आस्ते गतह्रीः प्राकृतः यथा ॥

शब्दार्थ—

जटाधरः	१. जटाधारी	**स्त्रियम्**	६. स्त्री को
तीव्र	२. बहुत बड़े	**च**	८. और
तपाः	३. तपस्वी	**आस्ते**	१२. विराजमान है
ब्रह्मवादि	४. ब्रह्मवादियों के	**गतह्रीः**	९. निर्लज्ज
सभापतिः	५. सभापति होकर	**प्राकृत**	१०. साधारण पुरुष के
अङ्कीकृत्य ।	७. गोद में बैठा कर	**यथा ॥**	११. समान

श्लोकार्थ—जटाधारी, बहुत बड़े तपस्वी, ब्रह्मवादियों के सभापति होकर स्त्री को गोद में बैठा कर और निर्लज्ज साधारण पुरुष के समान विराजमान हैं ।

अष्टमः श्लोकः

प्रायशः प्राकृताश्चापि स्त्रियं रहसि बिभ्रति ।
अयं महाव्रतधरो बिभर्ति सदसि स्त्रियम् ॥ ८ ॥

पदच्छेद— प्रायशः प्राकृताः च अपि स्त्रियम् रहसि बिभ्रति ।
अयम् महाव्रतधरः बिभर्ति सदसि स्त्रियम् ॥

शब्दार्थ—

प्रायशः	१. प्रायः	**बिभ्रति ।**	६. धारण करते हैं
प्राकृताः	२. साधारण पुरुष	**अयम्**	८. यह
च	७. और	**महाव्रतधरः**	९. महान् व्रतधारी होकर भी
अपि	३. भी	**बिभर्ति**	१२. धारण किये हुये है
स्त्रियम्	५. स्त्री को	**सदसि**	१०. सभा में
रहसि	४. एकान्त में	**स्त्रियम् ॥**	११. स्त्री को

श्लोकार्थ प्रायः साधारण पुरुष भी एकान्त में स्त्री को धारण करते हैं । और यह महान् व्रतधारी होकर भी सभा में स्त्री को धारण किये हुये हैं ।

नवमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—भगवानपि तच्छ्रुत्वा प्रहस्यागाधधीर्नृप ।
तूष्णीं बभूव सदसि सभ्याश्च तदनुव्रताः ॥ ९ ॥

पदच्छेद— भगवान् अपि तत् श्रुत्वा प्रहस्य अगाधधीः नृप ।
तूष्णीम् बभूव सदसि सभ्याः च तत् अनुव्रताः ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	३.	भगवान् शंकर	तूष्णीम्	८.	चुप
अपि	४.	भी	बभूव	९.	रह गये
तत्	५.	उसकी	सदसि	११.	सभा में
श्रुत्वा	६.	बात सुनकर (और)	सभ्याः	१४.	सदस्यगण भी (चुप रहे)
प्रहस्य	७.	हंस कर	च	१०.	और
अगाधधीः	२.	अथाह बुद्धि वाले	तत्	१२.	उनके
नृप ।	१.	हे राजन् !	अनुव्रताः ॥	१३.	अनुयायी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! अथाह बुद्धि वाले भगवान् शंकर भी उसकी बात सुनकर और हंस कर चुप रह गये । और सभा में उनके अनुयायी सदस्यगण भी चुप रहे ॥

दशमः श्लोकः

इत्यतद्वीर्यविदुषि ब्रुवाणे बह्वशोभनम् ।
रुषाऽऽह देवी धृष्टाय निर्जितात्माभिमानिने ॥१०॥

पदच्छेद— इति अतद् वीर्य अविदुषि ब्रुवाणे बहु अशोभनम् ।
रुषा आह देवी धृष्टाय निर्जित आत्मा अभिमानिने ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	रुषा	१२.	क्रोध से
अतद्	२.	उनकी	आह	१३.	कहा
वीर्य	३.	शक्ति को	देवी	५१.	देवी पार्वती ने
अविदुषि	४.	न जानने वाले	धृष्टाय	८.	धृष्ट (एवम्)
ब्रुवाणे	७.	बोलते हुये	निर्जितआत्म	९.	जितेन्द्रिय होने का
बहु	५.	बहुत	अभिमानिने ॥	१०.	अभिमानी (चित्रकेतु से)
अशोभनम् ।	६.	अनुचित			

श्लोकार्थ—इस प्रकार उनकी शक्ति को न जानने वाले बहुत अनुचित बोलते हुये धृष्ट एवम् जितेन्द्रिय होने के अभिमानी चित्रकेतु से देवी पार्वती ने क्रोध से कहा ॥

एकादशः श्लोकः

अयं किमधुना लोके शास्ता दण्डधरः प्रभुः ।
अस्मद्विधानां दुष्टानां निर्लज्जानां च विप्रकृत् ॥११॥

पदच्छेद— अयम् किम् अधुना लोके शास्ता दण्डधरः प्रभुः ।
अस्मत् विधानाम् दुष्टानाम् निर्लज्जानाम् च विप्रकृत् ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१. यह	**अस्मत्**	८. हम
किम्	२. क्या	**विधानाम्**	९. जैसे
अधुना	३. इस समय	**दुष्टानाम्**	१०. दुष्ट
लोके	४. संसार में	**निर्लज्जानाम्**	१२. निर्लज्जों का
शास्ता	५. शासक	**च**	११. और
दण्डधरः	६. दण्डधारी (और)	**विप्रकृत् ॥**	१३. तिरस्कार कर रहा है
प्रभुः ।	७. प्रभु है (जो)		

श्लोकार्थ—यह क्या इस समय संसार में शासक दण्डधारी और प्रभु है। जो हम जैसे दुष्ट और निर्लज्जों का तिरस्कार कर रहा है ॥

द्वादशः श्लोकः

न वेद धर्मं किल पद्मयोनिर्न ब्रह्मपुत्रा भृगुनारदाद्याः ।
न वै कुमारः कपिलो मनुश्च ये नो निषेधन्त्यतिवर्तिनं हरम् ॥१२॥

पदच्छेद— न वेदधर्मम् किल पद्मयोनिः न ब्रह्मपुत्राः भृगु नारद आद्याः ।
न वै कुमारः कपिलः मनुः च ये नो निषेधन्ति अतिवर्तिनम् हरम् ॥

शब्दार्थ—

न वेद	४. नहीं जानते हैं	**न वै**	१४. नहीं जानते हैं
धर्मम्	३. धर्म को	**कुमारः**	१०. सनत्कुमार
किल	१. आश्चर्य है	**कपिलः**	११. कपिल
पद्मयोनिः	२. ब्रह्मा	**मनुः**	१३. मनु भी
न	९. नहीं जानते हैं	**च**	१२. और
ब्रह्मपुत्राः	५. ब्रह्मा के पुत्र	**ये**	१५. जो
भृगुः	६. भृगु	**नो**	१९. नहीं
नारद	७. नारद	**निषेधन्ति**	१६. रोकते हैं
आद्याः ।	८. आदि भी	**अतिवर्तिनम्**	१७. धर्म मर्यादा का उल्लघंन करने वाले
		हरम् ॥	१८. शिव को

श्लोकार्थ—आश्चर्य है, ब्रह्मा धर्म को नहीं जानते हैं। ब्रह्मा के पुत्र भृगु, नारद आदि भी नहीं जानते हैं। सनत्कुमार कपिल और मनु भी नहीं जानते हैं, जो धर्म-मर्यादा का उल्लघंन करने वाले शिव को नहीं रोकते हैं।

त्रयोदशः श्लोकः

एषामनुध्येयपदाब्जयुग्मं जगद्गुरुं मङ्गलमङ्गलं स्वयम् ।
यः क्षत्रबन्धुः परिभूय सूरीन् प्रशास्ति धृष्टस्तदयं हि दण्ड्यः ॥१३॥

पदच्छेद— एषाम् अनुध्येय पद अब्ज युग्मम्, जगद्गुरुम् मङ्गल मङ्गलम् स्वयम् ।
यः क्षत्रबन्धुः परिभूय सुरीन् प्रशास्ति धृष्टः तद्अयम् हि दण्डचः ॥

शब्दार्थ—

एषाम्	१.	ये ब्रह्मादि जिनके	यः	१०.	इस
अनुध्येय	४.	ध्यान करते हैं (जो)	क्षत्रबन्धुः	११.	अधम क्षत्रिय ने
पद अब्ज	३.	चरण कमलों का	परिभूय	१२.	तिरस्कार करके
युग्मम्	२.	दोनों	सूरीन्	९.	महात्माओं का
जगद्गुरुम्	५.	संसार के गुरु (एवम्)	प्रशास्ति	१३.	शासन करने की चेष्टा की है
मङ्गल	७.	मङ्गलों का भी	धृष्टः	१५.	ढीठ को
मङ्गलम्	८.	मङ्गल करने वाले हैं (उनका तथा)	तद्अयम् हि	१४.	इसलिये इस
स्वयम् ।	६.	साक्षात्	दण्डचः ॥	१६.	दण्ड देना योग्य हैं

श्लोकार्थ—ये ब्रह्मादि जिनके दोनों चरण कमलों का ध्यान करते हैं। जो संसार के गुरु एवम् साक्षात् मङ्गलों का भी मङ्गल करने वाले हैं। उनका तथा महात्माओं का इस अधम क्षत्रिय ने तिरस्कार करके शासन करने की चेष्टा की है। इसलिये ढीठ को दण्ड देना योग्य हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नायमर्हति वैकुण्ठपादमूलोपसर्पणम् ।
सम्भावितमतिः स्तब्धः साधुभिः पर्युपासितम् ॥१४॥

पदच्छेद— न अयम् अर्हति वैकुण्ठ पाद मूल उपसर्पणम् ।
सम्भावित मतिः स्तब्धः साधुभिः पर्युपासितम् ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं	उपसर्पणम् ।	७.	रहने के
अयम्	१.	यह	सम्भावित मतिः	२.	घमण्डी (और)
अर्हति	९.	योग्य है	स्तब्धः	३.	मूर्ख
वैकुण्ठ	४.	भगवान् के	साधुभिः	११.	अहात्माओं द्वारा की जाती है।
पाद	५.	चरणों के			
मूल	६.	पास में	पर्युपासितम् ॥	१०.	जिन की उपासना

श्लोकार्थ—यह मूर्ख, घमण्डी और भगवान् के चरणों के पास में रहने योग्य नहीं है। जिनकी उपासना महात्माओं के द्वारा की जाती है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अतः पापीयसीं योनिमासुरीं याहि दुर्मते ।
यथेह भूयो महतां न कर्ता पुत्र किल्बिषम् ॥१५॥

पदच्छेद— अतः पापीयसीम् योनिम् आसुरीम् याहि दुर्मते ।
यथा इह भूयः महताम् न कर्ता पुत्र किल्बिषम् ॥

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	इह	९.	यहाँ (तुम)
पापीयसीम्	३.	पापमय	भूयः	१०.	फिर से
योनिम्	५.	योनि में	महताम्	११.	महापुरुषों का
आसुरीम्	४.	राक्षसी	न	१३.	नहीं
याहि	६.	जाओ	कर्ता	१४.	करोगे
दुर्मते ।	२.	दुर्बुद्धि तुम	पुत्र	८.	बेटा
यथा	७.	जिससे	किल्बिषम् ॥	१२.	अपराध

श्लोकार्थ—इसलिये दुर्बुद्धे ! तुम पापमय राक्षसी योनि में जाओ । जिससे बेटा ! यहाँ तुम फिर से महात्माओं का अपराध नहीं करोगे ॥

षोडशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एवं शप्तश्चित्रकेतुर्विमानादवरुह्य सः ।
प्रसादयामास सतीं मूर्ध्ना नम्रेण भारत ॥१६॥

पदच्छेद— एवम् शप्तः चित्रकेतुः विमानात् अवरुह्य सः ।
प्रसादयामास सतीम् मूर्ध्ना नम्रेण भारत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	प्रसादयामास	११.	प्रसन्न करने लगा
शप्तः	३.	शापित	सतीम्	८.	पार्वती जी को
चित्रकेतुः	५.	चित्रकेतु	मूर्ध्ना	९.	मस्तक
विमानात्	६.	विमान से	नम्रेण	१०.	झुका कर
अवरुह्य	७.	उतर कर	भारत ॥	१.	हे परीक्षित् !
सः ।	४.	वह			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! इस प्रकार शापित वह चित्रकेतु विमान से उतर कर पार्वती जी को मस्तक झुका कर प्रसन्न करने लगा ॥

सप्तदशः श्लोकः

चित्रकेतुरुवाच—प्रतिगृह्णामि ते शापमात्मनोऽञ्जलिनाम्बिके ।
देवैर्मर्त्याय यत्प्रोक्तं पूर्वदिष्टं हि तस्य तत् ॥१७॥

पदच्छेद— प्रतिगृह्णामि ते शापम् आत्मनः अञ्जलिना अम्बिके ।
देवैः मर्त्याय यत् प्रोक्तम् पूर्वदिष्टम् हि तस्य तत् ॥

शब्दार्थ—

प्रतिगृह्णामि	६.	स्वीकार करता हूँ	मर्त्याय	८.	मनुष्य के लिये
ते	२.	आपके	यत्	९.	जो
शापम्	३.	शाप को	प्रोक्तम्	१०.	कहा जाता है
आत्मनः	४.	अपने	पूर्वदिष्टम्	१३.	भाग्य के अनुसार
अञ्जलिना	५.	हाथ जोड़ कर	हि	१४.	ही होता है
अम्बिके ।	१.	हे माता ! मैं	तस्य	१२.	उसके
देवैः	७.	देवताओं द्वारा	तत् ॥	११.	वह

श्लोकार्थ—हे माता ! मैं आपके शाप को अपने हाथ जोड़कर स्वीकार करता हूँ। देवताओं द्वारा मनुष्य के लिये जो कहा जाता है। उसके भाग्य के अनुसार ही होता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

संसारचक्र एतस्मिञ्जन्तुरज्ञानमोहितः ।
भ्राम्यन् सुखं च दुःखं च भुङ्क्ते सर्वत्र सर्वदा ॥१८॥

पदच्छेद— संसार चक्र एतस्मिन् जन्तुः अज्ञान मोहितः ।
भ्राम्यन् सुखम् च दुःखम् च भुङ्क्ते सर्वत्र सर्वदा ॥

शब्दार्थ—

संसार	२.	संसार	भ्राम्यन्	७.	घूमता हुआ
चक्र	३.	चक्र में	सुखम् च	८.	सुख और
एतस्मिन्	१.	इस	दुःखम् च	९.	दुःख को भी
जन्तुः	४.	प्राणी	भुङ्क्ते	१२.	भोगता रहता है
अज्ञान	५.	अज्ञान से	सर्वत्र	१०.	सब जगह
मोहितः ।	६.	मोहित होकर	सर्वदा ॥	११.	सदा

श्लोकार्थ—इस संसार चक्र में प्राणी अज्ञान से मोहित होकर घूमता हुआ सुख और दुःख को भी सब जगह सदा भोगता रहता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नैवात्मा न परश्चापि कर्ता स्यात् सुखदुःखयोः ।
कर्तारं मन्यतेऽप्राज्ञ आत्मानं परमेव च ॥१९॥

पदच्छेद— न एव आत्मा न परः च अपि कर्ता स्यात् सुख दुःखयोः ।
कर्तारम् मन्यते अप्राज्ञः आत्मानम् परम् एव च ॥

शब्दार्थ—

न एव	५.	नहीं	**दुःखयोः ।**	३.	दुःख का
आत्मा	६.	आत्मा है	**कर्तारम्**	१५.	करने वाला
न परः	७.	न दूसरा	**मन्यते**	१६.	मानता है
च	२.	और	**अप्राज्ञः**	१०.	मूर्ख मनुष्य
अपि	८.	ही	**आत्मानम्**	११.	अपने को
कर्ता	४.	करने वाला	**परम्**	१३.	दूसरे को
स्यात्	९.	है	**एव**	१४.	ही (सुख-दुःख का)
सुख	१.	सुख	**च ॥**	१२.	और

श्लोकार्थ—सुख और दुःख का करने वाला नहीं आत्मा है और न दूसरा ही है । मूर्ख मनुष्य अपने को और दूसरे को ही सुख-दुःख का करने वाला मानता है ॥

विंशः श्लोकः

गुणप्रवाह एतस्मिन् कः शापः को न्वनुग्रहः ।
कः स्वर्गो नरकः को वा किं सुखं दुःखमेव वा ॥२०॥

पदच्छेद— गुण प्रवाहे एतस्मिन् कः शापः कः नु अनुग्रहः ।
कः स्वर्गः नरकः कः वा किम् सुखम् दुःखम् एव च ॥

शब्दार्थ—

गुण	१.	सत्त्वादि गुणों के	**नरकः**	९.	नरक
प्रवाहे	२.	प्रवाहमय	**कः**	८.	क्या
एतस्मिन्	३.	इस संसार में	**वा किम्**	१०.	अथवा क्या
कः शापः	४.	क्या शाप	**सुखम्**	११.	सुख
कः नु	५.	क्या	**दुःखम्**	१३.	दुःख
अनुग्रहः ।	६.	अनुग्रह	**एव**	१४.	ही है
कः स्वर्गः	७.	क्या स्वर्ग	**वा ॥**	१२.	या

श्लोकार्थ—सत्त्वादि गुणों के प्रवाहमय इस संसार में क्या शाप, क्या अनुग्रह, क्या स्वर्ग, क्या नरक अथवा क्या सुख या नरक ही है ॥

एकविंशः श्लोकः

एकः सृजति भूतानि भगवानात्ममायया ।
एषां बन्धं च मोक्षं च सुखं दुःखं च निष्कलः ॥२१॥

पदच्छेद— एकः सृजति भूतानि भगवान् आत्म मायया ।
एषाम् बन्धम् च मोक्षम् च सुखम् दुःखम् च निष्कलः ॥

शब्दार्थ—

एकः	१.	एक मात्र	बन्धम्	१०.	बन्धन
सृजति	७.	सृष्टि करते हैं	च	८.	और
भूतानि	६.	प्राणियों की	मोक्षम् च	११.	मोक्ष और
भगवान्	३.	भगवान्	सुखम्	१२.	सुख
आत्म	४.	अपनी	दुःखम्	१४.	दुःख (भी देते हैं)
मायया ।	५.	माया से	च	१३.	और
एषाम्	९.	इन प्राणियों को	निष्कलः ॥	२.	परिपूर्णतम

श्लोकार्थ—एक मात्र परिपूर्णतम भगवान् अपनी माया से प्राणियों की सृष्टि करते हैं। और इन प्राणियों को बन्धन, मोक्ष और सुख और दुःख भी देते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

न तस्य कश्चिद्दयितः प्रतीपो न ज्ञातिबन्धुर्न परो न च स्वः ।
समस्य सर्वत्र निरञ्जनस्य सुखे न रागः कुत एव रोषः ॥२२॥

पदच्छेद— न तस्य कश्चित् दयितः प्रतीपः न ज्ञाति बन्धुर्न परः न च स्वः ।
समस्य सर्वत्र निरञ्जनस्य सुखे न रागः कुतः एव रोषः ॥

शब्दार्थ—

न	४.	नहीं	च	११.	और
तस्य	१.	उनका	स्वः ।	१०.	अपना
कश्चित्	२.	कोई	समस्य	१४.	समदर्शी
दयितः	३.	प्रिय	सर्वत्र	१३.	सब जगह
प्रतीपः	५.	अप्रिय है	निरञ्जनस्य	१५.	निर्मल भगवान् को
न	६.	नहीं	सुखे	१६.	सुख में नहीं
ज्ञाति	७.	जाति	रागः	१७.	अनुराग है (फिर)
बन्धुः	८.	बन्धु है	कुतः	२०.	कहाँ से होगा
न परः	१२.	न पराया है	एव	१९.	ही
न	९.	नहीं	रोषः ॥	१८.	क्रोध

श्लोकार्थ—उनका कोई प्रिय, अप्रिय नहीं है। नहीं जाति बन्धु है। नहीं अपना और न पराया है। सब जगह समदर्शी निर्मल भगवान् को सुख में अनुराग नहीं है। फिर क्रोध ही कहाँ से होगा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तथापि तच्छक्तिविसर्ग एषां सुखाय दुःखाय हिताहिताय ।
बन्धाय मोक्षाय च मृत्युजन्मनोः शरीरिणां संसृतयेऽवकल्पते ॥२३॥

पदच्छेद— तथापि तत् शक्ति विसर्गः एषाम्, सुखाय दुःखाय हित अहिताय ।
बन्धाय मोक्षाय च मृत्यु जन्मनोः, शरीरिणाम् संसृतये अवकल्पते ॥

शब्दार्थ—

तथापि	१.	तो भी	**बन्धाय**	१०.	बन्धन
तत्	२.	उन भगवान् की	**मोक्षाय**	११.	मोक्ष
शक्ति	३.	माया शक्ति के	**च**	१४.	और
विसर्गः	४.	कार्य (पाप और पुण्य)	**मृत्यु**	१२.	मृत्यु
एषाम्	५.	इन	**जन्मनः**	१३.	जन्म
सुखाय	७.	सुख	**शरीरिणाम्**	६.	प्राणियों के
दुःखाय	८.	दुःख	**संसृतये**	१५.	आवागमन का
हितअहिताय !	९.	हित अहित	**अवकल्पते ॥**	१६.	कारण बनते हैं

श्लोकार्थ—तो भी उन भगवान् की माया शक्ति के कार्य पाप और पुण्य इन प्राणियों के सुख, दुःख, हित, अहित, बन्धन, मोक्ष, मृत्यु, जन्म और आवागमन का कारण बनते हैं

चतुर्विंशः श्लोकः

अथ प्रसादये न त्वां शापमोक्षाय भामिनि ।
यन्मन्यसे असाधूक्तं मम तत्क्षम्यतां सति ॥२४॥

पदच्छेद— अथ प्रसादये न त्वाम् शाप मोक्षाय भामिनि ।
यत् मन्यसे असाधु उक्तम् मम तत् क्षम्यताम् सति ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब	**यत्**	९.	जिस
प्रसादये	७.	प्रसन्न कर रहा हूँ	**मन्यसे**	१२.	मान रही हो
न	६.	नहीं	**असाधु**	११.	अनुचित
त्वाम्	३.	आपको	**उक्तम्**	१०.	वचन को
शाप	४.	शाप से	**मम**	८.	मेरे
मोक्षाय	५.	मुक्त होने के लिये	**तत् क्षम्यताम्**	१४.	उसे क्षमा कीजिये
भामिनि ।	२.	हे क्रोध शीले ! मैं	**सति ॥**	१३.	हे पार्वति !

श्लोकार्थ—अब हे क्रोधशीले ! मैं आपको शाप से मुक्त होने के लिये प्रसन्न नहीं कर रहा हूँ । मेरे जिस वचन को अनुचित मान रही हो । हे पार्वति ! उसे क्षमा कीजिये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इति प्रसाद्य गिरिशौ चित्रकेतुरिन्दम।
जगाम स्वविमानेन पश्यतोः स्मयतोस्तयोः ॥२५॥

पदच्छेद— इति प्रसाद्य गिरिशौ चित्रकेतुः अरिन्दम।
जगाम स्व विमानेन पश्यतोः स्मयतोः तयोः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	जगाम	८.	चला गया
प्रसाद्य	५.	प्रसन्न करके	स्वविमानेन	७.	अपने विमान से
गिरिशौ	४.	शंकर-पार्वती को	पश्यतोः	६.	देखते-देखते
चित्रकेतुः	३.	चित्रकेतु	स्मयतोः	१०.	विस्मय हुआ
अरिन्दम।	१.	हे शत्रुदमनकारी परीक्षित्!	तयोः ॥	९.	उन लोगों को बड़ा

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमनकारी परीक्षित्! इस प्रकार चित्रकेतु शंकर-पार्वती को प्रसन्न करके देखते-देखते ही अपने विमान से चला गया। उन लोगों को बड़ा विस्मय हुआ ॥

षड्विंशः श्लोकः

ततस्तु भगवान् रुद्रो रुद्राणीमिदमब्रवीत्।
देवर्षिदैत्यसिद्धानां पार्षदानां च शृण्वताम् ॥२६॥

पदच्छेद— ततः तु भगवान् रुद्रः रुद्राणीम् इदम् अब्रवीत्।
देवर्षि दैत्य सिद्धानाम् पार्षदानाम् च शृण्वताम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तब	**देवर्षि**	४.	देवता-ऋषि
तु भगवान्	२.	उन भगवान्	**दैत्य**	५.	दैत्य
रुद्रः	३.	शंकर ने	**सिद्धानाम्**	६.	सिद्ध
रुद्राणीम्	१०.	पार्वती जी से	**पार्षदानाम्**	८.	पार्षदों के
इदम्	११.	यह	**च**	७.	और
अब्रवीत्।	१२.	कहा	**शृण्वताम् ॥**	९.	सुनते हुये

श्लोकार्थ—तव उन भगवान् भंकर ने देवता, ऋषि, दैत्य, सिद्ध और पार्षदों के सुनते हुये पार्वती जो से यह कहा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

श्रीरुद्र उवाच—दृष्टवत्यसि सुश्रोणि हरेरद्भुतकर्मणः ।
माहात्म्यं भृत्यभृत्यानां निःस्पृहाणां महात्मनाम् ॥२७॥

पदच्छेद— दृष्टवती असि सुश्रोणि हरेः अद्भुत कर्मणः ।
माहात्म्यं भृत्य भृत्यानाम् निः स्पृहाणाम् महात्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

दृष्टवती	१०.	देख चुकी	माहात्म्यं	९.	महिमा को तुम
असि	११.	हो	भृत्य	५.	दासों के
सुश्रोणि	१.	हे सुन्दरी !	भृत्यानाम्	६.	दास
हरेः	४.	भगवान् विष्णु के	निःस्पृहाणाम्	७.	इच्छा रहित
अद्भुत	२.	अद्भुत	महात्मनाम् ॥	८.	महात्माओं की
कर्मणः ।	३.	कर्म करने वाले			

श्लोकार्थ—हे सुन्दरी ! अद्भुत कर्म करने वाले भगवान् विष्णु के दासों के दास, इच्छा रहित महात्माओं की महिमा तुम देख चुकी हो ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

नारायणपराः सर्वे न कुतश्चन बिभ्यति ।
स्वर्गापवर्गनरकेष्वपि तुल्यार्थदर्शिनः ॥२८॥

पदच्छेद— नारायण पराः सर्वे न कुतश्चन बिभ्यति ।
स्वर्ग अपवर्ग नरकेषु अपि तुल्य अर्थ दर्शिनः ॥

शब्दार्थ—

नारायण	१.	नारायण भगवान् के	स्वर्ग	७.	स्वर्ग
पराः	२.	शरणागत	अपवर्ग	८.	मोक्ष (और)
सर्वे	३.	सभी भक्त	नरकेषु अपि	९.	नरकों में भी
न	५.	नहीं	तुल्य	१०.	समान रूप से
कुतश्चन	४.	किसी से	अर्थ	११.	एक ही भगवान् के
बिभ्यति ।	६.	डरते हैं (वे)	दर्शिनः ॥	१२.	दर्शन करने वाले होते हैं

श्लोकार्थ—नारायण भगवान् के शरणागत सभी भक्त किसी से नहीं डरते हैं। वे स्वर्ग, मोक्ष और नरकों में भी समान रूप से एक ही भगवान् के दर्शन करने वाले होते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

देहिनां देहसंयोगाद् द्वन्द्वानीश्वरलीलया ।
सुखं दुःखं मृतिर्जन्म शापोऽनुग्रह एव च ॥२६॥

पदच्छेद— देहिनाम् देह संयोगात् द्वन्द्वानि ईश्वर लीलया ।
सुखम् दुःखम् मृतिः जन्म शापः अनुग्रह एव च ॥

शब्दार्थ—

देहिनाम्	४. प्राणियों को	दुःखम्	८. दुःख
देह	५. शरीर के	मृतिः	९. मृत्यु
संयोगात्	६. संयोग से	जन्म	१०. जन्म
द्वन्द्वानि	१४. द्वन्द्व (प्राप्त होते रहते हैं)	शापः	१२. शाप
ईश्वर	१. भगवान् की	अनुग्रह	१३. अनुग्रह (ये)
लीलया ।	२. लीला से	एव	३. ही
सुखम्	७. सुख	च ॥	११. और

श्लोकार्थ—भगवान् की लीला से ही प्राणियों को शरीर के संयोग से सुख, दुःख, मृत्यु, जन्म, शाप और अनुग्रह ये द्वन्द्व प्राप्त होते रहते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

अविवेककृतः पुंसो ह्यर्थभेद इवात्मनि ।
गुणदोषविकल्पश्च भिदेव स्रजिवत्कृतः ॥३०॥

पदच्छेद— अविवेक कृतः पुंसः हि अर्थ भेद इव आत्मनि ।
गुण दोष विकल्पः च भिदा इव स्रजिवत् कृतः ॥

शब्दार्थ—

अविवेक	१. अविवेक के	**दोष**	१५. दोष की
कृतः	२. कारण	**विकल्पः**	१६. कल्पना होती है
पुंसः	३. मनुष्य को	**च**	१४. और
हि अर्थ	६. वस्तु की (प्रतीति होती है)	**भिदा**	१०. बुद्धि
भेदः	५. भिन्न-भिन्न	**इव**	१२. वैसे ही (आत्मा में)
इव	७. जैसे	**स्रजि**	८. माला में
आत्मनि ।	४. आत्मा में (सुख, दुःखादि)	**वत्**	९. सर्प को
गुण	१३. गुण	**कृत ॥**	११. हो जाती है

श्लोकार्थ—अविवेक के कारण मनुष्य को आत्मा में सुख, दुःखादि भिन्न-भिन्न वस्तु की प्रतीती होती है । जैसे माला में सर्प की बुद्धि हो जाती है वैसे आत्मा में गुण और दोष की कल्पना हो जाती है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

वासुदेवे भगवति भक्तिमुद्वहतां नृणाम् ।
ज्ञानवैराग्यवीर्याणां नेह कश्चिद् व्यपाश्रयः ॥३१॥

पदच्छेद— वासुदेवे भगवति भक्तिम् उद्वहताम् नृणाम् ।
ज्ञान वैराग्य वीर्याणाम् न इह कश्चित् व्यपाश्रयः ।।

शब्दार्थ—

वासुदेवे	२. वासुदेव में	**वैराग्य**	६. वैराग्य को
भगवति	१. भगवान्	**वीर्याणाम्**	७. शक्ति से सम्पन्न
भक्तिम्	३. भक्ति-भाव	**न**	१२. नहीं है
उद्वहताम्	४. रखते हुये (तथा)	**इह**	९. यहाँ
नृणाम्	८. मनुष्यों के लिये	**कश्चित्**	१०. कोई
ज्ञान ।	५. ज्ञान	**व्यपाश्रयः ।।**	११. राग-द्वेष (की वस्तु)

श्लोकार्थ—भगवान् वासुदेव में भक्ति-भाव रखते हुये तथा ज्ञान, वैराग्य को शक्ति से सम्पन्न मनुष्यों के लिये यहाँ कोई राग-द्वेष की वस्तु नहीं है ।।

द्वात्रिंशः श्लोकः

नाहं विरिञ्चो न कुमारनारदौ न ब्रह्मपुत्रा मुनयः सुरेशाः ।
विदाम यस्येहितमंशकांशका न तत्स्वरूपं पृथगीशमानिनः ॥३२॥

पदच्छेद— न अहम् विरिञ्चः न कुमारनारदौ, न ब्रह्म पुत्राः मुनयः सुरेशाः ।
विदाम यस्य ईहितम् अंशकः अंशकाः न तत् स्वरूपम् पृथक् ईश मानिनः ।।

शब्दार्थ—

न अहम्	१. न मैं	**यस्य**	९. इनकी
विरिञ्चः	२. ब्रह्मा	**ईहितम्**	१०. लीला का रहस्य
न कुमार	३. न सनत्कुमार	**अंशक**	१३. अंशों के भी
नारदौ	५. नारद	**अंशकाः**	१४. अंश होकर (अपने को)
न	४. न	**न**	११. नहीं
ब्रह्मपुत्राः	६. ब्रह्मा के पुत्र	**तत् स्वरूपम्**	१७. उनके स्वरूप को
मुनयः	७. भृगु आदि मुनि	**पृथक्**	१५. अलग
सुरेशाः	८. देवश्रेष्ठ	**ईश**	१६. ईश्वर
विदाम ।	१२. जानते हैं (फिर)	**मानिनः ।।**	१८. मानने वाले (लोग कैसे जानेंगे)

श्लोकार्थ—न मैं, न ब्रह्मा, न सनत्कुमार, न नारद, न ब्रह्मा के पुत्र भृगु आदि मुनि तथा देवश्रेष्ठ इनकी लीला का रहस्य नहीं जानते हैं । फिर अंशों के भी अंश होकर अपने को अलग ईश्वर मानने वाले लोग उनके स्वरूप को कैसे जानेंगे ।।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न ह्यस्यास्ति प्रियः कश्चिन्नाप्रियः स्वः परोऽपि वा ।
आत्मत्वात्सर्वभूतानां सर्वभूतप्रियो हरिः ॥३३॥

पदच्छेद— नहि अस्य अस्ति प्रियः कश्चित् न अप्रियः स्वः परः अपि वा ।
आत्मत्वात् सर्वभूतानाम् सर्व भूत प्रियः हरिः ॥

शब्दार्थ—

न हि	४.	नहीं	वा	७.	अथवा
अस्य	१.	उन भगवान् का	आत्मत्वात्	१२.	आत्मा होने के कारण
अस्ति	५.	है (और)	सर्व	१०.	सभी
प्रियः	३.	प्रिय	भूतानाम्	११.	प्राणियों की
कश्चित्	१२.	कोई	सर्व	१४.	सभी
न अप्रियः	६.	नहीं अप्रिय है	भूत	१५.	प्राणियों के
स्वः परः	८.	अपना और पराया (नहीं है)	प्रियः	१६.	प्रिय हैं
अपि ।	९.	भी	हरिः ॥	१३.	भगवान् हरि

श्लोकार्थ—उन भगवान् का कोई प्रिय नहीं और नहीं अप्रिय है । अथवा अपना और पराया भी नहीं है । सभी प्राणियों की आत्मा होने के कारण भगवान् हरि सभी प्राणियों के प्रिय हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तस्य चायं महाभागश्चित्रकेतुः प्रियोऽनुगः ।
सर्वत्र समदृक् शान्तो ह्यहं चैवाच्युतप्रियः ॥३४॥

पदच्छेद— तस्य च अयम् महाभागः चित्रकेतुः प्रियः अनुगः ।
सर्वत्र समदृक् शान्तः हि अहम् च एव अच्युत प्रियः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	५.	उनका	समदृक्	९.	समदर्शी (और)
च	१.	और	शान्तः	१०.	शान्त है
अयम्	२.	यह	हि	१३.	भी
महाभागः	३.	परम भाग्यवान्	अहम्	१२.	मैं
चित्रकेतुः	४.	चित्रकेतु	च	११.	और
प्रियः	६.	प्रिय	एव	१५.	ही
अनुगः	७.	अनुयायी	अच्युत	१४.	भगवान् का
सर्वत्र ।	८.	सब जगह	प्रियः ॥	१६.	प्रिय हूँ

श्लोकार्थ—और यह परम भाग्यवान् चित्रकेतु उनका प्रिय अनुयायी, सब जगह समदर्शी और शान्त है । और मैं भी भगवान् का ही प्रिय हूँ ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तस्मान्न विस्मयः कार्यः पुरुषेषु महात्मसु ।
महापुरुषभक्तेषु शान्तेषु समदर्शिषु ॥३५॥

पदच्छेद— तस्मात् न विस्मयः कार्यः पुरुषेषु महात्मसु ।
महापुरुष भक्तेषु शान्तेषु समदर्शिषु ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	**महात्मसु ।**	६.	महात्मा
न	९.	नहीं	**महापुरुष**	२.	महापुरुष के
विस्मयः	८.	आश्चर्य	**भक्तेषु**	३.	भक्त
कार्यः	१०.	करना चाहिये	**शान्तेषु**	४.	शान्त (और)
पुरुषेषु	७.	पुरुषों के सम्बन्धों में	**समदर्शिषु ॥**	५.	समदर्शी

श्लोकार्थ—इसलिये महापुरुष के भक्त, शान्त और समदर्शी महात्मा पुरुषों के सम्बन्ध में आश्चर्य नहीं करना चाहिये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच – इति श्रुत्वा भगवतः शिवस्योमाभिभाषितम् ।
बभूव शान्तधी राजन् देवी विगतविस्मया ॥३६॥

पदच्छेद— इति श्रुत्वा भगवतः शिवस्य उमा अभिभाषितम् ।
बभूव शान्त धीः राजन् देवी विगत विस्मया ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	**बभूव**	१२.	हो गई
श्रुत्वा	६.	सुनकर	**शान्तधीः**	९.	शान्तचित्त
भगवतः	३.	भगवान्	**राजन्**	१.	हे राजन् !
शिवस्य	४.	शिव का	**देवी**	७.	देवी
उमा	८.	पार्वती	**विगत**	११.	रहित और
अभिभाषितम् ।	५.	भाषण	**विस्मया ॥**	१०.	आश्चर्य से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार भगवान् शिव का भाषण सुनकर देवी पार्वती शान्तचित्त और आश्चर्य से रहित हो गईं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

इति भागवतो देव्याः प्रतिशप्तुमलन्तमः ।
मूर्ध्ना सञ्जगृहे शापमेतावत्साधुलक्षणम् ॥३७॥

पदच्छेद— इति भागवतः देव्याः प्रतिशप्तुम् अलन्तमः ।
मूर्ध्ना सन् जगृहे शापम् एतावत् साधु लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार	मूर्ध्ना	६. सिर झुकाकर
भागवतः	२. भगवान् का भक्त (चित्रकेतु)	सन् जगृहे	८. ग्रहण कर लिया
देव्याः	३. देवी को	शापम्	७. शाप को
प्रतिशप्तुम्	४. बदले में शाप देने में	एतावत्	९. यह
अलन्तमः ।	५. समर्थ होते हुये भी	साधुलक्षणम् ॥	१०. साधु का लक्षण है

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् का भक्त चित्रकेतु देवी को बदले में शाप देने में समर्थ होते हुये भी सिर झुकाकर शाप को ग्रहण कर लिया । यह साधु का लक्षण है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

जज्ञे त्वष्टुर्दक्षिणाग्नौ दानवीं योनिमाश्रितः ।
वृत्र इत्यभिविख्यातो ज्ञानविज्ञानसंयुतः ॥३८॥

पदच्छेद— जज्ञे त्वष्टुः दक्षिणाग्नौ दानवीम् योनिम् आश्रितः ।
वृत्र इति अभि विख्यातः ज्ञान विज्ञान संयुतः ॥

शब्दार्थ—

जज्ञे	६. उत्पन्न हुआ	वृत्रः	१०. वृत्रासुर
त्वष्टुः	४. त्वष्टा की	इति अभि	११. इस नाम से
दक्षिणाग्नौ	५. दक्षिणाग्नि से	विख्यातः	१२. प्रसिद्ध हुआ
दानवीम्	१. आसुरी	ज्ञान	७. ज्ञान (और)
योनिम्	२. योनि का	विज्ञान	८. विज्ञान से
आश्रितः ।	३. आश्रय लेकर	संयुतः ॥	९. युक्त (तथा)

श्लोकार्थ—आसुरी योनि का आश्रय लेकर त्वष्टा की दक्षिणाग्नि से उत्पन्न हुआ । ज्ञान और विज्ञान से युक्त तथा वृत्रासुर इस नाम से प्रसिद्ध हुआ ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

एतत्ते सर्वमाख्यातं यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
वृत्रस्यासुरजातेश्च कारणं भगवन्मतेः ॥३९॥

पदच्छेद— एतत्ते सर्वम् आख्यातम् यत् माम् त्वम् परिपृच्छसि ।
वृत्रस्य असुर जातेः च कारणम् भगवन् मतेः ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१२. यह	**वृत्रस्य**	४. वृत्रासुर का
ते	१४. तुम्हें	**असुर**	२. असुर
सर्वत्र	१३. सब	**जातेः**	३. जाति वाले
आख्यानम्	१५. बता दिया	**च**	१. और
यत्	८. जो	**कारणम्**	७. कारण
माम्	१०. मुझसे	**भगवान्**	५. भगवान् में
त्वम्	९. तुमने	**मतेः ॥**	६. भक्ति का
परिपृच्छसि ।	११. पूछा था		

श्लोकार्थ—और असुर जाति वाले वृत्रासुर का भगवान् में भक्ति का कारण जो तुमने मुझसे पूछा था, यह सब तुम्हें बता दिया ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

इतिहासमिमं पुण्यं चित्रकेतोर्महात्मनः ।
माहात्म्यं विष्णुभक्तानां श्रुत्वा बन्धाद्विमुच्यते ॥४०॥

पदच्छेद— इतिहासम् इमम् पुण्यम् चित्रकेतोः महात्मनः ।
माहात्म्यम् विष्णु भक्तानाम् श्रुत्वा बन्धात् विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

इतिहासम्	५. इतिहास (तथा)	**माहात्म्यम्**	७. महिमा को
इमम्	३. यह	**विष्णु भक्तानाम्**	६. विष्णु भक्तों की
पुण्यम्	४. पवित्र	**श्रुत्वा**	८. सुनकर (मनुष्य)
चित्रकेतोः	२. चित्र केतु का	**बन्धात्**	९. बन्धन से
महात्मनः ।	१. महात्मा	**विमुच्यते ॥**	१०. मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—महात्मा चित्रकेतु का यह पवित्र इतिहास तथा विष्णु भक्तों की महिमा सुन कर मनुष्य बन्धन से मुक्त हो जाता है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

य एतत्प्रातरुत्थाय श्रद्धया वाग्यतः पठेत् ।
इतिहासं हरिं स्मृत्वा स याति परमां गतिम् ॥४१॥

पदच्छेद— यः एतत् प्रातः उत्थाय श्रद्धया वाग्यतः पठेत् ।
इतिहासम् हरिम् स्मृत्वा स याति परमाम् गतिम् ।।

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	इतिहासम्	९.	इतिहास को
एतत्	८.	इस	हरिम्	६.	भगवान् विष्णु का
प्रातः	२.	प्रातःकाल	स्मृत्वा	७.	स्मरण करते हुये
उत्थाय	३.	उठ कर	सः	११.	वह
श्रद्धया	४.	श्रद्धा से	याति	१४.	प्राप्त करता है
वाग्यतः	५.	वाणि का संयम करके	परमाम्	१२.	उत्तम
पठेत् ।	१०.	पढ़ता है	गतिम् ।।	१३.	गति को

श्लोकार्थ—जो प्रातःकाल उठकर श्रद्धा से वाणी का संयम करके भगवान् विष्णु का स्मरण करते हुये इस इतिहास को पढ़ता है वह उत्तम गति को प्राप्त करता है ।।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठस्कन्धे चित्रकेतु-शापो नाम सप्तदशः अध्यायः ।।१७।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

षष्ठः स्कन्धः

अष्टादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—पृश्निस्तु पत्नी सवितुः सावित्रीं व्याहृतिं त्रयीम् ।
अग्निहोत्रं पशुं सोमं चातुर्मास्यं महामखान् ॥ १ ॥

पदच्छेद— पृश्निः तु पत्नी सवितुः सावित्रीम् त्रयीम् ।
अग्निहोत्रम् पशुम् सोमम् चातुर्मास्यम् महा मखान् ॥

शब्दार्थ—

पृश्निः तु	३.	पृश्नि ने	अग्निहोत्रम्	७.	अग्निहोत्र
पत्नी	२.	पत्नी	पशुम्	८.	पशु
सवितुः	१.	साविता की	सोमम्	९.	सोम
सावित्रीम्	४.	सावित्री	चातुर्मास्यम्	१०.	चातुर्मास्य (और)
व्याहृतिम् ।	५.	व्याहृति	महा	११.	पञ्च महा
त्रयीम्	६.	त्रयी	मखान् ॥	१२.	यज्ञ (आठ सन्तानें उत्पन्न कीं)

श्लोकार्थ—सविता की पत्नी पृश्नि ने सावित्री, व्याहृति, त्रयी, अग्निहोत्र, पशु सोम, चातुर्मास्य और पञ्च महायज्ञ आठ सन्तानें उत्पन्न कीं ॥

द्वितीयः श्लोकः

सिद्धिर्भगस्य भार्याङ्गमहिमानं विभुं प्रभुम् ।
आशिषं च वरारोहां कन्यां प्रासूत सुव्रताम् ॥ २ ॥

पदच्छेद— सिद्धिः भगस्य भार्या अङ्ग महिमानम् विभुम् प्रभुम् ।
आशिषम् च वरारोहाम् कन्याम् प्रासूत सुव्रताम् ॥

शब्दार्थ—

सिद्धिः	४.	सिद्धि ने	आशिषम्	८.	आशिष माम की
भगस्य	२.	भग की	च	७.	और
भार्या	३.	पत्नी	वरारोहाम्	१०.	सुन्दरी
अङ्गः	१.	हे राजन् !	कन्याम्	११.	कन्या को
महिमानम्	५.	महिमा	प्रासूत	१२.	उत्पन्न किया
विभुम्, प्रभुम् ।	६.	विभु और प्रभु नामक (तीन पुत्र)	सुव्रताम् ॥	९.	सदाचारिणी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भग की पत्नी सिद्धि ने महिमा, विभु और प्रभु नामक तीन पुत्र और आशिष नाम की सदाचारिणी सुन्दरी कन्या को उत्पन्न किया ॥

तृतीयः श्लोकः

धातुः कुहूः सिनीवाली राका चानुमतिस्तथा ।
सायं दर्शमथ प्रातः पूर्णमासमनुक्रमात् ॥ ३ ॥

पदच्छेद— धातुः कुहूः सिनी वाली राका च अनुमतिः तथा ।
सायम् दर्शम् अथ प्रातः पूर्णमासम् अनुक्रमात् ॥

शब्दार्थ—

धातुः	३.	धाता की पत्नी	सायम्	८.	सायम्
कुहूः	४.	कुहू	दर्शम्	९.	दर्श
सिनी वाली	५.	सिनी वाली	अथ	२.	इसके बाद
राका	६.	राका	प्रातः	११.	प्रातः (और)
च अनुमतिः	७.	और अनुमति ने	पूर्णमासम्	१२.	पूर्णमास को उत्पन्न किया
तथा ।	१.	तथा	अनुक्रमात् ॥	१०.	क्रमशः

श्लोकार्थ—तथा इसके बाद धाता की पत्नी कुहू, सिनी वाली, राका और अनुमति ने सायम्, दर्श, क्रमशः प्रातः और पूर्णमास को उत्पन्न किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

अग्नीन् पुरीष्यानाधत्त क्रियायां समनन्तरः ।
चर्षणी वरुणस्यासीद्यस्यां जातो भृगुः पुनः ॥ ४ ॥

पदच्छेद— अग्नीन् पुरीष्यान् आधत्त कियायाम् सम् अनन्तरः ।
चर्षणी वरुणस्य आसीत् यस्याम् जातः भृगुः पुनः ॥

शब्दार्थ—

अग्नीन्	४.	अग्नि	वरुणस्य	६.	वरुण की (पत्नी)
पुरीष्यान्	३.	पुरीष्य नाम के	आसीत्	८.	थीं
आधत्त	५.	उत्पन्न हुये	यस्याम्	९.	जिससे
क्रियायाम्	२.	क्रिया से	जातः	१२.	उत्पन्न हुये
सम् अनन्तरः ।	१.	उसके बाद (पत्नी) विधाता की	भृगुः	११.	भृगु मुनि
चर्षणी	७.	चर्षणी नाम की	पुनः ॥	१०.	फिर

श्लोकार्थ—उसके बाद विधाता की पत्नी क्रिया से पुरीष्य नाम के अग्नि उत्पन्न हुये । वरुण की पत्नी चर्षणी नाम की थी । जिससे फिर भृगु मुनि उत्पन्न हुये ॥

पञ्चमः श्लोकः

वाल्मीकिश्च महायोगी वल्मीकादभवत्किल ।
अगस्त्यश्च वसिष्ठश्च मित्रावरुणयोर्ऋषी ॥५॥

पदच्छेदः— वाल्मीकिः च महायोगी वल्मीकात् अभवत् किल ।
अगस्त्यः च वसिष्ठः च मित्रावरुणयोः ऋषी ॥

शब्दार्थ—

वाल्मीकिः	२. वाल्मीकि	**अगस्त्यः**	७. अगस्त्य
च	६. और	**च**	८. एवम्
महायोगी	१. महायोगी	**वशिष्ठः**	९. वसिष्ठ मुनि
वल्मीकात्	४. वरुण से	**च**	११. और
अभवत्	५. उत्पन्न हुये थे	**मित्रा**	१०. मित्र
किल ।	३. बहुत पहले	**वरुणयोः**	१२. वरुण
		ऋषी ॥	१३. ऋषि में उत्पन्न हुये थे

श्लोकार्थ—महायोगी वालमीकि बहुत पहले वरुण से उत्पन्न हुये थे। और अगस्त्य एवम् वसिष्ठ मुनि मित्र और वरुण ऋषी से उत्पन्न हुये थे ।।

षष्ठः श्लोकः

रेतः सिषिचतुः कुम्भे उर्वश्याः सन्निधौ द्रुतम् ।
रेवत्यां मित्र उत्सर्गमरिष्टं पिप्पलं व्यधात् ॥६॥

पदच्छेदः— रेतः सिषिचतुः कुम्भे उर्वश्याः सन्निधौ द्रुतम् ।
रेवत्याम् मित्र उत्सर्गम् अरिष्टम् पिप्पलम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

रेतः	४. वीर्य को	**रेवत्याम्**	८. रेवती से
सिषिचतुः	६. रख दिया था	**मित्र**	७. मित्र ने
कुम्भे	५. घड़े में	**उत्सर्गम्**	९. उत्सर्ग
उर्वश्याः	१. उर्वंशी के	**अरिष्टम्**	१०. अरिष्ट (और)
सन्निधौ	२. समीप में	**पिप्पलम्**	११. पिप्पल नामक पुत्रों को
द्रुतम् ।	३. शीघ्र स्खलित	**व्यधात् ॥**	१२. उत्पन्न किया ।

श्लोकार्थ—मित्रावरुण ने उर्वशी के समीप में शीघ्र स्खलित वीर्य को घड़े में रख दिया तथा मित्र ने रेवती से उत्सर्ग, अरिष्ट और पिप्पल नामक पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

सप्तमः श्लोकः

पौलोम्यामिन्द्र आधत्त त्रीन् पुत्रानिति नः श्रुतम् ।
जयन्तमृषभं तात तृतीयं मीढुषं प्रभुः ॥७॥

पदच्छेद— पौलोम्याम् इन्द्रः आधत्त त्रीन् पुत्रान् इति नः श्रुतम् ।
जयन्तम् ऋषभम् तात तृतीयम् मीढुषम् प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

पौलोम्याम्	४. पुलोम पुत्री (शची से)	श्रुतम् ।	१४. सुना है
इन्द्रः	३. इन्द्र ने	जयन्तम्	८. जयन्त
आधत्त	७. उत्पन्न किया	ऋषभम्	९. ऋषभ (और)
त्रीन्	५. तीन	तात	१. हे परीक्षित् !
पुत्रान्	६. पुत्रों को	तृतीयम्	१०. तीसरे
इति	१२. ऐसा	मीढुषम् ।	११. मीढ्वान् को
नः	१३. हमने	प्रभुः ॥	२. भगवान्

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! भगवान् इन्द्र ने पुलोम पुत्री शची से तीन पुत्रों को उत्पन्न किया । जयन्त, ऋषभ और तीसरे मीढ्वान् को, ऐसा हमने सुना है ॥

अष्टमः श्लोकः

उरुक्रमस्य देवस्य मायावामनरूपिणः ।
कीर्तौ पत्न्यां बृहच्छ्लोकस्तस्यासन् सौभगादयः ॥८॥

पदच्छेद— उरु क्रमस्य देवस्य माया वामन रूपिणः ।
कीर्तौ पत्न्याम् बृहत् श्लोकः तस्य आसन् सौभग आदयः ॥

शब्दार्थ—

उरुक्रमस्य	१. महा पराक्रमी (और)	पत्न्याम्	७. पत्नी से
देवस्य	५. भगवान् के	बृहत् श्लोकः	८. बृहत् श्लोक नाम का पुत्र हुआ
माया	२. माया से	तस्य	९. उनके
वामन	३. वामन	आसन्	१२. हुईं
रूपिणः ।	४. रूप धारण करने वाले	सौभग	१०. सौभग
कीर्तौ	६. कीर्तिनाम की	आदयः ॥	११. आदि (सन्तानें)

श्लोकार्थ—महापराक्रमी और माया से वामन का रूप धारण करने वाले भगवान् के कीर्ति नाम की पत्नी से बृहत् श्लोक नाम का पुत्र हुआ । उसके सौभग आदि सन्तानें हुईं ॥

नवमः श्लोकः

तत्कर्मगुणवीर्याणि काश्यपस्य महात्मनः ।
पश्चाद्वक्ष्यामहेऽदित्यां यथा वावततार ह ॥९॥

पदच्छेद— तत् कर्म गुण वीर्याणि काश्यपस्य महात्मनः ।
पश्चात् वक्ष्यामहे अदित्याम् यथा वा अवततार ह ॥

शब्दार्थ—

तत्	३.	उन	पश्चात्	७.	बाद में (आठवें स्कन्ध में)
कर्म	४.	कर्मों	वक्ष्यामहे	८.	कहूँगा
गुण	५.	गुणों (और)	अदित्याम्	११.	अदिति के गर्भ से
वीर्याणि	६.	पराक्रमों को	यथा	९.	जिस प्रकार
काश्यपस्य	१.	कश्यपनन्दन	वा	१०.	वे
महात्मनः ।	२.	महापुरुष (वामन को)	अवततार ह ॥	१२.	अवतीर्ण हुये थे

श्लोकार्थ—कश्यपनन्दन महापुरुष वामन के उन कर्मों, गुणों और पराक्रमों को बाद में आठवें स्कन्ध में कहूँगा । जिस प्रकार वे अदिति के गर्भ से अवतीर्ण हुये थे ॥

दशमः श्लोकः

अथ कश्यपदायादान् दैतेयान् कीर्तयामि ते ।
यत्र भागवतः श्रीमान् प्रह्लादो बलिरेव च ॥१०॥

पदच्छेद— अथ कश्यप दायादान् दैतेयान् कीर्तयामि ते ।
यत्र भागवतः श्रीमान् प्रह्‌लादः बलिः एव च ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब	यत्र	७.	जिसमें
कश्यप	२.	कश्यप के दिति से उत्पन्न)	भागवतः	८.	भगवान् के भक्त
दायादान्	४.	वंशजों का	श्रीमान्	९.	ऐश्वर्य शाली
दैतेयान्	३.	दैत्य	प्रह्लादः	१०.	प्रह्लाद
कीर्तयामि	६.	वर्णन कर रहा हूँ	बलिः एव	१२.	बलि हुये थे
ते ।	५.	आपसे	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—अब कश्यप के दिति से उत्पन्न दैत्य वंशजों का आपसे वर्णन कर रहा हूँ । जिसमें भगवान् के भक्त ऐश्वर्यशाली प्रह्लाद और बलि हुये थे ॥

एकादशः श्लोकः

दितेर्द्वावेव दायादौ दैत्यदानववन्दितौ ।
हिरण्यकशिपुर्नाम हिरण्याक्षश्च कीर्तितौ ॥११॥

पदच्छेद— दितेः द्वौ एव दायादौ दैत्य दानव वन्दितौ ।
हिण्यकशिपुः नाम हिरण्याक्षः च कीर्तितौ ॥

शब्दार्थ—

दितेः	१. दिति के	हिरण्यकशिपुः	७. हिरण्यकशिपु
द्वौ एव	५. दो ही	नाम	१०. नाम से
दायादौ	६. पुत्र	हिरण्याक्षः	९. हिरण्याक्ष
दैत्य	१. दैत्यों और	च	८. और
दानव	३. दानवों से	कीर्तितौ ॥	११. प्रसिद्ध हुये
वन्दितौ ।	४. वन्दनीय		

श्लोकार्थ—दिति के दैत्यों और दानवों से वन्दनीय दो ही पुत्र हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष नाम से प्रसिद्ध हुये ॥

द्वादशः श्लोकः

हिरण्यकशिपोर्भार्या 'कयाधुर्नाम दानवी ।
जम्भस्य तनया दत्ता सुषुवे चतुरः सुतान् ॥१२॥

पदच्छेद— हिरण्यकशिपोः भार्या कयाधुः नाम दानवी ।
जम्भस्य तनया दत्ता सुषुवे चतुरः सुतान् ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपोः	७. हिरण्य कशिपु की	जम्भस्य	१. जम्भ से द्वारा
भार्या	८. पत्नी थी (उसने)	तनया	३. पुत्री
कयाधुः	४. कयाधु	दत्ता	२. दी गई
नाम	५. नाम की (जो)	सुषुवे	११. उत्पन्न किया
दानवी ।	६. दानवी	चतुरः	९. चार
		सुतान् ॥	१०. पुत्रों को

श्लोकार्थ—जम्भ के द्वारा दी गई पुत्री कयाधु नाम की जो दानवी हिरण्यकशिपु की पत्नी थी उसने चार पुत्रों को उत्पन्न किया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

संह्रादं प्रागनुह्रादं ह्रादं प्रह्लादमेव च ।
तत्स्वसा सिंहिका नाम राहुं विप्रचितोऽग्रहीत् ।।१३।।

पदच्छेद— संह्रादम् प्राक् अनुह्लादम् ह्लादम् प्रह्लादम् एव च ।
तत् स्वसा सिंहिका नाम राहुम् विप्रचितः अग्रहीत् ।।

शब्दार्थ—

संह्लादम्	२.	संह्लाद	तत्	१०.	उसकी
प्राक्	१.	पहले	स्वसा	११.	बहन ने
अनुह्लादम्	३.	अनुह्लाद	सिंहिका	८.	सिंहिका
ह्लादम्	४.	ह्लाद	नाम	९.	नाम की
प्रह्लादम्	६.	प्रह्लाद	राहुम्	१२.	राहु को
एव	७.	उत्पन्न हुये	विप्रचितः	१३.	विप्रचित् से
च ।	५.	और	अग्रहीत् ।।	१४.	उत्पन्न किया

श्लोकार्थ—पहले संह्लाद, अनुह्लाद, ह्लाद और प्रह्लाद उत्पन्न हुये । सिंहिका नाम की उनकी बहन ने राहु को विप्रचित् से उत्पन्न किया ।।

चतुर्दशः श्लोकः

शिरोऽहरद्यस्य हरिश्चक्रेण पिबतोऽमृतम् ।
संह्रादस्य कृतिर्भार्यासूत पञ्चजनं ततः ।।१४।।

पदच्छेद— शिरः अहरत् यस्य हरिः चक्रेण पिबतः अमृतम् ।
संह्लादस्य कृतिः भार्या असूत पञ्च जनम् ततः ।।

शब्दार्थ—

शिरः	४.	मस्तक को	संह्लादस्य	८.	संह्लाद की
अहरत्	७.	काट दिया	कृतिः	१०.	कृति ने
यस्य	३.	जिसके	भार्या	९.	पत्नी
हरिः	५.	भगवान् विष्णु ने	असूत	१४.	उत्पन्न किया
चक्रेण	६.	चक्र से	पञ्च	१२.	पञ्च
पिबतः	२.	पीते हुये	जनम्	१३.	जन नामक पुत्र
अमृतम् ।	१.	अमृत को	ततः ।।	११.	उससे

श्लोकार्थ— अमृत को पीते हुये जिसके मस्तक को भगवान् विष्णु ने चक्र से काट दिया । संह्लाद की पत्नी कृति ने उससे पञ्च जन नामक पुत्र उत्पन्न किया ।।

पञ्चदशः श्लोकः

ह्लादस्य धमनिर्भार्यासूत वातापिमिल्वलम्।
योऽगस्त्याय त्वतिथये पेचे वातापिमिल्वलम् ॥१५॥

पदच्छेद — ह्लादस्य धमनि भार्या असूत वातापिम् इल्वलम्।
यः अगस्त्याय तु अतिथये पेचे वातापिम् इल्वलः ॥

शब्दार्थ—

ह्लादस्य	१.	ह्लाद की	यः	७.	जिस
धमनिः	३.	धमनि ने	अगस्त्याय	१०.	अगस्त्य के लिये
भार्या	२.	पत्नी	तु	११.	तो
असूत	६.	उत्पन्न किया	अतिथये	९.	अतिथि
वातापिम्	४.	वातापि (और)	पेचे	१३.	पकाया था
इल्वलम्	५.	इल्वल को	वातापिम्	१२.	वातापि
			इल्वलः ॥	८.	इल्वल ने

श्लोकार्थ—ह्लाद की पत्नी धमनि ने वातापि और इल्वल को उत्पन्न किया। जिस इल्वल ने अतिथि अगस्त्य के लिये तो वातापि को पकाया था ॥

षोडशः श्लोकः

अनुह्लादस्य सूर्म्यायां बाष्कलो महिषस्तथा।
विरोचनस्तु प्राह्लादिर्देव्यास्तस्याभवद्बलिः ॥१६॥

पदच्छेद— अनुह्लादस्य सूर्म्यायाम् बाष्कलः महिषः तथा।
विरोचनः तु प्राह्लादिः देव्याः तस्य अभवत् बलिः ॥

शब्दार्थ—

अनुह्लाद	१.	अनुह्लाद की (पत्नी)	तु	७.	तो
सूर्म्यायाम्	२.	सूर्म्या ने	प्राह्लादिः	६.	प्रह्लाद का पुत्र
बाष्कलः	३.	बाष्कल	देव्याः	१०.	देवी नाम की पत्नी से
महिषः	५.	महिष को (उत्पन्न किया)	तस्य	९.	उसकी
तथा।	४.	और	अभवत्	१२.	हुआ
विरोचनः	८.	विरोचन था	बलिः ॥	११.	बलि

श्लोकार्थ—अनुह्लाद की पत्नी सूर्म्या ने बाष्कल और महिष को उत्पन्न किया। प्रह्लाद का पुत्र तो बिरोचन था। उसकी देवी नाम की पत्नी से बलि हुआ ॥

सप्तदशः श्लोकः

बाणज्येष्ठं पुत्रशतमशनायां ततोऽभवत् ।
तस्यानुभावः सुश्लोक्यः पश्चादेवाभिधास्यते ॥१७॥

पदच्छेद— बाण ज्येष्ठम् पुत्र शतम् अशनायाम् ततः अभवत् ।
तस्य अनुभावः सुश्लोक्यः पश्चात् एव अभिधास्यते ॥

शब्दार्थ—

बाण	४.	बाण था (जो)	तस्य	७.	उस बलि का
ज्येष्ठम्	३.	ज्येष्ठ पुत्र	अनुभावः	८.	प्रभाव
पुत्रशतम्	२.	सौ पुत्रों में	सुश्लोक्यः	९.	गान करने योग्य है
अशनायाम्	५.	अशना से (उत्पन्न)	पश्चात्	१०.	उसे बाद में
ततः	१.	उस बलि के	एव	११.	ही (आठवें स्कन्ध में)
अभवत् ।	६.	हुआ था	अभिधास्यते ॥	१२.	कहेंगे

श्लोकार्थ—उस बलि के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र बाण था। जो अशना से उत्पन्न हुआ था। उस बलि का प्रभाव गान करने योग्य है। उसे बाद में ही आठवें स्कन्ध में कहेंगे ॥

अष्टादशः श्लोकः

बाण आराध्य गिरिशं लेभे तद्गणमुख्यताम् ।
यत्पार्श्वे भगवानास्ते ह्यद्यापि पुरपालकः ॥१८॥

पदच्छेद— बाण अराध्य गिरिशम् लेभे तत् गण मुख्यताम् ।
यत् पार्श्वे भगवान् आस्ते हि अद्यापि पुर पालकः ॥

बाणः	१.	बाण ने	यत्	८.	जिसके
आराध्य	३.	आराधना करके	पार्श्वे	९.	समीप
गिरिशम्	२.	शंकर की	भगवान्	१०.	भगवान् शंकर
लेभे	७.	प्राप्त किया	आस्ते	१४.	हैं
तत्	४.	उनके	हि अद्यापि	११.	आज भी (उसके)
गण	५.	गणों में	पुर	१२.	नगर
मुख्यताम् ।	६.	प्रधान पद को	पालकः ॥	१३.	रक्षक होकर रहते

श्लोकार्थ—बाण ने शंकर की आराधना करके उनके गणों में प्रधान पद को प्राप्त किया। जिसके समीप भगवान् शंकर आज भी उसके नगररक्षक होकर रहते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मरुतश्च दितेः पुत्राश्चत्वारिंशन्नवाधिकाः ।
त आसन्नप्रजाः सर्वे नीता इन्द्रेण सात्मताम् ॥१९॥

पदच्छेद— मरुतः च दितेः पुत्राः चत्वारिंशत् नव अधिकाः ।
ते आसन् अप्रजाः सर्वे नीता इन्द्रेणः सात्मताम् ॥

शब्दार्थ—

मरुतः	२. मरुद् गण	ते	८. वे
च	१. और	आसन्	११. हुये (तथा)
दितेः	३. दिति के	अप्रजाः	१०. सन्तान हीन
पुत्राः	४. पुत्र	सर्वे	९. सभी
चत्वारिंशत्	६. चालीस (४९) थे	नीताः	१४. बना लिये गये
नव	७. नौ	इन्द्रेण	१२. इन्द्र के द्वारा
अधिकाः ।	५. अधिक	सात्मताम् ॥	१३. अपने समान

श्लोकार्थ—और मरुद् गण दिति के पुत्र नौ अधिक चालीस (उनचास) थे । वे सभी सन्तान हीन हुये । इन्द्र के द्वारा अपने समान बना लिये गये ॥

विंशः श्लोकः

राजोवाच—कथं त आसुरं भावमपोह्यौत्पत्तिकं गुरो ।
इन्द्रेण प्रापिताः सात्म्यं किं तत्साधु कृतं हि तैः ॥२०॥

पदच्छेद— कथम् ते आसुरम् भावम् अपोह्य औत्पत्तिकम् गुरो ।
इन्द्रेण प्रापिताः सात्म्यम् किम् तत् साधु कृतम् हि तैः ॥

शब्दार्थ—

कथम्	७. कैसे	**इन्द्रेण**	८. इन्द्र के द्वारा
ते	२. वे	**प्रापिताः**	१०. प्राप्त करा दिये गये
आसुरम्	४. असुर	**सात्म्यम्**	९. समानता को
भावम्	५. भाव को	**किम्**	१३. कौन
अपोह्य	६. त्यागकर	**तत्**	१२. वह
औत्पत्तिकम्	३. जन्म जात	**साधु**	१४. अच्छा
गुरौ ।	१. हे भगवन् !	**कृतम्**	१५. कार्य किया था
		हि तैः ॥	११. उन्होंने

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! वे जन्म जात असुर भाव को त्याग कर कैसे इन्द्र के द्वारा समानता को प्राप्त करा दिये गये । उन्होंने वह कौन अच्छा कार्य किया था ॥

एकविंशः श्लोकः

इमे श्रद्दधते ब्रह्मन्नृषयो हि मया सह ।
परिज्ञानाय भगवंस्तन्नो व्याख्यातुमर्हसि ॥२१॥

पदच्छेद— इमे श्रद्दधते ब्रह्मन् ऋषयः हि मया सह ।
परि ज्ञानाय भगवन् तत् नः व्याख्यातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

इमे	२. ये	**परिज्ञानाय**	८. जानने के लिये उत्सुक हैं
श्रद्दधते	७. श्रद्धा रखते हैं (और)	**भगवान्**	९. हे भगवन् ! आप
ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !	**तत्**	१०. वह
ऋषयः	३. ऋषि गण	**नः**	११. हमें
हि	६. निश्चित रूप से	**व्याख्यातुम्**	१२. बताने योग्य
मया	४. मेरे	**अर्हसि ॥**	१३. हैं
सह ।	५. साथ		

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! ये ऋषिगण मेरे साथ निश्चित रूप से श्रद्धा रखते हैं और जानने के लिये उत्सुक हैं । हे भगवान् ! आप वह हमें बताने योग्य हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तद्विष्णुरातस्य स बादरायणिर्वचो निशम्यादृतमल्पमर्थवत् ।
सभाजयन् संनिभृतेन चेतसा जगाद सत्रायण सर्वदर्शनः ॥२२॥

पदच्छेद— तत् विष्णु रातस्य सः बादरायणिः वचः निशम्य आदृतम् अल्पम् अर्थवत् ।
संभाजयन् संनिभृतेन् चेतसा जगाद सत्रायण सर्व दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

तत्	६. उस	**अर्थवत् ।**	१०. सारगर्भित
विष्णु रतस्य	७. राजा परीक्षित् के	**सभाजयन्**	१५. अभिनन्दन करते हुये
सः	४. उन	**संनिभृतेन**	१३. प्रसन्न
बादरायणिः	५. शुकदेव जी ने	**चेतसा**	१४. चित्त से
वचः	११. वचन	**जगाद्**	१६. कहा
निशम्य	१२. सुनकर	**सत्रायण**	१. सर्वज्ञ
आदृतम्	८. आदर से युक्त	**सर्व**	२. सम
अल्पम्	९. थोड़े शब्दों में (एवन्)	**दर्शनः ॥**	३. दर्शी

श्लोकार्थ—सर्वज्ञ समदर्शी उन शुकदेव जी ने उस राजा परीक्षित के आदर से युक्त थोड़े शब्दों में एवम् सारगर्भित वचन सुनकर प्रसन्न चित्त से अभिनन्दन करते हुये कहा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—हतपुत्रा दितिः शक्रपार्ष्णिग्राहेण विष्णुना ।
मन्युना शोकदीप्तेन ज्वलन्ती पर्यचिन्तयत् ॥२३॥

पदच्छेद— हत पुत्रा दितिः शक्रपार्ष्णि ग्राहेण विष्णुना ।
मन्युना शोकदीप्तेन ज्वलन्ती पर्यचिन्तयत् ॥

शब्दार्थ—

हत	५. मारे गये	विष्णुना	४. विष्णु के द्वारा
पुत्रा	६. पुत्रों वाली	मन्युना	१०. क्रोध से
दितिः	७. दिति	शोक	८. शोक से
शक्र	१. इन्द्र के	दीप्तेन	९. प्रज्वलित
पार्ष्णि	२. पक्ष	ज्वलन्ती	११. जलती हुई
ग्राहेण ।	३. पाती	पर्यचिन्तयत् ॥	१२. सोचने लगी

श्लोकार्थ—इन्द्र के पक्षपाती विष्णु के द्वारा मारे गये पुत्रों वाली दिति शोक से प्रज्वलित क्रोध से जलती हुई सोचने लगी ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

कदा नु भ्रातृहन्तारमिन्द्रियाराममुल्बणम् ।
अक्लिन्नहृदयं पापं घातयित्वा शये सुखम् ॥२४॥

पदच्छेद — कदा नु भ्रातृ हन्तारम् इन्द्रियारामम् उल्बणम् ।
अक्लिन्नहृदयम् पापम् घातयित्वा शये सुखम् ॥

शब्दार्थ—

कदा नु	१. कब मैं	अक्लिन्नहृदयम्	६. निर्दयी
भ्रातृ	२. भाई के	पापम्	७. पापी (इन्द्र को)
हन्तारम्	३. मारने वाले	घातयित्वा	८. मरवाकर
इन्द्रियारामम्	४. विषयी	शये	१०. सोऊंगी
उल्बणम् ।	५. क्रूर	सुखम् ॥	९. सुख से

श्लोकार्थ—कब मैं भाई के मारने वाले विषयी, क्रूर, निर्दयी, पापी इन्द्र को मरवाकर सुख से सोऊँगी ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

कृमिविड्भस्मसंज्ञाऽऽसीद्यस्येशाभिहितस्य च ।
भूतध्रुक् तत्कृते स्वार्थम् किम् वेद निरयो यतः ॥२५॥

पदच्छेद— कृमि विड् भस्म संज्ञा आसीत् यस्य ईशः अभिहितस्य च ।
भूतध्रुक् तत् कृते स्वार्थम् किम् वेद निरयः यतः ॥

शब्दार्थ—

कृमि	४.	कीड़ा	भूत	९.	प्राणियों से
विड्	५.	विष्ठा (और)	ध्रुक्	१०.	द्रोह करने वाले लोग
भस्म	६.	राख का ढेर	तत् कृते	११.	उस शरीर के
संज्ञा	७.	नामक हो जाता है	स्वार्थम्	१२.	सच्चे स्वार्थ को
आसीत्	८.	है	किम्	१३.	क्या
यस्य	१.	जिसे	वेद:	१४.	जाने
ईशः	२.	स्वामी	निरयः	१६.	नरक में जाना पड़ता है
अभिहितस्य च ।	३.	कहकर पुकारते हैं (वह)	यतः ॥	१५.	क्योंकि इससे उसे

श्लोकार्थ—जिसे स्वामी कहकर पुकारते हैं, वह कीड़ा, विष्ठा और राख का ढेर नामक हो जाता है। प्राणियों से द्रोह करने वाले उस शरीर के सच्चे स्वार्थ को क्या जाने । क्योंकि इससे उसे नरक में जाना पड़ता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

आशासानस्य तस्येदं ध्रुवमुन्नद्धचेतसः ।
मदशोषक इन्द्रस्य भूयाद्येन सुतो हि मे ॥२६॥

पदच्छेद— आशासानस्य तस्य इदम् ध्रुवम् उन्नद्ध चेतसः ।
मद शोषक इन्द्रस्य भूयात् येन सुतः हि मे ॥

शब्दार्थ—

आशासानस्य	२.	भोगादि की आशा करने वाले	मद	८.	गर्व को
			शोषक	९.	चूर्ण करने वाला
तस्य	६.	उस	इन्द्रस्य	७.	इन्द्र के
इदम्	१.	इस शरीर के	भूयात्	१३.	प्राप्त हो (वही मुझे करना है)
ध्रुवम्	३.	निश्चित रूप से	येन	१२.	जिस उपाय से
उन्नद्ध	४.	घमंडी	सुतः	१०.	पुत्र
चेतसः ।	५.	चित्त वाले	हि मे ॥	११.	मुझे

श्लोकार्थ—इस शरीर के भोगादि की आशा करने वाले निश्चित रूप से घमंडी चित्त वाले उस इन्द्र के गर्व को चूर्ण करने वाला पुत्र मुझे प्राप्त हो। वही उपाय करना है ।

सप्तविंशः श्लोकः

इति भावेन सा भर्तुराचचारासकृत्प्रियम् ।
शुश्रूषयानुरागेण प्रश्रयेण दमेन च ॥२७॥

पदच्छेद— इति भावेन सा भर्तुः आचचार असकृत् प्रियम् ।
शुश्रूषया अनुरागेण प्रश्रयेण दमेन च ॥

शब्दार्थ

इति	१. इस	प्रियम् ।	११. प्रिय		
भावेन	२. भाव से	शुश्रूषया	५. सेवा		
सा	३. उसने	अनुरागेण	६. प्रेम		
भर्तुः	४. स्वामी के साथ	प्रश्रयेण	७. नम्रता		
आचचार	१२. आचरण किया	दमेन	९. जितेंद्रियता से		
असकृत्	१०. बार-बार	च ॥	८. और		

श्लोकार्थ—इस भाव से उसने स्वामी के साथ सेवा, प्रेम, नम्रता और जितेन्द्रियता से बार-बार स्वामी के साथ आचरण किया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

भक्त्या परमया राजन् मनोज्ञैर्वल्गुभाषितैः ।
मनो जग्राह भावज्ञा सुस्मितापाङ्गवीक्षणैः ॥२८॥

पदच्छेद— भक्त्या परमया राजन् मनोज्ञैः वल्गु भाषितैः ।
मनः जग्राह भावज्ञा सुस्मित अपाङ्ग वीक्षणैः ॥

शब्दार्थ—

भक्त्या	४. भक्ति से	मनः	११. मन को
परमया	३. परम	जग्राह	१२. आकृष्ट कर लिया
राजन्	१. हे राजन्	भावज्ञा	२. भाव को जानने वाली (दिति ने)
मनोज्ञैः	५. सुन्दर (और)	सुस्मित	८. मुस्कराहट (एवम्)
वल्गु	६. मधुर	अपाङ्ग	९. तिरछी
भाषितैः ।	७. वचनों से	वीक्षणैः ॥	१०. चितवन से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भाव को जानने वाली दिति ने परम भक्ति से सुन्दर और मधुर वचनों से मुस्कराहट एवम् तिरछी चितवन से पति के मन को आकृष्ट कर लिया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एवं स्त्रिया जडीभूतो विद्वानपि विदग्धया ।
बाढमित्याह विवशो न तच्चित्रं हि योषिति ॥२९॥

पदच्छेद— एवम् स्त्रिया जडीभूतः विद्वान् अपि विदग्धया ।
वाढम् इति आह विवशः न यत् चित्रम् हि योषिति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	**इति**	९. ऐसा
स्त्रिया	३. स्त्री के द्वारा	**आह**	१०. कहा
जडीभूतः	४. मोहित किये गये	**विवशः**	७. विवश होकर (उन्होंने)
विद्वान्	५. विद्वान् होते हुये	**न**	१४. नहीं है
अपि	६. भी	**यत्**	११. यह
विदग्धया ।	२. चतुर	**चित्रम्**	१३. आश्चर्य
वाढम्	८. बहुत अच्छा	**हि योषिति ॥**	१२. स्त्री के सम्बन्ध में (कोई)

श्लोकार्थ—इस प्रकार चतुर स्त्री के द्वारा मोहित किये गये विद्वान होते हुये भी विवश होकर उन्होंने बहुत अच्छा ऐसा कहा । यह स्त्री के सम्बन्ध में कोई आश्चर्य नहीं है ॥

त्रिंशः श्लोकः

विलोक्यैकान्तभूतानि भूतान्यादौ प्रजापतिः ।
स्त्रियं चक्रे स्वदेहार्धं यया पुंसां मतिर्हृता ॥३०॥

पदच्छेद— विलक्य एकान्त भूतानि भूतानि आदौ प्रजापतिः ।
स्त्रियम् चक्रे स्वदेह अर्धम् यया पुंसाम् मतिः हृताः ॥

शब्दार्थ—

विलोक्य	५. देखकर	**स्व**	६. अपने
एकान्तभूतानि	४. एकान्त प्रिय	**देह**	७. शरीर का
भूतानि	३. प्राणियों को	**अर्धम्**	८. आधा भाग
आदौ	१. सृष्टि के प्रारम्भ में	**यया**	११. जिसने
प्रजापतिः ।	२. प्रजापति ब्रह्मा ने	**पुंसाम्**	१२. पुरुषों की
स्त्रियम्	९. स्त्री को	**मतिः**	१३. बुद्धि को
चक्रे	१०. बनाया	**हृता ॥**	१४. हरण कर लिया ॥

श्लोकार्थ—सृष्टि के प्रारम्भ में प्रजापति ब्रह्मा ने प्राणियों को एकान्त प्रिय देखकर अपने शरीर का आधा भाग स्त्री को बनाया । जिसने पुरुषों की बुद्धि को हरण कर लिया ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एवं शुश्रूषितस्तात भगवान् कश्यपः स्त्रिया ।
प्रहस्य परमप्रीतो दितिमाहाभिनन्द्य च ॥३१॥

पदच्छेद— एवम् शुश्रूषितः तात भगवान् कश्यपः स्त्रिया ।
प्रहस्य परम प्रीतः दितिम् आह अभिनन्द्य च ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	प्रहस्य	८.	हंस कर
शुश्रूषितः	४.	सेवा किये जाने पर	परम प्रीतः	७.	परम प्रसन्न होकर
तात	१.	हे तात !	दितिम्	११.	दिति से
भगवान्	५.	भगवान्	आह	१२.	कहा
कश्यपः	६.	कश्यप जी ने	अभिनन्द्य	१०.	अभिनन्दन करते हुये
स्त्रिया ।	३.	स्त्री के द्वारा	च ॥	९.	और

श्लोकार्थ—हे तात ! इस प्रकार स्त्री के द्वारा सेवा किये जाने पर भगवान् कश्यप जी ने परम प्रसन्न होकर और हंसकर अभिनन्दन करते हुये दिति से कहा ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

कश्यप उवाच—वरं वरय वामोरु प्रीतस्तेऽहमनिन्दिते ।
स्त्रिया भर्तरि सुप्रीते कः काम इह चागमः ॥३२॥

पदच्छेद— वरम् वरय वामोरु प्रीतः ते अहम् अनिन्दिते ।
स्त्रिया भर्तरि सुप्रीते कः कामः इह च अगमः ॥

शब्दार्थ—

वरम्	६.	वरदान	स्त्रिया	१०.	स्त्री के लिये
वरय	७.	मांगो	भर्तरि	८.	स्वामी के
वामोरु	२.	सुन्दरि	सुप्रीते	९.	प्रसन्न होने पर
प्रीतः	५.	प्रसन्न हूँ	कः कामः	१२.	कौन सा मनोरथ
ते	४.	तुम पर	इह	१३.	यहाँ
अहम्	३.	मैं	च	११.	और
अनिन्दिते ।	१.	हे अनिंद्य !	अगमः ॥	१४.	दुर्लभ है

श्लोकार्थ—हे अनिंद्य सुन्दरि ! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, वरदान माँगो । स्वामी के प्रसन्न होने पर स्त्री के लिये और कौन सा मनोरथ यहाँ दुर्लभ है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पतिरेव हि नारीणां दैवतं परमं स्मृतम् ।
मानसः सर्वभूतानां वासुदेवः श्रियः पतिः ॥३३॥

पदच्छेद— पतिः एव हि नारीणाम् दैवतम् परमम् स्मृतम् ।
मानसः सर्व भूतानाम् वासुदेवः श्रियः पतिः ॥

शब्दार्थ—

पतिः	४.	पति	मानसः	१२.	मन में विराजमान हैं
एव	५.	ही	सर्व	१०.	सभी
हि नारीणाम्	१.	क्योंकि नारियों का	भूतानाम्	११.	प्राणियों के
दैवतम्	३.	देवता	वासुदेवः	९.	भगवान् वासुदेव
परमम्	२.	परम	श्रियः	७.	लक्ष्मी
स्मृतम् ।	६.	कहा गया है	पतिः ॥	८.	पति

श्लोकार्थ—क्योकि नारियों का परम देवता पति ही कहा गया है । लक्ष्मी पति भगवान् वासुदेव सभी प्राणियों के मन में विराजमान हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

स एव देवतालिङ्गैर्नामरूपविकल्पितैः ।
इज्यते भगवान् पुम्भिः स्त्रीभिश्च पतिरूपधृक् ॥३४॥

पदच्छेद— सः एव देवता लिङ्गैः नामरूप विकल्पितैः ।
इज्यते भगवान् पुम्भिः स्त्रीभिः च पतिरूप धृक् ॥

शब्दार्थ—

सः	८.	वह	इज्यते	१४.	पूजे जाते हैं
एव	९.	ही	भगवान्	१०.	भगवान् वासुदेव
देवता	१.	विभिन्न देवता के	पुम्भिः	११.	पुरुषों
लिङ्गैः	२.	रूप में	स्त्रीभिः	१३.	स्त्रियों के द्वारा
नाम	३.	नाम और	च	१२.	और
रूप	४.	रूप के भेद से	पतिरूप	६.	पति के रूप को
विकल्पितैः ।	५.	कल्पित	धृक् ॥	७.	धारण करने वाले

श्लोकार्थ—विभिन्न देवता के रूप में नाम और भेद से कल्पित पति के रूप को धारण करने वाले वह ही भगवान् वासुदेव पुरुषों और स्त्रियों के द्वारा पूजे जाते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तस्मात्पतिव्रता नार्यः श्रेयस्कामाः सुमध्यमे ।
यजन्तेऽनन्यभावेन पतिमात्मानमीश्वरम् ॥३५॥

पदच्छेद — तस्मात् पतिव्रताः नार्यः श्रेयः कामाः सुमध्यमे ।
यजन्ते अनन्य भावेन पतिम् आत्मानम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२. इसलिये	यजन्ते	१२. पूजा करती हैं
पतिव्रताः	५. पतिव्रता	अनन्य	७. अनन्य
नार्यः	६. स्त्रियाँ	भावेन	८. भाव से
श्रेयः	३. कल्याण	पतिम्	६. पति की
कामः	४. चाहने वाली	आत्मानम्	१०. आत्मा (और)
सुमध्यमे ।	१. हे सुन्दरि !	ईश्वरम् ॥	११. ईश्वर के रूप में

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! इसलिये कल्याण चाहने वाली पतिव्रता स्त्रियाँ अनन्य भाव से पति की आत्मा और ईश्वर के रूप में पूजा करती हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

सोऽहं त्वयार्चितो भद्रे ईदृग्भावेन भक्तितः ।
तत्ते सम्पादये काममसतीनां सुदुर्लभम् ॥३६॥

पदच्छेद— सः अहम् त्वया अर्चितः भद्रे ईदृक् भावेन भक्तितः ।
तत् ते सम्पादये कामम् असतीनाम् सुदुर्लभम् ॥

शब्दार्थ—

सः अहम्	७. वह मैं	भक्तितः ।	४. भक्ति पूर्वक
त्वया	५. तुम्हारे द्वारा	तत् ते	८. इसलिये तुम्हारी
अर्चितः	६. पूजित	सम्पादये	१०. पूर्ण करूँगा
भद्रे	१. हे कल्याणि !	कामम्	६. कामना को
ईदृक्	२. ऐसे	असतीनाम्	११. जो असतियों के लिये
भावेन	३. भाव से	सुदुर्लभम् ॥	१२. अत्यन्त दुर्लभ है

श्लोकार्थ—हे कल्याणि ! ऐसे भाव से भक्ति पूर्वक तुम्हारे द्वारा पूजित वह मैं तुम्हारी कामना को पूर्ण करूँगा, जो असतियों के लिये अत्यन्त दुर्लभ है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

दितिरुवाच—वरदो यदि मे ब्रह्मन् पुत्रमिन्द्रहणं वृणे ।
अमृत्युं मृतपुत्राहं येन मे घातितौ सुतौ ॥३७॥

पदच्छेद— वरदः यदि मे ब्रह्मन् पुत्रन् इन्द्रहणम् वृणे ।
अमृत्युम् मृत पुत्रा अहम् येन मे घातितौ सुतौ ।।

शब्दार्थ—

वरदः	४.	वर देना चाहते हैं (तो)	अमृत्युम्	८.	मृत्यु से रहित
यदि	२.	यदि (आप)	मृत	५.	मरे हुए
मे	३.	मुझे	पुत्र	६.	पुत्रों वाली
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	अहम्	७.	मैं
पुत्रम्	१०.	पुत्र	येन मे	१२.	जिसने मेरे
इन्द्रहणम्	९.	इन्द्र को मारने वाला	घातितौ	१४.	मार दिया
वृणे ।	११.	मांगती हूँ	सुतौ ।।	१३.	दो पुत्रों को

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! यदि आप मुझे वर देना चाहते हैं तो मरे हुये पुत्रों वाली मैं मृत्यु से रहित इन्द्र को मारनेवाला पुत्र मांगती हूँ । जिसने मेरे दो पुत्रों को मार दिया ।।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

निशम्य तद्वचो विप्रो विमनाः पर्यतप्यत ।
अहो अधर्मः सुमहानद्य मे समुपस्थितः ॥३८॥

पदच्छेद— निशम्य तद् वचः विप्रः विमनाः पर्यतप्यत ।
अहो अधर्मः सुमहान् अद्य मे समुपस्थितः ।।

शब्दार्थ—

निशम्य	३.	सुनकर	अहो	७.	अरे
तद्	१.	उसका	अधर्म	११.	अधर्म
वचः	२.	वचन	सुमहान्	१०.	बहुत बड़ा
विप्रः	४.	कश्यप जी	अद्य	८.	आज
विमनाः	५.	उदास होकर	मे	९.	मेरे लिए
पर्यतप्यत ।	६.	पछताने लगे	समुपस्थितः ।।	१२.	उपस्थित हो गया है

श्लोकार्थ—उसका वचन सुनकर कश्यप जी उदास होकर पछताने लगे—अरे आज मेरे लिये बहुत बड़ा अधर्म उपस्थित हो गया है ।।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अहो अद्येन्द्रियारामो योषिन्मय्येह मायया ।
गृहीतचेताः कृपणः पतिष्ये नरके ध्रुवम् ॥३९॥

पदच्छेद— अहो अद्य इन्द्रियारामः योषित् मय्या इह मायया ।
गृहीत चेताः कृपणः पतिष्ये नरके ध्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	हाय	गृहीत	७.	अपहृत
अद्य	२.	आज	चेताः	८.	चित्तवाला (और)
इन्द्रियारामः	३.	इन्द्रियों का दास	कृपणः	९.	कृपण मैं
योषित्	४.	स्त्री	पतिष्ये	१२.	गिरूँगा
मय्या	५.	रूपिणी	नरके	११.	नरक में
इह मायया ।	६.	इस माया के द्वारा	ध्रुवम् ॥	१०.	अवश्य ही

श्लोकार्थ—हाय आज इन्द्रियों का दास, स्त्री रूपिणी इस माया के द्वारा अपहृत चित्त वाला और कृपण मैं अवश्य ही नरक में गिरूँगा ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

कोऽतिक्रमोऽनुवर्तन्त्याः स्वभावमिह योषितः ।
धिङ् मां बतावुधं स्वार्थे यदहं त्वजितेन्द्रियः ॥४०॥

पदच्छेद— कः अतिक्रमः अनुवर्तन्त्याः स्वभावम् इह योषितः ।
धिक् माम् बत आयुधम् स्वार्थे यद् अहम् तु अजितेन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

कः	५.	क्या	माम्	७.	मुझे
अतिक्रमः	६.	दोष है	बत	९.	खेद है कि
अनुवर्तन्त्याः	३.	अनुसरण करती हुई	आयुधम्	१३.	मूर्ख बना (और)
स्वभावम्	२.	स्वभाव का	स्वार्थे	१२.	स्वार्थ में पड़कर
इह	१.	यहाँ अपने	यद्	१०.	जो
योषितः ।	४.	स्त्री का	अहम्	११.	मैं
धिक्	८.	धिक्कार है	तु अजितेन्द्रियः ॥	१४.	इन्द्रियों को वश में न रख सका

श्लोकार्थ—यहाँ अपने स्वभाव का अनुसरण करती हुई स्त्री का क्या दोष है। मुझे धिक्कार है, कि जो मैं स्वार्थ में पड़कर इन्द्रियों को वश में न रख सका ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

शरत्पद्मोत्सवं वक्त्रं वचश्च श्रवणामृतम् ।
हृदयं क्षुरधाराभं स्त्रीणां को वेद चेष्टितम् ॥४१॥

पदच्छेद— शरत् पद्म उत्सवम् वक्त्रम् वचः च श्रवण अमृतम् ।
हृदयम् क्षुर धाराभम् स्त्रीणाम् कः वेद चेष्टितम् ॥

शब्दार्थ –

शरत्	२.	शरत् ऋतु के	**अमृतम्**	७.	अमृत के समान (होती है)
पद्म	४.	कमल के समान (होता है)	**हृदयम्**	९.	हृदय
उत्सवम्	३.	खिले हुये	**क्षुर**	१०.	छूरे की
वक्त्रम्	१.	स्त्रियों का मुख	**धाराभम्**	११.	धार के समान (होती है)
वचः	५.	वाणी	**स्त्रीणाम्**	१२.	स्त्रियों की
च	८.	और	**कः वेद**	१४.	कौन जानता है
श्रवण ।	६.	सुनने में	**चेष्टितम् ॥**	१३.	लीलायें

श्लोकार्थ—स्त्रियों का मुख शरत् ऋतु के खिले हुये कमल के समान होता है । वाणी सुनने में अमृत के समान होती है । और हृदय छूरे की धार के समान होता है । स्त्रियों की लीलायें कौन जानता है ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

न हि कश्चित्प्रियः स्त्रीणामञ्जसा स्वाशिषात्मनाम् ।
पतिं पुत्रं भ्रातरं वा घ्नन्त्यर्थे घातयन्ति च ॥४२॥

पदच्छेद— नहि कश्चित् प्रियः स्त्रीणाम् अञ्जसा स्व आशिषा आत्मनाम् ।
पतिम् पुत्रम् भ्रातरम् वा घ्नन्ति अर्थे घातयन्ति च ॥

शब्दार्थ—

नहि	७.	नहीं	**पतिम्**	१०.	पति
कश्चित्	६.	कोई	**पुत्रम्**	११.	पुत्र
प्रियः	८.	प्रिय है (वे)	**भ्रातरम्**	१३.	भाई को भी
स्त्रीणाम्	५.	स्त्रियों का	**वा**	१२.	अथवा
अञ्जसा	१.	वस्तुतः	**घ्नन्ति**	१४.	मार देती हैं
स्व	२.	अपनी	**अर्थे**	९.	स्वार्थवश
आशिष	३.	लालसाओं की	**घातयन्ति**	१६.	मरवा डालती हैं
आत्मनाम् ।	४.	मूर्तिरूप	**च ॥**	१५.	या

श्लोकार्थ—वस्तुतः अपनी लालसाओं की मूर्तिरूप स्त्रियों का कोई प्रिय नहीं है । वे स्वार्थवश पति, पुत्र अथवा भाई को भी मार देती हैं या मरवा देती हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्रतिश्रुतं ददामीति वचस्तन्न मृषा भवेत्।
वधं नार्हति चेन्द्रोऽपि तत्रेदमुपकल्पते ॥४३॥

पदच्छेद— प्रतिश्रुतम् ददामि इति वचः तत् न मृषा भवेत्।
वधम् न अर्हति च इन्द्रः अपि तत्र इदम् उपकल्पते ॥

शब्दार्थ—

प्रतिश्रुतम्	३.	प्रतिज्ञा कर चुका हूँ	वधम्	१२.	वध करने योग्य
ददामि	१.	मैं दूंगा	न अर्हति	१३.	नहीं है
इति	२.	ऐसी	च	९.	और
वचः	५.	वचन	इन्द्रः	१०.	इन्द्र
तत्	४.	वह	अपि	११.	भी
न	७.	नहीं	तत्र	१४.	इस विषय में
मृषा	६.	मिथ्या	इदम्	१५.	यह
भवेत्।	८.	होगा	उपकल्पते ॥	१६.	उपाय करता हूँ

श्लोकार्थ—मैं दूंगा ऐसी प्रतिज्ञा कर चुका हूँ। वह वचन मिथ्या नहीं होगा। और इन्द्र भी वध करने योग्य नहीं है। इस विषय में यह उपाय करता हूँ।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इति संचिन्त्य भगवान्मारीचः कुरुनन्दन।
उवाच किञ्चित् कुपित आत्मानं च विगर्हयन् ॥४४॥

पदच्छेद— इति संचिन्त्य भगवान् मारीचः कुरुनन्दन।
उवाच किञ्चित् कुपितः आत्मानम् च विगर्हयन् ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	ऐसा	उवाच	११.	बोले
संचिन्त्य	३.	सोच कर	किञ्चित्	६.	कुछ
भगवान्	४.	भगवान्	कुपितः	७.	क्रोधित होकर
मारीचः	५.	कश्यप जी	आत्मानम्	९.	अपने आप की
कुरुनन्दन।	१.	हे राजा परीक्षित्	च	८.	और
			विगर्हयन् ॥	१०.	निन्दा करते हुये

श्लोकार्थ—हे राजा परीक्षित्! ऐसा सोच कर भगवान् कश्यप जी कुछ क्रोधित होकर और अपने आप की निन्दा करते हुये बोले ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

कश्यप उवाच— पुत्रस्ते भविता भद्रे इन्द्रहा देवबान्धवः ।
संवत्सरं व्रतमिदं यद्यञ्जो धारयिष्यसि ॥४५॥

पदच्छेद— पुत्रः ते भविता भद्रे इन्द्रहा देव बान्धवः ।
संवत्सरम् व्रतम् इदम् यदि अञ्जः धारयिष्यसि ॥

शब्दार्थ—

पुत्रः	१०.	पुत्र	संवत्सरम्	५.	एक वर्ष तक
ते	८.	तुम्हें	व्रतम्	४.	व्रत का
भविता	११.	होगा (अन्यथा वह)	इदम्	३.	इस
भद्रे	१.	हे कल्याणि !	यदि	२.	यदि
इन्द्रहा	९.	इन्द्र को मारने वाला	अञ्जः	६.	ठीक से
देवबान्धवः ।	१२.	देवताओं का बन्धु होगा	धारयिष्यसि ॥	७.	पालन करोगी (तो)

श्लोकार्थ—हे कल्याणि ! यदि इस व्रत का एक वर्ष तक ठीक से पालन करोगी तो तुम्हें इन्द्र को मारने वाला पुत्र होगा । अन्यथा वह देवताओं का बन्धु होगा ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

दितिरुवाच— धारयिष्ये व्रतं ब्रह्मन्ब्रूहि कार्याणि यानि मे ।
यानि चेह निषिद्धानि न व्रतं घ्नन्ति यानि तु ॥४६॥

पदच्छेद— धारयिष्ये व्रतम् ब्रह्मन् ब्रूहि कार्याणि यानि मे ।
यानि च इह निषिद्धानि न व्रतम् घ्नन्ति यानि तु ॥

शब्दार्थ—

धारयिष्ये	३.	पालन करूँगी	यानि	९.	जो कार्य
व्रतम्	२.	व्रत का	च इह	८.	और उसमें
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् ! मैं	निषिद्धानि	१०.	निषिद्ध हैं
ब्रूहि	७.	बताइये	न	१३.	नहीं
कार्याणि	५.	कार्य	व्रतम्	१२.	व्रत को
यानि	४.	जो	घ्नन्ति	१४.	नष्ट करते हैं (उसे भी बतावें)
मे ।	६.	मुझे करने हैं (उसे)	यानि तु ॥	११.	जो और

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! मैं व्रत का पालन करूँगी । जो कार्य मुझे करने हैं उन्हें बताइये । और इसमें जो कार्य निषिद्ध हैं और जो व्रत को नष्ट नहीं करते हैं उन्हें भी बतावें ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

कश्यप उवाच—न हिंस्याद्भूतजातानि न शपेन्नानृतं वदेत्।
नच्छिन्द्यान्नखरोमाणि न स्पृशेद्यदमङ्गलम् ॥४७॥

पदच्छेद— न हिंस्यात् भूत जातानि न शपेत् न अनृतम् वदेत् ।
न छिन्द्यात् नख रोमाणि न स्पृशेत् यत् अमङ्गलम् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	न	८.	नहीं
हिंस्यात्	४.	कष्ट दें	छिन्द्यात्	११.	काटें
भूत	१.	प्राणी	नख	९.	नाखून और
जातानि	२.	मात्र को	रोमाणि	१०.	रोयें को
न शपेत्	५.	नहीं शाप दें	न स्पृशेत्	१४.	न छूयें
न अनृतम्	६.	नहीं झूठ	यत्	१२.	जो
वदेत् ।	७.	बोलें	अमङ्गलम् ॥	१३.	अशुभ वस्तुयें हैं उन्हें

श्लोकार्थ—प्राणी मात्र को कष्ट नहीं दें नहीं शाप दें, नहीं झूठ बोलें, नहीं नाखून और रोयें को काटें। जो अशुभ वस्तुयें हैं उन्हें न छूयें ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

नाप्सु स्नायान्न कुप्येत न सम्भाषेत दुर्जनैः।
न वसीताधौतवासः स्रजं च विधृतां क्वचित् ॥४८॥

पदच्छेद— न अप्सु स्नायात् न कुप्येत न सम्भाषेत दुर्जनैः ।
न वसीत अधौत वासः स्रजम् च विधृताम् क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

न	२.	नहीं	वसीत	१०.	पहने
अप्सु	१.	जल में घुस कर	अधौत	८.	बिना धुला
स्नायात्	३.	स्नान करे	वासः	९.	वस्त्र
न कुप्येत	४.	क्रोध करे	स्रजम्	१४.	माला पहनें
न सम्भाषे	६.	न बात करे	च	११.	और न
दुर्जनैः ।	५.	दुष्टों से	विधृताम्	१३.	पहनी हुई
न	७.	न	क्वचित् ॥	१२.	किसी की

श्लोकार्थ—जल में घुसकर स्नान नहीं करे। न क्रोध करे। न दुष्टों से बात करे। न बिना धुला वस्त्र पहनें। और न किसी की पहनी हुई माला पहनें ॥

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

नोच्छिष्टं चण्डिकान्नं च सामिषं वृषलाहृतम् ।
भुञ्जीतोदक्यया दृष्टं पिबेदञ्जलिना त्वपः ॥४९॥

पदच्छेद— न उच्छिष्टम् चण्डिका अन्नम् च सामिषम् वृषल आहृतम् ।
भुञ्जीत उदक्यया दृष्टम् पिबेत् अञ्जलिना तु अपः ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं	भुञ्जीत	११.	खाये
उच्छिष्टम्	१.	जूठा	उदक्यया	८.	रजस्वला के द्वारा
चण्डिका	३.	भद्रकाली का	दृष्टम्	९.	देखा हुआ अन्न
अन्नम्	५.	प्रसाद	पिबेत्	१५.	पिये
च	२.	और	अञ्जलिना	१३.	अञ्जली से
सामिषम्	४.	मांस सहित	तु	१२.	और
वृषल	६.	शूद्र का	अपः ॥	१४.	जल (नहीं)
आहृतम् ।	७.	लाया हुआ (तथा)			

श्लोकार्थ—जूठा और भद्रकाली का मांस सहित प्रसाद, शूद्र का लाया हुआ तथा रजस्वला के द्वारा देखा हुआ अन्न नहीं खाये और अञ्जली से जल नहीं पिये ॥

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

नोच्छिष्टास्पृष्टसलिला सन्ध्यायां मुक्तमूर्धजा ।
अनर्चितासंयतवाङ् नासंवीता बहिश्चरेत् ॥५०॥

पदच्छेद— न उच्छिष्ट अस्पृष्ट सलिला सन्ध्यायाम् मुक्तमूर्धजा ।
अनर्चित असंयत वाक् न असंवीता बहिः चरेत् ॥

शब्दार्थ—

न	२.	नहीं	अनर्चित	८.	बिना शृङ्गार के (और)
उच्छिष्ट	१.	जूठे मुंह	असंयत	१०.	संयम किये विना
अस्पृष्ट	३.	बिना	वाक्	९.	वाणी का
सलिला	४.	धोये	न	१३.	नहीं
सन्ध्यायाम्	५.	सन्ध्या के समय	असंवीता	११.	बिना चादर ओढ़े
मुक्त	७.	खोले हुये	बहिः	१२.	बाहर
मूर्धजा ।	६.	वाल	चरेत् ॥	१४.	निकले

श्लोकार्थ - तथा जूठे मुंह (नहीं विना धोये) सन्ध्या के समय, बाल खोले हुये, बिना शृङ्गार किये, वाणी का संयम किये विना, बिना चादर ओढे बाहर नहीं निकले ॥

एकपञ्चाशत्तमः श्लोकः

नाधौतपादाप्रयता　नार्द्रपान्नो　उदक्शिराः ।
शयीत नापराङ्नान्यैर्न नग्ना न च सन्ध्ययोः ॥५१॥

पदच्छेद— न अधौत पादा अप्रयता न आर्द्रपात् नो उदक्शिराः ।
शयीत न अपराङ् न अन्यैः न नग्ना न च सन्ध्ययोः ॥

न	१.	नहीं	शयीत	१७.	सोये
अधौत	२.	बिना धोये	न	९.	नहीं
पादा	३.	पैर	अपराङ्	१०.	पच्छिम मुंह करके
अप्रयता	४.	अपवित्र अवस्था में	न अन्यैः	११.	नहीं दूसरों के साथ
न	५.	नहीं	न नग्ना	१२.	नहीं नग्न होकर
आर्द्रपात्	६.	गीले पैर	न	१४.	नहीं
नो	७.	नहीं	च	१३.	और
उदक्शिराः ।	८.	उत्तर शिर करके	सन्ध्ययोः ॥	१६.	दोनों सन्ध्या कालों में

श्लोकार्थ—और नहीं बिना पैर धोये, अपवित्र अवस्था में नहीं, गीले पैर, नहीं, उत्तर शिर करके नहीं, 'पच्छिम मुंह करके नहीं, दूसरों के साथ नहीं, नग्न होकर नहीं और नहीं दोनों सन्ध्या कालों में सोये ॥

शब्दार्थ—

द्विपञ्चाशत्तमः श्लोकः

धौतवासाः　शुचिर्नित्यं　सर्वमङ्गलसंयुता ।
पूजयेत्प्रातराशात्प्राग्गोविप्राञ्श्रियमच्युतम्　॥५२॥

पदच्छेद— धौतवासाः शुचिः नित्यम् सर्वमङ्गल संयुता ।
पूजयेत् प्रातः आशात् प्राक् गो विप्रान् श्रियम् अच्युतम् ॥

शब्दार्थ—

धौत	२.	धुला	पूजयेत्	१४.	पूजन करे
वासाः	३.	वस्त्र पहने	प्रातः	८.	प्रातः काल
शुचिः	४.	पवित्र होकर	आशात्	९.	भोजन से
नित्यम्	१.	नित्य	प्राक्	१०.	पहले
सर्व	५.	सभी प्रकार की	गोविप्रान्	११.	गौ-ब्राह्मण
मङ्गल	६.	मांगलिक वस्तुओं से	श्रियम्	१२.	लक्ष्मी (और)
संयुक्ता ।	७.	युक्त रहे	अच्युतम् ॥	१३.	भगवान् नारायण का

श्लोकार्थ—नित्य धुला वस्त्र पहने, पवित्र होकर सभी प्रकार की मांगलिक वस्तुओं से युक्त रहे। प्रातःकाल भोजन से पहले गौ, ब्राह्मण, लक्ष्मी और भगवान् नारायण का पूजन करे ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

स्त्रियो वीरवतीश्चार्चेत्स्रग्गन्धबलिमण्डनैः ।
पतिं चार्च्योपतिष्ठेत ध्यायेत्कोष्ठगतं च तम् ॥५३॥

पदच्छेद— स्त्रियः वीरवतीः च अर्चेत् स्रग् गन्धबलिमण्डनैः ।
पतिम् च अर्च्य उपतिष्ठेत ध्यायेत् कोष्ठगतम् च तम् ॥

शब्दार्थ—

स्त्रियः	७. स्त्रियों को	पतिम्	१०. पति की
वीरवतीः	६. सुहागिन	च	९. और
च	४. और	अर्च्य	११. पूजा करके
अर्चेत	८. पूजा करे	उपतिष्ठेत	१२. सेवा में रहे
स्रग्	१. माला	ध्यायेत्	१६. ध्यान करे
गन्ध	२. सुगन्धित द्रव्य	कोष्ठगतम्	१४. कोख में स्थित
बलि	३. नैवेद्य	च	१३. तथा
मण्डनैः ।	५. आभूषणों से	तम् ॥	१५. उस पति का

श्लोकार्थ—माला सुगन्धित द्रव्य, नैवेद्य, और आभूषणों से सुहागिन स्त्रियों को पूजा करे और पति की पूजा करके सेवा में रहे । तथा कोख में स्थित उस पति का ध्यान करे ।

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

सांवत्सरं पुंसवनं व्रतमेतदविप्लुतम् ।
धारयिष्यसि चेत्तुभ्यं शक्रहा भविता सुतः ॥५४॥

पदच्छेद— सांवत्सरम् पुंसवनम् व्रतम् एतद् अविप्लुतम् ।
धारयिष्यसि चेत् तुभ्यम् शक्रहा भविता सुतः ॥

शब्दार्थ—

सांवत्सरम्	५. एक वर्ष तक	धारयिष्यसि	६. पालन करोगी
पुंसवनम्	१. पुंसवन नामक	चेत्	७. तो
व्रतम्	३. व्रत का	तुभ्यम्	८. तुम्हें
एतद्	२. इस	शक्रहा	९. इन्द्र को मारने वाला
अविप्लुतम् ।	४. विना त्रुटि के	भविता	११. होगा
		सुतः ॥	१०. पुत्र

श्लोकार्थ—पुंसवन नामक इस व्रत का विना त्रुटि के एक वर्ष तक पालन करोगी तो तुम्हें इन्द्र को मारने वाला पुत्र होगा ॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

बाढमित्यभिप्रेत्याथ दिती राजन् महामनाः ।
काश्यपं गर्भमाधत्त व्रतं चाञ्जो दधार सा ॥५५॥

पदच्छेद— बाढम् इति अभिप्रेत्य अथ दितिः राजन् महामनाः ।
काश्यपम् गर्भम् आधत्त व्रतं च अञ्जः दधार सा ॥

शब्दार्थ—

बाढम्	५.	बहुत अच्छा			
इति	६.	ऐसा	गर्भम्	९.	गर्भ को
अभिप्रेत्य	७.	कहकर	आधत्त	१०.	धारण किया
अथ	२.	तदनन्तर	व्रतम्	१४.	व्रत का
दितिः	४.	दिति ने	च	११.	और
राजन्	१.	हे राजन् !	अञ्जः	१३.	शीघ्र ही
महामनाः ।	३.	महामनस्विनी	दधार	१५.	पालन करने लगी
काश्यपम्	८.	कश्यप से	सा ॥	१२.	वह

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तदनन्तर महामनस्विनी दिति ने बहुत अच्छा ऐसा कहकर कश्यप से गर्भ को धारण किया । और वह शीघ्र ही व्रत का पालन करने लगी ॥

षट्पञ्चाशत्तमः श्लोकः

मातृष्वसुरभिप्रायमिन्द्र आज्ञाय मानद ।
शुश्रूषणेनाश्रमस्थां दितिं पर्यचरत्कविः ॥५६॥

पदच्छेद— **मातृष्वसुः अभिप्रायम् इन्द्रः आज्ञाय मानद ।**
शुश्रूषणेन आश्रमस्थाम् दितिं पर्यचरत् कविः ॥

शब्दार्थ—

मातृष्वसुः	४.	मौसी का	शुश्रूषणेन	७.	सेवा के द्वारा
अभिप्रायम्	५.	अभिप्राय	आश्रमस्थाम्	८.	आश्रम में स्थित
इन्द्रः	३.	इन्द्र ने	दितिं	९.	दिति की
आज्ञाय	६.	जानकर	पर्यचरत्	१०.	परिचर्या करने लगे
मानद ।	१.	हे राजा परीक्षित् !	कविः ॥	२.	बुद्धिमान्

श्लोकार्थ—हे राजा परीक्षित् ! बुद्धिमान् इन्द्र ने मौसी का अभिप्राय जानकर सेवा के द्वारा आश्रम में स्थित दिति की परिचर्या करने लगे ॥

सप्तपञ्चाशत्तमः श्लोकः

नित्यं वनात्सुमनसः फलमूलसमित्कुशान् ।
पत्राङ्कुरमृदोऽपश्च काले काल उपाहरत् ॥५७॥

पदच्छेद— नित्यम् वनात् सुमनसः फल मूल समित् कुशान् ।
पत्र अङ्कुर मृदः अपः च काले काले उपाहरत् ॥

शब्दार्थ—

नित्यम्	१.	प्रतिदिन	**पत्र**	८.	पत्ते
वनात्	२.	वन से	**अङ्कुर**	९.	दूब
सुनमसः	३.	फूल	**मृदः**	१०.	मिट्टी
फल	४.	फल	**अपः**	१२.	जल
मूल	५.	मूल	**च**	११.	और
सुमित्	६.	समिधा	**काले काले**	१३.	समय-समय पर
कुशान् ।	७.	कुश	**उपाहरत् ॥**	१४.	ला देते थे

श्लोकार्थ—प्रतिदिन वन से फूल-फल-मूल-समिधा-कुश-पत्ते-दूब-मिट्टी और जल समय पर ला देते थे ॥

अष्टपञ्चाशत्तमः श्लोकः

एवं तस्या व्रतस्थाया व्रतच्छिद्रं हरिर्नृप ।
प्रेप्सुः पर्यचरज्जिह्मो मृगहेव मृगाकृतिः ॥५८॥

पदच्छेद— एवम् तस्याः व्रतस्थायाः व्रतछिद्रम् हरिः नृप ।
प्रेप्सुः पर्यचरत् जिह्मः मृगहा इव मृग आकृतिः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	**प्रेप्सुः**	७.	पाने के इच्छुक
तस्याः	४.	उस (दिति के)	**पर्यचरत्**	१३.	सेवा करने लगे
व्रतस्थायाः	३.	व्रतपरायण	**जिह्मः**	८.	कुटिल
व्रत	५.	व्रत के	**मृगहा**	१०.	बहेलिये के
छिद्रम्	६.	छिद्र को	**इव**	११.	समान (उसकी)
हरिः	९.	इन्द्र	**मृग**	१४.	हिरन की सी
नृप ।	१.	हे राजन् !	**आकृतिः ॥**	१२.	आकृति बनाकर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार व्रत परायण उस दिति के व्रत के छिद्र को पाने के इच्छुक कुटिल इन्द्र बहेलिये के समान उसकी सेवा करने लगे ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

नाध्यगच्छद्व्रतच्छिद्रं तत्परोऽथ महीपते ।
चिन्तां तीव्रां गतः शक्रः केन मे स्याच्छिवं त्विह ॥५९॥

पदच्छेद— न अध्यगचछत् व्रत छिद्रम् तत्परः अथ महीपते ।
चिन्ताम् तीव्राम् गतः शक्रः केन मे स्यात् शिवम् तु इह ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं	तीव्राम्	९.	तीव्र
अध्यगचछत्	७.	पाया (तब)	गतः	११.	प्राप्त हुये (कि)
व्रत	४.	व्रत में	शक्रः	८.	इन्द्र
छिद्रम्	५.	छिद्र	केन	१४.	किस प्रकार
तत्परः	३.	उस सेवा में लगे (इन्द्र को)	मे	१२.	मुझे
अथ	२.	तदनन्तर	स्यात्	१६.	प्राप्त हो
महीपते ।	१.	हे राजन् !	शिवम्	१५.	कल्याण
चिन्ताम्	१०.	चिन्ता को	तु इह ॥	१३.	यहाँ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तदनन्तर उस सेवा में लगे इन्द्र ने व्रत में छिद्र नहीं पाया । तब इन्द्र तीव्र चिन्ता को प्राप्त हुये कि मुझे यहाँ किस प्रकार कल्याण प्राप्त हो ॥

षष्टितमः श्लोकः

एकदा सा तु सन्ध्यायामुच्छिष्टा व्रतकर्शिता ।
अस्पृष्टवार्यधौताङ्घ्रिः सुष्वाप विधिमोहिता ॥६०॥

पदच्छेद— एकदा सा तु सन्ध्यायाम् उच्छिष्टा व्रत कर्शिता ।
अस्पृष्टवारि अधौताङ्घ्रिः सुष्वाप विधि मोहिता ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक दिन	अस्पृष्टवारि	६.	बिना आचमन किये
सा	२.	वह (दिति)	अधौताङ्घ्रिः	७.	बिना पैर धोये
तु सन्ध्यायाम्	३.	सन्ध्या के समय	सुष्वाप	११.	सो गई
उच्छिष्टा	१०.	जूठे मुंह	विधि	८.	विधाता के द्वारा
व्रत	४.	व्रत से	मोहिता ॥	९.	मोहित की हुई
कर्शिता ।	५.	दुर्बल			

श्लोकार्थ—एक दिन वह दिति सन्ध्या के समय व्रत से दुर्बल, बिना आचमन किये, बिना पैर धोये विधाता के द्वारा मोहित की हुई जूठे मुंह सो गई ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

लब्ध्वा तदन्तरं शक्रो निद्रापहृतचेतसः।
दितेः प्रविष्ट उदरं योगेशो योगमायया ॥६१॥

पदच्छेद— लब्ध्वा तत् अन्तरम् शक्रः निद्रा अपहृत चेतसः।
दितेः प्रविष्टः उदरम् योगेशः योग मायया ॥

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	५.	पाकर	चेतसः।	८.	चित्त वाली
तत्	३.	उसका	दितेः	९.	दिति के
अन्तरम्	४.	अवसर	प्रविष्टः	१२.	प्रवेश कर गये
शक्रः	२.	इन्द्र	उदरम्	१०.	पेट में
निद्रा	६.	निद्रा से	योगेशः	१.	योगेश्वर
अपहृत	७.	बेसुध	योगमायया ॥	११.	योग बल से

श्लोकार्थ—योगेश्वर इन्द्र उसका अवसर पाकर निद्रा से बेसुध चित्त वाली दिति के पेट में योग बल से प्रवेश कर गये ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

चकर्त सप्तधा गर्भं वज्रेण कनकप्रभम्।
रुदन्तं सप्तधैकैकं मा रोदीरिति तान् पुनः ॥६२॥

पदच्छेद— चकर्त सप्तधा गर्भम् वज्रेण कनक प्रभम्।
रुदन्तम् सप्तधा एक एकम् मा रोदीः इति तान् पुनः ॥

शब्दार्थ—

चकर्त	६.	टुकड़े कर दिये	सप्तधा	१४.	सात-सात टुकड़े कर दिये
सप्तधा	५.	सात	एक एकम्	१३.	एक-एक के
गर्भम्	४.	गर्भ के	मा	९.	मत
वज्रेण	१.	वज्र से	रोदीः	१०.	रोओ
कनक	२.	सोने के समान	इति	११.	इस प्रकार कह कर
प्रभम्।	३.	चमकते हुये	तान्	८.	उनसे
रुदन्तम्	७.	रोते हुये	पुनः ॥	१२.	फिर

श्लोकार्थ—इन्द्र ने वज्र से सोने के समय चमकते हुये गर्भ के सात टुकड़े कर दिये। रोते हुये उनसे मत रोओ इस प्रकार कह कर फिर एक-एक के सात-सात टुकड़े कर दिये ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

ते तमूचुः पाट्यमानाः सर्वे प्राञ्जलयो नृप ।
नो जिघांससि किमिन्द्र भ्रातरो मरुतस्तव ॥६३॥

पदच्छेद-- ते तम् ऊचुः पाटचमानाः सर्वे प्राञ्जलयः नृप ।
नः जिघांससि किम् इन्द्र भ्रातरः मरुतः तव ॥

शब्दार्थ—

ते	३.	उन	नः	६.	हमें
तम्	६.	उस इन्द्र से	जिघांससि	११.	मार रहे हो
ऊचुः	७.	कहा	किम्	१०.	क्यों
पाटचमानाः	२.	टुकड़े किये जाते हुये	इन्द्र	८.	हे इन्द्र !
सर्वे	४.	सभी ने	भ्रातरः	१३.	भाई
प्राञ्जलयः	५.	हाथ जोड़ कर	मरुतः	१४.	मरुद्गण हैं
नृप ।	१.	हे राजन् !	तव ॥	१२.	(हम) तुम्हारे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! टुकड़े किये जाते हुये उन सभी ने हाथ जोड़ कर उस इन्द्र से कहा । हे इन्द्र ! हमें क्यों मार रहे हो । हम तुम्हारे भाई मरुद्गण हैं ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

मा भैष्ट भ्रातरो मह्यं यूयमित्याह कौशिकः ।
अनन्यभावान् पार्षदानात्मनो मरुतां गणान् ॥६४॥

पदच्छेद— मा भैष्ट भ्रातरः मह्यम् इति आह कौशिकः ।
अनन्य भावान् पार्षदान् आत्मनः मरुताम् गणान् ॥

शब्दार्थ—

मा	१०.	मत	कौशिकः	७.	इन्द्र ने
भैष्ट	११.	डरो	अनन्य	२.	अनन्य
भ्रातरः	१४.	भाई हो	भावान्	३.	प्रेमी
मह्यम्	१३.	मेरे	पार्षदान्	४.	पार्षद
यूयम्	१२.	तुम लोग	आत्मनः	१.	अपने
इति	८.	यह	मरुताम्	५.	मरुद्
आह	९.	कहा (कि)	गणान् ॥	६.	गणों से

श्लोकार्थ—अपने अनन्य प्रेमी पार्षद मरुद्गणों से इन्द्र ने यह कहा कि मत डरो । तुम लोग मेरे भाई हो ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

न ममार दितेर्गर्भः श्रीनिवासानुकम्पया।
बहुधा कुलिशक्षुण्णो द्रौण्यस्त्रेण यथा भवान्॥६५॥

पदच्छेद— न ममार दितेः गर्भः श्री निवास अनुकम्पया।
बहुधा कुलिश क्षुण्णः द्रौणि अस्त्रेण यथा भवान्॥

शब्दार्थ—

न	९.	नहीं	बहुधा	६.	अनेक बार
ममार	१०.	मरा	कुलिश	७.	वज्र से
दितेः	४.	दिति का	क्षुण्णः	८.	टुकड़े-टुकड़े होने पर भी
गर्भः	५.	गर्भ	द्रौणि	१२.	अश्वत्थामा के
श्री	१.	लक्ष्मी	अस्त्रेण	१३.	अस्त्र से
निवास	२.	नारायण भगवान् की	यथा	११.	जैसे
अनुकम्पया।	३.	कृपा से	भवान्॥	१४.	आप नहीं मरे

श्लोकार्थ—लक्ष्मीपति भगवान् की कृपा से दिति का गर्भ अनेक बार वज्र से टुकड़े-टुकड़े होने पर भी नहीं मरा जैसे अश्वत्थामा के अस्त्र से आप नहीं मरे॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

सकृदिष्ट्वाऽऽदिपुरुषं पुरुषो याति साम्यताम्।
संवत्सरं किञ्चिदूनं दित्या यद्धरिरर्चितः॥६६॥

पदच्छेद— सकृत् इष्ट्वा आदि पुरुषम् पुरुषः याति साम्यताम्।
संवत्सरम् किञ्चित् ऊनम् दित्या यत् हरिः अर्चितः॥

शब्दार्थ—

सकृत्	१.	एक बार	संवत्सरम्	८.	एक वर्ष से
इष्ट्वा	४.	उपासना करके	किञ्चित्	९.	कुछ कम
आदि	२.	आदि	ऊनम्	१०.	समय तक
पुरुषम्	३.	पुरुष नारायण की	दित्या	११.	दिति ने
पुरुषः	५.	मनुष्य (उनकी)	यत्	१२.	जो
याति	७.	प्राप्त कर लेता है (फिर)	हरिः	१३.	श्री हरि की
साम्यताम्।	६.	समानता को	अर्चितः॥	१४.	आराधना की थी

श्लोकार्थ—एक बार आदि पुरुष नारायण की उपासना करके मनुष्य उनकी समानता को प्राप्त कर लेता है। फिर एक वर्ष से कुछ कम समय तक दिति ने जो श्री हरि की आराधना की थी॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

सजूरिन्द्रेण पञ्चाशद्देवास्ते मरुतोऽभवन् ।
व्यपोह्य मातृदोषं ते हरिणा सोमपाः कृताः ॥६७॥

पदच्छेद— सजूः इन्द्रेण पञ्चाशत् देवाः ते मरुतः अभवन् ।
व्यपोह्य मातृ दोषम् ते हरिणा सोमपाः कृताः ॥

शब्दार्थ -

सजूः	२.	साथ मिलकर	व्यपोह्य	११.	मिटाकर
इन्द्रेण	१.	इन्द्र के	मातृ	९.	माता के
पञ्चाशत्	५.	पचास	दोषम्	१०.	शत्रुभाव को
देवाः	६.	देवता	ते	१२.	वे
ते	३.	वे	हरिणा	८.	इन्द्र के द्वारा
मरुतः	४.	मरुद्गण	सोमपाः	१३.	सोमरस पीने वाले देवता
अभवन् ।	७.	हो गये	कृताः ॥	१४.	बना लिये गये

श्लोकार्थ—इन्द्र के साथ मिलकर वे मरुद्गण पचास देवता हो गये । इन्द्र के द्वारा माता के शत्रुभाव को मिटाकर वे सोमरस पीने वाले देवता बना लिये गये ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

दितिरुत्थाय ददृशे कुमारानलप्रभान् ।
इन्द्रेण सहितान् देवी पर्यतुष्यदनिन्दिता ॥६८॥

पदच्छेद— दितिः उत्थाय ददृशे कुमारान् अनल प्रभान् ।
इन्द्रेण सहितान् देवी परि अतुष्यत् अनिन्दिता ॥

शब्दार्थ—

दितिः	३.	दिति ने	**इन्द्रेण**	८.	इन्द्र के
उत्थाय	४.	उठकर	**सहितान्**	९.	साथ
ददृशे	१०.	देखकर	**देवी**	२.	देवी
कुमारान्	७.	कुमारों को	**परि**	११.	अत्यन्त
अनल	५.	अग्नि के समान	**अतुष्यत्**	१२.	प्रसन्न हुई
प्रभान् ।	६.	तेजस्वी	**अनिन्दिता ॥**	१.	सुन्दरी

श्लोकार्थ—सुन्दरी देवी दिति ने उठकर अग्नि के समान तेजस्वी कुमारों को इन्द्र के साथ देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुई ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

अथेन्द्रमाह ताताहमादित्यानां भयावहम् ।
अपत्यमिच्छन्त्यचरं व्रतमेतत्सुदुष्करम् ।।६९।।

पदच्छेद— अथ इन्द्रम् आह तात अहम् आदित्यानाम् भयावहम् ।
अपत्यम् इच्छन्ती अचरम् व्रतम् एतत् सुदुष्करम् ।।

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद (दिति ने)	अपत्यम्	७.	सन्तान को
इन्द्रम्	२.	इन्द्र से	इच्छन्ती	८.	चाहते हुये
आह	३.	कहा	अचरम्	१२.	पालन किया
तात अहम्	४.	हे बेटा ! मैंने	व्रतम्	११.	व्रत का
आदित्यानाम्	५.	अदिति के पुत्रों के लिये	एतत्	९.	इस
भयावहम् ।	६.	भय देने वाली	सुदुष्करमम् ।।	१०.	अत्यन्त कठिन

श्लोकार्थ—इसके बाद दिति ने इन्द्र से कहा—हे बेटा ! मैंने अदिति के पुत्रों के लिये भय देने वाली सन्तान को चाहते हुये इस अत्यन्त कठिन व्रत का पालन किया ।।

सप्ततितमः श्लोकः

एकः सङ्कल्पितः पुत्रः सप्त सप्ताभवन् कथम् ।
यदि ते विदितं पुत्र सत्यं कथय मा मृषा ।।७०।।

पदच्छेद— एकः सङ्कल्पितः पुत्रः सप्त सप्त अभवन् कथम् ।
यदि ते विदितम् पुत्र सत्यम् कथय मा मृषा ।।

शब्दार्थ—

एकः	२.	एक	ते	९.	तुम्हें
सङ्कल्पितः	४.	संकल्प किया (फिर)	विदितम्	१०.	जानते हो तो
पुत्रः	३.	पुत्र के लिये (मैंने)	पुत्र	१.	बेटा (इन्द्र)
सप्त सप्त	५.	सात-सात (उनचास)	सत्यम्	११.	सत्य
अभवन्	७.	हो गये	कथय	१२.	कहो
कथम् ।	६.	कैसे	मा	१४.	मत कहना
यदि	८.	यदि	मृषा ।।	१३.	झूठ

श्लोकार्थ—बेटा इन्द्र ! एक पुत्र के लिये मैंने संकल्प किया था । फिर (सात-सात) उनचास कैसे हो गये । यदि तुम जानते हो तो सत्य कहो । झूठ मत कहना ।।

एकसप्ततितमः श्लोकः

इन्द्र उवाच— अम्ब तेऽहं व्यवसितमुपधार्यागतोऽन्तिकम्।
लब्धान्तरोऽच्छिदं गर्भमर्थबुद्धिर्न धर्मवित् ॥७१॥

पदच्छेद— अम्ब ते अहम् व्यवसितम् उपधार्य आगतः अन्तिकम् ।
लब्ध अन्तरः अच्छिदम् गर्भम् अर्थ-बुद्धिः न धर्मवित् ॥

शब्दार्थ—

अम्ब	१. हे माता !	लब्ध	८. अवसर
ते	२. तुम्हारा	अन्तरः	९. पाकर (मैंने)
अहम्	५. मैं (तुम्हारे)	अच्छिदम्	१२. टुकड़े-टुकड़े कर दिये
व्यवसितम्	३. उद्देश्य	गर्भम्	११. गर्भ के
उपधार्य	४. समझकर	अर्थ-बुद्धि	१०. स्वार्थ-बुद्धि से
आगतः	७. आया (और)	न	१३. न कि
अन्तिकम् ।	६. पास	धर्मवित् ॥	१४. धर्म की भावना से किये

श्लोकार्थ—हे माता ! तुम्हारा उद्देश्य समझ कर मैं तुम्हारे पास आया और अवसर पाकर मैंने स्वार्थ-बुद्धि से गर्भ के टुकड़े-टुकड़े कर दिये न कि धर्म की भावना से किये ॥

द्विसप्ततितमः श्लोकः

कृतो मे सप्तधा गर्भ आसन् सप्त कुमारकाः ।
तेऽपि चैकैकशो वृक्णाः सप्तधा नापि मम्रिरे ॥७२॥

पदच्छेद— कृतः मे सप्तधा गर्भ आसन् सप्त कुमारकाः ।
ते अपि च एक एकशः वृक्णाः सप्तधा न अपि मम्रिरे ॥

शब्दार्थ—

कृतः	४. टुकड़े किये (जिससे)	च	८. और
मे	१. मैंने	एक	१०. एक
सप्तधा	३. सात	एकशः	११. एक करके
गर्भ	२. गर्भ के	वृक्णाः	१३. टुकड़े कर दिये
आसन्	७. हो गये	सप्तधा	१२. सात-सात
सप्त	५. सात	न	१५. नहीं
कुमारकाः ।	६. कुमार	अपि	१४. तो भी (वे)
ते-अपि	९. उनके, भी	मम्रिरे ॥	१६. मरे (बल्कि उनचास हो गये)

श्लोकार्थ—मैंने गर्भ के सात टुकड़े किये । जिससे सात कुमार हो गये और उनके भी एक-एक करके सात-सात टुकड़े कर दिये । तो भी वे नहीं मरे । बल्कि उनचास हो गये ॥

त्रिसप्ततितमः श्लोकः

ततस्तत्परमाश्चर्यं वीक्ष्याध्यवसितं मया ।
महापुरुषपूजायाः सिद्धिः काप्यनुषङ्गिणी ॥७३॥

पदच्छेद— ततः तत् परम् आश्चर्यम् वीक्ष्य अध्यवसितम् मया ।
महापुरुष पूजायाः सिद्धिः कापि अनुषङ्गिणी ॥.

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	**मया ।**	६.	मैंने
तत्	२.	यह	**महापुरुष**	८.	भगवान् नारायण की
परम	३.	परम	**पूजायाः**	९.	पूजा की (यह)
आश्चर्यम्	४.	आश्चर्य	**सिद्धिः**	१२.	सिद्धि है
वीक्ष्य	५.	देखकर	**कापि**	१०.	कोई
अध्यवसितम्	७.	निश्चित किया कि	**अनुषङ्गिणी ॥**	११.	स्वाभाविक

श्लोकार्थ—तदनन्तर यह परम आश्चर्य देखकर मैंने निश्चित किया कि भगवान् नारायण की पूजा की यह कोई स्वभाविक सिद्धि है ॥

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

आराधनं भगवत ईहमाना निराशिषः ।
ये तु नेच्छन्त्यपि परं ते स्वार्थकुशलाः स्मृताः ॥७४॥

पदच्छेद — आराधनम् भगवतः ईहमानाः निराशिषः ।
ये तु न इच्छन्ति अपि परम् ते स्वार्थ कुशलाः स्मृताः ॥

शब्दार्थ—

आराधनम्	४.	आराधना	**अपि**	८.	भी
भगवतः	३.	भगवान् की	**परम्**	७.	मोक्ष को
ईहमानाः	५.	करने वाले हैं	**ते**	६.	वे (तो)
निराशिषः ।	२.	निष्काम भाव से	**स्वार्थ**	१०.	स्वार्थ सिद्ध करने में
ये तु	१	जो	**कुशलाः**	११.	निपुण
न इच्छन्ति	९.	नहीं चाहते हैं (वे)	**स्मृताः ॥**	१२.	कहे गये हैं

श्लोकार्थ—जो निष्काम भाव से भगवान् की आराधना करने वाले हैं वे तो मोक्ष को भी नहीं चाहते हैं । वे स्वार्थ सिद्ध करने में निपुण कहे गये हैं ॥

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

आराध्यात्मप्रदं देवं स्वात्मानं जगदीश्वरम् ।
को वृणीते गुणस्पर्शं बुधः स्यान्नरकेऽपि यत् ॥७५॥

पदच्छेद— आराध्य आत्म प्रदम् देवम् स्व आत्मानम् जगदीश्वरम् ।
कः वृणीते गुण स्पर्शम् बुधः स्यात् नरके अपि यत् ॥

शब्दार्थ—

आराध्य	७.	आराधना करके	कः	८.	कौन
आत्म	१.	आत्मा को	वृणीते	११.	चाहेगा
प्रदम्	२.	दे देने वाले	गुण स्पर्शम्	१०.	विषय-भोग को
देवम्	३.	देवता (तथा)	बुधः	९.	बुद्धिमान् (मनुष्य)
स्व	४.	अपने	स्यात्	१४.	मिल जाता है
आत्मानम्	५.	आत्म स्वरूप	नरके अपि	१३.	नरक में भी
जगदीश्वरम्	६.	भगवान् की	यत् ॥	१२.	जो

श्लोकार्थ—आत्मा को दे देने वाले देवता तथा अपने आत्मस्वरूप भगवान् की आराधना करके कौन बुद्धिमान् मनुष्य विषय भोग को चाहेगा जो नरक में भी मिल जाता है ॥

षट्सप्ततितमः श्लोकः

तदिदं मम दौर्जन्यं बालिशस्य महीयसि ।
क्षन्तुमर्हसि मातस्त्वं दिष्ट्या गर्भो मृतोत्थितः ॥७६॥

पदच्छेद— तत् इदम् मम दौर्जन्यम् बालिशस्य महीयसि ।
क्षन्तुम् अर्हसि मातः त्वम् दिष्ट्या गर्भः मृत उत्थितः ॥

शब्दार्थ—

तत्	३.	इसलिये	अर्हसि	१०.	योग्य हैं ।
इदम्	६.	इस	मातः	२.	माता
मम	४.	मुझ	त्वम्	८.	आप
दौर्जन्यम्	७.	दुष्टता को	दिष्टया	११.	भाग्य से यह
बालिशस्य	५.	मूर्ख की	गर्भः	१२.	गर्भ
महीयसि ।	१.	हे पूजनीया !	मृत	१३.	मर जाने पर भी
क्षन्तुम्	९.	क्षमा करने	उत्थितः ॥	१४.	जी गया

श्लोकार्थ—हे पूजनीया माता ! इसलिये मुझ मूर्ख की इस दुष्टता को आप क्षमा करने योग्य हैं । भाग्य से यह गर्भ मर जाने पर भी जी गया ॥

सप्तसप्ततितमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इन्द्रस्तयाभ्यनुज्ञातः शुद्धभावेन तुष्टया ।
मरुद्भिः सह तां नत्वा जगाम त्रिदिवं प्रभुः ॥७७॥

पदच्छेद— इन्द्रः तया अभिअनुज्ञातः शुद्ध भावेन तुष्टया ।
मरुद्भिः सह ताम् नत्वा जगाम त्रिदिवम् प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः	२.	इन्द्र	**मरुद्भिः**	८.	मरुद्गणों के
तया	६.	उन (माता से)	**सह ताम्**	९.	साथ उसको
अभिअनुज्ञातः	७.	अनुमति पाकर	**नत्वा**	१०.	नमस्कार करके
शुद्ध	३.	शुद्ध	**जगाम**	१२.	चले गये
भावेन	४.	भाव से	**त्रिदिवम्**	११.	स्वर्ग को
तुष्टया	५.	सन्तुष्ट हुई	**प्रभुः ॥**	१.	प्रभु

श्लोकार्थ—प्रभु इन्द्र शुद्ध भाव से सन्तुष्ट हुई उन माता से अनुमति पाकर मरुद्गणों के साथ उसको नमस्कार करके स्वर्ग को चले गये ॥

अष्टसप्ततितमः श्लोकः

एवं ते सर्वमाख्यातं यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
मङ्गलं मरुतां जन्म किं भूयः कथयामि ते ॥७८॥

पदच्छेद— एवम् ते सर्वम् आख्यातम् यत् माम् त्वम् परिपृच्छसि ।
मङ्गलम् मरुताम् जन्म किम् भूयः कथयामि ते ॥

एवम्	१.	इस प्रकार	**मङ्गलम्**	५.	मंगलमय
ते	९.	तुम से	**मरुताम्**	४.	मरुद्गणों का
सर्वम्	८.	सब	**जन्म**	६.	जन्म
आख्यातम्	१०.	कह दिया	**किम्**	१३.	क्या
यत् माम्	२.	जो मुझसे	**भूयः**	११.	फिर
त्वम्	३.	तुमने	**कथयामि**	१४.	कहूँ
परिपृच्छसि ।	७.	पूछा था (वह)	**ते ॥**	१२.	तुम से (और)

श्लोकार्थ—इस प्रकार जो मुझसे तुमने मरुद्गणों का मंगलमय जन्म पूछा था वह सब तुमसे कह दिया । फिर तुमसे और क्या कहूँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां षष्ठे स्कन्धेमरुद्-उत्पत्ति-कथनम् नाम अष्टादशः अध्यायः ॥१८॥

षष्ठः स्कन्धः

एकोनविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

व्रतं पुंसवनं ब्रह्मन् भवता यदुदीरितम्।
तस्य वेदितुमिच्छामि येन विष्णुः प्रसीदति ॥ १ ॥

पदच्छेद— व्रतम् पुंसवनम् ब्रह्मन् भवता यत् उदीरितम्।
तस्य वेदितुम् इच्छामि येन विष्णुः प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

व्रतम्	५.	व्रत	तस्य	७.	उसको
पुंसवनम्	४.	पुंसवन नाम का	वेदितुम्	८.	जानना
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्!	इच्छामि	९.	चाहती हूँ
भवता	२.	आपने	येन	१०.	जिससे
यत्	३.	जो	विष्णुः	११.	विष्णु भगवान्
उदीरितम्।	६.	कहा है	प्रसीदति ॥	१२.	प्रसन्न हो जाते हैं

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन्! आपने जो पुंसवन नाम का व्रत कहा है उसको जानना चाहती हूँ। जिससे विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— शुक्ले मार्गशिरे पक्षे योषिद्भर्तुरनुज्ञया।
आरभेत व्रतमिदं सार्वकामिकमादितः ॥ २ ॥

पदच्छेद— शुक्ले मार्गशिरे पक्षे योषित् भर्तुः अनुज्ञया।
आरभेत व्रतम् इदम् सार्व कामिकम् आदितः ॥

शब्दार्थ—

शुक्ले	२.	शुक्ल	आरभेत	१२.	आरम्भ करें
मार्गशिरे	१.	अगहन के	व्रतम्	१०.	व्रत को
पक्षे	३.	पक्ष में	इदम्	९.	इस
योषित्	४.	स्त्री	सार्व	७.	सकल
भर्तुः	५.	पति की	कामिकम्	८.	कामनाओं को पूर्ण करने वाले
अनुज्ञया।	६.	आज्ञा से	आदितः ॥	११.	आदि से

श्लोकार्थ—अगहन के शुक्ल पक्ष में स्त्री पति की आज्ञा से सकल कामनाओं को पूर्ण करने वाले इस व्रत को आदि से आरम्भ करें ॥

तृतीयः श्लोकः

निशम्य मरुतां जन्म ब्राह्मणाननुमन्त्र्य च ।
स्नात्वा शुक्लदती शुक्ले वसीतालङ्कृताम्बरे ।
पूजयेत्प्रातराशात्प्राग्भगवन्तं श्रिया सह ॥ ३ ॥

पदच्छेद— निशम्य मरुताम् जन्म ब्राह्मणान् अनुमन्त्र्य च ।
स्नात्वा शुक्लदती शुक्ले वसीतअलङ्कृत अम्बरे ।
पूजयेत् प्रातः आशात् प्राक् भगवन्तम् श्रिया सह ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	३.	सुनकर	वसीत	१२.	पहने
मरुताम्	१.	मरुत् गणों का	अलङ्कृत	११.	आभूषण
जन्म	२.	जन्म	अम्बरे ।	१०.	वस्त्र और
ब्राह्मणान्	५.	ब्राह्मणों से	पूजयेत्	१८.	पूजा करे
अनुमन्त्र्य	६.	आज्ञा लेकर	प्रातः	१३.	प्रातःकाल
च ।	४.	और	आशात्	१४.	भोजन से
स्नात्वा	८.	स्नान करे (तथा)	प्राक्	१५.	पहले
शुक्लदती	७.	दातुन करके	भगवन्तम्	१७.	भगवान् नारायण की
शुक्ले	९.	दो स्वच्छ	श्रिया सह ।	१६.	लक्ष्मी के साथ

श्लोकार्थ—मरुत् गणों का जन्म सुनकर ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर दातुन करके स्नान करे तथा दो स्वच्छ वस्त्र और आभूषण पहने । प्रातःकाल भोजन से पहले लक्ष्मी के साथ भगवान् नारायण की पूजा करे ॥

चतुर्थः श्लोकः

अलं ते निरपेक्षाय पूर्णकाम नमोऽस्तु ते ।
महाविभूतिपतये नमः सकलसिद्धये ॥ ४ ॥

पदच्छेद— अलम् ते निरपेक्षाय पूर्णकाम नमः अस्तु ते ।
महाविभूति पतये नमः सकल सिद्धये ॥

शब्दार्थ—

अलम्	३.	समर्थ प्रभु	महा	६.	महान्
ते	४.	आपको	विभूति	७.	विभूतियों के
निरपेक्षाय	१.	अपेक्षा रहित	पतये	८.	स्वामी
पूर्णकाम	२.	पूर्णकाम	नमः	१२.	नमस्कार है
नमः अस्तु	५.	नमस्कार है	सकल	९.	सकल
ते ।	११.	आपको	सिद्धये ॥	१०.	सिद्धिस्वरूप

श्लोकार्थ—अपेक्षा रहित, पूर्णकाम, समर्थ प्रभु आपको नमस्कार है । महान् विभूतियों के स्वामी सकल सिद्धिस्वरूप आपको नमस्कार है ॥

पञ्चमः श्लोकः

यथा त्वं कृपया भूत्या तेजसा महिनौजसा ।
जुष्ट ईश गुणैः सर्वैस्ततोऽसि भगवान् प्रभुः ॥ ५ ॥

पदच्छेद— यथा त्वम् कृपया भूत्वा तेजसा महिना ओजसा ।
जुष्टः ईश गुणैः सर्वैः ततः असि भगवान् प्रभुः ॥

शब्दार्थ -

यथा	१. क्योंकि	जुष्टः	१०. युक्त हैं
त्वाम्	२. आप	ईश	११. हे ईश !
कृपया	३. कृपा	गुणैः	९. गुणों से
भूत्या	४. विभूति	सर्वैः	८. सब ही
तेजसा	५. तेज	ततः	१२. इसलिये (आप)
महिना	६. महिमा	असि	१४. कहलाते हैं
ओजसा ।	७. शक्ति (और)	भगवान् प्रभुः ॥	१३. भगवान् प्रभु

श्लोकार्थ—क्योंकि आप कृपा, विभूति, तेज, महिमा शक्ति और सब ही गुणों से युक्त हैं । हे ईश ! इसलिये आप भगवान् प्रभु कहलाते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

विष्णुपत्नि महामाये महापुरुषलक्षणे ।
प्रीयेथा मे महाभागे लोकमातर्नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

पदच्छेद— विष्णु पत्नि महामाये महापुरुष लक्षणे ।
प्रीयेथा मे महामाये लोकमातः नमः अस्तु ते ॥

शब्दार्थ—

विष्णु	१. आप भगवान् विणु की	मे	८. मुझ पर
पत्नि	२. पत्नी	महामाये	६. हे महाभाग्यवती !
महामाये	३. महामाया हैं (और)	लोकमातः	७. लोकमातः
महापुरुष	४. महापुरुष के	नमः	११. नमस्कार
लक्षणे ।	५. लक्षणों से युक्त हैं	अस्तु	१२. है
प्रीयेथाः	९. प्रसन्न हों	ते ॥	१०. आपको

श्लोकार्थ—आप भगवान् विष्णु की पत्नी महामाया हैं और महापुरुष के लक्षणों से युक्त हैं । महाभाग्यवती ! लोकमातः ! मुझपर प्रसन्न हों । आप को नमस्कार है ॥

सप्तमः श्लोकः

ॐ नमो भगवते महापुरुषाय महानुभावाय महाविभूतिपतये सह महाविभूतिभिर्बलिमुपहराणीति । अनेनाहरहर्मन्त्रेण विष्णो-रावाहनार्घ्यपाद्योपस्पर्शनस्नानवासउपवीतविभूषणगन्धपुष्पधूपदी-पोपहाराद्युपचारांश्च समाहित उपहरेत् ॥ ७ ॥

पदच्छेद—ॐ नमः भगवते महापुरुषाय, महानुभावाय, महाविभूतिपतये, सह महाविभूतिभिः बलिम् उपहराणि इति । अहः अहः मन्त्रेण विष्णोः आवाहन अर्घ्य पाद्य उपस्पर्शन स्नान वास उपवीत विभूषण गन्ध, पुष्प, धूप, दीप उपहार आदि उपचारान् च समाहितः उपहरेत् ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ॐकार स्वरूप	**मन्त्रेण**	१८.	मन्त्र से
नमः	१०.	नमस्कार है	**विष्णोः**	२०.	विष्णु भगवान् को
भगवते	९.	भगवान् को	**आवाहन**	२१.	आवाहनादि
महा	२.	महान्	**अर्घ्य-पाद्य**	२२.	अर्घ्य पाद्य
पुरुषाय	३.	पुरुष	**उपस्पर्शन**	२३.	आचमन
महा	४.	महान्	**स्नान**	२४.	स्नान
अनुभावाय	५.	प्रभावशाली	**वासः**	२५.	वस्त्र
महा	६.	महान्	**उपवीत**	२६.	यज्ञोपवीत (जनेऊ)
विभूति	७.	विभूतियों के	**विभूषण**	२७.	आभूषण
पतये	८.	स्वामी	**गन्ध**	२८.	गन्ध
सह	१३.	साथ	**पुष्प**	२९.	पुष्प
महा	११.	महान्	**धूप**	३०.	धूप
विभूतिभिः	१२.	विभूतियों के	**दीप**	३१.	दीप
बलिम्	१४.	बलि	**उपहारादि**	३२.	नैवेद्यादि
उपहराणि	१५.	आपको दे रही हूँ	**उपचारान्**	३४.	सामग्रियों को
इति ।	१६.	इस प्रकार कहे	**च**	३३.	और
अनेन	१७.	इस	**समाहितः**	३५.	एकाग्रचित्त होकर
अहः अहः	१९.	प्रति-दिन	**उपहरेत् ।।**	३६.	समर्पित करे

श्लोकार्थ—ॐकार स्वरूप, महान् पुरुष, महान् प्रभावशाली, महान् विभूतियों के स्वामी भगवान् को नमस्कार हैं । महान् विभूतियों के साथ आपको बलि दे रही हूँ । इस प्रकार कहे । इस मन्त्र से प्रतिदिन विष्णु भगवान् को आवाहनादि अर्घ्य, पाद्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि और सामग्रियों को एकाग्रचित्त होकर समर्पित करे ॥

अष्टमः श्लोकः

हविःशेषं तु जुहुयादनले द्वादशाहुतीः ।
ॐ नमो भगवते महापुरुषाय महाविभूतिपतये स्वाहेति ॥८॥

पदच्छेद— हविः शेषम् जुहुयात् अनले द्वादश, आहुतीः ।
ॐ नमः भगवते महापुरुषाय महाविभूतिपतये स्वाहा इति ॥

शब्दार्थ—

हविः	२. हवि को	ॐ नमः	७. ॐकार स्वरूप को नमस्कार है
शेषम् तु	१. बची हुई	भगवते	८. भगवान्
जुहुयात्	४. डाल दे	महा पुरुषाय	६. महापुरुष
अनले	३. अग्नि में	महाविभूति	१०. महाविभूतियों के
द्वादश	५. बारह बार	पतये	११. पति के लिये मैं
आहुतीः ।	६. आहुति डाले	स्वाहा इति ॥	१२. हवन कर रही हूँ ऐसा कहे

श्लोकार्थ—बची हुई हवि को अग्नि में डाल दे । बारह बार आहुती डाले । ॐकार स्वरूप भगवान् को नमस्कार है । महापुरुष, महाविभूतियों के पति के लिये मैं हवन कर रही हूँ, ऐसा कहे ॥

नवमः श्लोकः

श्रियं विष्णुं च वरदावाशिषां प्रभवावुभौ ।
भक्त्या सम्पूजयेन्नित्यं यदीच्छेत्सर्वसम्पदः ॥६॥

पदच्छेद— श्रियम् विष्णुम् च वरदौ आशिषाम् प्रभवौ उभौ ।
भक्त्या सम्पूजयेत् नित्यम् यदि इच्छेत् सर्व सम्पदः ॥

शब्दार्थ—

श्रियम्	१०. लक्ष्मी (और)	भक्त्या	१२. भक्ति से
विष्णुम्	११. विष्णु का	सम्पूजयेत्	१४. पूजन करे
च	६. और	नित्यम्	१३. नित्य
वरदौ	५. वर देने वाले	यदि	१. यदि
आशिषाम्	७. कामनाओं को	इच्छेत्	४. चाहे तो
प्रभवौ	८. पूर्ण करने वाले	सर्व	२. सभी
उभौ ।	६. दोनों	सम्पदः ॥	३. सम्पत्तियों को

श्लोकार्थ—यदि सभी सम्पत्तियों को चाहे तो वर देने वाले और कामनाओं को पूर्ण करने वाले दोनों लक्ष्मी और विष्णु का भक्ति से नित्य पूजन करे ॥

दशमः श्लोकः

प्रणमेद्दण्डवद्भूमौ भक्तिप्रह्वेण चेतसा ।
दशवारं जपेन्मन्त्रं ततः स्तोत्रमुदीरयेत् ॥१०॥

पदच्छेद— प्रणमेत् दण्डवत् भूमौ भक्ति प्रह्वेण चेतसा ।
दशवारम् जपेत् मन्त्रम् ततः स्तोत्रम् उदीरयेत् ॥

शब्दार्थ—

प्रणमेत्	६.	प्रणाम करे	**दशवारम्**	७.	दसबार
दण्डवत्	४.	दण्ड के समान	**जपेत्**	९.	जप (पूर्वोक्त)
भूमौ	५.	भूमिपर (गिरकर)	**मन्त्रम्**	८.	मन्त्र को
भक्ति	१.	भक्ति से	**ततः**	१०.	तब
प्रह्वेण	२.	विह्वल	**स्तोत्रम्**	११.	स्तोत्र का
चेतसा ।	३.	चित्त होकर	**उदीरयेत् ॥**	१२.	पाठ करे

श्लोकार्थ—भक्ति से विह्वल चित्त होकर दण्ड के समान भूमि पर गिर कर प्रणाम करे। दसबार पूर्वोक्त मन्त्र का जप करे। तब स्तोत्र का पाठ करे ॥

एकादशः श्लोकः

युवां तु विश्वस्य विभू जगतः कारणं परम् ।
इयं हि प्रकृतिः सूक्ष्मा मायाशक्तिर्दुरत्यया ॥११॥

पदच्छेद— युवाम् तु विश्वस्य विभू जगतः कारणम् परम् ।
इयम् हि प्रकृतिः सूक्ष्मा माया शक्तिः दुरत्यया ॥

शब्दार्थ—

युवाम् तु	१.	आप दोनों तो	**इयम् हि**	७.	यह लक्ष्मी तो
विश्वस्य	२.	विश्व के	**प्रकृतिः**	९.	प्रकृति
विभू	३.	प्रभु (और)	**सूक्ष्मा**	८.	सूक्ष्म
जगतः	४.	संसार के	**माया**	१०.	माया
कारणम्	६.	कारण हैं	**शक्तिः**	११.	शक्ति और
परम् ।	५.	श्रेष्ठ	**दुरत्यया ॥**	१२.	दुर्लंघ्य है

श्लोकार्थ—आप दोनों तो विश्व के प्रभु और संसार के श्रेष्ठ कारण हैं। यह लक्ष्मी तो सूक्ष्म प्रकृति माया शक्ति और दुर्लंघ्य है ॥

द्वादशः श्लोकः

तस्या अधीश्वरः साक्षात्त्वमेव पुरुषः परः ।
त्वं सर्वयज्ञ इज्येयं क्रियेयं फलभुग्भवान् ॥१२॥

पदच्छेद — तस्याः अधीश्वरः साक्षात् त्वम् एव पुरुषः परः ।
त्वम् सर्वयज्ञः इज्या इयम् क्रिया इयम् फलभुक् भवान् ॥

शब्दार्थ —

तस्याः	१.	उस प्रकृति के	सर्वयज्ञः	९.	समस्त यज्ञ हैं
अधीश्वरः	२.	अधिपति	इज्या	११.	यज्ञ की
साक्षात्	३.	स्वयम्	इयम्	१०.	यह
त्वम्	४.	आप	क्रिया	१२.	क्रिया है
एव	५.	ही	इयम्	१६.	यह (फल को उत्पन्न करने वाली क्रिया है)
पुरुषः	७.	पुरुष हो	फल	१४.	फल को
परः ।	६.	परम	भुक्	१५.	भोगने वाले हैं (और)
त्वम्	८.	आप ही	भवान् ॥	१३.	आप ही

श्लोकार्थ — उस प्रकृति के अधिपति स्वयम् आप ही परम पुरुष हो । आप ही समस्त यज्ञ हैं । यह यज्ञ की क्रिया है । आप ही फल को भोगने वाले हैं । और यह फल को उत्पन्न करने वाली क्रिया है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

गुणव्यक्तिरियं देवी व्यञ्जको गुणभुग्भवान् ।
त्वं हि सर्वशरीर्यात्मा श्रीः शरीरेन्द्रियाशया ।
नामरूपे भगवती प्रत्ययस्त्वमपाश्रयः ॥१३॥

पदच्छेद — गुणव्यक्तिः इयम् देवी व्यञ्जकः गुणभुक् भवान् ।
त्वम् हि सर्वशरीरीः आत्मा श्रीः शरीर इन्द्रिय आशया ।
नामरूपे भगवती प्रत्ययः त्वम् अपाश्रयः ॥

शब्दार्थ —

गुणव्यक्तिः	२.	गुणों की अभिव्यक्ति हैं	श्रीः	९.	लक्ष्मी (यह)
इयम् देवी	१.	यह देवी	शरीर इन्द्रिय	१०.	शरीर इन्द्रिय (और)
व्यञ्जकः	४.	प्रकाशित करने वाले तथा)	अशया ।	११.	अन्तः करण हैं
गुणभुक् ।	५.	गुणों के भोक्ता हैं	नामरूपे	१३.	नाम और रूप हैं
भवान	३.	आप	भगवती	१२.	भगवती (लक्ष्मी)
त्वम्हि	६,	आप ही	प्रत्ययः	१५.	प्रकाशक और
सर्वशरीरीः	७.	सभी प्राणियों की	त्वम्	१४.	आप सबके
आत्मा	८.	आत्मा हैं	अपाश्रयः ॥	१६.	आधार हैं

श्लोकार्थ — यह देवी गुणों की अभिव्यक्ति हैं । आप प्रकाशित करने वाले तथा गुणों के भोक्ता हैं आप ही सभी प्राणियों की आत्मा हैं । यह लक्ष्मी शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण हैं । भगवती लक्ष्मी नाम और रूप हैं । आप सबके प्रकाशक और आधार हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यथा युवां त्रिलोकस्य वरदौ परमेष्ठिनौ ।
तथा म उत्तमश्लोक सन्तु सत्या महाशिषः ॥१४॥

पदच्छेद— यथा युवाम् त्रिलोकस्य वरदौ परमेष्ठिनौ ।
तथा मे उत्तमश्लोक सन्तु सत्या महाशिषः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	तथा	६. अतः
युवाम्	२. आप दोनों	मे	८. मेरी
त्रिलोकस्य	३. तीन लोक के	उत्तमश्लोक	७. पवित्र कीर्ति वाले भगवन्
वरदौ	४. वर देने वाले	सन्तु	११. हों
परमेष्ठिनौ ।	५. परमेश्वर हैं	सत्याः	१०. सत्य
		महाशिषः ॥	९. अभिलाषायें

श्लोकार्थ—जैसे आप दोनों तीन लोक के वर देने वाले परसेश्वर हैं । अतः पवित्र कीर्ति वाले भगवन् ! मेरी अभिलाषायें सत्य हों ॥

पञ्चदशः श्लोकः

इत्यभिष्टूय वरदं श्रीनिवासं श्रिया सह ।
तन्निःसार्योपहरणं दत्त्वाऽऽचमनमर्चयेत् ॥१५॥

पदच्छेद— इति अभिष्टूय वरदम् श्रीनिवासम् श्रिया सह ।
तन्निःसार्यः उपहरणम् दत्त्वा आचमनम् अर्चयेत् ॥

शब्दार्थं—

इति	१. इस प्रकार	ततः	७. उस
अभिष्टूय	६. स्तुति करके	निःसार्यः	९. हटाकर
वरदम्	२. वर देने वाले	उपहरणम्	८. नैवेद्य को
श्री निवासम्	५. भगवान् नारायण को	दत्त्वा	११. देकर
श्रिया	३. लक्ष्मी	आचमनम्	१०. आचमन
सह	४. सहित	अर्चयेत् ॥	१२. पूजा करे

श्लोकार्थ—इस प्रकार वर देने वाले लक्ष्मी सहित भगवान् नारायण की स्तुति करके उस नैवेद्य को हटाकर आचमन देकर पूजा करे ॥

षोडशः श्लोकः

ततः स्तुवीत स्तोत्रेण भक्तिप्रह्वेण चेतसा ।
यज्ञोच्छिष्टमवघ्राय पुनरभ्यर्चयेद्धरिम् ॥१६॥

पदच्छेद		ततः स्तुवीत स्तोत्रेण भक्ति प्रह्वेण चेतसा ।
यज्ञ उच्छिष्टम् अवघ्राय पुनः अभ्यर्च येत् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	यज्ञ	७.	यज्ञ का
स्तुवीत	६.	स्तुति करें (और)	उच्छिष्टम्	८.	अवशेष
स्तोत्रेण	५.	स्तोत्र के द्वारा	अवघ्राय	९.	सूंघकर
भक्ति	२.	भक्ति	पुनः	१०.	फिर
प्रह्वेण	३.	विह्वल	अभ्यर्चयेत्	१२.	पूजन करे
चेतसा ।	४.	चित्त से	हरिम् ॥	११.	भगवान् श्री हरि का

श्लोकार्थ—तदनन्तर भक्ति विह्वल चित्त से स्तोत्र के द्वारा स्तुति करे । और यज्ञ का अवशेष सूंघकर फिर भगवान् श्री हरि का पूजन करे ॥

सप्तदशः श्लोकः

पतिं च परया भक्त्या महापुरुषचेतसा ।
प्रियैस्तैस्तैरुपनमेत् प्रेमशीलः स्वयं पतिः ।
बिभृयात् सर्वकर्माणि पत्न्या उच्चावचानि च ॥१७॥

पदच्छेद—		पतिम् च परया भक्त्या महापुरुष चेतसा ।
प्रियैः तैः तैः उपनमेत् प्रेम शीलः स्वयम् पतिः ।
बिभृयात् सर्व कर्माणि पत्न्या उच्चावचानि च ॥

शब्दार्थ—

पतिम्	२.	पति को	प्रेमशीलः	११.	प्रेम करने वाले
च	१.	और	स्वयम्	१२.	स्वयम्
परया	३.	परम	पतिः	१३.	पति भी
भक्त्या	४.	भक्ति पूर्वक	बिभृयात्	१८.	करे
महापुरुष	५.	महान् पुरुष	सर्व	१६.	सभी
चेतसा	६.	जानकर	कर्माणि	१७.	कर्मों को
प्रियैः	८.	प्रिय वस्तुओं से	पत्न्या	१४.	पत्नी के लिये
तैः तैः	७	उन-उन	उच्चावचानि	१५.	छोटे-बड़े
उपनमेत् ।	९.	सेवा करे	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—और पति को परम भक्ति पूर्वक महान् पुरुष जानकर उन-उन प्रिय वस्तुओं से सेवा करे । और प्रेम करने वाले स्वयम् पति भी पत्नी के लिये छोटे-बड़े सभी कर्मों को करे ॥

अष्टादशः श्लोकः

कृतमेकतरेणापि दम्पत्योरुभयोरपि ।
पत्न्यां कुर्यादनर्हायां पतिरेतत् समाहितः ॥१८॥

पदच्छेद— कृतम् एकतरेण अपि दम्पत्योः उभयोः अपि ।
पत्न्याम् कुर्यात् अनर्हायाम् पतिः एतत् समाहितः ॥

शब्दार्थ—

कृतम्	५.	करता है उसका	अपि	७.	ही (फल मिलता है और)
एक	३.	एक	पत्न्याम्	८.	पत्नी के
तरेण	२.	दोनों में से	कुर्यात्	१२.	करे
अपि	४.	भी (जो काम)	अनर्हायाम्	९.	अयोग्य होने पर
दम्पत्योः	१.	पति-पत्नी	पतिः एतत्	११.	पति ही यह व्रत
उभयोः ।	६.	दोनों को	समाहितः ॥	१०.	एकाग्रचित्त से

श्लोकार्थ—पति-पत्नी दोनों में से एक भी जो काम करता है । उसका दोनों को ही फल मिलता है । और पत्नी के अयोग्य होने पर पति ही यह व्रत करे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

विष्णोर्व्रतमिदं बिभ्रन्न विहन्यात् कथञ्चन ।
विप्रान् स्त्रियो वीरवतीः स्रग्गन्धबलिमण्डनैः ।
अर्चेदहरहर्भक्त्या देवं नियममास्थितः ॥१९॥

पदच्छेद— विष्णोः व्रतम् इदम् बिभ्रत् न विहन्यात् कथञ्चन ।
विप्रान् स्त्रियः वीरवतीः स्रक् गन्धबलिमण्डनैः ।
अर्चेत् अहः अहः भक्त्या देवम् तत् निवेदितम् अग्रतः ॥

शब्दार्थ—

विष्णोः	२.	भगवान् विष्णु का	गन्ध	१४.	चन्दन
			बलिः	१५.	नैवेद्य (और)
व्रतम्	४.	व्रत	मण्डनैः	१६.	आभूषणों से
इदम्	३.	यह	अर्चेत्	२०.	पूजा करे
बिभ्रत्	५.	धारण करके	अहः अहः	११.	प्रतिदिन
न विहन्यात्	७.	नहीं छोड़े	भक्त्या	१२.	भक्ति पूर्वक
कथञ्चम्	६.	किसी भी प्रकार से	देवम्	८.	भगवान् विष्णु के
विप्रान्	१७.	ब्राह्मणों (और)	तत्	१.	तदनन्तर
स्त्रियः	१९.	स्त्रियों की	निवेदितम्	९.	व्रत में
वीरवतीः ।	१८.	पति-पुत्र वाली	अग्रतः ॥	१०.	आस्था रखकर
स्रक् ।	१३.	माला			

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् विष्णु का यह व्रत धारण करके किसी भी प्रकार से नहीं छोड़े । भगवान् विष्णु के व्रत में आस्था रखकर प्रतिदिन भक्ति पूर्वक माला, चन्दन, नैवेद्य और आभूषणों से ब्राह्मणों और पति पुत्र वाली स्त्रियों की पूजा करे ॥

विंशः श्लोकः

उद्वास्य देवं स्वे धाम्नि तन्निवेदितमग्रतः ।
अद्यादात्मविशुद्ध्यर्थं सर्वकामर्द्धये तथा ॥२०॥

पदच्छेद— उद्वास्य देवम् स्वे धाम्नि तत् निवेदितम् अग्रतः ।
अद्यात् आत्म विशुद्ध्यर्थम् सर्वकाम ऋद्धये तथा ॥

शब्दार्थ—

उद्वास्य	४.	पधरा करके	अग्रतः	६.	पहले से
देवम्	३.	भगवान् को	अद्यात्	१३.	ग्रहण करे
स्वे	१.	अपने	आत्म	८.	अपनी
धाम्नि	२.	धाम में	विशुद्ध्यर्थम्	९.	शुद्धि के लिये
तत्	५.	उनको	सर्वकाम	११.	सभी कामनाओं की
निवेदितम् ।	७.	चढ़ाया गया प्रसाद	ऋद्धये	१२.	पूर्ति के लिये
			तथा ॥	१०.	और

श्लोकार्थ अपने धाम में भगवान् को पधरा करके उनको पहले से चढ़ाया गया प्रसाद अपनी शुद्धि के लिये और सभी कामनाओं की पूर्ति के लिये ग्रहण करे ।

एकविंशः श्लोकः

एतेन पूजाविधिना मासान् द्वादश हायनम् ।
नीत्वाथोपचरेत्साध्वी कार्तिके चरमेऽहनि ॥२१॥

पदच्छेद— एतेन पूजा विधिना मासान् द्वादश हायनम् ।
नीत्वा अथ उपचरेत् साध्वी कार्तिके चरमे अहनि ॥

शब्दार्थ—

एतेन	१.	इस	नीत्वा अथ	७.	करने के पश्चात्
पूजा	२.	पूजा की	उपचरेत्	१२.	उद्यापन करे
विधिना	३.	विधि से	साध्वी	८.	पतिव्रता स्त्री
मासान्	५.	महीने	कार्तिके	९.	कार्तिक
द्वादश	४.	बारह	चरमे	१०.	अन्तिम
हायनम् ।	६.	एक वर्ष (तक व्रत)	अहनि ॥	११.	दिन में (मार्ग शीर्ष में)

श्लोकार्थ—इस पूजा की विधि से बारह महीने एक वर्ष तक व्रत करने के पश्चात् पतिव्रता स्त्री कार्तिक महीने के अन्तिम दिन में मार्गशीर्ष में उद्यापन करे ।

द्वाविंशः श्लोकः

श्वोभूतेऽप उपस्पृश्य कृष्णमभ्यर्च्य पूर्ववत् ।
पयःश्रृतेन जुहुयाच्चरुणा सह सर्पिषा ।
पाकयज्ञविधानेन द्वादशैवाहुतीः पतिः ॥२२॥

पदच्छेद— श्वोभूते अपः उपस्पृश्य कृष्णम् अभ्यर्च्य पूर्ववत् ।
पयः श्रृतेन जुहुयात् चरुणा सह सर्पिषा ।
पाक यज्ञ विधानेन द्वादश एव आहुतीः पतिः ।।

शब्दार्थ—

श्वोभूते	१.	दूसरे दिन	सह	१०.	साथ
अपः	२.	जल से	सर्पिषा	९.	घी के
उपस्पृश्य	३.	स्नान करके	पाक	११.	पाक
कृष्णम्	४.	भगवान् की	यज्ञ	१२.	यज्ञ की
अभ्यर्च्य	६.	पूजा करके	विधानेन	१३.	विधि से
पूर्ववत्	५.	पहले के समान	द्वादश	१६.	बारह
पयः श्रृतेन	७.	दूध में पकायी गयी	एव	१७.	ही
जुहुयात्	१४.	हवन करे	आहुतीः	१८.	आहुतियाँ दे
चरुणा ।	८.	खीर से	पतिः ।।	१५.	पति

श्लोकार्थ—दूसरे दिन जल से स्नान करके भगवान् की पहले के समान पूजा करके दूध में पकाई गयी खीर से घी के साथ पाक यज्ञ की विधि से हवन करे ।पति बारह ही आहुतियां दे ।।

त्रयोविंशः श्लोकः

आशिषः शिरसाऽऽदाय द्विजैः प्रीतैः समीरिताः ।
प्रणम्य शिरसा भक्त्या भुञ्जीत तदनुज्ञया ॥२३॥

पदच्छेद— आशिषः शिरसा आदाय द्विजैः प्रीतैः समीरिताः ।
प्रणम्य शिरसा भक्त्या भुञ्जीत तत् अनुज्ञया ।।

शब्दार्थ—

आशिषः	४.	आशीर्वाद को	प्रणम्य	९.	प्रणाम करके (और)
शिरसा	५.	मस्तक से	शिरसा	८.	सिर झुकाकर
आदाय	६.	स्वीकार करके (उन्हें)	भक्त्या	७.	भक्ति पूर्वक
द्विजैः	२.	ब्राह्मणों के	भुञ्जीत	१२.	भोजन करे
प्रीतैः	१.	प्रसन्न	तत्	१०.	उनकी
समीरिताः ।	३.	कहे हुये	अनुज्ञया ।।	११.	आज्ञा से

श्लोकार्थ—प्रसन्न ब्राह्मणों के कहे हुये आशीर्वाद को मस्तक से स्वीकार करके उन्हें भक्ति पूर्वक सिर झुकाकर प्रणाम करके और उनकी आज्ञा से भोजन करे ।

चतुर्विंशः श्लोकः

आचार्यमग्रतः कृत्वा वाग्यतः सह बन्धुभिः ।
दद्यात्पत्न्यै चरोः शेषं सुप्रजस्त्वं सुसौभगम् ॥२४॥

पदच्छेद— आचार्यम् अग्रतः कृत्वा वाग्यतः सह बन्धुभिः ।
दद्यात् पत्न्यै चरोः शेषम् सुप्रजस्त्वम् सुसौभगम् ॥

शब्दार्थ

आचार्यम्	१. आचार्य को	दद्यात्	१०. दे (वह प्रसाद)
अग्रतः	२. आगे	पत्न्यै	९. पत्नी को
कृत्वा	३. करके	चरोः	७. खीर का
वाग्यतः	४. मौन होकर	शेषम्	८. अवशेष भाग
सह	६. साथ (भोजन करे)	सुप्रजस्त्वम्	११. अच्छी सन्तान और
बन्धुभिः ।	५. भाई-बन्धुओं के	सुसौभगम् ॥	१२. सुन्दर सौभाग्य देने वाला है

श्लोकार्थ—आचार्य को आगे करके मौन होकर भाई-बन्धुओं के साथ भोजन करे। खीर का अवशेष भाग पत्नी को दे। वह प्रसाद अच्छी सन्तान और सुन्दर सौभाग्य देने वाला है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एतच्चरित्वा विधिवद्व्रतं विभोरभीप्सितार्थं लभते पुमानिह ।
स्त्री त्वेतदास्थाय लभेत सौभगं श्रियं प्रजां जीवपतिं यशो गृहम् ॥२५॥

पदच्छेद— एतत् चरित्वा विधिवत् व्रतम् विभो अभीप्सित अर्थम् लभते पुमान् इह ।
स्त्री तु एतद् आस्थाय लभते सौभगम्, श्रियम् प्रजाम् जीव पतिम् यशः गृहम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	२. इस	स्त्री	१२. स्त्री
चरित्वा	५. सम्पन्न करके	तु	११. और
विधिवत्	४. विधिपूर्वक	एतद्	१३. इस व्रत का
व्रतम्	३. व्रत को	आस्थाय	१४. पालन करके
विभोः,	१. भगवान् के	लभेत	२०. प्राप्त करती है
अभीप्सित	८. अभीष्ट	सौभगम्,	१५. सौभाग्य
अर्थम्	९. वस्तु को	श्रियम्	१६. लक्ष्मी
लभते	१०. प्राप्त करता है	प्रजाम्	१७. सन्तान
पुमान्	६. पुरुष	जीवपतिम्	१८. दीर्घायुपति
इह ।	७. यहाँ	यशः गृहम् ॥	१९. यश और घर को

श्लोकार्थ—भगवान् के इस व्रत को विधि पूर्वक सम्पन्न करके पुरुष यहाँ अभीष्ट वस्तु को प्राप्त करता है। और स्त्री इस व्रत का पालन करके सौभाग्य, लक्ष्मी, सन्तान, दीर्घायुपति, यश और घर को प्राप्त करती है ॥

षड्विंशः श्लोकः

कन्या च विन्देत समग्रलक्षणं वरं त्ववीरा हतकिल्बिषा गतिम् ।
मृतप्रजा जीवसुता धनेश्वरी सुदुर्भगा सुभगा रूपमग्र्यम् ॥२६॥

पदच्छेदः— कन्या च विन्देत समग्रलक्षणम् वरम् तु अवीरा हतकिल्बिषा गतिम् ।
मृतप्रजा जीवसुता धनेश्वरी सुदुर्भगा सुभगा रूपम् अग्र्यम् ॥

शब्दार्थ—

कन्या	२.	कन्या	मृत	११.	मर जाती है (ऐसी स्त्री)
च	१.	और	प्रजा	१०.	जिसकी सन्तान
विन्देत	६.	प्राप्त करती है	जीवसुता	१२.	दीर्घायु पुत्र प्राप्त करती है
समग्र	३.	सभी	धनेश्वरी	१३.	धनवती (किन्तु)
लक्षणम्	४.	शुभ लक्षणों से युक्त	सुदुर्भगा	१४.	अभागिन (स्त्री)
वरम् तु	५.	पति को	सुभगा	१५.	सौभाग्य (तथा कुरूपा
अवीरा	७.	विधवा स्त्री	रूपम्	१७.	रूप प्राप्त करती है
हतकिल्बिषा	८.	निष्पाप होकर	अग्र्यम् ॥	१६.	श्रेष्ठ
गतिम् ।	९.	सद्गति (पाती है)			

श्लोकार्थ—और कन्या सभी शुभलक्षणों से युक्त पति को प्राप्त करती है । विधवा स्त्री निष्पाप होकर सद्गति पाती है । जिसकी सन्तान मर जाती है ऐसी स्त्री दीर्घायु पुत्र प्राप्त करती है । और धनवती किन्तु अभागिन स्त्री सौभाग्य तथा कुरूपा श्रेष्ठ रूप प्राप्त करती है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

विन्देद् विरूपा विरुजा विमुच्यते य आमयावीन्द्रियकल्पदेहम् ।
एतत्पठन्नभ्युदये च कर्मण्यनन्ततृप्तिः पितृदेवतानाम् ॥२७॥

पदच्छेदः— विन्देत् विरूपा विरुजा विमुच्यते यः आमयावी इन्द्रिय कल्प देहम् ।
एतत् पठन् अभ्युदये च कर्मणि अनन्त तृप्तिः पितृ देवतानाम् ॥

शब्दार्थ—

विन्देत्	२.	पाती है (और)	एतत् पठन्	११.	इसका पाठ करने से
विरूपा विरुजा	१.	कुरूपा भी सुन्दररूप	अभ्युदये	९.	मांगलिक
विमुच्यते	४.	रोग से मुक्त हो जाता है (तथा) च		८.	और
यः आमयावी	३.	जो रोगी है (वह)	कर्मणि	१०.	कर्मों में
इन्द्रिय	५.	इन्द्रिय शक्ति (और)	अनन्त तृप्तिः	१४.	बहुत ही तृप्ति होती है
कल्प	६.	स्वस्थ	पितृ	१२.	पितर और
देहम् ।	७.	शरीर (प्राप्त करता है)	देवतानाम् ॥	१३.	देवताओं को

श्लोकार्थ—तथा कुरूपा भी सुन्दर रूप पाती है । और जो रोगी है वह रोग से मुक्त हो जाता है वह इन्द्रिय शक्ति और स्वस्थ शरीर प्राप्त करता है । और मांगलिक कर्मों में इसका पाठ करने से पितर और देवताओं को बहुत ही तृप्ति होती है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तुष्टाः प्रयच्छन्ति समस्तकामान् होमावसाने हुतभुक् श्रीर्हरिश्च ।
राजन् महन्मरुतां जन्म पुण्यं दितेर्व्रतं चाभिहितं महत्ते ॥२८॥

पदच्छेद — तुष्टाः प्रयच्छन्ति समस्त कामान् होम अवसाने हुतभुक् श्री हरिः च ।
राजन् महत् मरुताम् जन्म पुण्यम् दितेः व्रतम् च अभिहितम् महत् ते ॥

शब्दार्थ—

तुष्टाः	७.	प्रसन्न होकर	राजन् महत्	११.	हे राजन् ! महान्
प्रयच्छन्ति	१०.	देते हैं	मरुताम्	१२.	मरुद्गणों का
समस्त	८.	सभी	जन्म	१४.	जन्म
कामान्	९.	कामनाओं को	पुण्यम्	१३.	पवित्र
होम	१.	हवन के	दितेः	१६.	दिति के
अवसाने	२.	समाप्त होने पर	व्रतम्	१८.	पुंसवन व्रत का
हुतभुक्	३.	अग्नि	च	१५.	और
श्री	४.	लक्ष्मी	अभिहितम्	२०.	वर्णन किया
हरिः	६.	विष्णु	महत्	१७.	महान्
च ।	५.	और	ते ॥	१९.	तुम से

श्लोकार्थ—हवन के समाप्त होने पर अग्नि, लक्ष्मी और विष्णु प्रसन्न होकर सभी कामनाओं को देते हैं । हे राजन् ! महान् मरुद्गणों का पवित्र जन्म और दिति के महान् पुंसवन व्रत का तुम से वर्णन किया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे वैयासिक्यामष्टादशसाहस्र्यां पारमहंस्यां संहितायां षष्ठे स्कन्धे पुंसवनव्रतकथनं नाम एकोनविंशः अध्यायः ॥१९॥



श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

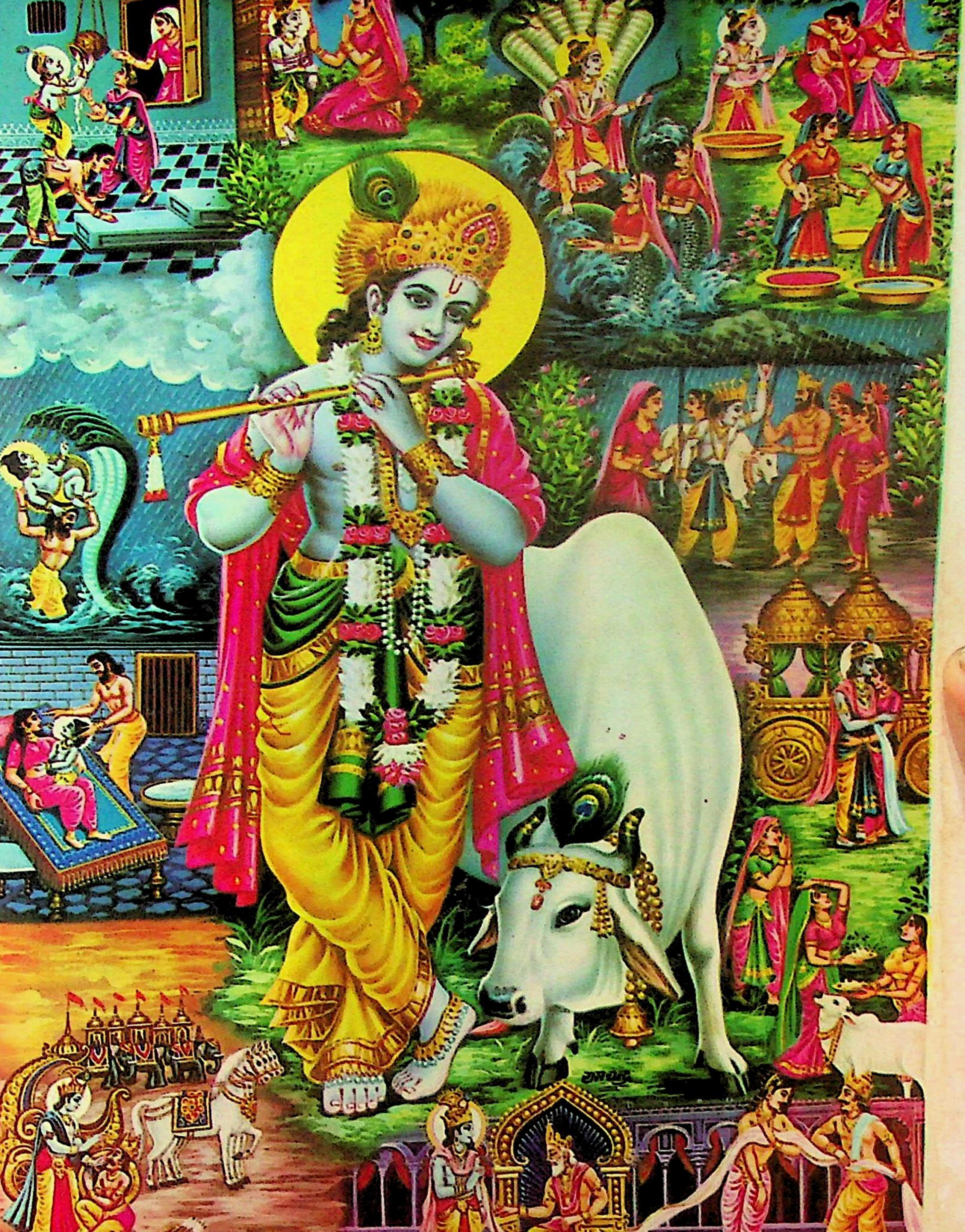
श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

सप्तमः स्कन्धः





अतसीपुष्पसंकाशं खगेन्द्रासनमच्युतम् ।
शयानं शेषशय्यायां महाविष्णुमुपास्महे ।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—समः प्रियः सुहृद्ब्रह्मन् भूतानां भगवान् स्वयम्।
इन्द्रस्यार्थे कथं दैत्यानवधीद्विषमो यथा ॥१॥

पदच्छेद— समः प्रियः सुहृद् ब्रह्मन् भूतानाम् भगवान् स्वयम्।
इ द्रस्य अर्थे कथम् दैत्यान् अवधीत् विषमः यथा ॥

शब्दार्थ—

समः	४.	सम-भाव (रखनेवाले और)	**इन्द्रस्य**	९.	इन्द्र के
प्रियः	६.	प्रिय (एवम्)	**अर्थे**	१०.	लिये
सुहृदः	७.	मित्र हैं	**कथम्**	८.	क्यों
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्!	**दैत्यान्**	१३.	दैत्यों का
भूतानाम्	५.	प्राणियों के	**अवधीत्**	१४.	वध किया
भगवान्	२.	भगवान्	**विषमः**	१२.	साधारण मनुष्य के
स्वयम्।	३.	स्वयम्	**यथा ॥**	१२.	समान

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन्! भगवान् स्वयम् सम-भाव रखने वाले और प्राणियों के प्रिय एवम् मित्र हैं। क्यों इन्द्र के लिए साधारण मनुष्यों के समान दैत्यों का वध किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

न ह्यस्यार्थः सुरगणैः साक्षान्निःश्रेयसात्मनः।
नैवासुरेभ्यो विद्वेषो नोद्वेगश्चागुणस्य हि ॥२॥

पदच्छेद — न हि अस्य अर्थः सुर गणैः साक्षात् निःश्रेयस आत्मनः।
न एव असुरेभ्यः विद्वेषः न उद्वेगः च अगुणस्य हि ॥

शब्दार्थ—

नहि	७.	नहीं	**न एव**	९.	नहीं
अस्य	४.	इस भगवान् को	**असुरेभ्यः**	११.	असुरों से
अर्थः	६.	प्रयोजन	**विद्वेषः**	१२.	विरोध है
सुरगणैः	५.	देवगणों से (कोई)	**न**	१३.	नहीं
साक्षात्	१.	साक्षात्	**उद्वेगः**	१४.	उद्वेग है
निःश्रेयस	२.	कल्याण	**च**	८.	और
आत्मनः।	३.	स्वरूप	**अगुणस्य हि ॥**	१०.	निर्गुण भगवान् का

श्लोकार्थ—साक्षात् कल्याण स्वरूप इस भगवान् को देवगणों से कोई प्रयोजन नहीं है। और न ही निर्गुण भगवान् का असुरों से विरोध है। नहीं उद्वेग है ॥

तृतीयः श्लोकः

इति नः सुमहाभाग नारायणगुणान् प्रति ।
संशयः सुमहाञ्जातस्तद्भवांश्छेत्तुमर्हति ॥३॥

पदच्छेद— इति नः सुमहाभाग नारायण गुणान् प्रति ।
संशयः सुमहान् जातः तत् भवान् छेत्तुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

इति	५. यह	संशयः	८. सन्देह
नः	६. हमें	सुमहान्	७. बड़ा भारी
सुमहाभाग	१. हे महाभाग !	जातः	९. हो गया है
नारायण	२. नारायण के	तत् भवान्	१०. उस सन्देह को आप
गुणान्	३. गुणों के	छेत्तुम्	११. मिटाने के लिये
प्रति ।	४. प्रति	अर्हति ॥	१२. योग्य है ॥

श्लोकार्थ—हे महाभाग ! नारायण के गुणों के प्रति यह हमें बड़ा भारी सन्देह हो गया है । उस सन्देह को आप मिटाने के योग्य हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—साधु पृष्टं महाराज हरेश्चरितमद्भुतम् ।
यद् भागवतमाहात्म्यं भगवद्भक्तिवर्धनम् ॥४॥

पदच्छेद— साधु पृष्टम् महाराज हरेः चरितम् अद्भुतम् ।
यत् भागवत माहात्म्यम् भगवद् भक्ति वर्धनम् ॥

शब्दार्थ—

साधु	५. अच्छा	यत्	७. जो
पृष्टम्	६. प्रश्न किया है	भागवत्	८. भगवत् भक्तों की
महाराज	१. हे महाराज ! आपने	माहात्म्यम्	९. महिमा से युक्त
हरेः	२. भगवान् के	भगवद्	१०. भगवान् की
चरितम्	४. चरित के बारे में	भक्ति	११. भक्ति को
अद्भुतम् ।	३. आश्चर्यजनक	वर्धनम् ॥	१२. बढ़ाने वाला है ॥

श्लोकार्थ—हे महाराज ! आपने भगवान् के आश्चर्यजनक चरित के बारे में अच्छा प्रश्न किया है । जो भगवत् भक्तों की महिमा से युक्त भगवान् की भक्ति को बढ़ानेवाला है ॥

पञ्चमः श्लोकः

गीयते परमं पुण्यमृषिभिर्नारदादिभिः ।
नत्वा कृष्णाय मुनये कथयिष्ये हरेः कथाम् ॥५॥

पदच्छेद— गीयते परमम् पुण्यम् ऋषिभिः नारद आदिभिः ।
नत्वा कृष्णाय मुनये कथयिष्ये हरेः कथाम् ॥

शब्दार्थ—

गीयते	६.	गाया जाता है	नत्वा	६.	नमस्कार करके
परमम्	१.	यह परम	कृष्णाय	७.	भगवान् श्रीकृष्ण (तथा)
पुण्यम्	२.	पवित्र चरित	मुनये	८.	मुनि व्यास जी को
ऋषिभिः	५.	ऋषियों के द्वारा	कथयिष्ये	१२.	कहूँगा
नारद	३.	नारद	हरेः	१०.	भगवान् की
आदिभिः ।	४.	आदि	कथाम् ॥	११.	कथा

श्लोकार्थ—यह परम पवित्र चरित नारद आदि ऋषियों के द्वारा गाया जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण तथा मुनि व्यास जी को नमस्कार करके भगवान् की कथा कहूँगा ॥

षष्ठः श्लोकः

निर्गुणोऽपि ह्यजोऽव्यक्तो भगवान् प्रकृतेः परः ।
स्वमायागुणमाविश्य बाध्यबाधकतां गतः ॥६॥

पदच्छेद— निर्गुणः अपि हि अजः अव्यक्तः भगवान् प्रकृतेः परः ।
स्वमायागुणम् आविश्य बाध्यबाधकताम् गतः ॥

शब्दार्थ—

निर्गुणः	२.	गुण रहित	स्वमाया	८.	अपनी माया के
अपि हि	७.	भी	गुणम्	६.	गुणों को
अजः	३.	अजन्मा	आविश्य	१०.	स्वीकार करके
अव्यक्तः	४.	अव्यक्त (तथा)	बाध्य	११.	परस्पर
भगवान्	१.	भगवान्	बाधकताम्	१२.	विरोधी रूपों को
प्रकृतेः	५.	प्रकृति से	गतः ॥	१३.	ग्रहण करता है ॥
परः ।	६.	परे होने पर			

श्लोकार्थ—भगवान् गुण रहित, अजन्मा, अव्यक्त तथा प्रकृति से परे होने पर भी अपनी माया के गुणों को स्वीकार करके परस्पर विरोधी रूप को ग्रहण करते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति प्रकृतेर्नात्मनो गुणाः ।
न तेषां युगपद्राजन् ह्रास उल्लास एव वा ॥७॥

पदच्छेद— सत्त्वम् रजः तमः इति प्रकृतेः न आत्मनः गुणाः ।
न तेषाम् युगपद् राजन् ह्रास उल्लास एव वा ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	२. सत्त्वगुण	न	१६. नहीं होती है
रजः	३. रजोगुण	तेषाम्	१०. उन गुणों की
तमः	४. तमोगुण	युगपद्	११. एक साथ
इति	५. ये	राजन्	१. हे राजन्
प्रकृतेः	६. प्रकृति के (गुण हैं)	ह्रासः	१२. घटती
न	६. नहीं हैं	उल्लासः	१४. बढ़ती
आत्मनः	७. आत्मा के	एव	१५. भी
गुणाः ।	८. गुण	वा ॥	१३. अथवा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण ये प्रकृति के गुण हैं । आत्मा के गुग नहीं हैं । उन गुणों की एक साथ घटती अथवा बढ़ती भी नहीं होती है ॥

अष्टमः श्लोकः

जयकाले तु सत्त्वस्य देवर्षीन् रजसोऽसुरान् ।
तमसो यक्षरक्षांसि तत्कालानुगुणोऽभजत् ॥८॥

पदच्छेद— जय काले तु सत्त्वस्य देवर्षीन् रजसः असुरान् ।
तमसः यक्ष रक्षांसि तत् काले अनुगुणः अभजत् ॥

शब्दार्थ—

जय	२. वृद्धि के	**तमसः**	८. तमोगुण के समय
काले	३. समय	**यक्ष**	६. यक्षों और
तु	४. तो	**रक्षांसि**	१०. राक्षसों का
सत्त्वस्य	१. (भगवान्) सत्त्वगुण की	**तत्**	११. उस
देवर्षीन्	५. देवता और ऋषियों का	**काल**	१२. समय
रजसा	६. रजोगुण के समय	**अनुगुणः**	१३. अनुसार गुणों को स्वीकार करके
असुरान् ।	७. असुरों का	**अभजत् ॥**	१४. कल्याण करते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् सत्त्वगुण की वृद्धि के समय देवता और ऋषियों का, रजोगुण के समय असुरों का, और तमोगुण के समय यक्षों और राक्षसों का उस समय के अनुसार गुणों को स्वीकार करके कल्याण करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

ज्योतिरादिरिवाभाति सङ्घातान्न विविच्यते ।
विन्दत्यात्मानमात्मस्थं मथित्वा कवयोऽन्ततः ॥९॥

पदच्छेद— ज्योतिः आदि इव आभाति सङ्घातात् न विविच्यते ।
विन्दति आत्मानम् आत्मस्थं मथित्वा कवयः अन्ततः ॥

शब्दार्थ

ज्योतिः	१.	अग्नि	विन्दन्ति	१२.	पा जाते हैं
आदि	२.	इत्यादि के	आत्मानम्	११.	परमात्मा को
इव	३.	समान	आत्मस्थम्	१०.	शरीर में स्थित
आभाति	४.	आत्मा मालूम होती है	मथित्वा	८.	मन्थन करके
सङ्घातात्	५.	आश्रय से	कवयः	७.	विद्वान् लोग विचार से
न विविच्यते ।	६.	नहीं जान पड़ती	अन्ततः ॥	९.	अन्त में

श्लोकार्थ—अग्नि इत्यादि के समान आत्मा मालूम होती है । आश्रय से नहीं जान पड़ती । विद्वान् लोग विचार से मन्थन करके अन्त में शरीर में स्थित परमात्मा को पा जाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

यदा सिसृक्षुः पुर आत्मनः परो रजः सृजत्येष पृथक् स्वमायया ।
सत्त्वं विचित्रासु रिरंसुरीश्वरः शयिष्यमाणस्तम ईरयत्यसौ ॥१०॥

पदच्छेद— यदा सिसृक्षुः पुर आत्मनः परः, रजः सृजति एषः पृथक् स्वमायया ।
सत्त्वम् विचित्रासु रिरंसुः ईश्वरः, शयिष्यमाणः तमः ईरयति असौ ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	सत्त्वम्	१४.	सत्त्वगुण की (सृष्टि करते हैं)
सिसृक्षुः	५.	सृष्टि करना चाहते हैं (तव वे)	विचित्रासु	१२.	अनेक प्रकार की योनियों में
पुरः	४.	शरीरों की			
आत्मनः	३.	अपने लिये	रिरंसुः	१३.	रमण करना चाहते हैं (तब)
परः	२.	परमात्मा	ईश्वरः	११.	ईश्वर
रजः	७.	रजोगुण की	शयिष्यमाणः	१६.	शयन करना चाहते हैं (तब)
सृजति	९.	सृष्टि करते हैं	तमः	१७.	तमोगुण को
एषः	१०.	जब ये	ईरयति	१८.	बढ़ाते हैं
पृथक्	८.	अलग	असौ ॥	१५.	वे जब
स्वमायया ।	६.	अपनी माया से			

श्लोकार्थ—जब परमात्मा अपने लिये शरीरों की सृष्टि करना चाहते हैं तब वे अपनी माया से रजोगुण की अलग सृष्टि करते हैं । जब ये ईश्वर अनेक प्रकार की योनियों में रमण ,करना चाहते हैं तब सत्त्वगुण की सृष्टि करते हैं । वे जब शयन करना चाहते हैं तब तमोगुण को बढ़ाते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

कालं चरन्तं सृजतीश आश्रयं प्रधानपुम्भ्यां नरदेव सत्यकृत् ।
य एष राजन्नपि काल ईशिता सत्त्वं सुरानीकमिवैधयत्यतः ।
तत्प्रत्यनीकानसुरान् सुरप्रियो रजस्तमस्कान् प्रमिणोत्युरुश्रवाः ॥११॥

पदच्छेद— **कालम् चरन्तम् सृजति ईशः आश्रयम् प्रधान पुम्भ्याम् नरदेव सत्यकृत् ।**
यः एषः राजन् अपि कालः ईशिता सत्त्वम् सुरानीकम् इव एधयति अतः ।
तत् प्रतिअनीकान् असुरान् सुरप्रियः रजः तमस्कान् प्रमिणोति उरुश्रवाः ।।

शब्दार्थ—

कालम्	९.	काल की	**ईशिता**	१६.	शासक हैं
चरन्तम्	७.	विचरण करने वाले	**सत्त्वम्**	१८.	सत्त्वगुण की सृष्टि करते हैं
सृजति	१०.	सृष्टि करते हैं	**सुरानीकम्**	२०.	देवताओं की शक्ति को तब
ईशः	४.	भगवान्	**इव**	१९.	मानो
आश्रयम्	८.	आश्रयरूप	**एधयति**	२१.	बढ़ाते हैं
प्रधान	५.	प्रकृति और			
पुम्भ्याम्	६.	पुरुष के साथ	**अतः ।**	१७.	इसलिये (वे जब)
नरदेव	१.	हे महाराज !	**तत्**	२३.	उन देवताओं के
सत्य	२.	सत्य	**प्रतिअनीकान्**	२४.	विरोधी
कृत् ।	३.	संकल्प वाले	**असुरान्**	२८.	असुरों का
यः	१२.	जो	**सुरप्रियाः**	२७.	देवप्रिय
एषः	१३.	यह	**रजः**	२५.	रजो गुणो और
राजन्	११.	हे राजन् !	**तमस्कान्**	२६.	तमोगुणो
अपि	१५.	भी (यह भगवान्)	**प्रमिणोति**	२९.	संहार करते हैं
कालः	१४.	काल हैं (उसके)	**उरुश्रवाः ।।**	२२.	महायशस्वी भगवान्

श्लोकार्थ—हे महाराज ! सत्य संकल्प वाले भगवान् प्रकृति और पुरुष के साथ विचरण करने वाले आश्रयरूप काल की सृष्टि करते हैं। है राजन् ! यह काल है। उसके भी यह भगवान् शासक हैं। इसलिये वे जब सत्त्वगुण की सृष्टि करते हैं तब मानों देवताओं की शक्ति को बढ़ाते हैं। और महायशस्वी भगवान् उन देवताओं के विरोधी रजोगुणी और तमोगुणी, देवप्रिय असुरों का संहार करते हैं ।।

द्वादशः श्लोकः

अत्रैवोदाहृतः पूर्वमितिहासः सुरर्षिणा ।
प्रीत्या महाक्रतौ राजन् पृच्छतेऽजातशत्रवे ॥१२॥

पदच्छेद— अत्र एव उदाहृतः पूर्वम् इतिहासः सुरर्षिणा ।
प्रीत्या महाक्रतौ राजन् पृच्छतः अजात शत्रवे ॥

शब्दार्थ—

अत्र एव	२.	यहीं (इसी विषय में)	प्रीत्या	८.	प्रेम से (यह)
उदाहृतः	१०.	कहा था	महाक्रतौ	४.	राजसूय यज्ञ में
पूर्वम्	३.	पहले	राजन्	१.	हे राजन् !
इतिहासः	९.	इतिहास	पृच्छते	५.	प्रश्न करते हुये
सुरर्षिणा ।	७.	देवर्षि नारद ने	अजातशत्रवे ॥	६.	युधिष्ठिर से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यहीं इसी विषय में पहले राजसूय यज्ञ में प्रश्न करते हुये युधिष्ठिर से देवर्षि नारद ने प्रेम से यह इतिहास कहा था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

दृष्ट्वा महाद्भुतं राजा राजसूये महाक्रतौ ।
वासुदेवे भगवति सायुज्यं चेदिभूभुजः ॥१३॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा महाअद्भुतम् राजा राजसूये महाक्रतौ ।
वासुदेवे भगवति सायुज्यम् चेदिभूभुजः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	६.	देखा कि	वासुदेवे	१०.	श्रीकृष्ण में
महा	४.	महान्	भगवति	९.	भगवान्
अद्भुतम्	५.	आश्चर्य	सायुज्यम्	११.	समा गया है
राजा	१.	राजा युधिष्ठिर ने	चेदि	७.	चेदि देश का
राजसूये	२.	राजसूय नामक	भूभुजः ॥	८.	राजा शिशुपाल
महाक्रतौ ।	३.	महान् यज्ञ में			

श्लोकार्थ—राजा युधिष्ठिर ने राजसूय नामक महान् यज्ञ में महान् आश्चर्य देखा कि चेदि देश का राजा शिशुपाल भगवान् श्रीकृष्ण में समा गया है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तत्रासीनं सुरऋषिं राजा पाण्डुसुतः क्रतौ ।
पप्रच्छ विस्मितमना मुनीनां शृण्वतामिदम् ॥१४॥

पदच्छेद— तत्र आसीनम् सुरऋषिम् राजा पाण्डुसुतः क्रतौ ।
प्रपच्छ विस्मित मनाः मुनीनाम् शृण्वताम् इदम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१. वहाँ	प्रपच्छ	१२. पूछा
आसीनम्	३. बैठे हुये	विस्मित	७. आश्चर्य चकित
सुर ऋषीम्	४. देवर्षि नारद जी से	मनाः	८. मन होकर
राजा	६. राजा युधिष्ठिर ने	मुनीनाम्	९. मुनियों के
पाण्डुसुतः	५. पाण्डु के पुत्र	शृण्वताम्	१०. सुनते हुये
क्रतौ ।	२. यज्ञ में	इदम् ॥	११. यह

श्लोकार्थ—वहाँ यज्ञ में बैठे हुये देवर्षि नारद जी से पाण्डु के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने आश्चर्य चकित मन होकर मुनियों के सुनते हुये यह पूछा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

युधिष्ठिर उवाच—अहो अत्यद्भुतं ह्येतद् दुर्लभैकान्तिनामपि ।
'वासुदेवे परे तत्त्वे प्राप्तिश्चैद्यस्य विद्विषः ॥१५॥

पदच्छेद— अहो अति अद्भुतम् हि एतत् दुर्लभ एकान्तिनाम् अपि ।
वासुदेवे परे तत्त्वे प्राप्तिः चैद्यस्य विद्विषः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. अहो	वासुदेवे	६. वासुदेव भगवान् श्रीकृष्ण में
अति	८. अत्यन्त	परे	४. परम
अद्भुतम्	९. आश्चर्य है	तत्त्वे	५. तत्त्व
हि	१४. ही है	प्राप्तिः	७. समा जाना
एतत्	१०. यह	चैद्यस्य	३. शिशुपाल का
दुर्लभ	१३. दुर्लभ	विद्विषः ॥	२. द्वेष करने वाले
एकान्तिनाम्	११. अनन्यभक्तों के लिये		
अपि ।	१२. भी		

श्लोकार्थ—अहो द्वेष करने वाले शिशुपाल का परमतत्त्व वासुदेव भगवान् श्रीकृष्ण में समा जाना अत्यन्त आश्चर्य है । यह अनन्य भक्तों के लिये भी दुर्लभ ही है ॥

षोडशः श्लोकः

एतद्वेदितुमिच्छामः सर्व एव वयं मुने।
भगवन्निन्दया वेनो द्विजैस्तमसि पातितः ॥१६॥

पदच्छेद— एतत् वेदितुम् इच्छामः सर्वे एव वयम् मुने।
भगवत् निन्दया वेनः द्विजैः तमसि पातितः ॥

शब्दार्थ—

एतत्	४.	यह	भगवत्	७.	भगवान् की
वेदितुम्	५.	जानने की	निन्दया	८.	निन्दा करने के कारण
इच्छामः	६.	इच्छा करते हैं (क्योंकि)	वेनः	१०.	राजा वेन को
सर्वे एव	३.	सब ही	द्विजैः	९.	ब्राह्मणों ने
वयम्	२.	हम	तमसि	११.	नरक में
मुने।	१.	हे मुने!	पातितः ॥	१२.	गिरा दिया था

श्लोकार्थ—हे मुने! सब ही यह जानने की इच्छा करते हैं। क्योंकि भगवान् की निन्दा करने के कारण ब्राह्मणों ने राजा वेन को नरक में गिरा दिया था ॥

सप्तदशः श्लोकः

दमघोषसुतः पाप आरभ्य कलभाषणात्।
सम्प्रत्यमर्षी गोविन्दे दन्तवक्त्रश्च दुर्मतिः ॥१७॥

पदच्छेद— दमघोष सुतः पापः आरभ्य कलभाषणात्।
सम्प्रतिअमर्षी गोविन्दे दन्तवक्त्रस्य दुर्मतिः ॥

शब्दार्थ—

दमघोष	१.	दमघोष का	सम्प्रति	८.	अभी तक
सुतः	३.	पुत्र (शिशु पाल और)	अमर्षी	१०.	द्वेष करते रहे हैं
पापः	२.	पापी	गोविन्दे	९.	भगवान् श्रीकृष्ण से
आरभ्य	७.	आरंभ करके	दन्दवक्त्रः च	५.	दन्तक्त्र भी
कलभाषणात्।	६.	तोतिली बोली से	दुर्मतिः ॥	४.	दुष्ट बुद्धि वाला

श्लोकार्थ—दमघोष का पापी पुत्र शिशुपाल और दुष्ट बुद्धि वाला दन्तवक्त्र भी तोतिली बोली से आरम्भ करके अभी तक भगवान् श्रीकृष्ण से द्वेष करते रहे हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

शपतोरसकृद्विष्णुं यद्ब्रह्म परमव्ययम् ।
श्वित्रो न जातो जिह्वायां नान्धं विविशतुस्तमः ॥१८॥

पदच्छेद— शपतः असकृत् विष्णुम् यत् ब्रह्म परम् अव्ययम् ।
श्वित्रः न जातः जिह्वायाम् न अन्धम् विविशतुः तमः ॥

शब्दार्थ—

शपतः	७.	गाली देते हुये (उन दोनों की)	श्वित्रः न	९.	कोढ़ नहीं
असकृत्	६.	बार-बार	जातः	१०.	हुआ (और वे)
विष्णुम्	५.	भगवान् श्रीकृष्ण को	जिह्वायाम्	८.	जीभ में
यत्	१.	जो	न	१३.	नहीं
ब्रह्म	४.	ब्रह्म हैं (उन)	अन्धम्	११.	अन्धकारमय
परम्	३.	परम	विविशतुः	१४.	प्रविष्ट हुये
अव्ययम् ।	२.	अविनाशी	तमः ॥	१२.	नरक में

श्लोकार्थ—जो अविनाशी परम ब्रह्म हैं उन भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार गाली देते हुये उन दोनों की जीभ में कोढ़ नहीं हुआ । और वे अन्धकारमय नरक में नहीं प्रविष्ट हुये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

कथं तस्मिन् भगवति दुरवग्राह्यधामनि ।
पश्यतां सर्वलोकानां लयमीयतुरञ्जसा ॥१९॥

पदच्छेद— कथम् तस्मिन् भगवति दुरवग्राह धामनि ।
पश्यताम् सर्वलोकानाम् लयम् ईयतुः अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

कथम्	१.	कैसे	पश्यताम्	७.	देखते-देखते
तस्मिन्	२.	उस	सर्वलोकानाम्	६.	सभी लोगों के
भगवति	५.	भगवान् में	लयम्	९.	लीन
दुरवग्राह	३.	अत्यन्त कठिनाई से (प्राप्त करने योग्य)	ईयतुः	१०.	हो गये
धामनि ।	४.	तेज वाले	अञ्जसा ॥	८.	वे अनायास ही

श्लोकार्थ—कैसे उस अत्यन्त कठिनाई से प्राप्त करने योग्य तेज वाले भगवान् में सभी लोगों के देखते-देखते वे अनायास ही लीन हो गये ॥

विंशः श्लोकः

एतद् भ्राम्यति मे बुद्धिर्दीपार्चिरिव वायुना ।
ब्रूह्येतदद्भुततमं भगवांस्तत्र कारणम् ॥२०॥

पदच्छेद— एतद् भ्राम्यति मे बुद्धिः दीपअर्चिः इव वायुना ।
ब्रूहि एतत् अद्भुत तमम् भगवान् तत्र कारणम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	४. यह	ब्रूहि	११. कहिये
भ्राम्यति	७. घूम रही है	एतत्	८. इसे
मे	५. मेरी	अद्भुत	१०. अद्भुत घटना
बुद्धिः	६. बुद्धि	तमम्	९. अत्यन्त
दीपः अर्चि	२. दीपक की लौ के	भगवान्	१२. भगवान्
इव	३. समान	तत्र	१३. हो (इसमें)
वायुना ।	१. वायु से	कारणम् ॥	१४. कारण हैं

श्लोकार्थ—वायु से दीपक की लौ के समान यह मेरी बुद्धि घूम रही है । इसे अत्यन्त अद्भुत घटना कहिये । भगवान् ही इसमें कारण हैं ।

एकविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—राज्ञस्तद्वच आकर्ण्य नारदो भगवानृषिः ।
तुष्टः प्राह तमाभाष्य श‍ृण्वत्यास्तत्सदः कथाः ॥२१॥

पदच्छेद— राज्ञः तत् वचः आकर्ण्य नारदः भगवान् ऋषिः ।
तुष्टः प्राह तम् आभाष्य श‍ृण्वत्याः तत्-सदः कथाः ॥

शब्दार्थ—

राज्ञः	४. राजा के	तुष्टः	८. सन्तुष्ट होकर
तत्	५. वह	प्राह	१४. कही
वचः	६. वचन	तम्	९. उनको
आकर्ण्य	७. सुनकर (और)	आभाष्य	१०. सम्बोधित करके
नारदः	३. नारद ने	श‍ृण्वत्याः	१२. सुनाते हुये (यह)
भगवान्	१. भगवान्	तत् सदः	११. उस सभा को
ऋषिः ।	२. देवर्षि	कथाः ॥	१३. कथा

श्लोकार्थ—भगवान् देवर्षि नारद ने राजा के यह वचन सुनकर और सन्तुष्ट होकर उनको सम्बोधित करके उस सभा को सुनाते हुये यह कथा कही ॥

द्वाविंशः श्लोकः

नारद उवाच— निन्दनस्तवसत्कारन्यक्कारार्थं कलेवरम् ।
प्रधानपरयो राजन्नविवेकेन कल्पितम् ॥२२॥

पदच्छेद— निन्दनस्तव सत्कार नयत् कारार्थं कलेवरम् ।
प्रधान परयोः राजन् अविवेकेन कल्पितम् ॥

शब्दार्थ—

निन्दन	२.	निन्दा	प्रधान	८.	प्रकृति (और)
स्तव	३.	स्तुति	परयोः	९.	पुरुष का
सत्कार	४.	सत्कार	राजन्	१.	हे राजन् !
न्यक्कार	५.	तिरस्कार	अविवेकेन	१०.	विवेक न होने से ये
अर्थम्	६.	के लिये (यह)	कल्पितम् ॥	११.	कल्पना हुई है
कलेवरम् ।	७.	शरीर है			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निन्दा, स्तुति, सत्कार, तिरस्कार के लिये यह शरीर है। प्रकृति और पुरुष का विवेक न होने से यह कल्पित है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

हिंसा तदभिमानेन दण्डपारुष्ययोर्यथा ।
वैषम्यमिह भूतानां ममाहमिति पार्थिव ॥२३॥

पदच्छेद— हिंसा तत् अभिमानेन दण्ड पारुष्ययोः यथा ।
वैषम्यम् इह भूतानाम् मम अहम् इति पार्थिव ॥

शब्दार्थ—

हिंसा	४.	हिंसा	वैषम्यम्	७.	विषमता
तत्	२.	उस (शरीर के)	इह	११.	यहाँ
अभिमानेन	३.	अभिमान के कारण	भूतानाम्	१२.	प्राणियों में होता है
दण्ड	५.	दण्ड	मम अहम्	८.	मेरा मैं
पारुष्ययोः	६.	कठोरता	इति	९.	यह सब
यथा ।	१०.	जैसे	पार्थिव ॥	१.	हे राजन् ।

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस शरीर के अभिमान के कारण हिंसा, दण्ड, कठोरता, विषमता, मेरा मैं यह सब जैसे यहाँ प्राणियों में होता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यन्निबद्धोऽभिमानोऽयं तद्वधात्प्राणिनां वधः ।

तथा न यस्य कैवल्यादभिमानोऽखिलात्मनः ।

परस्य दमकर्तुर्हि हिंसा केनास्य कल्प्यते ॥२४॥

पदच्छेद—

यत् निबद्धः अभिमानः अयम् तत् वधात् प्राणिनाम् वधः ।

तथा न यस्य कैवल्यात् अभिमानः अखिल आत्मनः ।

परस्य दमकर्तुः हि हिंसा केन अस्य कल्प्यते ॥

शब्दार्थ—

यत् निबद्धः	१.	जिस शरीर से बंधा हुआ	कैवल्यात्	१०.	वे अकेले और
अभिमानः अयम्	२.	यह अभिमान है	अभिमानः	८.	अभिमान
तद् वधात्	३.	उसके वध से	अखिलआत्मनः	११.	सबकी आत्मा है
प्राणिनाम्	४.	प्राणियों का	परस्य	१२.	दूसरे को
वधः ।	५.	वध मालूम होता है	दमकर्तुर्हि	१३.	दण्ड देने वाले
तथा	६.	इस प्रकार	हिंसा केन	१५.	हिंसा किस प्रकार
न	९.	नहीं है (क्योंकि)	अस्य	१४.	उस भगवान् की
यस्य	७.	उन भगवान् में	कल्प्यते ॥	१६.	कही जा सकती है

श्लोकार्थ—

जिस शरीर से बंधा हुआ यह अभिमान है, उसके वध से प्राणियों का वध मालूम होता है। इस प्रकार उन भगवान् में अभिमान नहीं है। क्योंकि वे अकेले और सबकी आत्मा हैं। दूसरे को दण्ड देने वाले उस भगवान् की हिंसा किस प्रकार कही जा सकती है ? ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तस्माद्वैरानुबन्धेन निर्वैरेण भयेन वा।
स्नेहात्कामेन वा युञ्ज्यात् कथञ्चिन्नेक्षते पृथक् ॥२५॥

पदच्छेद— तस्मात् वैर अनुबन्धेन निर्वैरेण भयेन वा।
स्नेहात् कामेन वा युञ्ज्यात् कथञ्चित् न ईक्षते पृथक् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	स्नेहात्	७.	स्नेह से
वैर	३.	विरोध भाव से	कामेन	८.	कमना से
अनुबन्धेन	२.	सुदृढ़	वा	९.	अथवा
निर्वैरेण	४.	वैर रहित	युञ्ज्यात्	११.	मन को लगावे
भयेन	६.	भय से	कथञ्चित्	१०.	किसी भी प्रकार (भगवान् में)
वा।	५.	अथवा	न ईक्षते	१३.	नहीं देखते हैं
			पृथक् ॥	१२.	भगवान् (इन भावों को) अलग अलग

श्लोकार्थ—इसलिये सुदृढ़ विरोध भाव से, वैर रहित अथवा भय से, स्नेह से कामना से अथवा किसी भी प्रकार से भगवान् में मन को लगावे। भगवान् इन भावों को अलग अलग नहीं देखते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

यथा वैरानुबन्धेन मर्त्यस्तन्मयतामियात्।
न तथा भक्तियोगेन इति मे निश्चिता मतिः ॥२६॥

पदच्छेद— यथा वैर अनुबन्धेन मर्त्यः तत् मयताम् इयात्।
न तथा भक्ति योगेन इति मे निश्चिता मतिः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	न	११.	नहीं (प्राप्त करता है)
वैर	३.	शत्रु-भाव से	तथा	८.	वैसे
अनुबन्धेन	२.	अत्यन्त	भक्ति	९.	भक्ति
मर्त्यः	४.	मनुष्य	योगेन	१०.	योग से
तत्	५.	भगवान् के	इति मे	१२.	यह मेरी
मयताम्	६.	स्वरूप को	निश्चिता	१३.	निश्चित
इयात्।	७.	प्राप्त होता है	मतिः ॥	१४.	बुद्धि है

श्लोकार्थ—जैसे अत्यन्त शत्रु-भाव से मनुष्य भगवान् को प्राप्त कर लेता है वैसे भक्ति-योग से नहीं प्राप्त करता है। यह मेरी निश्चित बुद्धि है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कीटः पेशस्कृता रुद्धः कुडयायां तमनुस्मरन् ।
संरम्भभययोगेन विन्दते तत्सरूपताम् ॥२७॥

पदच्छेद— कीटः पेशस्कृता रुद्धः कुडयायाम् तम् अनुस्मरन् ।
संरम्भभय योगेन विन्दते तत् सरूपताम् ॥

शब्दार्थ—

कीटः	४.	कीड़ा	संरम्भ	७.	उद्वेग (और)
पेशस्कृता	१.	भृंगी के द्वारा	भय	८.	भय के
रुद्धः	३.	बन्द किये जाने पर	योगेन	९.	कारण
कुडयायाम्	२.	दीवार के छेद में	विन्दते	१२.	प्राप्त कर लेता है
तम्	५.	उस भृंगी का	तत्	१०.	उस भृंगी के
अनुस्मरन् ।	६.	ध्यान करता हुआ	सरूपताम् ॥	११.	स्वरूप को

श्लोकार्थ—भृंगी के द्वारा दीवार के छेद में बन्द किये जाने पर कीड़ा उस भृंगी का ध्यान करता हुआ उद्वेग और भय के कारण उस भृंगी के स्वरूप को प्राप्त कर लेता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

एवं कृष्णे भगवति मायामनुज ईश्वरे ।
वैरेण पूतपाप्मानस्तमापुरनुचिन्तया ॥२८॥

पदच्छेद— एवम् कृष्णे भगवति माया मनुज ईश्वरे ।
वैरेण पूतपाप्मानः तम आपुः अनुचिन्तया ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	वैरेण	७.	वैर करने से
कृष्णे	६.	श्रीकृष्ण में	पूतपाप्मानः	९.	निष्पाप होकर
भगवति	५.	भगवान्	तम्	१०.	उन भगवान् को
माया	२.	माया से	आपुः	११.	प्राप्त हो गये
मनुजे	३.	मनुष्य बने हुये	अनुचिन्तया ॥	८.	चिन्तन करते-करते
ईश्वरे ।	४.	ईश्वर			

श्लोकार्थ—इस प्रकार माया से मनुष्य बने हुये ईश्वर भगवान् श्री कृष्ण में वैर करने से चिन्तन करते-करते निष्पाप होकर उन भगवान् को प्राप्त हो गये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

कामाद् द्वेषाद्भयात्स्नेहाद्यथा भक्त्येश्वरे मनः ।
आवेश्य तदघं हित्वा बहवस्तद्गतिं गताः ॥२९॥

पदच्छेद— कामात् द्वेषात् भयात् स्नेहात् यथा भक्त्या ईश्वरे मनः ।
आवेश्य तत् अघम् हित्वा बहवः तत् गतिम् गताः ॥

शब्दार्थ—

कामात्	१. काम से	**आवेश्य**	७. लगाकर
द्वेषात्	२. द्वेष से	**तत्**	८. अपने
भयात्	३. भय से	**अघम्**	९. पाप को
स्नेहात्	४. स्नेह से	**हित्वा**	१०. छोड़कर
यथा	१५. जिस प्रकार	**बहवः**	११. बहुत से लोग
भक्त्या	१६. भक्ति से (होते हैं)	**तत्**	१२. उन भगवान् के
ईश्वरे	६. ईश्वर में	**गतिम्**	१३. लोक को
मनः ।	५. मन को	**गताः ॥**	१४. प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—काम से, द्वेष से, भय से, स्नेह से, मन को ईश्वर में लगाकर अपने पाप को छोड़कर बहुत से लोग उन भगवान् के लोक को प्राप्त हो गये, जिस प्रकार भक्ति से होते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

गोप्यः कामाद्भयात्कंसो द्वेषाच्चैद्यादयो नृपाः ।
सम्बन्धाद् वृष्णयः स्नेहाद् यूयं भक्त्या वयं विभो ॥३०॥

पदच्छेद— गोप्यः कामात् भयात् कंसः द्वेषात् चैद्य आदयः नृपाः ।
सम्बन्धात् वृष्णयः स्नेहात् यूयम् भक्त्या वयम् विभो ॥

शब्दार्थ—

गोप्यः	२. गोपियाँ	**सम्बन्धात्**	१०. सम्बन्ध से
कामात्	३. काम-भाव से	**वृष्णयः**	९. कृष्ण वंशी
भयात्	५. भय से	**स्नेहात्**	१२. स्नेह से (और)
कंसः	४. कंस	**यूयम्**	११. तुम लोगों ने
द्वेषात्	८. द्वेष से	**भक्त्या**	१४. भक्ति से (भगवान् में मन लगाया है)
चैद्य	६. शिशुपाल	**वयम्**	१३. हम लोगों ने
आदयःनृपाः ।	७. आदि राजा	**विभो ॥**	१. हे महाराज !

श्लोकार्थ—हे महाराज ! गोपियाँ काम-भाव से, कंस भय से, शिशुपाल आदि राजा द्वेष से, कृष्ण-वंशी सम्बन्ध से, तुम लोगों ने स्नेह से और हम लोगों ने भक्ति से भगवान् में मन लगाया है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

कतमोऽपि न वेनः स्यात्पञ्चानां पुरुषं प्रति ।
तस्मात् केनाप्युपायेन मनः कृष्णे निवेशयेत् ॥३१॥

पदच्छेद— कतमः अपि न वेनः स्यात् पञ्चानाम् पुरुषम् प्रति ।
तस्मात् केन अपि उपायेन मनः कृष्णे निवेशयेत् ॥

शब्दार्थ—

कतमः	४.	कोई	तस्मात्	८.	इसलिये
अपि	५.	भी	केन	९.	किसी
न	६.	नहीं	अपि	१०.	भी
वेनः	१.	राजा वेन ने	उपायेन	११.	उपाय से
स्यात्	७.	किया	मनः	१२.	मन को
पञ्चानाम्	३.	पाँच प्रकार के उपायों में से	कृष्णे	१३.	भगवान् श्री कृष्ण में
पुरुषम् प्रति ।	२.	भगवान् के प्रति	निवेशयेत् ॥	१४.	लगा देना चाहिये

श्लोकार्थ—राजा वेन ने भगवान् के प्रति पाँच प्रकार के उपायों में से कोई भी नहीं किया । इसलिये किसी भी उपाय से मन को भगवान् श्री कृष्ण में लगा देना चाहिये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

मातृष्वसेयो वश्चैद्यो दन्तवक्त्रश्च पाण्डव ।
पार्षदप्रवरौ विष्णोर्विप्रशापात्पदाच्च्युतौ ॥३२॥

पदच्छेद— मातृष्व सेयः वः चैद्यः दन्तवक्त्रः च पाण्डवः ।
पार्षद प्रवरौ विष्णोः विप्र शापात् पदात् च्युतौ ॥

शब्दार्थ—

मातृष्वसेयः	३.	मौसेरे भाई	पार्षद	९.	पार्षद थे (जो)
वः	२.	तुम्हारे	प्रवरौ	८.	मुख्य
चैद्यः	४.	शिशुपाल	विष्णोः	७.	विष्णु के
दन्तवक्त्रः	६.	दन्तवक्त्र	विप्रशापात्	१०.	ब्राह्मणों के शाप से (अपने)
च	५.	और	पदात्	११.	पद से
पाण्डव ।	१.	हे परीक्षित् !	च्युतौ ॥	१२.	गिर गये थे

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! तुम्हारे मौसेरे भाई शिशुपाल और दन्तवक्त्र विष्णु के मुख्य पार्षद थे । जो ब्राह्मणों के शाप से अपने पद से गिर गये थे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कीदृशः कस्य वा शापो हरिदासाभिमर्शनः ।
अश्रद्धेय इवाभाति हरेरेकान्तिनां भवः ॥३३॥

पदच्छेद— कीदृशः कस्य वा शापः हरिदास अभिमर्शनः ।
अश्रद्धेय इव आभाति हरेः एकान्तिनाम् भवः ॥

शब्दार्थ—

कीदृशः	३. कैसा	अश्रद्धेयः	१०. अविश्वसनीय के
कस्य	५. किसका	इव	११. समान
वा	४. अथवा	आभाति	१२. मालूम पड़ती है
शापः	६. शाप है	हरेः	७. भगवान् विष्णु के
हरिदासः	१. भगवान् के भक्तों को	एकान्तिनाम्	८. अनन्य प्रेमी जनों पर
अभिमर्शनः ।	२. प्रभावित करने वाला	भवः ॥	९. पड़ने वाला शाप

श्लोकार्थ—भगवान् के भक्तों को प्रभावित करने वाला कैसा अथवा किसका शाप है । भगवान् विष्णु के अनन्य प्रेमी जनों पर पड़ने वाला शाप अविश्वसनीय के समान मालूम पड़ता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

देहेन्द्रियासुहीनानां वैकुण्ठपुरवासिनाम् ।
देहसम्बन्धसम्बद्धमेतदाख्यातुमर्हसि ॥३४॥

पदच्छेद— देह इन्द्रिय असु हीनानाम् वैकुण्ठपुर वासिनाम् ।
देह सम्बन्ध सम्बद्धम् एतद् आख्यातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

देह	३. देह	देह	७. देह के
इन्द्रिय	४. इन्द्रिय (और)	सम्बन्ध	८. सम्बन्ध से
असु	५. प्राण से	सम्बद्धम्	९. बंधी हुई
हीनानाम्	६. रहित होते हैं	एतद्	१०. इस घटना को
वैकुण्ठपुर	१. वैकुण्ठपुर में	आख्यातुम्	११. कहने के लिये
वासिनाम् ।	२. निवास करने वाले	अर्हसि ॥	१२. आप योग्य हैं

श्लोकार्थ—वैकुण्ठपुर में निवास करने वाले देह, इन्द्रिय और प्राण से रहित होते हैं । देह के सम्बन्ध से बंधी हुई इस घटना को कहने के लिये आप योग्य हैं ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नारदउवाच—एकदा ब्रह्मणः पुत्रा विष्णोर्लोकं यदृच्छया ।
सनन्दनादयो जग्मुश्चरन्तो भुवनत्रयम् ॥३५॥

पदच्छेद— एकदा ब्रह्मणः पुत्राः विष्णोः लोकम् यदृच्छया ।
सनन्दन आदयः जग्मुः चरन्तः भुवन त्रयम् ॥

शब्दार्थ—

एकदा	१.	एक बार	सनन्दन	४.	सनन्दन
ब्रह्मणः	२.	ब्रह्मा के	आदयः	५.	आदि (ऋषि)
पुत्राः	३.	पुत्र	जग्मुः	१२.	गये
विष्णोः	१०.	विष्णु के	चरन्तः	८.	विचरण करते हुये
लोकम्	११.	लोक को	भुवन	७.	लोकों में
यदृच्छया ।	९.	अपनी इच्छा से	त्रयम् ॥	६.	तीनों

श्लोकार्थ—एक बार ब्रह्मा के पुत्र सनन्दन आदि ऋषि तीनों लोकों में विचरण करते हुये अपनी इच्छा से विष्णु के लोक को गये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

पञ्चषड्ढायनार्भाभाः पूर्वेषामपि पूर्वजाः ।
दिग्वाससः शिशून्मत्वा द्वाःस्थौ तान् प्रत्यषेधताम् ॥३६॥

पदच्छेद— पञ्चषड् हायन अर्भाभाः पूर्वेषाम् अपि पूर्वजाः ।
दिग्वाससः शिशून् मत्वा द्वाःस्थौ तान् प्रतिअषेधताम् ॥

शब्दार्थ—

पञ्चषड्	१.	पाँच छः	दिग्वाससः	७.	दिगम्बर
हायन	२.	वर्ष के	शिशून्	८.	बच्चे
अर्भाभाः	३.	बच्चे के समान	मत्वा	९.	मानकर
पूर्वेषाम्	४.	पूर्वजों के	द्वाः स्थौ	१०.	द्वारपालों ने
अपि	५.	भी	तान्	११.	उन्हें
पूर्वजाः ।	६.	पूर्वज	प्रतिअषेधताम् ॥	१२.	रोक दिया

श्लोकार्थ—पाँच छः वर्ष के बच्चे के समान पूर्वजों के भी पूर्वज, दिगम्बर, बच्चे मानकर द्वारपालों ने उन्हें रोक दिया ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अशपन् कुपिता एवं युवां वासं न चार्हथः ।
रजस्तमोभ्यां रहिते पादमूले मधुद्विषः ।
पापिष्ठामासुरीं योनिं बालिशौ यातमाश्वतः ॥३७॥

पदच्छेद— अशपन् कुपिताः एवम् युवाम् वासम् न च अर्हथः ।
रजः तमोभ्याम् रहिते पादमूले मधुद्विषः ।
पापिष्ठाम् आसुरीम् योनिम् बालिशौ यातम् आशु अतः ॥

शब्दार्थ—

अशपन्	३.	शाप दे दिया	रहिते	८.	रहित
कुपिताः	२.	कुपित होकर	पादमूले	१०.	चरणों में
एवम्	१.	इस प्रकार (रोके जाने पर)	मधुद्विषः	९.	भगवान् के
युवाम्	४.	तुम दोनों	पापिष्ठाम्	१५.	अत्यन्त पापी
वासम्	१२.	निवास	आसुरीम्	१६.	आसुरी
न	११.	नहीं	योनिम्	१७.	योनि में
च	६.	और	बालिशौ	१४.	मूर्खों
अर्हथः ।	१३.	करने योग्य हो	यातम्	२०.	जाओ
रजः	५.	रजोगुण	आशु	१९.	शीघ्र ही
तमोभ्याम् ।	७.	तमोगुण से	अतः ॥	१८.	यहाँ से

श्लोकार्थ—इस प्रकार रोके जाने पर कुपित होकर शाप दे दिया । तुम दोनों रजोगुण और तमोगुण से रहित भगवान् के चरणों में निवास करने योग्य नहीं हो । अत्यन्त पापी आसुरी योनि में यहाँ से शीघ्र ही जाओ ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

एवं शप्तौ स्वभवनात् पतन्तौ तैः कृपालुभिः ।
प्रोक्तौ पुनर्जन्मभिर्वा त्रिभिर्लोकाय कल्पताम् ॥३८॥

पदच्छेद— एवम् शप्तौ स्वभवनात् पतन्तौ तैः कृपालुभिः ।
प्रोक्तौ पुनर्जन्मभिर्वा त्रिभिःलोकाय कल्पताम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	प्रोक्तौ	७.	कहा (कि)
शप्तौ	२.	शाप दिये जाने पर	पुनः जन्मभिः	८.	फिर जन्म लेकर
स्वभवनात्	३.	अपने भवन से	वा त्रिभिः	९.	अथवा तीन बार
पतन्तौ	४.	गिरते हुये	लोकाय	१०.	इस लोक में
तैः	५.	उन दोनों से	कल्पताम् ॥	११.	आ जाना
कृपालुभिः ।	६.	दयालु (ऋषियों ने)			

श्लोकार्थ—इस प्रकार शाप दिये जाने पर अपने भवन से गिरते हुये उन दोनों से दयालु ऋषियों ने कहा कि फिर अथवा तीन बार जन्म लेकर इस लोक में आ जाना ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

जज्ञाते तौ दितेः पुत्रौ दैत्यदानववन्दितौ ।
हिरण्यकशिपुर्ज्येष्ठो हिरण्याक्षोऽनुजस्ततः ॥३९॥

पदच्छेद— जज्ञाते तौ दितेः पुत्रौ दैत्य दानव वन्दितौ ।
हिरण्यकशिपुः ज्येष्ठः हिरण्याक्षः अनुजः ततः ॥

शब्दार्थ—

जज्ञाते	५. उत्पन्न हुये	वन्दितौ ।	८. वन्दित
तौ	२. वे दोनों	हिरण्यकशिपुः	९. हिरण्यकशिपु
दितेः	३. दिति के	ज्येष्ठः	१०. बड़ा भाई था (और)
पुत्रौ	४. पुत्र होकर	हिरण्याक्षः	११. हिरण्याक्ष
दैत्य	६. दैत्यों और	अनुजः	१२. छोटा भाई था
दानव	७. दानवों से	ततः ॥	१. तदनन्तर

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे दोनों दिति के पुत्र होकर उत्पन्न हुये, दैत्यों और दानवों से वन्दित हिरण्यकशिपु बड़ा भाई था और हिरण्याक्ष छोटा भाई था ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

हतो हिरण्यकशिपुर्हरिणा सिंहरूपिणा ।
हिरण्याक्षो धरोद्धारे बिभ्रता सौकरं वपुः ॥४०॥

पदच्छेद— हतौ हिरण्यकशिपुः हरिणा सिंह रूपिणा ।
हिरण्याक्षः धरा उद्धारे बिभ्रता सौकरम् वपुः ॥

शब्दार्थ—

हतः	५. मारा गया	हिरण्याक्षः	१०. हिरण्याक्ष को मार दिया
हिरण्यकशिपुः	१. हिरण्यकशिपु	धरा उद्धारे	६. पृथ्वी का उद्धार करते समय
हरिणा	४. भगवान् विष्णु के द्वारा	बिभ्रता	९. धारण करके
सिंह	२. सिंह का	सौकरम्	७. सुअर का
रूपिणा ।	३. रूप धारण करने वाले	वपुः ॥	८. शरीर

श्लोकार्थ—हिरण्यकशिपु सिंह का रूप धारण करने वाले भगवान् विष्णु के द्वारा मारा गया। और पृथ्वी का उद्धार करते समय सुअर का शरीर धारण करके हिरण्याक्ष को मार दिया ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुः पुत्रं प्रह्लादं केशवप्रियम् ।
जिघांसुरकरोन्नाना यातना मृत्युहेतवे ॥४१॥

पदच्छेद— हिरण्यकशिपुः पुत्रम् प्रह्लादम् केशवप्रियम् ।
जिघांसुः अकरोत् नाना यातनाः मृत्यु हेतवे ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपुः	१. हिरण्यकशिपु ने	जिघांसुः	६. मार डालने की इच्छा से
पुत्रम्	४. पुत्र	अकरोत्	१०. दी
प्रह्लादम्	५. प्रह्लाद को	नाना	८. अनेक प्रकार की
केशव	२. भगवान् के	यातनाः	९. यातनायें
प्रियम् ।	३. भक्त	मृत्युहेतवे ॥	७. मृत्यु के लिए

श्लोकार्थ—हिरण्यकशिपु ने भगवान् के भक्त पुत्र प्रह्लाद को मार डालने की इच्छा से मृत्यु के लिये अनेक प्रकार की यातनायें दीं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वभूतात्मभूतं तं प्रशान्तं समदर्शनम् ।
भगवत्तेजसा स्पृष्टं नाशक्नोद्धन्तुमुद्यमैः ॥४२॥

पदच्छेद— सर्व भूत आत्म भूतम् तम् प्रशान्तम् समदर्शनम् ।
भगवत् तेजसा स्पृष्टम् न अशक्नोत् हन्तुम् उद्यमैः ॥

शब्दार्थ—

सर्वभूत	१. सभी प्राणियों के	भगवत्	८. भगवान् के
आत्म	२. आत्मा के	तेजसा	९. तेज से
भूतम्	३. समान	स्पृष्टम्	१०. सुरक्षित (प्रह्लाद को)
तम्	४. उस	न	१३. नहीं
प्रशान्तम्	५. शान्त (और)	अशक्नोत्	१४. समर्थ हुआ
सम	६. सम	हन्तुम्	१२. मार डालने में
दर्शनम् ।	७. दर्शी	उद्यमैः ॥	११. अनेक प्रयत्नों से

श्लोकार्थ—सभी प्राणियों के आत्मा के समान उस शान्त और समदर्शी भगवान् के तेज से सुरक्षित उस प्रह्लाद को अनेक प्रयत्नों से मार डालने में नहीं समर्थ हुआ ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

ततस्तौ राक्षसौ जातौ केशिन्यां विश्रवःसुतौ ।
रावणः कुम्भकर्णश्च सर्वलोकोपतापनौ ॥४३॥

पदच्छेद— ततः तौ राक्षसौ जातौ केशिन्याम् विश्रवः सुतौ ।
रावणः कुम्भकर्णः च सर्वलोक उपतापनौ ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. तब	सुतौ ।	५. पुत्र होकर
तौ	२. वे दोनों	रावणः	६. रावण
राक्षसौ	११. राक्षस	कुम्भकर्णः	८. कुम्भकर्ण नाम से
जातौ	१२. हुये	च	७. और
केशिन्याम्	३. केशिनी के गर्भ से	सर्वलोक	९. सभी लोकों को
विश्रवः	४. विश्रवा के	उपतापनौ ॥	१०. सताने वाले

श्लोकार्थ—तब वे दोनों केशिनी के गर्भ से विश्रवा के पुत्र होकर रावण और कुम्भकर्ण नाम से सभी लोकों को सताने वाले राक्षस हुये ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तत्रापि राघवो भूत्वा न्यहनच्छापमुक्तये ।
रामवीर्यं श्रोष्यसि त्वं मार्कण्डेयमुखात् प्रभो ॥४४॥

पदच्छेद— तत्र अपि ।राघवः भूत्वा न्यहनत् शापमुक्तये ।
रामवीर्यम् श्रोष्यसि त्वम् मार्कण्डेय ,खात् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२. उस जन्म में	राम	१२. राम के
अपि	३. भी	वीर्यम्	१३. पराक्रम को
राघवः	४. भगवान् ने राम-रूप को	श्रोष्यसि	१४. सुनोगे
भूत्वा	५. धारण करके	त्वम्	९. तुम
न्यहनत्	८. मार डाला	मार्कण्डेय	१०. मार्कण्डेय मुनि के
शाप	६. शाप से	मुखात्	११. मुख से
मुक्तये ।	७. मुक्त करने के लिये	प्रभो ॥	१. हे महाराज !

श्लोकार्थ—हे महाराज ! उस जन्म में भी भगवान् ने राम-रूप को धारण करके शाप से मुक्त करने के लिये मार डाला । राम के पराक्रम को तुम मार्कण्डेय मुनि के मुख से सुनोगे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तावेव क्षत्रियौ जातौ मातृष्वस्रात्मजौ तव ।
अधुना शापनिर्मुक्तौ कृष्णचक्रहतांहसौ ॥४५॥

पदच्छेद— तौ एव क्षत्रियौ जातौ मातृष्वसृ आत्मजौ तव ।
अधुना शापनिर्मुक्तौ कृष्ण चक्र हत अंहसौ ॥

शब्दार्थ—

तौ	१.	वे दोनों	अधुना	८.	इस समय
एव	२.	ही	शाप	१३.	शाप से
क्षत्रियौ	६.	क्षत्रिय कुल में	निर्मुक्तौ	१४.	छूट गये हैं
जातौ	७.	उत्पन्न हुये	कृष्ण	९.	श्री कृष्ण के
मातृष्वसृ	४.	मौसी के	चक्र	१०.	चक्र के स्पर्श से
आत्मजौ	५.	पुत्र	हत	१२.	नष्ट हो गये हैं और वे
तव ।	३.	आपके	अंहसौ ॥	११.	उनके पाप

श्लोकार्थ—वे दोनों ही आपके मौसी के पुत्र क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुये । इस समय श्रीकृष्ण के चक्र के स्पर्श से उनके पाप नष्ट हो गये । और वे शाप से छूट गये ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

वैरानुबन्धतीव्रेण ध्यानेनाच्युतसात्मताम् ।
नीतौ पुनर्हरेः पार्श्वं जग्मतुर्विष्णुपार्षदौ ॥४६॥

पदच्छेद— वैर अनुबन्ध तीव्रेण ध्यानेन अच्युत सआत्मताम् ।
नीतौ पुनः हरेः पार्श्वम् जग्मतुः विष्णु पार्षदौ ॥

शब्दार्थ—

वैर	३.	वैर-भाव के कारण	नीतौ	७.	प्राप्त हो गये
अनुबन्ध	२.	सुदृढ़	पुनः हरेः	८.	फिर भगवान्
तीव्रेण	१.	अत्यन्त	पार्श्वम्	११.	समीप में
ध्यानेन	४.	चिन्तन से	जग्मतुः	१२.	चले गये
अच्युत	५.	भगवान् श्रीकृष्ण के	विष्णु	९	विष्णु के
सआत्मताम् ।	६.	स्वरूप को	पार्षदौ ॥	१०.	पार्षद होकर (उनके)

श्लोकार्थ—अत्यन्त सुदृढ़ वैर-भाव के कारण चिन्तन से भगवान् श्री कृष्ण के स्वरूप को प्राप्त हो गये । फिर भगवान् विष्णु के पार्षद होकर उनके समीप में चले गये ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

युधिष्ठिर उवाच—विद्वेषो दयिते पुत्रे कथमासीन्महात्मनि ।
ब्रूहि मे भगवन्येन प्रह्लादस्याच्युतात्मता ॥४७॥

पदच्छेद— विद्वेषः दयिते पुत्रे कथम् आसीत् महात्मनि ।
ब्रूहि मे भगवन् येन प्रह्लादस्य अच्युत आत्मता ॥

शब्दार्थ—

विद्वेष	६.	द्वेष	ब्रूहि	९.	कहिये
दयिते	३.	प्रिय	मे	८.	मुझसे
पुत्रे	४.	पुत्र में (हिरण्यकशिपु ने)	भगवन्	१.	हे भगवन् !
कथम्	५.	क्यों	येन	१०.	जिससे
आसीत्	७.	किया	प्रह्लादस्य	११.	प्रह्लाद
महात्मनि ।	२.	महात्मा	अच्युत	१२.	भगवान् के
			आत्मता ॥	१३.	स्वरूप को प्राप्त हो गये ॥

श्लोकार्थ—हे महाराज ! महात्मा प्रिय पुत्र में हिरण्यकशिपु ने क्यों द्वेष किया । मुझसे कहिये । जिससे प्रह्लाद भगवान् के स्वरूप को प्राप्त हो गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे
प्रह्लाद-चरित-उपक्रमे प्रथमः अध्यायः ॥१॥



सप्तमः स्कन्धः

द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—भ्रातर्येवं विनिहते हरिणा क्रोडमूर्तिना ।
हिरण्यकशिपू राजन् पर्यतप्यद्रुषा शुचा ॥१॥

पदच्छेद— भ्रातरि एवम् विनिहते हरिणा क्रोड मूर्तिना ।
हिरण्यकशिपुः राजन् पर्यतप्यत रुषा शुचा ॥

शब्दार्थ—

भ्रातरि	४. भाई के	हिरण्यकशिपुः	७. हिरण्यकशिपु
एवम्	५. इस प्रकार	राजन्	१. हे राजन् !
विनिहते	६. मार दिये जाने पर	पर्यप्तप्यत्	१०. सन्तप्त हो गया
हरिणा	३. भगवान् के द्वारा	रुषा	८. क्रोध और
क्रोडमूर्तिना ।	२. वाराह का शरीर धारण करने वाले	शुचा ॥	९. शोक से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वाराह का शरीर धारण करने वाले भगवान् के द्वारा भाई के इस प्रकार मार दिये जाने पर हिरण्यकशिपु क्रोध और शोक से संतप्त हो उठा ॥

द्वितीयः श्लोकः

आह चेदं रुषा घूर्णः सन्दष्टदशनच्छदः ।
कोपोज्ज्वलद्भ्यां चक्षुर्भ्यां निरीक्षन् धूम्रमम्बरम् ॥२॥

पदच्छेद— आह च इदम् रुषा घूर्णः सन्दष्ट दशनच्छदः ।
कोप उज्ज्वलद्भ्याम् चक्षुर्भ्याम् निरीक्षन् धूम्रम् अम्बरम् ॥

शब्दार्थ—

आह	१२. बोला	कोप	५. कोप से
च	१. और	उज्ज्वलद्भ्याम्	६. दहकती हुई
इदम्	११. यह	चक्षुर्भ्याम्	७. आँखों से
रुषा चूर्णः	२. क्रोध से कांपता हुआ	निरीक्षन्	१०. देखता हुआ
सन्दष्ट	४. चबाता हुआ	धूम्रम्	८. धूमिल हुये
दशनच्छदः ।	३. होठों को दाँतों से	अम्बरम् ॥	९. आकाश की ओर

श्लोकार्थ—और क्रोध से काँपता हुआ, होठों को दातों से चबाता हुआ, क्रोध से दहकती हुई आँखों से धूमिल हुये आकाश की ओर देखता हुआ यह बोला ॥

तृतीयः श्लोकः

करालदंष्ट्रोग्रदृष्टया दुष्प्रेक्ष्यभ्रुकुटीमुखः ।
शूलमुद्यम्य सदसि दानवानिदमब्रवीत् ॥३॥

पदच्छेद— कराल दंष्ट्र उग्रदृष्टया दुष्प्रेक्ष्य भ्रुकुटी मुखः ।
शूलम् उद्यम्य सदसि दानवान् इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

कराल	१.	भयंकर	शूलम्	७.	त्रिशूल को
दंष्ट्र	२.	दाढ़ों (और)	उद्यम्य	८.	उठाकर
उग्रदृष्टया	३.	भयानक दृष्टि से	सदसि	९.	सभा में
दुष्प्रेक्ष्य	४.	न देखने योग्य	दानवान्	१०.	दानवों से
भ्रुकुटी	५.	भौहों से युक्त	इदम्	११.	यह
मुखः ।	६.	मुखवाला (वह)	अब्रवीत् ॥	१२.	बोला

श्लोकार्थ—भयंकर दाढ़ों और भयानक दृष्टि से न देखने योग्य भौहों से युक्त मुखवाला वह सभा में त्रिशूल को उठाकर दानवों से यह बोला ॥

चतुर्थः श्लोकः

भो भो दानवदैतेया द्विमूर्धंस्त्र्यक्ष शम्बर ।
शतबाहो हयग्रीव नमुचे पाक इल्वल ॥४॥

भो भो दानव दैतेया द्विमूर्धन् त्र्यक्ष शम्बर ।
शतबाहो हग्रीव नमुचे पाक इल्वल ॥

शब्दार्थ—

भो भो	१.	अरे	शतबाहो	७.	शतबाहु
दानव	२.	दानवों और	हयग्रीव	८.	हयग्रीव
दैतेयाः	३.	दैत्यों	नमुचे	९.	नमुचि
द्विमूर्धन्	४.	द्विमूर्धा	पाक	१०.	पाक (और)
त्र्यक्ष	५.	त्र्यक्ष	इल्वल ॥	११.	इल्वल (सुनो)
शम्बर ।	६.	शम्बर			

श्लोकार्थ—अरे दानवों और दैत्यों द्विमूर्धा, त्र्यक्ष, शम्बर, शतबाहु, हयग्रीव, नमुचि, पाक और इल्वल सुनो ॥

पञ्चमः श्लोकः

विप्रचित्ते मम वचः पुलोमन् शकुनादयः ।
शृणुतानन्तरं सर्वे क्रियतामाशु मा चिरम् ॥५॥

पदच्छेद— विप्रचित्ते मम वचः पुलोमन् शकुनादयः ।
शृणुत अनन्तरम् सर्वे क्रियताम् आशु मा चिरम् ॥

शब्दार्थ—

विप्रचित्ते	१. हे विप्रचित्ति !	अनन्तरम्	७. उसके बाद
मम	४. मेरा	सर्वे	८. सब लोग (जैसा मैं कहूँ)
वचः	५. वचन	क्रियताम्	१०. करो
पुलोमन्	२. पुलोमा	आशु	९. शीघ्र
शकुनादयः	३. शकुन आदि	मा	१२. मत
शृणुत ।	६. सुनो	चिरम् ॥	११. देर करो

श्लोकार्थ—हे विप्रचित्ति ! पुलोमा, शकुन आदि मेरा वचन सुनो । उसके बाद सब लोग जैसा मैं कहूँ शीघ्र करो । देर मत करो ।

षष्ठः श्लोकः

सपत्नैर्घातितः क्षुद्रैर्भ्राता मे दयितः सुहृत् ।
पार्ष्णिग्राहेण हरिणा समेनाप्युपधावनैः ॥६॥

पदच्छेद— सपत्नैः घातितः क्षुद्रैः भ्राता मे दयितः सुहृत् ।
पार्ष्णि ग्राहेण हरिणा समेन अपि उपधावनैः ॥

शब्दार्थ—

सपत्नैः	२. शत्रुओं ने	पार्ष्णि	१०. पक्ष
घातितः	१३. मरवा डाला	ग्राहेण	११. पाती
क्षुद्रैः	१. क्षुद्र	हरिणा	१२. भगवान् विष्णु के द्वारा
भ्राता	६. भाई को	समेन	७. समान होते हुये
मे	३. मेरे	अपि	८. भी (देवताओं के)
दयितः	४. प्रिय	उपधावनैः ॥	९. दौड़ धूप करने के कारण
सुहृत् ।	५. हितैषी		

श्लोकार्थ—क्षुद्र शत्रुओं ने मेरे प्रिय हितैषी भाई को देवताओं के दौड़-धूप करने के कारण समान होते हुए भी पक्षपाती भगवान् विष्णु के द्वारा मरवा डाला ॥

सप्तमः श्लोकः

तस्य त्यक्तस्वभावस्य घृणेर्मायावनौकसः ।
भजन्तं भजमानस्य बालस्येवास्थिरात्मनः ॥ ७ ॥

पदच्छेद— तस्य त्यक्त स्वभावस्य घृणेः माया वनौकसः ।
भजन्तम् भजमानस्य बालस्य इव अस्थिर आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	६.	उस भगवान् का स्वभाव	भजन्तम्	७.	सेवा करने वाले को
त्यक्त	२.	त्यागने वाले (और)	भजमानस्य	८.	चाहते हुये
स्वभावस्य	१.	अपने स्वभाव को	बालस्य	९.	बालक के
घृणेः	५.	सूकर का रूप धारण करने वाले	इव	१०.	समान
माया	३.	माया से	अस्थिर	१२.	चञ्चल है।
वनौकसः ।	४.	जंगली	आत्मनः ॥	११.	स्वभाव

श्लोकार्थ अपने स्वभाव को त्यागने वाले और माया से जंगली सूकर का रूप धारण करने वाले उस भगवान् का स्वभाव बालक के समान चञ्चल है ॥

अष्टमः श्लोकः

मच्छूलभिन्नग्रीवस्य भूरिणा रुधिरेण वै ।
रुधिरप्रियं तर्पयिष्ये भ्रातरं मे गतव्यथः ॥ ८ ॥

पदच्छेद— मत् शूल भिन्न ग्रीवस्य भूरिणा रुधिरेण वै ।
रुधिर प्रियम् तर्पयिष्ये भ्रतरं मे गतव्यथः ॥

शब्दार्थ—

मत्	४.	मेरे	रुधिर	१०.	रक्त के
शूल	५.	त्रिशूल से	प्रियम्	११.	प्रेमी
भिन्न	६.	कटी	तर्पयिष्ये	१४.	तर्पण करूँगा
ग्रीवस्य	७.	गर्दन वाले (भगवान् के)	भ्रतरम्	१३.	भाई का
भूरिणा	८.	बहुत	मे	१२.	अपने
रुधिरेण	९.	रक्त से	गत	३.	रहित होकर
वै ।	१.	निश्चित ही	व्यथः ॥	२.	(मैं) व्यथा से

श्लोकार्थ—निश्चित ही मैं व्यथा से रहित होकर अपने त्रिशूल से कटी गर्दन वाले भगवान् के बहुत रक्त से, रक्त के प्रेमी अपने भाई का तर्पण करूँगा ।

नवमः श्लोकः

तस्मिन् कूटेऽहिते नष्टे कृत्तमूले वनस्पतौ ।
विटपा इव शुष्यन्ति विष्णुप्राणा दिवौकसः ॥ ९ ॥

पदच्छेद— तस्मिन् कूटे अहिते नष्टे कृत्त मूले वनस्पतौ ।
विटपा इव शुष्यन्ति विष्णु प्राणाः दिवौकसः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस	**विटपाः**	८.	डालियों के
कूटे	२.	मायावी	**इव**	९.	समान
अहिते	३.	शत्रु के	**शुष्यन्ति**	१३.	सूख जायेंगे
नष्टे	४.	नष्ट हो जाने पर	**विष्णु**	११.	विष्णु ही
कृत्त	५.	कटी हुई	**प्राणाः**	१२.	प्राण हैं
मूले	६.	जड़ वाले	**दिवौकसः ॥**	१०.	देवगण (जिनके)
वनस्पतौ ।	७.	वृक्ष की			

श्लोकार्थ—उस मायावी शत्रु के नष्ट हो जाने पर कटी हुई जड़ वाले वृक्ष की डालियों के समान देवगण (जिनके) विष्णु ही प्राण हैं सूख जायेंगे ॥

दशमः श्लोकः

तावद्यात भुवं यूयं विप्रक्षत्रसमेधिताम् ।
सूदयध्वं तपोयज्ञस्वाध्यायव्रतदानिनः ॥१०॥

पदच्छेद— तावत् यात भुवम् यूयम् विप्र क्षत्र समेधिताम् ।
सूदयध्वम् तपः यज्ञ स्वाध्याय व्रत दानिनः ॥

शब्दार्थ—

तावत्	१.	तब तक	**सूदयध्वम्**	१३.	मार डालो
यात	७.	जाओ	**तपः**	८.	तपस्या
भुवम्	६.	पृथ्वी पर	**यज्ञ**	९.	यज्ञ
यूयम्	२.	तुम लोग	**स्वाध्याय**	१०.	स्वाध्याय
विप्र	३.	ब्राह्मणों और	**व्रत**	११.	व्रत और
क्षत्र	४.	क्षत्रियों से	**दानिनः ॥**	१२.	दान करने वालों को
समेधिताम् ।	५.	बढ़ी हुई			

श्लोकार्थ—तब-तक तुम लोग ब्राह्मण और क्षत्रियों से बढ़ी हुई पृथ्वी पर जाओ । तपस्या, यज्ञ, स्वाध्याय, व्रत और दान करने वालों को मार डालो ॥

एकादशः श्लोकः

विष्णुर्द्विजक्रियामूलो यज्ञो धर्ममयः पुमान् ।
देवर्षिपितृभूतानां धर्मस्य च परायणम् ॥११॥

पदच्छेद — विष्णुः द्विज क्रिया मूलः यज्ञः धर्ममयः पुमान् ।
देवर्षि पितृभूतानाम् धर्मस्य च परायणम् ॥

शब्दार्थ—

विष्णुः	१.	विष्णु ही	देवर्षि	८.	देवता-ऋषि
द्विज	२.	ब्राह्मणों के	पितृ	९.	पितर
क्रिया	३.	धर्म-कर्म	भूतानाम्	१०.	प्राणी
मूलः	४.	जड़ है	धर्मस्य	१२.	धर्म का (वही)
यज्ञः	६.	यज्ञ (और)	च	११.	और
धर्ममयः	७.	धर्म स्वरूप हैं	परायणम् ॥	१३.	परम आश्रय है
पुमान् ।	५.	विष्णु के			

श्लोकार्थ—विष्णु ही ब्राह्मणों के धर्म कर्म की जड़ है। यज्ञ और धर्म विष्णु के स्वरूप हैं। देवता, ऋषि, पितर, प्राणी और धर्म का परम आश्रय है ॥

द्वादशः श्लोकः

यत्र यत्र द्विजा गावो वेदा वर्णाश्रमाः क्रियाः ।
तं तं जनपदं यात सन्दीपयत वृश्चत ॥१२॥

पदच्छेद— यत्र यत्र द्विजाः गावः वेदाः वर्णाश्रमाः क्रियाः ।
तम् तम् जनपदम् यात सन्दीपयत वृश्चत ॥

शब्दार्थ—

यत्र-यत्र	१.	जहाँ-जहाँ	तम्-तम्	७.	उन-उन
द्विजाः	२.	ब्राह्मण	जनपदम्	८.	देशों में
गावः	३.	गाय	यात	९.	जाओ उन्हें
वेदाः	४.	वेद	सन्दीपयत	१०.	जला दो (और)
वर्णाश्रमाः	५.	वर्णाश्रम धर्म और	वृश्चत ॥	११.	उजाड़ दो
क्रियाः ।	६.	कर्म हों			

श्लोकार्थ—जहाँ-जहाँ ब्राह्मण, गाय, वेद, वर्णाश्रम धर्म और कर्म हों, उन-उन देशों में जाओ, उन्हें जला दो और उजाड़ दो ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इति ते भर्तृनिर्देशमादाय शिरसाऽऽदृताः ।
तथा प्रजानां कदनं विदधुः कदनप्रियाः ॥१३॥

पदच्छेद— इति ते भर्तृ निर्देशम् आदाय शिरसा आदृताः ।
तथा प्रजानाम् कदनम् विदधुः कदन प्रियाः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	तथा	१०.	उसी प्रकार
ते	६.	वे (दैत्य)	प्रजानाम्	११.	प्रजाओं का
भर्तृ	२.	स्वामी की	कदनम्	१२.	नाश
निर्देशम्	३.	आज्ञा को	विदधुः	१३.	करने लगे
आदाय	६.	ग्रहण करके	कदनम्	७.	पीड़ा देना ही
शिरसा	५.	सिर झुकाकर	प्रियाः ॥	८.	जिनको प्रिय है (ऐसे)
आदृताः ।	४.	आदर से			

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्वामी की आज्ञा को आदर से सिर झुकाकर ग्रहण करके पीड़ा देना ही जिसको प्रिय है, ऐसे वे दैत्य उसी प्रकार प्रजाओं का नाश करने लगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

पुरग्रामव्रजोद्यानक्षेत्रारामाश्रमाकरान् ।
खेटखर्वटघोषांश्च ददहुः पत्तनानि च ॥१४॥

पदच्छेद— पुर ग्राम व्रज उद्यान क्षेत्र आराम आश्रम आकरान् ।
खेट खर्वट घोषांश्च ददहुः पत्तनानि च ॥

शब्दार्थ—

पुर	१.	उन्होंने नगर	आकरान् ।	८.	रत्नों की खानें
ग्राम	२.	गाँव	खेट	९.	किसानों की बस्ती
व्रज	३.	गोशालायें	खर्वट	१०.	तराई के गाँव
उद्यान	४.	बगीचे	घोषांश्च	११.	अहीरों की बस्तियाँ
क्षेत्र	५.	खेत	ददहुः	१४.	जला डाले
आराम	६.	टहलने के स्थान	पत्तनानि	१३.	व्यापारों के केन्द्र (बड़े-बड़े नगर)
आश्रम	७.	आश्रम	च	१२.	और

श्लोकार्थ—उन्होंने नगर, गाँव, गोशालायें, बगीचे, खेत, टहलने के स्थान, आश्रम, रत्नों की खानें, किसानों की बस्ती, तराई के गाँव, अहीरों की बस्तियाँ और व्यापार के केन्द्र (बड़े-बड़े नगर) जला डाले ॥

पञ्चदशः श्लोकः

केचित्खनित्रैर्बिभिदुः सेतुप्राकारगोपुरान् ।
आजीव्यांश्चिच्छिदुर्वृक्षान् केचित्परशुपाणयः ।
प्रादहञ्शरणान्यन्ये प्रजानां ज्वलितोल्मुकैः ॥१५॥

पदच्छेद— केचित् खनित्रैः बिभिदुः सेतु-प्राकार गोपुरान् ।
आजीव्यान् चिच्छिदुः वृक्षान् केचित् परशु पाणयः ।
प्रादहन् शरणानि अन्ये प्रजानाम् ज्वलित उल्मुकैः ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१. कुछ ने	केचित्	६. कुछ ने
खनित्रैः	४. खन्तियों से	परशु	८. कुल्हाड़ी लेकर
बिभिदुः	५. तोड़ दिया	पाणयः ।	७. हाथ में
सेतु-प्राकार	२. पुल-परकोटे	प्रादहन्	१७. जला डाला
गोपुरान् ।	३. नगर के फाटकों को	शरणानि	१६. घरों को
आजीव्यान्	९. फले फूले हरे-भरे	अन्ये	१२. दूसरों ने
चिच्छिदुः	११. काट डाला (और)	प्रजानाम्	१५. प्रजाओं के
वृक्षान्	१०. वृक्षों को	ज्वलित	१३. जलती हुई
		उल्मुकैः ॥	१४. लकड़ियों से

श्लोकार्थ—कुछ ने पुल, परकोटे, नगर के फाटकों को खन्तियों से तोड़ दिया । कुछ ने हाथ में कुल्हाड़ी लेकर फले-फूले, हरे-भरे वृक्षों को काट डाला । और दूसरों ने जलती हुई लकड़ी से प्रजाओं के घरों को जला डाला ॥

षोडशः श्लोकः

एवं विप्रकृते लोके दैत्येन्द्रानुचरैर्मुहुः ।
दिवं देवाः परित्यज्य भुवि चेरुरलक्षिताः ॥१६॥

पदच्छेद— एवं विप्रकृते लोके दैत्येन्द्र अनुचरैः मुहुः ।
दिवम् देवाः परित्यज्य भुवि चेरुः अलक्षिताः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	दिवम्	८. स्वर्ग को
विप्रकृते	६. पीड़ित किये जाने पर	देवाः	७. देवता लोग
लोके	५. लोगों के	परित्यज्य	९. छोड़कर
दैत्येन्द्र	२. दैत्यराज के	भुवि	१०. पृथ्वी पर
अनुचरैः	३. सेवकों द्वारा	चेरुः	१२. विचरने लगे
मुहुः ।	४. बार-बार	अलक्षिताः ॥	११. छिपकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार दैत्यराज के सेवकों द्वारा बार-बार लोगों के पीड़ित किये जाने पर देवता लोग स्वर्ग को छोड़कर पृथ्वी पर छिपकर विचरने लगे ॥

सप्तदशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुर्भ्रातुः सम्परेतस्य दुःखितः ।
कृत्वा कटोदकादीनि भ्रातृपुत्रानसान्त्वयत् ॥१७॥

पदच्छेद— हिरण्यकशिपुः भ्रातुः सम्परेतस्य दुःखितः ।
कृत्वा कटोदक आदीनि भ्रातृ पुत्रान् असान्त्वयत् ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपुः	१.	हिरण्यकशिपु	कटोदक	५.	अन्त्येष्टि क्रिया
भ्रातुः	४.	भाई की	आदीनि	६.	आदि
सम्परेतस्य	३.	मरे हुये	भ्रातृ	८.	भाई के
दुःखितः	२.	दुःखी होकर	पुत्रान्	९.	पुत्रों को
कृत्वा ।	७.	करके	असान्त्वयत् ॥	१०.	सान्त्वना देने लगा

श्लोकार्थ—हिरण्यकशिपु दुःखी होकर मरे हुये भाई की अन्त्येष्टि क्रिया आदि करके भाई के पुत्रों को सान्त्वना देने लगा ॥

अष्टादशः श्लोकः

शकुनिं शम्बरं धृष्टं भूतसन्तापनं वृकम् ।
कालनाभं महानाभं हरिश्मश्रुमथोत्कचम् ॥१८॥

पदच्छेद— शकुनिम् शम्बरम् धृष्टम् भूतसन्तापनम् वृकम् ।
काल नाभम् महानाभम् हरिश्मश्रुम् अथ उत्कचम् ॥

शब्दार्थ—

शकुनिम्	१.	शुकुनि	कालनाभम्	६.	कालनाभ
शम्बरम्	२.	शम्बर	महानाभम्	७.	महानाभ
धृष्टम्	३.	धृष्ट	हरिश्मश्रुम्	८.	हरिश्मश्रु
भूतसन्तापनम्	४.	भूत सन्तापन	अथ	९.	और
वृकम् ।	५.	वृक	उत्कचम् ॥	१०.	उत्कच को (सान्त्वना देने लगा)

श्लोकार्थ—शकुनि, शम्वर, धृष्ट, भूतसन्तापन, वृक, कालनाभ, महानाभ, हरिश्मश्रु और उत्कच को सान्त्वना देने लगा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तन्मातरं रुषाभानुं दितिं च जननीं गिरा ।
श्लक्ष्णया देशकालज्ञ इदमाह जनेश्वर ॥१९॥

पदच्छेद— तत् मातरम् रुषाभानुम् दितिम् च जननीम् गिरा ।
श्लक्ष्णया देश कालज्ञः इदम् आह जनेश्वर ॥

शब्दार्थ—

तत्	२.	उनकी	श्लक्ष्णया	८.	मधुर
मातरम्	३.	माता	देश	१०.	देश और
रुषाभानुम्	४.	रुषाभानु को	कालज्ञः	११.	काल को जानने वाले हिरण्यकशिपु ने
दितिम्	७.	दिति को	इदम्	१२.	यह
च	५.	और	आह	१३.	कहा
जननीम्	६.	अपनी माता	जनेश्वर ॥	१.	हे महाराज !
गिरा ।	९.	वाणी से (समझाते हुये)			

श्लोकार्थ—हे महाराज ! उनकी माता रुषाभानु को और अपनी माता दिति को मधुर वाणी से (समझाते हुये) देश काल को जानने वाले हिरण्यकशिपु ने यह कहा ॥

विंशः श्लोकः

अम्बाम्ब हे वधूः पुत्रा वीरं मार्हथ शोचितुम् ।
रिपोरभिमुखे श्लाघ्यः शूराणां वध ईप्सितः ॥२०॥

पदच्छेद— अम्ब अम्ब हे वधूः पुत्राः वीरम् मा-अर्हथ शोचितुम् ।
रिपोः अभिमुखे श्लाघ्यः शूराणाम् वधः ईप्सितः ॥

शब्दार्थ—

अम्ब-अम्ब	१.	हे माताओ !	रिपोः	७.	शत्रु के
हे वधूः	२.	हे बहू !	अभिमुखे	८.	सम्मुख
पुत्राः	३.	हे पुत्रो !	श्लाघ्यः	११.	प्रशंसनीय (एवम्)
वीरम्	४.	वीर पुरुष के लिए	शूराणाम्	९.	वीरों का
मा-अर्हथ	६.	नहीं करना चाहिए	वधः	१०.	वध
शोचितुम् ।	५.	शोक	ईप्सितः ॥	१२.	वांछनीय है

श्लोकार्थ—हे माता ! हे बहू ! हे पुत्रो ! वीर पुरुष के लिए शोक नहीं करना चाहिए । शत्रु के सम्मुख वीरों का वध प्रशंसनीय और वांछनीय है ॥

एकविंशः श्लोकः

भूतानामिह संवासः प्रपायामिव सुव्रते ।
दैवेनैकत्र नीतानामुन्नीतानां स्वकर्मभिः ॥२१॥

पदच्छेद— भूतानाम् इह संवासः प्रपायाम् इव सुव्रते ।
दैवेन एकत्र नीतानाम् उन्नीतानाम् स्वकर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

भूतानाम्	५.	बहुत से लोग	**दैवेन**	७.	भाग्य वश
इह	३.	यहाँ	**एकत्र**	८.	इकट्ठे
संवासः	६.	इकट्ठे होते है और बिछुड़ते हैं	**नीतानाम्**	९.	हो जाते हैं (और)
प्रपायाम्	४.	प्याऊ पर	**उन्नीतानाम्**	१२.	अलग कर दिये जाते हैं फिर
इव	२.	जैसे	**स्व**	१०.	अपने
सुव्रते ।	१.	हे उत्तम व्रत वाली	**कर्मभिः ॥**	११.	कर्मों के द्वारा

श्लोकार्थ—हे उत्तम व्रत वाली ! जैसे यहाँ प्याऊ पर बहुत से लोग इकट्ठे होते हैं और बिछुड़ते हैं वैसे ही प्राणी भाग्य वश इकट्ठे हो जाते हैं और फिर अपने कर्मों के द्वारा अलग कर दिये जाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

नित्य आत्माऽव्ययः शुद्धः सर्वगः सर्ववित्परः ।
धत्तेऽसावात्मनो लिङ्गं मायया विसृजन्गुणान् ॥२२॥

पदच्छेद— नित्यः आत्मा अव्ययः शुद्धः सर्वगः सर्ववित् परः ।
धत्ते असौ आत्मनः लिङ्गम् मायया विसृजन् गुणान् ॥

शब्दार्थ—

नित्यः	३.	नित्य	**धत्ते**	१४.	स्वीकार करता है
आत्मा	२.	आत्मा	**असौ**	१.	वह
अव्ययः	४.	अविनाशी	**आत्मनः**	१२.	अपना
शुद्धः	५.	शुद्ध	**लिङ्गम्**	१३.	सूक्ष्म शरीर
सर्वगः	६.	सब जगह जाने वाला	**मायया**	९.	अविद्या से
सर्ववित्	७.	सब कुछ जानने वाला	**विसृजन्**	११.	सृष्टि करता हुआ
परः ।	८.	सब से परे है (वह)	**गुणान् ॥**	१०.	गुणों की

श्लोकार्थ—वह नित्य आत्मा अविनाशी, शुद्ध, सब जगह जाने वाला, सब कुछ जानने वाला और सबसे परे है। वह अविद्या से गुणों की सृष्टि करता हुआ अपना सूक्ष्म शरीर स्वीकार करता है।

त्रयोविंशः श्लोकः

यथाम्भसा प्रचलता तरवोऽपि चला इव ।
चक्षुषा भ्राम्यमाणेन दृश्यते चलतीव भूः ॥२३॥

पदच्छेद— यथाम्भसा प्रचलता तरवः अपि चलाः इव ।
चक्षुषा भ्राम्यमाणेन दृश्यते चलती इव भूः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जिस प्रकार	चक्षुषा	६. आखों के साथ
अम्भसा	३. जल के साथ	भ्राम्यमाणेन	८. घूमती हुई
प्रचलता	२. चलते हुए	दृश्यते	१३. दिखाई पड़ती है
तरवः	४. वृक्ष	चलती	११. चलती हुई
अपि	५. भी	इव	१२. सी
चलाः	६. चलते हुए	भूः ॥	१०. पृथ्वी भी
इव ।	७. से (जान पड़ते हैं)		

श्लोकार्थ—जिस प्रकार चलते हुए जल के साथ वृक्ष भी चलते हुए से जान पड़ते हैं। और घूमती हुई आखों के साथ पृथ्वी भी चलती हुई सी दिखाई पड़ती है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं गुणैर्भ्राम्यमाणे मनस्यविकलः पुमान् ।
याति तत्साम्यतां भद्रे ह्यलिङ्गो लिङ्गवानिव ॥२४॥

पदच्छेद— एवम् गुणैः भ्राम्यमाणे मनसि अविकलः पुमान् ।
याति तत् साम्यताम् भद्रे हि अलिङ्गः लिङ्गवान् इव ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२. इसी प्रकार	याति	१०. प्राप्त करता है (और)
गुणैः	३. गुणों से	तत्	८. उसकी
भ्राम्यमाणे	४. घूमते हुए	साम्यताम्	९. समानता को
मनसि	५. मन के (रहने पर)	भद्रे हि	१. हे कल्याणि
अविकलः	६. निश्चिन्त	अलिङ्गः	११. शरीर रहित (होने पर भी)
पुमान् ।	७. पुरुष आत्मा	लिङ्गवान्	१२. शरीर से युक्त के
		इव ॥	१३. समान (प्रतीत होता है।)

श्लोकार्थ—हे कल्याणि ! इसी प्रकार गुणों से घूमते हुये मन के रहने पर निश्चिन्त पुरुष आत्मा उसकी समानता को प्राप्त करता है और शरीर रहित होने पर भी शरीर से युक्त के समान प्रतीत होता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एष आत्मविपर्यासो ह्यलिङ्गे लिङ्गभावना ।
एष प्रियाप्रियैर्योगो वियोगः कर्मसंसृतिः ॥२५॥

पदच्छेद— एषः आत्मविपर्यासः हि अलिङ्गे लिङ्ग भावना ।
एषः प्रिय अप्रियैः योगः वियोगः कर्म संसृतिः ॥

शब्दार्थ—

एषः	४.	यह	प्रिय	७.	प्रिय और
आत्मविपर्यासः	५.	अज्ञान है	अप्रियैः	८.	अप्रिय वस्तुओं से
हि अलिङ्गे	१.	शरीर रहित होने पर भी	योगः	९.	मिलना
लिङ्ग	२.	आत्मा को शरीर सहित	वियोगः	१०.	बिछुड़ना होता है और
भावना	३.	समझना	कर्म	११.	कर्मों द्वारा
एषः ।	६.	यह	संसृतिः ॥	१२.	संसार में जाना पड़ता है

श्लोकार्थ—शरीर रहित होने पर भी (आत्मा को) शरीर सहित समझना यह अज्ञान है । यह प्रिय और अप्रिय वस्तुओं से मिलना और बिछुड़ना होता है और कर्मों के द्वारा संसार में जाना पड़ता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

सम्भवश्च विनाशश्च शोकश्च विविधः स्मृतः ।
अविवेकश्च चिन्ता च विवेकास्मृतिरेव च ॥२६॥

पदच्छेद— सम्भवः च विनाशः च शोकः च विविधः स्मृतः ।
अविवेकः च चिन्ता च विवेक अस्मृतिः एव च ॥

शब्दार्थ—

सम्भवः	१.	जन्म	अविवेकः	७.	अविवेक
च	२.	और	च	८.	और
विनाशः	३.	मृत्यु	चिन्ता	९.	चिन्ता
च	६.	और	च	१०.	तथा
शोकः	५.	शोक	विवेक	११.	विवेक की
च	१६.	है	अस्मृतिः	१२.	विस्मृति को
विविधः	४.	अनेक प्रकार का	एव	१३.	ही
स्मृतः ।	१५.	कहा गया	च ॥	१४.	अज्ञान

श्लोकार्थ— जन्म और मृत्यु, अनेक प्रकार का शोक, अविवेक और चिन्ता तथा विवेक की विस्मृति को ही अज्ञान कहा गया है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
यमस्य प्रेतबन्धूनां संवादं तं निबोधत ॥२७॥

पदच्छेदः -- अत्र-अपि उदाहरन्ति इमम् इतिहासं पुरातनम् ।
यमस्य प्रेत बन्धूनाम् संवादम् तम् निबोधत ॥

शब्दार्थ—

अत्र-अपि	१.	यहाँ भी (विद्वान् लोग)	यमस्य	६.	(जो) यमराज और
उदाहरन्ति	५.	कहते हैं	प्रेत	७.	प्रेत के
इमम्	२.	इस	बन्धूनाम्	८.	बन्धुओं का
इतिहासम्	४.	इतिहास को	संवादम्	९.	संवाद है
पुरातनम् ।	३.	प्राचीन	तम्	१०.	उसे
			निबोधत ॥	११.	सुनो

श्लोकार्थ—यहाँ भी विद्वान् लोग इस प्राचीन इतिहास को कहते हैं जो यमराज और प्रेत के बन्धुओं का संवाद है. उसे सुनो ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

उशीनरेष्वभूद्राजा सुयज्ञ इति विश्रुतः ।
सपत्नैर्निहतो युद्धे ज्ञातयस्तमुपासत ॥२८॥

पदच्छेदः— उशीनरेषु अभूत् राजा सुयज्ञः इति विश्रुतः ।
सपत्नैः निहतः युद्धे ज्ञातयः तम् उपासत ॥

शब्दार्थ—

उशीनरेषु	१.	उशीनर देश मे	सपत्नैः	८.	शत्रुओं द्वारा
अभूत्	६.	था (जो)	निहतः	९.	मार डाला गया था (उसके,
राजा	५.	एक राजा	युद्धे	७.	युद्ध में
सुयज्ञः	२.	सुयज्ञः	ज्ञातयः	१०.	भाई-बन्धु
इति	३.	इस नाम से	तम्	११.	उसे
विश्रुतः ।	४.	प्रसिद्ध	उपासत ॥	१२.	घेरकर बैठ गये

श्लोकार्थ—उशीनर देश में सुयज्ञ इस नाम से प्रसिद्ध एक राजा था । जो युद्ध में शत्रुओं के द्वारा मार डाला गया था । उसके भाई-बन्धु उसे घेरकर बैठ गये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विशीर्णरत्नकवचं विभ्रष्टाभरणस्रजम् ।
शरनिर्भिन्नहृदयं शयानमसृगाविलम् ॥२९॥

पदच्छेद— विशीर्ण रत्नकवचम् विभ्रष्ट आभरण स्रजम् ।
शर निर्भिन्न हृदयम् शयानम् असृग् आविलम् ॥

शब्दार्थ—

विशीर्ण	३.	छिन्न-भिन्न हो गया था	शर	८.	बाणों से
रत्न	१.	उसका रत्नों से जड़ा हुआ	निर्भिन्न	९.	फट गया था (वह)
कवचम्	२.	कवच	हृदयम्	७.	हृदय
विभ्रष्ट	६.	तहस-नहस (हो गईं थीं)	शयानम्	१२.	लेटा था
आभरण	४.	आभूषण और	असृग्	१०.	रक्त से
स्रजम् ।	५.	मालायें	आविलम् ॥	११.	लथ-पथ होकर

श्लोकार्थ—उसका रत्नों से जड़ा हुआ कवच छिन्न-भिन्न हो गया था। आभूषण और मालायें तहस-नहस हो गयी थीं। हृदय बाणों से फट गया था। वह रक्त से लथ-पथ होकर लेटा था ॥

त्रिंशः श्लोकः

प्रकीर्णकेशं ध्वस्ताक्षं रभसा दष्टदच्छदम् ।
रजःकुण्ठमुखाम्भोजं छिन्नायुधभुजं मृधे ॥३०॥

पदच्छेद— प्रकीर्ण केशम् ध्वस्त अक्षम् रभसा दष्टदच्छदम् ।
रजः कुण्ड मुख अम्भोजम् छिन्न आयुध भुजम् मृधे ॥

शब्दार्थ—

प्रकीर्ण	२.	बिखर गये थे	रजः	९.	धूल से
केशम्	१.	उसके बाल	कुण्ठ	१०.	ढक गया था
ध्वस्त	४.	धँस गयी थीं	मुख	८.	मुख
अक्षम्	३.	आँखें	अम्भोजम्	७.	कमल के समान
रभसा	५.	क्रोध के कारण	छिन्न	१४.	कट गया था
दष्टदच्छदम् ।	६.	दातों से, ओठ दबे हुये थे	आयुध	१२.	शस्त्र और
			भुजम्	१३.	भुजायें
			मृधे ॥	११.	युद्ध में

श्लोकार्थ—उसके बाल बिखर गये थे, आंखें धँस गई थीं, क्रोध के कारण दाँतों से ओठ दबे हुये थे, कमल के समान मुख धूल से ढक गया था और युद्ध में शस्त्र और भुजायें कट गयी थीं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

उशीनरेन्द्रं विधिना तथा कृतं पतिं महिष्यः प्रसमीक्ष्य दुःखिताः ।
हताः स्म नाथेति करैरुरो भृशं घ्नन्त्यो मुहुस्तत्पदयोरुपापतन् ॥३१॥

पदच्छेद— उशीनरेन्द्रम् विधिना तथा कृतम् पतिम् महिष्यः प्रसमीक्ष्य दुःखिताः ।
हताः स्म नाथेति करैः उरः भृशम् घ्नन्त्यः मुहुः तत् पदयोः उपापतन् ॥

शब्दार्थ—उशीनरेन्द्रम्	३.	उशीनर देश के राजा की	स्म	१०.	हम हैं (ऐसा कहकर)
विधिना	१.	दैव वश	नाथेति	९.	हा नाथ
तथा	४.	इस प्रकार	करैः	१२.	हाथों से
कृतम्	५.	की गई दशा को	उरः	१३.	छाती को
पतिम्	२.	अपने पति	भृशम्	१४.	जोर-जोर से
महिष्यः	७.	रानियाँ	घ्नन्त्यः	१६.	पीटती हुई
प्रसमीक्ष्य	६.	देखकर	मुहुः	१५.	बार-बार
दुःखिताः ।	८.	दुःखी हुई (और)	तत्-पदयोः	१७.	उनके पैरों के पास
हताः	११.	मारी गईं	उपापतन् ॥	१८.	गिर पड़ीं

श्लोकार्थ—दैव वश अपने पति उशीनर देश के राजा की इस प्रकार की गई दशा को देखकर रानियाँ दुःखी हुई और हा नाथ हम मारी गईं ऐसा कहकर हाथों से छाती को जोर-जोर से पीटती हुई उनके पैरों के पास गिर पड़ीं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

रुदत्य उच्चैर्दयिताङ्घ्रिपङ्कजं सिञ्चन्त्य अस्रैः कुचकुङ्कुमारुणैः ।
विस्रस्तकेशाभरणाः शुचं नृणां सृजन्त्य आक्रन्दनया विलेपिरे ॥३२॥

पदच्छेद— रुदत्यः उच्चैः दयित अङ्घ्रि पङ्कजं सिञ्चन्त्यः अस्रैः कुच कुङ्कुम अरुणैः ।
विस्रस्त केश आभरणाः शुचम् नृणाम् सृजन्त्यः आक्रन्दनया विलेपिरे ॥

शब्दार्थ—रुदत्यः	२.	रोती हुई	अरुणैः ।	५.	मिश्रित होने के कारण लाल-लाल
उच्चैः	१.	जोर-जोर से	विस्रस्त	११.	बिखरे हुए
दयित	७.	पति के	केश	१२.	बाल और
अङ्घ्रि	८.	चरण	आभरणाः	१३.	आभूषण वाली (वे रानियाँ)
पङ्कजम्	९.	कमल को	शुचम्	१५.	शोक को
सिञ्चन्त्यः	१०.	सींचती हुई	नृणाम्	१४.	मनुष्यों के
अस्रैः	६.	आंसुओं से	सृजन्त्यः	१६.	बढ़ाती हुई
कुच	३.	कुच	आक्रन्दनया	१७.	करुण क्रन्दन से
कुङ्कुम	४.	कुङ्कुम से	विलेपिरे ॥	१८.	विलाप करने लगीं

श्लोकार्थ—जोर-जोर से रोती हुई कुचकुङ्कुम से (मिश्रित होने के कारण) लाल-लाल आँसुओं से पति के चरण कमल को सींचती हुई, बिखरे हुए बाल और आभूषण वाली वे रानियाँ मनुष्यों के शोक को बढ़ाती हुई करुण क्रन्दन से विलाप करने लगीं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अहो विधात्राकरुणेन नः प्रभो भवान् प्रणीतो दृगगोचरां दशाम् ।
उशीनराणामसि वृत्तिदः पुरा कृतोऽधुना येन शुचां विवर्धनः ॥३३॥

पदच्छेद— अहो विधात्रा अकरुणेन नः प्रभो भवान् प्रणीतः दृग् अगोचराम् दशाम् ।
उशीनराणाम् असि वृत्तिदः पुरा कृतः अधुना येन शुचाम् विवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

अहो	३.	हाय			
विधात्रा	५.	विधाता के द्वारा	उशीनराणाम्	१२.	उशीनर देशवासियों को
अकरुणेन	४.	निर्दयी	असि	१०.	थे (वह आप)
नः	१.	हमारे	वृत्तिदः	१३.	जीविका देने वाले
प्रभो	२.	स्वामी	पुरा	११.	पहले
भवान्	६.	आप	कृतः	१९.	कर दिये गये हैं
प्रणीतः	१०.	प्राप्त करा दिये गये (जो अपने)	अधुना	१५.	इस समय
दृग्	७.	आँखों से	येन	१६.	उस विधाता के द्वारा
अगोचराम्	८.	बाहर की	शुचाम्	१७.	शोक को
दशाम् ।	९.	दशा को	विवर्धनः ॥	१८.	बढ़ाने वाले

श्लोकार्थ—हमारे स्वामी ! हाय ! निर्दयी विधाता के द्वारा आप आँखों से बाहर की दशा को प्राप्त करा दिये गये हैं। (जो आप) पहले उशीनर देशवासियों को जीविका देने वाले थे, वह आप इस समय उस विधाता के द्वारा शोक को बढ़ाने वाले कर दिये गये हैं।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

त्वया कृतज्ञेन वयं महीपते कथं विना स्याम सुहृत्तमेन ते ।
तत्रानुयानं तव वीर पादयोः शुश्रूषतीनां दिश यत्र यास्यसि ॥३४॥

पदच्छेद— त्वया कृतज्ञेन वयम् महीपते कथम् विना स्याम सुहृत्तमेन ते ।
तत्र अनुयानम् तव वीर पादयोः शुश्रूषतीनाम् दिशः यत्र यास्यसि ॥

शब्दार्थ—

त्वया	४.	आपके	**तत्र**	१४.	वहाँ
कृतज्ञेन	२.	उपकार करने वाले (तथा)	**अनुयानम्**	१५.	पीछे-पीछे चलने की आज्ञा दें
वयम्	७.	हम सब (रानियाँ)	**तव**	११.	आपके
महीपते	१.	हे राजन् !	**वीर**	१०.	हे वीर
कथम्	९.	कैसे	**पादयोः**	१२.	चरणों की
विना	५.	विना	**शुश्रूषतीनाम्**	१३.	सेवा करने वाली (हम लोगों को)
स्याम	९.	रह सकेंगी	**दिशः**	१७.	दिशा की ओर
सुहृत्तमेन	३.	अत्यन्त हितैषी	**यत्र**	१६.	जिस
ते ।	६.	आपकी	**यास्यसि ॥**	१८.	जा रहे हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उपकार को जानने वाले तथा अत्यन्त हितैषी आपके विना आपको हम सब रानियाँ कैसे रह सकेंगी ? हे वीर ! आपके चरणों की सेवा करने वाली (हम लोगों को) वहाँ पीछे-पीछे चलने की आज्ञा दें, जिस दिशा की ओर आप जा रहे हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं विलपतीनां वै परिगृह्य मृतं पतिम् ।
अनिच्छतीनां निर्हारमर्कोऽस्तं संन्यवर्तत ॥३५॥

पदच्छेद— एवम् विलपतीनाम् वै परिगृह्य मृतम् पतिम् ।
अनिच्छतीनाम् निर्हारम् अर्कः अस्तम् संन्यवर्तत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	**अनिच्छतीनाम्**	७.	न चाहती हुई उन्हें
विलपतीनाम्	५.	विलाप करती हुई (और)	**निर्हारम्**	६.	अन्त्येष्टि क्रिया को
परिगृह्य	४.	पकड़ कर	**अर्कः**	८.	सूर्य
मृतम्	२.	मरे हुये	**अस्तम्**	६.	अस्त
पतिम् ।	३.	पति को	**संन्यवर्तत ॥**	१०.	हो गया

श्लोकार्थ—इस प्रकार मरे हुये पति को पकड़ कर विलाप करती हुई और अन्त्येष्टि क्रिया को न चाहती हुई उन्हें सूर्य अस्त हो गया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

तत्र ह प्रेतबन्धूनामाश्रुत्य परिदेवितम् ।
आह तान् बालको भूत्वा यमः स्वयमुपागतः ॥३६॥

पदच्छेद— तत्र ह प्रेत बन्धूनाम् आश्रुत्य परिदेवितम् ।
आह तान् बालकः भूत्वा यमः स्वयम् उपागतः ॥

शब्दार्थ—

तत्र ह	१.	वहाँ	**तान्**	११.	उनसे
प्रेत	२.	मृतक के	**बालकः**	८.	बालक
बन्धूनाम्	३.	बन्धुओं का	**भूत्वा**	६.	होकर
आश्रुत्य	५.	सुनकर	**यमः**	७.	यमराज
परिदेवितम् ।	४.	विलाप	**स्वयम्**	६.	स्वयम्
आह ।	१२.	कहने लगे	**उपागतः ॥**	१०.	आये (और)

श्लोकार्थ—वहाँ मृतक के बन्धुओं का विलाप सुनकर स्वयम् यमराज बालक होकर आये और उनसे कहने लगे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

यम उवाच—अहो अमीषां वयसाधिकानां विपश्यतां लोकविधिं विमोहः।
यत्रागतस्तत्र गतं मनुष्यं स्वयं सधर्मा अपि शोचन्त्यपार्थम् ॥३७॥

पदच्छेद — अहो अमीषाम् वयसा अधिकानाम् विपश्यताम् लोक विधिम् विमोहः।
यत्र आगतः तत्र गतम् मनुष्यम् सधर्माः अपि शोचन्ति अपार्थम् ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है कि	आगतः	११.	आया
अमीषाम्	४.	ये लोग	तत्र	१२.	वहाँ
वयसा	३.	अवस्था वाले	गतम्	१३.	चला गया
अधिकानाम्	२.	अधिक	मनुष्यम्	६.	यह मनुष्य
विपश्यताम्	७.	देखते हुए भी	स्वयम	१४.	स्वयम् (ये लोग।
लोक	५.	संसार के	सधर्माः	१५.	एक जैसे (मरण) धर्मवाले होकर
विधिम्	६.	व्यवहार को	अपि	१६.	भी
विमोहः।	८.	मोह ग्रस्त हो रहे हैं	शोचन्ति	१८.	शोक कर रहे हैं
यत्र	१०.	जहाँ से	अपार्थम् ॥	१७.	व्यर्थ ही

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि अधिक अवस्था वाले ये लोग संसार के व्यवहार को देखते हुए भी मोह-ग्रस्त हो रहे हैं। वह मनुष्य जहाँ से आया था वहाँ चला गया। स्वयम् ये लोग एक जैसे मरण धर्म वाले होकर भी शोक कर रहे हैं ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

अहो वयं धन्यतमा यदत्र त्यक्ताः पितृभ्यां न विचिन्तयामः।
अभक्ष्यमाणा अबला वृकादिभिः स रक्षिता रक्षति यो हि गर्भे ॥३८॥

पदच्छेद— अहो वयम् धन्यतमाः यद्-अत्र त्यक्ताः पितृभ्याम् न विचिन्तयामः।
अभक्ष्यमाणाः अबलाः वृक आदिभिः स रक्षिता रक्षति यः हि गर्भे ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	अहा	अभक्ष्यमाणाः	१२.	नहीं खाये जा रहे हैं
वयम्	२.	हम	अबलाः	९.	हे अबलाओ
धन्यतमाः	३.	परम धन्य हैं	वृक	१०.	भेड़िया
यद्-अत्र	४.	जो कि यहाँ	आदिभिः	११.	आदि के द्वारा (हम)
त्यक्ताः	६.	त्यागे जाने पर	सः	१३.	वह भगवान् ही
पितृभ्याम्	५.	माता-पिता के द्वारा	रक्षिता	१४.	रक्षा कर रहे हैं
न	७.	नहीं	रक्षति	२६.	रक्षा की थी
विचिन्तयामः।	८.	शोक करते हैं	यः हि	१५.	जिन्हों ने
			गर्भे	१७.	गर्भ में

श्लोकार्थ—अहा ! हम परम धन्य हैं जो कि यहाँ माता-पिता के द्वारा त्यागे जाने पर भी शोक नहीं करते हैं। हे अबलाओ ! भेड़िया आदि के द्वारा हम नहीं खाये खा रहे हैं। वह भगवान् ही रक्षा कर रहे हैं जिन्होंने गर्भ में रक्षा की थी ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

य इच्छयेशः सृजतीदमव्ययो य एव रक्षत्यवलुम्पते च यः ।
तस्यावलाः क्रीडनमाहुरीशितुश्चराचरं निग्रहसङ्ग्रहे प्रभुः ॥३९॥

पदच्छेद— यः इच्छया ईशः सृजति इदम् अव्ययः य एव रक्षति अवलुम्पते च यः ।
तस्य अबलाः क्रीडनम् आहुः ईशितुः चराचरम् निग्रह सङ्ग्रहे प्रभुः ॥

शब्दार्थ—यः	१.	जो	च यः ।	९.	और जो
इच्छया	४.	अपनी इच्छा से	तस्य	१२.	उस
ईशः	३.	प्रभु	अबलाः	११.	हे अबलाओ !
सृजति	६.	सृष्टि करते हैं (और)	क्रीडनम्	१५.	खिलौना
इदम्	५.	इस जगत् की	आहुः	१६.	कहा है (वे भगवान्)
अव्ययः	२.	अविनाशी	ईशितुः	१३.	प्रभु का
यः एव	७.	जो इसकी	चराचरम्	१४.	चराचर जगत्
रक्षति	८.	रक्षा करते हैं	निग्रह	१७.	दण्ड या
अवलुम्पते	१०.	संहार करते हैं	सङ्ग्रहे प्रभुः ॥	१८.	पुरस्कार देने में समर्थ हैं

श्लोकार्थ—जो अविनाशी प्रभु अपनी इच्छा से इस जगत् की सृष्टि करते हैं और जो इसकी रक्षा करते हैं और जो संहार करते हैं, हे अबलाओ ! उस प्रभु का चराचर जगत् खिलौना कहा है । वे भगवान् दण्ड या पुरस्कार देने में समर्थ हैं ।

चत्वारिंशः श्लोकः

पथि च्युतं तिष्ठति दिष्टरक्षितं गृहे स्थितं तद्विहतं विनश्यति ।
जीवत्यनाथोऽपि तदीक्षितो वने गृहेऽपि गुप्तोऽस्य हतो न जीवति ॥४०॥

पदच्छेद— पथि च्युतं तिष्ठति दिष्ट रक्षितम् गृहे स्थितम् तत् विहतम् विनश्यति ।
जीवति अनाथःअपि तद् ईक्षितः वने गृहे अपि गुप्तः अस्य हतः न जीवति ॥

शब्दार्थ—पथि	१.	मार्ग में	अनाथःअपि	१०.	अनाथ होने पर भी
च्युतं	२.	गिरा हुआ मनुष्य	तद्	११.	उस भाग्य के द्वारा
तिष्ठति	४.	पड़ा रहता है	ईक्षितः	१२.	देखा जाने पर
दिष्ट रक्षितम्	३.	भाग्य से रक्षित होने पर	वने	९.	वन में
गृहे स्थितम्	५.	घर में स्थित	गृहे	१४.	घर में
तत्	६.	उस भाग्य के द्वारा	अपि	१६.	भी
विहतम्	७.	मारा गया	गुप्तः	१५.	रक्षित होने पर
विनश्यति ।	८.	नष्ट हो जाता है	अस्य हतः	१७.	उस भाग्य का मारा हुआ
जीवति	१३.	जीवित रहता है	न जीवति ॥	१८.	नहीं जीता है

श्लोकार्थ—मार्ग में गिरा हुआ मनुष्य भाग्य से रक्षित होने पर पड़ा रहता है । तथा घर में स्थित उस भाग्य के द्वारा मारा गया नष्ट हो जाता है । वन में अनाथ होने पर भी उस भाग्य के द्वारा देखा जाने पर जीवित रहता है । घर में रक्षित होने पर भी उस भाग्य का मारा हुआ नहीं जीता है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

भूतानि तैस्तैर्निजयोनिकर्मभिर्भवन्ति काले न भवन्ति सर्वशः ।
न तत्र ह्यात्मा प्रकृतावपि स्थितस्तस्या गुणैरन्यतमो निबध्यते ॥४१॥

पदच्छेद — भूतानि तैः तैः निजयोनि कर्मभिः भवन्ति काले न भवन्ति सर्वशः ।
न तत्र ह आत्मा प्रकृतौ अपि स्थितः तस्याः गुणैः अन्यतमः निबध्यते ॥

शब्दार्थ—भूतानि	१.	प्राणी	तत्र	९.	वहाँ
तैः तैः	२.	उन-उन	ह आत्मा	१०.	आत्मा
निजयोनि	३.	अपने जन्म के	प्रकृतौ	११.	शरीर में
कर्मभिः	४.	कर्मों से	अपि	१३.	भी
भवन्ति	६.	होते हैं (और)	स्थितः	१२.	स्थित होने पर
काले	५.	समय पर	तस्याः	१४.	उस प्रकृति के
न भवन्ति	८.	नहीं भी होते हैं	गुणैः	१५.	गुणों से
सर्वशः ।	७.	सब प्रकार से	अन्यतमः	१६.	अलग होकर
न	१७.	नहीं	निबध्यते ॥	१८.	बँधता है

श्लोकार्थ—प्राणी उन-उन अपने जन्म के कर्मों से समय पर होते हैं और सब प्रकार से नहीं भी होते हैं। वहाँ आत्मा शरीर में स्थित होने पर भी उस प्रकृति के गुणों से अलग होकर नहीं बँधता है ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

इदं शरीरं पुरुषस्य मोहजं यथा पृथग्भौतिकमीयते गृहम् ।
यथौदकैः पार्थिवतैजसैर्जनः कालेन जातो विकृतो विनश्यति ॥४२॥

पदच्छेद— इदम् शरीरम् पुरुषस्य मोहजम् यथा पृथक् भौतिकम् ईयते गृहम् ।
यथा औदकैः पार्थिव तैजसैः जनः कालेन जातः विकृतः विनश्यति ॥

शब्दार्थ—इदम्	२.	यह	यथा	१०.	जिस प्रकार
शरीरम्	३.	शरीर	औदकैः	११.	जल से
पुरुषस्य	१.	पुरुष का	पार्थिव	१२.	मिट्टी से (अथवा)
मोहजम्	४.	मोह से उत्पन्न होता है	तैजसैः	१३.	अग्नि से बना पदार्थ
यथा	५.	जिस प्रकार	जनः	१८.	मनुष्य बनता-बिगड़ता और नष्ट होता है
पृथक्	८.	अलग	कालेन	१४.	समय से
भौतिकम्	६.	मिट्टी का बना	जातः	१५.	उत्पन्न होता है और)
ईयते	९.	समझा जाता है	विकृतः	१६.	विकार को प्राप्त होता है (तथा)
गृहम् ।	७.	घर (मिट्टी से)	विनश्यति ॥	१७.	फिर नष्ट हो जाता है (वैसे ही)

श्लोकार्थ—पुरुष का यह शरीर मोह से उत्पन्न होता है। जिस प्रकार मिट्टी का बना घर मिट्टी से अलग समझा जाता है उसी प्रकार जल से, मिट्टी से अथवा अग्नि ने बना पदार्थ समय से उत्पन्न होता है और विकार को प्राप्त होता है तथा फिर नष्ट हो जाता है। वैसे ही मनुष्य बनता बिगड़ता और नष्ट हो जाता है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

यथानलो दारुषु भिन्न ईयते यथानिलो देहगतः पृथक् स्थितः।
यथ नभः सर्वगतं न सज्जते तथा पुमान् सर्वगुणाश्रयः परः ॥४३॥

पदच्छेद-- यथा अनलः दारुषु भिन्नः ईयते यथा अनिलः देहगतः पृथक् स्थितः।
यथा नभः सर्व गतम् न सज्जते तथा पुमान् सर्व-गुण आश्रयः परः ॥

शब्दार्थ—

यथा-अनलः	१.	जिस प्रकार-अग्नि	यथा-नभः	१०.	जैसे आकाश
दारुषु	२.	काष्ठ में (होने पर भी)	सर्व	११.	सब
भिन्न	३.	अलग	गतम् न	१२.	जगह होने पर भी नहीं
ईयते	४.	समझा जाता है	सज्जते	१३.	लिप्त होता है
यथा-देह	५.	जैसे शरीर में	तथा	१४.	वैसे ही
अनिलः	६.	वायु	पुमान्	१५.	आत्मा
गतः	७.	व्याप्त होने पर भी	सर्वगुण	१६.	सभी गुणों का
पृथक्	८.	अलग	आश्रयः	१७.	आश्रय होने पर भी
स्थितः।	९.	माना जाता है (और)	परः ॥	१८.	उन गुणों से अलग समझा जाता है।

श्लोकार्थ—जिस प्रकार अग्नि काष्ठ में होने पर भी अलग समझा जाता है। जैसे शरीर में वायु व्याप्त होने पर भी अलग माना जाता है और जैसे आकाश सब जगह होने पर भी लिप्त नहीं होता है वैसे ही आत्मा सभी गुणों का आश्रय होने पर भी उन गुणों से अलग समझा जाता है।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

सुयज्ञो नन्वयं शेते मूढा यमनुशोचथ।
यः श्रोता योऽनुवक्तेह स न दृश्येत कर्हिचित् ॥४४॥

पदच्छेद— सुयज्ञः ननु अयम् शेते मूढ़ाः यम् अनुशोचथ।
यः श्रोता यः अनुवक्ता इह सः न दृश्येत कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

सुयज्ञः	४.	सुयज्ञ का शरीर	यः	८.	जो
ननु	२.	निश्चित रूप से	श्रोता	९.	सुनने वाला है
अयम्	३.	यह	यः	१०.	जो
शेते	५.	सो रहा है	अनुवक्ता	११.	बोलने वाला है
मूढाः	१.	हे मूर्खों	इह	१३.	यहाँ
यम्	६.	जिसके लिए (तुम लोग)	सः न	१२.	वह नहीं
अनुशोचथ।	७.	शोक कर रहे हो	दृश्येत	१४.	दिखाई पड़ता था
			कर्हिचित् ॥	१३.	कभी

श्लोकार्थ—हे मूर्खो ! निश्चित रूप से यह सुयज्ञ का शरीर सो रहा है जिसके लिये तुम लोग शोककर रहे हो। जो सुनने वाला और जो बोलने वाला है वह यहाँ कभी नहीं दिखाई पड़ेगा ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

न श्रोता नानुवक्तायं मुख्योऽप्यत्र महानसुः।
यस्त्विहेन्द्रियवानात्मा स चान्यः प्राणदेहयोः ॥४५॥

पदच्छेद— न श्रोता न अनुवक्ता अयम् मुख्यः अपि अत्र महानसुः।
यः तु इह इन्द्रियवान् आत्मा सः च अन्यः प्राण देहयोः ॥

शब्दार्थ -

न	५.	नहीं	यः तु	८.	जो
श्रोता	६.	सुनने वाला	इह	९.	यहाँ
न अनुवक्ता	७.	न बोलने वाला है	इन्द्रियवान्	१०.	इन्द्रिय युक्त
अयम्	२.	यह	आत्मा	११.	आत्मा है
मुख्यः अपि	३.	प्रधान भी	सः च	१२.	वह
अत्र	१.	यहाँ	अन्यः	१४.	अलग है
महानसुः।	४.	महाप्राण	प्राणदेहयोः ॥	१३.	प्राण और देह से

श्लोकार्थ—यहाँ यह प्रधान महाप्राण नहीं सुनने वाला न बोलने वाला है। जो यहाँ इन्द्रिययुक्त आत्मा है, वह प्राण और देह से अलग है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

भूतेन्द्रियमनोलिङ्गान् देहानुच्चावचान् विभुः।
भजत्युत्सृजति ह्यन्यस्तच्चापि स्वेन तेजसा ॥४६॥

पदच्छेद— भूत इन्द्रिय मनः लिङ्गान् देहान् उच्चावचान् विभुः।
भजति उत्सृजति हि अन्यः तत् च अपि स्वेन तेजसा ॥

शब्दार्थ—

भूत	३.	पञ्चभूत	भजति	९.	ग्रहण करते हैं
इन्द्रिय	४.	इन्द्रिय (और)	उत्सृजति	१४.	छोड़ देते हैं
मनः	५.	मन से	हि अन्यः	२.	आत्मा
लिङ्गान्	६.	युक्त	तत्	११.	उसे
देहान्	८.	शरीर को	च अपि	१०.	और भी
उच्चावचान्	७.	ऊँचे-नीचे	स्वेन	१२.	अपने
विभुः।	१.	व्यापक	तेजसा ॥	१३.	तेज से

श्लोकार्थ—व्यापक आत्मा पञ्चभूत, इन्द्रिय और मन से युक्त ऊँचे-नीचे शरीर को ग्रहण करते हैं और उसे भी अपने तेज से छोड़ देते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

यावल्लिङ्गान्वितो ह्यात्मा तावत् कर्मनिबन्धनम् ।
ततो विपर्ययः क्लेशो मायायोगोऽनुवर्तते ॥४७॥

पदच्छेद— यावत् लिङ्ग अन्वितः हि आत्मा तावत् कर्म निबन्धनम् ।
ततः विपर्ययः क्लेशः माया योगः अनुवर्तते ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१.	जब-तक	ततः	८.	इसलिए
लिङ्ग	२.	सूक्ष्म शरीर से	विपर्ययः	११.	मोह (और)
अन्वितः	३.	युक्त	क्लेशः	१२.	क्लेश
हि आत्मा	४.	आत्मा है	माया	९.	माया से
तावत्	५.	तभी तक	योगः	१०.	होने वाले
कर्म	६.	कर्म का	अनुवर्तते ॥	१३.	पीछे-पीछे चलते हैं ।
निबन्धनम् ।	७.	बन्धन है			

श्लोकार्थ—जब तक सूक्ष्म शरीर से युक्त आत्मा है । तभी-तक कर्म का बन्धन है । इसलिए माया से होने वाले मोह और क्लेश पीछे-पीछे चलते हैं ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

वितथाभिनिवेशोऽयं यद् गुणेष्वर्थदृग्वचः ।
यथा मनोरथः स्वप्नः सर्वमैन्द्रियकं मृषा ॥४८॥

पदच्छेद— वितथ अभिनिवेशः अयम् यद् गुणेषु अर्थ दृग्वचः ।
यथा मनोरथः स्वप्नः सर्वम् ऐन्द्रियकम् मृषा ॥

शब्दार्थं—

वितथ	५.	व्यर्थ का ही	यथा	७.	जैसे
अभिनिवेशः	६.	दुराग्रह है	मनोरथः	८.	कामना से कल्पित वस्तु और वैसे ही
अयम्	४.	यह	स्वप्नः	९.	स्वप्न मिथ्या है ।
यद् गुणेषु	१.	जो गुणों को	सर्वम्	११.	सब ही वस्तुयें
अर्थ	२.	वास्तविक समझना	ऐन्द्रियकम्	१०.	इन्द्रियों से ग्रहण की जानेवाली
दृग्वचः।	३.	देखना, और कहना है	मृषा ॥	१२.	मिथ्या हैं ।

श्लोकार्थ—गुणों को वास्तविक समझना देखना, और कहना यह व्यर्थ का दुराग्रह है । जैसे कामना से कल्पित वस्तु और स्वप्न मिथ्या है वैसे ही इन्द्रियों से ग्रहण की जाने वाली सब ही वस्तुयें मिथ्या हैं ॥

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

अथ नित्यमनित्यं वा नेह शोचन्ति तद्विदः ।
नान्यथा शक्यते कर्तुं स्वभावः शोचतामिति ।।४९।।

पदच्छेद— अथ नित्यम् अनित्यम् वा-न इह शोचन्ति तद् विदः ।
न अन्यथा शक्यते कर्तुम् स्वभावः शोचताम् इति ।।

शब्दार्थ—

अथ	१. इसलिए	**न**	१४. नहीं
नित्यम्	२. आत्मा	**अन्यथा**	१३. अन्यथा
अनित्यम्	४. शरीर के लिए	**शक्यते**	१६. सकता है
वा-न	३. अथवा नहीं	**कर्तुम्**	१५. किया जा
इह	७. यहाँ	**स्वभावः**	१२. स्वभाव
शोचन्ति	८. शोक करते हैं	**शोचताम्**	११. शोक करने वालों का
तत्	५. उसके	**इति ।।**	१०. किन्तु
विदः ।	६. जानने वाले		

श्लोकार्थ—इसलिए आत्मा अथवा शरीर के लिए उसके जानने वाले यहाँ शोक नहीं करते हैं । किन्तु शोक करने वालों का स्वभाव अन्यथा नहीं किया जा सकता ।।

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

लुब्धको विपिने कश्चित्पक्षिणां निर्मितोऽन्तकः ।
वितत्य जालं विदधे तत्र तत्र प्रलोभयन् ।।५०।।

पदच्छेद— लुब्धकः विपिने कश्चित् पक्षिणाम् निर्मितः अन्तकः ।
वितत्य जालम् विदधे तत्र-तत्र प्रलोभयन् ।।

शब्दार्थ—

लुब्धकः	३. बहेलिया	**वितत्य**	८. फैलाकर (पक्षियों को)
विपिने	१. वन में	**जालम्**	७. जाल को
कश्चित्	२. कोई	**विदधे**	११. करता था
पक्षिणाम्	५. पक्षियों के लिए	**तत्र-तत्र**	९. जहाँ-तहाँ
निर्मितः	६. बनाया गया था (जो)	**प्रलोभयन्**	१०. लुभाकर फँसाया
अन्तकः ।	४. यमराज के रूप में		

श्लोकार्थ—वन में कोई बहेलिया यमराज के रूप में पक्षियों के लिए बनाया गया था । जो जहाँ-तहाँ जाल को फैलाकर पक्षियों को लुभाकर फँसाया करता था ।।

एकपञ्चाशत्तमः श्लोकः

कुलिङ्गमिथुनं तत्र विचरत्समदृश्यत ।
तयोः कुलिङ्गी सहसा लुब्धकेन प्रलोभिता ॥५१॥

पदच्छेद— कुलिङ्ग मिथुनम् तत्र विचरत् समदृश्यत ।
तयोः कुलिङ्गी सहसा लुब्धकेन प्रलोभिता ॥

शब्दार्थ—

कुलिङ्ग	१.	कुलिङ्ग पक्षी का	तयोः	६.	उन दोनों में से
मिथुनम्	२.	जोड़ा	कुलिङ्गी	७.	मादा पक्षी
तत्र	३.	वहाँ	सहसा	८.	एकाएक
विचरत्	४.	विचरण करता हुआ	लुब्धकेन	९.	बहेलिये के द्वारा
समदृश्यत ।	५.	दिखाई पड़ा	प्रलोभिता ॥	१०.	लुभाकर फँसा लिया गया ।

श्लोकार्थ—एक कुलिङ्ग पक्षी का जोड़ा वहाँ विचरण करता हुआ दिखाई पड़ा । उन दोनों में से मादा पक्षी को एकाएक बहेलिये ने लुभाकर फँसा लिया ॥

द्विपञ्चाशत्तमः श्लोकः

सासज्जत शिचस्तन्त्यां महिषी कालयन्त्रिता ।
कुलिङ्गस्तां तथाऽऽपन्नां निरीक्ष्य भृशदुःखितः ।
स्नेहादकल्पः कृपणः कृपणां पर्यदेवयत् ॥५२॥

पदच्छेद— सा असज्जत शिचः तन्त्याम् महिषी काल यन्त्रिता ।
कुलिङ्गःताम् तथा आपन्नाम् निरीक्ष्य भृश दुःखितः ।
स्नेहात् अकल्पः कृपणः कृपणाम् पर्यदेवयत् ॥

शब्दार्थ—

सा	१.	वह	**आपन्नाम्**	१०.	विपत्तिग्रस्त
असज्जत	७.	फँस गई	**निरीक्ष्य**	११.	देखकर
शिचः	५.	जाल के	**भृश**	१२.	अत्यन्त
तन्त्याम्	६.	फन्दे में	**दुःखितः ।**	१३.	दुःखी हुआ
महिषी	२.	मादा	**स्नेहात्**	१४.	स्नेह से
काल	३.	काल के	**अकल्पः**	१५.	व्याकुल
यन्त्रिता ।	४.	वश होकर	**कृपणः**	१६.	दीन (कुलिङ्ग)
कुलिङ्गस्ताम्	८.	कुलिङ्ग पक्षी उसे	**कृपणाम्**	१७.	दुःखिया मादा के लिए
तथा	९.	उस प्रकार	**पर्यदेवयत् ॥**	१८.	विलाप करने लगा ।

श्लोकार्थ—वह मादा काल के वश होकर जाल के फन्दे में फँस गई । कुलिङ्ग पक्षी उसे उस प्रकार विपत्तिग्रस्त देखकर अत्यन्त दुःखी हुआ । स्नेह से व्याकुल और दीन कुलिंग दुःखिया मादा के लिए विलाप करने लगा ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

अहो अकरुणो देवः स्त्रियाऽऽकरुणया विभुः ।
कृपणं मानुशोचन्त्या दीनया किं करिष्यति ॥५३॥

पदच्छेद— अहो अकरुणः देवः स्त्रिया आकरुणया विभुः ।
कृपणम् मा अनुशोचन्त्या दीनया किम् करिष्यति ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है कि	**कृपणम्**	५.	दीन के लिए
अकरुणः	३.	निर्दयी	**मा**	६.	मुझ
देवः	४.	विधाता	**अनुशोचन्त्या**	७.	शोक करती हुई
स्त्रिया	१०.	स्त्री को (मारकर)	**दीनया**	९.	वेचारी
आकरुणया	८.	करुणा से भरी	**किम्**	११.	क्या
विभुः ।	२.	प्रभु	**करिष्यति ॥**	१२.	करेगा

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि प्रभु निर्दयी विधाता मुझ दीन के लिये शोक करती हुई करुणा से भरी वेचारी स्त्री को मार कर क्या करेगा ॥

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

कामं नयतु मां देवः किमर्धेनात्मनो हि मे ।
दीनेन जीवता दुःखमनेन विधुरायुषा ॥५४॥

पदच्छेद— कामम् नयतु माम् देवः किम् अर्धेन आत्मनः हि मे ।
दीनेन जीवता दुःखम् अनेन विधुर आयुषा ॥

शब्दार्थ—

कामम्	३.	अपनी इच्छानुसार	**हि मे ।**	५.	मुझे
नयतु	४.	ले जाये	**दीनेन**	९.	दीन होकर
माम्	२.	मुझे	**जीवता**	१०.	जीते हुए
देवः	१.	विधाता	**दुःखम्**	१४.	दुःख (ही तो भोगना है)
किम्	८.	क्या लाभ है	**अनेन**	११.	इस
अर्धेन	६.	आधे	**विधुर**	१२.	विधुर
आत्मा	७.	शरीर से	**आयुषा ॥**	१३.	आयु से

श्लोकार्थ—विधाता मुझे अपनी इच्छानुसार ले जाये । मुझे आधे शरीर से क्या लाभ है ? दीन होकर जीते हुए इस विधुर आयु से दुःख ही तो भोगना है ॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

कथं त्वजातपक्षांस्तान् मातृहीनान् बिभर्म्यहम् ।
मन्दभाग्याः प्रतीक्षन्ते नीडे मे मातरं प्रजाः ।।५५।।

पदच्छेद— कथम् तु अजात पक्षान् तान् मातृहीनान् बिभर्मि अहम् ।
मन्द-भाग्याः प्रतीक्षन्ते नीडे मे मातरम् प्रजाः ।।

शब्दार्थ—

कथम् तु	५.	कैसे	मन्दभाग्याः	८.	अभागे
अजात-पक्षान्	१.	न उगे हुए पंखवाले	प्रतीक्षन्ते	१२.	प्रतीक्षा कर रहे होंगे
तान्	२.	उन	नीडे	१०.	घोंसले में अपनी
मातृहीनान्	३.	माता से रहित (बच्चों का)	मे	७.	मेरे
बिभर्मि	६.	पालन करूँगा	मातरम्	११.	माता की
अहम् ।	४.	मैं	प्रजाः ।।	९.	बच्चे

श्लोकार्थ—न उगे हुए पंखवाले उन माता से रहित बच्चों का मैं कैसे पालन करूँगा । मेरे अभागे बच्चे घोंसले में अपनी माता की प्रतीक्षा कर रहे होंगे ।।

षट्पञ्चाशत्तमः श्लोकः

एवं कुलिङ्गं विलपन्तमारात् प्रियावियोगातुरमश्रुकण्ठम् ।
स एव तं शाकुनिकः शरेण विव्याध कालप्रहितो विलीनः ।।५६।।

पदच्छेद— एवम् कुलिङ्गं विलपन्तम् आरात् प्रिया वियोग आतुरम् अश्रु कण्ठम् ।
स एव तम् शाकुनिकः शरेण विव्याध काल प्रहितः विलीनः ।।

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	स एव	१३.	उसी
कुलिङ्गम्	१०.	कुलिङ्ग पक्षी को	तम्	९.	उस
विलपन्तम्	३.	विलाप करते हुए	शाकुनिकः	१४.	बहेलिये ने
आरात्	२.	समीप में ही	शरेण	१६.	वाण से
प्रिया	४.	प्रिया के	विव्याध	१७.	बेध दिया
वियोग	५.	वियोग से	काल	११.	काल के द्वारा
आतुरम्	६.	आतुर	प्रहितः	१२.	भेजे गये
अश्रु	७.	आँसुओं से	विलीनः ।।	१५.	छिप कर
कण्ठम् ।	८.	अवरुद्ध कण्ठ वाले			

श्लोकार्थ—इस प्रकार समीप में ही विलाप करते हुए, प्रिया के वियोग से आतुर, आँसुओं से अवरुद्ध कण्ठ वाले उस कुलिङ्ग पक्षी को काल के द्वारा भेजे गये, उसी बहेलिये ने छिपकर वाण से बेध दिया ।।

सप्तपञ्चाशत्तमः श्लोकः

एवं यूयमपश्यन्त्य आत्मापायमबुद्धयः ।
नैनं प्राप्स्यथ शोचन्त्यः पतिं वर्षशतैरपि ॥५७॥

पदच्छेद— एवम् यूयम् अपश्यन्त्यः आत्म अपायम् अबुद्धयः ।
न एवम् प्राप्स्यथ शोचन्त्यः पतिम् वर्ष शतैः अपि ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	**न एवम्**	११.	नहीं इसे
यूयम्	३.	तुम लोग	**प्राप्स्यथ**	१२.	पाओगी
अपश्यन्त्यः	६.	न देखती हुई	**शोचन्त्यः**	८.	शोक करती हुयी
आत्म	४.	अपने	**पतिम्**	७.	पति के लिए
अपायम्	५.	विनाश को	**वर्ष**	१०.	वर्षों में
अबुद्धयः ।	१.	हे मूर्खाओ	**शतैः अपि ॥**	९.	सौ भी

श्लोकार्थ—हे मूर्खाओ ! इस प्रकार तुम लोग अपने विनाश को न देखती हुई और पति के लिए शोक करती हुई सौ वर्षों में भी इसे नहीं पाओगी ॥

अष्टपञ्चाशत्तमः श्लोकः

हिरण्यकशिपुरुवाच—बाल एवं प्रवदति सर्वे विस्मितचेतसः ।
ज्ञातयो मेनिरे सर्वमनित्यमयथोत्थितम् ॥५८॥

पदच्छेद— बाले एवम् प्रवदति सर्वे विस्मित चेतसः ।
ज्ञातयः मेनिरे सर्वम् अनित्यम् अयथा उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

बाले	१.	बालक के	**ज्ञातयः**	५.	भाई-बन्धु
एवम्	२.	इस प्रकार	**मेनिरे**	८.	मान गये (कि)
प्रवदति	३.	कहने पर	**सर्वम्**	९.	सब कुछ
सर्वे	४.	सभी	**अनित्यम्**	१०.	अनित्य एवम्
विस्मित	६.	आश्चर्य चकित	**अयथा उत्थितम् ॥**	११.	मिथ्या है
चेतसः ।	७.	चित्त होकर			

श्लोकार्थ—बालक के इस प्रकार कहने पर सभी भाई-बन्धु आश्चर्य चकित होकर मान गये कि सब कुछ अनित्य एवं मिथ्या है ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

यम एतदुपाख्याय तत्रैवान्तरधीयत।
ज्ञातयोऽपि सुयज्ञस्य चक्रुर्यत्साम्परायिकम् ॥५९॥

पदच्छेद— यमः एतद् उपाख्याय तत्र एव अन्तरधीयत।
ज्ञातयः अपि सुयज्ञस्य चक्रु: यत् साम्परायिकम् ॥

शब्दार्थ—

यमः	१.	यमराज	ज्ञातयः	९.	भाई-बन्धुओं ने
एतद्	२.	यह	अपि	८.	भी
उपाख्याय	३.	आख्यान कह कर	सुयज्ञस्य	७.	सुयज्ञ के
तत्र	४.	वहीं	चक्रु:	१२.	की
एव	५.	पर ही	यत्	१०.	उसकी
अन्तरधीयत।	६.	अन्तर्ध्यान हो गये	साम्परायिकम् ॥	११.	अन्त्येष्टि क्रिया

श्लोकार्थ—यमराज यह आख्यान कहकर वहीं पर ही अन्तर्ध्यान हो गये। सुयज्ञ के भाई-बन्धुओं ने उसकी अन्त्येष्टि क्रिया की ॥

षष्टितमः श्लोकः

ततः शोचत मा यूयं परं चात्मानमेव च।
क आत्मा कः परो वात्र स्वीयः पारक्य एव वा।
स्वपराभिनिवेशेन विनाज्ञानेन देहिनाम् ॥६०॥

पदच्छेद— ततः शोचत मा यूयम् परम् च आत्मानम् एव च।
कः आत्मा कः परः वा अत्र स्वीयः पारक्यः एव वा।
स्वपर अभिनिवेशेन विना अज्ञानेन देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसलिये	स्वीयः	९.	अपना
शोचत मा	५.	शोक मत करो	पारक्यः	१०.	पराया
यूयम्	२.	तुम लोग	एव	११.	ही कौन है
परम् च	४.	दूसरे के लिये भी	वा स्वपर	१२.	अथवा अपने पराये का
आत्मानम् एव	३.	अपने लिये भी और	अभिनिवेशेन	१३.	दुराग्रह
च कः आत्मा	६.	और कौन आत्मा है	विना	१५.	बिना
कः परः	८.	कौन दूसरा है	अज्ञानेन	१६.	अज्ञान के (नहीं होता है)
वा अत्र।	७.	अथवा संसार में	देहिनाम् ॥		प्राणियों को

श्लोकार्थ—इसलिये तुम लोग अपने लिये भी शोक मत करो। और कौन आत्मा है अथवा संसार में कौन दूसरा है। अपना पराया ही कौन है। अथवा अपने पराये का दुराग्रह प्राणियों को बिना अज्ञान के नहीं होता है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

नारद उवाच इति दैत्यपतेर्वाक्यं दितिराकर्ण्य सस्नुषा ।
पुत्रशोकं क्षणात्त्यक्त्वा तत्त्वे चित्तमधारयत् ॥६१॥

पदच्छेद— इति दैत्यपतेः वाक्यम् दितिः आकर्ण्य सस्नुषा ।
पुत्र शोकम् क्षणात् त्यक्त्वा तत्त्वे चित्तम् अधारयत् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	पुत्र	८.	पुत्र
दैत्ययतेः	२.	दैत्यराज (हिरण्यकशिपु) की	शोकम्	९.	शोक को
वाक्यम्	३.	बात को	क्षणात्	७.	क्षण भर में
दितिः	६.	दिति ने	त्यक्त्वा	१०.	त्याग कर
आकर्ण्य	५.	सुनकर	तत्त्वे	१२.	परमात्मा में
सस्नुषा ।	४.	पुत्रवधू के साथ	चित्तम्	११.	चित्त को
			अधारयत् ॥	१३.	लगा दिया

श्लोकार्थ—इस प्रकार दैत्यराज हिरण्यकशिपु की बात को पुत्र-वधू के साथ सुनकर दिति ने क्षण भर में पुत्र शोक को त्याग कर चित्त को परमात्मा में लगा दिया ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
सप्तमस्कन्धे दितिशोकापनयनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— हिरण्यकशिपू राजन्नजेयमजरामरम् ।

आत्मानमप्रतिद्वन्द्वमेकराजं व्यधित्सत ॥ १ ॥

पदच्छेद— हिरण्यकशिपुः राजन् अजेयम् अजर अमरम् ।

आत्मानम् अप्रतिद्वन्द्वम् एकराजम् व्यधित्सत ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपुः	२.	हिरण्यकशिपु ने	आत्मानम्	३.	अपने को
राजन्	१.	हे राजन्!	अप्रतिद्वन्द्वम्	७.	प्रतिद्वन्द्वी से रहित
अजेयम्	४.	अजेय	एकराजम्	८.	एक छत्र राजा
अजर	५.	अजर	व्यधित्सत ॥	९.	बनाना चाहा
अमरम् ।	६.	अमर			

श्लोकार्थ—हे राजन्! हिरण्यकशिपु ने अपने को अजेय, अजर, अमर, प्रतिद्वन्द्वी से रहित और एक छत्र राजा बनाना चाहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

स तेपे मन्दरद्रोण्यां तपः परमदारुणम् ।

ऊर्ध्वबाहुर्नभोदृष्टिः पादाङ्गुष्ठाश्रितावनि ॥ २ ॥

पदच्छेद— सः तेपे मन्दर द्रोण्याम् तपः परम दारुणम् ।

ऊर्ध्वबाहुः नभः दृष्टिः पाद अङ्गुष्ठ आश्रित अवनि ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	बाहुः	३.	भुजायें
तेपे	१४.	करने लगा	नभः	५.	आकाश में
मन्दरद्रोण्याम्	२.	मन्दराचल की घाटी में	दृष्टिः	६.	दृष्टि लगाकर
तपः	१३.	तपस्या	पाद	७.	पैर के
परम	११.	अत्यन्त	अङ्गुष्ठ	८.	अंगूठे के बल
दारुणम् ।	१२.	कठिन	आश्रित	१०.	खड़ा होकर
ऊर्ध्व	४.	ऊपर उठाकर	अवनि ॥	९.	पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—वह मंदराचल की घाटी में भुजायें ऊपर उठाकर आकाश में दृष्टि लगाकर पैर के अंगूठे के बल पृथ्वी पर खड़ा होकर अत्यन्त कठिन तपस्या करने लगा ॥

तृतीयः श्लोकः

जटादीधितिभी रेजे संवर्तार्क इवांशुभिः ।
तस्मिंस्तपस्तप्यमाने देवाः स्थानानि भेजिरे ॥३॥

पदच्छेद— जटादीधितिभिः रेजे संवत अर्कः इव अंशुभिः ।
तस्मिन् तपः तप्यमाने देवाः स्थानानि भेजिरे ॥

शब्दार्थ—

जटा	५.	जटा की	तस्मिन्	८.	उसके
दीधितिभिः	६.	किरणों से (वह)	तपः	९.	तपस्या में
रेजे	७.	चमकने लगा	तप्यमाने	१०.	लगे रहने पर
संवर्त	१.	प्रलयकाल के	देवाः	११.	देवता लोग
अर्कः	२.	सूर्य की	स्थानानि	१२.	अपने-अपने स्थान पर
इव	४.	समान	भेजिरे ॥	१३.	प्रतिष्ठित हो गये
अंशुभिः ।	३.	किरणों से			

श्लोकार्थ—प्रलय काल के सूर्य की किरणों के समान जटा की किरणों से वह चमकने लगा । उसके तपस्या में लगे रहने पर देवता लोग अपने-अपने स्थान पर प्रतिष्ठित हो गये ॥

चतुर्थः श्लोकः

तस्य मूर्ध्नः समुद्भूतः सधूमोऽग्निस्तपोमयः ।
तिर्यगूर्ध्वमधोलोकानतपद्विष्वगीरितः ॥४॥

पदच्छेद— तस्य मूर्ध्नः समुद्भूतः सधूमः अग्निः तपो मयः ।
तिर्यक् ऊर्ध्वम् अधोलोकान् अतपत् विष्वक्ईरितः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उसके	तिर्यक्	८.	तिरछे
मूर्ध्नः	२.	सिर से	ऊर्ध्वम्	९.	ऊपर (और)
समुद्भूतः	३.	निकला हुआ	अधोलोकान्	१०.	नीचे के लोकों को
सधूमः	४.	धूयें के साथ	अतपत्	११.	जलाने लगा
अग्निः	६.	अग्नि	विष्वक्ईरितः ॥	७.	चारों ओर फैलकर
तपोमयः	५.	तपस्यामय			

श्लोकार्थ—उसके सिर से निकला हुआ धूयें के साथ तपस्यामय अग्नि चारों ओर फैलकर तिरछे तथा ऊपर-नीचे के लोकों को जलाने लगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

चुक्षुभुर्नद्युदन्वन्तः सद्वीपाद्रिश्चचाल भूः ।

निपेतुः सग्रहास्तारा जज्वलुश्च दिशो दश ॥५॥

पदच्छेद— चुक्षुभुः नदी उदन्वन्तः सद्वीप अद्रिः चचाल भूः ।

निपेतुः सग्रहाः ताराः जज्वलुः च दिशः दश ॥

शब्दार्थ—

चुक्षुभुः	३.	खौलने लगे	निपेतुः	१०.	गिरने लगे
नदी	१.	उसके तेज से नदी (और)	सग्रहाः	८.	ग्रहों सहित
उदन्वन्तः	२.	समुद्र	ताराः	९.	तारे
सद्वीप	४.	द्वीपों और	जज्वलुः	१४.	जलने लगीं
अद्रिः	५.	पर्वतों सहित	च	११.	और
चचाल	७.	डगमगाने लगी	दिशः	१३.	दिशायें
भूः ।	६.	पृथ्वी	दश ॥	१२.	दशो

श्लोकार्थ—उसके तेज से नदी और समुद्र खौलने लगे । द्वीपों और पर्वतों सहित पृथ्वी डगमगाने लगी । ग्रहों के सहित तारे गिरने लगे । और दशो दिशायें जलने लगीं ॥

षष्ठः श्लोकः

तेन तप्ता दिवं त्यक्त्वा ब्रह्मलोकं ययुः सुराः ।

धात्रे विज्ञापयामासुर्देवदेव जगत्पते ॥६॥

पदच्छेद— तेन तप्ताः दिवम् त्यक्त्वा ब्रह्म लोकम् ययुः सुराः ।

धात्रे विज्ञापयामासुः देव देव जगत्पते ॥

शब्दार्थ—

तेन	१.	उससे	ययुः	८.	गये (और)
तप्ताः	२.	तपे हुए	सुराः ।	३.	देवता गण
दिवम्	४.	स्वर्ग को	धात्रे	९.	ब्रह्मा से
त्यक्त्वा	५.	छोड़कर	विज्ञापयामासुः	१०.	निवेदन करने लगे
ब्रह्म	६.	ब्रह्म	देव देव	११.	हे देवों के देव !
लोकम्	७.	लोक को	जगत्पते ॥	१२.	हे जगत्पते, यह ज्वालाशान्त कीजिये

श्लोकार्थ—उससे तपे हुए देवता गण स्वर्ग को छोड़कर ब्रह्मलोक को गये और ब्रह्मा से निवेदन करने लगे कि हे देवों के देव ! हे जगत्पते ! (यह ज्वाला शान्त कीजिये) ॥

सप्तमः श्लोकः

दैत्येन्द्रतपसा तप्ता दिवि स्थातुं न शक्नुमः ।
तस्य चोपशमं भूमन् विधेहि यदि मन्यसे ।
लोका न यावन्नङ्क्ष्यन्ति बलिहारास्तवाभिभूः ॥७॥

पदच्छेद— दैत्येन्द्र तपसा तप्ताः दिवि स्थातुम् न शक्नुमः ।
तस्य च उपशमम् भूमन् विधेहि यदि मन्यसे ॥
लोकाः न यावत् नङ्क्ष्यन्ति बलिहाराः तव अभिभूः ॥

शब्दार्थ—

दैत्येन्द्र	१.	दैत्यराज की	भूमन्	७.	हे अनन्त
तपसा	२.	तपस्या से	विधेहि	११.	कीजिये
तप्ताः	३.	तपे हुये (हमलोग)	यदि मन्यसे ।	८.	यदि उचित समझें तो
दिवि	४.	स्वर्ग में	लोका न	१४.	प्रजायें नहीं
स्थातुम्	५.	रह	यावत्	१२.	जब तक (आपकी)
न शक्नुमः	६.	नहीं सकते हैं	नङ्क्ष्यन्ति	१५.	नष्ट हो जाती हैं
तस्य	९.	उसकी	बलिहारः	१३.	सेवा करने वाली
च	१६.	और वह	तव	१७.	आप पर भी
उपशमम्	१०.	शान्ति	अभिभूः ॥	१८.	आक्रमण करने वाला है

श्लोकार्थ—दैत्यराज की तपस्या से तपे हुये हम लोग स्वर्ग में नहीं रह सकते हैं । हे अनन्त ! आप यदि उचित समझें तो उसकी शान्ति कीजिये जब-तक आपकी सेवा करने वाली प्रजायें नष्ट नहीं हो जाती हैं । और वह आप पर भी आक्रमण करने वाला है ॥

अष्टमः श्लोकः

तस्यायं किल सङ्कल्पश्चरतो दुश्चरं तपः ।
श्रूयतां किं न विदितस्तवाथापि निवेदितः ॥८॥

पदच्छेद— तस्य अयम् किल सङ्कल्पः चरतः दुश्चरम् तपः ।
श्रूयताम् किम् न विदितः तव अथापि निवेदितः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	४.	उसका	श्रूयताम्	८.	सुनिये
अयम्	६.	यह	किम्	९.	क्या (उसका संकल्प)
किल	५.	बहुत दिनों का	न	११.	नहीं
सङ्कल्पः	७.	संकल्प है	विदितः	१२.	मालूम है
चरतः	३.	करते हुये	तव	१०.	आपको
दुश्चरम्	१.	कठिन	अथापि	१३.	तो भी (हम)
तपः ।	२.	तपस्या	निवेदितः ॥	१४.	बता रहे हैं

श्लोकार्थ—कठिन तपस्या करते हुये उसका बहुत दिनों का यह संकल्प है । सुनिये, क्या उसका संकल्प आपको नहीं मालूम है ? तो भी हम बता रहे हैं ॥

नवमः श्लोकः

सृष्ट्वा चराचरमिदं तपोयोगसमाधिना ।
अध्यास्ते सर्वधिष्ण्येभ्यः परमेष्ठी निजासनम् ॥ ९ ॥

पदच्छेद— सृष्ट्वा चराचरम् इदम् तपो योग समाधिना ।
अध्यास्ते सर्व धिष्ण्येभ्यः परमेष्ठी निज आसनम् ॥

शब्दार्थ—

सृष्ट्वा	६. सृष्टि करके (वह)	अध्यास्ते	९. ऊपर बैठेगा (जैसे)
चराचरम्	५. चराचर जगत् की	सर्व	७. सभी
इदम्	४. इस	धिष्ण्येभ्यः	८. लोकों से
तपो	१. तपस्या	परमेष्ठी	१०. ब्रह्मा
योगः	२. योग और	निज	११. अपने
समाधिना ।	३. समाधि के द्वारा	आसनम् ॥	१२. आसन पर बैठते हैं

श्लोकार्थ—तपस्या, योग और समाधि के द्वारा इस चराचर जगत् की सृष्टि करके वह सभी लोकों से ऊपर बैठेगा । जैसे ब्रह्मा अपने आसन पर बैठते हैं ॥

दशमः श्लोकः

तदहं वर्धमानेन तपोयोगसमाधिना ।
कालात्मनोश्च नित्यत्वात्साधयिष्ये तथाऽऽत्मनः ॥१०॥

पदच्छेद— तत् अहम् वर्धमानेन तपः योग समाधिना ।
काल आत्मनोः च नित्यत्वात् साधयिष्ये तथा आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. इसलिए	काल	७. समय
अहम्	२. मैं	आत्मनोः	९. आत्मा के
वर्धमानेन	३. बढ़ते हुए	च	८. और
तपः	४. तपस्या	नित्यत्वात्	१०. नित्य होने से
योग	५. योग और	साधयिष्ये	१३. प्राप्त कर लूँगा जैसे
समाधिना ।	६. समाधि के द्वारा	तथा	११. उसी प्रकार
		आत्मनः ॥	१२. अपना स्थान

श्लोकार्थ—इसलिए मैं बढ़ते हुए तपस्या, योग और समाधि के द्वारा, समय और आत्मा के नित्य होने से उसी प्रकार अपना स्थान प्राप्त कर लूँगा, जैसे ब्रह्मा ने किया ॥

एकादशः श्लोकः

अन्यथेदं विधास्येऽहमयथापूर्वमोजसा ।
किमन्यैः कालनिर्धूतैः कल्पान्ते वैष्णवादिभिः ॥११॥

पदच्छेद— अन्यथा इदम् विधास्ये अहम् अयथापूर्वम् ओजसा ।
किम् अन्यैः काल निर्धूतैः कल्प अन्ते वैष्णव आदिभिः ।।

शब्दार्थ—

अन्यथा	१. अन्यथा (ऐसा न हुआ तो	किम्	१३. क्या करना है
इदम्	४. यह	अन्यैः	१०. दूसरे
विधास्ये	६. कर दूंगा	काल	८. समय से
अहम्	२. मैं	निर्धूतैः	९. नष्ट हो जाने वाले
अयथापूर्वम्	५. उलट-फेर	कल्प अन्ते	७. प्रलय काल में
ओजसा ।	३. अपने तेज से	वैष्णव	११. वैष्णव
		आदिभिः ।।	१२. आदि लोकों से

श्लोकार्थ—अन्यथा ऐसा न हुआ तो मैं अपने तेज से यह उलट-फेर कर दूंगा । प्रलय काल में समय से नष्ट हो जाने वाले दूसरे वैष्णवादि लोकों से क्या करना है ।।

द्वादशः श्लोकः

इति शुश्रुम निर्बन्धं तपः परममास्थितः ।
विधत्स्वानन्तरं युक्तं स्वयं त्रिभुवनेश्वर ॥१२॥

पदच्छेद— इति शुश्रुम निर्बन्धम् तपः परमम् आस्थितः ।
विधत्स्व अनन्तरम् युक्तम् स्वयम् त्रिभुवनेश्वर ।।

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार (हमने)	विधत्स्व	१२. कीजिये
शुश्रुम	२. सुना है कि वह	अनन्तरम्	७. उसके बाद
निर्बन्धम्	३. हठ करके	युक्तम्	१०. उचित (समझे वह)
तपः	५. तपस्या में	स्वयम्	९. अपने आप (जैसा)
परमम्	४. कठिन	त्रिभुवनेश्वर ।।	८. हे तीनों लोक के ईश्वर !
आस्थितः ।	६. लगा हुआ है		

श्लोकार्थ—इस प्रकार हमने सुना है कि वह हठ करके कठिन तपस्या में लगा हुआ है । उसके बाद हे तीनों लोकों के ईश्वर ! आप जैसा उचित समझो वह कीजिये ।।

त्रयोदशः श्लोकः

तवासनं द्विजगवां पारमेष्ठ्यं जगत्पते ।
भवाय श्रेयसे भूत्यै क्षेमाय विजयाय च ॥१३॥

पदच्छेद— तव आसनम् द्विज गवाम् पारमेष्ठ्यम् जगत्पते ।
भवाय श्रेयसे भूत्यै क्षेमाय विजयाय च ॥

शब्दार्थ—

तव	२. आपका	**भवाय**	७. वृद्धि
आसनम्	४. पद	**श्रेयसे**	८. कल्याण
द्विज	५. ब्राह्मणों और	**भूत्यै**	९. विभूति
गवाम्	६. गौओं की	**क्षेमाय**	१०. कुशल
पारमेष्ठ्यम्	३. ब्रह्म	**विजयाय**	१२. विजय के लिए है
जगत्पते ।	१. हे संसार के स्वामी	**च ॥**	११. और

श्लोकार्थ—हे संसार के स्वामी ! आपका ब्रह्मपद ब्राह्मणों और गौओं की वृद्धि, कल्याण, विभूति, कुशल और विजय के लिये है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

इति विज्ञापितो देवैर्भगवानात्मभूर्नृप ।
परीतो भृगुदक्षाद्यैर्ययौ दैत्येश्वराश्रमम् ॥१४॥

पदच्छेद— इति विज्ञापितः देवैः भगवान् आत्मभूः नृप ।
परीतः भृगु दक्षआद्यैः ययौ दैत्येश्वर आश्रमम् ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	**परीतः**	९. घिर कर
विज्ञापितः	४. निवेदन किये जाने पर	**भृगु**	७. भृगु
देवैः	३. देवताओं द्वारा	**दक्षआद्यैः**	८. क्षद आदि प्रजापतियों से
भगवान्	५. भगवान्	**ययौ**	१२. गये
आत्मभूः	६. ब्रह्मा जी	**दैत्येश्वरम्**	१०. दैत्यराज के
नृप ।	१. हे राजन् !	**आश्रमम् ॥**	११. आश्रम पर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार देवता द्वारा निवेदन किये जाने पर भगवान् ब्रह्मा जी भृगु, दक्ष आदि प्रजापतियों से घिर कर दैत्यराज के आश्रम पर गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न ददर्श प्रतिच्छन्नं वल्मीकतृणकीचकैः ।
पिपीलिकाभिराचीर्णमेदस्त्वङ्मांसशोणितम् ॥१५॥

पदच्छेद— न ददर्श प्रतिच्छन्नम् वल्मीक तृण कीचकैः ।
पिपीलिकाभिः आचीर्ण मेदस्त्वक् मांस शोणितम् ॥

शब्दार्थ—

न	१०. नहीं	पिपीलिकाभिः	५. चीटियों से
ददर्श	११. देखा	आचीर्ण	६. चाट ली गई
प्रतिच्छन्नम्	४. ढके हुए	मेदस्त्वक्	७. मज्जा, त्वचा
वल्मीक	१. दीमक की मिट्टी	मांस	८. मांस और
तृण	२. घास (और)	शोणितम् ॥	९. रक्तवाले (उस दैत्यराज को)
कीचकैः ।	३. बासों से		

श्लोकार्थ दीमक की मिट्टी, घास और बाँसों से ढके हुए, चीटियों से चाटली गई मज्जा, त्वचा, मांस और रक्त वाले उस दैत्यराज को नहीं देखा ॥

षोडशः श्लोकः

तपन्तं तपसा लोकान् यथाभ्रापिहितं रविम् ।
विलक्ष्य विस्मितः प्राह प्रहसन् हंसवाहनः ॥१६॥

पदच्छेद— तपन्तम् तपसा लोकान् यथा अभ्रअपिहितम् रविम् ।
विलक्ष्य विस्मितः प्राह प्रहसन् हंसवाहनः ॥

शब्दार्थ—

तपन्तम्	६. तपाये हुए	विलक्ष्य	७. देखकर
तपसा	५. तपस्या से	विस्मितः	८. आश्चर्यचकित होकर
लोकान्	४. लोकों को	प्राह	११. बोले
यथा	३. समान	प्रहसन्	१०. हंसते हुये (उसे)
अभ्रअपिहितम्	१. बादलों से न ढके हुए	हंसवाहनः ॥	९. ब्रह्मा जी
रविम् ।	२. सूर्य के		

श्लोकार्थ—बादलों से ढके हुए सूर्य के समान लोकों को तपस्या से तपाते हुए देखकर आश्चर्यचकित होकर ब्रह्मा जी हंसते हुए, उससे बोले ॥

सप्तदशः श्लोकः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते तपःसिद्धोऽसि काश्यप।
वरदोऽहमनुप्राप्तो व्रियतामीप्सितो वरः ॥१७॥

पदच्छेद — उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ भद्रम् ते तपः सिद्धः असि काश्यप ।
वरदः अहम् अनुप्राप्तः व्रियताम् ईप्सितः वरः ॥

शब्दार्थ—

उत्तिष्ठ	२.	उठो	काश्यप ।	१.	हे कश्यप पुत्र
उत्तिष्ठ	३.	उठो	वरदः	९.	वर देने वाला
भद्रम्	५.	कल्याण हो (तुम)	अहम्	१०.	मैं
ते	४.	तुम्हारा	अनुप्राप्तः	११.	आया हूँ
तपः	६.	तपस्या से	व्रियताम्	१४.	माँग लो
सिद्धः	७.	सिद्ध	ईप्सितः	१२.	मनचाहा
असि	८.	हो गये हो	वरः ॥	१३.	वरदान

श्लोकार्थ—हे कश्यप पुत्र ! उठो-उठो, तुम्हारा कल्याण हो । तुम तपस्या से सिद्ध हो गये हो । वर देने वाला मैं आया हूँ । मन चाहा वरदान माँग लो ॥

अष्टादशः श्लोकः

अद्राक्षमहमेतत्ते हृत्सारं महदद्भुतम् ।
दंशभक्षितदेहस्य प्राणा ह्यस्थिषु शेरते ॥१८॥

पदच्छेद— अद्राक्षम् अहम् एतत् ते हृत्सारम् महद् अद्भुतम् ।
दंश भक्षित देहस्य प्राणाः हि अस्थिषु शेरते ॥

शब्दार्थ—

अद्राक्षम्	७.	देख लिया	दंश	८.	डाँसों से
अहम्	१.	मैंने	भक्षित	९.	खाई गयी
एतत्	२.	यह	देहस्य	१०.	देह वाले
ते	५.	तुम्हारे	प्राणाः	१२.	प्राण
हृत्सारम्	६.	हृदय का बल	हि	१३.	ही केवल
महद्	३.	महान्	अस्थिषु	११.	तुम्हारी हड्डियों में
अद्भुतम् ।	४.	आश्चर्यजनक	शेरते ॥	१४.	सो रहे है

श्लोकार्थ—मैंने यह महान् आश्चर्यजनक तुम्हारे हृदय का बल देख लिया । डाँसों से खाई गई देह वाले तुम्हारी हड्डियों में प्राण ही केवल सो रहे है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नैतत्पूर्वर्षयश्चक्रुर्न करिष्यन्ति चापरे ।
निरम्बुर्धारयेत्प्राणान् को वै दिव्यसमाः शतम् ॥१९॥

पदच्छेद— न एतत् पूर्वऋषयः चक्रुः न करिष्यन्ति च अपरे ।
निर् अम्बुः धारयेत् प्राणान् कः वै दिव्य समाः शतम् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	निर् अम्बुः	१३.	बिना जल के
एतत्	२.	यह	धारयेत्	१५.	धारण करेगा
पूर्वऋषयः	१.	पहले के ऋषियों ने	प्राणान्	१४.	प्राणों को
चक्रुः न	४.	किया है नहीं	कः	११.	कौन
करिष्यन्ति	७.	करेंगे	वै	१२.	निश्चित रूप से
च	५.	और	दिव्य	८.	देवताओं के
अपरे ।	६.	आगे के	समाः	१०.	वर्षों तक
			शतम् ॥	९.	सौ

श्लोकार्थ—पहले के ऋषियों ने यह नहीं किया है और नहीं आगे के करेंगे । देवताओं के सौ वर्षों तक कौन निश्चित रूप से बिना जल के प्राणों को धारण करेगा ॥

विंशः श्लोकः

व्यवसायेन तेऽनेन दुष्करेण मनस्विनाम् ।
तपोनिष्ठेन भवता जितोऽहं दितिनन्दन ॥२०॥

पदच्छेद— व्यवसायेन ते अनेन दुष्करेण मनस्विनाम् ।
तपः निष्ठेन भवता जितः अहम् दितिनन्दन ॥

शब्दार्थ—

व्यवसायेन	६.	कार्य से (और)	तपः	७.	तप की
ते	४.	तुम्हारे	निष्ठेन	८.	निष्ठा से
अनेन	५.	इस	भवता	९.	आपने
दुष्करेण	३.	कठिन	जितः	११.	जीत लिया है
मनस्विनाम् ।	२.	मनस्वी पुरुषों के लिए भी	अहम्	१०.	मुझे
			दितिनन्दन ॥	१.	हे दिति के पुत्र

श्लोकार्थ—हे दिति के पुत्र ! मनस्वी पुरुषों के लिए भी कठिन तुम्हारे इस कर्म से और तप को निष्ठा से आपने मुझे जीत लिया है ॥

एकविंशः श्लोकः

ततस्त आशिषः सर्वा ददाम्यसुरपुङ्गव ।
मर्त्यस्य ते अमर्त्यस्य दर्शनं नाफलं मम ॥२१॥

पदच्छेद— ततः ते आशिषः सर्वाः ददामि असुर पुङ्गव ।
मर्त्यस्य ते अमर्त्यस्य दर्शनम् न अफलम् मम ॥

शब्दार्थ—

ततः ते	३.	इसी से तुम्हें	मर्त्यस्य	७.	मरने वालों (और)
आशिषः	५.	आशीर्वाद	ते	९.	तुम्हें भी
सर्वाः	४.	सब	अमर्त्यस्य	८.	न मरने वाले को भी (तथा)
ददामि	६.	देता हूँ	दर्शनम्	११.	दर्शन
असुर	१.	हे दैत्य	न	१३.	नहीं होगा
पुङ्गव ।	२.	श्रेष्ठ !	अफलम्	१२.	निष्फल
			मम ॥	१०.	मेरा

श्लोकार्थ—हे दैत्य ! इसी से तुम्हें सब आशीर्वाद देता हूँ । मरने वाले और न मरने वालों को भी तथा तुम्हें भी मेरा दर्शन निष्फल नहीं होगा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

नारद उवाच—इत्युक्त्वाऽऽदिभवो देवो भक्षिताङ्गं पिपीलिकैः ।
कमण्डलुजलेनौक्षद्दिव्येनामोघराधसा ॥२२॥

पदच्छेद— इति उक्त्वा आदि भवः देवः भक्षित अङ्गम् पिपीलिकैः ।
कमण्डलु जलेन औक्षत् दिव्येन अमोघ राधसा ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इतना	पिपीलिकैः ।	६.	चीटियों द्वारा
उक्त्वा	२.	कहकर	कमण्डलु	१२.	कमण्डलु का
आदि	३.	पहले	जलेन	१३.	जल
भवः	४.	उत्पन्न होने वाले	औक्षत्	१४.	छिड़क दिया
देवः	५.	देवता (ब्रह्मा जी ने)	दिव्येन	९.	दिव्य (और)
भक्षित	७.	खाये हुए	अमोघ	१०.	अमोघ
अङ्गम्	८.	शरीर पर	राधसा ॥	११.	प्रभावशाली

श्लोकार्थ—इतना कहकर पहले उत्पन्न होने वाले देवता ब्रह्मा जी ने चीटियों द्वारा खाये हुये शरीर पर दिव्य और अमोघ, प्रभावशाली, कमण्डलु का का जल छिड़क दिया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

स तत्कीचकवल्मीकात् सहओजोबलान्वितः ।
सर्वावयवसम्पन्नो वज्रसंहननो युवा ।
उत्थितस्तप्तहेमाभो विभावसुरिवैधसः ॥२३॥

पदच्छेद— स तत् कीचक वल्मीकात् सह ओजः बलान्वितः ।
सर्व अवयव सम्पन्नः वज्र संहननः युवा ।
उत्थितः तप्तहेमाभः विभावसुः इव एधसः ॥

शब्दार्थ—

सः तत्	१.	वह हिरण्यकशिपु	वज्र	१०.	वज्र के समान
कीचक	२.	बाँस (और)	संहननः	११.	कठोर
वल्मीकात्	३.	वल्मीक से	युवा	१४.	युवक होकर
सह	५.	साथ	उत्थितः	१८.	उठा
ओजः	४.	ओज के	तप्त	१२.	तपे हुए
बलान्वितः	६.	बल युक्त	हेमाभाः	१३.	सोने के समान कान्तिमान् होकर
सर्व	७.	सम्पूर्ण	विभावसु	१६.	अग्नि के
अवयव	८.	अवयवों से	इव	१७.	समान
सम्पन्नः ।	९.	परिपूर्ण	एधसः ॥	१५.	काठ से

श्लोकार्थ—वह हिरण्यकशिपु उस बाँस और वल्मीक से ओज के साथ बल से युक्त, सम्पूर्ण अवयवों से परिपूर्ण, वज्र के समान कठोर, तपे हुए सोने के समान कान्तिमान् होकर काठ से अग्नि के समान उठा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

स निरीक्ष्याम्बरे देवं हंसवाहमवस्थितम् ।
ननाम शिरसा भूमौ तद्दर्शनमहोत्सवः ॥२४॥

पदच्छेद— सः निरीक्ष्य अम्बरे देवम् हंसवाहम् अवस्थितम् ।
ननाम शिरसा भूमौ तत् दर्शन महोत्सवः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उसने	ननाम	१२.	प्रणाम किया
निरीक्ष्य	६.	देखकर	शिरसा	११.	मस्तक से
अम्बरे	२.	आकाश में	भूमौ	१०.	भूमि पर
देवम्	३.	देवता (ब्रह्माजी को	तत्	७.	उनके
हंसवाहम्	४.	हंस की सवारी पर	दर्शन	८.	दर्शन से
अवस्थितम् ।	५.	बैठे हुए	महोत्सवः ॥	९.	आनन्दित होकर

श्लोकार्थ—उसने आकाश में देवता ब्रह्माजी को हंस की सवारी पर बैठे हुए देखकर उनके दर्शन से आनन्दित होकर भूमि पर मस्तक से प्रणाम किया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

उत्थाय प्राञ्जलिः प्रह्व ईक्षमाणो दृशा विभुम् ।
हर्षाश्रुपुलकोद्भेदो गिरा गद्गदयागृणात् ॥२५॥

पदच्छेद— उत्थाय प्राञ्जलिः प्रह्व ईक्षमाणः दृशा विभुम् ।
हर्ष अश्रु पुलकउद्भेदः गिरा गद्गदया अगृणात् ॥

शब्दार्थ—

उत्थाय	१.	वह उठकर	हर्ष	७.	हर्ष
प्राञ्जलिः	२.	अञ्जलि बाँधकर	अश्रु	८.	अश्रुपात (एवम्)
प्रह्वः	३.	नम्रभाव से	पुलकउद्भेदः	९.	रोमाञ्चित होकर
ईक्षमाणः	६.	देखता हुआ	गिरा	११.	वाणी से
दृशा	४.	नेत्रों से	गद्गदया	१०.	गद्गद
विभुम् ।	५.	ब्रह्मा जी को	अगृणात् ॥	१२.	स्तुति करने लगा

श्लोकार्थ—वह उठकर अञ्जलि बाँध कर नम्रभाव से नेत्रों से ब्रह्मा जी को देखता ,हुआ हर्ष,अश्रुपात एवम् रोमाञ्चित होकर गद्गद वाणी से स्तुति करने लगा ॥

षड्विंशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुरुवाच—कल्पान्ते कालसृष्टेन योऽन्धेन तमसाऽऽवृतम् ।
अभिव्यनग् जगदिदं स्वयञ्ज्योतिः स्वरोचिषा ॥२६॥

पदच्छेद— कल्प अन्ते काल सृष्टेन यः अन्धेन तमसा आवृतम् ।
अभिव्यनक् जगत् इदम् स्वयम् ज्योतिः स्वरोचिषा ॥

शब्दार्थ—

कल्प	१.	कल्प के	अभिव्यनक्	१४.	प्रकट किया
अन्ते	२.	अन्त में	जगत्	९.	संसार को
काल	३.	काल के द्वारा	इदम्	८.	इस
सृष्टेन	४.	प्रेरित	स्वयम्	१०.	स्वयम्
यः	१२.	आप ने	ज्योतिः	११.	प्रकाश स्वरूप
अन्धेन	५.	घने	स्वरोचिषा ॥	१३.	अपने तेज से
तमसा	६.	अन्धकार से			
आवृतम् ।	७.	आच्छादित			

श्लोकार्थ —कल्प के अन्त में सृष्टि काल के द्वारा प्रेरित घने अन्धकार से आच्छादित इस संसार को स्वयम् प्रकाश स्वरूप आपने अपने तेज से प्रकट किया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

आत्मना त्रिवृता चेदं सृजत्यवति लुम्पति ।
रजः सत्त्वतमोधाम्ने पराय महते नमः ॥२७॥

पदच्छेद— आत्मना त्रिवृता च इदम् सृजति अवति लुम्पति ।
रजः सत्त्व तमः धाम्ने पराय महते नमः ॥

शब्दार्थ—

आत्मना	१. आप	**रजः**	८. रजोगुण
त्रिवृता	२. त्रिगुणमय रूप से	**सत्त्व**	९. सत्त्वोगुण और
च	६. और	**तमः**	१०. तमोगुण के
इदम्	३. इस संसार की	**धाम्ने**	११. आश्रय
सृजति	४. सृष्टि	**पराय**	१२. सबसे परे (और)
अवति	५. रक्षा	**महते**	१३. महान्
लुम्पति ।	७. संहार करते हैं	**नमः ॥**	१४. आप को नमस्कार करता हूँ

श्लोकार्थ—आप त्रिगुणमय रूप से संसार की सृष्टि, रक्षा और संसार करते हैं। रजोगुण, सत्त्वगुण और तमोगुण के आश्रय, सबसे परे और महान् आपको नमस्कार करता हूँ ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

नम आद्याय बीजाय ज्ञानविज्ञानमूर्तये ।
प्राणेन्द्रियमनोबुद्धिविकारैर्व्यक्तिमीयुषे ॥२८॥

पदच्छेद— नमः आद्याय बीजाय ज्ञान विज्ञान मूर्तये ।
प्राणेन्द्रिय मनोबुद्धि विकारैः व्यक्तिम् ईयुषे ॥

शब्दार्थ—

नमः	११. नमस्कार है	**प्राणेन्द्रिय**	६. प्राण इन्द्रिय
आद्याय	१. सबसे पहले होने वाले	**मनोबुद्धि**	७. मन बुद्धि (आदि)
बीजाय	२. बीज स्वरूप	**विकारैः**	८. विकारों द्वारा अपने आपको
ज्ञान	३. ज्ञान और	**व्यक्तिम्**	९. प्रकट
विज्ञान	४. विज्ञान की	**ईयुषे ॥**	१०. करने वाले आपको
मूर्तये ।	५. मूर्ति रूप		

श्लोकार्थ—सबसे पहले होने वाले, बीज स्वरूप, ज्ञान और विज्ञान की मूर्तिरूप, प्राण, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि विकारों के द्वारा अपने आपको प्रकट करने वाले आपको नमस्कार है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

त्वमीशिषे जगतस्तस्थुषश्च प्राणेन मुख्येन पतिः प्रजानाम् ।
चित्तस्य चित्तेर्मनइन्द्रियाणां पतिर्महान् भूतगणाशयेशः ॥२९॥

पदच्छेद— त्वम् ईशिषे जगतः तस्थुषश्च प्राणेन मुख्येन पतिः प्रजानाम् ।
चित्तस्य चित्तेः मन इन्द्रियाणाम् पतिः महान् भूतगण आशय ईशः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	१.	आप	चित्तस्य	९.	चित्त
ईशिषे	४.	प्रभु हैं	चित्तेः	१०.	चेतना
जगतः	३.	जगत् के	मनः	११.	मन और
तस्थुषश्च	२.	चर-अचर	इन्द्रियाणाम्	१२.	इन्द्रियों के
प्राणेन	६.	प्राण के द्वारा	पतिः	१४.	स्वामी हैं
मुख्येन	५.	प्रधान	महान्	१३.	महान्
पतिः	८.	रक्षक हैं	भूतगण	१५.	पञ्चभूत (और)
प्रजानाम्	७.	प्रजाओं के	आशय	१६.	शब्दादि विषयों के
			ईशः ॥	१७.	प्रभु हैं

श्लोकार्थ—आप चर-अचर जगत् के प्रभु हैं । प्रधान प्राण के द्वारा प्रजाओं के रक्षक है । चित्त, चेतना, मन और इन्द्रियों के महान् स्वामी हैं । पञ्चभूत और शब्दादि विषयों के स्वामी हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

त्वं सप्ततन्तून् वितनोषि तन्वा त्रय्या चातुर्होत्रकविद्यया च ।
त्वमेक आत्माऽऽत्मवतामनादिरनन्तपारः कविरन्तरात्मा ॥३०॥

पदच्छेद— त्वम् सप्त तन्तून् वितनोषि तन्वा त्रय्या चातुर्होत्रक विद्यया च ।
त्वम् एकः आत्मा आत्मवताम् अनादिः अनन्त पारः कविः अन्तर् आत्मा ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	६.	आप	त्वम्	१०.	आप
सप्त	७.	सात	एकः	१२.	एक ही
तन्तून्	८.	यज्ञों का	आत्मा	१३.	आत्मा है (आप)
वितनोषि	९.	विस्तार करते हैं	आत्मवताम्	११.	प्राणियों की
तन्वा	५.	शरीर से	अनादिः	१४.	अनादि
त्रय्या	४.	वेद रूप	अनन्त	१५.	अनन्त
चातुर्होत्रक	२.	चार ऋत्विजों की	पारः	१६.	अपार
विद्यया	३.	विद्या	कविः	१७.	सर्वज्ञ और
च ।	१.	तथा	अन्तर् आत्मा ॥	१८.	अन्तर्यामी हैं

श्लोकार्थ—तथा चार ऋत्विजों की विद्या वेदरूप शरीर से आप अग्निष्टोम आदि सात यज्ञों का विस्तार करते हैं । आप प्रणियों की एक ही आत्मा हैं । आप अनादि, अनन्त, अपार, सर्वज्ञ और अन्तर्यामी हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

त्वमेव कालोऽनिमिषो जानानामायुर्लवाद्यावयवैः क्षिणोषि।
कूटस्थ आत्मा परमेष्ठ्यजो महांस्त्वं जीवलोकस्य च जीव आत्मा ॥३१॥

पदच्छेद— त्वम् एव कालः अनिमिषः जनानाम् आयुः लव आद्य अवयवैः क्षिणोषि ।
कूटस्थः आत्मा परमेष्ठिअजः महान् त्वम् जीवलोकस्य च जीव आत्मा ॥

शब्दार्थ—त्वम् एव	१.	आप ही	कूटस्थः	११.	विकार
कालः	३.	काल हैं	आत्मा	१२.	आत्मा
अनिमिषः	२.	निमेष रहित	परमेष्ठिअजः	१३.	परमेश्वर, अजन्मा
जनानाम्	४.	लोगों की	महान्	१४.	महान्
आयुः	५.	आयु को	त्वम्	१०.	आप
लव	६.	क्षण	जीवलोकस्य	१५.	जीवसमूह के
आद्य	७.	आदि	च	१७.	और
अवयवैः	८.	विभागों के द्वारा	जीवः	१६.	जीवनदाता
क्षिणोषि ।	९.	क्षीण करते रहते हैं	आत्मा ॥	१८.	अन्तरात्मा हैं

श्लोकार्थ—आप ही निमेष रहित काल हैं, लोगों की आयु को क्षण आदि विभागों के द्वारा क्षीण करते रहते हैं। आप विकारातमा, परमेश्वर, अजन्मा, महान् जीवसमूह के जीवनदाता और अन्तआत्मा हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

त्वत्तः परं नापरमत्यनेजदेजच्च किञ्चिद् व्यतिरिक्तमास्ते ।
विद्याः कलास्ते तनवश्च सर्वा हिरण्यगर्भोऽसि बृहत्त्रिपृष्ठः ॥३२॥

पदच्छेद— त्वत्तः परम् न अपरम् अति अनेजत् एजत् च किञ्चित् व्यतिरिक्तम् आस्ते ।
विद्याः कलाः ते तनवः च सर्वाः हिरण्यगर्भः असि बृहत् त्रिपृष्ठः ॥

शब्दार्थ—त्वत्तः	७.	आप से	विद्याः	१२.	विद्यायें
परम्	१.	कार्य	कलाः	१३.	कलायें
न	७.	नहीं	ते	१४.	आपके
अपरम्	२.	कारण	तनवः	१५.	शरीर हैं
अतिअनेजत्	४.	अचल	च	१०.	और
एजत्	३.	चल	सर्वाः	११.	सभी
च	५.	और	हिरण्यगर्भः	१७.	स्वर्णमय
किञ्चित्	६.	कोई भी वस्तु	असि	१९.	आपके गर्भ में स्थित है
व्यतिरिक्तम्	८.	भिन्न नहीं	बृहत्	१६.	अखिल
आस्ते ।	९.	है	त्रिपृष्ठः ॥	१८.	ब्रह्माण्ड

श्लोकार्थ—कार्य, कारण, चल, अचल और कोई भी वस्तु आपसे भिन्न नहीं है। और विद्यायें कलायें आपके शरीर है। अखिल, स्वर्णमय ब्रह्माण्ड आपके गर्भ में स्थित है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

व्यक्तं विभो स्थूलमिदं शरीरं येनेन्द्रियप्राणमनोगुणांस्त्वम्।
भुङ्क्ते स्थितो धामनि पारमेष्ठ्ये अव्यक्त आत्मा पुरुषः पुराणः ॥३३॥

पदच्छेद— व्यक्तम् विभो स्थूलम् इदम् शरीरम् येन इन्द्रिय प्राण मनः गुणान् त्वम्।
भुङ्क्षे स्थितः धामनि पारमेष्ठ्ये अव्यक्तः आत्मा पुरुषः पुराणः ॥

शब्दार्थ—

व्यक्तम्	३.	व्यक्त ब्रह्माण्ड (आपका)	त्वम्।	६.	आप
विभो	१.	हे प्रभो!	भुङ्क्षे	११.	उपभोग करते हैं (और)
स्थूलम्	४.	स्थूल	स्थितः	१४.	स्थित रहते हैं (आप)
इदम्	२.	यह	धामनि	१३.	स्वरूप में
शरीरम्	५.	शरीर है	पारमेष्ठ्ये	१२.	ऐश्वर्यमय
येन	६.	जिससे	अव्यक्तः	१५.	ब्रह्म
इन्द्रिय	७.	इन्द्रिय	आत्मा	१६.	स्वरूप
प्राण	८.	प्राण और	पुरुषः	१८.	पुरुष है
मनः	९.	मन के	पुराणः ॥	१७.	पुराण
गुणान्	१०.	विषयों			

श्लोकार्थ—हे प्रभो! यह व्यक्त ब्रह्माण्ड आपका स्थूल शरीर है। जिससे आप इन्द्रिय, प्राण और मन के विषयों का उपभोग करते है। और ऐश्वर्यमय शरीर में स्थित रहते हैं। आप ब्रह्म स्वरूप पुराण पुरुष हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अनन्ताव्यक्तरूपेण केनेदमखिलं ततम्।
चिदचिच्छक्तियुक्ताय तस्मै भगवते नमः ॥३४॥

पदच्छेद— अनन्त अव्यक्त रूपेण येन इदम् अखिलम् ततम्।
चित् अचित् शक्ति युक्ताय तस्मै भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

अनन्त	२.	अनन्त (और)	चित्	८.	चेतन
अव्यक्त	३.	अव्यक्त	अचित्	९.	अचेतन
रूपेण	४.	रूप से	शक्ति	१०.	शक्ति से
येन	१.	आप	युक्ताय	११.	युक्त
इदम्	५.	इस	तस्मै	१२.	उन आप
अखिलम्	६.	सम्पूर्ण जगत् में	भगवते	१३.	भगवान् को
ततम्।	७.	व्याप्त है	नमः ॥	१४.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—आप अनन्त और अव्यक्त रूप से इस सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हैं। चेतन अचेतन शक्ति से युक्त उन आप भगवान् को नमस्कार है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यदि दास्यस्यभिमतान् वरान्मे वरदोत्तम ।
भूतेभ्यस्त्वद्विसृष्टेभ्यो मृत्युर्मा भून्मम प्रभो ॥३५॥

पदच्छेद— यदि दास्यसि अभिमतान् वरान् मे वरद उत्तम ।
भूतेभ्यः त्वद् विसृष्टेभ्यः मृत्युः मा भूत् मम प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यदि	२. यदि (आप)		**भूतेभ्यः**	१०. प्राणियों से
दास्यसि	५. देना चाहते हैं (तो)		**त्वद्**	७. आपके द्वारा
अभिमतान्	४. अभीष्ट		**विसृष्टेभ्यः**	९. रचे गये
वरान् मे	३. वरदान मुझे		**मृत्युः**	१२. मृत्यु
वरद	६. वर देने वालों में		**मा भूत्**	१३. न होवे
उत्तम ।	७. श्रेष्ठ		**मम**	११. मेरी
			प्रभो ॥	१. हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! यदि आप मुझे अभीष्ट वरदान देना चाहते हैं तो हे वर देने वालों में श्रेष्ठ ! आपके द्वारा रचे गये प्राणियों से मेरी मृत्यु न होवे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

नान्तर्बहिर्दिवा नक्तमन्यस्मादपि चायुधैः ।
न भूमौ नाम्बरे मृत्युर्न नरैर्न मृगैरपि ॥३६॥

पदच्छेद— न अन्तः बहिः दिवा नक्तम् अन्यस्मात् अपि च आयुधैः ।
न भूमौ न अम्बरे मृत्युः न नरैः न मृगैः अपि ॥

शब्दार्थ—

न	१. न		**न**	९. न
अन्तः	२. भीतर		**भूमौ**	१०. भूमि पर
बहिः	३. न बाहर		**न**	११. न
दिवा	४. न दिन में		**अम्बरे**	१२. आकाश में
नक्तम्	५. न रात में		**मृत्युः**	१६. मृत्यु होवे
अन्यस्मात्	६. न दूसरों से		**न नरैः**	१३. न मनुष्यों से
अपि	७. भी		**न मृगैः**	१४. न पशुओं से
च आयुधैः ।	८. और न शस्त्रों से		**अपि ॥**	१५. भी (मेरी)

श्लोकार्थ—न भीतर, न बाहर, न दिन में, न रात में, न दूसरे से भी, और न शस्त्रों से, न भूमि पर, न आकाश में, न मनुष्यों से, न पशुओं से भी मेरी मृत्यु होवे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

व्यसुभिर्वासुमद्भिर्वा सुरासुरमहोरगैः ।
अप्रतिद्वन्द्वतां युद्धे ऐकपत्यं च देहिनाम् ॥३७॥

पदच्छेद— व्यसुभिः वा असुमद्भिः वा सुर-असुर महाउरगैः ।
अप्रतिद्वन्द्वताम् युद्धे ऐकपत्यम् च देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

व्यसुभिः	१.	प्राण वाले	उरगैः ।	८.	सर्पों से (मेरी मृत्यु न होवे)
वा	२.	अथवा	अप्रतिद्वन्द्वताम्	१०.	शत्रु रहित
असुमद्भिः	४.	प्राण सहित	युद्धे	९.	युद्ध में
वा	६.	अथवा	ऐकपत्यम्	१३.	एक छत्र राजा होऊँ
सुर-असुर	५.	देवता, दैत्य	च	११.	और
महा	७.	महान्	देहिनाम्	१२.	प्राणियों का

श्लोकार्थ—प्राण वाले अथवा प्राण रहित, देवता, दैत्य अथवा महान् सर्पों से मेरी मृत्यु न होवे। युद्ध में शत्रु रहित और प्राणियों का एक छत्र राजा होऊँ ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

सर्वेषां लोकपालानां महिमानं यथाऽऽत्मनः ।
तपोयोगप्रभावाणां यन्न रिष्यति कर्हिचित् ॥३८॥

पदच्छेद— सर्वेषां लोक पालानाम् महिमानम् यथा आत्मनः ।
तपः योग प्रभावाणाम् यत् न रिष्यति कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

सर्वेषाम्	१.	सभी	तपः	७.	तपस्या और
लोक	२.	लोक	योगः	८.	योग की
पालानाम्	३.	पालों में	प्रभावाणाम्	९.	शक्ति मुझे प्राप्त हो
महिमानम्	६.	महिमा है (वैसी ही मेरी हो)	यत्	१०.	जो
यथा	४.	जैसी	न	१२.	नहीं
आत्मनः।	५.	आपकी	रिष्यति	१३.	नष्ट होवे
			कर्हिचित्।।	११.	कभी

श्लोकार्थ—सभी लोकपालों में जैसी आपकी महिमा है वैसी ही मेरी हो। तपस्या और योग की शक्ति मुझे प्राप्त हो, जो कभी नष्ट नहीं होवे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे हिरण्यकशिपोर्याचनं नाम तृतीयः अध्यायः ॥३॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

एवं वृतः शतधृतिर्हिरण्यकशिपोरथ ।
प्रादात्तत्तपसा प्रीतो वरांस्तस्य सुदुर्लभान् ॥१॥

पदच्छेद — एवम् वृतः शतधृतिः हिरण्यकशिपोः अथ ।
प्रादात् तत् तपसा प्रीतः वरान् तस्य सुदुर्लभान् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	तत्	४.	उसकी
वृतः	३.	वर मांगने पर	तपसा	५.	तपस्या से
शतधृतिः	७.	ब्रह्मा ने	प्रीतः	६.	प्रसन्न
हिरण्यकशिपोः	९.	हिरण्यकशिपु को	वरान्	११.	वर
अथ ।	१.	तदनन्तर	तस्य	८.	उस
प्रादात्	१२.	दिये	सुदुर्लभान् ॥	१०.	अत्यन्त दुर्लभ

श्लोकार्थ—तदनन्तर इस प्रकार वर मांगने पर उसकी तपस्या से प्रसन्न ब्रह्मा ने उस हिरण्यकशिपु को अत्यन्त दुर्लभ वर दिये ॥

द्वितीयः श्लोकः

तातेमे दुर्लभाः पुंसां यान् वृणीषे वरान् मम ।
तथापि वितराम्यङ्ग वरान् यदपि दुर्लभान् ॥२॥

पदच्छेद— तात इमे दुर्लभाः पुंसाम् यान् वृणीषे वरान् मम ।
तथापि वितरामि अङ्ग वरान् यदपि दुर्लभान् ॥

शब्दार्थ—

तात	१.	हे तात !	मम ।	५.	मुझसे
इमे	७.	वे	तथापि	१३.	तो भी (तुम्हें)
दुर्लभाः	९.	दुर्लभ हैं	वितरामि	१४.	देता हूँ
पुंसाम्	८.	जीवों के लिए	अङ्ग	२.	प्रिय !
यान्	३.	जिन	वरान्	११.	वर
वृणीषे	६.	माँगते हो	यदपि	१०.	यद्यपि (ये)
वरान्	४.	वरों को	दुर्लभान् ॥	१२.	दुर्लभ हैं ।

श्लोकार्थ—हे तात, प्रिय ! जिन वरों को मुझ से मांगते हो तो वे जीवों के लिए दुर्लभ हैं । यद्यपि ये वर दुर्लभ हैं । तो भी तुम्हें देता हूँ ॥

तृतीयः श्लोकः

ततो जगाम भगवानमोघानुग्रहो विभुः ।
पूजितोऽसुरवर्येण स्तूयमानः प्रजेश्वरैः ॥ ३ ॥

पदच्छेद— ततः जगाम भगवान् अमोघ अनुग्रहः विभुः ।
पूजितः असुरवर्येण स्तूयमानः प्रजेश्वरैः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	विभुः ।	९.	ब्रह्मा जी
जगाम	१०.	चले गये	पूजितः	३.	पूजित (और)
भगवान्	८.	भगवान्	असुरवर्येण	२.	दैत्यराज के द्वारा
अमोघ	६.	अगाध	स्तूयमानः	५.	स्तुति किये जाते हुए
अनुग्रहः	७.	कृपा करने वाले	प्रजेश्वरैः ॥	४.	प्रजापतियों के द्वारा

श्लोकार्थ—तदनन्तर दैत्यराज के द्वारा पूजित और प्रजापतियों से स्तुति किये जाते हुए अगाधकृपा करने वाले भगवान् ब्रह्मा जी चले गये ॥

चतुर्थः श्लोकः

एवं लब्धवरो दैत्यो बिभ्रद्धेममयं वपुः ।
भगवत्यकरोद् द्वेषं भ्रातुर्वधमनुस्मरन् ॥ ४ ॥

पदच्छेद— एवम् लब्धवरः दैत्यः बिभ्रत् हेममयम् वपुः ।
भगवति अकरोत् द्वेषम् भ्रातुः वधम् अनुस्मरन् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	भगवति	११.	भगवान् से
लब्धवरः	२.	वरदान पाकर	अकरोत्	१३.	करने लगा
दैत्यः	३.	हिरण्यकशिपु	द्वेषम्	१२.	द्वेष
बिभ्रत्	७.	धारण करता हुआ	भ्रातुः	८.	भाई के
हेम	४.	सुवर्ण	वधम्	९.	वध का
मयम्	५.	मय	अनुस्मरन् ॥	१०.	स्मरण करता हुआ
वपुः ।	६.	शरीर			

श्लोकार्थ—इस प्रकार वरदान पाकर हिरण्यकशिपु सुवर्णमय शरीर धारण करता हुआ भाई के वध का स्मरण करता हुआ भगवान् से द्वेष करने लगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

स विजत्य दिशः सर्वा लोकांश्च त्रीन् महासुरः ।
देवासुरमनुष्येन्द्रान् गन्धर्वगरुडोरगान् ॥ ५ ॥

पदच्छेद— सः विजित्य दिशः सर्वाः लोकान् च त्रीन् महासुरः ।
देव असुर मनुष्य इन्द्रान् गन्धर्व गरुड उरगान् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उस	महासुरः ।	२.	महादैत्य ने
विजित्य	१४.	जीतकर (वश में कर लिया)	देव	८.	देवता
दिशः	४.	दिशाओं को	असुर-मनुष्य	९.	असुर नरपति
सर्वाः	३.	सभी	इन्द्रान्	१०.	इन्द्र
लोकान्	७.	लोकों की	गन्धर्व	११.	गन्धर्व
च	५.	और	गरुड	१२.	गरुड (और)
त्रीन्	६.	तीनों	उरगान् ॥	१३.	सर्पों को

श्लोकार्थ—उस महादैत्य ने सभी दिशाओं को और तीनों लोकों के देवता, असुर, नरपति इन्द्र, गन्धर्व, गरुड और सर्पों को जीतकर वश में कर लिया ॥

षष्ठः श्लोकः

सिद्धचारणविद्याध्रानृषीन् पितृपतीन् मनून् ।
यक्षरक्षःपिशाचेशान् प्रेतभूतपतीनथ ॥ ६ ॥

पदच्छेद— सिद्ध चारण विद्याध्रान् ऋषीन् पितृ पतीन् मनून् ।
यक्ष-रक्षः पिशाच ईशान् प्रेत-भूत पतीन् अथ ॥

शब्दार्थ—

सिद्ध चारण	२.	सिद्ध चारण	यक्ष	८.	यक्ष
विद्याध्रान्	३.	विद्याधर	रक्षः	९.	राक्षस
ऋषीन्	४.	ऋषि	पिशाच ईशान्	१०.	पिशाचराज
पितृ	५.	पितरों के	प्रेत-भूत	११.	प्रेत और भूतों के
पतीन्	६.	अधिपति	पतीन्	१२.	पति (इन सब को जीत कर वश में कर लिया)
मनून् ।	७.	मनु	अथ ॥	१.	तदनन्तर ।

श्लोकार्थ—तदनन्तर उसने सिद्ध, चारण, विद्याधर, ऋषि, पितरों के अधिपति मनु, यक्ष, राक्षस, पिशाचराज, प्रेत और भूतों के पति इन सब को जीतकर वश में कर लिया ॥

सप्तमः श्लोकः

सर्वसत्त्वपतीञ्जित्वा वशमानीय विश्वजित् ।
जहार लोकपालानां स्थानानि सह तेजसा ॥७॥

पदच्छेद— सर्व सत्त्व पतीन् जित्वा वशम् आनीय विश्वजित् ।
जहार लोकपालानाम् स्थानानि सह तेजसा ॥

शब्दार्थ—

सर्व	१. सभी	**विश्वजित् ।**	७. विश्वविजयी (दैत्यराज ने)
सत्त्व	२. प्राणियों के	**जहार**	१२. हरणकर लिया
पतीन्	३. राजाओं को	**लोकपालानाम्**	८. लोकपालों के
जित्वा	४. जीतकर (और)	**स्थानानि**	९. स्थानों के
वशम्	५. वश में	**सह**	११. साथ
आनीय	६. करके	**तेजसा ॥**	१०. तेज के

श्लोकार्थ—सभी प्राणियों के राजाओं को जीतकर और वश में करके विश्वविजयी दैत्यराज हिरण्यकशिपु लोकपालों के स्थानों को तेज के साथ हरण कर लिया ॥

अष्टमः श्लोकः

देवोद्यानश्रिया जुष्टमध्यास्ते स्म त्रिविष्टपम् ।
महेन्द्रभवनं साक्षान्निर्मितं विश्वकर्मणा ।
त्रैलोक्यलक्ष्म्यायतनमध्युवासाखिलर्द्धिमत् ॥८॥

पदच्छेद— देव उद्यान श्रिया जुष्टम् अध्यास्ते स्म त्रिविष्टपम् ।
महेन्द्र भवनम् साक्षात् निर्मितम् विश्व कर्मणा ।
त्रैलोक्यलक्ष्मी आयतनम् अभ्युवास अखिल ऋद्धिमत् ॥

शब्दार्थ—

देव उद्यान	१. नन्दनवन की	**निर्मितम्**	९. बनाये गये ।
श्रिया	२. शोभा से	**विश्वकर्मणा**	७. विश्वकर्मा के द्वारा
जुष्टम्	३. युक्त	**त्रैलोक्य**	१०. तीनों लोक की
अध्यास्ते स्म	५. रहने लगा	**लक्ष्मी**	११. शोभा के
त्रिविष्टपम्	४. स्वर्ग में	**आयतनम्**	१०. स्थान
महेन्द्र	११. इन्द्र के	**अभ्युवास**	१५. निवास करने लगा
भवनम्	१२. भवन में वह	**अखिल**	१३. सम्पूर्ण
साक्षात्	८. स्वयम्	**ऋद्धिमत् ॥**	१४. सम्पत्तियों से सम्पन्न होकर

श्लोकार्थ—नन्दनवन की शोभा से युक्त स्वर्ग में रहने लगा । विश्वकर्मा के द्वारा स्वयम् बनाये गये तीनों लोक की शोभा के स्थान इन्द्र-भवन में वह सम्पूर्ण सम्पत्तियों से सम्पन्न होकर निवास करने लगा ॥

नवमः श्लोकः

यत्र विद्रुमसोपाना महामारकता भुवः।
यत्र स्फाटिककुड्यानि वैदूर्यस्तम्भपङ्क्तयः ॥९॥

पदच्छेद— यत्र विद्रुम सोपानाः महामारकताः भुवः।
यत्र स्फाटिक कुड्यानि वैदूर्य स्तम्भ पङ्क्तयः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१. जहाँ पर	यत्र	६. जहाँ
विद्रुम	२. मूंगे की	स्फाटिक	७. स्फटिक मणि की
सोपानाः	३. सीढ़ियाँ थीं	कुड्यानि	८. दोवारें थीं (तथा)
महामारकताः	४. पन्ने की	वैदूर्य	९. वैदूर्य मणि के
भुवः।	५. फर्शें थीं (और)	स्तम्भ	१०. खम्भों की
		पङ्क्तयः ॥	११. पंक्तियाँ थीं

श्लोकार्थ—जहाँ पर मूंगे की सीढ़ियाँ थीं। पन्ने की फर्शें थीं। और जहाँ स्फटिक मणि को दीवारें थीं तथा वैदूर्य मणि के खम्भों की पंक्तियाँ थीं ॥

दशमः श्लोकः

यत्र चित्रवितानानि पद्मरागासनानि च।
पयःफेननिभाः शय्या मुक्तादामपरिच्छदाः ॥१०॥

पदच्छेद— यत्र चित्र वितानानि पद्मराग आसनानि च।
पयः फेननिभाः शय्याः मुक्तादामः परिच्छदाः ॥

शब्दार्थं—

यत्र	१. जहाँ पर	पयः	७. दूध के
चित्र	२. रंग-बिरंगे	फेननिभाः	८. फेन के समान
वितानानि	३. चंदोवे	शय्याः	९. शय्यायें और
पद्मराग	५. माणिक्य के	मुक्तादाम	१०. मोतियों की
असनानि	६. आसन	परिच्छदाः ॥	११. झालरें लगी थीं
च।	४. और		

श्लोकार्थ—जहाँ पर रंग-बिरंगे चंदोवे और माणिक्य के आसन, दूध के फेन के समान शय्यायें और मोतियों की झालरें लगी थीं ॥

एकादशः श्लोकः

कूजद्भिर्नूपुरैर्देव्यः शब्दयन्त्य इतस्ततः ।
रत्नस्थलीषु पश्यन्ति सुदतीः सुन्दरं मुखम् ॥११॥

पदच्छेद— कूजद्भिः नूपुरैः देव्यः शब्दयन्त्यः इतः ततः ।
रत्न स्थलीषु पश्यन्ति सुदतीः सुन्दरम् मुखम् ॥

शब्दार्थ—

कूजद्भिः	१. बजते हुए	रत्न	८. रत्न के बने
नूपुरैः	१. नूपुरों से	स्थलीषु	६. स्थानो में (अपने)
देव्यः	७. देवियाँ	पश्यन्ति	१२. देखा करती थीं
शब्दयन्त्यः	५. शब्द करती हुई	सुदतीः	६. सुन्दर दाँतो वाली
इतः	३. इधर	सुन्दरम्	१०. सुन्दर
ततः ।	४. उधर	मुखम् ॥	११. मुख

श्लोकार्थ—बजते हुए नूपुरों से इधर-उधर शब्द करती हुई सुन्दर दाँतो वाली देवियाँ रत्न के बने स्थानों में अपने सुन्दर मुख को देखा करती थीं ॥

द्वादशः श्लोकः

तस्मिन्महेन्द्रभवने महाबलो महामना निर्जितलोक एकराट् ।
रेमेऽभिवन्द्याङ्घ्रियुगः सुरादिभिः प्रतापितैरूर्जितचण्डशासनः ॥१२॥

पदच्छेद— तस्मिन् महेन्द्र भवने महाबलः महामनाः निर्जित लोक एकराट् ।
रेमे अभिवन्द्य अङ्घ्रियुगः सुर आदिभिः प्रतापितैः ऊर्जित चण्ड शासनः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. उस	रेमे	१७. विहार करने लगा
महेन्द्र	२. इन्द्र के	अभिवन्द्य	१२. वन्दनीय
भवने	३. भवन में	अङ्घ्रियुगः	१३. दोनों चरण वाला
महाबलः	४. महाबलवान्	सुर	१०. देवता
महामनाः	५. महामनस्वी	आदिभिः	११. आदि के द्वारा
निर्जित	७. जीतने वाला	प्रतापितैः	६. सताये गये
लोक	६. सभी लोकों को	ऊर्जित	१६. बढ़ेहुयेघमंडवाला वह हिरण्यकशिपु)
एकराट् ।	८. एकछत्र राजा	चण्ड	१४. प्रचण्ड
		शासनः ॥	१५. शासन के द्वारा

श्लोकार्थ—उस इन्द्र के भवन में महाबलवान्, महामनस्वी, सभी लोकों को जीतने वाला एक छत्र राजा, सताये गये देवता आदि के द्वारा वन्दित दोनों चरण वाला, प्रचण्ड शासन के द्वारा बढ़े हुए घमंड वाला वह हिरण्यकशिपु विहार करने लगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

स एव वर्णाश्रमिभिः क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः ।
इज्यमानो हविर्भागानग्रहीत् स्वेन तेजसा ॥१५॥

पदच्छेद— स एव वर्णाश्रमिभिः क्रतुभिः भूरि दक्षिणैः ।
इज्यमानः हविः भागान् अग्रहीत् स्वेन तेजसा ।।

शब्दार्थ—

स एव	१. वही (हिरण्यकशिपु)	इज्यमानः	६. यज्ञ किये जाते हुए
वर्णाश्रमिभिः	५. वर्णश्रमधर्म के पालन करने वाले लोगों से	हविः	९. हवि के
क्रतुभिः	४. यज्ञों द्वारा	भागान्	१०. भागों को
भूरि	२. अधिक	अग्रहीत्	११. छीन लेता था
दक्षिणैः ।	३. दक्षिणा वाले	स्वेन	७. अपने
		तेजसा ।।	८. तेज से

श्लोकार्थ—वही हिरण्यकशिपु अधिक दक्षिणा वाले यज्ञों द्वारा वर्णाश्रम धर्म के पालन करने वाले लोगों के यज्ञ किये जाने पर अपने तेज से हवि के भागों को छीन लेता था ।।

षोडशः श्लोकः

अकृष्टपच्या तस्यासीत् सप्तद्वीपवती मही ।
तथा कामदुघा द्यौस्तु नानाश्चर्यपदं नभः ॥१६॥

पदच्छेद— अकृष्ट पच्या तस्य आसीत् सप्तद्वीपवती मही ।
तथा कामदुघा द्यौःतु नाना आश्चर्य पदम् नभः ।।

शब्दार्थ—

अकृष्ट	३. बिना जोते बोये	तथा	७. उसी प्रकार
पच्या	५. अन्न देती थी	कामदुघा	९. इच्छानुसार फल देने वाला था
तस्य	४. उसकी	द्यौःतु	८. अन्तरिक्ष
आसीत्	६. थी	नाना	११. अनेक प्रकार की
सप्तद्वीपवती	१. सातों द्वीप वाली	आश्चर्य	१२. आश्चर्यजनक वस्तुओं का
मही ।	२. पृथ्वी	पदम्	१३. स्थान था
		नभः ।।	१०. आकाश

श्लोकार्थ—सातों द्वीप वाली पृथ्वी बिना-जोते बोये उसको अन्न देती थी । उसी प्रकार अन्तरिक्ष इच्छानुसार फल देने वाला था । आकाश अनेक प्रकार की आश्चर्यजनक वस्तुओं का स्थान था ।।

सप्तदशः श्लोकः

रत्नाकराश्च रत्नौघांस्तत्पत्न्यश्चोहुरूर्मिभिः ।
क्षारसीधुघृतक्षौद्रदधिक्षीरामृतोदकाः ॥१७॥

पदच्छेद — रत्नाकाराः च रत्नौघान् तत् पत्न्यः च ऊहुः ऊर्मिभिः ।
क्षारसीधु घृतक्षौद्रदधिक्षीर अमृत उदकाः ॥

शब्दार्थ—

रत्नाकराः	८.	समुद्र	क्षारसीधु	१.	खारे जल सुरा
च	९.	और	घृत	२.	घी
रत्नौघान्	१३.	रत्नों के समूह को	क्षौद्र	३.	इक्षुरस
तत्	१०.	उसकी	दधि	४.	दधि
पत्न्यः च	११.	पत्नियाँ (नदियाँ)	क्षीर	५.	दूध और
ऊहुः	१४.	पहुँचा देते थे	अमृत	६.	मीठे
ऊर्मिभिः ।	१२.	तरंगों द्वारा (उसके पास)	उदकाः ॥	७.	जल वाले

श्लोकार्थ—खारे जल, सुरा, घी, इक्षुरस, दधि, दूध, और मीठे जल वाले समुद्र और उसकी पत्नियाँ नदियाँ तरंगों के द्वारा उसके पास रत्नों के समूह को पहुँचा देते थे ॥

अष्टादशः श्लोकः

शैला द्रोणीभिराक्रीडं सर्वर्तुषु गुणान् द्रुमाः ।
दधार लोकपालानामेक एव पृथग्गुणान् ॥१८॥

पदच्छेद— शैलाः द्रोणीभिः आक्रीडम् सर्वऋतुषु गुणान् द्रुमाः ।
दधार लोकपालानाम् एकः एव पृथक् गुणान् ॥

शब्दार्थ—

शैलाः	१.	पर्वत	दधार	१२.	धारण करता था
द्रोणीभिः	२.	घाटियों के द्वारा	लोकपालानाम्	९.	लोकपालों के
आक्रीडम्	३.	खेलने के स्थान (जुटाते थे)	एकः	७.	वह अकेला
सर्वऋतुषु	५.	सभी ऋतुओं में	एव	८.	ही
गुणान्	६.	फल-फूलों को देते थे	पृथक्	११.	अलग-अलग
द्रुमाः ।	४.	वृक्ष	गुणान् ॥	१०.	गुणों

श्लोकार्थ—पर्वत घाटियों के द्वारा खेलने के स्थान जुटाते थे । वृक्ष सभी ऋतुओं में फल-फूलों को देते थे । वह अकेला ही लोकपालों के गुणों को अलग-अलग धारण करता था ।

एकोनविंशः श्लोकः

स इत्थं निर्जितककुबेकराड् विषयान् प्रियान् ।
यथोपजोषं भुञ्जानो नातृप्यदजितेन्द्रियः ॥१९॥

पदच्छेद— स: इत्थम् निर्जित ककुभ् एकराट् विषयान् प्रियान् ।
यथा उपजोषम् भुञ्जानः न अतृप्यत् अजितेन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	यथा	८.	यथेच्छ
इत्थम्	२.	इस प्रकार	उपजोषम्	९.	आनन्द के साथ
निर्जित	४.	जीत लेने वाला	भुञ्जानः	१०.	भोग करता हुआ
ककुभ्	३.	दिशाओं को	न	११.	नहीं
एकराट्	५.	एक छत्र राजा	अतृप्यत्	१२.	तृप्त होता था (क्योंकि वह)
विषयान्	७.	विषयों को	अजितेन्द्रियः ॥	१३.	अजितेन्द्रिय था
प्रियान् ।	६.	प्रिय			

श्लोकार्थ—वह इस प्रकार दिशाओं को जीत लेने वाला एक छत्र राजा प्रियविषयों को यथेच्छ आनन्द के साथ भोग करता हुआ तृप्त नहीं होता था । क्योंकि वह अजितेन्द्रिय था ॥

विंशः श्लोकः

एवमैश्वर्यमत्तस्य दृप्तस्योच्छास्त्रवर्तिनः ।
कालो महान् व्यतीयाय ब्रह्मशापमुपेयुषः ॥२०॥

पदच्छेद— एवम् ऐश्वर्य मत्तस्य दृप्तस्य उच्छास्त्र वर्तिनः ।
कालः महान् व्यतीयाय ब्रह्म शापम् उपेयुषः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	कालः	११.	समय
ऐश्वर्य	२.	ऐश्वर्य से	महान्	१०.	बहुत सा
मत्तस्य	३.	मदमत्त	व्यतीयाय	१२.	व्यतीत हो गया
दृप्तस्य	४.	घमंड में चूर	ब्रह्म	७.	ब्राह्मणों के
उच्छास्त्र	५.	शास्त्र की मर्यादा का	शापम्	८.	शाप को
वर्तिनः ।	६.	उल्लंघन करने वाले	उपेयुषः ॥	९.	प्राप्त किये हुए (उसका)

श्लोकार्थ—इस प्रकार ऐश्वर्य से मदमत्त, घमंड में चूर, शास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन करने वाले, ब्राह्मणों के शाप को प्राप्त किये हुए उसका बहुत सा समय व्यतीत हो गया ॥

एकविंशः श्लोकः

तस्योग्रदण्डसंविग्नाः सर्वे लोकाः सपालकाः ।
अन्यत्रालब्धशरणाः शरणं ययुरच्युतम् ॥२१॥

पदच्छेद— तस्य उग्रदण्ड संविग्नाः सर्वे लोकाः सपालकाः ।
अन्यत्र अलब्ध शरणाः शरणम् ययुः अच्युतम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१. उसके	अन्यत्र	७. दूसरी जगह
उग्रदण्ड	२. कठोर शासन से	अलब्ध	६. न पाने से
संविग्नाः	३. घबड़ाये हुए	शरणाः	८. आश्रय
सर्वे	५. सभी	शरणम्	११. शरण में
लोकाः	६. लोक	ययुः	१२. गये
सपालकाः ।	४. लोकपालों के सहित	अच्युतम् ॥	१०. भगवान् की

श्लोकार्थ—उसके कठोर शासन से घबड़ाये हुये लोकपालों के सहित सभी लोक दूसरी जगह आश्रय न पाने से भगवान् की शरण में गये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तस्यै नमोऽस्तु काष्ठायै यत्रात्मा हरिरीश्वरः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते शान्ताः संन्यासिनोऽमलाः ॥२२॥

पदच्छेद— तस्यै नमः अस्तु काष्ठायै यत्र आत्मा हरिः ईश्वरः ।
यद् गत्वा न निवर्तन्ते शान्ताः संन्यासिनः अमलाः ॥

शब्दार्थ—

तस्यै	१. उस	यद्	९. जहाँ
नमः	३. नमस्कार	गत्वा	१०. जाकर
अस्तु	४. है	न	१४. नहीं
काष्ठायै	२. परमधाम को	निवर्तन्ते	१५. लौटते हैं
यत्र	५. जहाँ	शान्ताः	११. शान्त
आत्मा	६. परमात्मा	संन्यासिनः	१३. संन्यासी (महात्मा)
हरिः	७. हरि	अमलाः ॥	१२. निर्मल
ईश्वरः ।	८. ईश्वर (निवास करते हैं)		

श्लोकार्थ—उस परमधाम को नमस्कार है जहाँ परमात्मा श्री हरि ईश्वर निवास करते हैं और जहाँ जाकर शान्त, निर्मल, संन्यासी महात्मा नहीं लौटते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

इति ते संयतात्मानः समाहितधियोऽमलाः ।
उपतस्थुर्हृषीकेशं विनिद्रा वायुभोजनाः ॥२३॥

पदच्छेद— इति ते संयत आत्मानः समाहित धियः अमलाः ।
उपतस्थुः हृषीकेशम् विनिद्राः वायु भोजनाः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अमलाः ।	१०.	निर्मल होकर
ते	२.	वे देवता लोग	उपतस्थुः	१२.	आराधना करने लगे
संयत	४.	संयम में करके	हृषीकेशम्	११.	भगवान् श्री हरि की
आत्मानः	३.	मन को	विनिद्राः	७.	निद्रारहित होकर
समाहित	५.	समाहित	वायु	८.	वायु का
धियः	६.	चित्त एवम्	भोजनाः ॥	९.	भोजन करते हुए

श्लोकार्थ—इस प्रकार वे देवता लोग मन को संयम में करके समाहित चित्त एवम् निद्रा रहित होकर वायु का भोजन करते हुए निर्मल होकर भगवान् श्री हरि की आराधना करने लगे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तेषामाविरभूद्वाणी अरूपा मेघनिस्वना ।
सन्नादयन्ती ककुभः साधूनामभयङ्करी ॥२४॥

पदच्छेद— तेषाम् आविः अभूत् वाणी अरूपा मेघ निस्वना ।
सन्नादयन्ती ककुभः साधूनाम् अभयङ्करी ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	१.	उन्हें	निस्वना ।	४.	गम्भीर
आविः	१०.	प्रकट	सन्न दयन्ती	८.	शब्दाय मान करती हुई
अभूत्	११.	हुई	ककुभः	७.	दिशाओं को
वाणी	९.	वाणी	साधूनाम्	५.	साधुओं को
अरूपा	२.	रूप रहित	अभयङ्करी ॥	६.	अभय देने वाली
मेघ	३.	मेघ के समान			

श्लोकार्थ—उन्हें रूप रहित मेघ के समान गम्भीर, साधुओं को अभय देने वाली दिशाओं को शब्दायमान करती हुई रूप रहित वाणी प्रकट हुई ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

मा भैष्ट विबुधश्रेष्ठाः सर्वेषां भद्रमस्तु वः ।
मद्दर्शनं हि भूतानां सर्वश्रेयोपपत्तये ॥२५॥

पदच्छेद— मा भैष्ट विबुध श्रेष्ठाः सर्वेषाम् भद्रम् अस्तु वः ।
मत् दर्शनम् हि भूतानाम् सर्वश्रेय उपपत्तये ॥

शब्दार्थ—

मा	३. मत		वः ।	५. आप
भैष्ट	४. डरो		मत्	९. मेरा
विबुध	२. हे देवताओं में		दर्शनम्	१०. दर्शन
श्रेष्ठाः	१. श्रेष्ठो !		हि	११. निश्चितरूप से
सर्वेषाम्	६. सब लोगों का		भूतानाम्	१२. प्राणियों के
भद्रम्	७. कल्याण		सर्वश्रेयः	१३. सभी कल्याण की
अस्तु	८. हो		उपपत्तये ॥	१४. प्राप्ति के लिए (होता है)

श्लोकार्थ—हे देवताओं में श्रेष्ठो ! मत डरो । आप सब लोगों का कल्याण हो । मेरा दर्शन निश्चितरूप से प्राणियों के सभी कल्याण की प्राप्ति के लिए होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

ज्ञातमेतस्य दौरात्म्यं दैतेयापसदस्य च ।
तस्य शान्तिं करिष्यामि कालं तावत्प्रतीक्षत ॥२६॥

पदच्छेद— ज्ञातम् एतस्य दौरात्म्यम् दैतेय अपसदस्य च ।
तस्य शान्तिम् करिष्यामि कालम् तावत् प्रतीक्षत ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातम्	५. जान लिया है		तस्य	७. उसकी
एतस्य	१. इस		शान्तिम्	८. शान्ति
दौरात्म्यम्	४. दुष्टता को		करिष्यामि	९. करूँगा
दैतेय	३. दैत्य को		कालम्	११. समय की
अपसदस्य	२. नीच		तावत्	१०. तब-तक
च ।	६. और		प्रतीक्षत ॥	१२. प्रतीक्षा करो

श्लोकार्थ—इस नीच दैत्य की दुष्टता को जान लिया है और उसकी शान्ति करूँगा । तब-तक समय की प्रतीक्षा करो ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु ।
धर्मे मयि च विद्वेषः स वा आशु विनश्यति ॥२७॥

पदच्छेद— यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु ।
धर्मे मयि च विद्वेषः सः वै आशु विनश्यति ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	धर्मे	८.	धर्म
देवेषु	२.	देवता	मयि	९.	मुझसे
वेदेषु	३.	वेद	च	७.	और
गोषु	४.	गाय	विद्वेषुः	१०.	द्वेष करता है (तब)
विप्रेषः	५.	ब्राह्मण	सः व	११.	वह निश्चितरूप से
साधुषु ।	६.	साधु	अशु	१२.	शीघ्र
			विनश्यति ॥	१३.	नष्ट हो जाता है

श्लोकार्थ—जब देवता, वेद, गाय, ब्राह्मण, साधु धर्म और मुझसे द्वेष करता है तब वह निश्चित रूप से शीघ्र नष्ट हो जाता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

निर्वैराय प्रशान्ताय स्वसुताय महात्मने ।
प्रह्लादाय यदा द्रुह्येद्धनिष्येऽपि वरोर्जितम् ॥२८॥

पदच्छेद— निर्वैराय प्रशान्ताय स्वसुताय महात्मने ।
प्रह्लादाय यदा द्रुह्येत् हनिष्ये अपि वर ऊर्जितम् ॥

शब्दार्थ—

निर्वैराय	१.	वैर हीन	द्रुह्येत्	७.	द्रोह करेगा (तब मैं)
प्रशान्ताय	२.	अत्यन्तशान्त	हनिष्ये	११.	मार डालूँगा
स्वसुताय	४.	अपने पुत्र	अपि	१०.	भी (उसे)
महात्मने	३.	महात्मा	वर	८.	वर से
प्रह्लादाय	५.	प्रह्लाद से	ऊर्जितम् ॥	९.	शक्ति सम्पन्न होने पर
यदा ।	६.	जब			

श्लोकार्थ—वैर हीन, अत्यन्त शान्त महात्मा अपने पुत्र प्रह्लाद से जब द्रोह करेगा तब मैं वर से शक्ति सम्पन्न होने पर भी उसे मार डालूंगा ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

नारद उवाच—इत्युक्ता लोकगुरुणा तं प्रणम्य दिवौकसः।
न्यवर्तन्त गतोद्वेगा मेनिरे चासुरं हतम् ॥२९॥

पदच्छेद— इति उक्ताः लोक गुरुणा तम् प्रणम्य दिवौकसः।
न्यवर्तन्त गत उद्वेगः मेनिरे च असुरम् हतम् ॥

शब्दार्थ -

इति	३.	इस प्रकार	न्यवर्तन्त	८.	लौट आये
उक्ताः	४.	कहे जाने पर	गत	११.	रहित होकर (उस)
लोक	१.	लोकों के	उद्वेगाः	१०.	उद्वेग
गुरुणा	२.	गुरु भगवान् के द्वारा	मेनिरे	१४.	मानने लगे
तम्	६.	उनको	च	९.	और
प्रणम्य	७.	प्रणाम करके	असुरम्	१२.	असुर को
दिवौकसः।	५.	देवता लोग	हतम् ॥	१३.	मरा हुआ

श्लोकार्थ—लोकों के गुरु भगवान् के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर देवता लोग उनको प्रणाम करके लौट आये और उद्वेग रहित होकर उस असुर को मरा हुआ मानने लगे ॥

त्रिंशः श्लोकः

तस्य दैत्यपतेः पुत्राश्चत्वारः परमाद्भुताः।
प्रह्लादोऽभून्महांस्तेषां गुणैर्महदुप सकः ॥३०॥

पदच्छेद— तस्य दैत्यपतेः पुत्राश्चत्वारः परमाद्भुताः।
प्रह्लादः अभूत् महान् तेषाम् गुणैः महत् उपासकः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उस	प्रह्लादः	८.	प्रह्लाद
दैत्यपतेः	२.	दैत्यराज के	अभूत्	११.	हुए (वे)
पुत्राः	६.	पुत्र	महान्	१०.	महान्
चत्वारः	५.	चार	तेषाम्	७.	उनमें
परम	३.	परम	गुणैः	९.	गुणों के कारण
अद्भुताः।	४.	विलक्षण	महत्	१२.	भगवान् के
			उपासकः ॥	१३.	उपासक थे

श्लोकार्थ—उस दैत्यराज के परम विलक्षण चार पुत्र थे। उनमें प्रह्लाद गुणों के कारण महान् हुये। वे भगवान् के उपासक थे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्मण्यः शीलसम्पन्नः सत्यसन्धो जितेन्द्रियः।
आत्मवत्सर्वभूतानामेकः प्रियसुहृत्तमः ॥३१॥

पदच्छेद— ब्रह्मण्यः शील सम्पन्नः सत्यसन्धः जितेन्द्रियः।
आत्मवत् सर्वभूतानाम् एकः प्रिय सुहृत्तमः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मण्यः	१. ब्राह्मणभक्त (वे)	आत्मवत्	६. आत्मा के समान
शील	२. शील से	सर्व	७. सभी
सम्पन्नः	३. युक्त	भूतानाम्	८. प्राणियों के
सत्यसन्धः	४. सत्यप्रतिज्ञ	एकः	९. एकमात्र
जितेन्द्रियः।	५. जितेन्द्रिय	प्रिय	१०. प्रिय
		सुहृत्तमः ॥	११. बन्धु थे

श्लोकार्थ—वे ब्राह्मणभक्त, शील से युक्त, सत्यप्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय, आत्मा के समान सभी प्राणियों के एक मात्र प्रिय बन्धु थे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

दासवत्संनतार्याङ्घ्रिः पितृवद्दीनवत्सलः।
भ्रातृवत्सदृशे स्निग्धो गुरुष्वीश्वरभावनः।
विद्यार्थरूपजन्माढ्यो मानस्तम्भविवर्जितः ॥३२॥

पदच्छेद— दासवत् संनत आर्य अङ्घ्रिः पितृवत् दीन वत्सलः।
भ्रातृवत् सदृशे स्निग्धः गुरुषु ईश्वर भावनः।
विद्या अर्थ रूप जन्मआढ्यः मान स्तम्भ विवर्जितः ॥

शब्दार्थ—

दासवत्	३. दास के समान	गुरुषु	११. गुरुजनों के प्रति
संनत	४. झुके रहने वाले	ईश्वर	१२. भगवत्
आर्य	१. श्रेष्ठ पुरुषों के	भावनः।	१३. भाव रखने वाले
अङ्घ्रिः	२. चरणों में	विद्या	१४ विद्या
पितृवत्	६. पिता के समान	अर्थ	१५. धन
दीन	५. दीनों के प्रति	रूप	१६. सौन्दर्य (और)
वत्सलः।	७. स्नेह रखने वाले	जन्माढ्यः	१७. कुलीनता से सम्पन्न (तथा)
भ्रातृवत्	९. भाई के समान	मान	१८. मान (और)
सदृशे	८. समान लोगों से	स्तम्भ	१९. मद से
स्निग्धः	१०. स्नेह रखने वाले (और)	विवर्जितः ॥	२०. रहित थे

श्लोकार्थ—श्रेष्ठ पुरुषों के चरणों में दास के समान झुके रहने वाले, दीनों के प्रति पिता के समान स्नेह रखने वाले, समान लोगों से भाई के समान स्नेह रखने वाले और गुरुजनों के प्रति भगवत्-भाव रखने वाले विद्या, धन, सौन्दर्य और कुलीनता से सम्पन्न तथा मान और मद से रहित थे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

नोद्विग्नचित्तो व्यसनेषु निःस्पृहः श्रुतेषु दृष्टेषु गुणेष्ववस्तुदृक् ।
दान्तेन्द्रियप्राणशरीरधीः सदा प्रशान्तकामो रहितासुरोऽसुरः ॥३३॥

पदच्छेद— न उद्विग्न चित्तः व्यसनेषु निःस्पृहः श्रुतेषु दृष्टेषु गुणेषु अवस्तु दृक् ।
दान्त इन्द्रिय प्राण शरीरधीः सदा प्रशान्तकामः रहित आसुरः असुरः ॥

शब्दार्थ—

न	२. रहित	**दान्त**	१४. वश में किये हुए
उद्विग्न	१. उद्वेग से	**इन्द्रिय**	११. इन्द्रिय
चित्तः	३. मन वाले	**प्राण**	१२. प्राण
व्यसनेषु	४. व्यसनों के प्रति	**शरीरधीः**	१३. शरीर और बुद्धि को
निःस्पृहः	५. इच्छा से रहित	**सदा**	१५. सर्वदा
श्रुतेषु	६. सुने हुए	**प्रशान्तकामः**	१६. निष्काम और
दृष्टेषु	७. देखे हुए	**रहित**	१९. रहित थे
गुणेषु	८. वस्तुओं को	**आसुरः**	१८. आसुरी भाव से
अवस्तु	९. निःसार	**असुरः ॥**	१७. असुर होने पर
दृक् ।	१०. समझने वाले		

श्लोकार्थ—वे उद्वेग से रहित, मन लाले व्यसनों के प्रति इच्छा से रहित, सुने हुए और देखे हुए को निस्सार समझने वाले, इन्द्रिय, प्राण, शरीर बुद्धि को वश में किए हुए, सर्वदा निष्काम और असुर होने पर भी आसुरी भाव से रहित थे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यस्मिन्महद्गुणा राजन् गृह्यन्ते कविभिर्मुहुः ।
न तेऽधुनापि धीयन्ते यथा भगवतीश्वरे ॥३४॥

पदच्छेद— यस्मिन् महत् गुणाः राजन् गृह्यन्ते कविभिः मुहुः ।
न ते अधुना अपि धीयन्ते यथा भगवति ईश्वरे ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	२. जिस (प्रह्लाद के)	**न**	११. नहीं हैं
महत्	३. महान्	**ते**	८. वे गुण
गुणाः	४. गुण	**अधुना अपि**	९. आज भी
राजन्	१. हे राजन्	**धीयन्ते**	१०. छिपे
गृह्यन्ते	७. गायन किये जाते हैं	**यथा**	१२. जैसे
कविभिः	५. विद्वानों द्वारा	**भगवति**	१३. भगवान्
मुहुः ।	६. बार-बार	**ईश्वरे ॥**	१४. हरि के गुण (छिपे नहीं रहते है)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जिस प्रह्लाद के महान् गुण विद्वानों के द्वारा बार-बार गायन किये जाते है, वे गुण आज भी छिपे नहीं हैं जैसे भगवान् हरि के गुण छिपे नहीं रहते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यं साधुगाथासदसि रिपवोऽपि सुरा नृप।
प्रतिमानं प्रकुर्वन्ति किमुतान्ये भवादृशाः ॥३५॥

पदच्छेद— यम् साधु गाथा सदसि रिपवः अपि सुराः नृप।
प्रतिमानम् प्रकुर्वन्ति किमुत अन्ये भवा दृशाः ॥

शब्दार्थ—

यम्	८.	जिनकी	नृप।	१.	हे राजन्
साधु	२.	सज्जन पुरुषों के	प्रतिमानम्	९.	उपमा
गाथा	३.	चरित्र गायन की	प्रकुर्वन्ति	१०.	देते है (उनके लिए)
सदसि	४.	सभा में	किमुत	१४.	क्या (कहना है)
रिपवः	६.	शत्रु	अन्ये	१३.	दूसरे लोगों के लिए
अपि	७.	भी	भवा	११.	आप
सुराः	५.	देव	दृशाः ॥	१२.	जैसे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सज्जन पुरुषों के चरित्र गायन की सभा में देव शत्रु भी जिनकी उपमा देते हैं। उनके लिए आप जैसे दूसरे लोगों का क्या कहना है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

गुणैरलमसंख्येयैर्माहात्म्यं तस्य सूच्यते।
वासुदेवे भगवति यस्य नैसर्गिकी रतिः ॥३६॥

पदच्छेद— गुणैः अलम् असंख्येयैः माहात्म्यम् तस्य सूच्यते।
वासुदेवे भगवति यस्य नैसर्गिकी रतिः ॥

शब्दार्थ—

गुणैः	२.	गुणों के कारण	वासुदेवे	९.	श्रीकृष्ण में
अलम्	६.	आवश्यकता नहीं हैं (क्योंकि)	भगवति	८.	भगवान्
असंख्येयैः	१.	असंख्य	यस्य	७.	उनका
माहात्म्यम्	४.	महिमा को	नैसर्गिकी	१०.	स्वाभाविक
तस्य	३.	उनकी	रतिः ॥	११.	अनुराग है
सूच्यते।	५.	बताने की			

श्लोकार्थः—प्रह्लाद के असंख्य गुणों के कारण उनकी महिमा को बताने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि उनका भगवान् श्रीकृष्ण में स्वाभाविक अनुराग है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

न्यस्तक्रीडनको बालो जडवत्तन्मनस्तया ।
कृष्णग्रहगृहीतात्मा न वेद जगदीदृशम् ॥३७॥

पदच्छेद— न्यस्तक्रीडनकः बालः जडवत् तन्मनस्तया ।
कृष्ण ग्रह गृहीत आत्मा न वेद जगद् ईदृशम् ॥

शब्दार्थ—

न्यस्त	२.	छोड़ देने वाले	गृहीत	८.	ग्रस्त
क्रीडनकः	१.	खेल-कूद को	आत्मा	९.	हृदय वाले वे
बालः	३.	बालक (प्रह्लाद)	न	१२.	नहीं
जडवत्	५.	जड के समान हो (जाया करते थे और)	वेद	१३.	जानते थे
तन्मनस्तया	४.	भगवान् के ध्यान में तन्मय होने से	जगद्	११.	संसार को
कृष्ण	६.	भगवान् श्रीकृष्ण रूपी	ईदृशम् ॥	१०.	इस प्रकार
ग्रह ।	७.	ग्रह से			

श्लोकार्थ—खेल-कूद को छोड़ देने वाले ब.लक प्रह्लाद भगवान् के ध्यान में तन्मय होने से जड से समान हो जाया करते थे और भगवान् श्री कृष्णरूपी ग्रह से ग्रस्त हृदय वाले वे इस प्रकार संसार को नहीं जानते थे ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

आसीनः पर्यटन्नश्नन् शयानः प्रपिबन् ब्रुवन् ।
नानुसन्धत्त एतानि गोविन्दपरिरम्भितः ॥३८॥

पदच्छेद— आसीनः पर्यटन् अश्नन् शयानः प्रपिबन् ब्रुवन् ।
न अनुसन्धत्त एतानि गोविन्द परिरम्भितः ॥

शब्दार्थ—

आसीनः	३.	बैठते	ब्रुवन्	८.	बोलते
पर्यटन्	४.	चलते-फिरते	न	११.	नहीं रखते थे
अश्नन्	५.	खाते	अनुसन्धत्त	१०.	ध्यान
शयानः	६.	सोते	एतानि	९.	इन वस्तुओं का
प्रपिबन् ।	७.	पीते	गोविन्द	१.	भगवान् गोविन्द के द्वारा अपने को
			परिरम्भितः ॥	२.	आलिङ्गित समझने वाले प्रह्लाद

श्लोकार्थ—भगवान् गोविन्द के द्वारा अपने को आलिङ्गित समझने वाले प्रह्लाद जी बैठते, चलते, फिरते, खाते सोते, पीते, बोलते, इन वस्तुओं का ध्यान नहीं रखते थे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

क्वचिद्रुदति वैकुण्ठचिन्ताशबलचेतनः ।
क्वचिद्धसति सच्चिन्ताह्लाद उद्गायति क्वचित् ।।३९।।

पदच्छेद— क्वचित् रुदति वैकुण्ठ चिन्ता शबल चेतनः ।
क्वचित् हसति सत् चिन्ता आह्लाद उद्गायति क्वचित् ।।

शब्दार्थ—

क्वचित्	५.	कहीं	**क्वचित्**	७.	कहीं
रुदति	६.	रोते थे (और)	**हसति**	८.	हंसते थे
वैकुण्ठ	१.	भगवान् श्री हरि के	**सत्चिन्ता**	९.	सम्यक् ध्यान के कारण
चिन्ता	२.	चिन्तन में	**आह्लाद**	१०.	आन्दातिरेक से
शबल	३.	लीन	**उद्गायति**	१२.	जोर-जोर से गाते थे
चेतनः ।	४.	चित्त वाले (प्रह्लाद)	**क्वचित् ।।**	११.	कहीं

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के चिन्तन में लीन चित्त वाले प्रह्लाद कहीं रोते थे, कहीं हंसते थे और सम्यक् ध्यान के कारण आनन्दातिरेक से कहीं जोर-जोर से गाते थे ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

नदति क्वचिदुत्कण्ठो विलज्जो नृत्यति क्वचित् ।
क्वचित्तद्भावनायुक्तस्तन्मयोऽनुचकार ह ।।४०।।

पदच्छेद— नदति क्वचित् उत्कण्ठः विलज्जः नृत्यति क्वचित् ।
क्वचित् तद् भावनायुक्तः तत्मयः अनुचकार ह ।।

शब्दार्थ—

नदति	३.	चिल्ला पड़ते थे	**क्वचित्**	७.	कहीं
क्वचित्	१.	कहीं	**तद्**	८.	उनको
उत्कण्ठः	२.	उत्सुक होकर	**भावनायुक्तः**	९.	भावना से युक्त होने से
विलज्जः	५.	निर्लज्ज होकर	**तत्मयः**	१०.	तन्मय होकर (उनका)
नृत्यति	६.	नाचने लगते थे (और)	**अनुचकार**	११.	अनुकरण करने लगते थे
क्वचित्।	४.	कहीं	**ह ।।**		

श्लोकार्थ—कहीं उत्सुक होकर चिल्ला पड़ते थे, कहीं निर्लज्ज होकर नाचते चलते थे और कहीं उनकी भावना से तन्मय होकर उन भगवान् का अनुकरण करने लगते थे ।।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

क्वचिदुत्पुलकस्तूष्णीमास्ते संस्पर्शनिर्वृतः ।
अस्पन्दप्रणयानन्दसलिलामीलितेक्षणः ॥४१॥

पदच्छेद— क्वचित् उत्पुलकः तूष्णीम् आस्ते संस्पर्श निर्वृतः ।
अस्पन्द प्रणय आनन्द सलिल आमीलित ईक्षणः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	३.	कहीं	**अस्पन्द**	७.	निश्चल
उत्पुलकः	४.	रोमाञ्चित होकर	**प्रणय**	८.	प्रेम और
तूष्णीम्	५.	चुप हो जाते	**आनन्द**	९.	आनन्द के
आस्ते	६.	थे	**सलिल**	१०.	आँसुओं से (उनकी)
संस्पर्श	१.	भगवान् के स्पर्श से	**आमीलित**	११.	अधखुली
निर्वृतः ।	२.	आनन्दित होकर	**ईक्षणः ॥**	१२.	आँखें भर जाती थीं ।

श्लोकार्थ—भगवान् के स्पर्श से आनन्दित होकर कहीं रोमाञ्चित होकर चुप हो जाते थे । निश्छल प्रेम और आनन्द के आँसुओं से (उनकी) अधखुली आँखें भर जाती थीं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

स उत्तमश्लोकपदारविन्दयोर्निषेवयाकिञ्चनसङ्गलब्धया ।
तन्वन् परां निर्वृतिमात्मनो मुहुर्दुःसङ्गदीनान्यमनःशमं व्यधात् ॥४२॥

पदच्छेद—**सः उत्तमश्लोक पदारविन्दयोः निषेवया अकिञ्चन सङ्ग लब्धया ।**
तन्वन् पराम् निर्वृतिम् आत्मनः मुहुः दुःसङ्ग दीन अन्यमनः शमम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे (प्रह्लाद)	**निर्वृतिम्**	९.	आनन्द
उत्तमश्लोक	५.	भगवान् के	**आत्मनः**	८.	अपना
पदारविन्दयोः	६.	चरणारविन्दों की	**मुहुः**	१५.	बार-बार
निषेवया	७	सेवा से	**दुःसङ्ग**	१२.	कुसङ्ग से
अकिञ्चन	२.	अकिञ्चन भक्तों की	**दीन**	१३.	दीन बने हुए
सङ्ग	३.	संगति से	**अन्यमनः**	१४.	दूसरे के मन को भी
लब्धया ।	४.	प्राप्त	**शमम्**	१६.	शान्ति
तन्वन्	११.	बढ़ाते हुए	**व्यधात् ॥**	१७.	प्रदान करते थे
पराम्	१०.	अत्यन्त			

श्लोकार्थ—वे प्रह्लाद जी अकिञ्चन भक्तों की संगति से प्राप्त भगवान् के चरणारविन्दों की सेवा से अपना आनन्द अत्यन्त बढ़ाते हुए, । कुसङ्ग से दीन बने हुए दूसरों के मन को भी बार-बार शान्ति प्रदान करते थे ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

तस्मिन्महाभागवते महाभागे महात्मनि ।
हिरण्यकशिपू राजन्नकरोदघमात्मजे ॥४३॥

पदच्छेद— तस्मिन् महा भागवते महाभागे महात्मनि ।
हिरण्यकशिपुः राजन् अकरोत् अघम् आत्मजे ॥

शब्दार्थ —

तस्मिन्	२. उस	हिरण्यकशिपुः	८. हिरण्यकशिपु
महा	३. महान्	राजन्	१. हे राजन् !
भागवते	४. भगवान् भक्त	अकरोत्	१०. करने लगा
महाभागे	५. महाभाग्यशाली	अघम्	९. पापाचार
महात्मनि ।	६. महात्मा	आत्मजे ॥	७. पुत्र के प्रति

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस महान् भगद् भक्तमहाभाग्यशाली महात्मा पुत्र के प्रति हिरण्यकशिपु पापाचार करने लगा ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

युधिष्ठिर उवाच—देवर्ष एतदिच्छामो वेदितुं तव सुव्रत ।
यदात्मजाय शुद्धाय पितादात् साधवे ह्यघम् ॥४४॥

पदच्छेद— देवर्षे एतत् इच्छामः वेदितुम् तव सुव्रत ।
यत् आत्मजाय शुद्धाय पिता अदात् साधवे हि अघम् ॥

शब्दार्थ—

देवर्षे	२. देवर्षि नारद ! (हम)	**यत् आत्मजाय**	९. पुत्र के प्रति
एतत्	४. यह	**शुद्धाय**	७. पवित्र
इच्छामः	६. चहते हैं (कि)	**पिता**	१०. पिता ने
वेदितुम्	५. जानना	**अदात्**	१२. क्यों किया
तव	३. आप से	**साधवे**	८. महात्मा
सुव्रत ।	१. हे उत्तम वृत्ति वाले	**हि अघम् ॥**	११. पापाचार

श्लोकार्थ—हे उत्तम वृत्ति वाले देवर्षि नारद ! हम आप से यह जानना चाहते हैं कि पवित्र महात्मा पुत्र के प्रति पिता ने पापाचार क्यों किया ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

पुत्रान् विप्रतिकूलान् स्वान् पितरः पुत्रवत्सलाः ।
उपालभन्ते शिक्षार्थं नैवाघमपरो यथा ॥४५॥

पदच्छेद— पुत्रान् विप्रतिकूलान् स्वान् पितरः पुत्र वत्सलाः ।
उपालभन्ते शिक्षार्थम् न एव अघम् अपरः यथा ॥

शब्दार्थ—पुत्रान्	३.	पुत्रों को	उपालभन्ते	८.	डाँटते फटकारते हैं
विप्रतिकूलान्	१.	प्रतिकूल आचरण करनेवाले	शिक्षार्थम्	७.	शिक्षा के लिए
स्वान्	२.	अपने	न एव	९.	न कि
पितरः	६.	पिता	अघम्	१२.	पापाचार करते हैं
पुत्र	४.	पुत्र	अपरः	१०.	शत्रु के
वत्सलाः ।	५.	प्रेमी	यथा ॥	११.	समान

श्लोकार्थ—प्रतिकूल आचरण करने वाले अपने पुत्रों को पुत्र प्रेमी पिता शिक्षा के लिए डाँटते-फटकारते हैं न कि शत्रु के समान पापाचार करते हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

किमुतानुवशान् साधूंस्तादृशान् गुरुदेवतान् ।
एतत् कौतूहलं ब्रह्मन्नस्माकं विधम प्रभो ।
पितुः पुत्राय यद् द्वेषो मारणाय प्रयोजितः ॥४६॥

पदच्छेद— किमुत अनुवशान् साधून् तादृशान् गुरु देवतान् ।
एतत् कौतूहलम् ब्रह्मन् अस्माकम् विधम प्रभो ।
पितुः पुत्राय यत् द्वेषः मारणाय प्रयोजितः ॥

शब्दार्थ—किमुत	५.	कैसे (द्वेष हो सकता है)	अस्माकम्	१३.	हमारे
अनुवशान्	१.	वश में रहने वाले	विधम	१६.	शान्त करें
साधून्	४.	महात्मा (पुत्रों से पिता को)	प्रभो ।	१२.	हे प्रभो !
तादृशान्	३.	वैसे	पितुः	८.	पिता को
गुरुदेवतान् ।	२.	गुरुजनों को देवता के (समान मानने वाले)	पुत्राय	९.	पुत्र को
एतत्	१४.	इस	यत्	६.	जिस
कौतूहलम्	१५.	कौतूहल को	द्वेषः	७.	द्वेष ने
ब्रह्मन्	१२.	नारद जी	मारणाय	१०.	मारने के लिए
			प्रयोजितः ॥	११.	प्रेरित किया

श्लोकार्थ— वश में रहने वाले, गुरुजनों को देवता के समान मानने वाले वैसे महात्मा पुत्रों से पिता को कैसे द्वेष हो सकता है । जिस द्वेष ने पिता को पुत्र को मारने के लिए प्रेरित किया । हे प्रभो ! (नारद जी) हमारे इस कौतूहल को आप शान्त करें ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे
प्रह्लाद-चरिते चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—पौरोहित्याय भगवान् वृतः काव्यः किलासुरैः।
शण्डामर्कौ सुतौ तस्य दैत्यराजगृहान्तिके॥ १॥

पदच्छेद — पौरोहित्याय भगवान् वृतः काव्यः किल असुरैः।
शण्डामर्कौ सुतौ तस्य दैत्यराज गृह अन्तिके।।

शब्दार्थ—

पौरोहित्याय	५.	पुरोहित	**शण्डामर्कौ**	९.	शण्ड और अमर्क
भगवान्	३.	ऐश्वर्यशाली	**सुतौ**	८.	दो पुत्र
वृतः	६.	बनाया था	**तस्य**	७.	शुक्राचार्य के
काव्यः	४.	शुक्राचार्य के	**दैत्यराज**	१०.	हिरण्यकशिपु के
किल	१.	पूर्वकाल में	**गृह**	११.	महल के
असुरैः।	२.	दैत्यों ने	**अन्तिके।।**	१२.	पास में रहते थे

श्लोकार्थ--पूर्वकाल में दैत्यों ने ऐश्वर्यशाली शुक्राचार्य को पुरोहित बनाया था। उस शुक्राचार्य के दो पुत्र शण्ड और अमर्क हिरण्यकशिपु के महल के पास रहते थे।

द्वितीयः श्लोकः

तौ राज्ञा प्रापितं बालं प्रह्लादं नयकोविदम्।
पाठयामासतुः पाठ्यानन्यांश्चासुरबालकान्॥ २॥

पदच्छेद— तौ राज्ञा प्रपितं बालम् प्रह्लादम् नयकोविदम्।
पाठयामासतुः-पाठ्यान् अन्यान् च असुर बालकान्।।

शब्दार्थ—

तौ	१.	वे दोनों	**पाठयामासतुः**	१२.	पढ़ाने लगे
राज्ञा	२.	राजा के	**पाठ्यान्**	९.	पढ़ाने योग्य
प्रापितम्	३.	भेजे हुए	**अन्यान्**	८.	दूसरे
बालम्	५.	बालक	**च**	७.	और
प्रह्लादम्	६.	प्रह्लाद को	**असुर**	१०.	दैत्य
नयकोविदम्।	४.	राजनीति को जानने वाले	**बालकान्।।**	११.	बालकों को भी

श्लोकार्थ —वे दोनों राजा के भेजे हुए राजनीति के जानने वाले बालक प्रह्लाद को और दूसरे पढ़ाने योग्य दैत्य बालकों को भी पढ़ाने लगे।।

तृतीयः श्लोकः

यत्तत्र गुरुणा प्रोक्तं शुश्रुवेऽनु पपाठ च।
न साधु मनसा मेने स्वपरासद्ग्रहाश्रयम् ॥३॥

पदच्छेद— यत् तत्र गुरुणा प्रोक्तम् शुश्रुवे अनुपपाठ च।
न साधु मनसा मेने स्वपर असद्ग्रह आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जो	न साधु	९.	नहीं अच्छा
तत्र	२.	वहाँ	मनसा	८.	(किन्तु वे उस पाठ को) मन से
गुरुणा	३.	गुरु	मेने	१०.	मानते थे (क्योंकि वह पाठ)
प्रोक्तम्	४.	पढ़ाते थे (उसे वे)	स्वपर	११.	अपने पराये के
शुश्रुवे	५.	सुन लेते थे	असद्ग्रह	१२.	मिथ्या आग्रह से
अनुपपाठ	७.	पढ़े हुए विषय को सुना भी देते थे	आश्रयम् ॥	१३.	युक्त था
च।	६.	और			

श्लोकार्थ—जो वहाँ गुरु पढ़ाते थे, उसे वे सुन लेते थे और पढ़े हुए विषय को सुना भी देते थे। किन्तु वे उस पाठ को मन से अच्छा नहीं मानते थे, क्योंकि वह पाठ अपने पराये के मिथ्या आग्रह से युक्त था॥

चतुर्थः श्लोकः

एकदासुरराट् पुत्रमङ्कमारोप्य पाण्डव।
पप्रच्छ कथ्यतां वत्स मन्यते साधु यद्भवान् ॥४॥

पदच्छेद— एकदा असुरराट् पुत्रम् अङ्कम् आरोप्य पाण्डव।
प्रपच्छ कथ्यताम् वत्स मन्यते साधु यद् भवान् ॥

शब्दार्थ—

एकदा	२.	एक बार	प्रपच्छ	७.	पूछा
असुरराट्	३.	दैत्यराज ने	कथ्यताम्	१३.	कहो
पुत्रम्	४.	पुत्र को	वत्स	८.	हे पुत्र !
अङ्कम्	५.	गोद में	मन्यते	१२.	मानते हैं उसे
आरोप्य	६.	लेकर	साधु	११.	अच्छा
पाण्डव।	१.	हे युधिष्ठिर !	यद्	९.	जिसे
			भवान् ॥	१०.	आप

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! एक बार दैत्यराज ने पुत्र को गोद में लेकर पूछा—हे पुत्र ! जिसे आप अच्छा मानते हो उसे कहो॥

पञ्चमः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच—

तत्साधु मन्येऽसुरवर्य देहिनां सदा समुद्विग्नधियामसद्ग्रहात् ।
हित्वाऽऽत्मपातं गृहमन्धकूपं वनं गतो यद्धरिमाश्रयेत ॥५॥

पदच्छेद— तत् साधु मन्ये असुरवर्य देहिनाम् सदा समुद्विग्न धियाम् असद् ग्रहात् ।
हित्वा आत्म पातम् गृहम् अन्ध कूपम् वनम् गतः यत् हरिम् आश्रयेत ॥

शब्दार्थ—

तत्	८.	उसे	**हित्वा**	१७.	छोड़कर
साधु	९.	अच्छा	**आत्म**	१२.	अपने
मन्ये	१०.	मानता हूँ	**पातम्**	१३.	पतन के कारण
असुरवर्य	१.	असुर श्रेष्ठ	**गृहम्**	१६.	घर को
देहिनाम्	७.	प्राणियों के लिए	**अन्ध**	१४.	अन्धेरे
सदा	४.	सर्वदा	**कूपम्**	१५.	कुएँ के समान
समुद्विग्न	५.	अत्यन्त घबड़ाये हुए	**वनम् गतः**	१८.	वन में जाकर
धियाम्	६.	चित्त वाले	**यत्**	११.	जो
असद्	२.	मिथ्या	**हरिम्**	१९.	श्रीहरि की
ग्रहात् ।	३.	आग्रह के कारण	**आश्रयेत ॥**	२०.	शरण लेता है

श्लोकार्थ—हे असुर श्रेष्ठ ! मिथ्या आग्रह के कारण सर्वदा अत्यन्त घबड़ाये हुए चित्त वाले प्राणियों के लिए उसे अच्छा मानता हूँ, जो अपने पतन के कारण, अन्धेरे कुएँ के समान घर को छोड़कर वन में जाकर श्रीहरि की शरण लेता है ॥

षष्ठः श्लोकः

नारद उवाच—**श्रुत्वा पुत्रगिरो दैत्यः परपक्षसमाहिताः ।**
जहास बुद्धिर्बालानां भिद्यते परबुद्धिभिः ॥६॥

पदच्छेद— श्रुत्वा पुत्र गिरः दैत्यः पर पक्ष समाहिताः ।
जहास बुद्धिः बालानाम् भिद्यते परबुद्धिभिः ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	६.	सुनकर	**समाहिताः**	३.	प्रशंसा से भरे हुये
पुत्र	४.	पुत्र के	**जहास**	८.	हंस पड़ा (और बोला)
गिरः	५.	वचनों को	**बुद्धिः**	१०.	बुद्धि
दैत्यः	७.	दैत्यराज	**बालानाम्**	९.	बालकों की
पर	१.	शत्रु	**भिद्यते**	१२.	बिगड़ जाया करती है
पक्ष ।	२.	पक्ष की	**परबुद्धिभिः ।**	११.	दूसरों के बहकाने से

श्लोकार्थ—शत्रु-पक्ष की प्रशंसा से भरे हुए पुत्र के वचनों को सुनकर दैत्यराज हंस पड़ा और बोला बालकों की बुद्धि दूसरों के बहकाने से बिगड़ जाया करती है ॥

सप्तमः श्लोकः

सम्यग्विधार्यतां बालो गुरुगेहे द्विजातिभिः ।
विष्णुपक्षैः प्रतिच्छन्नैर्न भिद्येतास्य धीर्यथा ॥७॥

पदच्छेद— सम्यक् विधार्यताम् बालः गुरु गेहे द्विजातिभिः ।
विष्णु पक्षैः प्रतिच्छन्नैः न भिद्येत अस्य धीः यथा ॥

शब्दार्थ—

सम्यक्	२.	अच्छी प्रकार	विष्णु पक्षैः	७.	विष्णु के पक्षपाती
विधार्यताम्	३.	देख-भाल की जाय	प्रतिच्छन्नैः	८.	छिपे हुए
बालः	१.	इस बालक की	न भिद्येत	१२.	न बहकने पाये
गुरु	५.	गुरु के	अस्य	१०.	इसकी
गेहे	६.	घर में	धीः	११.	बुद्धि
द्विजातिभिः ।	९.	ब्राह्मणों के द्वारा	यथा ॥	४.	जिससे कि

श्लोकार्थ—इस बालक की अच्छी प्रकार देख-भाल की जाय जिससे कि गुरु के घर में विष्णु के पक्षपाती छिपे हुए ब्राह्मणों के द्वारा इसकी बुद्धि बहकने न पाये ॥

अष्टमः श्लोकः

गृहमानीतमाहूय प्रह्लादं दैत्ययाजकाः ।
प्रशस्य श्लक्ष्णया वाचा समपृच्छन्त सामभिः ॥८॥

पदच्छेद गृहम् आनीतम् आहूय प्रह्लादम् दैत्य याजकाः ।
प्रशस्य श्लक्षणया वाचा समपृच्छन्त सामभिः ॥

शब्दार्थ—

गृहम्	१.	घर में	प्रशस्य	१०.	प्रशंसा करके
आनीतम्	२.	पहुँचे हुए	श्लक्षणया	७.	मधुर
आहूय	४.	बुलाकर	वाचा	८.	वाणी से
प्रह्लादम्	३.	प्रह्लाद को	समपृच्छन्त	११.	पूछा
दैत्य	५.	दैत्यराज के	सामभिः ॥	९.	सान्त्वना देकर और
याजकाः ।	६.	पुरोहितों ने			

श्लोकार्थ—घर में पहुँचे हुए प्रह्लाद को बुलाकर दैत्यराज के पुरोहितों ने मधुर वाणी से सान्त्वना देकर और प्रशंसा करके पूछा ॥

नवमः श्लोकः

वत्स प्रह्लाद भद्रं ते सत्यं कथय मा मृषा ।
बालानति कुतस्तुभ्यमेष बुद्धिविपर्ययः ॥९॥

पदच्छेद— वत्स प्रह्लाद भद्रं ते सत्यम् कथय मा मृषा ।
बालान् अति कुतः तुभ्यम् एषः बुद्धि विपर्ययः ॥

शब्दार्थ—

वत्स	१. हे पुत्र !	बालान्	८. बालकों की बुद्धि से
प्रह्लाद	२. प्रह्लाद	अति	९. अलग
भद्रम्	४. कल्याण हो	कुतः	१४. कहाँ से प्राप्त हुई
ते	३. तुम्हारा	तुभ्यम्	१३. तुम्हें
सत्यम्	५. सत्य	एषः	१०. यह
कथय	६. कहो	बुद्धि	१२. बुद्धि
मा मृषा ।	७. मिथ्या मत कहना	विपर्ययः ॥	११. उलटी

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! प्रह्लाद तुम्हारा कल्याण हो । सत्य कहो, मिथ्या मत कहना । बालकों की बुद्धि से अलग या उलटी बुद्धि तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई ॥

दशमः श्लोकः

बुद्धिभेदः परकृत उताहो ते स्वतोऽभवत् ।
भण्यतां श्रोतुकामानां गुरूणां कुलनन्दन ॥१०॥

पदच्छेद— बुद्धि भेदः परकृतः उतआहो ते स्वतः अभवत् ।
भण्यताम् श्रोतु कामानाम् गुरूणाम् कुल नन्दन ॥

शब्दार्थ—

बुद्धि	३. यह बुद्धि में	अभवत् ।	९. हो गया है
भेदः	४. भ्रम	भण्यताम्	१२. बताओ
परकृतः	५. दूसरे के द्वारा किया गया है	श्रोतुकामानाम्	१०. सुनने के इच्छुक (हम)
उतआहो	६. अथवा	गुरूणाम्	११. गुरुजनों को
ते	७. तुम्हें	कुल	१. कुल को
स्वतः ॥	८. अपने आप ही	नन्दन	२. आनन्दित करने वाले प्रह्लाद

श्लोकार्थ—कुल को आनन्दित करने वाले प्रह्लाद ! यह बुद्धि में भ्रम दूसरे के द्वारा किया गया है अथवा तुम्हें अपने आप ही हो गया है । सुनने के इच्छुक हम गुरुजनों को बताओ ॥

एकादशः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच—स्वः परश्चेत्यसद्ग्राहः पुंसां यन्मायया कृतः।
विमोहितधियां दृष्टस्तस्मै भगवते नमः ॥११॥

पदच्छेद— स्वः परः च इति असद्ग्राहः पुंसाम् यत् मायया कृतः।
विमोहित धियाम् दृष्टः तस्मै भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

स्वः	१. अपना	कृतः।	१०. होता
परः च	२. पराया-और	विमोहित	५. मोहित
इति	३. इस प्रकार का	धियाम्	६. चित्त वाले
असद्ग्राहः	४. मिथ्या दुराग्रह	दृष्टः	११. देखा गया है
पुंसाम्	७. मनुष्यों को	तस्मै	१२. उस
यत्	८. जिसकी	भगवते	१३. भगवान् को
मायया	९. माया से	नमः ॥	१४. नमस्कार है

श्लोकार्थ—अपना और पराया इस प्रकार का मिथ्या दुराग्रह मोहित चित्त वाले मनुष्यों को जिसकी माया से होता देखा गया है उस भगवान् को नमस्कार है ॥

द्वादशः श्लोकः

स यदानुव्रतः पुंसां पशुबुद्धिर्विभिद्यते।
अन्य एष तथान्योऽहमिति भेदगतासती ॥१२॥

पदच्छेद— सः यदा अनुव्रतः पुंसाम् पशु बुद्धिः विभिद्यते।
अन्यः एषः तथा अन्यः अहम् इति भेद गता असती ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह भगवान्	एषः	८. यह
यदा	२. जब	तथा	१०. तथा
अनुव्रतः	३. कृपा करते हैं (तब)	अन्यः	१२. दूसरा हूँ
पुंसाम्	४. पुरुषों की	अहम्	११. मैं
पशु	५. पशु	इति	१३. इस प्रकार
बुद्धिः	६. बुद्धि	भेद	१४. भिन्नता को
विभिद्यते।	७. नष्ट हो जाती है	गता	१५. प्राप्त
अन्य	९. दूसरा है	असती ॥	१६. मिथ्या बुद्धि होती है

श्लोकार्थ—वह भगवान् जब कृपा करते हैं तब पुरुषों की पशुबुद्धि नष्ट हो जाती है। इसी पशुबुद्धि के कारण यह दूसरा है तथा मैं दूसरा हूँ इस प्रकार भिन्नता को प्राप्त मिथ्या बुद्धि होती है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

स एष आत्मा स्वपरेत्यबुद्धिभिर्दुरत्ययानुक्रमणो निरूप्यते।
मुह्यन्ति यद्वर्त्मनि वेदवादिनो ब्रह्मादयो ह्येष भिनत्ति मे मतिम् ॥१३॥

पदच्छेद— सः एषः आत्मा स्वपर इति अबुद्धिभिः दुरत्यया अनुक्रमणः निरूप्यते।
मुह्यन्ति यत् वर्त्मनि वेदवादिनः ब्रह्म आदयः हि एषः भिनत्ति मे मतिम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	यत्	९.	जिनके
एषः	२.	यह	वर्त्मनि	१०.	मार्ग में
आत्मा	३.	आत्मा है	वेदवादिनः	११.	वेदवेत्ता
स्वपर इति	४.	इस प्रकार अपने और पराये का भेद करके	ब्रह्म	१२.	ब्रह्म
अबुद्धिभिः	५.	मूर्ख लोग	आदयः	१३.	आदि भी
दुरत्यया	६.	कठिनाई से जानने योग्य	हि एष	१५.	वही भगवान्
अनुक्रमणः	७.	तत्त्व का	भिनत्ति	१८.	बिगाड़ रहे हैं
निरूप्यते।	८.	निरूपण करते हैं	मे	१६.	मेरी
मुह्यन्ति	१४.	मोहित हो जाते हैं	मतिम् ॥	१७.	बुद्धि को

श्लोकार्थ—वह यह आत्मा है इस प्रकार अपने और पराये का भेद करके मूर्ख लोग कठिनाई से जानने योग्य तत्त्व का निरूपण करते हैं जिनके मार्ग में वेदवेत्ता ब्रह्मा आदि भी मोहित हो जाते हैं, वही भगवान् मेरी बुद्धि को बिगाड़ रहे हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यथा भ्राम्यत्ययो ब्रह्मन् स्वयमाकर्षसन्निधौ।
तथा मे भिद्यते चेतश्चक्रपाणेर्यदृच्छया ॥१४॥

पदच्छेद— यथा भ्राम्यति अयः ब्रह्मन् स्वयम् आकर्ष सन्निधौ।
तथा मे भिद्यते चेतः चक्र पाणेः यदृच्छया ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जैसे	तथा मे	७.	उसी प्रकार मेरा
भ्राम्यति अयः	६.	घूम जाता है लोहा	भिद्यते	११.	खिंच जाता है
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्!	चेतः	८.	चित्त भी
स्वयम्	३.	अपने आप	चक्र पाणे	९.	भगवान् श्री कृष्ण की
आकर्ष	४.	खींचने वाले चुम्बक के	यदृच्छया ॥	१०.	इच्छा शक्ति से (उनकी ओर)
सन्निधौ।	५.	पास			

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन्! जैसे अपने आप खींचने वाले चुम्बक के पास लोहा घूम जाता है, उसी प्रकार मेरा चित्त भी भगवान् श्री कृष्ण की इच्छा शक्ति से उनकी ओर खिंच जाता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नारद उवाच एतावद्ब्राह्मणायोक्त्वा विरराम महामतिः ।
तं निर्भर्त्स्याथ कुपितः स दीनो राजसेवकः ॥१५॥

पदच्छेद एतावत् ब्राह्मणाय उक्त्वा विरराम महामतिः ।
तम् निर्भर्त्स्य अथ कुपितः सः दीनो राजसेवकः ॥

शब्दार्थ—

एतावत्	२.	इतना	तम्	१०.	उन्हें
ब्राह्मणाय	१.	ब्राह्मण से	निर्भर्त्स्य	११.	डांटने लगा
उक्त्वा	३.	कहकर	अथ	६.	तदनन्तर
विरराम	५.	चुप हो गये	कुपितः	९.	क्रुद्ध होकर
महामतिः ।	४.	महाबुद्धिमान् (प्रह्लाद)	सः दीनो	७.	वह दीन
			राजसेवकः ॥	८.	राज सेवक

श्लोकार्थ—ब्राह्मण से इतना कहकर महाबुद्धिमान् प्रह्लाद चुप हो गये । तदनन्तर वह दीन राजसेवक क्रुद्ध होकर उन्हें डांटने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

आनीयतामरे वेत्रमस्माकमयशस्करः ।
कुलाङ्गारस्य दुर्बुद्धेश्चतुर्थोऽस्योदितो दमः ॥१६॥

पदच्छेद— आनीयताम् अरे वेत्रम् अस्माकम् अयशस्करः ।
कुलाङ्गारस्य दुर्बुद्धेः चतुर्थः अस्य उदितः दमः ॥

शब्दार्थ—

आनीयताम्	४.	लाओ	कुलाङ्गारस्य	७.	कुल के लिए अग्निरूप
अरे	१.	अरे	दुर्बुद्धेः	६.	दुर्बुद्धि एवं
वेत्रम्	३.	बेंत तो	चतुर्थः	९.	चौथा
अस्माकम्	२.	हमारा	अस्य	८.	इसके लिए
यशस्करः ।	५.	यह अपयश दिलाने वाला है	उदितः	११.	कहा गया है
			दमः ॥	१०.	(उपाय) दण्ड ही

श्लोकार्थ—अरे हमारा बेंत तो लाओ । यह अपयश दिलाने वाला है । दुर्बुद्धि एवं कुल के लिए अग्निरूप इसके लिए चौथा दण्ड ही कहा गया है ॥

सप्तदशः श्लोकः

दैतेयचन्दनवने जातोऽयं कण्टकद्रुमः ।
यन्मूलोन्मूलपरशोर्विष्णोर्नालायितोऽर्भकः ॥१७॥

पदच्छेद— दैतेय चन्दन वने जातो अयम् कण्टक द्रुमः ।
यत्मूल उन्मूल परशोः विष्णोः नालायितः अर्भकः ॥

शब्दार्थ—

दैतेय	१.	दैत्यरूपी	यत्	७.	जो
चन्दनवने	२.	चन्दनवन में	मूलः	८.	जड़ को
जातः	६.	उत्पन्न हुआ है	उन्मूल	९.	काटने वाला ये
अयम्	३.	यह	परशोः	१२.	कुल्हाड़ी का
कण्टक	४.	काँटेदार	विष्णोः	११.	विष्णु की
द्रुमः ।	५.	वृक्ष (बबूल) बनकर	नालायितः	१३.	बंट बना है
			अर्भकः ॥	१०.	बालक

श्लोकार्थ—दैत्यरूपी चन्दनवन में यह बालक काँटेदार वृक्ष (बबूल) बनकर उत्पन्न हुआ है, जो जड़ को काटने वाले विष्णु की कुल्हाड़ी का बेंट बना है ॥

अष्टादशः श्लोकः

इति तं विविधोपायैर्भीषयंस्तर्जनादिभिः ।
प्रह्लादं ग्राहयामास त्रिवर्गस्योपपादनम् ॥१८॥

पदच्छेद— इति तम् विविधैः उपायैः भीषयन् तर्जन आदिभिः ।
प्रह्लादं ग्राहयामास त्रिवर्गस्य उपपादनम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	आदिभिः ।	७.	आदि के द्वारा
तम्	२.	उस	प्रह्लादम्	३.	प्रह्लाद को
विविधैः	४.	अनेक प्रकार के	ग्राहयामास	११.	शिक्षा दी
उपायैः	५.	उपायों से	त्रिवर्गस्य	९.	धर्म-अर्थ-काम की
भीषयन्	८.	डराते हुए	उपपादनम् ॥	१०.	प्राप्ति की
तर्जन	६.	डाँट-डपट			

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस प्रह्लाद को अनेक प्रकार के उपायों से डाँट-डपट आदि के द्वारा डराते हुए धर्म अर्थ-काम की प्राप्ति की शिक्षा दी ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तत एनं गुरुर्ज्ञात्वा ज्ञातज्ञेयचतुष्टयम् ।
दैत्येन्द्रं दर्शयामास मातृमृष्टमलङ्कृतम् ॥१९॥

पदच्छेद— ततः एनम् गुरुः ज्ञात्वा, ज्ञात ज्ञेय चतुष्टयम् ।
दैत्येन्द्रम् दर्शयामास मातृ मृष्टम् अलङ्कृतम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. तदनन्तर	चतुष्टयम् ।	३. चार प्रकार के उपायों को
एनम्	५. उस प्रह्लाद को	दैत्येन्द्रम्	११. दैत्यराज हिरण्यकशिपु के
गुरुः	७. गुरु	दर्शयामास	१२. पास ले गये
ज्ञात्वा	६. ज्ञानकरा कर	मातृ	८. माता के द्वारा
ज्ञात	४. जाने हुए	मृष्टम्	९. स्नानादि से
ज्ञेय ।	२. जानने योग्य	अलङ्कृतम् ॥	१०. आभूषित कराकर

श्लोकार्थ—जानने योग्य (साम-दान-दण्ड और भेद रूप चार प्रकार के उपायों को जाने हुए उस प्रह्लाद को ज्ञान कराकर गुरु माता के द्वारा स्नानादि से आभूषित कराकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु के पास ले गये ॥

विंशः श्लोकः

पादयोः पतितं बालं प्रतिनन्द्याशिषासुरः ।
परिष्वज्य चिरं दोर्भ्यां परमामाप निर्वृतिम् ॥२०॥

पदच्छेद— पादयोः पतितम् बालम् प्रतिनन्द्य आशिषा असुरः ।
परिष्वज्य चिरम् दोर्भ्यां परमाम् आप निर्वृतिम् ॥

शब्दार्थ—

पादयोः	१. चरणों में	परिष्वज्य	९. आलिङ्गन करके
पतितम्	२. गिरे हुए	चिरम्	८. बहुत समय तक
बालम्	३. बालक का	दोर्भ्यां	७. भुजाओं से
प्रतिनन्द्य	५. अभिनन्दन करके	परमाम्	१०. परम
आशिषा	४. आशीर्वाद से	आप	१२. प्राप्त किया
असुरः।	६. असुर ने	निर्वृतिम् ॥	११. सुख को

श्लोकार्थ—चरणों पर गिरे हुए बालक का आशीर्वाद से अभिनन्दन करके असुर ने भुजाओं से बहुत समय तक आलिङ्गन करके परम सुख को प्राप्त किया ॥

एकविंशः श्लोकः

आरोप्याङ्कमवघ्राय मूर्धन्यश्रुकलाम्बुभिः ।
आसिञ्चन् विकसद्वक्त्रमिदमाह युधिष्ठिर ॥२१॥

पदच्छेद— आरोप्य अङ्कम् अवघ्राय मूर्धनि अश्रुकला अम्बुभिः ।
आसिञ्चन् विकसत् वक्त्रम् इदम् आह युधिष्ठिर ॥

शब्दार्थ—

आरोप्य	३.	उठाकर	आसिञ्चन्	८.	सींचते हुए
अङ्कम्	२.	बालक की गोद में	विकसत्	९.	खिले हुए
अवघ्राय	५.	सूंघ कर	वक्त्रम्	१०.	मुखवाले (प्रह्लाद से)
मूर्धनि	४.	मस्तक को	इदम्	११.	यह
अश्रुकला	६.	आसुओं के	आह	१२.	कहा
अम्बुभिः ।	७.	जल से	युधिष्ठर ॥	१.	हे युधिष्ठर !

श्लोकार्थ हे युधिष्ठर ! बालक को गोद में उठाकर मस्तक को सूंघ कर आँसुओं के जल से सींचते हुए खिले हुए मुख वाले प्रह्लाद से यह कहा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुरुवाच—प्रह्लादानूच्यतां तात स्वधीतं किञ्चिदुत्तमम् ।
कालेनैतावताऽऽयुष्मन् यदशिक्षद् गुरोर्भवान् ॥२२॥

पदच्छेद — प्रह्लाद अनूच्यताम् तात स्वधीतम् किञ्चित् उत्तमम् ।
कालेन एतावता आयुष्मन् यत् अशिक्षत् गुरोः भवान् ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लाद	९.	प्रह्लाद (जो)	कालेन	३.	समय से
अनूच्यताम्	१३.	कहो	एतावत्	२.	इतने
तात	८.	हे वेटा	आयुष्मन्	१.	हे चिरंजीव !
स्वधीतम्	१०.	पढ़ा है	यत्	४.	जो
किञ्चित्	११.	उसमें से कुछ	अशिक्षत्	७.	शिक्षा प्रात की है
उत्तमम् ।	१२.	उत्तम बातें	गुरोः	६.	गुरु से
			भवान् ॥	५.	तुमने

श्लोकार्थ—हे चिरंजीव ! इतने समय से जो तुमने गुरु से शिक्षा प्रात की है, हे वेटा प्रह्लाद ! जो पढ़ा है उसमें से कुछ उत्तम बातें कहो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच – **श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।**

अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥२३॥

पदच्छेद— **श्रवणम् कीर्तनम् विष्णोः स्मरणम् पाद सेवनम् ।**

अर्चनम् वन्दनम् दास्यम् सख्यम् आत्म निवेदनम् ॥

शब्दार्थ—

श्रवणम्	३.	श्रवण	**अर्चनम्**	७.	पूजा
कीर्तनम्	२.	कीर्तन	**वन्दनम्**	८.	वन्दन
विष्णोः	१.	भगवान् विष्णु का	**दास्यम्**	९.	दास भाव
स्मरणम्	४.	स्मरण	**सख्यम्**	१०.	मित्र भाव
पाद	५.	चरणों की	**आत्म**	११.	अपने को
सेवनम् ।	६.	सेवा	**निवेदनम् ॥**	१२.	सर्मापित करना (ये बातें उत्तम हैं)

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु का कीर्तन, श्रवण, स्मरण चरणों की सेवा, पूजा, वन्दन, दास भाव, मित्र-भाव अपने को सर्मापित करना—ये बातें उत्तम हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा ।

क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम् ॥२४॥

पदच्छेद— **इति पुंसा अर्पिता विष्णोः भक्तिः चेत् नवलक्षणा ।**

क्रियते भगवति अद्धा तत् मन्ये अधीतम् उत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	**क्रियते**	१०.	की जाये तो
पुंसा	२.	मनुष्य के द्वारा	**भगवति**	३.	भगवान्
अर्पिता	८.	अर्पित	**अद्धा**	९.	यथार्थ रूप से
विष्णोः	४.	विष्णु में	**तत्**	११.	उसको (मैं)
भक्तिः	७.	भक्ति	**मन्ये**	१४.	मानता हूँ
चेत्	५.	यदि	**अधीतम्**	१३.	अध्ययन
नवलक्षणा ।	६.	नवधा	**उत्तमम् ॥**	१२.	उत्तम

श्लोकार्थ—इस प्रकार मनुष्य के द्वारा भगवान् विष्णु में यदि नवधा भक्ति यथार्थ रूप से अर्पित की जाय तो उसको मैं उत्तम अध्ययन मानता हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

निशम्यैतत्सुतवचो हिरण्यकशिपुस्तदा ।
गुरुपुत्रमुवाचेदं रुषा प्रस्फुरिताधरः ॥२५॥

पदच्छेद— निशम्य एतत् सुत वचः हिरण्यकशिपुः तदा ।
गुरुपुत्रम् उवाच इदम् रुषा प्रस्फुरित अधरः ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	४. सुनकर	**गुरुपुत्रम्**	१०. गुरु पुत्र से
एतत्	२. यह	**उवाच**	१२. कहा
सुत	१. पुत्र का	**इदम्**	११. यह
वचः	३. वचन	**रुषा**	६. क्रोध से
हिरण्यकशिपुः	९. हिरण्यकशिपु ने	**प्रस्फुरित**	७. फड़कते हुए
तदा ।	५. तब	**अधरः ॥**	८. होठ वाले

श्लोकार्थ—पुत्र का यह वचन सुनकर तब क्रोध से फड़कते हुए होठ वाले वाले हिरण्यकशिपु ने गुरु पुत्र से यह कहा ॥

षड्विंशः श्लोकः

ब्रह्मबन्धो किमेतत्ते विपक्षं श्रयतासता ।
असारं ग्राहितो बालो मामनादृत्य दुर्मते ॥२६॥

पदच्छेद— ब्रह्मबन्धो किम् एतत् ते विपक्षम् श्रयता असता ।
असारम् ग्राहितः बालः माम अनादृत्य दुर्मते ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मबन्धो	१. हे नीच ब्राह्मण !	**असारम्**	११. निःसार
किम् एतत्	४. क्या यह	**ग्राहितः**	१२. शिक्षा दी है
ते	३. तुम्हारी (करतूत है)	**बालः**	१०. बालक को
विपक्षम्	५. जो विपक्ष का	**माम्**	८. मेरा
श्रयता	६. आश्रय लेकर	**अनादृत्य**	९. अनादर करके
असता ।	७. असज्जन तुमने	**दुर्मते ॥**	२. हे दुर्बुद्धि !

श्लोकार्थ—हे नीच ब्राह्मण ! हे दुर्बुद्धि ! यह तुम्हारी क्या करतूत है । जो विपक्ष का आश्रय लेकर असज्जन तुमने मेरा अनादर करके बालक को निःसार शिक्षा दी है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सन्ति ह्यसाधवो लोके दुर्मैत्राश्छद्मवेषिणः ।
तेषामुदेत्यघं काले रोगः पातकिनामिव ॥२७॥

पदच्छेद— सन्ति हि साधवः लोके दुर्मैत्राः छद्म वेषिणः ।
तेषाम् उदेति अघम् काले रोगः पातकिनाम इव ॥

शब्दार्थ—

सन्ति	६.	हैं	**तेषाम्**	७.	उनका
हि असाधवः	५.	दुष्ट लोग	**उदेति**	१०.	प्रकट हो जाता है
लोके	१.	संसार में	**अघम्**	८.	पाप
दुर्मैत्राः	४.	दूषित मित्रता वाले (बहुत से)	**काले**	९.	समय पर
छद्म	२.	छद्म	**रोगः**	१३.	रोग (समय पर अपने आप ही प्रकट हो जाता है
वेषिणः ।	३.	वेश धारण करके	**पातकिनाम्**	१२.	पापियों का
			इव ॥	११.	जैसे

श्लोकार्थ—संसार में छद्म वेश धारण करके दूषित मित्रता वाले बहुत से दुष्ट लोग हैं। उनका पाप समय पर प्रकट हो जाता है, जैसे पापियों का रोग समय पर अपने आप ही प्रकट हो जाता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

गुरुपुत्रउवाच—नमत्प्रणीतं न परप्रणीतं सुतो वदत्येष तवेन्द्रशत्रो ।
नैसर्गिकीयं मतिरस्य राजन् नियच्छ मन्युं कददाः स्म मा नः ॥२८॥

पदच्छेद— न मत् प्रणीतम् न परप्रणीतम् सुतः वदति एषः तव इन्द्र शत्रो ।
नैसर्गिकीयम् मतिरस्य राजन् नियच्छ मन्युं कददाः स्ममानः ॥

शब्दार्थ—

न मत्	६.	नहीं मेरे	**शत्रो ।**	२.	शत्रु
प्रणीतम्	७.	बहकाने से (और)	**नैसर्गिकीयम्**	१२.	स्वाभाविकी
न	८.	न	**मतिरस्य**	१३.	बुद्धि है इसकी
पर प्रणीतम्	९.	दूसरे के बहकाने से (ऐसा)	**राजन्**	११.	हे राजन् ! यह
सुतः	५.	पुत्र	**नियच्छ**	१५.	शान्त कीजिये
वदति	१०.	बोलता है	**मन्युम्**	१४.	अपने क्रोध को
एषः	४.	यह	**कददाः**	१८.	दोष दीजिये
तव	३.	आपका	**स्म मा**	१९.	मत
इन्द्र	१.	हे इन्द्र के ।	**नः ॥**	१६.	हमें

श्लोकार्थ—हे इन्द्र के शत्रु ! आपका पुत्र नहीं मेरे बहकाने से और न दूसरे के बहकाने से ऐसा बोलता है। हे राजन् ! यह इसकी स्वाभाविकी बुद्धि है। अपने क्रोध को शान्त कीजिये हमें दोष मत दीजिये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

नारद उवाच—गुरुणैवं प्रतिप्रोक्तो भूय आहासुरः सुतम्

न चेद्गुरुमुखीयं ते कुतोऽभद्रासती मतिः ॥२९॥

पदच्छेद— गुरुणा एवम् प्रतिप्रोक्तः भूयः आह असुरः सुतम् ।
न चेत् गुरुमुखीयम् ते कुतः अभद्रा असती मतिः ॥

शब्दार्थ—**गुरुणा**	१.	गुरु के द्वारा	**गुरु खी**	६.	गुरु के मुख से
एवम्	२.	इस प्रकार	**यम्**	८.	यह शिक्षा
प्रतिप्रोक्तः	३.	कहे जाने पर	**ते**	१५.	तुम्हें
भूयः	५.	पुनः	**कुतः**	१६.	कहाँ से प्राप्त हुई
आह	७.	कहा	**अभद्र**	१२.	अहित करने वाली
असुरः	४.	असुर ने	**असती**	१३.	खोटी
सुतम् ।	६.	पुत्र से	**मतिः ॥**	१४.	बुद्धि
न चेत् ॥	१०.	यदि नहीं (मिली तो			

श्लोकार्थ—गुरु के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर असुर ने पुनः पुत्र से कहा । यह शिक्षा गुरु के मुख से यदि नहीं मिली तो अहित करने वाली खोटी बुद्धि तुझे कहाँ से प्राप्त हुई ॥

त्रिंशः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच—मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम् ।

अदान्तगोभिर्विशतां तमिस्रं पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानाम् ॥३०॥

शब्दार्थ—

पदच्छेद— मतिः न कृष्णे परतः स्वतः वा मिथः अभिपद्येत गृह व्रतानाम् ।
अदान्त गोभिः विशताम् तमिस्रम् पुनः पुनः चर्वित चर्वणानाम् ॥

मतिः न	११.	बुद्धि नहीं	**अदान्त**	१.	न जीती हुई
कृष्णे	१२.	कृष्ण भगवान् में	**गोभिः**	२.	इन्द्रियों के कारण
परतः	१३.	दूसरे से	**विशताम्**	४.	प्रवेश करते हुए और
स्वतः	१४.	अपने से	**तमिस्रम्**	३.	नरक में
वा	१५.	अथवा	**पुनः**	५.	बार
मिथः	१६.	न परस्पर के संग से ही	**पुनः**	६.	बार
अभि पद्येत	१७.	लगती है	**चर्वित**	७.	चबाये को
गृह ।	६.	घर में	**चर्वणानाम् ॥**	८.	चबाने वाले
व्रतानाम्	१०.	आसक्त पुरुषों की			

श्लोकार्थ—न जीती हुई इन्द्रियों के कारण नरक में प्रवेश करते हुए और बार-बार चबाये को चबाने वाले घर में आसक्त पुरुषों की बुद्धि भगवान् कृष्ण में नहीं दूसरे से न अपने से अथवा न परस्पर के सङ्ग से ही लगती है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुं दुराशया ये बहिरर्थमानिनः।
अन्धा यथान्धैरुपनीयमाना वाचीशतन्त्यामुरुदाम्नि बद्धाः ॥३१॥

पदच्छेद— न ते विदुः स्वार्थ गतिम् हि विष्णुं दुराशयाः ये बहिः अर्थ मानिनः।
अन्धा यथा अन्धैः उपनीयमानाः वाचीश तन्त्याम् उरुदाम्नि बद्धाः ॥

शब्दार्थ— न ते	८.	नहीं	अन्धाः	१२.	अन्धों के
विदुः	९.	जानते हैं	यथा	१३.	समान ही (तथा)
स्वार्थ	५.	वे स्वार्थ के	अन्धैः	१०.	अन्धों के द्वारा
गतिम्	६.	आश्रय भूत निश्चित रूप से	उपनीयमानाः	११.	ले जाते हुए
हिविष्णुम्	७.	भगवान् विष्णु को	वाचीश	१४.	वे वेद वाणी रूप
दुराशया	२.	मूर्ख लोग	तन्त्याम्	१५.	जाल की
ये	१.	जो	उरुदाम्नि	१६.	विशाल रस्सी में
बहिः अर्थ	३.	बाह्य विषयों को ही	बद्धाः ॥	१७.	बंधे हुए
मानिनः।	४.	मानने वाले हैं			

श्लोकार्थ—जो मूर्ख लोग बाह्य विषयों को ही मानने वाले हैं। वे स्वार्थ के आश्रयभूत निश्चित रूप से भगवान् विष्णु को नहीं जानते हैं अन्धों के द्वारा ले जाते हुए अन्धों के समान ही है। तथा वे वेदवाणी रूप जाल के विशाल रस्सी में बंधे हुए हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं निष्किञ्चनानां न वृणीत यावत् ॥३२॥

पदच्छेद— न एषाम् मतिः तावत् उरुक्रम अङ्घ्रिम् स्पृशति अनर्थ अपगमः यदर्थः।
महीयसाम् पादरजः अभिषेकम् निष्किञ्चनानाम् न वृणीत यावत् ॥

शब्दार्थ—न	११.	नहीं करती है	यद्	१.	जिनका
एषाम्	८.	उन लोगों की	अर्थः	२.	स्पर्श
मतिः	९.	बुद्धि	महीयसाम्	१४.	महापुरुषों की
तावत्	१०.	तब तक	पादरजः	१५.	चरण धूलि में
उरुक्रमः	५.	ऐसे भगवान् के	अभिषेकम्	१६.	स्नान
अङ्घ्रिम्	६.	चरणों का	निष्किञ्चनानाम्	१३.	अकिञ्चन
स्पृशति	७.	स्पर्श	न	१७.	नहीं
अनर्थ	३.	अनर्थों का	वृणीत	१८.	कर लेती है
अपगमः	४.	नाश करने वाला है	यावत् ॥	१२.	जब-तक

श्लोकार्थ—जिनका स्पर्श अनर्थों का नाश करने वाला है, ऐसे भगवान् के चरणों का स्पर्श उन लोगों की बुद्धि तब तक नहीं करती है जब तक अकिञ्चन् महापुरुषों की चरण धूलि में स्नान नहीं कर लेती है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

इत्युक्त्वोपरतं पुत्रं हिरण्यकशिपू रुषा ।
अन्धीकृतात्मा स्वोत्सङ्गान्निरस्यत महीतले ॥३३॥

पदच्छेद— इति उक्त्वा उरतम् पुत्रम् हिरण्यकशिपुः रुषा ।
अन्धीकृत आत्मा स्व उत्सङ्गात् निरस्यता महीतले ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अन्धीकृत	७.	अन्धा होकर
उक्त्वा	२.	कहकर	आत्मा स्व	८.	अपनी
उपरतम्	३.	विरत हुये	उत्सङ्गात्	९.	गोद से
पुत्रम्	४.	पुत्र को	निरस्यत	१०.	उठाकर पठक दिया
हिरण्यकशिपुः	५.	हिरण्यकशिपु ने	महीतले ॥	११.	भूमि पर
रुषा ।	६.	क्रोध से			

श्लोकार्थ—इस प्रकार कह विरत हुए पुत्र को हिरण्यकशिपु से क्रोध से अन्धा होकर अपनी गोद से उठाकर पटक दिया ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

आहामर्षरुषाविष्टः कषायीभूतलोचनः ।
वध्यतामाश्वयं वध्यो निःसारयत नैर्ऋताः ॥३४॥

पदच्छेद— आह अमर्ष रुषा आविष्टः कषायी-भूत लोचनः ।
वध्यताम् आशु अयम् वध्यः निःसारयत नैर्ऋतः ॥

शब्दार्थ—

आह	६.	कहा	वध्यताम्	९.	मार डालो
अमर्ष	१.	न सहने के कारण	आशु अयम्	८.	शीघ्र यह
रुषा	२.	क्रोध से	वध्यः	११.	वध करने योग्य है
आविष्टः	३.	युक्त होकर	निःसारयत	१२.	इसे बाहर कर दो
कषीय-भूत	४.	लाल-लाल	नैर्ऋताः ॥	७.	हे असुरों ! इसे
लोचनः ।	५.	नेत्रों वाले (दैत्यराज)			

श्लोकार्थ—न सहने के कारण क्रोध से युक्त होकर लाल-लाल नेत्रों वाले दैत्यराज ने कहा—हे असुरो ! इसे शीघ्र मार डालो । यह वध करने योग्य हैं । इसे बाहर कर दो ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अयं मे भ्रातृहा सोऽयं हित्वा स्वान् सुहृदोऽधमः ।

पितृव्यहन्तुर्यः पादौ विष्णोर्दासवदर्चति ॥३५॥

पदच्छेद— अयम् मे भ्रातृहा सः अयम् हित्वा स्वान् सुहृदः अधमः ।
पितृव्य हन्तुर्यः पादौ विष्णोः दास वद् अर्चति ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१.	यह	अधमः	६.	नीच है
मे	२.	मेरे	पितृव्य	१०.	चाचा को
भ्रातृहा	३.	भाई का वध करने वाला है	हन्तुर्यः	११.	मारने वाले जो
सः	५.	वही	पादौ	१३.	चरणों की
अयम्	४.	और यह	विष्णोः	१२.	विष्णु के
हित्वा	९.	छोड़कर	दास	१४.	दास के
स्वान्	७.	जो अपने	वद्	१५.	समान
सुहृदः ।	८.	बन्धुओं को	अर्चति ॥	१६.	पूजा करता है

श्लोकार्थ—यह मेरे भाई का वध करने वाला है और यह वही नीच है जो अपने बन्धुओं को छोड़कर चाचा के मारने वाले विष्णु के चरणों को दास के समान पूजा करता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

विष्णोर्वा साध्वसौ किं नु करिष्यत्यसमञ्जसः ।

सौहृदं दुस्त्यजं पित्रोरहाद्यः पञ्चहायनः ॥३६॥

पदच्छेद— विष्णोः वा साधु असौ किम् नु करिष्यति असमञ्जसः ।
सौहृदम् दुस्त्यजम् पित्रोः अहाद् यः पञ्च हायनः ॥

शब्दार्थ—

विष्णोः	४.	विष्णु का ही	सौहृदम्	११.	वात्सल्य स्नेह को
वा	१.	अथवा	दुस्त्यजम्	१०.	न त्यागने योग्य
साधु असौ	२.	भला यह	पित्रोः	९.	माता पिता के
किम् नु	५.	क्या	अहाद् यः	१२.	भुला दिया
करिष्यति	६.	करेगा (जिसने)	पञ्च	७.	पाँच
असमञ्जसः ।	३.	कृतघ्न	हायनः ॥	८.	वर्ष की अवस्था में ही

श्लोकार्थ—अथवा यह कृतघ्न विष्णु का ही क्या भला करेगा । जिसने पाँच वर्ष की अवस्था में ही माता-पिता के न त्यागने योग्य वात्सल्य स्नेह को भुला दिया ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

परोऽप्यपत्यं हितकृद्यथौषधं स्वदेहजोऽप्यामयवत्सुतोऽहितः ।
छिन्द्यात्तदङ्गं यदुतात्मनोऽहितं शेषं सुखं जीवति यद्विवर्जनात् ॥३७॥

पदच्छेद— परः अपि अपत्यम् हित कृत् यथा औषधम् स्वदेहजो अपि आमयवत् सुतः अहितः ।
छिन्द्यात् तत् अङ्गम् यत् उत आत्मनः अहितम् शेषम् सुखम् जीवति यत् विवर्जनात् ॥

शब्दार्थ—

परः अपि	१.	दूसरा भी	छिन्द्यात्-तत्	११.	काट देना चाहिए उस
अपत्यम्	५.	पुत्र होता है	अङ्गम्	१२.	अङ्ग को
हितकृत्	४.	हित करने वाला	यत् उत	१३.	जिससे
यथा	३.	समान	आत्मनः	१४.	शरीर का
औषधम्	२.	ओषधि के	अहितम्	१५.	अहित होता है (क्योंकि)
स्वदेहजः	६.	अपने शरीर से उत्पन्न	शेषम्	१८.	शेष शरीर
अपि	७.	भी	सुखम्	१९.	सुखपूर्वक
आमयवत्	१०.	रोग के समाना है	जीवति	२०.	जी सकता है
सुतः	८.	पुत्र	यत्	१६.	जिसके
अहितः ।	९.	अहित करने वाला है तो	विवर्जनात् ॥	१७.	काट देने से

श्लोकार्थ—दूसरा भी ओषधि के समान हित करने वाला पुत्र होता है । अपने शरीर से उत्पन्न भी पुत्र अहित करने वाला है तो रोग के समान है । उस अङ्गको काट देना चाहिए जिससे शरीर का अहित होता है । क्योंकि जिसके काट देने से शेष शरोर सुखपूर्वक जी सके ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

सर्वैरुपायैर्हन्तव्यः सम्भोजशयनासनैः ।
सुहृल्लिङ्गधरः शत्रुर्मुनेर्दुष्टमिवेन्द्रियम् ॥३८॥

पदच्छेद— सर्वैः उपायैः हन्तव्यः सम्भोज शयन आसनैः ।
सुहृत् लिङ्गधरः शत्रुः मुनेः दुष्टम् इव इन्द्रियम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वैः	४.	सभी	लिङ्गाधरः	८.	वाना धारण करके
उपायैः	५.	उपायों से	शत्रुः	१३.	शत्रु है
हन्तव्यः	६.	मार डालने योग्य है	मुनेः	९.	मुनि की
सम्भोज	१.	भोजन (वह)	दुष्टम्	१०.	दुष्ट
शयन	२.	सोने	इव	१२.	समान
आसनैः ।	३.	बैठने आदि			
सुहृत्	७.	(क्योंकि वह) बन्धु का	इन्द्रियम् ॥	११.	इन्द्रिय के

श्लोकार्थ—वह भोजन, सोने, बैठने आदि सभी उपायों से मार डालने योग्य है। क्योंकि वह बन्धु का वाना धारण करके मुनि की दुष्ट इन्द्रिय के समान शत्रु है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

नैर्ऋतास्ते समादिष्टा भर्त्रा वै शूलपाणयः ।
तिग्मदंष्ट्राकरालास्यास्ताम्रश्मश्रुशिरोरुहाः ॥३९॥

पदच्छेद— नैर्ऋताः ते समादिष्टाःभर्त्रा वै शूल पाणयः ।
तिग्म दंष्ट्रा कराल आस्याः ताम्र श्मश्रु शिरोरुहाः ॥

शब्दार्थ—

नैर्ऋताः	९.	राक्षस	तिग्म	१.	तीखी
ते	८.	वे	दंष्ट्रा	२.	दाढ़
समादिष्टाः	११.	आज्ञा पाकर	कराल	३.	भयंकर
भर्त्रा	१०.	स्वामी के द्वारा	आस्याः	४.	मुख
वै	१३.	निश्चित रूप से	ताम्र	५.	लाल-लाल
शूल	१४.	त्रिशूल	श्मश्रु	६.	दाढ़ी मूँछ और
पाणयः ।	१२.	हाथ में	शिरोरुहाः ॥	७.	केशों वाले

श्लोकार्थ—तीखी दाढ़, भयंकर मुख, लाल-लाल दाढ़ी-मूँछ और केशों वाले वे राक्षस स्वामी के द्वारा आज्ञा पाकर निश्चित रूप से हाथ में त्रिशूल को उठा लिया ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

नदन्तो भैरवान्नादांश्छिन्धि भिन्धीति वादिनः ।
आसीनं चाहनञ्शूलैः प्रह्लादं सर्वमर्मसु ॥४०॥

पदच्छेद— नदन्तः भैरवान् नादान् छिन्धि भिन्धि इति वादिनः ।
आसीनम् च अहनन् शूलैः प्रह्लादम् सर्व मर्मसु ॥

शब्दार्थ—

नदन्तः	३.	करते हुए	आसीनम्	७.	बैठे हुए
भैरवान्	१.	भयंकर	च अहनन्	१२.	मारने लगे
नादान्	२.	शब्द	शूलैः	११.	त्रिशूलों से
छिन्धि	५.	काटो	प्रह्लादम्	८.	प्रह्लाद को
भिन्धि इति	४.	मारो यह	सर्व	९.	सभी
वादिनः ।	६.	बोलते हुए (वे दैत्य)	मर्मसु ॥	१०.	मर्मस्थानों में

श्लोकार्थ—भयंकर शब्द करते हुए मारो काटो यह बोलते हुए वे दैत्य बैठे हुए प्रह्लाद को सभी मर्म स्थानों में त्रिशूल से मारने लगे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

परे ब्रह्मण्यनिर्देश्ये भगवत्यखिलात्मनि ।
युक्तात्मन्यफला आसन्नपुण्यस्येव सत्क्रियाः ॥४१॥

पदच्छेद— परे ब्रह्मणि अनिर्देश्ये भगवति अखिल आत्मनि ।
युक्त आत्मनि अफला आसन् अपुण्यस्य इव सत्क्रियाः ॥

शब्दार्थ—

परे	४.	पर	**युक्तआत्मनि**	७.	मन को लगाये हुए प्रह्लाद पर
ब्रह्मणि	५.	ब्रह्म स्वरूप	**अफला**	८.	उनके अस्त्र-शस्त्र निष्फल
अनिर्देश्ये	१.	अनिर्वचनीय	**आसन्**	९.	हो गये जैसे
भगवति	६.	भगवान् में	**अपुण्यस्य**	१०.	पापी व्यक्ति
अखिल	२.	सबकी	**इव**	११.	की
आत्मनि ।	३.	आत्मा	**सत्क्रियाः ॥**	१२.	सत्क्रियायें (निष्फल हो जाती हैं)

श्लोकार्थ—अनिर्वचनीय सबकी आत्मा, परब्रह्म स्वरूप भगवान् में मन को लगाये हुए प्रह्लाद पर उनके अस्त्र-शस्त्र निष्फल हो गये, जैसे पापी व्यक्ति की सत्क्रियायें निष्फल हो जाती हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

प्रयासेऽपहते तस्मिन् दैत्येन्द्रः परिशङ्कितः ।
चकार तद्वधोपायान्निर्बन्धेन युधिष्ठिर ॥४२॥

पदच्छेद— प्रयासे अपहते तस्मिन् दैत्येन्द्रः परिशङ्कितः ।
चकार तत् वध उपायान् निर्बन्धेन युधिष्ठिर ॥

शब्दार्थ—

प्रयासे	३.	प्रयास के	**चकार**	११.	करने लगा
अपहते	४.	नष्ट हो जाने पर	**तत्**	७.	उनके
तस्मिन्	२.	उस	**वध**	८.	वध के
दैत्येन्द्रः	५.	दैत्यराज को	**उपायान्**	९.	उपायों को
परिशङ्कितः ।	६.	बड़ी शंका हुई (तब वह)	**निर्बन्धेन**	१०.	हठपूर्वक
			युधिष्ठिर ॥	१.	हे युधिष्ठिर

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! उस प्रयास के नष्ट हो जाने पर दैत्यराज को बड़ी शंका हुई । तब वह उनके वध के उपायों को हठपूर्वक करने लगा ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

दिग्गजैर्दन्दशूकैश्च अभिचारावपातनैः ।
मायाभिः संनिरोधैश्च गरदानैरभोजनैः ॥४३॥

पदच्छेद— दिग्गजैः दन्दशूकैः च अभिचार अवपातनैः ।
मायाभिः सन्निरोधैः च गरदानैः अभोजनैः ॥

शब्दार्थ—**दिग्गजैः**	१.	हाथियों से	**मायाभिः**	६.	जादू टोने से
दन्दशूकैः	२.	साँपों से	**सन्निरोधैः**	७.	बन्द कर देने से
च	३.	और	**च**	८.	और
अभिचार	४.	कृत्यादि से	**गरदानैः**	९.	विष देने से
अवपातनैः ।	५.	पर्वतादि पर से गिराने से	**अभोजनैः ॥**	१०.	और भोजन न देने से

श्लोकार्थ—हाथियों से, सर्पों से, कृत्यादि से पर्वतादि पर से गिराने से, जादू टोने से, बन्द किये जाने से, विष देने से और भोजन न देने से मारने का उपाय करने लगा ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

हिमवाय्वग्निसलिलैः पर्वताक्रमणैरपि ।
न शशाक यदा हन्तुमपापमसुरः सुतम् ।
चिन्तां दीर्घतमां प्राप्तस्तत्कर्तुं नाभ्यपद्यत ॥४४॥

पदच्छेद— हिम वायु अग्नि सलिलैः पर्वत आक्रमणैः अपि ।
न शशाक यदा हन्तुम् अपापम् असुरः सुतम् ।
चिन्ताम् दीर्घतमाम् प्राप्तः तत् कर्तुम् न अभ्यपद्यत ॥

शब्दार्थ—**हिम**	१.	बर्फीली	**अपापम्**	१०.	निष्पाप
वायु	२.	वायु	**असुरः**	९.	दैत्यराज
अग्नि	३.	अग्नि	**सुतम् ।**	११.	पुत्र प्रह्लाद को
सलिलैः	४.	जल	**चिन्ताम्**	१७.	चिन्ता को
पर्वत	५.	पर्वतों से	**दीर्घतमाम्**	१६.	बहुत बड़ी
आक्रमणैः	६.	दवाने आदि से	**प्राप्तः**	१८.	प्राप्त हुआ (और उसे)
अपि ।	७.	भी	**तत्**	१५.	तब वह
न	१२.	नहीं	**कर्तुम्**	१९.	मार डालने के लिए कोई उपाय
शशाक	१४.	सका	**न**	२०.	नहीं
यदा	८.	जब	**अभ्यपद्यत**	२१.	सूझा
हन्तुम् ॥	१३.	मार			

श्लोकार्थ—बर्फीली वायु, अग्नि, जल में गिराने तथा पर्वतो से दबाने आदि से भी जब दैत्यराज निष्पाप पुत्र प्रह्लाद को नहीं मार सका तब वह बहुत बड़ी चिन्ता को प्राप्त हुआ और उसे मार डालने के लिए कोई उपाय नहीं सूझा ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

एष मे बह्वसाधूक्तो वधोपायाश्च निर्मिताः ।
तैस्तैर्द्रोहैरसद्धर्मैर्मुक्तः स्वेनैव तेजसा ॥४५॥

पदच्छेद— एषः मे बहु असाधु उक्तः वध उपायाः च निर्मिताः ।
तैः तैः द्रोहैः असद्धर्मैः मुक्तः स्वेन एव तेजसा ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	इसे	**निर्मिताः ।**	९.	किये
मे	२.	मैंने	**तैः तैः**	१०.	उन-उन
बहु	३.	बहुत	**द्रोहैः**	११.	अपकारों एवम्
असाधु	४.	भला बुरा	**असद्धर्मैः**	१२.	दुर्व्यवहार से (यह)
उक्तः	५.	कहा	**मुक्तः**	१६.	बचता गया
वधः	७.	वध के	**स्वेन**	१३.	अपने
उपायाः	८.	उपाय भी	**एव**	१४.	ही
च	६.	और	**तेजसा ॥**	१५.	प्रभाव से

श्लोकार्थ—इसे मैंने बहुत भला बुरा कहा और वध के उपाय भी किये हैं। उन-उन अपकारों एवम् दुर्व्यवहार से (यह) अपने ही प्रभाव से बचता गया ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

वर्तमानोऽविदूरे वै बालोऽप्यजडधीरयम् ।
न विस्मरति मेऽनार्यं शुनःशेप इव प्रभुः ॥४६॥

पदच्छेद— वर्तमानः अविदूरे वै बालः अपि अजडधीः अयम् ।
न विस्मरति मे अनार्यम् शुनः शेपः इव प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

वर्तमानः	७.	रहते है	**न**	१३.	नहीं
अविदूरे ।	६.	समीप में	**विस्मरति**	१४.	भूलेगा
वै	३.	निश्चितरूप से	**मे**	११.	मेरे
बालः	१.	बालक होने पर	**अनार्यम्**	१२.	अपकार को
अपि	२.	भी	**शुनः शेपः**	९.	शुनःशेप के
अजडधीः	५.	निशंक भाव से	**इव**	१०.	समान (यह)
अयम् ।	४.	यह	**प्रभुः ॥**	८.	(अतः) समर्थ है

श्लोकार्थ—बालक होने पर भी निश्चितरूप से यह निःशंक भाव से समीप में रहता है (अतः) समर्थ है। शुनःशेप के समान यह मेरे अपकार को नहीं भूलेगा ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

अप्रमेयानुभावोऽयमकुतश्चिद्भयोऽमरः ।
नूनमेतद्विरोधेन मृत्युर्मे भविता न वा ॥४७॥

पदच्छेद— अप्रमेय अनुभावः अयम् अकुतश्चिद्भयः अमरः ।
नूनम् एतत् विरोधेन मृत्युः मे भविता न वा ॥

शब्दार्थ—

अप्रमेय	२.	अपरिमित	नूनम्	६.	निश्चित ही
अनुभावः	३.	प्रभाव वाला	एतत्	७.	उसके साथ
अयम्	१.	यह बालक	विरोधेन	८.	विरोध करने से
अकुतश्चिद्भयः	४.	किसी से भी नहीं डरने वाला और	मृत्युः मे	९.	मृत्यु मेरी
अमरः ।	५.	न मरने वाला है	भविता	१०.	होगी
			न वा ॥	११.	अथवा न भी हो

श्लोकार्थ—यह बालक अपरिमित प्रभाव वाला है । किसी से भी न डरने वाला और न मरने वाला है । निश्चित ही इसके साथ विरोध करने से मेरी मृत्यु होगी अथवा न भी हो ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

इति तं चिन्तया किञ्चिन्म्लानश्रियमधोमुखम् ।
शण्डामर्कावौशनसौ विविक्त इति होचतुः ॥४८॥

पदच्छेद— इति तम् चिन्तया किञ्चित् म्लान श्रियम् अधोमुखम् ।
शण्डामर्कौ औशनसौ विविक्ते इति ह ऊचतुः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अधोमुखम्	६.	मुख लटकाये हुए
तम्	७.	उस दैत्यराज को	शण्डामर्कौ	९.	शण्ड और अमर्क नाम पुत्रों ने
चिन्तया	२.	चिन्ता से	औशनसौ	८.	शुक्राचार्य के
किञ्चित्	३.	कुछ	विविक्ते	१०.	एकान्त में
म्लान	४.	मलिन	इति ह	११.	यह
श्रियम् ।	५.	शोभा वाले	ऊचतुः ॥	११.	कहा

श्लोकार्थ—इस प्रकार चिन्ता से कुछ मलिन शोभा वाले, मुख लटकाये हुए, उस दैत्यराज से शुक्राचार्य के शण्ड और अमर्क नामक पुत्रों ने एकान्त में यह कहा ॥

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

जितं त्वयैकेन जगत्त्रयं भ्रुवोर्विजृम्भणत्रस्तसमस्तधिष्ण्यपम् ।
न तस्य चिन्त्यं तव नाथ चक्ष्महे न वै शिशूनां गुणदोषयोः पदम् ॥४९॥

पदच्छेद—जितम् त्वया एकेन जगत् त्रयम् भ्रुवोः विजृम्भण त्रस्त समस्त धिष्ण्यपम् ।
न तस्य चिन्त्यम् तव नाथ चक्ष्महे न वै शिशूनाम् गुण दोषयोः पदम् ॥

शब्दार्थ—

जितम्	६.	जीतलिया है (आपके)	न	१५.	नहीं (करनी चाहिए)
त्वया	२.	आपने	तस्य	१३.	उसकी
एकेन	३.	अकेले ही	चिन्त्यम्	१४.	चिन्ता
जगत्	५.	लोक को	तव	१२.	आपको
त्रयम्	४.	तीनों	नाथ	१.	हे नाथ
भ्रुवोः	७.	भौंहें	चक्ष्महे	१६.	ऐसा हम कहते हैं
विजृम्भण	८.	ठेढ़ी करने से	न वै	२१.	नहीं ही
त्रस्त	११.	कांप उठते हैं	शिशूनाम्	१७.	बच्चों के
समस्त	९.	सभी	गुण	१८.	गुण और
धिष्ण्यपम् ।	१०.	लोकपाल	दोषयोः	१९.	दोष को
			पदम् ॥	२०.	स्थान (देना चाहिए)

श्लोकार्थ—हे नाथ ! आपने अकेले ही तीनों लोक को जीत लिया है । आपके भौंहें टेढ़ी करने से सभी लोकपाल कांप उठते हैं । आपको उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए, ऐसा हम कहते हैं । बच्चों के गुण और दोष को स्थान नहीं ही देना चाहिए ॥

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

इमं तु पाशैर्वरुणस्य बद्ध्वा निधेहि भीतो न पलायते यथा ।
बुद्धिश्च पुंसो वयसाऽर्यसेवया यावद् गुरुर्भार्गव आगमिष्यति ॥५०॥

पदच्छेद— इमम् तु पाशैः वरुणस्य बद्ध्वा निधेहि भीतः न पलायते यथा ।
बुद्धिः च पुंसः वयसा आर्य सेवया यावत् गुरुः भार्गवः आगमिष्यति ॥

शब्दार्थ—

इमम्	६.	इसको	बुद्धिः	१७.	बुद्धि
तु	५.	आप	च	१५.	और
पाशैः	८.	पाश से	पुंसः	१६.	पुरुष की
वरुणस्य	७.	वरुण के	वयसा	१८.	अवस्था पाकर
बद्ध्वा	९.	बाँध कर	आर्य	१९.	श्रेष्ठ पुरुष की
निधेहि	१०.	रखिये	सेवया	२०.	सेवा से (सुधर जाती है)
भीतः	१२.	डर कर	यावत्	१.	जब तक
न	१३.	नहीं	गुरुः	२.	गुरु
पलायते	१४.	भाग जाये	भार्गव	३.	शुक्राचार्य
यथा ।	११.	जिससे ये	आगमिष्यति ॥	४.	नहीं आ जाते हैं तब तक

श्लोकार्थ—जब तक गुरु शुक्राचार्य नहीं आ जाते हैं तब तक आप इसको वरुण के पाश से बाँध कर रखिये । जिससे ये डर कर भाग न जाये । और, पुरुष की बुद्धि अवस्था पाकर श्रेष्ठ पुरुष की सेवा से सुधर जाती है ॥

एकपञ्चाशत्तमः श्लोकः

तथेति गुरुपुत्रोक्तमनुज्ञायेदमब्रवीत् ।
धर्मो ह्यस्योपदेष्टव्या राज्ञां ये गृहमेधिनाम् ॥५१॥

पदच्छेद— तथा इति गुरु पुत्रः उक्तम् अनुज्ञाय इदम् अब्रवीत् ।
धर्माः हि अस्य उपदेष्टव्याः राज्ञाम् ये गृहमेधिनाम् ॥

शब्दार्थं -

तथा	१.	अच्छा ठीक है	धर्माः	११.	धर्म है उनका
इति	२.	ऐसा कहकर	हि अस्य	१२.	इसको
गुरुपुत्रः	३.	गुरु पुत्र के	उपदेष्टव्याः	१३.	उपदेश देना चाहिए
उक्तम्	४.	कहे हुए को	राज्ञाम्	९.	राजाओं के
अनुज्ञाय	५.	मान कर (हिरण्यकशिपु ने)	ये	१०.	जो
इदम्	६.	यह	गृहमेधिनाम् ॥	८.	घर गृहस्थी में रहने वाले
अब्रवीत् ।	७.	कहा (कि)			

श्लोकार्थ—अच्छा ठीक है, ऐसा कहकर गुरु-पुत्र के कहे हुए को मान कर हिरण्यकशिपु ने यह कहा कि घर गृहस्थी में रहने वाले राजाओं के जो धर्म, उनका इसको उपदेश देना चाहिए ॥

द्विपञ्चाशत्तमः श्लोकः

धर्ममर्थं च कामं च नितरां चानुपूर्वशः ।
प्रह्लादायोचतू राजन् प्रश्रितावनताय च ॥५२॥

पदच्छेद— धर्मम् अर्थम् च कामम् च नितराम् अनुपूर्वशः ।
प्रह्लादाय ऊचतुः राजन् प्रश्रित अवनताय च ॥

शब्दार्थ—

धर्मम्	७.	धर्म	प्रह्लादाय	५.	प्रह्लाद को
अर्थम्	८.	अर्थ	ऊचतुः	१२.	शिक्षा देने लगे
च	९.	और	राजन्	१.	हे राजन्
कामम् च	१०.	काम की	प्रश्रित	२.	विनम्र
नितराम् च	११.	अच्छी प्रकार	अवनताय	४.	झुके हुए
अनुपूर्वशः ।	६.	क्रमशः	च ॥	३.	और

श्लोकार्थः—हे राजन् ! विनम्र और झुके हुए प्रह्लाद को क्रमशः धर्म, अर्थ और काम की अच्छी प्रकार शिक्षा देने लगे ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

यथा त्रिवर्गो गुरुभिरात्मने उपशिक्षितः ।
न साधु मेने तच्छिक्षां द्वन्द्वारामोपवर्णिताम् ।।५३।।

पदच्छेद— यथा त्रिवर्गः गुरुभिः आत्मने उपशिक्षितः ।
न साधु मेने तत् शिक्षाम् द्वन्द्व आराम उपवर्णिताम् ।।

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	**मेने**	१३.	माना
त्रिवर्गः	४.	धर्म-अर्थ-काम की	**तत्**	९.	उस
गुरुभिः	२.	गुरुओं ने	**शिक्षाम्**	१०.	शिक्षा के (उन्होंने)
आत्मने	३.	प्रह्लाद के लिए	**द्वन्द्व**	६.	राग-द्वेष (और)
उपशिक्षितः ।	५.	शिक्षा दी (तथा)	**आराम**	७.	विषय भोग के लिए
न	१२.	नहीं	**उपवर्णिताम् ।।**	८.	वर्णन किया गया हो
साधु	११.	अच्छा			

श्लोकार्थ—जिस प्रकार गुरुओं ने प्रह्लाद के लिए धर्म, अर्थ, काम की शिक्षा दी तथा राग, द्वेष और विषय भोग के लिए जिसका वर्णन किया गया है, उस शिक्षा को उन्होंने अच्छा नहीं माना ।।

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

यदाऽऽचार्यः परावृत्तो गृहमेधीयकर्मसु ।
वयस्यैर्बालकैस्तत्र सोपहूतः कृतक्षणैः ।।५४।।

पदच्छेद— यदा आचार्यः परावृत्तः गृहमेधीय कर्मसु ।
वयस्यैः बालकैः तत्र सः उपहूतः कृतक्षणैः ।।

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	**वयस्यैः**	७.	समान अवस्था वाले
आचार्यः	२.	गुरु	**बालकैः**	८.	बालकों ने
परावृत्तः	५.	लग गये	**तत्र**	६.	वहाँ
गृहमेधीय	३.	घर के	**सः उपहूतः**	१०.	उसको बुला लिया
कर्मसु ।	४.	कार्यों में	**कृतक्षणैः ।।**	९.	अवकाश मिलने पर

श्लोकार्थ—जब गुरु घर के कार्यों में लग गये तब समान अवस्था वाले बालकों ने अवकाश मिलने पर उसको बुल। लिया ।।

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

अथ ताञ् श्लक्ष्णया वाचा प्रत्याहूय महाबुधः ।
उवाच विद्वांस्तन्निष्ठां कृपया प्रहसन्निव ॥५५॥

पदच्छेद— अथ तान् श्लक्ष्णया वाचा प्रति आहूय महाबुधः ।
उवाच विद्वान् तत् निष्ठाम् कृपया प्रहसन् इव ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	उवाच	१३.	करने लगे
तान्	४.	उन बालकों को	विद्वान्	७.	विद्वान् (प्रह्लाद)
श्लक्ष्णया	३.	मधुर	तत्	११.	उनको
वाचा	४.	वाणी से	निष्ठाम्	१२.	उपदेश
प्रतिआहूय	५.	पुकार कर	कृपया	८.	कृपा करके
महाबुधः ।	६.	महाबुद्धिमान् (और)	प्रहसन्	९.	हंसते हुए
			इव ॥	१०.	से

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन बालकों को मधुर वाणी से पुकार कर महाबुद्धिमान् और विद्वान् प्रह्लाद कृपा करके हंसते हुए से, उनको उपदेश करने लगे ॥

षट्पञ्चाशत्तमः श्लोकः

ते तु तद्गौरवात्सर्वे त्यक्तक्रीडापरिच्छदाः ।
बाला नदूषितधियो द्वन्द्वारामेरितेहितैः ॥५६॥

पदच्छेद— ते तु तत् गौरवात् सर्वे व्यक्त क्रीडा परिच्छदाः ।
बालाः न दूषित धियः द्वन्द्व आराम ईरित ईहितैः ॥

शब्दार्थ—

ते तु	१.	उन	बालाः	३.	बालकोंने
तत्	४.	उस प्रह्लाद के प्रति	न दूषित	१३.	नहीं थे दूषित
गौरवात्	५.	आदर बुद्धि होने से	धियः	१४.	बुद्धि वाले
सर्वे	२.	सभी	द्वन्द्व	९.	राग-द्वेष
व्यक्त	८.	छोड़ दिया (वे)	आराम	१०.	विषय-भोग की
क्रीड़ा	६.	खेल-कूद की	ईरित	११.	प्रेरणा देने वाली
परिच्छदाः ।	७.	सामग्री को	ईहितैः ॥	१२.	चेष्टाओं से

श्लोकार्थ—उन सभी बालकों नेउस प्रह्लाद के प्रति आदर बुद्धि होने से खेल-कूद की सामग्री को छोड़ दिया । वे राग-द्वेष और विषय भोग की प्रेरणा देने वाली चेष्टाओं से दूषित बुद्धि वाले नहीं थे ॥

सप्तपञ्चाशत्तमः श्लोकः

पर्युपासत राजेन्द्र तन्न्यस्तहृदयेक्षणाः ।
तानाह करुणो मैत्रो महाभागवतोऽसुरः ॥५७॥

पदच्छेद — पर्युपासत राजेन्द्र तत् न्यस्त हृदय ईक्षणाः ।
तान् आह करुणः मैत्रः महाभागवतः असुरः ॥

शब्दार्थ—

पर्युपासत	६.	घेर कर बैठ गये	तान्	७.	उनसे
राजेन्द्र	१.	हे राजन्	आह	८.	कहा
तत्	२.	उसकी ओर	करुणः	९.	करुणाशील और
न्यस्त	५.	लगाकर (वे बालक)	मैत्रः	१०.	मैत्री भाव से भरे हुए
हृदय	३.	मन और	महाभागवतः	११.	महान् भगवत् भक्त
ईक्षणाः ।	४.	आँखों की	असुरः ॥	१२.	प्रह्लाद ने

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उसकी ओर मन और आँखों को लगाकर वे बालक उन्हें घेर कर बैठ गये । करुणाशील और मैत्री भाव से भरे हुए महान् भगवत् भक्त प्रह्लाद ने उनसे कहा ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
सप्तमस्कन्धे प्रह्लादानुचरिते पञ्चमोऽध्यायः ॥२॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

षष्ठः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच— कौमार आचरेत्प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह ।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ॥ १ ॥

पदच्छेद— कौमारे आचरेत् प्राज्ञः धर्मान् भागवतान् इह ।
दुर्लभम् मानुषम् जन्म तद् अपि अध्रुवम् अर्थदम् ॥

शब्दार्थ—

कौमारे	३.	कुमार अवस्था में ही	दुर्लभम्	९.	दुर्लभ है
आचरेत्	६.	आचरण करे (क्योंकि)	मानुषम्	७.	मनुष्य
प्राज्ञः	२.	बुद्धिमान् (पुरुष)	जन्म	८.	जन्म
धर्मान्	५.	धर्मों का	तद्-अपि	१०.	वह भी
भागवतान्	४.	भगवान् सम्बन्धी	अध्रुवम्	११.	अनिश्चित है फिर भी
इह ।	१.	इस लोक में	अर्थदम् ॥	१२.	सारगर्भित है

श्लोकार्थ—इस लोक में बुद्धिमान् पुरुष कुमार अवस्था में ही भगवान् सम्बन्धी धर्मों का आचरण करे। मनुष्य जन्म दुर्लभ है। वह भी अनिश्चित है। फिर भी सारगर्भित है ॥

द्वितीयः श्लोकः

यथा हि पुरुषस्येह विष्णोः पादोपसर्पणम् ।
यदेष सर्वभूतानां प्रिय आत्मेश्वरः सुहृत् ॥ २ ॥

पदच्छेद— यथा हि पुरुषस्य इह विष्णोः पाद उपसर्पणम् ।
यत् एषः सर्वभूतानाम् प्रियः आत्मा ईश्वरः सुहृत् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	यत्	८.	क्योंकि
हि	२.	कि	एषः	९.	यह विष्णु
पुरुषस्य	४.	मनुष्य के लिए	सर्वभूतानाम्	१०.	सभी प्राणियों के
इह	३.	इस संसार में	प्रियः	११.	प्रिय
विष्णोः	५.	विष्णु के	आत्मा	१२.	आत्मा
पादः	६.	चरणों की	ईश्वरः	१३.	ईश्वर और
उपसर्पणम् ।	७.	शरण लेना ही (कल्याणकारी है)	सुहृत् ॥	१४.	मित्र हैं

श्लोकार्थ—जैसे कि इस संसार में मनुष्य के लिए विष्णु के चरणों की शरण लेना ही कल्याणकारी है। क्योंकि यह विष्णु सभी प्राणियों के प्रिय आत्मा ईश्वर और मित्र हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

सुखमैन्द्रियकं दैत्या देहयोगेन देहिनाम् ।
सर्वत्र लभ्यते दैवाद्यथा दुःखमयत्नतः ॥ ३ ॥

पदच्छेद— सुखम् ऐन्द्रियकम् दैत्याः देह योगेन देहिनाम् ।
सर्वत्र लभ्यते दैवात् यथा दुःखम् अयत्नतः ॥

शब्दार्थ—

सुखम्	६.	सुख	सर्वत्र	८.	सब जगह
ऐन्द्रियकम्	५.	इन्द्रियों का	लभ्यते	९.	प्राप्त हो जाता है
दैत्याः	१.	हे दैत्यो !	दैवात्	७.	भाग्य वश
देह	३.	शरीर के	यथा	१०.	जिस प्रकार
योगेन	४.	सम्बन्ध से	दुःखम्	१२.	दुःख मिलता हैं
देहिनाम् ।	२.	शरीरधारियों को	अयत्नतः ॥	११.	बिना प्रयास के

श्लोकार्थ—हे दैत्यों ! शरीरधारियों को शरीर के सम्बन्ध में इन्द्रियों का सुख भाग्यवश सब जगह प्राप्त हो जाता है जिस प्रकार .वना प्रयास के दुःख मिलता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

तत्प्रयासो न कर्तव्यो यत आयुर्व्ययः परम् ।
न तथा विन्दते क्षेमं मुकुन्दचरणाम्बुजम् ॥ ४ ॥

पदच्छेद— तत् प्रयासः न कर्तव्यः यतः आयुर्व्ययः परम् ।
न तथा विन्दते क्षेमम् मुकुन्द चरण अम्बुजम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	अतः उसके लिए	न	१५.	नहीं
प्रयासः	२.	प्रयत्न	तथा	९.	वैसा करने से
न	३.	नहीं	विन्दते	१४.	प्राप्त होता है
कर्तव्यः	४.	करना चाहिए	क्षेमम्	१०.	कल्याण स्वरूप
यतः	५.	जिससे	मुकुन्द	११.	भगवान् का
आयुः	६.	आयु का	चरण	१२.	चरण
व्ययः	८.	क्षय (होता है·	अम्बुजम् ॥	१३.	कमल
परम् ।	७.	बहुत			

श्लोकार्थ—अतः उसके लिए प्रयत्न नहीं करना चाहिए, जिससे बहुत आयु का क्षय होता है । वैसा करने से कल्याण स्वरूप भगवान् का चरण-कमल नहीं प्राप्त होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

ततो यतेत कुशलः क्षेमाय भयमाश्रितः ।

शरीरं पौरुषं यावन्न विपद्येत पुष्कलम् ॥ ५ ॥

पदच्छेद - ततः यतेत कुशलः क्षेमाय भयम् आश्रितः ।

शरीरम् पौरुषम् यावत् न विपद्येत पुष्कलम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. इस कारण	शरीरम्	८. शरीर की
यतेत	६. तब तक प्रयत्न करे	पौरुषम्	९. शक्ति
कुशलः	४. विद्वान् पुरुष	यावत्	७. जब-तक
क्षेमाय	५. कल्याण के लिए	न	१०. नहीं
भयम्	२. भय के	विपद्येत	१२. नष्ट हो जाती है
आश्रितः ।	३. आश्रित	पुष्कलम् ॥	११. पूर्णतया

श्लोकार्थ—इस कारण भय के आश्रित विद्वान् पुरुष कल्याण के लिए (तब तक) प्रयत्न करे जब-तक शरीर की शक्ति पूर्णतया नष्ट नहीं हो जाती है ॥

षष्ठः श्लोकः

पुंसो वर्षशतं ह्यायुस्तदर्धं चाजितात्मनः ।

निष्फलं यदसौ रात्र्यां शेतेऽन्धं प्रापितस्तमः ॥ ६ ॥

पदच्छेद— पुंसः वर्ष शतम् हि आयुः तत् अर्धम् च अजित आत्मनः ।

निष्फलम् यत् असौ रात्र्याम् शेते अन्धम् प्रापितः तमः ॥

शब्दार्थ—

पुंसः	१. मनुष्य की	निष्फलम्	१६. व्यर्थ ही
वर्ष	३. बर्ष की	यत्	१०. जिससे (कि)
शतम्	२. सौ	असौ	११. वह
हि आयुः	४. आयु है	रात्र्याम्	१२. रात्रि में
तत्	६. उसकी	शेते	१७. सोता रहता है
अर्धम्	७. आधी	अन्धम्	१३. घोर
च	५. और	प्रापितः	१५. प्राप्त करके
अजित	८. अजितेन्द्रिय	तमः ॥	१४. अज्ञान को
आत्मनः ।	९. पुरुष की होती है)		

श्लोकार्थ—मनुष्य की सौ वर्ष की आयु है । और उसकी आधी अजितेन्द्रिय पुरुष की होती है जिससे वह रात्रि में घोर अज्ञान को प्राप्त करके व्यर्थ ही सोता रहता है ॥

सप्तमः श्लोकः

मुग्धस्य बाल्ये कौमारे क्रीडतो याति विंशतिः ।
जरया ग्रस्तदेहस्य यात्यकल्पस्य विंशतिः ॥ ७ ॥

पदच्छेद— मुग्धस्य बाल्ये कौमारे क्रीडतः याति विंशतिः ।
जरया ग्रस्त देहस्य याति अकल्पस्य विंशतिः ।।

शब्दार्थ—

मुग्धस्य	२.	विवेक रहित होने से (और)	**जरया**	७.	बुढ़ापे से
बाल्ये	१.	बाल्यावस्था में	**ग्रस्त**	८.	ग्रस्त
कौमारे	३.	कुमार अवस्था में	**देहस्य**	९.	शरीर होने पर
क्रीडतः	४.	खेलते हुए (उसकी)	**याति**	१२.	बीत जाते हैं
याति	६.	बीत जाती है	**अकल्पस्य**	१०.	असमर्थता में
विंशतिः ।	५.	बीस वर्ष की आयु	**विंशतिः ।।**	११.	बीस वर्ष

श्लोकार्थ—बाल्यावस्था में विवेक रहित होने से और कुमार अवस्था में खेलते हुए उसकी बीस वर्ष की आयु बीत जाती है। बुढ़ापे से ग्रस्त शरीर होने पर असमर्थता में बीस वर्ष बीत जाते हैं ।।

अष्टमः श्लोकः

दुरापूरेण कामेन मोहेन च बलीयसा ।
शेषं गृहेषु सक्तस्य प्रमत्तस्यापयाति हि ॥ ८ ॥

पदच्छेद— दूर अपूरेण कामेन मोहेन च बलीयसा ।
शेषम् गृहेषु सक्तस्य प्रमत्तस्य अपयाति हि ।।

शब्दार्थ—

दूर	१.	पहुँच के बाहर एवं	**शेषम्**	१०.	शेष अवस्था
अपूरेण	२.	पूर्ण न होने वाली	**गृहेषु**	७.	घर में
कामेन	३.	कामनाओं से	**सक्तस्य**	८.	आसक्त और
मोहेन	६.	मोह से	**प्रमत्तस्य**	९.	प्रमत्त की
च	४.	और	**अपयाति**	१२.	बीत जाती है
बलीयसा ।	५.	प्रबल	**हि ।।**	११.	यों ही

श्लोकार्थ—पहुँच के बाहर एवं पूर्ण न होने वाली कामनाओं से और प्रबल मोह में घर में आसक्त और प्रमत्त की शेष अवस्था यों ही बीत जाती है ।।

नवमः श्लोकः

को गृहेषु पुमान्सक्तमात्मानमजितेन्द्रियः ।
स्नेहपाशैर्दृढैर्बद्धमुत्सहेत विमोचितुम् ॥ ६ ॥

पदच्छेद— कः गृहेषु पुमान् सक्तम् आत्मानम् अजितेन्द्रियः ।
स्नेह पाशैः दृढैः बद्धम् उत्सहेत विमोचितुम् ॥

शब्दार्थ—

कः	१. कौन	स्नेह	६. स्नेह के
गृहेषु	४. घर में	पाशैः	७. जाल में
पुमान्	३. पुरुष	दृढैः	८. दृढ़ता से
सक्तम्	५. आसक्त (तथा)	बद्धम्	६. बंधे हुए
आत्मानम्	१०. अपने को	उत्सहेत	१२. समर्थ होगा
अजितेन्द्रियः ।	२. अजितेन्द्रिय	विमोचितुम् ॥	११. छुड़ाने के लिए

श्लोकार्थ—कौन अजितेन्द्रिय पुरुष घर में आसक्त तथा स्नेह के जाल में दृढ़ता से बंधे हुए अपने को छुड़ाने के लिए समर्थ होगा ॥

दशमः श्लोकः

को न्वर्थतृष्णां विसृजेत् प्राणेभ्योऽपि य ईप्सितः ।
यं क्रीणात्यसुभिः प्रेष्ठैस्तस्करः सेवको वणिक् ॥१०॥

पदच्छेद— कः नु अर्थ तृष्णाम् विसृजेत् प्राणेभ्यः अपि यः ईप्सितः ।
यम् क्रीणाति असुभिः प्रेष्ठैः तस्करः सेवकः वणिक् ॥

शब्दार्थ—

कः	१. कौन	यम्	६. जिसे
नु अर्थ	२. धन की	क्रीणाति	१५. खरीदते हैं
तृष्णाम्	३. तृष्णा को	असुभिः	१४. प्राणों की (बाजी लगाकर)
विसृजेत्	४. छोड़ सकता है	प्रेष्ठैः	१३. अत्यन्त प्रिय
प्राणेभ्यः	६. प्राणों से	तस्करः	१०. चोर
अपि	७. भी बढ़कर	सेवकः	११. सेवक
यः	५. जो	वणिक् ॥	१२. व्यापारी
ईप्सितः ।	८. अभीष्ट है		

श्लोकार्थ— कौन धन की तृष्णा को छोड़ सकता है जो प्राणों से भी बढ़कर अभीष्ट है । जिसे चोर, सेवक, व्यापारी अत्यन्त प्रिय प्राणों की बाजी लगाकर खरीदते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

कथं प्रियाया अनुकम्पितायाः सङ्गं रहस्यं रुचिरांश्च मन्त्रान् ।
सुहृत्सु च स्नेहसितः शिशूनां कलाक्षराणामनुरक्तचित्तः ॥११॥

पदच्छेद— कथम् प्रियायाः अनुकम्पितायाः सङ्गम् रहस्यम् रुचिरान् च मन्त्रान् ।
सुहृत्सु च स्नेहसितः शिशूनाम् कल अक्षराणाम् अनुरक्त चित्तः ॥

शब्दार्थ—कथम्	१६.	कैसे (छोड़ दे)	सुहृत्सु	२.	भाई-बन्धुओं के
प्रियायाः	१०.	प्रिया का	च	१.	और
अनुकम्पितायाः	९.	दया से युक्त	स्नेहसितः	३.	स्नेह से बंधा हुआ
सङ्गम्	१२.	सहवास	शिशूनाम्	४.	बच्चों की
रहस्यम्	११.	एकान्त	कल	५.	तुतली
रुचिरान्	१४.	मनोहर	अक्षराणाम्	६.	बोली में
च	१३.	और	अनुरक्तः	७.	लुभाये हुए
मन्त्रान् ।	१५.	विचार की बातों को	चित्तः ॥	८.	चित्त वाला (पुरुष)

श्लोकार्थ—और भाई-बन्धुओं के स्नेह से बंधा हुआ, बच्चों की तुतली बोली में लुभाये हुए चित्तवाला पुरुष दया से युक्त प्रिया का एकान्त सहवास और मनोहर विचार की बातों को कैसे छोड़ दे ॥

द्वादशः श्लोकः

पुत्रान्स्मरंस्ता दुहितॄर्हृदय्या भ्रातॄन् स्वसॄर्वा पितरौ च दीनौ ।
गृहान् मनोज्ञोरुपरिच्छदांश्च वृत्तीश्च कुल्याः पशुभृत्यवर्गान् ॥१२॥

पदच्छेद - पुत्रान् स्मरन् ताः दुहितॄः हृदय्याः भ्रातॄन् स्वसॄः वा पितरौ च दीनौ ।
गृहान् मनोज्ञ उरु परिच्छदान् च वृत्तीः च कुल्याः पशुभृत्य वर्गान् ॥

शब्दार्थ—पुत्रान्	१.	पुत्रों तथा	गृहान्	१३.	घरों को
स्मरन्	२०.	स्मरण करते हुए (कैसे छोड़े)	मनोज्ञ	१०.	सुन्दर
ताः	३.	उन	उरु	११.	विशाल
दुहितॄः	४.	पुत्रियों का	परिच्छदान्	१२.	सामग्रियों से युक्त
हृदय्याः	२.	प्राणप्यारी	च	१४.	और
भ्रातॄन्	५.	भाइयों (अथवा)	वृत्तीः	१६.	जीविकाओं का
स्वसॄः वा	६.	बहिनों का	च	१७.	और
पितरौ	९.	माता-पिता का	कुल्या	१५.	वंश परम्परा से आई हुई
च	७.	और	पशुभृत्य	१८.	पशु सेवकों के
दीनौ ।	८.	दीन	वर्गान् ॥	१९.	समूह को

श्लोकार्थ—पुत्रों, प्राणप्यारी उन पुत्रियों, भाइयों अथवा बहिनों तथा दीन माता-पिता, सुन्दर विशाल सामग्रियों से युक्त घरों और वंश परम्परा से आई हुई जीविकाओं और पशु एवम् सेवकों के समूह को स्मरण करते हुए कैसे छोड़े ॥

त्रयोदशः श्लोकः

त्यजेत कोशस्कृदिवेहमानः कर्माणि लोभादवितृप्तकामः।
औपस्थ्यजैह्व्यं बहु मन्यमानः कथं विरज्येत दुरन्तमोहः ॥१३॥

पदच्छेद— त्यजेत कोशस्कृत् इव ईहमानः कर्माणि लोभात् अवितृप्तकामः।
औपस्थ्य जैह्व्यम् बहु मन्यमानः कथम् विरज्येत दुरन्तमोहः ॥

शब्दार्थ—

त्यजेत	१४.	त्यागे	औपस्थ्य	७.	इन्द्रिय और
कोशस्कृत्	४.	रेशम के कीड़े के	जैह्व्यम्	८.	जिह्वा के सुख को
इव	५.	समान	बहु	९.	बहुत
ईहमानः	६.	चेष्टा करता हुआ	मन्यमान्ः	१०.	मानता हुआ
कर्माणि	१३.	कर्मों को	कथम्	११.	कैसे
लोभात्	३.	लोभ वश	विरज्येत	१२.	विरक्त होवे और
अवितृप्तकामः।	२.	अतृप्त कामनाओं (वाला मनुष्य)	दुरन्तमोहः॥	१.	प्रवल मोह से युक्त

श्लोकार्थ—प्रबल मोह से युक्त अतृप्त कामनाओं वाला मनुष्य लोभ वश रेशम के कीड़े के समान चेष्टा करता हुआ इन्द्रिय और जिह्वा के सुख को वहुत मानता हुआ कैसे विरक्त होवे और कर्मों को त्यागे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कुटुम्बपोषाय वियन् निजायुर्न बुध्यतेऽर्थं विहतं प्रमत्तः।
सर्वत्र तापत्रयदुःखितात्मा निर्विद्यते न स्वकुटुम्बरामः ॥१४॥

पदच्छेद— कुटुम्ब पोषाय वियन् निज आयुः न बुध्यते अर्थम् विहतम् प्रमत्तः।
सर्वत्र तापत्रय दुःखित आत्मा निर्विद्यते न स्व कुटुम्बरामः ॥

शब्दार्थ—

कुटुम्ब	१.	कुटुम्ब के	प्रमत्तः	६.	प्रमाद वश
पोषाय	२.	भरण-पोषण के लिए	सर्वत्र	१२.	सब जगह
वियन्	५.	नष्ट करता हुआ (मनुष्य)	तापत्रय	१३.	तीनों तापों से
निज	३.	अपनी	दुःखित	१४.	दुःखित
आयुः	४.	आयु को	आत्मा	१५.	आत्मा वाला होकर भी
न	९.	नहीं	निर्विद्यते	१७.	विरत होता है
बुध्यते	१०.	जानता है	न	१६.	नहीं
अर्थम्	८.	स्वार्थ को	स्व कुटुम्बरामः॥	११.	अपने कुटुम्ब में आसक्त (वह)
विहतम्।	७.	नष्ट हुए			

श्लोकार्थ—कुटुम्ब के भरण-पोषण के लिए अपनी आयु को नष्ट करता हुआ मनुष्य प्रमाद वश नष्ट हुए स्वार्थ को नहीं जानता है। अपने कुटुम्ब में आसक्त वह सब जगह तीनों तापों से दुःखित आत्मा वाला होकर भी नहीं विरत होता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

वित्तेषु नित्याभिनिविष्टचेता विद्वांश्च दोषं परवित्तहर्तुः ।
प्रेत्येह चाथाप्यजितेन्द्रियस्तदशान्तकामो हरते कुटुम्बी ॥१५॥

पदच्छेद — वित्तेषु नित्य अभिनिविष्ट चेताः विद्वान् च दोषम् परवित्त हर्तुः ।
प्रेत्य इह च अथ अपि अजितेन्द्रियः तत् अशान्त कामः हरते कुटुम्बी ॥

शब्दार्थ—

वित्तेषु	२.	धन में	**प्रेत्य**	८.	परलोक में
नित्य	१.	नित्य	**इह**	६.	इस लोक में
अभिनिविष्ट	३.	हठ पूर्वक लगा हुआ	**च अथ**	७.	और
चेताः	४.	चित्त वाला	**अपि**	९.	भी
विद्वान्	१३.	जानता हुआ	**अजितेन्द्रियः**	१५.	अजितेन्द्रिय (तथा)
च	१४.	भी	**तत्**	१७.	उसका
दोषम्	१२.	दोष को	**अशान्तकामः**	१६.	अपूर्ण कामनाओं से युक्त होने से
परवित्त	१०.	दूसरे के धन	**हरते**	१८.	हरण कर लेता है
हर्तुः ।	११.	हरण करने वाले के	**कुटुम्बी ॥**	५.	कुटुम्बी व्यक्ति

श्लोकार्थ—नित्य धन में हठ पूर्वक लगा हुआ चित्तवाला कुटुम्बी व्यक्ति इस लोक में और परलोक में भी दूसरे के धन हरण करने वाले के दोष को जानता हुआ भी अजितेन्द्रिय तथा अपूर्ण कामनाओं से युक्त होने से उसका हरण कर लेता है ॥

षोडशः श्लोकः

विद्वानपीत्थं दनुजाः कुटुम्बं पुष्णन्स्वलोकाय न कल्पते वै ।
यः स्वीयपारक्यविभिन्नभावस्तमः प्रपद्येत यथा विमूढः ॥१६॥

पदच्छेद— विद्वान् अपि इत्थम् दनुजाः कुटुम्बम् पुष्णन् स्वलोकाय न कल्पते वै ।
यः स्वीय पारक्य विभिन्न भावः तमः प्रपद्येत यथा विमूढः ॥

शब्दार्थ—

विद्वान्	३.	विद्वान्	**यः**	२.	जो
अपि इत्थम्	४.	भी इस प्रकार	**स्वीय**	११.	वह अपने
दनुजाः	१.	हे दानवो !	**पारक्य**	१२.	पराये का
कुटुम्बम्	५.	कुटुम्ब का	**विभिन्न**	१३.	भेद
पुष्णन्	६.	भरण पोषण करता हुआ	**भावः**	१४.	भाव रहने से (वह)
स्वलोकाय	७.	अपने कल्याण के लिए	**तमः**	१७.	नरक को
न	९.	नहीं	**प्रपद्येत**	१८.	प्राप्त होता है
कल्पते	१०.	समर्थ होता है	**यथा**	१६.	समान
वै ।	८.	निश्चित रूप से	**विमूढः ॥**	१५.	(अज्ञानी) के

श्लोकार्थ—हे दानवो ! जो विद्वान् भी इस प्रकार कुटुम्ब का भरण-पोषण करता हुआ अपने कल्याण के लिये निश्चित रूप से समर्थ नहीं होता है वह अपने पराये का भेद भाव रहने से अज्ञानी के समान नरक को प्राप्त होता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

यतो न कश्चित् क्व च कुत्रचिद् वा दीनः स्वमात्मानमलं समर्थः ।
विमोचितुं कामदृशां विहारक्रीडामृगो यन्निगडो विसर्गः ॥१७॥

पदच्छेद— यतः न कश्चित् क्व च कुत्रचिद्वा दीनः स्वम् आत्मानम् अलम् समर्थः ।
विमोचितुम् कामदृशाम् विहार क्रीडा मृगः यत् निगडः विसर्गः ॥

शब्दार्थ—यत्	१.	जिससे कि	समर्थः	१८.	समर्थ नहीं है
न कश्चित्	९.	नहीं कोई	विमोचितुम्	१७.	छुड़ाने के लिए
क्व च	११.	किसी प्रकार	कामदृशाम्	२.	कामिनियों के
कुत्रचित्	१३.	कहीं भी	विहार	३.	विहार कालीन
वा	१२.	अथवा	क्रीडा	४.	खेलने का
दीनः	१०.	दीन (पुरुष)	मृगः	५.	हरिण बना हुआ
स्वम्	१४.	अपनी	यत्	६.	एवम्
आत्मानम्	१५.	आत्मा को	निगडः	८.	बेड़ी में बँधा हुआ
अलम् ।	१६.	पूर्ण रूप से	विसर्गः ॥	७.	सन्तान की

श्लोकार्थ—जिससे कि कामिनियों के विहार कालीन खेलने का हरिण बना हुआ एवम् सन्तान की बेड़ी में बंधा हुआ कोई दीन पुरुष किसी प्रकार अथवा कहीं भी अपना आत्मा को पूर्ण रूप से छुड़ाने के लिए समर्थ नहीं है ॥

अष्टादशः श्लोकः

ततो विदूरात् परिहृत्य दैत्या दैत्येषु सङ्गं विषयात्मकेषु ।
उपेत नारायणमादिदेवं स मुक्तसङ्गैरिषितोऽपवर्गः ॥१८॥

पदच्छेद— ततः विदूरात् परिहृत्य दैत्याः दैत्येषु सङ्गम् विषय आत्मकेषु ।
उपेत नारायणम् आदि देवम् सः मुक्त सङ्गैः इषितः अपवर्गः ॥

शब्दार्थ—ततः	१.	इसलिए	उपेत	१२.	पास जाओ
विदूरात्	७.	दूर से ही	नारायणम्	११.	भभवान् नारायण के
परिहृत्य	८.	त्याग कर	आदि	९.	आदि
दैत्याः	२.	हे दैत्यों !	देवम्	१०.	देव
दैत्येषु	५.	दैत्यों का	सः	१३.	वे भगवान् नारायण
सङ्गम्	६.	सङ्ग	मुक्त	१५.	छोड़े हुए (महात्माओं की)
विषय	३.	विषय में	सङ्गैः	१४.	आसक्ति को
आत्मकेषु ।	४.	आसक्त	इषितः	१६.	अत्यन्त प्रिय है (और)
			अपवर्गः ॥	१७.	परम गति है ।

श्लोकार्थ—इसलिए हे दैत्यो ! विषय में आसक्त दैत्यों का सङ्ग दूर से ही त्याग कर आदि देव भगवान् नारायण के पास जाओ । वे भगवान् नारायण आसक्ति को छोड़े हुए महात्माओं के प्रिय हैं और परम गति हैं ।

एकोनविंशः श्लोकः

न ह्यच्युतं प्रीणयतो बह्वायासोऽसुरात्मजाः ।
आत्मत्वात् सर्वभूतानां सिद्धत्वादिह सर्वतः ॥१९॥

पदच्छेद— न हि अच्युतम् प्रीणयतः बहुआयासः असुर आत्मजाः ।
आत्मत्वात् सर्व भूतानाम् सिद्धत्वात् इह सर्वतः ॥

शब्दार्थ—

न हि	६. नहीं करना है (क्योंकि)	आत्मत्वात्	८. आत्मा होने से (तथा)
अच्युतम्	३. भगवान् श्रीकृष्ण को	सर्वभूतानाम्	७. सभी प्राणियों के
प्रीणयतः	४. प्रसन्न करने के लिए	सिद्ध	९. सिद्ध
बहुआयासः	५. बहुत प्रयत्न	त्वात्	१०. होने से (वे)
असुर	१. हे दैत्य के	इह	१२. इस संसार में (सर्वथा सुलभ है)
आत्मजाः ।	२. पुत्रो !	सर्वतः ॥	११. सब प्रकार से

श्लोकार्थ—हे दैत्य पुत्रो ! भगवान् श्री कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए बहुत प्रयत्न नहीं करना होता है। क्योंकि सभी प्राणियों की आत्मा होने से तथा सिद्ध होने से वे सब प्रकार से इस संसार में सर्वथा सुलभ हैं ॥

विंशः श्लोकः

परावरेषु भूतेषु ब्रह्मान्तस्थावरादिषु ।
भौतिकेषु विकारेषु भूतेष्वथ महत्सु च ॥२०॥

पदच्छेद— परावरेषु भूतेषु ब्रह्म अन्त स्थावर आदिषु ।
भौतिकेषु विकारेषु भूतेषु अथ महत्सु च ॥

शब्दार्थ—

परावरेषु	५. छोटे-बड़े	भौतिकेषु	७. पञ्चभूतों से बनी
भूतेषु	६. प्राणियों में	विकारेषु	८. वस्तुओं में
ब्रह्म	१. ब्रह्मा से	भूतेषु	९. पञ्चभूतों में
अन्त	२. लेकर	अथ	१०. और
स्थावर	३. स्थावर	महत्सु	११. महत्तत्त्वों में
आदिषु ।	४. आदि	च ॥	१२. भी वह भगवान् है ।

श्लोकार्थ—ब्रह्मा से लेकर स्थावर आदि छोटे बड़े प्राणियों में, पञ्चभूतों से बनी वस्तुओं में और पञ्चभूतों में तथा महत्तत्त्वों में, भी वह भगवान् है ॥

एकविंशः श्लोकः

गुणेषु गुणसाम्ये च गुणव्यतिकरे तथा ।
एक एव परो ह्यात्मा भगवानीश्वरोऽव्ययः ॥२१॥

पदच्छेद— गुणेषु गुणसाम्ये च गुणव्यतिकरे तथा ।
एक एव परः हि आत्मा भगवान् ईश्वरः अव्ययः ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	२.	गुणों में	एकः	६.	एक
गुणसाम्ये	३.	गुणों की साम्यावस्था (प्रकृति) में	एव	७.	ही
च	४.	और	परः हि आत्मा	११.	परमात्मा (विराजमान है)
गुणव्यतिकरे	५	गुण से सम्बन्धित वस्तुओं में	भगवान्	१०.	भगवान्
तथा ।	१.	तथा	ईश्वरः	९.	ईश्वर
			अव्ययः ॥	८.	अविनाशी

श्लोकार्थ—तथा गुणों में गुणों की साम्यावस्था में प्रकृति और गुणों से सम्बन्धित वस्तुओं में एक ही अविनाशी ईश्वर भगवान् परमात्मा विराजमान है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

प्रत्यगात्मस्वरूपेण दृश्यरूपेण च स्वयम् ।
व्याप्यव्यापकनिर्देश्यो ह्यनिर्देश्योऽविकल्पितः ॥२२॥

पदच्छेद— प्रत्यक् आत्मस्वरूपेण दृश्यरूपेण च स्वयम् ।
व्याप्य व्याप्क निर्देश्यः हि अनिर्देश्यः अविकल्पितः ॥

शब्दार्थ—

प्रत्यक्	१.	वही अन्तर्यामी परमात्मा	व्याप्य	६.	व्याप्य और
आत्मस्वरूपेण	२.	देखने वाले के रूप में	व्यापक	७.	व्यापक रूप में
दृश्यरूपेण	५.	दिखाई देने वाले के रूप में हैं	निर्देश्यः हि	८.	बताये जाने योग्य
च	३.	और	अनिर्देश्य	९.	अनिर्वचनीय (और)
स्वयम् ।	४.	साक्षात्	अविकल्पितः ॥	१०.	विकल्प से रहित है ।

श्लोकार्थ—वही अन्तर्यामी परमात्मा देखने वालों के रूप में और साक्षात् दिखाई देने वाले के रूप में है । व्याप्य और व्यापक रूप में बताये जाने योग्य, अनिर्वचनीय और विकल्प से रहित है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

केवलानुभवानन्दस्वरूपः परमेश्वरः ।
माययान्तर्हितैश्वर्य ईयते गुणसर्गया ॥२३॥

पदच्छेद— केवल अनुभव आनन्द स्वरूपः परमेश्वरः ।
मायया अन्तर्हित ऐश्वर्यः ईयते गुण सर्गया ॥

शब्दार्थ—

केवल	१.	वे केवल	मायया	६.	माया के द्वारा
अनुभव	२.	अनुभव स्वरूप	अन्तर्हित	७.	छिपे
आनन्द	३.	आनन्द	ऐश्वर्य	८.	ऐश्वर्य वाले हैं
स्वरूपः	४.	स्वरूप	ईयते	११.	माया के निवृत्त होने पर वे (प्राप्त होते हैं)
परमेश्वरः ।	५.	परमात्मा हैं	गुण	९.	वे गुणमयी
			सर्गया ॥	१०.	सृष्टि करने वाली

श्लोकार्थ—वे केवल अनुभव स्वरूप, आनन्द स्वरूप परमात्मा हैं । माया के द्वारा छिपे ऐश्वर्य वाले हैं । वे गुणमयी सृष्टि करने वाली माया के निवृत्त होने पर प्राप्त होते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तस्मात् सर्वेषु भूतेषु दयां कुरुत सौहृदम् ।
आसुरं भावमुन्मुच्य यया तुष्यत्यधोक्षजः ॥२४॥

पदच्छेद— तस्मात् सर्वेषु भूतेषु दयाम् कुरुत सौहृदम् ।
आसुरम् भावम् उन्मुच्य यया तुष्यति अधोक्षजः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिए	आसुरम्	२.	असुर
सर्वेषु	५.	सभी	भावम्	३.	भाव को
भूतेषु	६.	प्राणियों पर	उन्मुच्य	४.	छोड़कर
दयाम्	८.	दया	यया	१०.	जिससे
कुरुत	९.	करो	तुष्यति	१२.	प्रसन्न होते है
सौहृदम् ।	७.	बन्धु-भाव (और)	अधोक्षजः ॥	११.	भगवान्

श्लोकार्थ—इसलिये असुरभाव को छोड़कर सभी प्राणियों पर बन्धु-भाव और दया करो जिससे भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तुष्टे च तत्र किमलभ्यमनन्त आद्ये किं तैर्गुणव्यतिकरादिह ये स्वसिद्धाः।
धर्मादयः किमगुणेन च काङ्क्षितेन सारंजुषां चरणयोरुपगायतां नः ॥२५॥

पदच्छेद—तुष्टे च तत्र किम् अलभ्यम् अनन्ते आद्ये किम् तैः गुणव्यतिकरात् इह ये स्वसिद्धाः।
धर्म आदयः किम् अगुणेन च कांङ्क्षितेन सारम् जुषाम् चरणयोः उपगायतां नः ॥

शब्दार्थ—तुष्टे च	३.	प्रसन्न होने पर	स्वसिद्धाः।	१०.	अपने आप सिद्ध हैं
तत्र किम्	४.	यहाँ क्या	धर्म आदयः	८.	धर्म आदि
अलभ्यम्	५.	दुर्लभ है	किम्	२०.	क्या प्रयोजन है
अनन्त	२.	अनन्त भगवान् के	अगुणेन च	१८.	मोक्ष
आद्ये	१.	आदि नारायण	काङ्क्षितेन	१९.	चाहने से
किम्	१२.	क्या प्रयोजन है	सारम्	१४.	अमृत का
तैः	११.	उनसे	जुषाम्	१५.	सेवन करने वाले (तथा)
गुणव्यतिकरात्	९.	गुणों के परिणाम से	चरणयोः	१३.	भगवान् के चरणों के
इह	६.	यहाँ	उपगायताम्	१६.	गुणों का कीर्तन करनेवाले
ये	७.	जो	नः ॥	१७.	हमें

श्लोकार्थ—आदि नारायण अनन्त भगवान् के प्रसन्न होने पर यहाँ क्या दुर्लभ है। यहाँ जो धर्म आदि गुणों के परिणाम से अपने आप सिद्ध हैं उनसे क्या प्रयोजन है। भगवान् के चरणों के अमृत का सेवन करने वाले तथा गुणों का कीर्तन करने वाले हमें मोक्ष चाहने से क्या प्रयोजन है ॥

षड्विंशः श्लोकः

धर्मार्थकाम इति योऽभिहितस्त्रिवर्ग ईक्षा त्रयी नयदमौ विविधा च वार्ता।
मन्ये तदेतदखिलं निगमस्य सत्यं स्वात्मार्पणं स्वसुहृदः परमस्य पुंसः ॥२६॥

पदच्छेद—धर्म अर्थ कामः इति यः अभिहितः त्रिवर्गः ईक्षा त्रयी नयदमौ विविधा च वार्ता।
मन्ये तत् एतत् अखिलम् निगमस्य सत्यम् स्व आत्म अर्पणम् स्व सुहृदः परमस्य पुंसः ॥

शब्दार्थ धर्म-अर्थः	१.	धर्म-अर्थ	मन्ये	१३.	मानता हूँ
कामः इति यः	२.	काम यह जो	तत् एतत्	११.	इन सबको
अभिहितः	४.	कहा गया है (तथा)	अखिलम्	९.	ये सब
त्रिवर्गः	३.	तीन पुरुषार्थ	निगमस्य	१०.	वेद का (विषय है)
ईक्षात्रयी	५.	आत्म विद्या कर्मकाण्ड	सत्यम्	१२.	सत्य सार्थक तभी
नय दमौ	६.	न्याय शास्त्र दण्डनीति (ये)	स्वआत्म	१६.	अपने आत्मा का
विविधा च	७.	अनेक प्रकार के	अर्पणम्	१७.	समर्पण करने में सहायक हों
वार्ता।	८.	जीविका के साधन हैं	स्वसुहृदः	१४.	यदि ये अपने हितैषी
			परमस्य पुंसः ॥	१५.	परम पुरुष भगवान् के

श्लोकार्थ—धर्म, अर्थ, काम यह जो तीन पुरुषार्थ कहा गया है, तथा आत्मविद्या, कर्मकाण्ड, न्याय-शास्त्र, दण्डनीति के अनेक प्रकार के साधन हैं, ये सब वेद के विषय हैं। इन सबको मैं सत्य सार्थक तभी मानता हूँ यदि ये अपने हितैषी परम पुरुष भगवान् को अपने आत्मा के समर्पण करने में सहायक हों ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ज्ञानं तदेतदमलं दुरवापमाह नारायणो नरसखः किल नारदाय।
एकान्तिनां भगवतस्तदकिञ्चनानां पादारविन्दरजसाऽऽप्लुतदेहिनां स्यात् ॥२७॥

पदच्छेद—ज्ञानम् तत् एतत् अमलम् दुरवापम् आह नारायणः नर सखः किल नारदाय।
एकान्तिनाम् भागवतः तत् अकिञ्चनानाम् पादारविन्द रजसा आप्लुत देहिनां स्यात् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	४.	ज्ञान (जो मैंने)	नारदाय	११.	नारद से कहा था
तत्	६.	इसे	एकान्तिनाम्	१५.	परमभक्त
एतत्	१.	यह	भगवतः	१४.	भगवान् के
अमलम्	३.	निर्मल	तत्	१२.	वह ज्ञान उसे
दुरवापम्	२.	दुर्लभ	अकिञ्चनानाम्	१६.	अकिञ्चन (महात्माओं के)
आह	५.	कहा है	पादारविन्द	१७.	चरणारविन्द की
नारायणः	१०.	नारायण ने	रजसा	१८.	धूलि से
नर	८.	नर के	आप्लुत	२०.	नहलाये रहते हैं।
सखः	९.	मित्र	देहिनाम्	१९.	शरीर को
किल।	७.	पूर्वकाल में	स्यात् ॥	१३.	प्राप्त होता है (जो)

श्लोकार्थ—यह दुर्लभ निर्मल ज्ञान जो मैंने कहा है इसे पूर्वकाल में नर के मित्र नारायण ने नारद से कहा था। वह ज्ञान उसे प्राप्त होता है, जो भगवान् के परमभक्त अकिञ्चन महात्माओं के चरणारविन्द की धूलि से शरीर को नहलाये रहते हैं ॥

अष्टविंशः श्लोकः

श्रुतमेतन्मया पूर्वं ज्ञानं विज्ञानसंयुतम्।
धर्मं भागवतं शुद्धं नारदाद् देवदर्शनात् ॥२८॥

पदच्छेद— श्रुतम् एतत् मया पूर्वम् ज्ञानम् विज्ञान संयुतम्।
धर्मम् भागवतम् शुद्धम् नारदात् देव दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

श्रुतम्	१३.	सुना था	धर्मम्	७.	धर्म है
एतत्	१.	यह	भागवतम्	६.	भागवत
मया	९.	मैंने	शुद्धम्	५.	विशुद्ध
पूर्वम्	८.	इसे पहले	नारदात्	१२.	नारद से
ज्ञानम्	४.	ज्ञान	देव	१०.	भगवान् के
विज्ञान	२.	विज्ञान से	दर्शनात् ॥	११.	दर्शन करने वाले
संयुक्तम्।	३.	युक्त			

श्लोकार्थ—यह विज्ञान से युक्त ज्ञान विशुद्ध भागवत धर्म है। इसे पहले मैंने भगवान् के दर्शन करने वाले नारद से सुना था ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

दैत्यपुत्रा ऊचुः—प्रह्लाद त्वं वयं चापि नर्तेऽन्यं विद्महे गुरुम् ।
एताभ्यां गुरुपुत्राभ्यां बालानामपि हीश्वरौ ॥२९॥

पदच्छेद— प्रह्लाद त्वम् वयम् च अपि न ऋते अन्यम् विद्महे गुरुम् ।
एताभ्याम् गुरु पुत्राभ्याम् बालानाम् अपि हि ईश्वरौ ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लाद	१.	प्रह्लाद	गुरुम् ।	११.	गुरु
त्वम्	२.	तुम	एताभ्याम्	६.	इन
वयम्	४.	हम	गुरु	७.	गुरु के
च	३.	और	पुत्राभ्याम्	८.	पुत्रों को
अपि	५.	भी	बालानाम्	१५.	बालकों के
न	१२.	नहीं	अपि	१६.	भी
ऋते	९.	छोड़कर	ईश्वरौ	१७.	शासक हैं
अन्यम्	१०.	दूसरे को	हि ॥	१४.	ये दोनों निश्चित ही हम
विद्महे	१३.	जानते हैं			

श्लोकार्थ—प्रह्लाद ! तुम और हम भी इन गुरु के पुत्रों को छोड़कर दूसरे को गुरु नहीं जानते हैं । ये दोनों निश्चित ही हम बालकों के भी शासक हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

बालस्यान्तःपुरस्थस्य महत्सङ्गो दुरन्वयः ।
छिन्धि नः संशयं सौम्य स्याच्चेद्विश्रम्भकारणम् ॥३०॥

पदच्छेद— बालस्य अन्तः पुरस्थस्य महत् सङ्गः दुरन्वयः ।
छिन्धि नः संशयम् सौम्य स्यात चेत् विश्रम्भ कारणम् ॥

शब्दार्थ—

बालस्य	२.	बालक के लिए	संशयम्	११.	सन्देह को
अन्तःपुरस्थस्य	१.	अन्तःपुर में रहने वाले	सौम्य	६.	हे प्रियवर !
महत्	३.	महात्माओं का	स्यात्	१०.	हो तो (हमारे)
सङ्गः	४.	सङ्ग	चेत्	७.	यदि
दुरन्वयः	५.	असङ्गत सा मालूम होता है।	विश्रम्भ	८.	विश्वास का
छिन्धि नः ।	१२.	मिटा दो	कारणम् ॥	९.	कारण

श्लोकार्थ—अन्तःपुर में रहने वाले बालक के लिए महात्माओं का सङ्ग असङ्गत सा मालूम होता है । हे प्रियवर ! यदि विश्वास का कारण हो तो हमारे सन्देह को मिटा दो ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लाद अनुचरिते षष्ठः अध्यायः ॥३॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— एवं दैत्यसुतैः पृष्टो महाभागवतोऽसुरः ।

उवाच स्मयमानस्तान्स्मरन् मदनुभाषितम् ॥ १ ॥

पदच्छेद— एवम् दैत्य सुतैः पृष्टः महा भागवतः असुरः ।
उवाच स्मयमानः तान् स्मरन् मद् अनुभाषितम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	उवाच	१३.	कहा
दैत्य	२.	दैत्य	स्मयमानः	८.	मुस्कराते हुए (तथा)
सुतैः	३.	बालकों के	तान्	१२.	उन बालकों से
पृष्टः	४.	पूछने पर	स्मरन्	११.	स्मरण करते हुए
महा	५.	महान्	मद्	९.	मेरी
भागवतः	६.	भगवद्भक्त	अनुभाषितम् ॥	१०.	बात का
असुरः ।	७.	प्रह्लाद ने			

श्लोकार्थ—इस प्रकार दैत्य बालकों के पूछने पर महान् भगवद्भक्त प्रह्लाद ने मुस्कराते हुए तथा मेरी बात का स्मरण करते हुए उन बालकों से कहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच— पितरि प्रस्थितेऽस्माकं तपसे मन्दराचलम् ।

युद्धोद्यमं परं चक्रुर्विबुधा दानवान्प्रति ॥ २ ॥

पदच्छेद— पितरि प्रस्थिते अस्माकं तपसे मन्दराचलम् ।
युद्ध उद्यमम् परम् चक्रुः विबुधाः दानवान् प्रति ॥

शब्दार्थ—

पितरि	२.	पिता के	उद्यमम्	११.	प्रयत्न
प्रस्थिते	५.	चले जाने पर	परम्	१०.	बड़ा
अस्माकम्	१.	हमारे	चक्रुः	१२.	किया
तपसे	३.	तप के लिए	विबुधाः	६.	देवताओं ने
मन्दराचलम् ।	४.	मन्दराचल	दानवान्	७.	दानवों
युद्ध	९.	युद्ध करने का	प्रति ॥	८.	से

श्लोकार्थ—हमारे पिता के तप के लिए मन्दराचल पर चले जाने पर देवताओं ने दानवों से युद्ध करने का बड़ा प्रयत्न किया ॥

तृतीयः श्लोकः

पिपीलिकैरहिरिव दिष्टया लोकोपतापनः।
पापेन पापोऽभक्षीतिवादिनो वासवादयः ॥ ३ ॥

पदच्छेद— पिपीलिकैः अहिः इव दिष्टया लोक उपतापनः।
पापेन पापः अभक्षि इति वादिनः वासव आदयः ।।

शब्दार्थ—

पिपीलिकैः	२.	चीटियों से चाटे गये	पापेन	८.	पाप के द्वारा
अहिः	३.	सांप के	पापः	७.	पापों (हिरण्यकशिपु)
इव	४.	समान	अभक्षि इति	९.	खा लिया गया इस प्रकार
दिष्टया	१.	भाग्यवश	वादिनः	१०.	कहते हुए
लोक	५.	लोक को	वासव	११.	इन्द्र
उपतापनः ।	६.	सताने वाला	आदयः ।।	१२.	आदि देवताओं ने युद्ध के लिए बडा प्रयत्न किया

श्लोकार्थ भाग्यवश चीटियों से चाटे गये सांप के समान लोक को सताने वाला पापी हिरण्यकशिपु को पाप के द्वारा खा लिया गया, इस प्रकार कहते हुए इन्द्र आदि देवताओं ने युद्ध के लिए बड़ा ही प्रयत्न किया ।!

चतुर्थः श्लोकः

तेषामतिबलोद्योगं निशम्यासुरयूथपाः।
वध्यमानाः सुरैर्भीता दुद्रुवुः सर्वतोदिशम् ॥ ४ ॥

पदच्छेद— तेषाम् अतिबलः उद्योगम् निशम्य असुर यूथपाः।
वध्यमानाः सुरैः भीताः दुद्रुवुः सर्वतो दिशम् ।।

शब्दार्थ—

तेषाम्	१.	उन (देवताओं की)	वध्यमानाः	८.	मारे जाते हुए
अतिबलः	२.	भारी	सुरैः	७.	देवताओं के द्वारा
उद्योगम्	३.	तैयारी को	भीताः	९.	डर कर
निशम्य	४.	सुनकर	दुद्रुवुः	१२.	भागने लगे
असुर	५.	दैत्य	सर्वतो	१०.	सभी
यूथपाः ।	६.	सेनापति	दिशम् ।।	११.	दिशाओं में

श्लोकार्थ—उन देवताओं की भारी तैयारी को सुनकर दैत्य सेनापति देवताओं के द्वारा मारे जाते हुए डर कर सभी दिशाओं में भागने लगे ।।

पञ्चमः श्लोकः

कलत्रपुत्रमित्राप्तान्गृहान्पशुपरिच्छदान् ।
नावेक्षमाणास्त्वरिताः सर्वे प्राणपरीप्सवः ॥ ५ ॥

पदच्छेद— कलत्र पुत्रमित्र आप्तान् गृहान् पशु परिच्छदान् ।
न अवेक्षमाणाः त्वरिताः सर्वे प्राण परीप्सवः ॥

शब्दार्थ—

कलत्र	१. स्त्री	परिच्छदान् ।	७. साज सामान की
पुत्र	२. पुत्र	न अवेक्षमाणाः	८. चिन्ता किये बिना
मित्र	३. मित्र	त्वरिताः	१२. शीघ्रता से (भागने लगे)
आप्तान्	४. गुरुजन	सर्वे	११. सभी
गृहान्	५. घर	प्राण	९. प्राण बचाने के
पशु	६. पशु	परीप्सवः ॥	१०. इच्छुक

श्लोकार्थ—स्त्री, पुत्र, मित्र, गुरुजन, घर, पशु, साज सामान की चिन्ता किये बिना प्राण बचाने के इच्छुक सभी शीघ्रता से भागने लगे ॥

षष्ठः श्लोकः

व्यलुम्पन् राजशिबिरममरा जयकाङ्क्षिणः ।
इन्द्रस्तु राजमहिषीं मातरं मम चाग्रहीत् ॥ ६ ॥

पदच्छेद— व्यलुम्पन् राजशिबिरम् अमराः जयकांक्षिणः ।
इन्द्रः राजमहिषीम् मातरम् मम च अग्रहीत् ॥

शब्दार्थ—

व्यलुम्पन्	५. लूटने लगे	इन्द्रः	७. इन्द्र ने
राजशिबिरम्	४. राज महल को	राजमहिषीम्	१०. राजरानी को
अमराः	३. देवता लोग	मातरम्	९. माता
जय	१. विजय	मम	८. मेरी
कांक्षिणः ।	२. चाहने वाले	च	६. और
		अग्रहीत् ॥	११. बन्दी बना लिया

श्लोकार्थ—विजय चाहने वाले देवता लोग राजमहल को लूटने लगे और इन्द्र ने मेरी माता राजरानी को बन्दी बना लिया ॥

सप्तमः श्लोकः

नीयमानां भयोद्विग्नां रुदतीं कुररीमिव ।
यदृच्छयाऽऽगतस्तत्र देवर्षिर्ददृशे पथि ॥७॥

पदच्छेद— नीयमानाम् भयउद्विग्नाम् रुदतीम् कुररीम् इव ।
यदृच्छया आगतः तत्र देवर्षिः ददृशे पथि ॥

शब्दार्थ—

नीयमानाम्	६. बलात् ले जाती हुई	यदृच्छया	७. दैव वश
भय	१. भय से	आगतः	९. आये हुए
उद्विग्नाम्	२. व्याकुल	तत्र	८. वहाँ
रुदतीम्	५. रोती हुई	देवर्षिः	१०. देवर्षि नारद ने
कुररीम्	३. कुररी पक्षी के	ददृशे	१२. देखा
इव ।	४. समान	पथि ॥	११. रास्ते में

श्लोकार्थ—भय से व्याकुल कुररी पक्षी के समान रोती हुई और बलात् ले जाती हुई मेरी माता को दैव वश वहाँ आये हुए देवर्षि नारद ने रास्ते में देखा ॥

अष्टमः श्लोकः

प्राह मैनां सुरपते नेतुमर्हस्यनागसम् ।
मुञ्च मुञ्च महाभाग सतीं परपरिग्रहम् ॥८॥

पदच्छेद— प्राह मा एनाम् सुरपते नेतुम् अर्हसि अनागसम् ।
मुञ्च मुञ्च महाभाग सतीम् पर परिग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

प्राह	१. नारदजी ने कहा	मुञ्च	१२. छोड़ दो
मा	६. नहीं	मुञ्च	१३. छोड़ दो
एनाम्	३. इस	महाभाग	८. महाभाग
सुरपते	२. देवराज	सतीम्	९. पतिव्रता
नेतुम्	५. ले जाने के लिए तुम	पर	१०. पर
अर्हसि	७. योग्य हो	परिग्रहम् ॥	११. नारी को
अनागसम् ।	४. निरपराध को		

श्लोकार्थ—नारद जी ने कहा-देवराज इस निरपराध को ले जाने के लिए तुम योग्य नहीं हो। महाभाग ! पतिव्रता पर नारी को छोड़ दो छोड़ दो ॥

नवमः श्लोकः

इन्द्र उवाच—आस्तेऽस्या जठरे वीर्यमविषह्यं सुरद्विषः ।
आस्यतां यावत्प्रसवं मोक्ष्येऽर्थपदवीं गतः ॥९॥

पदच्छेद— आस्ते अस्याः जठरे वीर्यम् अविषह्यम् सुर द्विषः ।
आस्यताम् यावत् प्रसवम् मोक्ष्ये अर्थ पदवीम् गतः ॥

शब्दार्थ—

आस्ते	७.	है	आस्यताम्	१०.	रहे
अस्याः	१.	इसके	यावत्	९.	काल तक (यह मेरे पास)
जठरे	२.	पेट में	प्रसवम्	८.	प्रसव
वीर्यम्	६.	वीर्य	मोक्ष्ये	१४.	छोड़ दूँगा
अविषह्यम्	५.	अत्यन्त प्रभावशाली	अर्थ	११.	स्वार्थ की
सुर	३.	देव	पदवीम्	१२.	सिद्धि
द्विषः ।	४.	द्रोही (हिरण्यकशिपु का)	गतः ॥	१३.	प्राप्त हो जाने पर मैं (इसे)

श्लोकार्थ—इसके पेट में देवद्रोही हिरण्यकशिपु का प्रभावशाली वार्य है। प्रसवकाल तक यह मेरे पास रहे, स्वार्थ की सिद्धि हो जाने पर मैं इसे छोड़ दूँगा ॥

दशमः श्लोकः

नारद उवाच—अयं निष्किल्विषः साक्षान्महाभागवतो महान् ।
त्वया न प्राप्स्यते संस्थामनन्तानुचरो बली ॥१०॥

पदच्छेद— अयम् निष्किल्विषः साक्षात् महा भागवतः महान् ।
त्वया न प्राप्स्यते संस्थाम् अनन्त अनुचरः बली ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१.	यह	त्वया	१०.	तुम
निष्किल्विषः	२.	निष्पाप	न	१२.	नहीं
साक्षात्	३.	साक्षात्	प्राप्स्यते	१३.	सकोगे
महा	४.	परम	संस्थाम्	११.	इसे मार
भागवतः	५.	भगवद् भक्त	अनन्त	७.	अनन्त भगवान् का
महान् ।	६.	महान् (और)	अनुचरः	९.	सेवक है
			बली ॥	८.	बलवान्

श्लोकार्थ—यह निष्पाप, साक्षात् परम भगवद् भक्त, महान् और अनन्त भगवान् का बलवान् सेवक है। तुम इसे नहीं मार सकोगे ॥

एकादशः श्लोकः

इत्युक्तस्तां विहायेन्द्रो देवर्षेर्मानयन्वचः ।
अनन्तप्रियभक्त्यैनां परिक्रम्य दिवं ययौ ॥११॥

पदच्छेद— इति उक्तस्ताम् विहाय इन्द्रः देवर्षेः मानयन् वचः ।
अनन्त प्रिय भक्त्या एनाम् परिक्रम्य दिवम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अनन्त	८.	अनन्त भगवान् के
उक्तस्ताम्	२.	कहे जाने पर	प्रिय	९.	प्रिय
विहाय	७.	छोड़कर	भक्त्या	१०.	भक्ति के कारण
इन्द्रः	३.	इन्द्र	एनाम्	११.	उसकी
देवर्षे	४.	देवर्षि नारद के	परिक्रम्य	१२.	प्रदक्षिणा करके
मानयन्	६.	मानते हुए उस मेरी माता को	दिवम्	१३.	स्वर्ग को
वचः ।	५.	वचन को	ययौ ॥	१४.	चले गये

श्लोकार्थ—इस प्रकार कहे जाने पर इन्द्र देवर्षि नारद के वचन को मानते हुए उस मेरी माता को छोड़कर अनन्त भगवान् के प्रिय भक्ति के कारण उसकी प्रदक्षिणा करके स्वर्ग को चले गये ॥

द्वादशः श्लोकः

ततो नो मातरमृषिः समानीय निजाश्रमम् ।
आश्वास्येहोष्यतां वत्से यावत् ते भर्तुरागमः ॥१२॥

पदच्छेद— ततः नः मातरम् ऋषिः समानीय निज आश्रमम् ।
आश्वास्य इह उष्यताम् वत्से यावत् ते भर्तुः आगमः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	आश्वास्य	८.	सान्त्वना देकर (कहा)
नः	२.	हमारी	इह	१०.	यहाँ
मातरम्	३.	माता को	उष्यताम्	११.	निवास करो
ऋषिः	४.	देवर्षि नारद ने	वत्से	९.	बेटी
समानीय	७.	लाकर	यावत्	१२.	जब तक
निज	५.	अपने	ते भर्तुः	१३.	तुम्हारे पति नहीं
आश्रमम् ।	६.	आश्रम में	आगमः ॥	१४.	लौट आते हैं ।

श्लोकार्थ—तदनन्तर हमारी माता को देवर्षि नारद ने अपने आश्रम में लाकर सान्त्वना देकर कहा—बेटी ! यहाँ निवास करो, जब-तक तुम्हारे पति नहीं लौट आते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तथेत्यवात्सीद् देवर्षेरन्ति साप्यकुतोभया ।
यावद् दैत्यपतिर्घोरात् तपसो न न्यवर्तत ॥१३॥

पदच्छेद— तथा इति अवात्सीत् देवर्षेः अन्ति सा अपि अकुतोभया ।
यावत् दैत्यपतिः घोरात् तपसः न न्यवर्तत ॥

शब्दार्थ—

तथा इति	१. तथा ऐसा कहकर	**यावत्**	७. जब-तक
अवात्सीत्	६. रहने लगी	**दैत्यपतिः**	८ दैत्यराज
देवर्षेः	२. देवर्षि नारद के	**घोरात्**	९. घोर
अन्ति	३. समीप	**तपसः**	१०. तपस्या से
सा अपि	४. वह मेरी माता भी	**न**	११. नहीं
अकुतोभया ।	५. निर्भय होकर	**न्यवर्तत ॥**	१२. लौटकर आये

पदच्छेद—तथा ऐसा कहकर देवर्षि नारद के समीप वह मेरी माता भी निर्भय होकर रहने लगी । जब-तक दैत्यराज घोर तपस्या से नहीं लौट कर आये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ऋषिं पर्यचरत् तत्र भक्त्या परमया सती ।
अन्तर्वत्नी स्वगर्भस्य क्षेमायेच्छाप्रसूतये ॥१४॥

पदच्छेद— ऋषिम् पर्यचरत् तत्र भक्त्या परमया सती ।
अन्तर्वत्नी स्व गर्भस्य क्षेमाय इच्छा प्रसूतये ॥

शब्दार्थ—

ऋषिम्	११. देवर्षि नारद की	**अन्तर्वत्नी**	२. गर्भवती
पर्यचरत्	१२. सेवा करने लगी	**स्व**	४. अपने
तत्र	१. वहाँ	**गर्भस्य**	५. गर्भ के
भक्त्या	१०. भक्ति से	**क्षेमाय**	६. कल्याण के लिए (और)
परमया	९. परम	**इच्छा**	७. इच्छानुसार
सती ।	३. पतिव्रता (मेरी माता)	**प्रसूतये ॥**	८. प्रसव के लिए

श्लोकार्थ—वहाँ गर्भवती पतिव्रता मेरी माता अपने गर्भ के कल्याण के लिए और इच्छानुसार प्रसव के लिए परम भक्ति से देवर्षि नारद की सेवा करने लगी ॥

पञ्चदशः श्लोकः

ऋषिः कारुणिकस्तस्याः प्रादादुभयमीश्वरः ।
धर्मस्य तत्त्वं ज्ञानं च मामप्युद्दिश्य निर्मलम् ॥१५॥

पदच्छेद— ऋषिः कारुणिकः तस्याः प्रादात् उभयम् ईश्वरः ।
धर्मस्य तत्त्वम् ज्ञानम् च माम् अपि उद्दिश्य निर्मलम् ॥

शब्दार्थ—

ऋषिः	३. देवर्षि नारद जी ने	धर्मस्य	८. धर्म
कारुणिकः	१. दयालु (एवम्)	तत्त्वम्	९. तत्त्व (और)
तस्याः	४. उस मेरी माता को	ज्ञानम्	११. ज्ञान
प्रादात्	१४. उपदेश किया	च माम्	५. और मुझे
उभयम्	१३. दोनों का	अपि	६. भी
ईश्वरः ।	२. सर्वसमर्थ	उद्दिश्य	७. लक्ष्य करके
		निर्मलम् ॥	१०. निर्मल

श्लोकार्थ—दयालु एवम् सर्वसमर्थ देवर्षि नारद जी ने उस मेरी माता को और मुझे भी लक्ष्य करके धर्म का तत्त्व और निर्मल ज्ञान दोनों का उपदेश किया ॥

षोडशः श्लोकः

तत्तु कालस्य दीर्घत्वात् स्त्रीत्वान्मातुस्तिरोदधे ।
ऋषिणानुगृहीतं मां नाधुनाप्यजहात् स्मृतिः ॥१६॥

पदच्छेद— तत् तु कालस्य दीर्घत्वात् स्त्रीत्वात् मातुः तिरोदधे ।
ऋषिणा अनुगृहीतम् माम् न अधुना अपि अजहात् स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

तत्	२. वह (ज्ञान)	ऋषिणा	१०. ऋषि की (विशेष)
तु	१. किन्तु	अनुगृहीतम्	११. कृपा होने से
कालस्य	३. समय के	माम्	१२. मुझे
दीर्घ	४. लम्बे	न	१७. नहीं है
त्वात्	५. होने से (और)	अधुना	१३. अभी
स्त्री	६. स्त्री	अपि	१४. भी
त्वात्	७. होने के कारण	अजहात्	१६. भूला
मातुः	८. माता को	स्मृतिः ॥	१५. स्मरण है
तिरोदधे ।	९. भूल गया है		

श्लोकार्थ—किन्तु वह ज्ञान समय के लम्बे होने से और स्त्री होने के कारण माता को भूल गया । ऋषि की विशेष कृपा होने से मुझे अभी भी भूला नहीं हैं, स्मरण है ॥

सप्तदशः श्लोकः

भवतामपि भूयान्मे यदि श्रद्धते वचः ।
वैशारदी धीः श्रद्धातः स्त्रीबालानां च मे यथा ।।१७।।

पदच्छेद— भवताम् अपि भूयात् मे यदि श्रद्धते वचः ।
वैशारदी धीः श्रद्धातः स्त्रीबालानाम् च मे यथा ।।

शब्दार्थ—

भवताम्	५. तुम लोगों को	वैशारदी	१०. निर्मल
अपि	६. भी (ज्ञान)	धीः	१२. बुद्धि
भूयात्	७. हो सकता है (क्योंकि)	श्रद्धातः	९. श्रद्धा से
मे	२. मेरे	स्त्री	१३. स्त्रियों
यदि	१. यदि	बालानाम्	१४. बालकों को भी हो सकती है
श्रद्धते	४. श्रद्धा होते ।	च	१३. और
वचः ।	३. वचन पर	मे यथा ।।	८. मेरे समान

श्लोकार्थ—यदि मेरे वचन पर श्रद्धा हो तो तुम लोगों को भी ज्ञान हो सकता है। क्योंकि मेरे समान श्रद्धा से निर्मल बुद्धि स्त्रियों और बालकों को भी हो सकती है ।।

अष्टादशः श्लोकः

जन्माद्याः षडिमे भावा दृष्टा देहस्य नात्मनः ।
फलानामिव वृक्षस्य कालेनेश्वरमूर्तिना ।।१८।।

पदच्छेद— जन्माद्याः षड् इमे भावाः दृष्टाः देहस्य न आत्मनः ।
फलानाम् इव वृक्षस्य कालेन ईश्वर मूर्तिना ।।

शब्दार्थ—

जन्माद्याः	७. जन्म आदि	फलानाम्	५. फलों के
षड् इमे	८. छः यह	इव	६. समान
भावाः	९. भाव	वृक्षस्य	४. वृक्ष के
दृष्टाः	११. देखे जाते हैं (ये)	कालेन	३. समय की प्रेरणा से
देहस्य	१०. शरीर के	ईश्वरः	१. ईश्वर की
न	१३. नहीं है	मूर्तिना ।।	२. मूर्ति रूप
आत्मनः ।	१२. ये आत्मा के		

श्लोकार्थ—ईश्वर की मूर्तिरूप समय की प्रेरणा से वृक्ष के फूलों के समान जन्मादि (जन्म, अस्तित्व, वृद्धि, परिणाम, क्षय और विनाश) यह छः भाव देखे जाते हैं। ये आत्मा के नहीं हैं ।।

एकोनविंशः श्लोकः

आत्मा नित्योऽव्ययः शुद्ध एकः क्षेत्रज्ञ आश्रयः।
अविक्रियः स्वदृग् हेतुर्व्यापकोऽसङ्ग्यनावृतः ॥१९॥

पदच्छेद— आत्मा नित्यः अव्ययः शुद्धः एकः क्षेत्रज्ञः आश्रयः।
अविक्रियः स्वदृग् हेतुः व्यापकः असङ्गी अनावृतः ॥

शब्दार्थ—

आत्मा	१.	आत्मा	अविक्रियः	८.	विकार रहित
नित्यः	२.	नित्य	स्वदृग्	९.	स्वयम् प्रकाश
अव्ययः	३.	अविनाशी	हेतुः	१०.	सब का कारण
शुद्धः	४.	शुद्ध	व्यापकः	११.	व्यापक
एकः	५.	एक	असङ्गी	१२.	सङ्ग रहित (और)
क्षेत्रज्ञः	६.	अन्तर्यामी	अनावृतः ॥	१३.	आवरण रहित है
आश्रयः।	७.	सबका आश्रय			

श्लोकार्थ—आत्मा, नित्य, अविनाशी, शुद्ध, एक, अन्तर्यामी, सबका आश्रय, विकार रहित, स्वयम् प्रकाश, व्यापक, सङ्ग रहित और आवरण रहित है ॥

विंशः श्लोकः

एतैर्द्वादशभिर्विद्वानात्मनो लक्षणैः परैः।
अहं ममेत्यसद्भावं देहादौ मोहजं त्यजेत् ॥२०॥

पदच्छेद— एतैः द्वादशभिः विद्वान् आत्मनः लक्षणैः परैः।
अहम् मम इति असद्भावम् देह आदौ मोहजम् त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

एतैः	३.	इन	मम	११.	मेरा
द्वादशभिः	४.	बारह	इति	१२.	इस
विद्वान्	१.	विद्वान् व्यक्ति	असद्भावम्	१३.	मिथ्या भाव को
आत्मनः	२.	आत्मा के	देह	७.	शरीर
लक्षणैः	६.	लक्षणों से	आदौ	८.	आदि में
परैः	५.	श्रेष्ठ	मोहजम्	९.	मोह से उत्पन्न
अहम्।	१०.	मैं (और)	त्यजेत् ॥	१४.	छोड़ दे

श्लोकार्थ - विद्वान् व्यक्ति आत्मा के इन बारह श्रेष्ठ लक्षणों से शरीर आदि में मोह से उत्पन्न मैं और और मेरा इस मिथ्या भाव को छोड़ दे ॥

एकविंशः श्लोकः

स्वर्णं यथा ग्रावसु हेमकारः क्षेत्रेषु योगैस्तदभिज्ञ आप्नुयात् ।
क्षेत्रेषु देहेषु तथाऽऽत्मयोगैरध्यात्मविद् ब्रह्मगतिं लभेत ॥२१॥

पदच्छेद— स्वर्णम् यथा ग्रावसु हेमकारः क्षेत्रेषु योगैः तत् अभिज्ञः आप्नुयात् ।
क्षेत्रेषु देहेषु तथा आत्मयोगैः अध्यात्म वित् ब्रह्म गतिम् लभेत ॥

शब्दार्थ—

स्वर्णम्	४. सुवर्ण के	क्षेत्रेषु	१४. क्षेत्र में
यथा	१. जिस प्रकार	देहेषु	१३. शरीर रूप
ग्रावसु	३. पत्थर में मिले हुए	तथा	१०. उसी प्रकार
हेमकारः	७. स्वर्णकार	आत्मयोगैः	१५. आत्मप्राप्ति के उपायों द्वारा
क्षेत्रेषु	२. खानों में	अध्यात्म	११. अध्यात्म को
योगैः	८. उपायों से	वित्	१२. जानने वाला (व्यक्ति)
तत्	५. उसकी विधि को	ब्रह्म	१६. ब्रह्म
अभिज्ञः	६. जानने वाला	गतिम्	१७. पद को
आप्नुयात् ।	९. प्राप्त कर लेता है	लभेत ॥	१८. प्राप्त कर लेता है

श्लोकार्थ—जिस प्रकार खानों में पत्थर में मिले हुए स्वर्ण को उसकी विधि को जानने वाला स्वर्णकार उपायों से प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार अध्यात्म को जानने वाला व्यक्ति शरीर रूप क्षेत्र में आत्म-प्राप्ति के उपायों द्वारा ब्रह्म पद को प्राप्त कर लेता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अष्टौ प्रकृतयः प्रोक्तास्त्रय एव हि तद्गुणाः ।
विकाराः षोडशाचार्यैः पुमानेकः समन्वयात् ॥२२॥

पदच्छेद— अष्टौ प्रकृतयः प्रोक्ताः त्रयः एव हि तद् गुणाः ।
विकाराः षोडश आचार्यैः पुमान् एकः समन्वयात् ॥

शब्दार्थ—

अष्टौ	२. आठ	विकाराः	१०. विकार हैं (उन सब में)
प्रकृतयः	३. प्रकृतियाँ	षोडश	९. सोलह
प्रोक्ताः	४. कही हैं	आचार्यैः	१. आचार्यों ने
त्रयः	६. तीन	पुमान्	१२. पुरुष
एव हि	७. ही	एकः	११. एक (ही)
तद्	५. उसके	समन्वयात् ॥	१३. व्याप्त है
गुणाः ।	८. गुण हैं		

श्लोकार्थ—आचार्यों ने आठ प्रकृतियाँ कही हैं, तीन ही उनके गुण हैं, सोलह विकार हैं उन सब में एक ही पुरुष व्याप्त है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

देहस्तु सर्वसंघातो जगत् तस्थुरिति द्विधा।
अत्रैव मृग्यः पुरुषो नेति नेतीत्यतत् त्यजन् ॥२३॥

पदच्छेद — देहः तु सर्व संघातः जगत् तस्थुः इति द्विधा।
अत्र एव मृग्यः पुरुष न इति अतत् त्यजन् ॥

शब्दार्थ—

देहः	२.	शरीर	अत्र एव	१४.	यहीं
तु	१.	यह	मृग्यः	१६.	ढूंढ़ना चाहिए
सर्व	३.	सबका	पुरुषः	१५.	आत्मा को
संघातः	४.	समूह है	न इति	९.	नहीं है यह
जगत्	६.	जंगम और	न इति	१०.	नहीं है यह
तस्थुः	७.	स्थावर	इति	१२.	इस प्रकार
इति	५.	यह	अतत्	११.	वह नहीं है
द्विधा।	८.	दो प्रकार का है	त्यजन् ॥	१३.	छोड़ कर

श्लोकार्थ—यह शरीर सबका समूह है। यह जंगम और स्थावर दो प्रकार का है। यह नहीं है, यह नहीं है, वह नहीं है इस प्रकार छोड़कर यहीं आत्मा को ढूंढ़ना चाहिए ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अन्वयव्यतिरेकेण विवेकेनोशताऽऽत्मना।
सर्गस्थानसमाम्नायैर्विमृशद्भिरसत्वरैः ॥२४॥

पदच्छेद— **अन्वय व्यतिरेकेण विवेकेन उशता आत्मना।**
सर्ग स्थान समाम्नायैः विमृशद्भिः असत्वरैः ॥

शब्दार्थ—

अन्वय	१.	आत्मा सब में है (और)	**सर्ग**	६.	सृष्टि
व्यतिरेकेण	२.	सबसे पृथक् है (तथा)	**स्थान**	७.	उत्पत्ति और
विवेकेन	५.	विवेक करते हुए	**समाम्नायैः**	८.	संसार पर
उशता	३.	शुद्ध	**विमृशद्भिः**	९.	विचार करना चाहिए किन्तु
आत्मना।	४.	आत्म बुद्धि से	**असत्वरैः ॥**	१०.	शीघ्रता नहीं करनी चाहिये

श्लोकार्थ—आत्मा सब में है और सबसे पृथक् है तथा शुद्ध आत्मबुद्धि से विवेक करते हुए सृष्टि, उत्पत्ति और संहार पर विचार करना चाहिए। किन्तु शीघ्रता नहीं करनी चाहिए ।

पञ्चविंशः श्लोकः

बुद्धेर्जागरणं स्वप्नः सुषुप्तिरिति वृत्तयः ।
ता येनैवानुभूयन्ते सोऽध्यक्षः पुरुषः परः ॥२५॥

पदच्छेद— बुद्धेः जागरणम् स्वप्नः सुषुप्तिः इति वृत्तयः ।
ताः येन एव अनुभूयन्ते सः अध्यक्षः पुरुषः परः ॥

शब्दार्थ—

बुद्धेः	६. बुद्धि की हैं	ताः	७. उन (वृत्तियों का)
जागरणम्	१. जागरण	येन	८. जिसके द्वारा
स्वप्नः	२. स्वप्न	एव	११. ही
सुषुप्तिः	३. सुषुप्ति	अनुभूयन्ते	९. अनुभव होता है
इति	४. ये (तीन)	सः	१०. वह
वृत्तयः ।	५. वृत्तियाँ	अध्यक्षः	१३. साक्षी है
		पुरुषः परः ॥	१२. परमात्मा

श्लोकार्थ—जागरण, स्वप्न, सुषुप्ति, ये तीन वृत्तियाँ बुद्धि की हैं। उन वृत्तियों का जिसके द्वारा अनुभव होता है, वह ही परमात्मा साक्षी है ॥

षड्विंशः श्लोकः

एभिस्त्रिवर्णैः पर्यस्तैर्बुद्धिभेदैः क्रियोद्भवैः ।
स्वरूपमात्मनो बुध्येद् गन्धैर्वायुमिवान्वयात् ॥२६॥

पदच्छेद— एभिः त्रिवर्णैः पर्यस्तैः बुद्धि भेदैः क्रिया उद्भवैः ।
स्वरूपम् आत्मनः बुध्येत् गन्धैः वायुम् इव अन्वयात् ॥

शब्दार्थ—

एभिः	६. इन	स्वरूपम्	९. स्वरूप को
त्रिवर्णैः	७. तीन अवस्थाओ के द्वारा	आत्मनः	८. आत्मा के
पर्यस्तैः	५. बदलने वाली	बुध्येत्	१०. जानना चाहिए
बुद्धि	१. बुद्धि के	गन्धैः	१२. गन्ध से
भेदैः	२. भेदों की	वायुम्	१४. वायु का (ज्ञान होता है)
क्रिया	३. कर्म से	इव	११. जैसे
उद्भवैः ।	४. उत्पन्न (एवम्)	अन्वयात् ॥	१३. उसके आश्रय

श्लोकार्थ—बुद्धि के भेदों की, कर्म से उत्पन्न एवम् बदलने वाली इन तीन अवस्थाओं के द्वारा आत्मा के स्वरूप को जानना चाहिये। जैसे गन्ध से उसके आश्रय वायु का ज्ञान होता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एतद्द्वारो हि संसारो गुणकर्मनिबन्धनः ।
अज्ञानमूलोऽपार्थोऽपि पुंसः स्वप्न इवेष्यते ॥२७॥

पदच्छेद — एतत् द्वारः हि संसारः गुण कर्म निबन्धनः ।
अज्ञान मूलः अपार्थ अपि पुंसः स्वप्नः इव इष्यते ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१. इसके	अज्ञान	७. जो अज्ञान
द्वारः	२. द्वारा	मूलः	८. मूलक
हि	३. ही	अपार्थः	९. मिथ्या होता (हुआ)
संसारः	७. संसार चक्र है	अपि	१०. भी
गुण	४. गुणों और	पुंसः	११. पुरुष को
कर्म	५. कर्मों से	स्वप्नः	१२. स्वप्न के
निबन्धनः ।	६. होने वाला	इव	१३. समान
		इष्यते ॥	१४. प्रतीत होता है

श्लोकार्थ—इसके द्वारा ही गुणों और कर्मों से होने वाला संसार चक्र है जो अज्ञानमूलक मिथ्या होता हुआ भी पुरुष को स्वप्न के समान प्रतीत होता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्माद्भवद्भिः कर्तव्यं कर्मणां त्रिगुणात्मनाम् ।
बीजनिर्हरणं योगः प्रवाहोपरमो धियः ॥२८॥

पदच्छेद— तस्मात् भवद्भिः कर्तव्यम् कर्मणाम् त्रिगुण आत्मनाम् ।
बीज निर्हरणम् योगः प्रवाहः उपरमः धियः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिए	बीज	६. बीज को
भवद्भिः	२. आप लोगों को	निर्हरणम्	७. नष्ट
कर्तव्यम्	८. करना चाहिए	योगः	१२. योग है
कर्मणाम्	५. कर्मों के	प्रवाहः	१०. वृत्तियों का
त्रिगुण	३. तीनों गुणों के	उपरमः	११. निवृत्त होना ही
आत्मनाम् ।	४. स्वरूप भूत	धियः ॥	९. बुद्धि की

श्लोकार्थ—इसलिये आप लोगों को तीनों गुणों के स्वरूप भूत कर्मों के बीज को नष्ट कर देना चाहिये । बुद्धि की वृत्तियों का निवृत्त होना ही योग है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तत्रोपायसहस्राणामयं भगवतोदितः ।
यदीश्वरे भगवति यथा यैरञ्जसा रतिः ॥२६॥

पदच्छेद— तत्र उपाय सहस्राणाम् अयम् भगवता उदितः ।
यत् ईश्वरे भगवति यथा यैः अञ्जसा रतिः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१. वहाँ	**यत्**	७. कि
उपाय	३. उपायों में से	**ईश्वरे**	८. सर्वसमर्थ
सहस्राणाम्	२. हजारों	**भगवति**	६. भगवान् में
अयम्	४. यह (उपाय)	**यथा**	१०. जिस प्रकार
भगवता	५. भगवान् ने	**यैः अञ्जसा**	११. जिससे शीघ्र ही
उदितः ।	६. कहा है	**रतिः ॥**	१२. अनुराग हो जाय (वही उपाय श्रेष्ठ है)

श्लोकार्थ—वहाँ हजारों उपायों में से यह उपाय भगवान् ने कहा है कि सर्वसमर्थ भगवान् में जिस प्रकार जिससे शीघ्र ही अनुराग हो जाय वही उपाय श्रेष्ठ है ॥

त्रिंशः श्लोकः

गुरुशुश्रूषया भक्त्या सर्वलब्धार्पणेन च ।
सङ्गेन साधुभक्तानामीश्वराराधनेन च ॥३०॥

पदच्छेद— गुरु शुश्रूषया भक्त्या सर्वलब्ध अर्पणेन च ।
सङ्गेन साधु भक्तानाम् ईश्वर आराधनेन च ॥

शब्दार्थ—

गुरु	१. गुरु की	**सङ्गेन**	६. सत्सङ्ग
शुश्रूषया	२. सेवा	**साधु**	७. महात्मा
भक्त्या	३. भक्ति	**भक्तानाम्**	८. भक्तों के
सर्वलब्ध	४. सब कुछ भगवान् को	**ईश्वर**	१०. भगवान् की
अर्पणेन	५. समर्पण	**आराधनेन**	१२. आराधना से भगवान् में स्वाभाविक प्रेम हो जाता है।
च ।	६. और	**च ॥**	१०. और

श्लोकार्थ—गुरु की सेवा-भक्ति, सब कुछ भगवान् को समर्पण, महात्मा भक्तों के सत्सङ्ग और भगवान् की आराधना से भगवान् में स्वाभाविक ही प्रेम हो जाता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

श्रद्धया तत्कथायां च कीर्तनैर्गुणकर्मणाम् ।
तत्पदाम्बुरुहध्यानात् तल्लिङ्गेक्षार्हणादिभिः ॥३१॥

पदच्छेद— श्रद्धया तत् कथायाम् च कीर्तनैः गुण कर्मणाम् ।
तत् पद अम्बुरुह ध्यानात् तत् लिङ्ग ईक्षाअर्हण आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धया	३.	श्रद्धा करने से	तत्	८.	उनके
तत्	१.	उनकी	पद	९.	चरण
कथायाम्	२.	कथा में	अम्बुरुह	१०.	कमल का
च	४.	और (उनके)	ध्यानात्	११.	ध्यान करने से तथा
कीर्तनैः	७.	कीर्तन करने से (तथा)	तत्लिङ्ग ईक्षा	१२.	उनकी मूर्तियों के दर्शन
गुण	५.	गुणों तथा	अर्हण	१३.	पूजन
कर्मणाम् ।	६.	लीलाओं का	आदिभिः ॥	१४.	आदि से (भगवान् में भक्ति होती है)

श्लोकार्थ—उनकी कथा में श्रद्धा करने और उनके गुणों तथा लीलाओं का कीर्तन करने से तथा उनके चरण कमल का ध्यान करने से एवं उनकी मूर्तियों के दर्शन पूजन आदि से भगवान् में भक्ति होती है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

हरिः सर्वेषु भूतेषु भगवानास्त ईश्वरः ।
इति भूतानि मनसा कामैस्तैः साधु मानयेत् ॥३२॥

पदच्छेद— हरिः सर्वेषु भूतेषु भगवान् आस्ते ईश्वरः ।
इति भूतानि मनसा कामैः तैः साधु मानयेत् ॥

शब्दार्थ

हरिः	३.	हरि	इति	७.	इस
सर्वेषु	४.	सभी	भूतानि	९.	प्राणियों की
भूतेषु	५.	प्राणियों में	मनसा	८.	भावना से
भगवान्	२.	भगवान्	कामैः	११.	कामनाओं को
आस्ते	६.	हैं	तैः	१०.	उन
ईश्वरः ।	१.	सर्व समर्थ	साधु	१२.	भली-भाँति (पूर्ण करे) और
			मानयेत् ॥	१३.	सम्मान करे

श्लोकार्थः—सर्वसमर्थ भगवान् हरि सभी प्राणियों में हैं । इस भावना से प्राणियों की उन कामनाओं को भली-भाँति पूर्ण करे और सम्मान करे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

एवं निर्जितषड्वर्गैः क्रियते भक्तिरीश्वरे।
वासुदेवे भगवति यया संलभते रतिम् ॥३३॥

पदच्छेद— एवम् निर्जित षड्वर्गैः क्रियते भक्तिः ईश्वरे।
वासुदेवे भगवति यथा संलभते रतिम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	**वासुदेवे**	९.	वासुदेव में
निर्जित	३.	जीत कर	**भगवति**	८.	भगवान्
षड्वर्गैः	२.	छः शत्रुओं को	**यथा**	७.	जिससे
क्रियते	६.	करनी चाहिए	**संलभते**	११.	प्राप्त होता है
भक्तिः	५.	भक्ति	**रतिम् ॥**	१०.	अनुराग
ईश्वरे।	४.	भगवान् में			

श्लोकार्थ—इस प्रकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) इन छः शत्रुओं को जीत कर भगवान् में भक्ति करनी चाहिए। जिससे भगवान् वासुदेव में अनुराग प्राप्त होता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः कृतानि।
यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति ॥३४॥

पदच्छेद— निशम्य कर्माणि गुणान् अतुल्यान् वीर्याणि लीला तनुभिः कृतानि।
यदा अति हर्षोत्पुलक अश्रु गद्गदम् प्रोत्कण्ठः उद्गायति रौति नृत्यति ॥

शब्दार्थ—

निशम्य	८.	सुन कर	**यदा**	९.	जब
कर्माणि	४.	कर्मों को	**अति**	१०.	अत्यन्त
गुणान्	६.	गुणों को (और)	**हर्षोत्पुलक**	११.	हर्ष से पुलकित होकर
अतुल्यान्	५.	अनुपम	**अश्रु**	१२.	आँसुओं से
वीर्याणि	७.	पराक्रमों को	**गद्गदम्**	१३.	गद्गद
लीला	१.	लीला	**प्रोत्कण्ठः**	१४.	कण्ठ होकर (भक्त)
तनुभिः	२.	शरीरों से	**उद्गायति**	१५.	गाता है
कृतानि।	३.	किये हुए	**रौति**	१६.	रोता है और
			नृत्यति ॥	१७.	नाचता है (तब उसके सब बन्धन कट जाते हैं)

श्लोकार्थ—लीला शरीरों से किये हुए कर्मों को अनुपम गुणों को और पराक्रमों को सुनकर जब अत्यन्त हर्ष से पुलकित होकर आँसुओं से गद्गद कण्ठ होकर (भक्त) गाता है, रोता है, नाचता है तब उसके सब बन्धन कट जाते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रन्दते ध्यायति वन्दते जनम् ।
मुहुः श्वसन्वक्ति हरे जगत्पते नारायणेत्यात्ममतिर्गतत्रपः ॥३५॥

पदच्छेद— यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचित् हसति आक्रन्दते ध्यायति वन्दते जनम् ।
मुहुः श्वसन्वक्ति हरे जगत्पते नारायण इति आत्म मतिः गत त्रपः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	जनम्	९.	लोगों को
ग्रह	२.	ग्रह से	मुहुः	११.	बार-बार
ग्रस्त	३.	ग्रसे हुये के	श्वसन्	१२.	साँस लेता है
इव	४.	समान	वक्ति	१९.	कहता है
क्वचित्	५.	कहीं	हरेः ।	१५.	हे हरि
हसति	६.	हंसता है	जगत्पते	१६.	हे जगत्पते
आक्रन्दते	७.	चिल्लाता है	नारायण	१७.	हे नारायण !
ध्यायति	८.	ध्यान करता है	इति	१८.	इस प्रकार (कहता है)
वन्दते	१०.	प्रणाम करता है	आत्ममतिः	१४.	तन्मय होकर
			गतत्रपः ॥	१३.	निर्लज्ज तथा

श्लोकार्थ—जब ग्रह से ग्रसे हुए के समान कभी हंसता है, चिल्लाता है, ध्यान करता है, लोगों को प्रणाम करता है, बार-बार साँसें लेता है, और निर्लज्ज तथा तथा तन्मय होकर हे हरि ! हे जगत्पते ! हे नारायण ! इस प्रकार कहता है, तब उसके सब बन्धन कट जाते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

तदा पुमान्मुक्तसमस्तबन्धनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः ।
निर्दग्धबीजानुशयो महीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम् ॥३६॥

पदच्छेद— तदा पुमान् मुक्त समस्त बन्धनः तद्भाव भावानुकृत आशय आकृतिः ।
निर्दग्धबीज अनुशयः महीयसा भक्ति प्रयोगेण समेति अधोक्षजम् ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	तब	आकृतिः	११.	तदाकार
पुमान्	२.	मनुष्य	निर्दग्धबीज	१४.	जलाकर
मुक्त	८.	मुक्त होकर	अनुशयः	१३.	जन्म-मृत्यु के बीजों का खजाना
समस्त	६.	सब	महीयसा	३.	महान्
बन्धनः	७.	बन्धनों से	भक्ति	४.	भक्ति
तद्भाव	९.	भगवत् भाव की	प्रयोगेण	५.	योग के प्रभाव से
भावानुकृत	१०.	भावना करते-करते	समेति	१६.	प्राप्त कर लेता है
आशय ।	१२.	चित्त होकर	अधोक्षजम् ॥	१५.	भगवान् को

श्लोकार्थ—तब मनुष्य महान् भक्ति योग के प्रभाव से सब बन्धनों से मुक्त होकर भगवत् भाव की भावना करते-करते तदाकार चित्त होकर जन्म-मृत्यु के बीजों का खजाना जलाकर भगवान् को प्राप्त कर लेता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अधोक्षजालम्भमिहाशुभात्मनः शरीरिणः संसृतिचक्रशातनम् ।
तद् ब्रह्म निर्वाणसुखं विदुर्बुधास्ततो भजध्वं हृदये हृदीश्वरम् ॥३७॥

पदच्छेद— अधोक्षज आलम्भम् इह अशुभ आत्मनः शरीरिणः संसृति चक्रशातनम् ।
तद ब्रह्म निर्वाण सुखम् विदुः बुधाः ततः भजध्वम् हृदये हृदीश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

अधोक्षज	१.	भगवान् की	तद्	१०.	उसी को
आलम्भम्	२.	प्राप्ति	ब्रह्म	१२.	ब्रह्म और
इह	३.	इस संसार में	निर्वाण	१३.	मोक्ष
अशुभ	५.	पापी	सुखम्	१४.	सुख
आत्मनः	६.	जीव के	विदुः	१५.	कहते हैं
शरीरिणः	४.	शरीरधारी	बुधाः	११.	विद्वान् लोग
संसृति	७.	संसार	ततः	१६.	इसलिए (तुम लोग)
चक्र	८.	चक्र को	भजध्वम्	१९.	भजन करो
शातनम् ।	९.	काटने वाली है	हृदये	१७.	मन में
			हृदीश्वरम् ॥	१८.	हृदयेश्वर (भगवान् का)

श्लोकार्थ—भगवान् की प्राप्ति इस संसार में शरीरधारी पापी जीव के संसार चक्र को काटने वाली है। उसी को विद्वान् लोग ब्रह्म और मोक्ष सुख कहते हैं। इसलिये तुम लोग मन में हृदयेश्वर भगवान् का भजन करो ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

कोऽतिप्रयासोऽसुरबालका हरेरुपासने स्वे हृदि छिद्रवत् सतः ।
स्वस्यात्मनः सख्युरशेषदेहिनां सामान्यतः किं विषयोपपादनैः ॥३८॥

पदच्छेद— कः अति प्रयासः असुर बालकाः हरेः उपासने स्वे हृदि छिद्रवत् सतः ।
स्वस्य आत्मनः सख्युः अशेष देहिनाम् सामान्यतः किम् विषय उपपादनैः ॥

शब्दार्थ—

कः	१५.	कौन सा	सतः	१२.	विराजमान
अति	१६.	विशेष	स्वस्य	३.	अपनी
प्रयासः	१७.	परिश्रम है (उनको छोड़कर)	आत्मनः	४.	आत्मा
असुर	१.	हे दैत्य	सख्युः	८.	मित्र (और)
बालकाः	२.	बालकों	अशेष	५.	समस्त
हरेः	१३.	भगवान् की	देहिनाम्	६.	प्राणियों के
उपासने	१४.	उपासना करने में	सामान्यतः	७.	समान रूप से
स्वे	९.	अपने	किम्	२०.	क्या लाभ है
हृदि	१०.	हृदय में	विषय	१८.	विषय-भोग की सामग्री
छिद्रवत् ।	११.	आकाश के समान	उपपादनैः ॥	१९.	इकट्ठी करने से

श्लोकार्थ—हे दैत्य बालको ! अपनी आत्मा समस्त प्राणियों के समान रूप से मित्र और अपने हृदय में आकाश के समान विराजमान भगवान् की उपासना करने में कौन सा विशेष परिश्रम है ? उनको छोड़कर विषय भोग की सामग्री इकट्ठी करने में कौन सा लाभ है ?

एकोनत्रिंशः श्लोकः

रायः कलत्रं पशवः सुतादयो गृहा मही कुञ्जरकोशभूतयः ।
सर्वेऽर्थकामाः क्षणभङ्गुरायुषः कुर्वन्ति मर्त्यस्य कियत् प्रियं चलाः ॥३९॥

पदच्छेद— रायः कलत्रम् पशवः सुत आदयः गृहाः मही कुञ्जर कोश भूतयः ।
सर्वे अर्थ कामाः क्षणभङ्गुर आयुषः कुर्वन्ति मर्त्यस्य कियत् प्रियम् चलाः ॥

शब्दार्थ—रायः	१.	धन	सर्वे	११.	सभी
कलत्रम्	२.	स्त्री	अर्थ	१२.	धन
पशवः	३.	पशु	कामाः	१३.	भोग सामग्री की
सुत	४.	पुत्र	क्षणभङ्गुर	१५.	क्षण में विनाशशील
आदयः	५.	आदि	आयुषः	१६.	आयु वाले
गृहाः	६.	घर	कुर्वन्ति	२०.	कर सकते हैं
मही	७.	पृथ्वी	मर्त्यस्य	१७.	मनुष्य का
कुञ्जर	८.	हाथी	कियत्	१८.	कितना
कोश	९.	खजाना	प्रियम्	१९.	प्रिय
भूतयः ।	१०.	विभूतियाँ (और)	चलाः ॥	१४.	चञ्चल हैं (ये)

श्लोकार्थ—धन, स्त्री, पशु पुत्र आदि, घर, पृथ्वो, खजाना, विभूतियाँ और सभी धन और भोग सामग्रियाँ चञ्चल हैं । ये क्षण में विनाशशील आयु वाले मनुष्य का कितना प्रिय कर सकते हैं ?

चत्वारिंशः श्लोकः

एवं हि लोकाः क्रतुभिः कृता अमी क्षयिष्णवः सातिशया न निर्मलाः ।
तस्माददृष्टश्रुतदूषणं परं भक्त्यैकयेशं भजतात्मलब्धये ॥४०॥

पदच्छेद—एवम् हि लोकाः क्रतुभिः कृताः अमी क्षयिष्णवः सातिशयाः न निर्मलाः ।
तस्मात् अदृष्टश्रुत दूषणम् परम् भक्त्या एकया ईशम् भजत आत्म लब्धये ॥

शब्दार्थ—एवम्	१.	इस प्रकार	तस्मात्	११.	इसलिये
हि	८.	ही है	अदृष्टश्रुत	१२.	न देखे न सुने गये
लोकाः	५.	लोक	दूषणम्	१३.	दोष वाले
क्रतुभिः	२.	यज्ञों के द्वारा	परम्	१४.	परमात्मा
कृताः	३.	प्राप्त किये गये	भक्त्या	१७.	भक्ति से
अमी	४.	ये (स्वर्गादि)	एकया	१६.	अनन्य
क्षयिष्णवः	६.	नाशवान् (एवम्)	ईशम्	१५.	परमेश्वर का
सातिशयाः	७.	अपेक्षाकृत छोटे-बड़े	भजत	२०.	भजन करो
न	१०.	नहीं हैं (तथा)	आत्म	१८.	आत्म
निर्मलाः ।	९.	निर्दोष	लब्धये ॥	१९.	ज्ञान के लिए

श्लोकार्थ—इस प्रकार यज्ञों के द्वारा प्राप्त किये गए ये स्वर्गादि लोक नाशवान् एवम् अपेक्षाकृत छोटे-बड़े ही हैं तथा निर्दोष नहीं हैं । इसलिए न देखे न सुने गये दोष वाले परमात्मा, परमेश्वर का अनन्य भक्ति से आत्म ज्ञान के लिए भजन करो ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

यदध्यर्थ्येह कर्माणि विद्वन्मान्यसकृन्नरः ।
करोत्यतो विपर्यासममोघं विन्दते फलम् ॥४१॥

पदच्छेद— यत् अध्यर्थ्य इह कर्माणि विद्वन् मानी असकृत् नरः ।
करोति अतः विपर्यासम् अमोघम् विन्दते फलम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिस	नरः	६.	मनुष्य
अध्यर्थ्य	२.	उद्देश्य से	करोतिअतः	६.	करता है इसलिए
इह	३.	यहाँ (इस संसार में)	विपर्यासम्	११.	विपरीत
कर्माणि	८.	कर्मों को	अमोघम्	१०.	निःसन्देह
विद्वन्	४.	अपने को विद्वान्	विन्दते	१३.	प्राप्त करता है
मानी	५.	मानने वाला	फलम् ॥	१२.	फल को
ससकृत् ।	७.	बार-बार			

श्लोकार्थ—जिस उद्देश्य से यहाँ (इस संसार में) अपने को विद्वान् मानने वाला मनुष्य बार-बार कर्मों को करता है । इसलिए निःसन्देह विपरीत फल को प्राप्त करता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

सुखाय दुःखमोक्षाय सङ्कल्प इह कर्मिणः ।
सदाऽऽप्नोतीहया दुःखमनीहायाः सुखावृतः ॥४२॥

पदच्छेद— सुखाय दुःख मोक्षाय सङ्कल्प इह कर्मिणः ।
सदा आप्नोति ईहया दुःखम् अनीहायाः सुख आवृतः ॥

शब्दार्थ—

सुखाय	१.	सुख के लिए (और)	सदा	७.	जो हमेशा
दुःख	२.	दुःख से	आप्नोति	१३.	प्राप्त करता है
मोक्षाय	३.	छूटने के लिए	ईहया	११.	कामना के कारण
सङ्कल्प	६.	प्रवृत्ति होती है	दुःखम्	१२.	दुःख को
इह	४.	यहाँ संसार में	अनीहायाः	८.	अनिच्छा के कारण
कर्मिणः ।	५.	कार्य करने वाले की	सुख	६.	सुख से
			आवृतः ॥	१०.	घिरा रहता था वही अब)

श्लोकार्थ—सुख के लिए और दुःख से छूटने के लिए यहाँ इस संसार में कार्य करने वालों की प्रवृत्ति होती है । जो हमेशा अनिच्छा के कारण सुख से घिरा रहता था, वही अब कामनाओं के कारण दुःख को प्राप्त करता है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

कामान्कामयते काम्यैर्यदर्थमिह पूरुषः ।
स वै देहस्तु पारक्यो भङ्गुरो यात्युपैति च ॥४३॥

पदच्छेद— कामान् कामयते काम्यैः यत् अर्थम् इह पूरुषः ।
स: वै देहः तु पारक्यः भङ्गुरः याति उपैति च ॥

शब्दार्थ—

कामान्	६.	काम भोगों को	स: वै	८.	वह
कामयते	७.	चाहता है	देहः	९.	शरीर
काम्यैः	३.	सकाम कर्मों के द्वारा	तु	१०.	तो
यत्	४.	जिस शरीर के	पारक्यः	११.	पराया (अथवा)
अर्थम्	५.	लिए	भङ्गुरः	१२.	नाशवान् है
इह	१.	यहाँ इस संसार में	याति	१४.	जाता
पूरुषः ।	२.	मनुष्य	उपैति	१५.	आता रहता है
			च ॥	१३.	और

श्लोकार्थ—यहाँ इस संसार में मनुष्य सकाम कर्मों के द्वारा जिस शरीर के लिए काम भोगों को चाहता है वह शरीर तो पराया अथवा नाशवान् है और जाता आता रहता है ॥

चतुः चत्वारिंशः श्लोकः

किमु व्यवहितापत्यदारागारधनादयः ।
राज्यं कोशगजामात्यभृत्याप्ता ममतास्पदाः ॥४४॥

पदच्छेद— किमु व्यवहित अपत्य दारा आगार धन आदयः ।
राज्यम् कोश गज अमात्य भृत्य आप्ताः ममता अस्पदाः ॥

शब्दार्थ—

किमु	१५.	क्या है	राज्यम्	७.	राज्य
व्यवहित	१.	इस शरीर से अलग रहने वाले	कोश	८.	खजाना
अपत्य	२.	पुत्र	गज	९.	हाथी
दारा	३.	स्त्री	अमात्य	१०.	मंत्री
आगार	४.	घर	भृत्य	११.	नौकर-चाकर
धन	५.	धन	आप्ताः	१२.	गुरुजन (और)
आदयः ।	६.	आदि	ममता	१३.	अपने
			आस्पदाः ॥	१४.	कहलाने वाले के बारे में तो कहना ही क्या

श्लोकार्थ—इस शरीर से अलग रहने वाले पुत्र, स्त्री, घर, धन आदि राज्य, खजाना, हाथी, मंत्री, नौकर-चाकर गुरुजन और अपने कहलाने वालों के बारे में तो कहना ही क्या है ? (जब शरीर ही अपना नही तब ये कैसे होंगे) ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

किमेतैरात्मनस्तुच्छैः सह देहेन नश्वरैः ।
अनर्थैरर्थसंकाशैर्नित्यानन्दमहोदधेः ॥४५॥

पदच्छेद— किम् एतैः आत्मनः तुच्छैः सह देहेन नश्वरैः ।
अनर्थैः अर्थ संकाशैः नित्यानन्द महोदधेः ॥

शब्दार्थ—

किम्	१२.	क्या लेना है	नश्वरैः	८.	नष्ट हो जाने वाली
एतैः	१०.	इन	अनर्थैः	३.	अनर्थ रूप
आत्मनः	६.	अपनी	अर्थ	४.	पुरुषार्थ के
तुच्छैः	११.	तुच्छ वस्तुओं से	संकाशैः	५.	समान
सह	७.	साथ	नित्यानन्द	१.	नित्य आनन्द के
देहेन ।	६.	शरीर के	महोदधेः ॥	२.	महान् समुद्र रूप भगवान् के लिए

श्लोकार्थ—नित्य आनन्द के महान् समुद्र रूप भगवान् के लिये अनर्थ रूप पुरुषार्थ के समान शरीर के साथ नष्ट हो जाने वाली अपनी इन तुच्छ वस्तुओं से क्या लेना है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

निरूप्यतामिह स्वार्थः कियान्देहभृतोऽसुराः ।
निषेकादिष्ववस्थासु क्लिश्यमानस्य कर्मभिः ॥४६॥

पदच्छेद— निरूप्यताम् इह स्वार्थः कियान् देह भृतः असुराः ।
निषेकादिषु अवस्थासु क्लिश्यमानस्य कर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

निरूप्यताम्	२.	विचार करके देखो	असुराः	१.	हे असुरो !
इह	३.	यहाँ इस संसार में	निषेकादिषु	४.	जन्म आदि से लेकर मृत्यु पर्यन्त
स्वार्थः	१२.	स्वार्थ है	अवस्थासु	५.	सभी अवस्थाओं में
कियान्	११.	कितना	क्लिश्य	७.	कष्ट
देह	६.	शरीर	मानस्य	८.	पाते-हुए
भृतः ।	१०.	धारी मनुष्य का	कर्मभिः ॥	६.	कर्मों के अधीन होकर

श्लोकार्थ—हे असुरो ! विचार करके देखो । यहाँ इह संसार में जन्म आदि से लेकर मृत्यु पर्यन्त सभी अवस्थाओं में कर्मों के अधीन होकर कष्ट पाते हुए शरीर धारी मनुष्य का कितना स्वार्थ है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

कर्माण्यारभते देही देहेनात्मानुवर्तिना ।
कर्मभिस्तनुते देहमुभयं त्वविवेकतः ॥४७॥

पदच्छेद— कर्माणि आरभते देही देहेन आत्म अनुवर्तिना ।
कर्मभिः तनुते देहम् उभयम् तु अविवेकतः ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	५. कर्मों को	**कर्मभिः**	७. कर्मों के द्वारा
आरभते	६. करता है (और)	**तनुते**	९. ग्रहण करता है (ये)
देही	१. प्राणी	**देहम्**	८. शरीर को
देहेन	४. शरीर से	**उभयम्**	१०. दोनों
आत्म	२. आत्मा का	**अविवेकतः ॥**	११. अविवेक के कारण होते हैं
अनुवर्तिना ।	३. अनुसरण करने वाले		

श्लोकार्थ—प्राणी आत्मा का अनुसरण करने वाले शरीर से कर्मों को करता है और कर्मों के द्वारा शरीर ग्रहण करता है । ये दोनों अविवेक के कारण होते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मादर्थाश्च कामाश्च धर्माश्च यदपाश्रयाः ।
भजतानीहयाऽऽत्मानमनीहं हरिमीश्वरम् ॥४८॥

पदच्छेद— तस्मात् अर्थाः च कामाः च धर्माः च यत् अपाश्रयाः ।
भजता अनीहया आत्मानम् अनीहम् हरिम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिए	**भजत**	७. भजन करो
अर्थाः	१०. अर्थ	**अनीहया**	२. निष्काम भाव से
च	११. और	**आत्मानम्**	३. आत्म स्वरूप
कामाश्च	१२. काम तथा	**अनीहम्**	४. इच्छा रहित
धर्माः च	१३. धर्म हैं	**हरिम्**	६. श्री हरि का
यत्	८. जिनके	**ईश्वरम् ॥**	५. सर्वसमर्थ
अपाश्रयाः ।	९. आश्रित		

श्लोकार्थ—इसलिए निष्काम भाव से आत्म स्वरूप इच्छारहित सर्वसमर्थ श्री हरि का भजन करो । जिनके आश्रित अर्थ, काम और धर्म है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

सर्वेषामपि भूतानां हरिरात्मेश्वरः प्रियः ।
भूतैर्महद्भिः स्वकृतैः कृतानां जीवसंज्ञितः ॥४९॥

पदच्छेद— सर्वेषाम् अपि भूतानाम् हरिः आत्मा ईश्वरः प्रियः ।
भूतैः महद्भिः स्वकृतैः कृतानाम् जीव संज्ञितः ॥

शब्दार्थ—

सर्वेषाम् अपि	२. सभी	**भूतैः**	८. पञ्चभूतों (और)
भूतानाम्	३. प्राणियों के	**महद्भिः**	९. महत्तत्त्वों से
हरिः	१. भगवान् हरि	**स्वकृतैः**	७. अपने बनाये हुए
आत्मा	४. आत्मा	**कृतानाम्**	१०. निर्मित शरीर में
ईश्वरः	५. ईश्वर और	**जीव**	११. जीव
प्रियः ।	६. प्रिय हैं (वे)	**संज्ञितः ॥**	१२. नाम से कहे जाते हैं ।

श्लोकार्थ—भगवान् हरि सभी प्राणियों के आत्मा ईश्वर और प्रिय हैं । वे अपने बनाये हुए पञ्चभूतों और महत्तत्त्वों से निर्मित शरीरों में जीव नाम से कहे जाते हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

देवोऽसुरो मनुष्यो वा यक्षो गन्धर्व एव च ।
भजन् मुकुन्दचरणं स्वस्तिमान् स्याद् यथा वयम् ॥५०॥

पदच्छेद— देवः असुरः मनुष्यः वा यक्षः गन्धर्वः एव च ।
भजन् मुकुन्द चरणम् स्वस्तिमान् स्यात् यथा वयम् ॥

शब्दार्थ—

देवः	१. देवता	**भजन्**	११. भजन करता हुआ
असुरः	२. असुर	**मुकुन्द**	९. श्री कृष्ण के
मनुष्यः	३. मनुष्य	**चरणम्**	१०. चरणकमलों का
वा	४. अथवा	**स्वस्तिमान्**	१४. कल्याण युक्त
यक्षः	५. यक्ष	**स्यात्**	१५. होता है
गन्धर्वः	६. गन्धर्व	**यथा**	१३. समान
एव	८. ही	**वयम् ॥**	१२. हमारे
च ।	७. और		

श्लोकार्थ—देवता, असुर, मैंनुष्य अथवा यक्ष और गन्धर्व ही श्री कृष्ण के चरणकमलों का भजन करता हुआ हमारे समान कल्याण युक्त होता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

नालं द्विजत्वं देवत्वमृषित्वं वासुरात्मजाः।
प्रीणनाय मुकुन्दस्य न वृत्तं न बहुज्ञता ॥५१॥

पदच्छेद— न अलम् द्विजत्वम् देवत्वम् ऋषित्वम् वा असुर आत्मजाः ।
प्रीणनाय मुकुन्दस्य न वृतम् न बहुज्ञता ॥

शब्दार्थ—

न अलम्	११.	पर्याप्त नहीं है	प्रीणनाय	४.	प्रसन्न करने के लिए
द्विजत्वम्	५.	ब्राह्मण होना	मुकुन्दस्य	३.	भगवान् को
देवत्वम्	६.	देवता होना या	न	१०.	भी
ऋषित्वम् वा	७.	ऋषि होना या	वृत्तम्	८.	सदाचारी होना (तथा)
असुर	१.	हे दैत्य	न	१२.	नहीं हैं
आत्मजाः ।	२.	बालको !	बहुज्ञता ।।	९.	बहुत ज्ञानी होना

श्लोकार्थ—हे दैत्य बालको ! भगवान् को प्रसन्न करने के लिए ब्राह्मण होना देवता होना या ऋषि होना या सदाचारी होना तथा बहुत ज्ञानी होना भी पर्याप्त नहीं हैं ।।

द्विपञ्चाशः श्लोकः

न दानं न तपो नेज्या न शौचं न व्रतानि च ।
प्रीयतेऽमलया भक्त्या हरिरन्यद् विडम्बनम् ॥५२॥

पदच्छेद— न दानम् न तपः न इज्या न शौचम् न व्रतानि च ।
प्रीयते अमलया भक्त्या हरिः अन्यत् विडम्बनम् ।।

शब्दार्थ—

न	१.	न	व्रतानि	११.	व्रत से (भगवान् प्रसन्न होते है)
दानम्	२.	दान	च	९.	और
न	३.	न	प्रीयते	१५.	प्रसन्न होते हैं
तपः	४.	तपस्या	अमलया	१३,	निर्मल
न	५.	न	भक्त्या	१४.	भक्ति से
इज्या	६.	यज्ञ	हरिः	१२.	भगवान् तो
न	७.	न	अन्यत्	१६.	और सब तो
शौचम्	८.	शौच	विडम्बनम् ।।	१७.	विडम्बना मात्र है
न ।	१०.	न			

श्लोकार्थ—न दान, न तपस्या, न यज्ञ, न शौच और न व्रत से भगवान् प्रसन्न होते है। वे भगवान् तो निर्मल भक्ति से प्रसन्न होते है। और सब तो विडम्बना मात्र है ।

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

ततो हरौ भगवति भक्तिं कुरुत दानवाः ।
आत्मौपम्येन सर्वत्र सर्वभूतात्मनीश्वरे ॥५३॥

पदच्छेद— ततः हरौ भगवति भक्तिम् कुरुत दानवाः ।
आत्म औपम्येन सर्वत्र सर्व भूत आत्मनि ईश्वरे ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. इसलिए	आत्म	३. आत्मा
हरौ	१०. हरि की	औपम्येन	४. समान समझकर
भगवति	९. भगवान्	सर्वत्र	५. सब जगह
भक्तिम्	११. भक्ति	सर्वभूत	६. सर्वात्मा
कुरुत	१२. करो	आत्मनि	८. परमात्मा
दानवाः ।	२. हे दानवो !	ईश्वरे ॥	७. सर्वसमर्थ

श्लोकार्थ—इस लिए हे दानवो ! अपने समान समझकर सब जगह सर्वात्मा सर्वसमर्थ, परमात्मा भगवान् हरि की भक्ति करो ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

दैतेया यक्षरक्षांसि स्त्रियः शूद्रा व्रजौकसः ।
खगा मृगाः पापजीवाः सन्ति ह्यच्युततां गताः ॥५४॥

पदच्छेद— दैतेयाः यक्ष रक्षांसि स्त्रियः शूद्राः व्रज ओकसः ।
खगाः मृगाः पाप जीवाः सन्ति हि अच्युतताम् गताः ॥

शब्दार्थ—

दैतेयाः	१. दैत्य	खगाः	७. पक्षी
यक्ष	२. यक्ष	मृगाः	८. मृग
रक्षांसि	३. राक्षस	पाप	९. पापी
स्त्रियः	४. स्त्री	जीवाः	१०. जीव भी
शूद्राः	५. शूद्र	सन्ति	१३. हो गये है
		हि अच्युतताम्	११. भगवत् भाव को
व्रज ओकसः ।	६. अहीर	गताः ॥	१२. प्राप्त

श्लोकार्थ—हे दैत्य ! यक्ष, राक्षस, स्त्री, शूद्र, अहीर, पक्षी, मृग, पापी जीव भी भगवान् को प्राप्त हो गये हैं ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

एतावानेव लोकेऽस्मिन्पुंसः स्वार्थः परः स्मृतः ।
एकान्तभक्तिर्गोविन्दे यत् सर्वत्र तदीक्षणम् ।।५५।।

पदच्छेद— एतावान् एव लोके अस्मिन् पुंसः स्वार्थः परः स्मृतः ।
एकान्त भक्तिः गोविन्दे यत् सर्वत्र तद् ईक्षणम् ।।

शब्दार्थ—

एतावान्	६.	इतना	**एकान्त**	११.	अनन्य
एव	७.	ही	**भक्तिः**	१२.	भक्ति (करे)
लोके	२.	संसार में	**गोविन्दे**	१०.	भगवान् गोविन्द में
अस्मिन्	१.	इस	**यत्**	९.	कि
पुंसः	३.	मनुष्य का	**सर्वत्र**	१३.	सब जगह
स्वार्थः	५.	स्वार्थ	**तद्**	१४.	उन भगवान् का
परः	४.	बड़ा	**ईक्षणम् ।।**	१५.	दर्शन करना ही (अनन्य भक्ति है)
स्मृतः ।	८.	कहा गया है			

श्लोकार्थ—इस संसार में मनुष्य का बड़ा स्वार्थ इतना ही कहा गया है कि भगवान् गोविन्द में अनन्य भक्ति करे। सब जगह उन भगवान् का दर्शन करना ही अनन्य भक्ति है ।।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां प्रह्लादानुचरिते
दैत्यपुत्रानुशासनं नाम सप्तमस्कन्धे सप्तमः अध्यायः ।।७।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

अष्टमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— अथ दैत्यसुताः सर्वे श्रुत्वा तदनुवर्णितम् ।
जगृहुर्निरवद्यत्वान्नैव गुर्वनुशिक्षितम् ॥ १ ॥

पदच्छेद— अथ दैत्य सुताः सर्वे श्रुत्वा तद् अनुवर्णितम् ।
जगृहुः निरवद्यत्वात् न एव गुरु अनुशिक्षितम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	जगृहुः	९.	ग्रहण कर लिया (किन्तु)
दैत्य	३.	दैत्य	निरवद्यत्वात्	८.	निर्दोष होने के कारण उसे
सुताः	४.	बालकों ने	न	१२.	नहीं
सर्वे	२.	सभी	एव	१३.	ही (ग्रहण किया)
श्रुत्वा	७.	सुनकर	गुरु	१०.	गुरु की
तद्	५.	उन प्रह्लाद का	अनुशिक्षितम् ॥	११.	दूषित शिक्षा को
अनुवर्णितम् ।	६.	वर्णन किया हुआ (प्रवचन)			

श्लोकार्थ—इसके बाद सभी दैत्य बालकों ने उन प्रह्लाद का वर्णन किया हुआ प्रवचन सुनकर निर्दोष होने के कारण उसे ग्रहण कर लिया । गुरु की दूषित शिक्षा को ग्रहण नहीं किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

अथाचार्यसुतस्तेषां बुद्धिमेकान्तसंस्थिताम् ।
आलक्ष्य भीतस्त्वरितो राज्ञ आवेदयद् यथा ॥ २ ॥

पदच्छेद— अथ आचार्य सुतः तेषाम् बुद्धिम् एकान्त संस्थिताम् ।
आलक्ष्य भीतः त्वरितः राज्ञे आवेदयत् यथा ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	आलक्ष्य	८.	देखकर
आचार्य	२.	गुरु	भीतः	९.	डर गये और
सुतः	३.	पुत्र ने	त्वरितः	१०.	शीघ्रता से
तेषाम्	४.	उन बालकों की	राज्ञे	११.	राजा हिरण्यकशिपु से
बुद्धिम्	५.	बुद्धि को	आवेदयत्	१३.	निवेदन कर दिया
एकान्त	६.	एकमात्र भगवान् में	यथा ॥	१२.	जिस प्रकार हुआ था
संस्थिताम् ।	७.	स्थिर			

श्लोकार्थ—तदन्तर गुरु पुत्र ने उन बालकों की बुद्धि को एकमात्र भगवान् में स्थिर देखकर डर गये और शीघ्रता से जाकर जिस प्रकार हुआ था सब राजा हिरण्यकशिपु से निवेदन कर दिया ।

तृतीयः श्लोकः

श्रुत्वा तदप्रियं दैत्यो दुःसहं तनयानयम् ।
कोपावेशचलद्गात्रः पुत्रं हन्तुं मनो दधे ॥ ३ ॥

पदच्छेद— श्रुत्वा तत् अप्रियम् दैत्यः दुःसहम् तनय अनयम् ।
कोप आवेश चलत् गात्रः पुत्रम् हन्तुम् मनः दधे ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	५.	सुनकर	कोप	६.	क्रोध के
तत्	१०.	उस	आवेश	७.	आवेश से
अप्रियम्	२.	अप्रिय (एवम्)	चलत्	८.	काँपते हुए
दैत्यः	११.	दैत्यराज ने	गात्रः	९.	शरीर वाले
दुःसहम्	३.	असहनीय	पुत्रम्	१२.	पुत्र को
तनय	१.	पुत्र की	हन्तुम्	१३.	मारने के लिए
अनयम् ।	४.	अनीति को	मनः दधे ॥	१४.	मन में—निश्चय किया

श्लोकार्थ—पुत्र की अप्रिय एवं असहनीय अनीति को सुनकर क्रोध के आवेश से काँपते हुए शरीर वाले उस दैत्यराज ने पुत्र को मारने के लिए मन में निश्चय किया ॥

चतुर्थः श्लोकः

क्षिप्त्वा परुषया वाचा प्रह्लादमतदर्हणम् ।
आहेक्षमाणः पापेन तिरश्चीनेन चक्षुषा ॥ ४ ॥

पदच्छेद— क्षिप्त्वा परुषया वाचा प्रह्लादम् अतद् अर्हणम् ।
आह ईक्षमाणः पापेन तिरश्चीनेन चक्षुषा ॥

शब्दार्थ—

क्षिप्त्वा	६.	झिड़क कर	आह	११.	कहा
परुषया	४.	कठोर	ईक्षमाणः	१०.	देखते हुए
वाचा	५.	वाणी से	पापेन	७.	पाप भरी और
प्रह्लादम्	१.	प्रह्लाद को	तिरश्चीनेन	८.	टेढ़ी
अतद्	२.	उसके	चक्षुषा ॥	९.	दृष्टि से
अर्हणम् ।	३.	अयोग्य			

श्लोकार्थ— प्रह्लाद को उसके अयोग्य कठोर वाणी से झिड़क कर पाप भरी और टेढ़ी दृष्टि से देखते हुए कहा ॥

पञ्चमः श्लोकः

प्रश्रयावनतं दान्तं बद्धाञ्जलिमवस्थितम् ।
सर्पः पदाहत इव श्वसन्प्रकृतिदारुणः ॥ ५ ॥

पदच्छेद— प्रश्रय अवनतम् दान्तम् बद्ध अञ्जलिम् अवस्थितम् ।
सर्पः पदा आहत इव श्वसन् प्रकृति दारुणः ॥

शब्दार्थ—

प्रश्रय	३.	विनय से	सर्पः	११.	सांप के
अवनतम्	४.	झुके हुए	पदा	९.	पैर से
दान्तम्	५.	शान्त	आहत	१०.	चोट खाये हुए
बद्ध	७.	जोड़ कर	इव	१२.	समान
अञ्जलिम्	६.	हाथ	श्वसन्	१६.	फुंफकारने लगा
अवस्थितम् ।	८.	खड़े हुए (प्रह्लाद के ऊपर)	प्रकृति	१.	स्वभाव से
			दारुणः ॥	२.	भयंकर (हिरण्यकशिपु)

श्लोकार्थ—स्वभाव से भयंकर हिरण्यकशिपु विनय से झुके हुए, शान्त, हाथ जोड़कर खड़े हुए प्रह्लाद के ऊपर पैर से चोट खाये हुए सांप के समाने फुंफकारने लगा ॥

षष्ठः श्लोकः

हे दुर्विनीत मन्दात्मन्कुलभेदकराधम ।
स्तब्धं मच्छासनोद्धूतं नेष्ये त्वाद्य यमक्षयम् ॥ ६ ॥

पदच्छेद— हे दुर्विनीत मन्द आत्मन् कुल भेदकर अधम् ।
स्तब्धम् मत् शासन उद्धूतम् नेष्ये त्वा अद्य यम क्षयम् ॥

शब्दार्थ—

हे दुर्विनीत	१.	रे उद्दण्ड !	मत्	८.	मेरी
मन्द	२.	मन्द	शासन	९.	आज्ञा का
आत्मन्	३.	मति	उद्धूतम्	१०.	उल्लंघन करने वाले
कुल	४.	कुल को	नेष्ये	१५.	भेज दूंगा
भेदकर	५.	फोड़ने वाला	त्वा	११.	तुझे
अधम ।	६.	नीच	अद्य	१२.	आज
स्तब्धम्	७.	ढिठाई से	यम	१३.	यमराज के
			क्षयम् ॥	१४.	घर.

श्लोकार्थ—रे उद्दण्ड ! मन्द मति, कुल को फोड़ने वाला, नीच ! ढिठाई से मेरी आज्ञा का उल्लंघन करने वाले तुझे आज यमराज के घर भेज दूँगा ॥

सप्तमः श्लोकः

क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयो लोकाः सहेश्वराः।
तस्य मेऽभीतवन्मूढ शासनं किम्बलोऽत्यगाः ॥७॥

पदच्छेद— क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयः लोकाः सह ईश्वराः।
तस्य मे अभीत वत् मूढ शासनम् किम् बलः अत्यगाः ॥

शब्दार्थ—

क्रुद्धस्य	२.	क्रोध करने पर	**तस्य**	८.	उस
यस्य	१.	जिसके	**मे**	९.	मेरी
कम्पन्ते	७.	कांप उठते हैं	**अभीत**	१२.	निडर के
त्रयः	५.	तीनों	**वत्**	१३.	समान
लोकाः	६.	लोक	**मूढ**	११.	मूर्खं
सह	४.	सहित	**शासनम्**	१०.	आज्ञा को
ईश्वराः।	३.	लोकपाल	**किम्बलः**	१४.	किसके बल पर
			अत्यगाः॥	१५.	तूने त्यागा है

श्लोकार्थ—जिसके क्रोध करने पर लोकपाल सहित तीनों लोक काँप उठते है, उस मेरी आज्ञा को मूर्खं ! निडर के समान किसके बल पर तूने त्यागा है ॥

अष्टमः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच – न केवलं मे भवतश्च राजन् स वै बलं बलिनां चापरेषाम्।
परेऽवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः ॥८॥

पदच्छेद— न केवलम् मे भवतः च राजन् सः वै बलम् बलिनाम् च अपरेषाम्।
परे अवरे अमी स्थिर जङ्गमाः ये ब्रह्म आदयः येन वशम् प्रणीताः ।।

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं	**परे**	१९.	बड़े
केवलम्	३.	केवल	**अवरे**	१८.	छोटे
मे	४.	मेरे	**अमी**	२०.	ये जीव हैं (उनको)
भवतः	६.	आपके ही	**स्थिर**	१६.	स्थावर (अचर)
च	५.	और	**जङ्गमाः**	१५.	जङ्गम (चर)
राजन्	१.	हे राजन् !	**ये**	१७.	जो (भी)
सः वै	२.	वे (भगवान्)	**ब्रह्म**	१३.	ब्रह्म से
बलम्	११.	बल है	**आदयः**	१४.	लेकर
बलिनाम्	१०.	बलवानों के भी	**येन**	१२.	जिन्होंने
च	८.	और	**वशम्**	२१.	अपने अधीन
अपरेषाम्।	९.	दूसरे	**प्रणीताः॥**	२२.	कर रखा है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वे भगवान् केवल मेरे और आपके ही नहीं और दूसरे बलवानों के भी बल है। जिन्होंने ब्रह्मा से लेकर जङ्गम स्थावर जो भी चर-अचर छोटे-बड़े ये जीव है। उनको अपने अधीन कर रखा है ॥

नवमः श्लोकः

सः ईश्वरः काल उरुक्रमोऽसावोजः सहः सत्त्वबलेन्द्रियात्मा ।
स एव विश्वं परमः स्वशक्तिभिः सृजत्यवत्यत्ति गुणत्रयेशः ॥९॥

पदच्छेद— सः ईश्वरः कालः उरुक्रमः असौ ओजः सहः सत्त्व बल इन्द्रिय आत्मा ।
सः एव विश्वम् परमः स्वशक्तिभिः सृजति अवति अत्ति गुणत्रय ईशः ॥

शब्दार्थ—

सः	५.	वही	**सः एव**	१०.	वह ही
ईश्वरः	२.	सर्वशक्तिमान्	**विश्वम्**	१५.	संसार की
काल	४.	काल है	**परमः स्वः**	१३.	परमेश्वर अपनो
उरुक्रमः	३.	महापराक्रमी	**शक्तिभिः**	१४.	शक्तियों से
असौ	१.	वे भगवान्	**सृजति**	१६.	रचना
ओजः	६.	तेज	**अवति**	१७.	पालन और
सहः सत्त्व	७.	शक्ति पराक्रम	**अत्ति**	१८.	संहार करते हैं
बल	८.	बल	**गुणत्रय**	११.	गुणों के तीनों
इन्द्रिय आत्मा ।	९.	इन्द्रिय (और) आत्मा है	**ईशः ॥**	१२.	स्वामी

श्लोकार्थ—वे भगवान् सर्वशक्तिमान्, महापराक्रमी, काल हैं । वही तेज, शक्ति, पराक्रम, बल इन्द्रिय और आत्मा हैं । वही तीनों गुणों के स्वामी, परमेश्वर, अपनी शक्तियों से संसार की रचना, पालन और संहार करते हैं ॥

दशमः श्लोकः

जह्यासुरं भावमिमं त्वमात्मनः समं मनो धत्स्व न सन्ति विद्विषः ।
ऋतेऽजितादात्मन उत्पथस्थितात् तद्धि ह्यनन्तस्य महत् समर्हणम् ॥१०॥

पदच्छेद— जहि आसुरम् भावम् इमम् त्वम् आत्मनः समम् मनः धत्स्व न सन्ति विद्विषः ।
ऋते अजितात् आत्मनः उत्पथ स्थितात् तत् हि अनन्तस्य महत् सम् अर्हणम् ॥

शब्दार्थ—

जहि	३.	छोड़ दो	**ऋते**	१२.	सिवाय (दूसरा)
आसुरम् भावम्	२.	असुर के भाव को	**अजितात्**	८.	वश में न रहने वाले (और)
इमम् त्वम्	१.	इस तुम	**आत्मनः**	११.	मन के
आत्मनः	४.	अपने	**उत्पथ**	९.	कुमार्ग में
समम्	६.	समान	**स्थितात्**	१०.	स्थित
मनः	५.	मन के (सबके प्रति)	**तत् ही**	१५.	वही (समान-भाव)
धत्स्व	७.	बनाओ	**अनन्तस्य**	१६.	भगवान् को
न सन्ति	१४.	नहीं हैं	**महत्**	१७.	महान्
विद्विषः ।	१३.	शत्रु	**सम् अर्हणम् ॥**	१८.	सम्यक् पूजन है ।

श्लोकार्थ—तुम इस असुर के भाव को छोड़ दो । अपने मन को सबके प्रति समान बनाओ । वश में न रहने वाले और कुमार्ग में स्थित मन के सिवाय दूसरा शत्रु नहीं है। वही समान भाव भगवान् का सम्यक् पूजन है ॥

एकादशः श्लोकः

दस्यून्पुरा षण्न विजित्य लुम्पतो मन्यन्त एके स्वजिता दिशो दश ।
जितात्मनो ज्ञस्य समस्य देहिनां साधोः स्वमोहप्रभवाः कुतः परे ॥११॥

पदच्छेद— दस्यून् पुरा षट् न विजित्य लुम्पतः मन्यन्ते एके स्वजिताः दिशः दश ।
जित आत्मनः ज्ञस्य समस्य देहिनाम् साधोः स्वमोह प्रभवाः कुतः परे ॥

शब्दार्थ—

दस्यून्	३.	शत्रुओं को	जित	१२.	जीत लेने वाले
पुरा	४.	पहले	आत्मनः	११.	मन को
षट् न	२.	छः नहीं	ज्ञस्य	१३.	ज्ञानी (और)
विजित्य	५.	जीतकर	समस्य	१५.	समभाव रखने वाले
लुम्पतः	१.	लूटने वाले	देहिनाम्	१४.	प्राणियों के प्रति
मन्यन्ते	१०.	मानते हैं	साधोः	१६.	महात्मा के
एके	९.	कोई (ऐसा)	स्वमोह	१७.	अपने मोह से
स्वजिताः	८.	हमने जीत लिया है	प्रभवाः	१८.	उत्पन्न होने वाले भीतरी शत्रु नहीं है फिर
दिशः	७.	दिशाओं को	कुतः	२०.	कहाँ से आये
दश ।	६.	दशों	परे ॥	१९.	बाहरी शत्रु

श्लोकार्थ—लूटने वाले छः शत्रुओं को पहले नहीं जीतकर दशों दिशाओं को हमने जीत लिया है,कोई ऐसा मानते हैं । मन को जीत लेने वाले, ज्ञानी, प्राणियों के प्रति सम भाव रखने वाले, महात्मा के अपने मोह से उत्पन्न होने वाले भीतरी शत्रु नहीं हैं फिर बाहरी शत्रु कहाँ से आये ॥

द्वादशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुरुवाच—व्यक्तं त्वं मर्तुकामोऽसि योऽतिमात्रं विकत्थसे ।
मुमूर्षूणां हि मन्दात्मन् ननु स्युर्विप्लवा गिरः ॥१२॥

पदच्छेद— व्यक्तम् त्वम् मर्तु कामः असि यः अति मात्रम् विकत्थसे ।
मुमूर्षूणाम् हि मन्द आत्मन् ननु स्युः विप्लवाः गिरः ॥

शब्दार्थ—

व्यक्तम्	१.	स्पष्ट है कि	मुमूर्षूणाम्	९.	मरने के इच्छुकों की
त्वम्	२.	तुम	हि मन्द	८.	रे मन्द !
मर्तुकामः	३.	मरने के इच्छुक	आत्मन्	१०.	बुद्धि
असि	४.	हो	ननु	११.	निश्चित रूप से तुम्हारे जैसी
यः	५.	जो	स्युः	१४.	होती हैं
अतिमात्रम्	६.	बहुत	विप्लवाः	१२.	ऊट पटांग
विकत्थसे ।	७.	बहक रहे हो	गिरः ॥	१३.	बातें

श्लोकार्थ— स्पष्ट है कि तुम मरने के इच्छुक हो, जो बहुत बहक रहे हो । रे मन्द बुद्धि ! मरने के इच्छुकों की निश्चित रूप से तुम्हारे जैसी ऊट पटांग बातें होती हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यस्त्वया मन्दभाग्योक्तो मदन्यो जगदीश्वरः ।
क्वासौ यदि स सर्वत्र कस्मात् स्तम्भे न दृश्यते ॥१३॥

पदच्छेद— यः त्वया मन्द भाग्य उक्तः मद् अन्यः जगत् ईश्वरः ।
क्व असौ यदि सः सर्वत्र कस्मात् स्तम्भे न दृश्यते ॥

शब्दार्थ—

यः	२. जो	**क्व**	१०. कहाँ है
त्वया	३. तुमने	**असौ**	९. वह
मन्दभाग्य	१. रे अभागे !	**यदि**	११. यदि
उक्तः	८. कहा है	**सः**	१२. वह
मद्	४. मेरे	**सर्वत्र**	१३. सब जगह है (तो)
अन्यः	५. सिवाय दूसरे को	**कस्मात्**	१४. क्यों
जगत्	६. संसार का	**स्तम्भे**	१५. खम्भे में
ईश्वरः ।	७. स्वामी	**न**	१६. नहीं
		दृश्यते ॥	१७. दिखाई देता है

श्लोकार्थ—रे अभागे ! जो तुयने मेरे सिवाय दूसरे को संसार का स्वामी कहा है । वह कहाँ है ? यदि वह सब जगह है तो क्यों खम्भे में नहीं दिखाई देता है ? ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सोऽहं विकत्थमानस्य शिरः कायाद्धरामि ते ।
गोपायेत हरिस्त्वाद्य यस्ते शरणमीप्सितम् ॥१४॥

पदच्छेद— सः अहम् विकत्थमानस्य शिरः कायात् हरामि ते ।
गोपायेत हरिः त्वा अद्य यः ते शरणम् ईप्सितम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह	**गोपायेत**	१४. रक्षा करे
अहम्	२. मैं	**हरिः**	१२. (वह) हरि
विकत्थमानस्य	३. डींग हाँकने वाले	**त्वा अद्य**	१३. आज तेरी
शिरः	५. सिर को	**यः**	८. जिस पर
कायात्	६. शरीर से	**ते**	९. तुझे
हरामि	७. अलग किये देता हूँ	**शरणम्**	१०. रक्षक होने का
ते ।	४. तेरे	**ईप्सितम् ॥**	११. भरोसा है

श्लोकार्थ—वह मैं डींग हाँकने वाले तेरे सिर को शरीर से अलग किये देता हूँ । जिस पर तुझे रक्षक का भरोसा है, वह हरि आज तेरी रक्षा करे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

एवं दुरुक्तैर्मुहुरर्दयन्रुषा सुतं महाभागवतं महासुरः ।
खड्गं प्रगृह्योत्पतितो वरासनात् स्तम्भं तताडातिबलः स्वमुष्टिना ॥१५॥

पदच्छेद— **एवम्** दुरुक्तैः मुहुः अर्दयन् रुषा सुतम् महा भागवतम् महासुरः ।
खड्गम् प्रगृह्य उत्पतितः वरासनात् स्तम्भम् तताड अतिबलः स्व मुष्टिना ॥

शब्दार्थ—**एवम्**	१.	इस प्रकार	**खड्गम्**	११.	तलवार
दुरुक्तैः	८.	दुर्वचनों के द्वारा	**प्रगृह्य**	१२.	लेकर
मुहुः	६.	बार-बार	**उत्पतितः**	१४.	कूद पड़ा (और)
अर्दयन्	१०.	कष्ट देता हुआ	**वरासनात्**	१३.	सिंहासन से
रुषा	७.	क्रोध से	**स्तम्भम्**	१७.	खम्भे पर
सुतम्	६.	पुत्र को	**तताड**	१८.	आघात किया
महा	४.	महान्	**अतिबलः**	२.	अत्यन्त बलवान्
भागवतम्	५.	भगवत् भक्त	**स्व**	१५.	अपने
महासुरः ।	३.	महादैत्य	**मुष्टिना ॥**	१६.	घूंसे से

श्लोकार्थ—इस प्रकार अत्यन्त बलवान् महादैत्य हिरण्यकशिपु महान् भगवत् भक्त पुत्र को क्रोध से दुर्वचनों के द्वारा बार-बार कष्ट देता हुआ तलवार लेकर सिंहासन से कूद पड़ा और अपने घूंसे से खम्भे पर आघात किया ॥

षोडशः श्लोकः

तदैव तस्मिन् निनदोऽतिभीषणो बभूव येनाण्डकटाहमस्फुटत् ।
यं वै स्वधिष्ण्योपगतं त्वजादयः श्रुत्वा स्वधामाप्ययमङ्ग मेनिरे ॥१६॥

पदच्छेद—तदैव तस्मिन् निनदः अति भीषणः बभूव येन अण्डकटाहम् अस्फुटत् ।
यम् वै स्वधिष्ण्य उपगतम् तु अज आदयः श्रुत्वा स्वधाम अप्ययम् अङ्ग मेनिरे ॥

शब्दार्थ—**तदैव**	२.	उसी समय	**यम्**	१२.	जिस शब्द को
तस्मिन्	३.	उस (खम्भे में)	**वै**	१३.	निश्चित रूप से
निनदः	६.	शब्द	**स्वधिष्ण्य**	१४.	अपने लोक में
अति	४.	अत्यन्त	**उपगतम्**	१५.	पहुँचे हुए
भीषणः	५.	भयंकर	**आजअदयः**	१६.	ब्रह्मा आदि
बभूव	७.	हुआ	**श्रुत्वा**	१७.	सुनकर
येन	८.	जिससे	**स्वधामअप्ययम्**	१८.	अपने लोकों का प्रलय
अण्डकटाहम्	१०.	ब्रह्माण्ड	**अङ्ग**	१.	हे तात !
अस्फुटत् ।	११.	(मानो फट गया हो	**मेनिरे ॥**	१६.	मानने लगे

श्लोकार्थ—उसी समय उस खम्भे में अत्यन्त भयंकर शब्द हुआ, जिससे मानों ब्रह्माण्ड फट गया हो। जिस शब्द को निश्चित रूप से अपने लोक में पहुँचे हुये सुनकर ब्रह्मा आदि अपने लोकों का प्रलय हुआ मानने लगे ॥

सप्तदशः श्लोकः

स विक्रमन् पुत्रवधेप्सुरोजसा निशम्य निर्ह्रादमपूर्वमद्भुतम् ।
अन्तः सभायां न ददर्श तत्पदं वितत्रसुर्येन सुरारियूथपाः ॥१७॥

पदच्छेद-- स विक्रमन् पुत्र वध ईप्सुः ओजसा निशम्य निर्ह्रादम् अपूर्वम् अद्भुतम् ।
अन्तः सभायाम् न ददर्श तत् पदम् वितत्रसुः येन सुरारि यूथपाः ॥

शब्दार्थ—सः	३.	वह (हिरण्यकशिपु)	अन्तः	११.	भीतर
विक्रमन्	५.	पराक्रम करता हुआ (उस)	सभायाम्	१०.	सभा के
पुत्र वध	१.	पुत्र के वध का	न	१४.	नहीं
ईप्सुः	२.	इच्छुक	ददर्श	१५.	देख सका
ओजसा	४.	तेज से	तत्	१२.	उस
निशम्य	९.	सुनकर	पदम्	१३.	स्थान को
निर्ह्रादम्	८.	शब्द को	वितत्रसुः	१८.	डर गये थे
अपूर्वम्	६.	अलौकिक	येन	१६.	जिससे
अद्भुतम् ।	७.	आश्चर्यजनक	सुरारि यूथपाः ॥	१७.	दैत्य सेनापति

श्लोकार्थ—पुत्र के वध का इच्छुक वह हिरण्यकशिपु अपने तेज से पराक्रम करता हुआ उस अलौकिक आश्चर्यजनक शब्द को सुनकर सभा के भीतर उस स्थान को नहीं देख सका । जिससे दैत्य सेनापति डर गये थे ॥

अष्टादशः श्लोकः

सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितं व्याप्तिं च भूतेष्वखिलेषु चात्मनः ।
अदृश्यतात्यद्भुतरूपमुद्वहन् स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम् ॥१८॥

पदच्छेद– सत्यम् विधातुम् निज भृत्य भाषितम् व्याप्तिम् च भूतेषु अखिलेषु च आत्मनः ।
अदृश्यत अति अद्भुत रूपम् उद्वहन् स्तम्भे सभायाम् न मृगम् न मानुषम् ॥

शब्दार्थ—सत्यम्	९.	सत्य	अदृश्यत	२०.	दिखाई पड़े
विधातुम्	१०.	करने के लिए	अति	१४.	अत्यन्त
निज	१.	अपने	अद्भुत	१५.	अद्भुत
भृत्य	२.	सेवक के	रूपम्	१६.	रूप
भाषितम्	३.	वचन को	उद्वहन्	१७.	धारण किये (भगवान्)
व्याप्तिम्	८.	व्यापकता को	स्तम्भे	१९.	खम्भे में
च	४.	और	सभायाम्	१८.	सभा के भीतर
भूतेषु	६.	प्राणियों में	न	११.	नहीं
अखिलेषु	५.	समस्त	मृगम्	१२.	पशु का
च आत्मनः ।	७.	और अपनी	न मानुषम् ॥	१३.	न मनुष्य का

श्लोकार्थ—अपने सेवक के वचन को और समस्त प्राणियों में अपनी व्यापकता को सत्य करने के लिए, नहीं पशु का और नहीं मनुष्य का अत्यन्त अद्भुत रूप धारण करके भगवान् सभा के भीतर खम्भे में दिखाई पड़े ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स सत्त्वमेनं परितोऽपि पश्यन् स्तम्भस्य मध्यादनु निर्जिहानम् ।
नायं मृगो नापि नरो विचित्रमहो किमेतन्नृमृगेन्द्ररूपम् ॥१९॥

पदच्छेद— सः सत्त्वम् एनम् परितः अपि पश्यन् स्तम्भस्य मध्यात् अनु निर्जिहानम् ।
न अयम् मृगः न अपि नरः विचित्रम् अहो किम् एतत् नृमृगेन्द्ररूपम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उस हिरण्यकशिपु ने	न अयम्	१०.	नहीं यह
सत्त्वम्	५.	जीव को	मृगः	११.	पशु है और
एनम्	४.	इस	न अपि	१२.	नहीं
परितः अपि	२.	चारों तरफ भो	नरः	१३.	मनुष्य है
पश्यन्	३.	देखते हुए	विचित्रम्	१४.	अलौकिक
स्तम्भस्य	६.	खम्भे के	अहो किम्	१५.	आश्चर्य है क्या
मध्यात्	७.	भीतर से	एतत्	१६.	यह
अनु	८.	बाहर	नृ मृगेन्द्र	१७.	नरसिंह
निर्जिहानम् ।	९.	निकलते हुए (देखा)	रूपम् ॥	१८.	रूपधारी है

श्लोकार्थ — उस हिरण्यकशिपु ने भी चारों तरफ देखते हुए इस जीव को खम्भे के भीतर से बाहर निकलते हुए देखा। नहीं यह पशु है और नहीं मनुष्य है, अलौकिक आश्चर्य है। क्या यह नरसिंह रूपधारी है ॥

विंशः श्लोकः

मीमांसमानस्य समुत्थितोऽग्रतो नृसिंहरूपस्तदलं भयानकम् ।
प्रतप्तचामीकरचण्डलोचनं स्फुरत्सटाकेसरजृम्भिताननम् ॥२०॥

पदच्छेद— मीमांससमानस्य समुत्थितः अग्रतः नृसिंह रूपः तद् अलम् भयानकम् ।
प्रतप्त चामीकर चण्डलोचनम् स्फुरत सटा केसर जृम्भित आननम् ॥

शब्दार्थ—

मीमांस	१.	(उस दैत्य को) सोचते	प्रतप्त	१०.	तपे हुए
मानस्य	२.	विचारते हुए	चामीकरम्	११.	सोने के समान
समुत्थितः	६.	खड़े हो गये	चण्ड	१२.	प्रचण्ड
अग्रतः	३.	सामने	लोचनम्	१३.	आँखें थीं
नृसिंह	४.	नृसिंह	स्फुरत्	१५.	चमक रहे थे (और)
रूपः	५.	रूपधारी भगवान्	सटाकेसर	१४.	गर्दन के बाल
तद्	७.	उनका रूप	जृम्भित	१७.	जम्भाई ले रहे थे
अलम्	८.	अत्यन्त	आननम् ॥	१६.	मुख से
भयानकम् ।	९.	भयानक			

श्लोकार्थ—उस दैत्य के सोचते विचारते हुए नृसिंह रूपधारी भगवान् सामने खड़े हो गये। उनका रूप अत्यन्त भयानक था। तपे हुए सोने के समान प्रचण्ड आँखें थीं। गर्दन के बाल चमक रहे थे। मुख से जम्भाई ले रहे थे ॥

एकविंशः श्लोकः

करालदंष्ट्रं करवालचञ्चलक्षुरान्तजिह्वं भ्रुकुटीमुखोल्बणम् ।
स्तब्धोर्ध्वकर्णं गिरिकन्दराद्भुतव्यात्तास्यनासं हनुभेदभीषणम् ॥२१॥

पदच्छेद — कराल दंष्ट्रम् करवाल चञ्चल क्षुर अन्त जिह्वम् भ्रुकुटी मुख उल्बणम् ।
स्तब्ध उर्ध्व कर्णम् गिरि कन्दर अद्भुत व्यात्त आस्य नासम् हनुभेदभीषणम् ॥

शब्दार्थ—

कराल	१.	विकराल	स्तब्ध	११.	निश्चल
दंष्ट्रम्	२.	दाढ़ें थी	ऊर्ध्व	१०.	उपर को उठे हुए
करवाल	३.	तलवार के समान	कर्णम्	१२.	कान थे
चञ्चल	४.	लपलपाती हुई (और)	गिरिकन्दर	१३.	पहाड़ की गुफा के समान
क्षुर अन्त	५.	छुरे की धार के समान	अद्भुत	१४.	अद्भुत
जिह्वम्	६.	जिह्वा थी	व्यात्त	१५.	फैले हुए
भ्रुकुटी	७.	(टेढ़ी) भौंहों के कारण	आस्य नासम्	१६.	मुख और नासिका थी
मुख	८.	मुख	हनुभेद	१७.	जबड़े के कारण
उल्बणम् ।	९.	भयानक था	भीषणम् ॥	१८.	भयंकर लग रहे थे

श्लोकार्थ—विकराल दाढ़ें थीं, तलवार के समान लपलपाती हुई और छुरे की धार के समान जिह्वा थी। टेढ़ी भौंहों के कारण मुख भयानक था। ऊपर को उठे हुए निश्चल कान थे, पहाड़ की गुफा के समान फैले हुए, अद्भुत मुख और नासिका थी, फटे हुए जबड़े के कारण भयंकर लग रहे थे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

दिविस्पृशत्कायमदीर्घपीवरग्रीवोरुवक्षःस्थलमल्पमध्यमम् ।
चन्द्रांशुगौरैश्छुरितं तनूरुहैर्विष्वग्भुजानीकशतं नखायुधम् ॥२२॥

पदच्छेद— दिवि स्पृशत् कायम् अदीर्घपीवर ग्रीवा उरु वक्षः स्थलम् अल्प मध्यमम् ।
चन्द्रांशुगौरैःछुरितम् तनू रुहैः विष्वक् भुज अनीकशतम् नख आयुधम् ॥

शब्दार्थ—

दिवि	२.	स्वर्ग को	चन्द्रांशु	११.	चन्द्रमा की किरणों के समान
स्पृशत्	३.	छू रहा था	गौरैः	१२.	गौर वर्ण के
कायम्	१.	उनका शरीर	चछुरितम्	१५.	चमक रहे थे
अदीर्घ	५.	नाटी (और)	तनू	१४.	शरीर पर
पीवर	६.	मोटी (थी)	रुहैः	१३.	रोयें
ग्रीवा	४.	गर्दन	विष्वक्	१६.	चारों ओर
उरु	७.	विशाल	भुज	१८.	भुजायें
वक्षः स्थलम्	८.	छाती और	अनीक	१९.	सेना के समान फैली थीं
अल्प	१०.	पतली थी	शतम्	१७.	सैकड़ों
मध्यमम् ।	९.	कमर	नख आयुधम् ॥	२०.	नाखून अस्त्र शस्त्र के समान थे

श्लोकार्थ—उनका शरीर स्वर्ग को छू रहा था, गर्दन नाटी और मोटी थी, विशाल छाती और कमर पतली थी। चन्द्रमा की किरणों के समान गौर वर्ण के रोयें शरीर पर चमक रहे थे। चारों ओर सैकड़ों भुजायें सेना के समान फैली थीं। नाखून अत्र-शस्त्र के समान थे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

दुरासदं सर्वनिजेतरायुधप्रवेकविद्रावितदैत्यदानवम् ।
प्रायेण मेऽयं हरिणोरुमायिना वधः स्मृतोऽनेन समुद्यतेन किम् ॥२३॥

पदच्छेद— दुरासदम् सर्व निज इतर. आयुध प्रवेक विद्रावित दैत्य दानवम् ।
प्रायेण मे अयम् हरिणा उरुमायिना वधः स्मृतः अनेन समुद्यतेन किम् ॥

शब्दार्थ—दुरासदम्	१.	कठिनाई से पास पहुँचने योग्य	मे	१३.	मेरा
सर्व	२.	सभी	अयम्	१२.	यह
निज इतर	३.	अपने और दूसरे के	हरिणा	१०.	विष्णु के द्वारा
आयुध	४.	अस्त्रों-शस्त्रों के	उरुमायिना	९.	महामायावी
प्रवेक	५.	प्रहार से	वधः	१४.	वध
विद्रावित	८.	भगा देने वाले	स्मृतः	१५.	कहा गया है किन्तु
दैत्य	६.	दैत्य और	अनेन	१६.	इसके
दानवम् ।	७.	दानवों को	समुद्यतेन	१७.	उद्यत होने से मेरा
प्रायेण	११.	प्रायः	किम् ॥	१८.	क्या बिगड़ेगा

श्लोकार्थ—कठिनाई से पास पहुँचने योग्य सभी अपने और दूसरे के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से दैत्य और दानवों को भगा देने वाले महामायावी विष्णु के द्वारा प्रायः यह मेरा वध काहा गया है। किन्तु इसके उद्यत होने से मेरा क्या बिगड़ेगा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं ब्रुवंस्त्वभ्यपतद् गदायुधो नदन् नृसिंहं प्रति दैत्यकुञ्जरः ।
अलक्षितोऽग्नौ पतितः पतङ्गमो यथा नृसिंहौजसि सोऽसुरस्तदा ॥२४॥

पदच्छेद— एवम् ब्रुवन् तु अभ्यपतत् गदा आयुधः नदन् नृसिंहम् प्रति दैत्य कुञ्जरः ।
अलक्षितः अग्नौ पतितः पतङ्गमः यथा नृसिंह ओजसि सः असुरः तदा ॥

शब्दार्थ—एवम्	१.	इस प्रकार	अलक्षितः	१८.	अदृश्य हो गया
ब्रुवन्	२.	कहता (और)	अग्नौ पतितः	१३.	अग्नि में गिरे हुए
अभ्यपतत्	९.	टूट पड़ा (किन्तु)	पतङ्गमः	१४.	पतिङ्गे के
गदा	५.	गदा	यथा	१५.	समान
आयुधः	६.	अस्त्र लेकर	नृसिंहः	१६.	नृसिंह भगवान् के
नदन्	३.	गरजता हुआ	ओजसि	१७.	तेज में
नृसिंहम्	७.	नृसिंह भगवान् के	सः	११.	वह
प्रति	८.	ऊपर	असुरः	१२.	असुर
दैत्यकुञ्जरः ।	४.	दैत्यराज	तदा ॥	१०.	उस समय

श्लोकार्थ—इस प्रकार कहता और गरजता हुआ दैत्यराज हिरण्यकशिपु गदा अस्त्र लेकर नृसिंह भगवान् के ऊपर टूट पड़ा। किन्तु उस समय वह असुर अग्नि में गिरे पतिङ्गे के समान नृसिंह भगवान् के तेज से अदृश्य हो गया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

न तद् विचित्रं खलु सत्त्वधामनि स्वतेजसा यो नु पुरापिबत् तमः।
ततोऽभिपद्याभ्यहनन्महासुरो रुषा नृसिंहं गदयोरुवेगया ॥२५॥

पदच्छेद— न तत्र विचित्रम् खलु सत्त्व धामनि स्व तेजसा यः नु पुरा अपिबत् तमः।
ततः अभिपद्य अभ्यहनत् महासुरः रुषा नृसिंहम् गदया उरु वेगया ॥

शब्दार्थ- न	४.	नहीं है	ततः	१०.	तदनन्तर
तद् विचित्रम्	२.	वह आश्चर्यजनक (घटना)	अभिपद्य	१२.	लपक कर
खलु	३.	निश्चित रूप से	अभ्यहनत्	१८.	प्रहार किया
सत्त्वधामनि	१.	पराक्रम के आश्रयभूत भगवान् के प्रति	महासुरः	११.	महादैत्य ने
स्वतेजसा	६.	अपने तेज से	रुषा	१३.	क्रोध से
यः तु	५.	जिन्होंने	नृसिंहम्	१७.	नृसिंह भगवान् के ऊपर
पुरा	७.	पूर्वकाल में	गदया	१६.	गदा से
अपिबत्	९.	पी लिया था	उरु	१४.	तीव्र
तमः।	८.	अन्धकार को	वेगया ॥	१५.	वेगशाली

श्लोकार्थ—पराक्रम के आश्रयभूत भगवान् के प्रति वह आश्चर्यजनक घटना निश्चित रूप से नहीं है, जिन्होंने अपने तेज से पूर्वकाल में अन्धकार को पी लिया था। तदनन्तर महादैत्य ने लपककर क्रोध से तीव्र वेगशाली गदा से नृसिंह भगवान् के ऊपर प्रहार किया ॥

षड्विंशः श्लोकः

तं विक्रमन्तं सगदं गदाधरो महोरगं तार्क्ष्यसुतो यथाग्रहीत्।
स तस्य हस्तोत्कलितस्तदासुरो विक्रीडतो यद्वदहिर्गरुत्मतः ॥२६॥

पदच्छेद—तम् विक्रम अन्तम् सगदम् गदाधरः महोरगम् तार्क्ष्यसुतः यथा अग्रहीत।
सः तस्य हस्त उत्कलितः तदा असुरः विक्रीडतः यत् वत् अहि गरुत्मतः ॥

शब्दार्थ—तम्	३.	उस दैत्य को	सः	१०.	वह
विक्रमन्तम्	१.	पराक्रम करते हुए	तस्य	११.	उन भगवान् के
सगदम्	२.	गदा सहित	हस्त	१२.	हाथ से (वैसे ही)
गदाधरः	४.	गदाधर भगवान् ने	उत्कलितः	१३.	निकल गया
महोरगम्	५.	महासर्प को	तदा असुरः	९.	उस समय दैत्य
तार्क्ष्यसुतः	६.	गरुड़ के	विक्रीडतः	१५.	क्रीडा करते हुए
यथा	७.	समान	यत्वत्	१४.	जैसे
अग्रहीत्।	८.	पकड़ लिया	अहिः	१७.	सर्प निकल जाता है
			गरुत्मतः ॥	१६.	गरुड़ के चङ्गुल से

श्लोकार्थ—पराक्रम करते हुए गदा सहित उस दैत्य को गदाधर भगवान् ने महासर्प को गरुड़ के समान पकड़ लिया। उस समय वह दैत्य उन भगवान् के हाथ से वैसे ही निकल गया जैसे गरुड़ के चङ्गुल से सर्प निकल जाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

असाध्वमन्यन्त हृतौकसोऽमरा घनच्छदा भारत सर्वधिष्ण्यपाः ।
तं मन्यमानो निजवीर्यशङ्कितं यद्धस्तमुक्तो नृहरिं महासुरः ।
पुनस्तमासज्जत खड्गचर्मणी प्रगृह्य वेगेन जितश्रमो मृधे ॥२७॥

पदच्छेद— असाधु अमन्यन्त हृत ओकसः अमराः घनच्छदाः भारत सर्व धिष्ण्यपाः ।
तम् मन्यमानः निजवीर्य शङ्कितम् यत् हस्तमुक्तः नृहरिम् महासुरः ।
पुनः तम् आसज्जत खड्ग चर्मणी प्रगृह्य वेगेन जितश्रमः मृधे ॥

शब्दार्थ—

असाधु	६. इसको अशुभ	**हस्तमुक्तः**	९. हाथ से छूटा हुआ
अमन्यन्त	७. समझने लगे (कि)	**नृहरिम्**	११. नृसिंह भगवान् को
हृत ओकसः	२. अपहृत स्थान वाले	**महासुरः**	१०. महादैत्य
अमराः	३. देवता लोग (और)	**पुनः**	१५. फिर
घनच्छदाः	४. बादलों में छिपे हुए	**तम्**	२१. उन पर
भारत	१. हे युधिष्ठिर !	**असज्जत**	२३. टूट पड़ा है
सर्वधिष्ण्यपाः	५. सभी लोकपाल	**खड्ग**	१९. तलवार
तम्	८. उन भगवान् के	**चर्मणी**	१८. ढाल और
मन्यमानः	१४. मानकर	**प्रगृह्य**	२०. लेकर
निजवीर्य	१२. अपने पराक्रम से	**वेगेन**	२२. वेग से
शङ्कितम् यत् ।	१३. डरा हुआ जो	**जितश्रमः**	१७. श्रम रहित होकर
		मृधे ॥	१६. युद्ध में

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! अपहृत स्थान वाले देवता लोग और बादलों में छिपे हुए सभी लोकपाल इसको अशुभ समझने लगे कि उन भगवान् के हाथ से छूटा हुआ महादैत्य नृसिंह भगवान् को अपने पराक्रम से डरा हुआ मानकर फिर युद्ध में श्रमरहित होकर ढाल और तलवार लेकर उन पर वेग से टूट पड़ा है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तं श्येनवेगं शतचन्द्रवर्त्मभिश्चरन्तमच्छिद्रमुपर्यधो हरिः ।
कृत्वाट्टहासं खरमुत्स्वनोल्बणं निमीलिताक्षं जगृहे महाजवः ॥२८॥

पदच्छेद— तम् श्येन वेगम् शतचन्द्र वर्त्मभिः चरन्तरम् अच्छिद्रम् उपरि अधःहरिः ।
कृत्वा अट्टहासम् खरम् उत्स्वन उल्बणम् निमीलित अक्षम् जगृहे महाजवः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१०.	उस दैत्य को	**कृत्वा**	१७.	करके
श्येन	१.	बाज पक्षी के समान	**अट्टहासम्**	१६.	अट्टहास
वेगम्	२.	वेग से	**खरम्**	१४.	प्रचण्ड और
शतचन्द्र	५.	ढाल तलवार से	**उत्स्वनः**	१३.	बड़े जोर से
वर्त्मभिः	६.	पैंतरे बदलते हुए	**उल्बणम्**	१५.	भयंकर
चरन्तम्	४.	घूमते हुए	**निमीलित**	९.	बन्द किये हुए
अच्छिद्रम्	७.	आक्रमण का अवसर न देते हुए	**अक्षम्**	८.	आँखें
उपरि अधः	३.	ऊपर नीचे	**जगृहे**	१८.	पकड़ लिया
हरिः ।	१२.	भगवान् ने	**महाजवः ॥**	११.	महावेग शाली

श्लोकार्थ—बाज पक्षी के समान वेग से ऊपर-नीचे घूमते हुए ढाल तलवार से पैंतरे बदलते हुए आक्रमण का अवसर न देते हुए आँखें बन्द किये हुए उस दैत्य को महावेगशाली नृसिंह भगवान् ने बड़े जोर से प्रचण्ड और भयंकर अट्टहास करके पकड़ लिया ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विष्वक् स्फुरन्तं ग्रहणातुरं हरिर्व्यालो यथाऽऽखुं कुलिशाक्षतत्वचम् ।
द्वार्यूर आपात्य ददार लीलया नखैर्यथाहिं गरुडो महाविषम् ॥२९॥

पदच्छेद— विष्वक् स्फुरन्तम् ग्रहण आतुरम् हरिःव्यालः यथा आखुम् कुलिश अक्षत त्वचम् ।
द्वारि ऊरे आपात्य ददार लीलया नखैः यथा अहिम् गरुडः महाविषम् ॥

शब्दार्थ—

विष्वक्	२.	चारों ओर	**द्वारि ऊरे**	९.	सभा के दरवाजे पर, जांघ पर
स्फुरन्तम्	३.	छटपटाते हुए	**आपात्य**	१०.	गिराकर
ग्रहण आतुरम्	१.	पकड़े जाने से व्याकुल (और)	**ददार**	१३.	फाड़ डाला
हरिः	६.	भगवान् ने (उसे पकड़ लिया	**लीलया**	११.	लीला पूर्वक
व्यालः	८.	साँप (पकड़ लेता है फिर)	**नखैः**	१२.	नखों से
यथा आखुम्	७.	जैसे चूहे को	**यथा**	१४.	जिस प्रकार
कुलिश अक्षत	४.	वज्र से न काटने योग्य	**अहिम्**	१६.	साँप को
त्वचम् ।	५.	त्वचा वाले (उस दैत्य को)	**गरुडः**	१७.	गरुड़ (फाड़ डालते हैं)
			महाविषम् ॥	१५.	महाविषधर

श्लोकार्थ—पकड़े जाने से व्याकुल और छटपटाते हुए, वज्र से न कटने योग्य त्वचा वाले उस दैत्य को भगवान् ने उसी प्रकार पकड़ लिया, जैसे चूहे को साँप पकड़ लेता है। फिर सभा के दरवाजे पर जाँघ पर गिरा कर लीलापूर्वक नखों से फाड़ डाला जिस प्रकार महाविषधर सांप को गरुड़ फाड़ डालते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

संरम्भदुष्प्रेक्ष्यकरालल्लोचनो व्यात्ताननान्तं विलिहन्स्वजिह्वया ।
असृग्लवाक्तारुणकेसराननो यथान्त्रमाली द्विपहत्यया हरिः ॥३०॥

पदच्छेद— संरम्भ दुष्प्रेक्ष्य कराल लोचनः व्यात्त आनन अन्तम् विलिहन् स्वजिह्वया ।
असृक् लव आक्त अरुण केसर आननः यथा अन्त्र माली द्विप हत्यया हरिः ॥

शब्दार्थ—

संरम्भ	१.	अत्यन्त क्रोध के कारण	असृक्लव	१०.	रक्त के छीटों से
दुष्प्रेक्ष्य	२.	न देखने योग्य	आक्त अरुण	११.	रंगे हुए लाल
कराल	३.	भयंकर	केसर	१२.	गरदन के बाल (और)
लोचनः	४.	नेत्र वाले	आननः	१३.	मुख वाले (भगवान्)
व्यात्त	५.	फैले हुए	यथा	१८.	समान
आनन	६.	मुख के	अन्त्रमाली	१६.	आंत की माला पहने हुए
अन्तम्	७.	कोनों को	द्विप	१४.	हाथी को
विलिहन्	६.	चाटते हुए (और)	हत्याया	१५.	मारकर
स्वजिह्वया ।	८.	अपनी जीभ से	हरिः ॥	१७.	सिंह के शोभित हुए ।

श्लोकार्थ—अत्यन्त क्रोध के कारण न देखने योग्य, भयंकर नेत्र वाले, फैले हुए मुख के कोनों को अपनी जीभ से चाटते हुए और रक्त की छीटों से रंगे हुए लाल गर्दन, बाल और मुख वाले वे भगवान् हाथी को मारकर आंत की माला पहने हुए सिंह के समान शोभित हुए ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

नखाङ्कुरोत्पाटितहृत्सरोरुहं विसृज्य तस्यानुचरानुदायुधान् ।
अहन् समन्तान्नखशस्त्रपार्ष्णिभिर्दोर्दण्डयूथोऽनुपथान् सहस्रशः ॥३१॥

पदच्छेद— नख अङ्कुर उत्पाटित हृत् सरोरुहम् विसृज्य तस्य अनुचरान् उदायुधान् ।
अहन् समन्तात् नख शस्त्र पार्ष्णिभिः दोः दण्ड यूथः अनुपथान् सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

नख अङ्कुर	१.	नख के अग्रभाग से	समन्तात्	१५.	चारों ओर
उत्पाटित	३.	फाड़कर	नख	१२.	नख रूपी
हृत्	२.	हृदय	शस्त्र	१३.	शस्त्रों से और
सरोरुहम्	६.	कमल (कलेजे को)	पार्ष्णिभिः	१४.	पैरों से
विसृज्य	५.	पटक दिया (उसके)	दोः	१६.	भुज
तस्य	४.	उस दैत्य को (पृथ्वी पर)	दण्ड	१०.	दण्ड रूपी
अनुचरान्	८.	सेवकों को	यूथः	११.	सेना वाले भगवान् ने
उदायुधान्	७.	हथियार उठाये हुए	अनुपथान्	१६.	खदेड़ कर
अहन् ।	१७.	मार डाला	सहस्रशः ॥	६.	हजारों

श्लोकार्थ—नख के अग्रभाग से हृदय-कमल (कलेजे) को फाड़कर उस दैत्य को पृथ्वी पर पटक दिया । उसके हजारों हथियार उठाये हुए सेवकों को भुज दण्ड रूपी सेना वाले भगवान् ने नख रूपी शस्त्रों से और पैरों से चारों ओर खदेड़ कर मार डाला ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

सटावधूता जलदाः परापतन् ग्रहाश्च तद्दृष्टिविमुष्टरोचिषः ।
अम्भोधयः श्वासहता विचुक्षुभुर्निर्ह्लादभीता दिगिभा विचुक्रुशुः ॥३२॥

पदच्छेद— सटा अवधूताः जलदाः परापतन् ग्रहाः च तद् दृष्टि विमुष्ट रोचिषः ।
अम्भोधयः श्वास हताः विचुक्षुभुः निर्ह्लादभीताः दिगिभाः विचुक्रुशुः ॥

शब्दार्थ—

सटा	१.	उनके गर्दन के बालों के	रोचिषः	९.	कान्ति
अवधूताः	२.	फटकारने से	अम्भोधयः	११.	समुद्र
जलदाः	३.	बादल	श्वास	१२.	श्वास के
परापतन्	४.	तितर बितर होने लगे	हता	१३.	धक्के से
ग्रहाः	८.	ग्रह	विचुक्षुभुः	१४.	क्षुब्ध हो गये (और)
च	५.	और	निर्ह्लाद	१५.	सिंहनाद से
तद्	६.	उनकी	भीताः	१६.	भयभीत होकर
दृष्टि	७.	दृष्टि से	दिगिभाः	१७.	दिग्गज
विमुष्ट ।	१०.	हीन हो गये (उनके)	विचुक्रुशुः ॥	१८.	चिंघाड़ने लगे

श्लोकार्थ—उनके गर्दन के बालों के फटकारने से बादल तितर-बितर होने लगे । और उनकी दृष्टि से ग्रह कान्तिहीन हो गये । श्वास के धक्के से समुद्र क्षुब्ध हो गये और सिंहनाद से भयभीत होकर दिग्गज चिंघाड़ने लगे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

द्यौस्तत्सटोत्क्षिप्तविमानसङ्कुला प्रोत्सर्पत क्ष्मा च पदातिपीडिता ।
शैलाः समुत्पेतुरमुष्य रंहसा तत्तेजसा खं ककुभो न रेजिरे ॥३३॥

पदच्छेद— द्यौः तत् सटा उत्क्षिप्त विमान सङ्कुला प्रोत् सर्पत क्ष्मा च पदा अति पीडिता ।
शैलाः समुत्पेतुः अमुष्य रंहसा तत् तेजसा खम् ककुभः न रेजिरे ॥

शब्दार्थ—

द्यौः	५.	आकाश में	शैलाः	१२.	पर्वत
तत्	१.	उन	समुत्पेतुः	१४.	उड़ने लगे (और)
सटा	३.	गर्दन के बालों से	अमुष्य	२.	भगवान् के
उत्क्षिप्त	४.	टकराकर	रंहसा	१३.	वेग से
विमान	६.	(देवताओं के) विमान	तत्	१५.	उनके
सङ्कुला	७.	अस्त-व्यस्त हो गये	तेजसा	१६.	तेज से
प्रोत्सर्पत	११.	हिलने लगी	खम्	१७.	आकाश (और)
क्ष्मा	१०.	पृथ्वी	ककुभः	१८.	दिशायें
च पदाति	८.	पैरों की धमक से	न	१९.	नहीं
अतिपीडिता ।	९.	दबकर	रेजिरे ॥	२०.	दिखाई देती थीं

श्लोकार्थ—उन भगवान् के गर्दन के बालों से टकराकर आकाश में देवताओं के विमान अस्त-व्यस्त हो गये । पैरों की धमक से दबकर पृथ्वी हिलने लगी । पर्वत वेग से उड़ने लगे । और उनके तेज से आकाश और दिशायें दिखाई नहीं देती थीं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ततः सभायामुपविष्टमुत्तमे नृपासने संभृततेजसं विभुम् ।
अलक्षितद्वैरथमत्यमर्षणं प्रचण्डवक्त्रं न बभाज कश्चन ॥३४॥

पदच्छेद— ततः सभायाम् उपविष्टम् उत्तमे नृप आसने संभृत तेजसम् विभुम् ।
अलक्षित द्वैरथम् अति अमर्षणम् प्रचण्ड वक्त्रम् न बभाज कश्चन ॥

शब्दार्थ—ततः	१.	तदनन्तर	अलक्षित	१०.	विहीन
सभायाम्	२.	सभा में	द्वैरथम्	९.	शत्रु से
उपविष्टम्	६.	बैठे हुए	अति	११.	अत्यन्त
उत्तमे	३.	उत्तम	अमर्षणम्	१२.	क्रोध से भरे
नृप	४.	राज	प्रचण्ड	१३.	भयानक
आसने	५.	सिंहासन पर	वक्त्रम्	१४.	मुख वाले
संभृत	८.	धारण किये हुए	न बभाज	१७.	नहीं सेवा कर सका
तेजसम्	७.	तेज को	कश्चन ॥	१६.	कोई भी
विभुम् ।	१५.	भगवान् की			

श्लोकार्थ—तदनन्तर सभा में उत्तम राजसिंहासन पर बैठे हुए, तेज को धारण किये हुए, शत्रु से विहीन और अत्यन्त क्रोध भरे भयानक मुख वाले भगवान् की कोई भी सेवा नहीं कर सका ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

निशम्य लोकत्रयमस्तकज्वरं तमादिदैत्यं हरिणा हतं मृधे ।
प्रहर्षवेगोत्कलिताननना मुहुः प्रसूनवर्षैर्ववृषुः सुरस्त्रियः ॥३५॥

पदच्छेद— निशम्य लोक त्रय मस्तक ज्वरम् तम् आदि दैत्यं हरिणा हतम् मृधे ।
प्रहर्ष वेग उत्कलित आननाः मुहुः प्रसून वर्षैः ववृषुः सुर स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—निशम्य	१०.	सुनकर	प्रहर्ष	११.	अत्यन्त आनन्द के
लोक	२.	लोकों के	वेग	१२.	उल्लास से
त्रय	१.	तीनों	उत्कलित	१३.	खिले हुए
मस्तक	३.	शिर की	आननाः	१४.	मुख वाली
ज्वरम्	४.	पीड़ा स्वरूप	मुहुः	१७.	बार-बार
तम्	५.	उस	प्रसून	१८.	फूलों की
आदि दैत्यं	६.	आदि दैत्य (हिरण्यकशिपु के)	वर्षैः	१९.	वर्षा
हरिणा	८.	भगवान् के द्वारा	ववृषुः	२०.	करने वाली
हतम्	९.	मारा गया	सुर	१५.	देवताओं की
मृधे ।	७.	युद्ध में	स्त्रियः ॥	१६.	स्त्रियाँ

श्लोकार्थ—तीनों लोकों के सिर की पीड़ा स्वरूप उस आदि दैत्य हिरण्यकशिपु को युद्ध में भगवान् के द्वारा मारा गया सुनकर अत्यन्त आनन्द के उल्लास से खिले हुए मुख वाली देवताओं की स्त्रियाँ बार-बार फूलों की वर्षा करने लगी ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

तदा विमानावलिभिर्नभस्तलं दिदृक्षतां सङ्कुलमास नाकिनाम् ।
सुरानका दुन्दुभयोऽथ जघ्निरे गन्धर्वमुख्या ननृतुर्जगुः स्त्रियः ॥३६॥

पदच्छेद—तदा विमान आवलिभिः नभः तलम् दिदृक्षताम् सङ्कुलम् आस नाकिनाम् ।
सुर आनकाः दुन्दुभयः अथ जघ्निरे गन्धर्व मुख्याः ननृतुः जगुः स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	उस समय	**सुर**	१०.	देवताओं के
विमान	४.	विमानों की	**आनकाः**	११.	ढोल
आवलिभिः	५.	पंक्तियों से	**दुन्दुभयः**	१६.	नगाड़े
नभः	६.	आकाश	**अथ**	१२.	और
तलम्	७.	तल	**जघ्निरे**	१४.	वजने लगे
दिदृक्षताम्	२.	देखने के इच्छुक	**गन्धर्व**	१६.	गन्धर्व
सङ्कुलम्	८.	व्याप्त	**मुख्याः**	१५.	प्रधान
आस	९.	हो गया	**ननृतुः**	१९.	नाचने लगीं
नाकिनाम् ।	३.	देवताओं के	**जगुः**	१७.	गाने लगे और
			स्त्रियः ॥	१८.	अप्सरायें

श्लोकार्थ—उस समय देखने के इच्छुक देवताओं के विमानों की पंक्तियों से आकाश तल व्याप्त हो गया । देवताओं के ढोल और नगाड़े बजने लगे । प्रधान गन्धर्व गाने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तत्रोपव्रज्य विबुधा ब्रह्मेन्द्रगिरिशादयः ।
ऋषयः पितरः सिद्धा विद्याधरमहोरगाः ॥३७॥

पदच्छेद— तत्र उपव्रज्य विबुधाः ब्रह्मेन्द्र गिरिश आदयः ।
ऋषयः पितरः सिद्धाः विद्याधर महोरगाः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ पर	**ऋषयः**	७.	ऋषि
उपव्रज्य	२.	समीप जाकर	**पितरः**	८.	पितर
विबुधाः	६.	देवता	**सिद्धाः**	९.	सिद्धगण
ब्रह्मेन्द्र	३.	ब्रह्मा, इन्द्र	**विद्याधर**	१०.	विद्याधर और
गिरिश	४.	शंकर	**महोरगाः ॥**	११.	महानाग (उसकी स्तुति करने लगे)
आदयः ।	५.	आदि			

श्लोकार्थ—वहाँ पर समीप जाकर ब्रह्मा, इन्द्र, शंकर आदि देवता ऋषि, पितर, सिद्धगण, विद्याधर और महानाग उनकी स्तुति करने लगे ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

मनवः प्रजानां पतयो गन्धर्वाप्सरचारणाः ।
यक्षाः किम्पुरुषास्तात वेताला सिद्धकिन्नराः ॥३८॥

पदच्छेद — मनवः प्रजानाम् पतयः गन्धर्व अप्सर चारणाः ।
यक्षाः किम्पुरुषाः तात वेतालाः सिद्ध किन्नराः ॥

शब्दार्थ—

मनवः	२. मनु	यक्षाः	८. यक्ष
प्रजानाम्	३. प्रजा	किम्पुरुषाः	९. किम्पुरुष
पतयः	४. पति	तात	१. हे तात !
गन्धर्व	५. गन्धर्व	वेतालाः	१०. वेताल (और)
अप्सर	६. अप्सरायें	सिद्ध	११. सिद्ध
चारणाः ।	७. चारण	किन्नराः ॥	१२. किन्नर उनकी स्तुति करने लगे ।

श्लोकार्थ—हे तात ! मनु, प्रजापति, गन्धर्व, अप्सरायें, चारण, यक्ष, किम्पुरुष, वेताल, सिद्ध और किन्नर उनकी स्तुति करने लगे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ते विष्णुपार्षदाः सर्वे सुनन्दकुमुदादयः ।
मूर्ध्नि बद्धाञ्जलिपुटा आसीनं तीव्रतेजसम् ।
ईडिरे नरशार्दूलं नातिदूरचराः पृथक् ॥३९॥

पदच्छेद — ते विष्णु पार्षदाः सर्वे सुनन्द कुमुद आदयः ।
मूर्ध्नि बद्ध अञ्जलि पुटाः आसीनम् तीव्र तेजसम् ।
ईडिरे नर शार्दूलम् अति दूर चराः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

ते	१. वे	आसीनम् तीव्र	९. बैठे हुए अत्यन्त
विष्णु	४. विष्णु के	तेजसम् ।	१०. तेजस्वी
पार्षदः	५. पार्षद	ईडिरे	१६. स्तुति करने लगे
सर्वे सुनन्द	२. सभी सुनन्द	नर	११. नर
कुमुद आदयः ।	३. कुमुद आदि	शार्दूलम्	१२. सिंह भगवान् की
मूर्ध्नि	६. मस्तक पर	न अति	१३. बहुत
बद्ध	८. बांध कर	दूर	१४. दूर
अञ्जलिपुटाः	७. अञ्जली	चरः पृथक् ॥	१५. रहकर अलग-अलग

श्लोकार्थ—वे सभी सुनन्द, कुमुद आदि विष्णु के पार्षद मस्तक पर अञ्जली बाँध कर बैठे हुए अत्यन्त तेजस्वी नरसिंह भगवान् की बहुत दूर न रहकर अलग-अलग स्तुति करने लगे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच —नतोऽस्म्यनन्ताय दुरन्तशक्तये विचित्रवीर्याय पवित्रकर्मणे ।
विश्वस्य सर्गस्थितिसंयमान् गुणैः स्वलीलया संदधतेऽव्ययात्मने ॥४०॥

पदच्छेद— नतः अस्मि अनन्ताय दुरन्त शक्तये विचित्र वीर्याय पवित्र कर्मणे ।
विश्वस्य सर्ग स्थिति संयमान् गुणैः स्वलीलया संदधते अव्यय आत्मने ॥

शब्दार्थ—

नतः	१७.	नमस्कार	विश्वस्य	९.	संसार की
अस्मि	१८.	करता हूँ	सर्ग	१०.	सृष्टि
अनन्ताय	१६.	अनन्त भगवान् को	स्थिति	११.	पालन और
दुरन्त	१.	असीम	संयमान्	१२.	संहार
शक्तये	२.	शक्ति वाले	गुणैः	८.	गुणों के द्वारा
विचित्र	३.	अलौकिक	स्वलीलया	७.	अपनी लीला से
वीर्याय	४.	पराक्रम वाले	संदधते	१३.	करने वाले
पवित्र	५.	पवित्र	अव्यय	१४.	अविनाशी
कर्मणे ।	६.	कर्म करने वाले	आत्मने ॥	१५.	परमात्मा

श्लोकार्थ—असीम शक्ति वाले, अलौकिक पराक्रम वाले पवित्र कर्म करने वाले, अपनी लीला से गुणों के द्वारा संसार की सृष्टि, पालन और संहार करने वाले अविनाशी परमात्मा अनन्त भगवान् को नमस्कार करता हूँ ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीरुद्र उवाच— कोपकालो युगान्तस्ते हतोऽयमसुरोऽल्पकः ।
तत्सुतं पाह्युपसृतं भक्तं ते भक्तवत्सल ॥४१॥

पदच्छेद— कोप कालः युगान्तः ते हतः अयम् असुरः अल्पकः ।
तत् सुतम् पाहि उपसृतम् भक्तं ते भक्त वत्सलः ॥

शब्दार्थ—

कोप	२.	क्रोध करने का	तत्	१२.	उसके
काल	३.	समय	सुतम्	१४.	पुत्र की
युगान्तः	४.	कल्प के अन्त में होते हैं	पाहि	१५.	रक्षा कीजिये
ते	१.	आपके	उपसृतम्	११.	शरण में आये हुए
हतः	८.	मारा गया	भक्तम्	१३.	भक्त
अयम्	५.	यह	ते	१०.	आपके
असुरः	७.	दैत्य	भक्तवत्सलः ॥	९.	हे भक्तवत्सल
अल्पकः ।	६.	छोटा			

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपके क्रोध करने का समय कल्प के अन्त में होता है । यह तो छोटा दैत्य मारा गया है । भक्तवत्सल ! आपकी शरण में आये हुए उसके भक्त पुत्र की रक्षा कीजिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

प्रत्यानीताः परम भवता त्रायता नः स्वभागा
दैत्याक्रान्तं हृदयकमलं त्वद्गृहं प्रत्यबोधि ।
कालग्रस्तं कियदिदमहो नाथ शुश्रूषतां ते
मुक्तिस्तेषां न हि बहुमता नारसिंहापरैः किम् ॥४२॥

पदच्छेद— प्रति आनीताः परम भवता त्रायता नः स्वभागाः
दैत्य आक्रान्तम् हृदयकमलम् त्वद् गृहम् प्रतिअबोधि ।
काल ग्रस्तम् कियद् इदम् अहो नाथ शुश्रूषताम् ते
मुक्तिः तेषाम् हि बहुमता नारसिंह अपरैः किम् ॥

शब्दार्थं—

प्रतिआनीताः	६.	लौटा दिया है ।	**काल ग्रस्तम्**	११.	काल का ग्रास (बना हुआ स्वर्गादि का राज्य)
परम भवता	१.	हे परमेश्वर ! आपने	**कियद्**	१२.	कितना
त्रायता	३.	रक्षा करते हुए	**इदम्**	१०.	यह
नः	२.	हमारी	**अहो नाथ**	१३.	आश्चर्य है कि हे नाथ !
स्वभागाः	५.	हमारे भागों को	**शुश्रूषताम् ते**	१४.	आपकी सेवा करने वाले
दैत्यआक्रान्तम्	४.	दैत्य के द्वारा छीने गये	**मुक्तिः तेषाम्**	१५.	उन (भक्तों को) मोक्ष भी
हृदयकमलम्	८.	हमारे हृदय कमल को	**न हि बहुमता**	१६.	बहुत प्रिय नहीं है
त्वद् गृहम्	७.	आपके निवास स्थान भूत	**नारसिंह अपरैः**	१७.	हे नरसिंह दूसरी वस्तुओं की
प्रतिअबोधि ।	९.	प्रफुल्लित कर दिया है	**किम ॥**	१८.	क्या आवश्यकता है

श्लोकार्थ—हे परमेश्वर ! आपने हमारी रक्षा करते हुए, दैत्य के द्वारा छीने गये हमारे भागों को लौटा दिया है और आपके निवास स्थान भूत हमारे हृदय कमल को प्रफुल्लित कर दिया है । यह काल का ग्रास बना हुआ स्वर्गादि का राज्य कितना है । आश्चर्य है कि हे नाथ ! आपकी सेवा करने वाले उन भक्तों को मोक्ष भी बहुत प्रिय नहीं है । हे नरसिंह ! दूसरी वस्तुओं की उन्हें क्या आवश्यकता है ?

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

त्वं नस्तपः परममात्थ यदात्मतेजो
येनेदमादिपुरुषात्मगतं ससर्ज ।
तद् विप्रलुप्तममुनाद्य शरण्यपाल
रक्षागृहीतवपुषा पुनरन्वमंस्थाः ॥४३॥

पदच्छेद—

त्वम् नः तपः परमम् आत्थ यत् आत्म तेजः
येन इदम् आदि पुरुष आत्मगतम् ससर्ज ।
तद् विप्र लुप्तम् अमुनाद्य शरण्य पाल
रक्षा गृहीत वपुषा पुनः अन्व मंस्थाः ॥

शब्दार्थ—

त्वम् नः	२. आपने हम लोगों को	ससर्ज	११. सृष्टि की थी
तपः	५. तपस्या को	तद्	१२. उस तपस्या का
परमम्	६. उत्तम	विप्रलुप्तम्	१४. उच्छेद कर दिया था
आत्थ	७. बताया था (और)	अमुनाद्य	१३. इस दैत्य ने आज
यत् आत्म	३. जिस आत्म	शरण्यपाल	१५. हे शरणागत वत्सल !
तेजः	४. तेजः स्वरूप	रक्षा	१६. रक्षा के लिए
येन	८. जिन आपने	गृहीत	१८. धारण करने वाले आपने
इदम्	१०. इस संसार की	वपुषा	१७. शरीर को
आदि पुरुष	१. हे आदि पुरुष !	पुनः	१९. फिर से (तपस्या को)
आत्मगतम्	९. अपने में लीन	अन्वमंस्थाः ॥	२०. अनुमोदन कर दिया है

श्लोकार्थ—हे आदि पुरुष ! आपने हम लोगों को जिस आत्म तेजः स्वरूप तपस्या को उत्तम बताया था और जिन आपने अपने में लीन इस संसार की सृष्टि की थी । उस तपस्या का इस दैत्य ने उच्छेद कर दिया था । हे शरणागत वत्सल ! रक्षा के लिए शरीर को धारण करने वाले आपने फिर तपस्या का अनुमोदन कर दिया ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

श्राद्धानि नोऽधिबुभुजे प्रसभं तनूजैर्दत्तानि तीर्थसमयेऽप्यपिबत् तिलाम्बु।
तस्योदरान्नखविदीर्णवपाद् य आर्च्छत् तस्मै नमो नृहरयेऽखिलधर्मगोप्त्रे ॥४४॥

पदच्छेद— श्राद्धानि नः अधिबुभुजे प्रसभम् तनूजैः दत्तानि तीर्थ समये अपिबत् तिलाम्बु।
तस्य उदरात् नखविदीर्ण वपाद् यः आर्च्छत् तस्मै नमः नृहरये अखिल धर्म गोप्त्रे ॥

शब्दार्थ—श्राद्धानि	४.	पिण्डो को	तस्य	१०.	उस दैत्य के
नः	१.	हमारे	उदरात्	१३.	पेट से निकाल कर
अधिबुभुजे	६.	खा जाता था	नखविदीर्ण	११.	नख से फाड़े गये
प्रसभम्	५.	बलपूर्वक छीनकर	वपात्	१२.	मज्जा वाले
तनूजैः	२.	पुत्रों के द्वारा	यः आर्च्छत्	१४.	जो आपने उसे हमें दे दिया
दत्तानि	३.	दिये गये	तस्मै	१५.	उन
तीर्थ समये	७.	तीर्थ में (संक्रान्ति आदि के समय (तर्पण में दिये गये)	नमः नृहरये	१८.	नृसिंह रूप भगवान् को नमस्कार
अपिबत्	९.	पी लेता था	अखिलधर्म	१६.	समस्त धर्मों के
तिलाम्बु।	८.	तिल और जल को	गोप्त्रे ॥	१७.	रक्षक

श्लोकार्थ—हमारे पुत्रों के द्वारा दिये गये पिण्डों को बलपूर्वक छीनकर खा जाता था और तीर्थ में संक्रान्ति आदि के समय तर्पण में दिये गये तिल और जल को पी लेता था। उस दैत्य के नख से फाड़े गये मज्जा वाले पेट से निकाल कर जो आपने उसे हमें दे दिया उन समस्त धर्मों के रक्षक नृसिंहरूप भगवान् को नमस्कार है॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यो नो गतिं योगसिद्धामसाधुरहार्षीद् योगतपोबलेन।
नानादर्पं तं नखैर्निर्ददार तस्मै तुभ्यं प्रणताः स्मो नृसिंह ॥४५॥

पदच्छेद— यः नः गतिम् योगसिद्धाम् असाधुः अहार्षीत् योग तपः बलेन।
नाना दर्पम् तम् नखैः निर्ददार तस्मै तुभ्यम् प्रणताः स्मः नृसिंह ॥

शब्दार्थ—यः	१.	जिस	नाना	११.	अनेक प्रकार से
नः	६.	हमारी	दर्पम्	१२.	घमण्ड करने वाले
गतिम्	९.	गति को	तम्	१३.	उस दैत्य को (आपने)
योग	७.	योग	नखैः	१४.	नखों से
सिद्धाम्	८.	सिद्ध	निर्ददार	१५.	फाड़ डाला
असाधुः	२.	दुष्ट ने (अपने)	तस्मै	१७.	उस
अहार्षीत्	१०.	छीन लिया था	तुभ्यम्	१८.	आपको हम
योग	३.	योग (और)	प्रणताः	१९.	प्रणाम
तपः	४.	तपस्या के	स्म :	२०.	करते हैं
बलेन।	५.	बल से	नृसिंह ॥	१६.	हे नृसिंह भगवान्!

श्लोकार्थ—जिस दुष्ट ने अपने योग और तपस्या के बल से हमारी योग सिद्ध गति को छीन लिया था अनेक प्रकार से घमण्ड करने वाले उस दैत्य को अपने नखों से फाड़ डाला। हे नृसिंह भगवान्! उन आपको हम प्रणाम करते हैं॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

विद्यां पृथग्धारणयानुराद्धां न्यषेधदज्ञो बलवीर्यदृप्तः ।
स येन संख्ये पशुवद्धतस्तं मायानृसिंहं प्रणताः स्म नित्यम् ॥४६॥

पदच्छेद— विद्याम् पृथक् धारणया अनुराद्धाम् न्यषेधत् बलवीर्य दृप्तः ।
स: येन संख्ये पशुवत् हतः तम् मायानृसिंहम् प्रणताः स्म नित्यम् ॥

शब्दार्थ—

विद्याम्	७.	विद्या को	येन	१०.	जिसे आपने
पृथक्	४.	अनेक प्रकार की	संख्ये	११.	युद्ध में
धारणया	५.	धारणाओं से	पशुवत्	१२.	पशु के समान
अनुराद्धाम्	६.	प्राप्त की हुई (हमारी)	हतः	१३.	मार डाला
न्यषेधत्	८.	व्यर्थ कर दिया था	तम्	१५.	उस
बल	१.	बल	माया	१४.	माया से
वीर्य	२.	पराक्रम के घमंड में	नृसिंहम्	१६.	नृसिंह बने हुये आपको
दृप्तः	३.	चूर (इस मूर्ख ने)	प्रणताःस्म	१८.	प्रणाम करते है
सः ।	९.	उस दैत्य को	नित्यम् ॥	१७.	हम नित्य

श्लोकार्थ—बल और पराक्रम के घमंड में चूर इस मूर्ख ने अनेक प्रकार की धारणाओं से प्राप्त की हुई हमारी विद्या को व्यर्थ कर दिया । उस दैत्य को जिसे आपने युद्ध में पशु के समान मार डाला, उन माया से नृसिंह हुए आपको हम नित्य प्रणाम करते है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

येन पापेन रत्नानि स्त्रीरत्नानि हृतानि नः ।
तद्वक्षःपाटनेनासां दत्तानन्द नमोऽस्तु ते ॥४७॥

पदच्छेद— येन पापेन रत्नानि स्त्री रत्नानि हृतानि नः ।
तद्वक्षः पाटनेन आसाम् दत्त आनन्द नमः अस्तु ते ॥

शब्दार्थ—

येन	१.	जिस	तद्	८.	उसकी
पापेन	२.	पापी ने	वक्षः	९.	छाती को
रत्नानि	४.	रत्नों को (और)	पाटनेन	१०.	फाड़ कर
स्त्री	६.	स्त्रियों को	आसाम्	११.	हमारी पत्नियों को
रत्नानि	५.	श्रेष्ठ	दत्त	१३.	देने वाले (भगवान्)
हृतानि	७.	छीन लिया था	आनन्द	१२.	आनन्द
नः ।	३.	हमारी	नमः अस्तु	१५.	नमस्कार है
			ते ॥	१४.	आपको

श्लोकार्थ—जिस पापी ने हमारे रत्नों और श्रेष्ठ स्त्रियों को छीन लिया था उसकी छाती को फाड़ कर हमारी पत्नियों को आनन्द देने वाले भगवान् आपको नमस्कार है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मनवः ऊचुः—

मनवो वयं तव निदेशकारिणो दितिजेन देव परिभूतसेतवः।
भवता खलः स उपसंहृतः प्रभो करवाम ते किमनुशाधि किङ्करान् ॥४८॥

पदच्छेद— मनवः वयम् तव निदेश कारिणः दितिजेन देव परिभूत सेतवः।
भवता खलः सः उपसंहृतः प्रभो करवाम ते किम् अनुशाधि किङ्करान् ॥

शब्दार्थ—मनवः	२.	मनु	भवता	१०.	आपने
वयम्	१.	हम	खलः	१२.	दुष्ट का
तव	३.	आपके	सः	११.	उस
निदेश	४.	आज्ञाकारी हैं	उपसंहृतः	१३.	संहार कर दिया
कारिणः			प्रभो	९.	हे प्रभो
दितिजेन	६.	इस दैत्य ने	करवाम	१७.	करें
देव	५.	हे देव !	ते किम्	१६.	(हम) आपके लिये क्या
परिभूत	८.	भंग कर दिया था	अनुशाधि	१५.	आज्ञा दीजिये कि
सेतवः।	७.	धर्म मर्यादा को	किङ्करान् ॥	१४.	आप अपने हम सेवकों को

श्लोकार्थ—हम मनु आपके आज्ञाकारी हैं। हे देव ! इस दैत्य ने धर्म-मर्यादा को भंगकर दिया था। हे प्रभो ! आपने उस दुष्ट का संहार कर दिया। आपने हम सेवकों को आज्ञा दीजिये कि हम आपके लिए क्या करें ॥

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

प्रजपतय ऊचुः—

प्रजेशा वयं ते परेशाभिसृष्टा न येन प्रजा वै सृजामो निषिद्धाः।
स एष त्वया भिन्नवक्षा नु शेते जगन्मङ्गलं सत्त्वमूर्तेऽवतारः ॥४९॥

पदच्छेद— प्रजेशाः वयम् ते परेश अभिसृष्टाः न येन प्रजाः वै सृजामः निषिद्धाः।
सः एष त्वया भिन्नवक्षाःनु शेते जगत् मङ्गलम् सत्त्व मूर्ते अवतारः ॥

शब्दार्थ—प्रजेशाः	४.	प्रजापति	सः	११.	वही
वयम्	३.	हम लोग	एषः	१२.	यह दैत्य
ते	२.	आपके द्वारा	त्वया	१३.	आपके द्वारा
परेश	१.	हे परमेश्वर !	भिन्न वक्षाः	१४.	छाती फाड़ दिये जाने पर
अभिसृष्टाः	५.	बनाये गये हैं	नु शेते	१५.	सो रहा है
न	१०.	नहीं (कर पाते थे)	जगत्	१८.	संसार का
येन	६.	जिसके द्वारा	मङ्गलम्	१९.	कल्याण करने के लिए है
प्रजाःवै	८.	प्रजाओं की	सत्त्व	१६.	सत्त्वमयी मूर्ति वाले
सृजामः	९.	सृष्टि	मूर्ते		
निषिद्धाः।	७.	रोक देने के कारण हम	अवतारः ॥	१७.	आपका अवतार

श्लोकार्थ—हे परमेश्वर ! आपके द्वारा हम लोग प्रजापति बनाये गये हैं। जिसके द्वारा रोक दिये जाने के कारण हम प्रजाओं की सृष्टि नहीं कर पाते थे, वही यह दैत्य आपके द्वारा छाती फाड़ दिये जाने पर सो रहा है। हे सत्त्वमयी मूर्ति वाले ! आपका अवतार संसार का कल्याण करने के लिये है ॥

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

गन्धर्वा ऊचुः—

वयं विभो ते नटनाट्यगायका येनात्मसाद् वीर्यबलौजसा कृताः।
स एष नीतो भवता दशामिमां किमुत्पथस्थः कुशलाय कल्पते॥५०॥

पदच्छेद—वयम् विभो ते नटनाट्य गायकाः येन आत्मसात् वीर्यबल औजसा कृताः।
स एव नीतः भवता दशाम् इमाम् किम् उत्पथस्थः कुशलाय कल्पते॥

शब्दार्थ वयम्	२.	हम लोग	सः	११.	उस
विभो	१.	हे प्रभो !	एव	१२.	ही दैत्य को
ते नटनाट्य	३.	आपके नाचने और अभिनय करने	नीतः	१६.	पहुँचा दिया
गायकाः	४.	गानेवाले सेवक हैं	भवता	१२.	आपने
येन	५.	जिसने हमें	दशाम्	१५.	दशा को
आत्मसात्	६.	अपना दास	इमाम्	१४.	इस
वीर्य	७.	वीर्य और	किम्	१७.	क्या
बल	६.	बल	उत्पथस्थः	१८.	कुमार्ग से चलने वाला
ओजसा	८.	पराक्रम से	कुशलाय	१९.	कल्याण का
कृताः।	२०.	वना रखा था	कल्पते॥	२०.	भागी हो सकता है

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! हम लोग आपके नाचने, गाने और अभिनय करने वाले सेवक हैं जिसने हमें बलवीर्य और पराक्रम से अपना दास वना रखा था उसी दैत्य को आपने इस दशा को पहुँचा दिया। क्या कुमार्ग से चलने वाला कल्याण का भागी हो सकता है।

एकपञ्चाशत्तमः श्लोकः

चारणा ऊचुः—**हरे तवाङ्घ्रिपङ्कजं भवापवर्गमाश्रिताः।**
यदेष साधुहृच्छयस्त्वयासुरः समापितः॥५१॥

पदच्छेद— हरे तव अङ्घ्रि पङ्कजम् भव अपवर्गम् आश्रिताः।
यद् एषः साधु हृत्शयः त्वया असुरः समापितः॥

शब्दार्थ—हरे	१.	हे प्रभो !	यद् एषः	८.	जो
तव	४.	आपके	साधु	९.	सज्जनों को
अङ्घ्रि	५.	चरण	हृत्शयः	१०.	हृदय की पीड़ा देने वाले इस
पङ्कजम्	६.	कमल के	त्वया	१३.	आपने
भव	२.	संसार से	असुरः	१२.	असुर को
अपवर्गम्	३.	मोक्ष दिलाने वाले	समापितः॥		समाप्त कर दिया है।
आश्रिताः।	७.	(हम) आश्रित हैं			

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! संसार से मोक्ष दिलाने वाले आपके चरण कमल के हम आश्रित हैं, जो सज्जनों को पीड़ा देने वाले इस असुर को आपने समाप्त कर दिया॥

द्विपञ्चाशत्तमः श्लोकः

यक्षा ऊचुः—

वयमनुचरमुख्याः कर्मभिस्ते मनोज्ञैस्त इह दितिसुतेन प्रापिता वाहकत्वम् ।
स तु जनपरितापं तत्कृतं जानता ते नरहर उपनीतः पञ्चतां पञ्चविंश ॥५२॥

पदच्छेद—वयम् अनुचर मुख्याः कर्मभिः ते मनोज्ञैः ते इह दिति सुतेन प्रापिताः वाहकत्वम् ।
सः तु जन परितापम् तत् कृतम् जानता ते नर हर उपनीतः पञ्चताम् पञ्चविंश ॥

शब्दार्थ—वयम्	३.	हम लोग	सः तु	१७.	उसको
अनुचर	६.	सेवक थे	जन परितापम्	१५.	लोगों के
मुख्याः	५.	प्रधान	तत् कृतम्	१३.	उसके कारण होने वाले
कर्मभिः	२.	कर्मों के कारण	जानता	१६.	कपट को जानकर (आपने)
ते	४.	आपके	ते	१४.	अपने
मनोज्ञैः	१.	श्रेष्ठ	नरहर	१२.	नृसिंह भगवान्
ते इह	७.	वे (हम लोग) इस संसार में	उपनीतः	१९.	पहुँचा दिया
दिति सुतेन	८.	दिति के पुत्र हिरण्यकशिपु के द्वारा	पञ्चताम्	१८.	मृत्यु के पास
प्रापिताः	१०.	बना दिये गये	पञ्चविंश ॥	११.	हे प्रकृति के नियामक
वाहकत्वम् ।	९.	पालकी ढोने वाले कहार			

श्लोकार्थ—श्रेष्ठ कर्मों के कारण हम लोग आपके सेवक थे । वे हम लोग इस संसार में दिति के पुत्र हिरण्यकशिपु द्वारा पालकी ढोने वाले कहार बना दिये गये । हे प्रकृति के नियामक नृसिंह भगवान् ! उसके कारण होने वाले अपने लोगों के कष्ट को जानकर आपने उसको मृत्यु के पास पहुँचा दिया ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

किम्पुरुषा ऊचुः **वयं किम्पुरुषास्त्वं तु महापुरुष ईश्वरः ।**
अयं कुपुरुषो नष्टो धिक्कृतः साधुभिर्यदा ॥५३॥

पदच्छेद— वयम् किम्पुरुषाः त्वं तु महापुरुषः ईश्वरः ।
अयम् कुपुरुषः नष्टः धिक् कृतः साधुभिः यदा ॥

शब्दार्थ—वयम्	१.	हम लोग	कुपुरुषः	१०.	नराधम को
किम्पुरुषाः	२.	किम्पुरुष हैं	नष्टः	११.	नष्ट कर दिया
त्वम्	३.	आप	धिक्कृतः	९.	धिक्कारा (तब आपने इस)
तु महापुरुष	४.	महापुरुष (एवम्)	साधुभिः	७.	साधु पुरुषों ने
ईश्वरः	५.	ईश्वर हैं	यदा ॥	६.	जब
अयम् ।	८.	इसे			

श्लोकार्थ—हम लोग किम्पुरुष हैं । और आप महापुरुष एवम् ईश्वर हैं । जब साधु पुरुषों ने इसे धिक्कारा तब आपने इस नराधम को नष्ट कर दिया ॥

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

वेतालिका ऊचु—

सभासु सत्रेषु तवामलं यशो गीत्वा सपर्यां महतीं लभामहे।
यस्तां व्यनैषीद् भृशमेष दुर्जनो दिष्ट्या हतस्ते भगवन्यथाऽऽमयः ॥५४॥

पदच्छेद—सभासु सत्रेषु तव अमलम् यशः गीत्वा सपर्याम् महतीम् लभामहे।
यः ताम् व्यनैषीत् भृशम् एषः दुर्जनः दिष्ट्या हतः ते भगवन् यथा आमयः ॥

शब्दार्थ—सभासु	१.	सभाओं में	यः	१५.	यह
सत्रेषु	२.	ज्ञानयज्ञों में	ताम्	११.	उस (प्रतिष्ठा को)
तव	३.	आपके	व्यनैषीत्	१४.	नष्ट कर दिया
अमलम्	४.	निर्मल	भृशम्	१३.	बिल्कुल ही
यशः	५.	यश को	एष दुर्जनः	१२.	इस दुष्ट ने
गीत्वा	६.	गाकर (हम)	दिष्ट्या	१६.	भाग्य से
सपर्याम्	८.	प्रतिष्ठा	ते हतः	१७.	आपके द्वारा मारा गया
महतीम्	७.	महान्	भगवन्	१०.	हे भगवन् !
लभामहे।	९.	प्राप्त करते थे।	यथा आमयः ॥	१८.	जैसे (शरीर से) रोग नष्ट कर दिया जाता है

श्लोकार्थ—सभाओं में ज्ञान यज्ञों में आपके निर्मल यश को गाकर हम महान् प्रतिष्ठा प्राप्त करते थे। हे भगवन् ! उस प्रतिष्ठा को इस दुष्ट ने बिल्कुल नष्ट कर दिया। यह भाग्य से आपके द्वारा मारा गया जैसे शरीर से रोग नष्ट कर दिया, जाता है ॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

किन्नरा ऊचुः—

वयमीश किन्नरगणास्तवानुगा दितिजेन विष्टिममुनानुकारिताः।
भवता हरे स वृजिनोऽवसादितो नरसिंह नाथ विभवाय नो भव ॥५५॥

पदच्छेद—वयम् ईश किन्नर गणाः तव अनुगाः दितिजेन विष्टिम् अमुना अनुकारिताः।
भवता हरे सः वृजिनः अवसादितः नरसिंह नाथ विभवाय नः भव ॥

शब्दार्थ—वयम्	२.	हम	भवता	११.	आपने
ईश	१.	हे प्रभो !	हरेः	१०.	हे हरे !
किन्नर गणाः	३.	किन्नर गण	सः वृजिनः	१२.	उस पापी को
तव	४.	आपके	अवसादितः	१३.	नष्ट कर दिया
अनुगाः	५.	सेवक हैं	नरसिंह	१४.	हे नरसिंह !
दितिजेन	७.	दैत्य हम से)	नाथ	१५.	हे नाथ ! आप
विष्टिम्	८.	बेगारी	विभवाय	१७.	अभ्युदय के लिए
अमुना	६.	यह	नः	१६.	हमारे
अनुकारिताः।	९.	कराता था	भव ॥	१८.	हों

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! हम किन्नर गण आपके सेवक हैं। यह दैत्य हम से बेगारी कराता था। हे हरे ! आपने उस पापी को नष्ट कर दिया। हे नरसिंह ! हे नाथ ! आप हमारे अभ्युदय के लिए हों ॥

षट्पञ्चाशत्तमः श्लोकः

विष्णुपार्षदा ऊचुः

अद्यैतद्धरिनररूपमद्भुतं ते दृष्टं नः शरणद सर्वलोकशर्म।
सोऽयं ते विधिकर ईश विप्रशप्तस्तस्येदं निधनमनुग्रहाय विद्मः ॥५६॥

पदच्छेद—अद्य एतत् हरि नर रूपम् अद्भुतम् ते दृष्टम् नः शरणद सर्व लोक शर्म।
सः अयम् ते विधिकर ईश विप्र शप्तः तस्य इदम् निधनम् अनुग्रहाय विद्मः ॥

शब्दार्थ—

अद्य	१.	आज	सः	१७.	वह
एतत्	२.	यह	अयम्	१४.	यह
हरि नर	८.	नरसिंह	ते	१५.	आपका
रूपम्	९.	रूप	विधिकर	१६.	आज्ञाकारी सेवक था
अद्भुतम्	७.	अद्भुत	ईश	१३.	हे प्रभो !
ते	६.	आपका	विप्र	१८.	ब्राह्मणों के
दृष्टम्	१०.	देखा है	शप्तः	१९.	शाप से ग्रस्त हो गया था
नः	११.	हमें	तस्य	२०.	उस दैत्य का
शरणद	१२.	शरण देने वाले	इदम्	२१.	यह
सर्व	३.	सभी	निधनम्	२२.	निधन
लोक	४.	लोगों का	अनुग्रहाय	२३.	उद्धार के लिए (हुआ है)
शर्म।	५.	कल्याण करने वाला	विद्मः ॥	२४.	ऐसा हम जानते हैं।

श्लोकार्थ—आज यह आपका अद्भुत नरसिंह रूप देखा है। हमें शरण देने वाले हे प्रभो ! वह आपका आज्ञाकारी सेवक था। वह ब्राह्मणों के शाप से ग्रस्त हो गया था। उस दैत्य का यह निधन उद्धार के लिए हुआ है। ऐसा हम जानते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमे स्कन्धे प्रह्लादानुचरिते
दैत्यराजवधे नृसिंहस्तवं नाम अष्टमः अध्यायः ॥८॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—एवं सुरादयः सर्वे ब्रह्मरुद्रपुरः सराः।
नोपैतुमशकन्मन्युसंरम्भं सुदुरासदम् ॥१॥

पदच्छेद— एवम् सुर आदयः सर्वे ब्रह्म रुद्र पुरः सराः।
न उपैतुम् अशकन् मन्यु संरम्भम् सुदुरासदम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	न	१२.	नहीं
सुर	६.	देवता	उपैतुम्	११.	पास जा
आदयः	७.	आदि	अशकन्	१३.	सके
सर्वे	५.	सभी	मन्यु	८.	क्रोध से
ब्रह्म	२.	ब्रह्मा और	संरम्भम्	९.	भरे हुए तथा
रुद्र	३.	रुद्र	सुदुरासदम्॥	१०.	अत्यन्त भयंकर नरसिंह भगवान् के
पुरः सराः।	४.	प्रमुख			

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्मा और रुद्र प्रमुख सभी देवता आदि क्रोध से भरे हुए तथा अत्यन्त भयंकर नृसिंह भगवान् के पास नहीं जा सके॥

द्वितीयः श्लोकः

साक्षाच्छ्रीः प्रेषिता देवैर्दृष्ट्वा तन्महदद्भुतम्।
अदृष्टाश्रुतपूर्वत्वात् सा नोपेयाय शङ्किता ॥२॥

पदच्छेद— साक्षात् श्रीः प्रेषिता देवैः दृष्ट्वा तत् महत् अद्भुतम्।
अदृष्ट अश्रुत पूर्वत्वात् सा न उपेयाय शङ्किता॥

शब्दार्थ—

साक्षात्	६.	स्वयम्	अदृष्ट	१०.	न देखे (और)
श्रीः	७.	लक्ष्मी को	अश्रुत	११.	न सुने जाने के कारण
प्रेषिताः	८.	भेजा (किन्तु)	पूर्वत्वात्	९.	पहले
देवैः	५.	देवताओं ने	सा	१२.	वे लक्ष्मी
दृष्ट्वा	४.	देखकर	न	१५.	नहीं
तत्	१.	उस	उपेयाय	१४.	पास गईं
महत्	२.	महान्	शङ्किता॥	१३.	भयभीत
अद्भुतम्।	३.	अद्भुत रूप को			

श्लोकार्थ—उस महान् अद्भुत रूप को देखकर देवताओं ने स्वयम् लक्ष्मी को भेजा। किन्तु पहले न देखे और न सुने जाने जाने के कारण वे भयभीत लक्ष्मी पास नहीं गयीं॥

तृतीयः श्लोकः

प्रह्लादं प्रेषयामास ब्रह्मावस्थितमन्तिके ।
तात प्रशमयोपेहि स्वपित्रे कुपितं प्रभुम् ॥३॥

पदच्छेद— प्रह्लादम् प्रेषयामास ब्रह्मा अवस्थितम् अन्तिके ।
तात प्रशमय उपेहि स्वपित्रे कुपितम् प्रभुम् ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लादम्	४.	प्रह्लाद को	तात	६.	हे तात !
प्रेषयामास	५.	भेजा (और कहा)	प्रशमय	११.	शान्त करो
ब्रह्मा	१.	ब्रह्मा ने	उपेहि	१०.	पास जाओ (और)
अवस्थितम्	३.	खड़े हुए	स्वपित्रे	७.	अपने पिता के ऊपर
अन्तिके ।	२.	पास में	कुपितम्	८.	क्रुद्ध हुए
			प्रभुम् ॥	९.	प्रभु के

श्लोकार्थ—ब्रह्मा के पास खड़े हुए प्रह्लाद को भेजा और कहा—हे तात ! अपने पिता के ऊपर क्रुद्ध हुए प्रभु के पास जाओ और शान्त करो ॥

चतुर्थः श्लोकः

तथेति शनकै राजन्महाभागवतोऽर्भकः ।
उपेत्य भुवि कायेन ननाम विधृताञ्जलिः ॥४॥

पदच्छेद— तथा इति शनकैः राजन् महाभागवतः अर्भकः ।
उपेत्य भुवि कायेन ननाम विधृत अञ्जलिः ॥

शब्दार्थ—

तथा	३.	अच्छा	उपेत्य	८.	पास जाकर
इति	४.	यह कहकर	भुवि	९.	पृथ्वी पर
शनकैः	२.	धीरे से	कायेन	१०.	शरीर से लेटकर
राजन्	१.	हे राजन् !	ननाम	१३.	प्रणाम किया
महा	५.	महान्	विधृत	१२.	जोड़कर
भागवतः	६.	भगवत् भक्त	अञ्जलिः ॥	११.	हाथ
अर्भकः ।	७.	बालक प्रह्लाद ने			

श्लोकार्थ— हे राजन् ! धीरे से अच्छा यह कहकर महान् भगवद् भक्त बालक प्रह्लाद ने पास जाकर पृथ्वी पर शरीर से लेटकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया ॥

पञ्चमः श्लोकः

स्वपादमूले पतितं तमर्भकं विलोक्य देवः कृपया परिप्लुतः ।
उत्थाप्य तच्छीर्ष्ण्यदधात् कराम्बुजं कालाहिवित्रस्तधियां कृताभयम् ॥ ५ ॥

पदच्छेद—स्वपाद मूले पतितम् तम् अर्भकम् विलोक्य देवः कृपया परिप्लुतः ।
उत्थाप्य तत् शीर्ष्णि अदधात् कर अम्बुजम् काल अहि वित्रस्त धियाम् कृत अभयम् ॥

शब्दार्थ—

स्वपाद	१. अपने चरण	उत्थाप्य	९. उन्होंने प्रह्लाद को उठाकर
मूले पतितम्	२. तल में गिरे हुए	तत् शीर्ष्णि	१०. उसके शिर पर
तम्	३. उस	अदधात्	१६. रख दिया
अर्भकम्	४. बालक को	कर अम्बुजम्	१५. कर कमल को
विलोक्य	५. देखकर	काल अहि	११. काल रूप सर्प से
देवः	६. भगवान् नरसिंह	वित्रस्त धियाम्	१२. डरी हुई बुद्धि वाले पुरुषों को
कृपया	७. कृपा से	कृत	१४. देने वाले (अपने)
परिप्लुतः ।	८. भर गये और)	अभयम् ॥	१३. अभयदान

श्लोकार्थ—अपने चरण तल में गिरे हुए उस बालक को देखकर भगवान् नृसिंह कृपा से भर गये और उन्होंने प्रह्लाद को उठाकर उसके सिर पर काल रूप सर्प से डरी हुई बुद्धि वाले पुरुषों को अभयदान देने वाले अपने कर कमलों को रख दिया ॥

षष्ठः श्लोकः

स तत्करस्पर्शधुताखिलाशुभः सपद्यभिव्यक्तपरात्मदर्शनः ।
तत्पादपद्मं हृदि निर्वृतो दधौ हृष्यत्तनुः क्लिन्नहृदश्रुलोचनः ॥ ६ ॥

पदच्छेद—सः तत् कर स्पर्श धुत अखिल अशुभः सपदि अभिव्यक्त परात्म दर्शनः ।
तत्पाद पद्मम् हृदि निर्वृतः दधौ हृष्यत् तनुः क्लिन्नहृद् अश्रुलोचनः ॥

शब्दार्थ—

सः	१. उस प्रह्लाद का	तत् पाद	११. उनके चरण
तत्	२. उन भगवान् के	पद्मम्	१२. कमल को
कर	३. हाथ के	हृदि	१३. हृदय में
स्पर्श	४. स्पर्श से	निर्वृतः	१०. आनन्द मग्न होकर
धुत	६. धुल गया	दधौ	१४. धारण कर लिया (तथा)
अखिल अशुभः	५. सम्पूर्ण अशुभ संस्कार	हृष्यत्	१६. पुलकित हो गया (उसका)
सपदि	८. शीघ्र	तनुः	१५. शरीर
अभिव्यक्ति	९. साक्षात्कार (हो गया)	क्लिन्नहृद्	१७. हृदय प्रेम से द्रवित हो गया
परात्म दर्शनः ।	७. उसे परमात्मतत्त्व का	अश्रुलोचनः ॥	१८ आँखों से आँसू गिरने लगे

श्लोकार्थ—उस प्रह्लाद का उन भगवान् के हाथ के स्पर्श से अशुभ संस्कार धुल गया और परमात्मा का साक्षात्कार हो गया । आनन्दमग्न होकर उनके चरण कमल को हृदय में धारण कर लिया तथा शरीर पुलकित हो गया, उसका हृदय प्रेम से द्रवित हो गया और आँखों से आँसू गिरने लगे ॥

सप्तमः श्लोकः

अस्तौषीद्धरिमेकाग्रमनसा सुसमाहितः ।
प्रेमगद्गदया वाचा तन्न्यस्तहृदयेक्षणः ॥ ७ ॥

पदच्छेद— अस्तौषीत् हरिम् एकाग्र मनसा सुसमाहितः ।
प्रेम गद्गदया वाचा तत् न्यस्त हृदय ईक्षणः ॥

शब्दार्थ—अस्तौषीत्	१२. स्तुति करने लगा	गद्‌दया	९. गद्‌द
हरिम्	११. नृसिंह भगवान् की	वाचा	१०. वाणी से
एकाग्र	२. एकाग्र	तत्	४. उन भगवान् में (अपने)
मनसा	३. चित्त से	न्यस्त	७. लगाकर
सुसमाहितः ।	१. समाधिस्थ होकर (बालक प्रह्लाद ने)	हृदय	५. हृदय (और)
प्रेम	८. प्रेम	ईक्षणः ॥	६. दृष्टि को

श्लोकार्थ—समाधिस्थ होकर एकाग्र चित्त (होकर बालक प्रह्लद ने) उन भगवान् में अपने हृदय और दृष्टि को लगाकर प्रेम गद्‌गद वाणी से नृसिंह भगवान् की स्तुति करने लगे ॥

अष्टमः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच -

ब्रह्मादयः सुरगणा मुनयोऽथ सिद्धाः सत्त्वैकतानमतयो वचसां प्रवाहैः ।
नाराधितुं पुरुगुणैरधुनापि पिप्रुः किं तोष्टुमर्हति स मे हरिरुग्रजातेः ॥ ८ ॥

पदच्छेद—ब्रह्म आदयः सुरगणाः मुनयः अथ सिद्धाः सत्त्व एकतान मतयः वचसाम् प्रवाहैः ।
न आराधितुम् पुरु गुणैः अधुना अपि पिप्रुः किम् तोष्टुम् अर्हति सः मे हरिः उग्र जातेः ॥

शब्दार्थ—ब्रह्म	४. ब्रह्मा	पुरु	१२. विविध
आदयः	५. आदि	गुणैः	१३. गुणों के द्वारा
सुरगणाः	६. देवगण	अधुना	१४. अब तक
मुनयः	७. मुनि	अपि	१५. भी (आपको)
अथ	८. और	पिप्रुः	१७. सन्तुष्ट कर सके हैं ।
सिद्धाः	९. सिद्धगण	किम्	२२. कैसे
सत्त्व	१. सत्त्व गुणों में ही	तोष्टुम्	२३. सन्तुष्ट कर
एकतान	२. निरन्तर लगी	अर्हति	२४. सकूंगा
मतयः	३. बुद्धि वाले	सः मे	२०. उन
वचसाम्	१०. वाणी के	हरि	२१. हरि भगवान् को
प्रवाहैः ।	११. प्रवाहों से	उग्रजातेः ॥	१८. फिर असुर जाति का बालक
न आराधितुम्	१६. नहीं आराधना करने के लिए		

श्लोकार्थ—सत्त्वगुण में ही निरन्तर लगी बुद्धि वाले ब्रह्मा आदि देवगण, मुनि और सिद्धगण वाणी के प्रवाहों से अराधना करने के लिए विविध गुणों के द्वारा अब तक भी आपको नहीं सन्तुष्ट कर सके हैं। फिर असुर जाति का मैं बालक उन हरि भगवान् को कैसे सन्तुष्ट कर सकूंगा ॥

नवमः श्लोकः

मन्ये धनाभिजनरूपतपःश्रुतौजस्तेजः प्रभावबलपौरुषबुद्धियोगः ।
नाराधनाय हि भवन्ति परस्य पुंसो भक्त्या तुतोष भगवान्गजयूथपाय ॥९॥

पदच्छेद— मन्ये धन अभिजन रूप तपः श्रुत ओजः प्रभावः बल पौरुष बुद्धि योगः ।
न आराधनाय हि भवन्ति परस्य पुंसः भक्त्या तुतोष भगवान् गज यूथपाय ॥

शब्दार्थ—मन्ये धन	१.	मानता हूँ कि धन	न आराधनाय	१२.	नहीं सन्तुष्ट करने के लिए
अभिजनरूप	२.	कुलीनता रूप	हि भवन्ति	१३.	होते हैं (क्योंकि)
तपः श्रुत	३.	तपस्या, शास्त्र	परस्य	१०.	परम
ओजः तेजः	४.	ओज तेज	पुंसः	११.	पुरुष को
प्रभावः	५.	प्रभाव	भक्त्या	१५.	भक्ति के कारण
बल	६.	बल	तुतोष	१७.	सन्तुष्ट हुए थे
पौरुष	७.	पौरुष	भगवान्	१४.	भगवान्
बुद्धि	८.	बुद्धि (और)	गजयूथपाय ॥	१६.	गजेन्द्र पर
योगः ।	९.	योग (ये)			

श्लोकार्थ—मैं मानता हूँ कि धन, कुलीनता, रूप, तपस्या, शास्त्र, ओज, तेज, प्रभाव, बल, पौरुष, बुद्धि और योग ये परम पुरुष को सन्तुष्ट करने के लिए नहीं होते हैं । क्योंकि भगवान् भक्ति के कारण गजेन्द्र पर सन्तुष्ट हुए थे ॥

दशमः श्लोकः

विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविन्दनाभपादारविन्दविमुखाच्छ्वपचं वरिष्ठम् ।
मन्ये तदर्पितमनोवचनेहितार्थप्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरिमानः ॥१०॥

पदच्छेद—विप्रात् द्विषड् गुण युताद् अरविन्दनाभ पादार विन्द विमुखात् श्वपचम् वरिष्ठम् ।
मन्ये तत् अर्पित मनः वचन ईहित अर्थ प्राणम् पुनाति सः कुलम् न तु भूरिमानः ॥

शब्दार्थ—विप्रात्	७.	ब्राह्मण की अपेक्षा	मन्ये	१३.	मानता हूँ
द्विषड्	१.	(दो-छः) बारह (धनादि)	तत् अर्पित	८.	उन भगवान् में समर्पित
गुण	२.	गुणों से	मनः वचन	९.	मन वचन
युताद्	३.	युक्त (किन्तु)	ईहित अर्थ प्राणम्	१०.	कर्म धन और प्राण वाले
अरविन्दनाभ	४.	भगवान् पद्मनाभ के	पुनाति	१६.	पवित्र कर देता है
पादारविन्द	५.	चरण कमलों से	सः	१४.	वह (चाण्डाल)
विमुखात्	६.	विमुख	कुलम्	१५.	कुल को
श्वपचम्	११.	चाण्डाल को	न तु	१७.	न कि
वरिष्ठम् ।	१२.	श्रेष्ठ	भूरिमानः ॥	१८.	बड़े अभिमान वाला (ब्राह्मण कुल को पवित्र करता है)

श्लोकार्थ—बारह गुणों से युक्त, भगवान् पद्मनाभ के चरण-कमलों से विमुख ब्राह्मण की अपेक्षा उन भगवान् में समर्पित मन, वचन, कर्म, धन और प्राण वाले चाण्डाल को श्रेष्ठ मानता हूँ । वह चाण्डाल कुल को पवित्र करता है, न कि बड़े अभिमान वाला ब्राह्मण कुल को पवित्र करता है ॥

एकादशः श्लोकः

नैवात्मनः प्रभुरयं निजलाभपूर्णो मानं जनादविदुषः करुणो वृणीते।
यद् यज्जनो भगवते विदधीत मानं तच्चात्मने प्रतिमुखस्य यथा मुखश्रीः ॥११॥

पदच्छेद—न एव आत्मनः प्रभुः अयम् निज लाभ पूर्णः मानम् जनात् अविदुषः करुणः वृणीते ।
यत् यत् जनः भगवते विदधीत मानम् तत् च आत्मने प्रतिमुखस्य यथा मुखश्रीः ।।

शब्दार्थ—न एव	९.	नहीं चाहते हैं वे	यत् यत्	१२.	जो जो
आत्मनः	५.	अपने लिए	जनः	११.	मनुष्य
प्रभुः	४.	भगवान्	भगवते विदधीत	१४.	भगवान् के लिए करता है
अयम्	३.	ये	मानम्	१३.	सम्मान
निजलाभ	१.	अपने साक्षात्कार से	तत् च आत्मने	१५.	वह अपने लिए करता है
पूर्णः	२.	परिपूर्ण	प्रतिमुखस्य	१९.	प्रतिबिम्ब की शोभा को बढ़ाती है
मानम्	८.	सम्मान को	यथा	१६.	जैसे दर्पण में
जनात्	७.	लोगों से	मुख	१७.	मुख की
अविदुषः	६.	अविद्वान्	श्रीः ।।	१८.	शोभा
करुणः वृणीते।	१०.	करुणावश ही स्वीकार करते हैं			

श्लोकार्थ—अपने साक्षात्कार से परिपूर्ण ये भगवान् अपने लिए अविद्वान् लोगों से सम्मान को नहीं चाहते हैं। करुणावश ही स्वीकार करते हैं। मनुष्य जो जो सम्मान भगवान् के लिए करता है, वह अपने लिए ही करता है। जैसे दर्पण में मुख की शोभा प्रतिबिम्ब की शोभा को बढ़ाती है ।।

द्वादशः श्लोकः

तस्मादहं विगतविक्लव ईश्वरस्य सर्वात्मना महि गृणामि यथामनीषम् ।
नीचोऽजया गुणविसर्गमनुप्रविष्टः पूयेत येन हि पुमाननुवर्णितेन॥१२॥

पदच्छेद—तस्मात् अहम् विगत विक्लवः ईश्वरस्य सर्वात्मना महि गृणामि यथा मनीषम् ।
नीचः अजया गुण विसर्गम् अनुप्रविष्टः पूयेत येन हि पुमान् अनुवर्णितेन ।।

शब्दार्थ—तस्मात्	१.	इस लिए	नीचः	१६.	अधम
अहम्	४.	मैं	अजया	११.	अविद्या माया के द्वारा
विगत	३.	रहित होकर	गुण	१३.	गुणों की
विक्लव	२.	चिन्ता से	विसर्गम्	१४.	सृष्टि (संसार चक्र में)
ईश्वरस्य	८.	भगवान् की	अनुप्रविष्टः	१५.	पड़ा हुआ
सर्वात्मना	७.	सब प्रकार से	पूयेत	१९.	पवित्र हो जाता है
महिगृणामि	९.	महिमा का वर्णन करता हूँ	येन हि	१०.	जिसके
यथा	६.	अनुसार	पुमान्	१०.	मनुष्य भी
मनीषम् ।	५.	अपनी बुद्धि के	अनुवर्णितेन ।।	११.	वर्णन करने से

श्लोकार्थ—इसलिए चिन्ता से रहित मैं अपनी बुद्धि के अनुसार सब प्रकार से भगवान् की महिमा का वर्णन करता हूँ। जिसके वर्णन करने से अविद्या माया के द्वारा गुणों की सृष्टि (संसार-चक्र) में पड़ा हुआ अधम मनुष्य भी पवित्र हो जाता है ।।

त्रयोदशः श्लोकः

सर्वे ह्यमी विधिकरास्तव सत्त्वधाम्नो
ब्रह्मादयो वयमिवेश न चोद्विजन्तः ।
क्षेमाय भूतय उतात्मसुखाय चास्य
विक्रीडितं भगवतो रुचिरावतारैः ॥१३॥

पदच्छेद— सर्वे हि अमो विधिकराः तव सत्त्वधाम्नः
ब्रह्म आदयः वयम् इव ईश न च उद्विजन्तः ।
क्षेमाय भूतये उत आत्मसुखाय च अस्य
विक्रीडितम् भगवतः रुचिर अवतारैः ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	२. ये सब	क्षेमाय	१३. कल्याण
हि अमी	५. निश्चित रूप से	भूतय	१४. अभ्युदय के लिए
विधिकराः	७. आज्ञाकारी भक्त हैं	उत	१५. अथवा
तव	६. आपके	आत्मसुखाय	१६. आत्मानन्द के लिए
सत्त्वधाम्नः	४. सत्त्वगुण के आश्रय	च	११. और
ब्रह्मआदयः	३. ब्रह्मा आदि	अस्य	१२. इस संसार के
वयम् इव	८. हमारे समान	विक्रीडितम्	२०. लीलायें करते हैं
ईश	१. हे प्रभो !	भगवतः	१७. भगवान्
न	६. नहिं	रुचिर	१८. मनोहर
उद्विजन्तः ।	१०. द्वेष करते हैं	अवतारैः ॥	१६. अवतारों से

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! ये सब ब्रह्मा आदि सत्त्वगुण के आश्रय निश्चित रूप से आपके आज्ञाकारी भक्त हैं। हमारे समान द्वेष नहीं करते हैं। और इस संसार के कल्याण अभ्युदय के लिए अथवा आत्मानन्द के लिए भगवान् मनोहर अवतारों से लीलायें करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तद् यच्छ मन्युमसुरश्च हतस्त्वयाद्य
मोदेत साधुरपि वृश्चिकसर्पहत्या ।
लोकाश्च निर्वृतिमिताः प्रतियन्ति सर्वे
रूपं नृसिंहविभयाय जनाः स्मरन्ति ॥१४॥

पदच्छेद—
तद् यच्छ मन्युम् असुरः च हतः त्वया अद्य
मोदेत साधुः अपि वृश्चिक सर्प हत्या ।
लोकाः च निर्वृतिम् इताः प्रतियन्ति सर्वे
रूपम् नृसिह विभयाय जनाः स्मरन्ति ॥

शब्दार्थ—

तद्	१. इस लिए	लोकाः	११. लोग
यच्छ मन्युम्	२. क्रोध को शान्त कीजिये	च	१३. और
असुरः	४. दैत्य हिरण्यकशिपु	निर्वृतिम् इताः	१२. सुख को प्राप्त हो गये हैं
च	८. और	प्रतियन्ति	१६. प्रतीक्षा कर रहे हैं
हतः	५. मारा गया	सर्वे	१४. सभी (आपके)
त्वया अद्य	३. आज आपके द्वारा	रूपम्	१५. शान्त रूप की
मोदेत	१०. सुखी होते हैं	नृसिह	१७. हे नृसिह भगवान्
साधुः अपि	६. महात्मा भी	विभयाय	१८. भय दूर करने के लिए
वृश्चिक	७. बिच्छू	जनाः	१९. लोग
सर्प हत्या ।	९. सांप की हत्या से	स्मरन्ति ॥	२०. आपका स्मरण कर रहे हैं

श्लोकार्थ—इसलिए क्रोध को शान्त कीजिये। आज आपके द्वारा दैत्य हिरण्यकशिपु मारा गया। महात्मा भी बिच्छू और साँप की हत्या से सुखी होते हैं। लोग सुख को प्राप्त हो गये हैं। और सभी आपके शान्त स्वरूप की प्रतीक्षा कर रहे हैं। नृसिह भगवान्! भय दूर करने के लि लोग आपका स्मरण कर रहे हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नाहं बिभेम्यजित तेऽतिभयानकास्य
जिह्वार्कनेत्रभ्रुकुटीरभसोग्रदंष्ट्रात् ।
आन्त्रस्रजः क्षतजकेसरशङ्कुकर्णा-
न्निर्ह्रादभीतदिगिभादरिभिन्नखाग्रात् ॥१५॥

पदच्छेद— न अहम् बिभेमि अजित ते अति भयानक आस्य
जिह्वा अर्क नेत्र भ्रुकुटी रभस उग्रदंष्ट्रात् ।
आन्त्र स्रजः क्षतज केसर शङ्कु कर्णात्
निर्ह्राद भीत दिगिभात् अरिभित् नख अग्रात् ॥

शब्दार्थं—

न अहम्	१७.	मैं नहीं	आन्त्र स्रजः	८.	आंतों की माला
बिभेमि	१८.	डरता हूँ	क्षतज	९.	रक्त से लथपथ
अजित ते	१.	हे अजेय ! आपके	केसर	१०.	गर्दन के बालों (तथा)
अति भयानक	२.	अत्यन्त भयानक	शङ्कु कर्णात्	११.	बर्छे के समान कान
आस्यजिह्वा	३.	मुख जीभ	निर्ह्राद	१४.	सिंह नाद (और)
अर्क नेत्र	४.	सूर्य के समान नेत्र	भीत	१३.	भयभीत करने वाले
भ्रुकुटी	६.	भौंहें (और)	दिगिभात्	१२.	दिग्गजों को भी
रभस	५.	चढ़ी हुई	अरिभित्	१५.	शत्रु को फाड़ देने वाले
उग्रदंष्ट्रात् ।	७.	तीखी दाढ़ें	नख अग्रात् ॥	१६.	नख के अग्र भागों से

श्लोकार्थ—हे अजेय ! आपके अत्यन्त भयानक, मुख, जीभ, सूर्य के समान नेत्र, चढ़ी हुई भौंहें और तीखी दाढ़ें, आंतों की माला, रक्त से लथपथ गर्दन के बालों तथा बर्छे के समान कान, दिग्गजों को भी भयभीत करने वाले सिंहनाद और शत्रुओं को फाड़ देने वाले नख के अग्र भागों से मैं नहीं डरता हूँ ॥

षोड्शः श्लोकः

त्रस्तोऽस्म्यहं कृपणवत्सल दुःसहोग्र

संसारचक्रकदनाद् ग्रसतां प्रणीतः ।

बद्धः स्वकर्मभिरुशत्तम तेऽङ्घ्रिमूलं

प्रीतोऽपवर्गशरणं ह्वयसे कदा नु ॥१६॥

पदच्छेद — त्रस्तः अस्मि अहम् कृपणवत्सल दुःसह उग्र

संसार चक्र कदनात् ग्रसताम् प्रणीतः ।

बद्धः स्वकर्मभिः उशत्तम ते अङ्घ्रि मूलम्

प्रीतः अपवर्गशरणम् ह्वयसे कदानु ॥

शब्दार्थ—

त्रस्तः	६.	डरा हुआ	बद्धः	१०.	बाँध कर
अस्मि	७.	हूँ	स्वकर्मभिः	६.	अपने कर्मपाशों में
अहम्	२.	मैं	उशत्तम	८.	हे स्वामी !
कृपणवत्सल	१.	हे दीनबन्धो !	ते	१३.	आप
दुःसह उग्र	३.	असह्य और प्रचण्ड	अङ्घ्रिमूलम्	१६.	अपने चरण कमलों में मुझे
संसार चक्र	४.	संसार के चक्र में	प्रीतः	१४.	प्रसन्न होकर
कदनात्	५.	पिसने से	अपवर्गशरणम्	१५.	मोक्ष स्वरूप एवम् रक्षक
ग्रसताम्	११.	ग्रसने वाले जीवोंकि बीच	ह्वयसे	१८.	बुलायेंगे
प्रणीतः ।	१२.	डाल दिया गया हूँ	कदा नु ॥	१७.	कब

श्लोकार्थ—हे दीनबन्धो ! मैं असह्य और प्रचण्ड संसार के चक्र में पिसने से डरा हुआ हूँ । हे स्वामी ! अपने कर्मपाशों में बांधकर ग्रसने वाले जीवों के बीच में डाल दिया गया हूँ । आप प्रसन्न होकर मोक्ष स्वरूप एवम् रक्षक अपने चरण कमलों में मुझे कब बुलायेंगे ? ॥

सप्तदशः श्लोकः

यस्मात् प्रियाप्रियवियोगसयोगजन्मशोकाग्निना सकलयोनिषु दह्यमानः ।
दुःखौषधं तदपि दुःखमतद्धियाहं भूमन्भ्रमामि वद मे तव दास्ययोगम् ॥१७॥

पदच्छेद—यस्मात् प्रिय अप्रिय वियोग सयोग जन्म शोक अग्निना सकल योनिषु दह्यमानः ।
दुःख औषधम् तत् अपि दुःखम् अतद् धिया अहम् भूमन् भ्रमामि वद मे तव दास्य योगम् ॥

शब्दार्थ—यस्मात्	१.	जिस कारण	दुःख औषधम्	१०.	दुःख को मिटाने की जो ओषधि है
प्रिय	२.	प्रिय	तत् अपि	११.	वह भी
अप्रिय	३.	अप्रिय वस्तुओं के	दुःखम्	१२.	दुःख ही है
वियोग	४.	वियोग और	अतद्धिया	१४.	असत् बुद्धि होने से
सयोग	५.	संयोग से	अहम्	१५.	मैं
जन्म	६.	उत्पन्न	भूमन्	१३.	हे अनन्त !
शोकअग्निना	७.	शोक रूपी अग्नि से	भ्रमामि	१६.	भटक रहा हूँ ।
सकल	८.	समस्त	वद	१९.	बतलाइये
योनिषु दह्यमानः ।	९.	योनियों में मैं जलता रहा	मे तव	१७.	मुझे अपना
			दास्ययोगम् ॥	१८.	भक्ति योग

श्लोकार्थ—जिस कारण प्रिय और अप्रिय वस्तुओं के वियोग और संयोग से उत्पन्न शोक रूपी अग्नि से समस्त योनियों में मैं जलता रहा । दुःख को मिटाने की जो ओषधि है, वह भी दुःख ही है । हे अनन्त ! असद् बुद्धि होने से मैं भटक रहा हूँ । मुझे अपना भक्तियोग बतलाइये ॥

अष्टादशः श्लोकः

सोऽहं प्रियस्य सुहृदः परदेवताया लीलाकथास्तव नृसिंह विरिञ्चगीताः ।
अञ्जस्तितर्म्यनुगृणन्गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणि ते पदयुगालयहंससङ्गः ॥१८॥

पदच्छेद—सः अहम् प्रियस्य सुहृदः परदेवतायाः लीला कथाः तव नृसिंह विरिञ्च गीताः ।
अञ्जः तितर्मि अनुगृणन् गुण विप्रमुक्तः दुर्गाणि ते पद युग आलय हंस सङ्गः ॥

शब्दार्थ—सः अहम्	१.	वह मैं	अञ्जः	१२.	सुगमता से
प्रियस्य	२.	(सबको) प्रिय	तितर्मि	१४.	पार कर जाऊँगा
सुहृदः	३.	मित्र	अनुगृणन् गुण	१०.	गान करता हुआ गुणों से
परदेवतायाः	४.	परमदेवता	विप्रमुक्तः	११.	मुक्त होकर
लीला	८.	लीला	दुर्गाणि	१३.	संसार की कठिनाइयों को
कथाः	९.	कथाओं का	ते पद	१५.	आपके चरण
तव	५.	आपका	युग आलयः	१६.	युगल में रहने वाले
नृसिंह विरिञ्च	६.	हे नृसिंह भगवान् ब्रह्मा द्वारा	हंस	१७.	परमहंसों का
गीताः ।	७.	गायी गई	सङ्गः ॥	१८.	साथ मिलता रहेगा ।

श्लोकार्थ—हे नृसिंह भगवान् ! वह मैं (सबके) प्रिय मित्र परम देवता आपकी ब्रह्मा द्वारा गायी गई लीला कथाओं का गान करता हुआ गुणों से युक्त होकर सुगमता से संसार की कठिनाइयों को पार कर जाऊँगा । (क्योंकि) आपके चरण युगल में रहने वाले परम हंसों का साथ मिलता रहेगा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

बालस्य नेह शरणं पितरौ नृसिंह
नार्तस्य चागदमुदन्वति मज्जतो नौः ।
तप्तस्य तत्प्रतिविधिर्य इहाञ्जसेष्ट-
स्तावद् विभो तनुभृतां त्वदुपेक्षितानाम् ॥१६

पदच्छेद— बालस्य न इह शरणम् पितरौ नृसिंह
न आर्तस्य च अगदम् उदन्वति मज्जतः नौः ।
तप्तस्य तत् प्रतिविधिः यः इह अञ्जसा इष्टः
तावत् विभो तनुभृताम् त्वद् उपेक्षितानाम् ।।

शब्दार्थ—

बालस्य न इह	१२.	बालक के लिये यहाँ संसार में	तप्तस्य तत्	२.	दुःखी जीवों का दुःख मिटाने के लिये
शरणम्	१८.	रक्षक	प्रतिविधिः	३.	उपाय
पितरौ	१३.	माता-पिता	यः इह	४.	जो इस संसार में
नृसिंह	११.	हे नृसिंह भगवान्	अञ्जसा इष्टः	५.	बताया गया है
न	१९.	नहीं हो सकते	तावत्	९.	तब-तक (क्षणिक ही है)
आर्तस्य	१४.	रोगी के लिए	विभो	१.	हे प्रभो !
च अगदम्	१५.	ओषधि और	तनु	७.	शरीर
उदन्वति	१६.	समुद्र में	भृताम्	८.	धारियों के लिये
मज्जतः नौः	१७.	डूबते हुए को नौका	त्वद् उपेक्षितानाम् ।।	६.	आपके द्वारा उपेक्षित

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! दुःखी जीवों का दुःख मिटाने के लिये जो इस संसार में उपाय बताया गया है वह आपके द्वारा उपेक्षित शरीर धारियों के लिए तब तक क्षणिक ही है। यहाँतक कि हे नृसिंह भगवान् ! बालक के लिए यहाँ संसार में माता पिता, रोगी के लिये ओषधि और समुद्र में डूबते हुए के लिए नौका रक्षक नहीं हो सकती ।।

विंशः श्लोकः

यस्मिन्यतो यर्हि येन च यस्य यस्माद्
यस्मै यथा यदुत यस्त्वपरः परो वा।
भावः करोति विकरोति पृथक्स्वभावः
सञ्चोदितास्तदखिलं भवतः स्वरूपम् ॥२०

पदच्छेद—

यस्मिन् यतः यर्हि येन च यस्य यस्मात्
यस्मै यथा यदुत यस्त्वपरः परः वा।
भावः करोति विकरोति पृथक् स्वभावः
सञ्चोदितः तत् अखिलम् भवतः स्व रूपम् ॥

शब्दार्थ —

यस्मिन्	१.	जिस आधार में	भावः	१०.	करने वाले
यतः यर्हि	२.	जिस निमित्त से जिस समय	करोति	१४.	(उत्पन्न) करते और
येन च	३.	जिस उपकरण से और	विकरोति	१५.	बिगाड़ते हैं
यस्य यस्मात्	४.	जिसके लिये जिस साधन से	पृथक्	११.	भिन्न-भिन्न
यस्मै यथा	५.	जिस प्रयोजन से जैसे	स्वभावः	१२.	स्वभाव के व्यक्ति (आपके द्वारा)
यदुत	६.	जो कुछ	सञ्चोदितः	१३.	प्रेरित होने पर
यस्त्वपरः	७.	यो ब्रह्मादि	तत् अखिलम्	१६.	वह सब
परः	९.	कालादि	भवतः स्वरूपम् ॥	१७.	आपका (ही) स्वरूप है
वा।	८.	अथवा			

श्लोकार्थ—जिस आधार में, जिस समय, जिस उपकरण से और जिसके लिये, जिस साधन से, जिस प्रयोजन से, जैसे जो कुछ ब्रह्मादि अथवा कालादि करने वाले भिन्न-भिन्न स्वभाव के व्यक्ति आपके द्वारा प्रेरित होने पर उत्पन्न करते और बिगाड़ते हैं, वह सब आपका हो स्वरूप है।

एकविंशः श्लोकः

माया मनः सृजति कर्ममयं बलीयः कालेन चोदितगुणानुमतेन पुंसः ।
छन्दोमयं यदजयार्पितषोडशारं संसारचक्रमज कोऽतितरेत् त्वदन्यः ॥२१॥

पदच्छेद—**माया मनः सृजति कर्म मयम् बलीयः कालेन चोदित गुण अनुमतेन पुंसः ।**
छन्दोमयम् यत् अजया अर्पित षोडशारम् संसार चक्रम् अज कः अतितरेत त्वत् अन्यः ॥

शब्दार्थ—**माया मनः** ६. माया प्रधान सूक्ष्मशरीर की		**छन्दोमयम्**	११. नाम रूप में आसक्त ।
सृजति	७. रचना करती है	**यत्**	८. जो शरीर
कर्ममयम्	९. कर्ममय	**अजया अर्पित**	१३. अविद्या के द्वारा कल्पित
बलीयः	१०. बलवान् एवम्	**षोडशारम्**	१४. सोलह विकार रूप अरों से युक्त
कालेन	३. काल के द्वारा	**संसार चक्रम्**	१५. संसार चक्र को
चोदित	५. क्षोभ होने पर	**अज**	१२. हे अजन्मा !
गुण	४. गुणों में	**कः**	१७. कौन
अनुमतेन	२. अनुमति से	**अतितरेत्**	१८. पार कर सकता है
पुंसः ।	१. पुरुष की	**त्वत् अन्यः ॥**	१६. आप से भिन्न होकर

श्लोकार्थ—पुरुष की अनुमति से काल के द्वारा गुणों में क्षोभ होने पर माया प्रधान सूक्ष्म-शरीर की रचना करती है । जो शरीर कर्ममय बलवान् एवम् नाम रूप में आसक्त है । हे अजन्मा ! अविद्या के द्वारा कल्पित सोलह विकार रूप अरों से युक्त इस संसार चक्र को आपसे भिन्न होकर कौन पार कर सकता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

सत्वं हि नित्यविजितात्मगुणः स्वधाम्ना कालो वशीकृतविसृज्यविसर्गशक्तिः ।
चक्रे विसृष्टमजयेश्वर षोडशारे निष्पीड्यमानमुपकर्ष विभो प्रपन्नम् ॥२२॥

पदच्छेद—**सः त्वम् हि नित्यविजित आत्मगुणः स्वधाम्ना कालः वशीकृत विसृज्य विसर्गशक्तिः ।**
चक्रे विसृष्टम् अजय ईश्वर षोडशारे निष्पीड्यमानम् उपकर्ष विभो प्रपन्नम् ॥

शब्दार्थ—**सः त्वम्**	१. वे आप	**चक्रे**	१४. संसार चक्र में
हि	२. निश्चित रूप से	**विसृष्टम्**	१५. डाल कर
नित्यविजित	५. सदा के लिए जीत लिया है	**अजय**	१२. अविद्या के द्वारा
आत्मगुणः	४. अपने गुणों को	**ईश्वर**	१०. हे सर्वशक्तिमान्
स्वधाम्ना	३. अपने तेज से	**षोडशारे**	१३. सोलह अरों वाले
कालः	६. काल रूप से	**निष्पिड्यमानम्**	१६. पेरे जाते हुए मुझे
वशीकृत	९. वश में कर लिया है	**उपकर्ष**	१८. बाहर कर लीजिये
विसृज्य	७. साध्य	**विभो**	११. विभो !
विसर्गशक्तिः ।	८. साधन शक्ति को	**प्रपन्नम् ॥**	१७. शरणागत को

श्लोकार्थ—वे आप निश्चित रूप से अपने तेज से अपने गुणों को सदा के लिए जीत चुके हैं । काल रूप से साध्य साधन शक्ति को वश में कर लिया है । सर्वशक्तिमान् विभो ! अविद्या के द्वारा सोलह अरों वाले संसार चक्र में डाल कर पेरे जाते हुए मुझ शरणागत को बाहर कर लीजिये ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

दृष्टामयादिविविभोऽखिलधिष्ण्यपानामायुःश्रियोविभवइच्छतियाञ्जनोऽयम् ।
येऽस्मत्पितुःकुपितहासविजृम्भितभ्रू विस्फूर्जितेनलुलिताःसतुते निरस्तः ॥२३॥

पदच्छेद—दृष्टाः मया दिवि विभो अखिल धिष्ण्यपानाम् आयुः श्रियः विभवः इच्छति यान्जनः अयम् ।
ये अस्मत् पितुः कुपित हास विजृम्भितभ्रू विस्फूर्जितेन लुलिताः सः तु ते निरस्तः ॥

शब्दार्थ—					
दृष्टाः	८.	देख लिया	ये	११.	जो (लोकपालोंकी संपत्तियाँ)
मया	७.	मैं	अस्मत्	१२.	हमारे
दिवि	२.	स्वर्ग में मिलने वाली	पितुः	१३.	पिता के
विभो	१.	हे प्रभो !	कुपित	१४.	क्रुद्ध होकर
अखिल	३.	समस्त	हास	१५.	हँसने से और
धिष्ण्यपानाम्	४.	लोकपालों की	जृम्भितम्	१६.	टेढी करके भौंहों से
आयुः	५.	आयु	विस्फूर्जितेन	१७.	बोलने पर
श्रियः विभवः	६.	लक्ष्मी ऐश्वर्य को	लुलिताः	१८.	लुट जाती थीं
इच्छति	१०.	चाहते हैं (और)	सः तु	१९.	उस मेरे पिता को
यान्जनः अयम् ।	९.	जिन्हें लोग यह	ते निरस्तः ॥	२०.	आपने मार डाला

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! स्वर्ग में मिलने वाली समस्त लोकपालों की आयु, लक्ष्मी, ऐश्वर्य को मैंने देख लिया, जिन्हें यह लोग चाहते हैं । जो लोकपालों की सम्पत्तियां हमारे पिता के क्रुद्ध होकर हंसने से और भौंहें टेढ़ी करके बोलने पर लुट जाती थीं, उस मेरे पिता को आपने मार डाला ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तस्मादमूस्तनुभृतामहमाशिषो ज्ञआयुः श्रियं विभवमैन्द्रियमा विरिञ्चात् ।
नेच्छामि ते विलुलितानुरुविक्रमेण कालात्मनोपनय मां निजभृत्यपार्श्वम् ॥२४

पदच्छेद—तस्मात् अमूः तनु भृताम् अहम् आशिषः ज्ञः आयुः श्रियं विभवम् ऐन्द्रियम् आ विरिञ्चात् ।
न इच्छामि विलुलितान् उरु विक्रमेण काल आत्मना उपनय माम् निजभृत्य पार्श्वम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात् अमूः	१.	इसलिए इन	न इच्छामि	९.	नहीं चाहता हूँ (जो)
तनुभृताम्	२.	प्राणियों के	ते	११.	आपके द्वारा
अहम्	४.	मैं	विलुलिताम्	१३.	ग्रसे हुए हैं
आशिषः ज्ञः	३.	विषय भोग को जानने वाला	उरुविक्रमेण	१०.	महापराक्रमी
आयुः श्रियम्	६.	आयु लक्ष्मी	काल आत्मना	१२.	काल रूप से
विभवम्	७.	ऐश्वर्य और उस	उपनय	१६.	ले चलिये
ऐन्द्रियम्	८.	इन्द्रिय सुख को	माम् निजभृत्य	१४.	मुझे अपने दासों के
आ विरिञ्चात् ।	५.	ब्रह्मलोक तक की	पार्श्वम् ॥	१५.	पास

श्लोकार्थ—इसलिए इन प्राणियों के विषय भोग को जानने वाला मैं ब्रह्म लोक तक की आयु, लक्ष्मी, ऐश्वर्य और उस इन्द्रिय सुख को नहीं चाहता हूँ, जो महापराक्रमी आपके द्वारा काल रूप से ग्रसे हुये हैं । मुझे अपने दासों के पास ले चलिये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

कुत्राशिषः श्रुतिसुखा मृगतृष्णिरूपाः क्वेदं कलेवरमशेषरुजां विरोहः ।
निर्विद्यते न तु जनो यदपीति विद्वान् कामानलं मधुलवैः शमयन्दुरापैः ॥२५॥

पदच्छेद—कुत्र आशिषः श्रुति सुखाः मृग तृष्णि रूपाःक्वइदम् कलेवरम्अशेष रुजाम विरोहः ।
निर्विद्यते न तु जनः यदपि इति विद्वान् काम अनलम् मधुलवैः शमयन् दुरापैः ॥

शब्दार्थ—**कुत्र**	१. कहाँ	निर्विद्यते	१३. विरक्त (और)
आशिषः	५. विषय भोग की वातें (और)	न तु	१४. नहीं होते हैं और
श्रुति सुखाः	२. सुनने में सुख दायक	जनः	११. लोग इसे
मृग	३. मृग	यद्यपि	१०. यद्यपि
तृष्णिरूपाः	४. तृष्णारूपी	विद्वान्	१२. जानते हैं तो भी
क्वेदम्	६. कहाँ यह	काम अनलम्	१७. कामनारूपी अग्नि को
कलेवरम्	९. शरीर है	मधुलवैः	१६. मधु की बूंदों से
अशेष	७. समस्त	शमयन्	१८. शान्त करने की चेष्टा करते हैं
रुजाम् विरोहः ।	८. रोगों का उद्गम स्थान	दुरापैः ॥	१५ कठिनाइयों से प्राप्त करने योग्य

श्लोकार्थ—कहाँ सुनने में सुखदायक मृगतृष्णा रूपी विषय भोग की बातें और कहाँ समस्त रोगों का उद्गम स्थान यह शरीर है । यद्यपि लोग इसे जानते हैं तो भी विरक्त नहीं होते हैं । और कठिनाई से प्राप्त करने योग्य मधु की बूंदों से कामना रूपी अग्नि को शान्त करने की चेष्टा करते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

क्वाहं रजः प्रभव ईश तमोऽधिकेऽस्मिन् जातः सुरेतरकुले क्व तवानुकम्पा ।
न ब्रह्मणो न तु भवस्य न वै रमाया यन्मेऽर्पितः शिरसि पद्मकरः प्रसादः ॥२६॥

पदच्छेद—क्व अहम् रजः प्रभवः ईशः तमः अधिके अस्मिन् जातः सुरेतर कुले क्व तव अनुकम्पा ।
न ब्रह्मणः न तु भवस्य न वै रमायाः यत् मे अर्पितः शिरसि पद्मकरः प्रसादः ॥

शब्दार्थक्व अहम् रजः	२. कहाँ मैं रजो गुण से	न ब्रह्मणः	१६. न ब्रह्मा को
प्रभवः	३. उत्पन्न	न तु	१७. न
ईशः	१. हे प्रभो !	भवस्य	१८. शंकर को (और)
तमः	५. तमोगुण वाले	न वै	१९. न
अधिके	४. अधिक	रमायाः	२०. लक्ष्मी को प्राप्त हुआ है
अस्मिन्	६. इस	यत् मे	११. जो मेरे
जातः	८. उत्पन्न हुआ हूँ और	अर्पितः	१५. रखा है (वह)
सुरेतरकुले	७. दैत्य कुल में	शिरसि	१२. सिर पर
क्व तव	९. कहाँ आपकी	पद्मकरः	१४. कर कमल
अनुकम्पा ।	१० कृपा (आपने)	प्रसादः ॥	१३. प्रसाद स्वरूप

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! कहाँ मैं रजोगुण से उत्पन्न अधिक तमोगुण वाले इस दैत्य कुल में उत्पन्न हुआ हूँ । और कहाँ आपकी कृपा ! आपने मेरे जो मेरे सिर पर प्रसाद स्वरूप अपना कर कमल रखा है, वह न ब्रह्मा को, न शंकर को और न लक्ष्मी को ही प्राप्त हुआ है ।

सप्तविंशः श्लोकः

नैषा परावरमतिर्भवतो ननु स्याज्जन्तोर्यथाऽऽत्मसुहृदो जगतस्तथापि ।
संसेवया सुरतरोरिव ते प्रसादः सेवानुरूपमुदयो न परावरत्वम् ॥२७॥

पदच्छेद—न एषा परावर मतिः भवतः ननु स्यात् जन्तोः यथा आत्म सुहृदः जगतः तथापि ।
संसेवया सुरतरोः इव ते प्रसादः सेवा अनुरूपम् उदयः न परावर त्वम् ॥

शब्दार्थ—न एषा	६.	नहीं	संसेवया	१३.	सेवा करने से
परावर	३.	छोटे बड़ों का	सुरतरोः	११.	कल्प वृक्ष के
मतिः	५.	भेद-भाव	इव	१२.	समान
भवतः	२.	आप में	ते प्रसादः	१४.	आप का प्रसाद प्राप्त होता है
ननु	४.	निश्चित रूप से यह	सेवा	१५.	सेवा के
स्यात्	७.	है (आप)	अनुरूपम्	१६.	अनुसार ही (आपकी) कृपा का
जन्तोः यथा	१.	जीवों के समान	उदयः	१७.	उदय (होता है) उसमें
आत्म सुहृदः	९.	आत्मा और मित्र है	न	२०.	नहीं है
जगतः	८.	संसार की	परावर	१८.	ऊँचा नीचा होना
तथापि ।	१०.	तो भी	त्वम् ॥	१९.	यह कारण

श्लोकार्थ—जीवों के समान आप में छोटे बड़ों का निश्चित रूप से यह भेद-भाव नहीं है । आप संसार की आत्मा और मित्र है । तो भी कल्प वृक्ष के समान सेवा करने से आपका प्रसाद प्राप्त होता है । सेवा के अनुसार ही आपकी कृपा का उदय होता है । उसमें ऊँचा नीचा होना यह कारण नहीं है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

एवं जनं निपतितं प्रभवाहिकूपे कामाभिकाममनु यः प्रपतन्प्रसङ्गात् ।
कृत्वाऽऽत्मसात्सुरर्षिणा भगवन् गृहीतः सोऽहं कथं नु विसृजे तव भृत्यसेवाम् ॥२८॥

पदच्छेद—एवम् जनम् निपतितम् प्रभव अहि कूपे कामअभिकामम् अनु यः प्रपतन् प्रसङ्गात् ।
कृत्वा आत्मसात् सुर ऋषिणा भगवन् गृहीतः सः अहम् कथम् नु विसृजे तव भृत्य सेवाम् ॥

शब्दार्थ— एवम्	२.	इस प्रकार	कृत्वा	१३.	करके
जनम्	६.	पुरुष के	आत्मसात्	१२.	अपना बना
निपतितम्	४.	गिरे हुए	सुरऋषिणा	११.	देवर्षि नारद ने
प्रभव अहिकूपे	३.	संसार रूपी अन्धेरे कुयें में	भगवन्	१.	हे भगवान् !
कामअभिकामम्	५.	विषय भोग की इच्छा वाले	गृहीतः स अहम्	१४.	बचा लिया सो मैं भला
अनु	७.	पीछे	कथम्	१५.	कैसे
यः	९.	जो मैं	नु विसृजे	१८.	छोड़ सकता हूँ।
प्रपतन्	१०.	गिर रहा था (उसे)	तव भृत्य	१६.	आपके दास की
प्रसङ्गात् ।	८.	सङ्ग के कारण	सेवाम् ॥	१७.	सेवा को

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! इस प्रकार संसार रूपी अन्धेरे कुयें में गिरे हुये, विषय भोग की इच्छा वाले पुरुष के पीछे सङ्ग के कारण जो मैं गिर रहा था उसे देवर्षि नारद ने अपना बना करके बचा लिया । सो मैं भला कैसे आपके दास की सेवा को छोड़ सकता हूँ ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मत्प्राणरक्षणमनन्त पितुर्वधश्च मन्ये स्वभृत्यऋषिवाक्यमृतं विधातुम् ।
खड्गं प्रगृह्य यदवोचदसद्विधित्सुस्त्वामीश्वरो मदपरोऽवतु कं हरामि ॥२९॥

पदच्छेद—मत् प्राण रक्षणम् अनन्त पितुः वधः च मन्ये स्वभृत्य ऋषि वाक्यम् ऋतम् विधातुम् ।
खड्गम् प्रगृह्य यत् अवोचत् असद्विधित्सुः त्वाम् ईश्वरः मद् अपरः अवतु कम् हरामि ॥

शब्दार्थ—					
मत् प्राण	१४.	मेरे प्राणों की	खड्गम्	२.	तलवार
रक्षणम्	१५.	रक्षा की	प्रगृह्य	३.	लेकर
अनन्त	१०	हे अनन्त भगवान् ! मैं	यत्	४.	जो
पितुः वधः	१७.	पिता का वध किया	अवोचत्	५.	कहा था कि
च	१६.	और मेरे	असद्विधित्सुः	१.	अन्याय करने के इच्छुक दैत्य ने
मन्ये स्वभृत्य	११.	मानता हूँ कि अपने दास	त्वाम्	७.	तुम्हें
ऋषिवाक्यम्	११.	ऋषि के वाक्य को सत्य	ईश्वरः मद् अपरः	६.	ईश्वर से भिन्न कोई हो तो
विधातुम् ।	१३.	करने के लिए आपने	अवतु	८.	बचा ले मैं तेरा
			कम् हरामि ॥	९.	सिर काट रहा हूँ (तब)

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अन्याय करने के इच्छुक दैत्य ने तलवार लेकर जो कहा था कि मुझसे भिन्न कोई ईश्वर हो तो तुम्हें बचा ले मैं तेरा सिर काट रहा हूँ । तब हे अनन्त भगवान् ! मैं मानता हूँ कि अपने दास ऋषि के वाक्य को सत्य करने के लिए आपने मेरे प्राणों की रक्षा की और मेरे पिता का वध किया ॥

त्रिंशः श्लोकः

एकस्त्वमेव जगदेतदमुष्य यत् त्वमाद्यन्तयोः पृथगवस्यसि मध्यतश्च ।
सृष्ट्वा गुणव्यतिकरं निजमाययेदं नानेव तैरवसितस्तदनुप्रविष्टः ॥३०॥

पदच्छेद—एकः त्वम् जगत् एतद् अमुष्य यत् त्वम् आद्यन्तयोः पृथक् अवस्यसि मध्यतः च ।
सृष्ट्वा गुण व्यतिकरम् निज मायया इदम् नाना इव तैः अवसितः तत् अनुप्रविष्टः ॥

शब्दार्थ—					
एकः त्वम् एव	३.	एकमात्र आप ही हैं	सृष्ट्वा	१३.	सृष्टि कर के
जगत्	२.	संसार	गुण व्यतिकरम्	११.	गुणों के परिणाम स्वरूप
एतद्	१.	यह	निज मायया	१०.	अपनी माया के
अमुष्य यत्	४.	इस संसार के	इदम्	१२.	इस जगत् की
त्वम्	८.	जो आप	नाना	१६.	अनेक के
आद्यन्तयोः	५.	आदि अन्त	इव तैः	१७.	समान प्रतीत हो रहे हैं
पृथक्	७.	अलग-अलग रूप से	अवसितः	१५.	उन गुणों से
अवस्यसि	९.	रहते हैं (वही आप)	तत्	१६.	युक्त
मध्यतः च ।	६.	और मध्य में	अनुप्रविष्टः ॥	१४.	उसमें प्रविष्ट होकर

श्लोकार्थ—यह संसार एकमात्र आप ही हैं । इस संसार के आदि, अन्त और मध्य में अलग-अलग रूप से जो आप रहते हैं वही आप अपनी माया के गुणों के परिणाम स्वरूप इस जगत् की सृष्टि करके उसमें प्रविष्ट होकर उन गुणों से युक्त अनेक के समान प्रतीत हो रहे हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

त्वं वा इदं सदसदीश भवांस्ततोऽन्यो माया यदात्मपरबुद्धिरियं ह्यपार्था ।
यद् यस्य जन्म निधनं स्थितिरीक्षणं च तद् वै तदेव वसुकालवदष्टितर्वोः ॥३१॥

पदच्छेद त्वम् वै इदम् सत्-असत् ईश भवान् ततः अन्यः माया यत् आत्मपरबुद्धिः इयम् हि अपार्था ।
यत् यस्य जन्म निधनम् स्थितिः ईक्षणम् च तत् वै तत् एव वसु कालवत् अष्टितर्वोः ॥

शब्दार्थ त्वम्	४.	आपही हैं	इयम्	९.	वह निश्चित ही
वैंइदम्	३.	निश्चितरूप से यह	अपार्थाः ।	१०.	अर्थ-हीन
सत्-असत्	२.	कार्य-कारण रूप में	यत्यस्यजन्म	१२.	जिससे जिसका जन्म
ईश	१.	हे प्रभो !	निधनम्स्थितिः	१३.	मरण-स्थिति
भवान्	६.	आपही हैं	ईक्षणम् च	१४.	और प्रकाश होता है
ततः अन्यः	५.	उससे भिन्न भी	तत् वै	१५.	वही
माया	११.	माया है ।	तत्-एव	१६.	उसका स्वरूप होता है
यत् आत्म	७.	जो अपने	वसु-कालवत्	१७.	कार्य-कारण के समान
परबुद्धिः	८.	पराये का भेदभाव है	अष्टितर्वोः	१८.	बीज और वृक्ष आप ही हैं

श्लोकार्थः—हे प्रभो ! ये कार्य-कारण रूप में निश्चित रूप से आपही हैं। उससे भिन्न भी आपही हैं। जो अपने पराये का भेद-भाव है वह निश्चित ही अर्थ हीन माया है। जिससे जिसका जन्म, मरण, स्थिति और प्रकाश होता है वही उसका स्वरूप होता है। बीज और वृक्ष कार्य-कारण के समान आप ही हैं।

द्वात्रिंशः श्लोकः

न्यस्येदमात्मनि जगद् विलयाम्बुमध्ये शेषेऽऽत्मना निजसुखानुभवो निरीहः ।
योगेन मीलितदृगात्मनिपीतनिद्रस्तुर्ये स्थितो न तु तमो न गुणांश्च युङ्क्षे॥३२॥

पदच्छेद—न्यस्य इदम् आत्मनि जगत् विलय अम्बुमध्ये शेषे आत्मना निजसुख अनुभवः निरीहः ।
योगेन मीलितदृक् आत्मनिपीत निद्रः तुर्ये स्थितः नतु तमः न गुणान् युङ्क्षे ॥

शब्दार्थ - न्यस्य	४.	समेटकर	योगेन	१०.	योग के द्वारा
इदम्	१.	हे भगवन् ! आप इस	मीलितदृक्	११.	आँखें मूँदकर
आत्मनि	३.	अपने में	आत्मनि	१३.	अपने में
जगत्	२.	संसार को	पीत	१४.	विलीनकरके
विलय	५.	प्रलय कालीन	निद्रः	१२.	निद्रा को
अम्बुमध्ये	६.	जल के भीतर	तुर्येस्थितः	१५.	ब्रह्मपद में स्थित रहते हैं ।
शेषे	९.	होकर शयन करते हैं (और)	नतुतमः	१६.	उस समय आप न तो तमोगुणको
आत्मनानिजसुख	७.	अपने से अपने सुख का	न गुणान् च	१७.	न विषय भोग को ही
अनुभवः निरीहः	८	अनुभव करते हुए निष्क्रिय	युङ्क्षे	१८.	स्वीकार करते हैं ।

श्लोकार्थः—हे भगवान ! आप इस संसार को अपने में समेट कर प्रलयकालीन जल के भीतर अपने से अपने सुख का अनुभव करते हुये निष्क्रिय होकर शयन करते हैं। और योग के द्वारा आँखें मूँदकर निद्रा को अपने में विलीन करके ब्रह्मपद में स्थित रहते हैं। उस समय आप न तो तमोगुण को न विषय भोग को ही स्वीकार करते हैं।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तस्यैव ते वपुरिदं निजकालशक्त्या सञ्चोदितप्रकृतिधर्मण आत्मगूढम् ।
अम्भस्यनन्तशयनाद् विरमत्समाधेर्नाभेरभूत् स्वकणिकावटवन्महाब्जम् ॥३३॥

पदच्छेद—तस्य एव ते वपुः इदम् निज काल शक्त्या सञ्चोदित प्रकृति धर्मणः आत्म गूढम् ।
अम्भसि अनन्त शयनात् विरमत् समाधेः नाभेः अभूत् स्व कणिकावटवत् महा अब्जम् ॥

शब्दार्थ—तस्य	७.	उन	अम्भसि	१२.	जल में
एव	९.	ही	अनन्त	११.	हे अनन्त !
ते	८.	आपका	शयनात्	१३.	शयन करने से
वपुः	१०.	शरीर है	विरमत्	१५.	त्यागने वाले (आपकी)
इदम्	६.	ये (ब्रह्माण्ड)	समाधेः	१४.	समाधि को
निज काल	१.	अपनी काल	नाभेः	१६.	नाभि से
शक्त्या	२.	शक्ति से	अभूत्	२०.	उत्पन्न हुआ
सञ्चोदित	४.	प्रेरित करने वाले	स्व	१७.	अपने
प्रकृतिधर्मणः	३.	प्रकृति के गुणों को	कणिकावट	१८.	बीज से वट वृक्ष के
आत्मगूढम्	५.	आप में छिपे हुए	वत् महा अब्जम् ॥	१९.	समान महान् (ब्रह्माण्डरूप) कमल

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अपनी काल शक्ति से प्रकृति के गुणों को प्रेरित करने वाले आप में छिपे हुए यह ब्रह्माण्ड उन आपका ही शरीर है । हे अनन्त ! जल में शयन करने से समाधि को त्यागने वाले आपकी नाभि से अपने बीज से वट वृक्ष के समान महान् ब्रह्माण्ड रूप कमल उत्पन्न हुआ ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तत्सम्भवः कविरतोऽन्यदपश्यमानस्त्वां बीजमात्मनि ततं स्वबहिर्विचिन्त्य ।
नाविन्ददब्दशतमप्सु निमज्जमानो जातेऽङ्कुरे कथमु होपलभेत बीजम् ॥३४॥

पदच्छेद—तत सम्भवः कविः अतः अन्यत् अपश्यमानः त्वाम् बीजम् आत्मनि ततम् स्वबहिः विचिन्त्य ।
न अविन्दत् अब्दशतम् अप्सु निमज्जमानः जाते अङ्कुरे कथमु ह उपलभेत बीजम् ॥

शब्दार्थ—तत्	१.	उससे	न अविन्दत्	१३.	नहीं पाया
सम्भवः	३.	उत्पन्न हुए	अब्दशतम्	१०.	सौ वर्षों तक
कविः	२.	सूक्ष्मदर्शी ब्रह्मा	अप्सु	११.	जल में
अतः अन्यत्	४.	उससे भिन्न	निमज्जमानः	१२.	डूबते हुए भी
अपश्यमानः	५.	न देखते हुए	जाते	१५.	उत्पन्न हो जाने पर
त्वाम् बीजम्	६.	आपको बीज रूप से	अङ्कुरे	१४.	अङ्कुर के
आत्मनि ततम्	७.	अपने में व्याप्त	कथमु ह	१६.	कैसे (कोई)
स्वबहिः	८.	अपने से बाहर	उपलभेत	१८.	प्राप्त कर सकता है
विचिन्त्य ।	९.	समझ कर	बीजम् ॥	१७.	बीज को

श्लोकार्थ—उससे सूक्ष्मदर्शी ब्रह्मा उत्पन्न हुए । उससे भिन्न न देखते हुए आपको बीज रूप से अपने में व्याप्त और अपने से बाहर समझकर सौ वर्षों तक जल में डूबते हुए भी नहीं पाया । अङ्कुर के उत्पन्न हो जाने पर कैसे कोई बीज को प्राप्त कर सकता है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

स त्वात्मयोनिरतिविस्मित आस्थितोऽब्जं कालेन तीव्रतपसा परिशुद्धभावः।
त्वामात्मनीश भुवि गन्धमिवातिसूक्ष्मं भूतेन्द्रियाशयमये विततं ददर्श ॥३५॥

पदच्छेद – स तु आत्मयोनिः अति विस्मितः आस्थितः अब्जम् कालेन तीव्र तपसा परिशुद्ध भावः।
त्वाम् आत्मनि ईश भुवि गन्धम् इव अति सूक्ष्मम् भूत इन्द्रिय आशय मये विततम् ददर्श ॥

शब्दार्थ—

सः तु आत्मयोनिः	१. वे ब्रह्मा	त्वम्	१७. आपको
अति विस्मितः	२. अत्यन्त आश्चर्य चकित होकर	आत्मनि	१५. अपने शरीर में
आस्थितः	४. बैठ गये	ईश भुवि	१०. हे प्रभो ! पृथ्वी से व्याप्त
अब्जम्	३. कमल पर	गन्धम्इव	११. गन्ध के समान
कालेन	५. समय बीतने पर	अतिसूक्ष्मम्	१२. अत्यन्त सूक्ष्म रूप से
तीव्र	६. तीव्र	भूत इन्द्रिय	१३. पञ्चभूत इन्द्रिय और
तपसा	७. तपस्या करने से उनका	आशयमये	१४. अन्तःकरण रूप
परिशुद्ध	९. अत्यन्त शुद्ध हो गया	विततम्	१६. व्याप्त
भावः।	८. हृदय	ददर्श ॥	१८. देखा

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा अत्यन्त आश्चर्य चकित होकर कमल पर बैठ गये। समय बीतने पर तीव्र तपस्या करने से उनका हृदय अत्यन्त शुद्ध हो गया। हे प्रभो ! पृथ्वी में व्याप्त गन्ध के समान पञ्चभूत इन्द्रिय और अन्तःकरण रूप अपने शरीर में अत्यन्त सूक्ष्म रूप से व्याप्त आपको देखा ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एवं सहस्रवदनाङ्घ्रिशिरःकरोरुनासास्यकर्णनयनाभरणायुधाढ्यम्।
मायामयं सदुपलक्षितसन्निवेशं दृष्ट्वा महापुरुषमाप मुदं विरिञ्चः ॥३६॥

पदच्छेद—एवम् सहस्र वदन अङ्घ्रि शिरः करोरुनासा आस्यकर्णनयन आभरण आयुध आढ्यम्।
माया मयम् सद् उपलक्षित सन्निवेशम् दृष्ट्वा महापुरुषम् आप मुदम् विरिञ्चः ॥

शब्दार्थ—

एवम् सहस्र	१. इस प्रकार हजारों	माया मयम्	१० मायामय
वदन अङ्घ्रि	२. मुख, चरण	सद्	११. भली भाँति
शिरः करोरु	३. सिर, हाथ, जंघा	उपलक्षित	१२. दिखाई देने वाले
नासा	४. नासिका	सन्निवेशम्	१३. अङ्गों से युक्त
आस्य कर्ण	५. मुख, कान	दृष्ट्वा	१६. देखकर
नयन	६. नेत्र	महा	१४. महान्
आभरण	७. आभूषण और	पुरुषम्आप	१५. विराट् को प्राप्त किया
आयुध	८. अस्त्रशस्त्रों से	मुदम्	१८. हर्ष को
आढ्यम्।	९. सम्पन्न	विरिञ्चः ॥	१७. ब्रह्मा ने

श्लोकार्थ—इस प्रकार हजारों मुख, चरण, सिर, हाथ, जंघा, नासिका, मुख, कान, नेत्र, आभूषण और अस्त्र-शस्त्रों से सम्पन्न मायामय भली भाँति दिखाई देने वाले अङ्गों से युक्त महान् विराट् को देखकर ब्रह्मा ने हर्ष को प्राप्त किया ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तस्मै भवान्हयशिरस्तनुवं च बिभ्रद् वेदद्रुहावतिबलौ मधुकैटभाख्यौ।
हत्वाऽऽनयच्छ्रुतिगणांस्तु रजस्तमश्च सत्त्वं तव प्रियतमां तनुमामनन्ति ॥३७

पदच्छेद—तस्मै भवान् हयशिरः तनुवम् च बिभ्रद् वेद द्रुहौ अति बलौ मधुकैटभआख्यौ।
हत्वा आनयत् श्रुति गणान् तु रजः तमः च सत्त्वम् तव प्रियतमाम् तनुम् आमनन्ति ॥

शब्दार्थ—

तस्मै भवान्	१.	उन ब्रह्मा के लिए आप	हत्वा	१३.	मारकर
हयशिरः तनुम्	२.	हयग्रीव का शरीर	आनयत्	१५.	ले आये
च बिभ्रद्	३.	धारण करके	श्रुति गणान्तु	१४.	वेद समूह को
वेद	४.	वेदों का	रजः	१०.	रजोगुण
द्रुहौ	५.	चुराने वाले	तमः	१२.	तमोगुण रूपी
अति	६.	अत्यन्त	च	११.	और
बलौ	७.	बलवान्	सत्त्वम्	१७.	सत्त्वगुण रूपी
मधु	८.	मधु और	तव प्रियतमाम्	१६.	आपके अत्यन्त प्रिय
कैटभाख्यौ।	९.	कैटभ नामक (असुरों को)	तनुम् आमनन्ति	१८.	विद्वान् लोग शरीर का वर्णन करते हैं

श्लोकार्थ—उन ब्रह्मा के लिए आप हयग्रीव का शरीर धारण करके वेदों को चुराने वाले अत्यन्त बलवान् रजोगुण और तमोगुणरूपी मधु और कैटभ नामक असुरों को मारकर वेद-समूह को ले आये। आपके अत्यन्तप्रिय सत्त्वगुण रूपी शरीर का विद्वान् लोग वर्णन करते हैं।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

इत्थं नृतिर्यगृषिदेवझषावतारैर्लोकान् विभावयसि हंसि जगत्प्रतीपान्।
धर्मं महापुरुष पासि युगानुवृत्तं छन्नः कलौ यदभवस्त्रियुगोऽथ स त्वम् ॥३८॥

पदच्छेद—इत्थम् नृतिर्यक् ऋषिदेवझष अवतारैः लोकान् विभावयसि हंसि जगत् प्रतीपान्।
धर्मम् महापुरुष पासि युग अनुवृत्तम् छन्नः कलौ यद् अभवः त्रियुगः अथ स त्वम् ॥

शब्दार्थ—इत्थम्	१.	इस प्रकार	धर्मम्	१२.	धर्म की
नृतिर्यक्	२.	मनुष्य पशु पक्षी	महापुरुष	१०.	हे महापुरुष ! आप
ऋषिदेव	३.	ऋषि-देवता	पासि	१३.	रक्षा करते हैं और
झषअवतारैः	४.	मत्स्य अवतार लेकर	युग अनुवृत्तम्	११.	युग के अनुसार
लोकान्	५.	लोकों का	छन्नः	१५.	छिपकर रहते हैं
विभावयसि	६.	पालन करते हैं और	कलौ	१४.	कलियुग में
हंसि	९.	संहार करते हैं	यद्	१६.	इसलिए
जगत्	७.	संसार के	अभवः	१९.	कहलाये
प्रतीपान्।	८.	द्रोहियों का	त्रियुगः	१८.	त्रियुग नाम से
			अथ सत्वम्	१७.	बाद में आप

श्लोकार्थ—इस प्रकार मनुष्य, पशु, ऋषि, देवता और मत्स्य का अवतार लेकर लोंको का पालन करते हैं और संसार के द्रोहियों का संहार करते हैं। हे महापुरुष ! आप युग के अनुसार धर्म की रक्षा करते हैं और कलियुग में छिपकर रहते हैं। इसलिए बाद में आप त्रियुग नाम से कहलाये।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

नैतन्मनस्तव कथासु विकुण्ठनाथ सम्प्रीयते दुरितदुष्टमसाधु तीव्रम् ।
कामातुरं हर्षशोकभयैषणार्तं तस्मिन्कथं तव गतिं विमृशामि दीनः ॥३९॥

पदच्छेद—न एतत् मनः तव कथासु विकुण्ठनाथ सम्प्रीयते दुरित दुष्टम् असाधु तीव्रम् ।
काम आतुरम् हर्ष शोक भय एषणाआर्तम् तस्मिन् कथम् तव गतिम् विमृशामि दीनः ॥

शब्दार्थ—न	१२.	नहीं	काम आतुर	६.	कामनाओं से आतुर
एतत् मनः	९.	यह (मेरा) मन	हर्ष शोक भय	७.	हर्ष शोक भय और
तव कथासु	११.	आपकी कथाओं से	एषणार्तम्	८.	इच्छाओं से व्याकुल
विकुण्ठनाथ	१.	हे वैकुण्ठनाथ !	तस्मिन्	१४.	उसके अप्रसन्न रहने पर
सम्प्रीयते	१३.	प्रसन्न होता है	कथम्	१८.	कैसे
दुरित	२.	पाप से	तव	१६.	आपके
दुष्टम्	३.	दुष्ट	गतिम्	१७.	स्वरूप का
असाधु	४.	कलुषित	विमृशामि	१९.	चिन्तन करूँ
तीव्रम् ।	५.	तीक्ष्ण	दीनः ॥	१५.	दुखिया मैं

श्लोकार्थ—हे वैकुण्ठनाथ ! पाप से दुष्ट कलुषित, तीक्ष्ण कामनाओं से आतुर, हर्ष शोक भय और इच्छाओं से व्याकुल यह मेरा मन आपकी कथाओं से प्रसन्न नहीं होता है। उसके अप्रसन्न रहने पर दुखिया मैं आपके स्वरूप का कैसे चिन्तन करूँ।

चत्वारिंशः श्लोकः

जिह्वैकतोऽच्युत विकर्षति मावितृप्ता शिश्नोऽन्यतस्त्वगुदरं श्रवणं कुतश्चित् ।
घ्राणोऽन्यतश्चपलदृक् क्व च कर्मशक्तिर्बह्व्यः सपत्न्य इव गेहपतिं लुनन्ति ॥४०॥

पदच्छेद—जिह्वा एकतः अच्युत विकर्षति मा अवितृप्ता शिश्नः अन्यतः त्वक् उदरम् श्रवणम् कुतश्चित् ।
घ्राणः अन्यतः चपल दृक् क्व च कर्मशक्तिः बह्व्यः सपत्न्यः इव गेहपतिं लुनन्ति ॥

शब्दार्थ—

जिह्वा एकतः	३.	जिह्वा एक ओर	घ्राणः अन्यतः	११.	नाक दूसरी ओर
अच्युत	१.	हे अच्युत !	चपल दृक्	१२.	चञ्चल दृष्टि
विकर्षति	५.	खींचती रहती है	क्व	१५.	कहीं और खींचती है।
मा	४.	मुझे	च	१३.	और
अवितृप्ता	२.	कभी तृप्त न होने वाली	कर्मशक्तिः	१४.	कर्म करने वाली शक्ति
शिश्नः	६.	जननेन्द्रिय	बह्व्यः	१७.	बहुत सी कर्मेन्द्रियाँ
अन्यतः	७	दूसरी ओर	सपत्न्यः	१८.	पत्नियाँ
त्वक्उदरम्	८.	त्वचा, पेट	इव	१६.	जैसे
श्रवणम्	९.	कान	गेहपतिम्	१९.	घर के स्वामी को अपनी अपनी ओर
कुतश्चित्	१०.	कहीं और	लुनन्ति ॥	२०.	खींचती हैं।

श्लोकार्थ—हे अच्युत ! कभी तृप्त न होने वाली जिह्वा एक ओर मुझे खींचती है। जननेन्द्रिय दूसरी। ओर त्वचा पेट, कान कहीं और। चञ्चल दृष्टि और कर्म करने वाली शक्ति (कर्मेन्द्रिय) कही और खीचती है। जैसे बहुत सी पत्नियाँ घर के स्वामी को अपनी ओर खीचती है।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

एवं स्वकर्मपतितं भववैतरण्यामन्योन्यजन्ममरणाशनभीतभीतम् ।
पश्यञ्जनं स्वपरविग्रहवैरमैत्रं हन्तेति पारचर पीपृहि मूढमद्य ॥ ४१ ॥

पदच्छेद—**एवम् स्वकर्मपतितम् भव वैतरण्याम् अन्योन्य जन्म मरण अशन भीतभीतम् ।**
पश्यन् जनम् स्वपर विग्रह वैर मैत्रम् हन्त इति पारचर पीपृहि मूढम् अद्य ।।

शब्दार्थ—**एवम्**	१.	इस प्रकार	**पश्यन्**	१६.	देखकर
स्वकर्म	२.	अपने कर्मों के बन्धन में	**जनम्**	१४.	जीव की
पतितम्	३.	पड़े हुए	**स्वपर**	१०.	अपना और पराया इस प्रकार के
भव	४.	संसार रूप	**विग्रहः**	११.	भेदभाव के कारण
वैतरण्याम्	५.	वैतरणी में	**वैरमैत्रम्**	१२.	शत्रुता और मित्रता करने वाले इस
अन्योन्य	६.	परस्पर	**हन्तइति**	१५.	दुर्दशा
जन्म	७.	जन्म	**पारचर**	१७.	इस भव नदी से पार रहने वाले
मरण अशन	८.	मृत्यु और कर्म भोग के	**पीपृहि**	१६.	पार लगा दीजिए (भगवान्)
भीतभीतम्	६.	भय से डरे हुए	**मूढम्**	१३.	मूढ
			अद्य ।।	१८.	आज

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने कर्मों के बन्धन में पड़े हुए संसार रूप वैतरणो में परस्पर जन्म मृत्यु और कर्मभोग के भय से डरते हुए अपना और पराया इस प्रकार के भेदभाव के कारण शत्रुता और मित्रता करने वाले इस जीव की दुर्दशा देखकर इम भव नदी से पार रहने वाले भगवान् आज पार लगा दीजिये ।।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

को न्वत्र तेऽखिलगुरो भगवन्प्रयास उत्तारणेऽस्य भवसम्भवलोपहेतोः ।
मूढेषु वै महदनुग्रह आर्तबन्धो किं तेन ते प्रियजनाननुसेवतां नः ॥ ४२ ॥

पदच्छेद –**कः नु अत्र अखिलगुरो भगवन् प्रयासः उत्तारणे अस्य भवसंभव लोप हेतोः ।**
मूढेषु वै महत् अनुग्रहः आर्तबन्धो किम् तेन ते प्रिय जनान् अनुसेवताम् नः ।।

शब्दार्थ—**कः नु**	८.	क्या	**मूढेषु वै**	१०.	मूढ जनों के प्रति निश्चित रूप से
अत्र ते	६.	यहाँ आपको	**महत् अनुग्रहः**	११.	महापुरुषों की कृपा होती है
अखिल गुरो	२.	सबके गुरु	**आर्तबन्धो**	१२.	हे दीनबन्धो !
भगवन्	१.	हे भगवन् !	**किम् तेन**	१७.	उससे क्या लेना है
प्रयासः	६.	कष्ट है	**ते प्रिय**	१३.	आपके प्रिय
तारणे	७.	पार लगाने में	**जनान्**	१४.	जनों की
अस्य भव	३.	संसार की उत्पत्ति	**अनुसेवताम्**	१५.	सेवा करते हुए
सम्भवलोप	४.	स्थिति (और) संहार	**नः ।।**	१६.	हमें
हेतोः ।	५.	करने वाले			

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! सबके गुरु ! संसार की उत्पत्ति, स्थिति और संहार करने वाले आपको यहाँ पार लगाने में क्या कष्ट है ? मूढ जनों के प्रति निश्चित रूप से महापुरुषों की कृपा होती है । दीनबन्धो ! आपके प्रियजनों की सेवा करते हुए हमें उससे क्या लेना है ? ।।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नैवोद्विजे पर दुरत्ययवैतरण्यास्त्वद्वीर्यगायनमहामृतमग्नचित्तः ।
शोचे ततो विमुखचेतस इन्द्रियार्थमायासुखाय भरमुद्वहतो विमूढान् ॥ ४३ ॥

पदच्छेद न एव उद्विजे पर दुरत्यय वैतरण्याः त्वद्वीर्यगायन महाअमृत मग्न चित्तः ।
शोचे ततः विमुख चेतसः इन्द्रिय अर्थ माया सुखाय भरम् उद्वहतः विमूढान् ॥

शब्दार्थ—

न एवउद्विजे	९. नहीं घबराता हूँ	शोचे	१८. शोक करता हूँ
पर	१. हे परमात्मन् !	ततः विमुख	१०. उससे विमुख
दुरत्यय	७. कठिनाई से पार करने योग्य	चेतसः इन्द्रिय	११. चित वाले इन्द्रियों के
वैतरण्याः	८. वैतरणी नदी से	अर्थ	१२. विषयों का
त्वद्वीर्य	२. आपके पराक्रम के	माया	१३. माया मय (मिथ्या)
गायन	३. गान रूपी	सुखाय	१४. सुख पाने के लिए
महाअमृत	४. परम अमृत पीने से	भरम्	१५. भार
मग्न	५. मग्न	उद्वहतः	१६. ढोते हुए
चित्तः ।	६. हृदय वाला (मैं)	विमूढान् ॥	१७. मूर्खों के लिए

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! आपके पराक्रम के गान रूपी परम अमृत पीने से मग्न हृदय वाला मैं कठिनाई मे पार करने योग्य वैतरणी नदी से नहीं घबराता हूँ । उससे विमुख चित्त वाले इन्द्रियों के विषयों का मायामय मिथ्या सुख पाने के लिए भार ढोते हुए मूर्खों के लिए शोक कर रहा हूँ ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्रायेण देवमुनयः स्वविमुक्तिकामा मौनं चरन्ति विजने न परार्थनिष्ठाः ।
नैतान्विहाय कृपणान्विमुमुक्ष एको नान्यं त्वदस्य शरणं भ्रमतोऽनुपश्ये ॥४४॥

पदच्छेद—प्रायेण देवमुनयःस्वविमुक्तकामाः मौनम् चरन्ति विजनेन परार्थ निष्ठाः ।
न एतान् विहाय कृपणान् विमुमुक्षः एकः न अन्यम् त्वद् अस्य शरणम् भ्रमतः अनुपश्ये ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	२. प्रायः	न	१३. नहीं हूँ
देव	१. हे स्वामी !	एतानि	१०. उन
मुनयः	५. मुनि लोग	विहाय कृपणान	११. कृपणों को छोड़कर
स्वविमुक्ति	३. अपनी मुक्ति को	विमुमुक्षः एकः	१२. अकेला मैं मोक्ष का इच्छुक
कामाः	४. चाहने वाले	न अन्यम्	१६. नहीं भिन्त दूसरे
मौनम् चरन्ति	७. मौनव्रत धारण कर लेते हैं	त्वद् अस्य	१५. आप से इस संसार में
विजने	६. निर्जन वन में	शरणम्	१४. रक्षक को
न	९. नहीं करते है	भ्रमतः	१४. भटकते हुए (इस संसार में) के लिए
परार्थनिष्ठाः	८. दूसरों की भलाई के लिए	अनुपश्ये ॥	१७. देखना हूँ

श्लोकार्थ हे स्वामी ! प्रायः अपनी मुक्ति को चाहने वाले मुनि लोग निर्जन वन में मौनव्रत धारण कर लेते है दूसरे की भलाई के लिए नही करते है । उन कृपणों को छोड़कर अकेला मैं मोक्ष का इच्छुक नहीं हूँ । (इस संसार में) भटकते हुए के लिए आपसे भिन्न दूसरे रक्षक को नहीं देखता हूँ ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यन्मैथुनादि गृहमेधिसुखं हि तुच्छं कण्डूयनेन करयोरिव दुःखदुःखम् ।
तृप्यन्ति नेह कृपणा बहुदुःखभाजः कण्डूतिवन्मनसिजं विषहेत धीरः ॥४५॥

पदच्छेद यत् मैथुन आदि गृहमेधि सुखम् हि तुच्छम् कण्डूयनेन करयोः इव दुःख दुःखम् ।
तृप्यन्ति न इह कृपणाःबहु दुःख भाजः कण्डूतिवत् मनसिजम् विषहेतु धीरः ॥

शब्दार्थ—

यत्	२.	जो	तृप्यन्ति	१४.	तृप्त होते हैं
मैथुन आदि	३.	मैथुन आदि का	न इह	१३.	नहीं यहाँ
गृहम् एधि	१.	घर में आसक्त लोगों को	कृपणाः बहु	१०.	अज्ञानी मनुष्य बहुत
सुखम्	४.	सुख मिलता है वह	दुःख	११.	दुःख
हि तुच्छम्	५.	तुच्छ है	भाजः	१२.	भोगने पर भी
कण्डूयनेन	७.	खुजलाने के	कण्डूतिवत्	१६.	खुजलाहट के समान
करयोः	६.	हाथों से	मनसिजम्	१७.	काम के वेग को
इव दुःख	८.	समान दुःख ही	विषहेत	१८.	सहन कर लेते हैं
दुःखम् ।	९.	दुख होता है ।	धीरः ॥	१५.	धीर पुरुष

श्लोकार्थ—घर में आसक्त लोगों को जो मैथुनादि का सुख मिलता है वह तुच्छ है, हाथों से खुजलाने के समान दुःख ही दुःख होता है । यहाँ अज्ञानी मनुष्य बहुत दुःख भोगने पर भी तृप्त नहीं होते हैं । धीर पुरुष खुजलाहट के समान काम के वेग को सहन कर लेते हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

मौनव्रतश्रुततपोऽध्ययनस्वधर्मव्याख्यारहोजपसमाधय आपवर्ग्याः ।
प्रायः परं पुरुष ते त्वजितेन्द्रियाणां वार्ता भवन्त्युत न वात्र तु दाम्भिकानाम् ॥४६॥

पदच्छेद—मौनव्रत श्रुत तपः अध्ययन स्वधर्म व्याख्या रहो जप समाधयः आपवर्ग्याः ।
प्रायः परम् पुरुष ते तु अजितेन्द्रियाणाम् वार्ता भवन्ति उत न वात्र तु दाम्भिकानाम् ॥

शब्दार्थ—

मौनव्रत	१.	मौन ब्रह्मचर्य आदि व्रत	प्रायः	१०.	प्रायः
श्रुत तपः	२.	शास्त्र ज्ञान तपस्या	परमपुरुष	९.	हे परम पुरुष !
अध्ययन	३.	स्वाध्याय	ते	११.	ये
स्वधर्म	४.	अपने धर्म का पालन	तु अजितेन्द्रियाणाम्	१२.	जिनकी इन्द्रियाँ वश में नहीं हैं
व्याख्या	५.	शास्त्रों की व्याख्या करना	वार्ता	१३.	जीविका का साधन
रहोजप	६.	एकान्तसेवन जप और	भवन्ति	१७.	होते हैं
समाधयः	७.	समाधि (ये)	उत	१४.	अथवा
आपवर्ग्याः ।	८.	मोक्ष के साधन हैं	न वा अत्र	१६.	नहीं यहाँ (ये भी)
			तु दाम्भिकानाम् ॥	१५.	दम्भियों के लिए

श्लोकार्थ—मौन ब्रह्मचर्य आदि व्रत, शास्त्र ज्ञान, तपस्या, स्वाध्याय, अपने धर्म का पालन, शास्त्रों की व्याख्या करना एकान्त सेवन, जप और समाधि ये मोक्ष के साधन हैं । हे परम पुरुष ! प्रायः ये जिनको इन्द्रियाँ वश में नहीं हैं, उनको जीविका के साधन रह जाते हैं । अथवा दम्भियों के लिए यहाँ ये भी नहीं होते हैं ।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

रूपे इमे सदसती तव वेदसृष्टे बीजाङ्कुराविव न चान्यदरूपकस्य।
युक्ताः समक्षमुभयत्र विचिन्वते त्वां योगेन वह्निमिव दारुषु नान्यतः स्यात्॥४७॥

पदच्छेद—रूपे इमे सत् असती तव वेद सृष्टे बीज अङ्कुरौ इव न च अन्यत् अरूपकस्य।
युक्ताः समक्षम् उभयत्र विचिन्वते त्वाम् योगेन वह्निम् इव दारुषु न अन्यतः स्यात्॥

शब्दार्थ—

रूपे	७.	रूप	युक्ताः	११.	योगी लोग
इमे	५.	यह दोनों	समक्षम् उभयत्र	१२.	कार्य कारण दोनों में ही
सत् असती	६.	कार्य कारण	विचिन्वते	१५.	ढूंढ़ लेते हैं
तव	२.	आपके	त्वाम्	१४.	आपको
वेद	१.	वेदों ने	योगेन	१३.	योग के बल से
सृष्टे	८.	बताये हैं	वह्निम्	१७.	अग्नि को निकाल लेते हैं
बीज अङ्कुरौ	३.	बीज और अङ्कुर के	इव दारुषु	१६.	जैसे काष्ठों में
इव	४.	समान	न	१६.	नहीं
न च अन्यत्	१०.	न ही कोई दूसरा साधन है	अन्यतः	१८.	वे दोनों आपसे पृथक्
अरूप अस्य।	६.	रूप रहित आपको जानने का	स्यात्॥	१०.	हैं।

श्लोकार्थ—वेदों ने आपके बीज और अंकुर के समान ये दोनों कार्य कारण रूप बताये हैं। रूप रहित आपको जानने का दूसरा कोई साधन नहीं है। योगी लोग योग के बल से कार्य-कारण दोनों में आपको ढूंढ़ लेते हैं। जैसे काष्ठों में अग्नि को निकाल लेते हैं। ये दोनों आप से पृथक् नहीं हैं॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

त्वं वायुरग्निरवनिर्वियदम्बुमात्राः प्राणेन्द्रियाणि हृदयं चिदनुग्रहश्च।
सर्वं त्वमेव सगुणो विगुणश्च भूमन् नान्यत् त्वदस्त्यपि मनोवचसा निरुक्तम्॥४८॥

पदच्छेद—त्वम् वायुः अग्निः अवनिः वियत् अम्बुमात्राः प्राण इन्द्रियाणि हृदयम् चित् अनुग्रहः च।
सर्वम् त्वमेव सगुणः विगुणः च भूमन् न अन्यत् त्वत् अस्ति अपि मनः वचसा निरुक्तम्॥

शब्दार्थ—

त्वम् वायुः	२.	आप वायु	सर्वम्	१२.	सब कुछ
अग्निः अवनिः	३.	अग्नि पृथ्वी	त्वमेव सगुणः	१०.	आप ही सगुण
वियत् अम्बुमात्राः	४.	आकाश पञ्चतन्मात्रायें	विगुणः च	११.	और निर्गुण
प्राण	५.	प्राण	भूमन्	१.	हे अनन्त!
इन्द्रियाणि	६.	इन्द्रिय	न अन्यत्	१६.	पृथक् नहीं
हृदयम् चित्	७.	मन, चेतना	त्वत्	१५.	आपसे
अनुग्रहः	६.	अनुग्रह है	अस्ति अपि	१७.	है भी
च।	८.	और	मनः वचसा	१३.	मन वाणी से जो कुछ
			निरुक्तम्॥	१४.	कहा गया है वह

श्लोकार्थ—हे अनन्त! आप वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल, पञ्चतन्मात्रायें, प्राण, इन्द्रिय, मन, चेतना, और अनुग्रह है। आप ही सगुण और निर्गुण सब कुछ हैं। मन, वाणी से जो कुछ कहा गया है, वह भी आप से पृथक् नहीं है।

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

नैते गुणा न गुणिनो महदादयो ये सर्वे मनः प्रभृतयः सहदेवमर्त्याः ।
आद्यन्तवन्त उरुगाय विदन्ति हि त्वामेवंविमृश्यसुधियोविरमन्तिशब्दात् ४९ ।

पदच्छेद—न एते गुणाः न गुणिनः महत् आदयः ये सर्वे मनः प्रभृतयः सह देवमर्त्याः ।
आद्यन्तवन्तः उरुगाय विदन्ति हि त्वाम् एवम् विमृश्य सुधियः विरमन्ति शब्दात् ।।

शब्दार्थ—

न एते	२.	नहीं ये	आद्यन्तवन्तः	११.	आदि और अन्त वाले हैं (और)
गुणाः	३.	सत्त्वादि गुण (और)	उरुगाय	१.	हे महान् कीर्ति वाले भगवन् !
			विदन्ति	१३.	जानते हैं
न गुणिनः महत्	५.	गुणों के परिणाम महत्तत्त्व	हि त्वाम्	१२.	आपको (नहीं)
आदयः	६.	आदि	एवम्	१४.	इस प्रकार
ये	४.	जो	विमृश्य	१५.	विचार कर
सर्वे	१०.	सब ही	सुधियः	१६.	ज्ञानी लोग
मनः प्रभृतयः	९.	मन आदि हैं	विरमन्ति	१८.	विरक्त हो जाते है
सह	८.	सहित	शब्दात् ।।	१७.	शब्दों से
देवमर्त्याः ।	७.	देवता मनुष्य			

श्लोकार्थ—हे महान् कीर्ति वाले भगवन् ! जो ये सत्त्वादि गुण और गुणों के परिणाम महत्तत्त्व आदि, देवता मनुष्य मन आदि हैं सब ही आदि और अन्त वाले हैं और आपको नहीं जानते है इस प्रकार विचार कर ज्ञानो लोग शब्दों से विरक्त हो जाते हैं ।।

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

तत्तेर्हत्तम नमः स्तुतिकर्मपूजाः कर्मस्मृतिश्चरणयोः श्रवणं कथायाम् ।
संसेवया त्वयिविनेतिषडङ्गयाकिम्भक्तिं जनः परम हंसगतौ लभेत ५० ॥

पदच्छेद—तत् ते अर्हत्तम नमः स्तुति कर्म पूजाः कर्मस्मृतिः चरणयोः श्रवणम् कथायाम् ।
संसेवया त्वयि विनाइतिषडङ्गयाकिम् भक्तिम् जनः परम हंस गतौ लभेत ।।

शब्दार्थ—

तत् ते	२.	इसलिए आपको	संसेवया	११.	सेवा के
अर्हत्तम्	१.	हे परम पूज्य !	त्वयि	१५.	आपकी
नमः स्तुति	३.	नमस्कार स्तुति	विनेति	१२.	विना
कर्मपूजाः	४.	कर्मों का समर्पण	षडङ्गया	१०.	ये छः अङ्गों वाली
कर्म	५.	सेवा पूजा करना	किम्	१७.	कैसे
स्मृतिः	७.	चिन्तन करना (और)	भक्तिम् जनः	१६.	भक्ति मनुष्य
चरणयोः	६.	चरणों का	परम हंस	१३.	परम हंसों के
श्रवणम्	९.	श्रवण करना	गतौ	१४.	आश्रय रूप
कथायाम्	८.	कथा का	लभेत ।।	१८.	प्राप्त कर सकता है

श्लोकार्थ—हे परम पूज्य ! इसलिए आपको नमस्कार, स्तुति, कर्मों का समर्पण, सेवा पूजा, आपके चरणों का चिन्तन, कथा का श्रवण, छः अङ्गो वाली सेवा के विना परमहंसों के आश्रयरूप आपकी भक्ति मनुष्य कैसे प्राप्त कर सकता है ? ।।

एकपञ्चाशत्तमः श्लोकः

नारद उवाच

एतावद्वर्णितगुणो भक्त्या भक्तेन निर्गुणः।
प्रह्लादं प्रणतं प्रीतो यतमन्युरभाषत ॥ ५१ ॥

पदच्छेद— एतावत् वर्णितगुणः भक्त्या भक्तेन निर्गुणः।
प्रह्लादम् प्रणतम् प्रीतः यतमन्युः अभाषत ॥

शब्दार्थ

एतावत्	३.	इतने	प्रह्लादम्	११.	प्रह्लाद से
वर्णित	५.	वर्णन करने पर	प्रणतम्	१०.	प्रणाम करते हुए
गुणः	४.	गुणों का	प्रीतः	७.	प्रसन्न होकर
भक्त्या	२.	भक्ति पूर्वक	यतः	९.	शान्त करके
भक्तेन	१.	भक्त के द्वारा	मन्युः	८.	क्रोध को
निर्गुणः	६.	निर्गुण भगवान्	अभाषत	१२.	बोले

श्लोकार्थ—भक्त के द्वारा भक्ति पूर्वक इतने गुणों का वर्णन करने पर निर्गुण भगवान् प्रसन्न होकर क्रोध को शान्त करके प्रणाम करते हुए प्रह्लाद से बोले ॥

द्विपञ्चाशत्तमः श्लोकः

श्रीभगवान् उवाच

प्रह्लाद भद्र भद्रं ते प्रीतोऽहं तेऽसुरोत्तम।
वरं वृणीष्वाभिमतं कामपूरोऽस्म्यहं नृणाम् ॥ ५२ ॥

पदच्छेद — प्रह्लाद भद्र भद्रम् ते प्रीतः अहम् ते असुर उत्तम।
वरम् वृणीष्व अभिमतम् काम पूरः अस्मि अहम् ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लाद	२.	प्रह्लाद	वरम्	११.	वरदान
भद्र	१.	हे भद्र !	वृणीष्व	१२.	मांगो
भद्रम्	४.	कल्याण हो	अभिमतम्	१०.	अभीष्ट
ते	३.	तुम्हारा	काम	१५.	कामना
प्रीतः	९.	प्रसन्न हूँ	पूरः	१६.	पूर्ण करने वाला
अहम्	७.	मैं	अस्मि	१७.	हूँ
ते	८.	तुम पर	अहम्	१३.	मैं
असुर	५.	हे असुरों में	नृणाम् ॥	१४.	मनुष्यों की
उत्तम	६.	श्रेष्ठ			

श्लोकार्थ—हे भद्र! प्रह्लाद तुम्हारा कल्याण हो। हे असुरों में श्रेष्ठ! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम अभीष्ट वरदान मांगो। मैं मनुष्यों की कामना पूर्ण करने वाला हूँ ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

साम्प्रीणत आयुष्मन्दर्शनं दुर्लभं हि मे।
दृष्ट्वा मां न पुनर्जन्तुरात्मानं तप्तुमर्हति ॥ ५३ ॥

पदच्छेद— माम् अप्रीणतः आयुष्मन् दर्शनम् दुर्लभम् हि मे।
दृष्ट्वा माम् न पुनः जन्तुः आत्मानम् तप्तुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

माम्	२.	मुझे			
अप्रीणतः	३.	प्रसन्न करने वाले के लिए	माम्	७.	मुझे
आयुष्मन्	१.	हे आयुष्मन्!	न	१३.	नहीं
दर्शनम्	५.	दर्शन	पुनः	१०.	फिर
दुर्लभम्	६.	दुर्लभ है	जन्तुः	९.	प्राणी
हि मे।	४.	मेरा	आत्मानम्	११.	अपने को
दृष्ट्वा	८.	देखकर	तप्तुम्	१२.	सन्तप्त
			अर्हति ॥	१४.	कर सकता है।

श्लोकार्थ—हे आयुष्मन्! मुझे न प्रसन्न करने वाले के लिए मेरा दर्शन दुर्लभ है। मुझे देखकर प्राणी फिर अपने को सन्तप्त नहीं कर सकता है॥

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

प्रीणन्ति ह्यथ मां धीराः सर्वभावेन साधवः।
श्रेयस्कामा महाभागाः सर्वासामाशिषां पतिम् ॥ ५४ ॥

पदच्छेद— प्रीणन्ति हि अथ माम् धीराः सर्व भावेन साधवः।
श्रेयः कामाः महाभागाः सर्वासाम् आशिषाम् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

प्रीणन्ति	१४.	प्रसन्न करते हैं	श्रेयः	२.	कल्याण
हि अथ	१.	तदनन्तर	कामाः	३.	चाहने वाले
माम्	११.	मुझे	महा	४.	परम
धीराः	६.	धीर	भागाः	५.	भाग्यवान्
सर्व	१२.	सभी	सर्वासाम्	८.	सभी
भावेन	१३.	प्रकार से	आशिषाम्	९.	मनोरथों को
साधवः।	७.	साधु जन	पतिम् ॥	१०.	पूर्ण करने वाले

श्लोकार्थ—तदनन्तर कल्याण चाहने वाले परम भाग्यवान् धीर साधु जन सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाले मुझे सभी प्रकार से प्रसन्न करते हैं॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

एवं प्रलोभ्यमानोऽपि वरैर्लोकप्रलोभनैः ।
एकान्तित्वाद्भगवति नैच्छत् तानसुरोत्तमः ॥ ५५ ॥

पदच्छेद— एवम् प्रलोभ्यमानः अपि वरैः लोकप्रलोभनैः ।
एकान्तित्वात् भगवति न ऐच्छत् तान् असुरोत्तमः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इस प्रकार	एकान्ति	८.	अनन्य भक्त
प्रलोभ्यमानः	५.	प्रलोभन दिये जाने पर	त्वात्	९.	होने के कारण
अपि	६.	भी	भगवति	१०.	भगवान् से
वरैः	३.	वरों के द्वारा	न ऐच्छत्	१२.	नहीं चाहा
लोक	१.	लोगों को	तान्	११.	उन प्रलोभनों को
प्रलोभनैः ।	२.	प्रलोभन में डालने वाले	असुरोत्तमः ॥	७.	दैत्य श्रेष्ठ प्रह्लाद ने

श्लोकार्थ—लोगों को प्रलोभन में डालने वाले वरों के द्वारा इस प्रकार प्रलोभन दिये जाने पर भी दैत्यश्रेष्ठ प्रह्लाद ने अनन्य भक्त होने के कारण भगवान् से उन प्रलोभनों को नहीं चाहा ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तम स्कन्धे प्रह्लादचरिते
भगवत्स्तवो नाम नवमः अध्यायः ॥९॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
सप्तमः स्कन्धः
दशमः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— भक्तियोगस्य तत् सर्वमन्तरायतयार्भकः ।
मन्यमानो हृषीकेशं स्मयमान उवाच ह ॥१॥

पदच्छेद— भक्ति योगस्य तत् सर्वम् अन्तराय तया अर्भकः ।
मन्यमानः हृषीकेशम् स्मयमानः उवाच ह ॥

शब्दार्थ—

भक्ति	३.	भक्ति	अर्भकः ।	८.	बालक प्रह्लाद ने
योगस्य	४.	योग का	मन्यमानः	७.	मानते हुए
तत्	१.	यह	हृषीकेशम्	९.	भगवान् नृसिंह से
सर्वम्	२.	सब	स्मयमानः	१०.	मुस्कराते हुए
अन्तराय	५.	विघ्न है	उवाच	१२.	कहा
तया	६.	यह	ह ॥	११.	यह

श्लोकार्थ—यह सब भक्तियोग का विघ्न है ! यह मानते हुए बालक प्रह्लाद ने भगवान् नृसिंह से मुस्कराते हुए कहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

मा मां प्रलोभयोत्पत्त्याऽऽसक्तं कामेषु तैर्वरैः ।
तत्सङ्गभीतो निर्विण्णो मुमुक्षुस्त्वामुपाश्रितः ॥२॥

पदच्छेद— मा माम् प्रलोभय उत्पत्त्या आसक्तम् कामेषु तैः वरैः ।
तत् सङ्गभीतः निर्विण्णः मुमुक्षुः त्वाम् उपाश्रितः ॥

शब्दार्थ—

मा	६.	मत	तत्	८.	उन (भोगों के)
माम्	४.	मुझे	सङ्ग	९.	सङ्ग से
प्रलोभय	७.	लुभाइये	भीतः	१०.	डरा हुआ
उत्पत्त्या	१.	हे भगवन् ! जन्म से ही	निर्विण्णः	११.	दुःखी और
आसक्तम्	३.	आसक्त	मुमुक्षुः	१२.	मोक्ष चाहने वाला मैं
कामेषु	२.	विषय भोगों में	त्वाम्	१३.	आपकी
तैः वरैः ।	५.	उन वरदानों से	उपाश्रितः ॥	१४.	शरण में आया हूँ

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जन्म से ही विषय-भोगों में आसक्त मुझे उन वरदानों से मत लुभाइये । उन भोगों के संग से डरा हुआ दुःखी और मोक्ष चाहने वाला मैं आपकी शरण में आया हूँ ॥

तृतीयः श्लोकः

भृत्यलक्षणजिज्ञासुर्भक्तं कामेष्वचोदयत् ।

भवान् संसार बीजेषु हृदयग्रन्थिषु प्रभो ॥३॥

पदच्छेद— भृत्य लक्षण जिज्ञासुः भक्तम् कामेषु अचोदयत् ।
भवान् संसार बीजेषु हृदय ग्रन्थिषु प्रभो ॥

शब्दार्थ—

भृत्य	२. दास के	**भवान्**	५. आपने (अपने)
लक्षण	३. लक्षण को	**संसार**	७. संसार के
जिज्ञासुः	४. जानने के इच्छुक	**बीजेषु**	८. बीजरूप
भक्तम्	६. भक्त को	**हृदय**	९. हृदय की
कामेषु	११. भोगों में	**ग्रन्थिषु**	१०. गाँठ को दृढ़ करने वाले
अचोदयत् ।	१२. प्रेरित किया है	**प्रभो ॥**	१. हे भगवन् !

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! दास के लक्षण को जानने के इच्छुक आपने अपने भक्त को संसार के बीजरूप हृदय की गाँठ को दृढ करने वाले भोगों में प्रेरित किया है ॥

चतुर्थः श्लोकः

नान्यथा तेऽखिलगुरो घटेत करुणात्मनः ।

यस्त आशिष आशास्ते न स भृत्यः स वै वणिक् ॥४॥

पदच्छेद— न अन्यथा ते अखिल गुरो घटेत करुण आत्मनः ।
यः ते अशिषः आशास्ते न सः भृत्यः सः वै वणिक् ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं	**यः ते**	८. जो आपसे
अन्यथा	२. अन्य प्रकार से	**आशिषः**	९. विषय भोगों की
ते	५. आपके लिए यह	**आशास्ते**	१०. आशा करते हैं
अखिलगुरो	१. हे सबके गुरु	**न सः**	११. नहीं है वह
घटेत	७. घटता है	**भृत्यः**	१२. दास
करुण	३. दया से युक्त	**सः वै**	१३. निश्चित रूप से
आत्मनः ।	४. आत्मा वाले	**वणिक् ॥**	१४. बनिया है

श्लोकार्थ—हे सबके गुरु ! अन्य प्रकार से दया से युक्त आत्मा वाले आपके लिए यह नहीं घटता है । जो आपसे विषय-भोगों की आशा करता है, वह दास नहीं है वह निश्चित रूप से बनिया है ॥

पञ्चमः श्लोकः

आशासानो न वै भृत्यः स्वामिन्याशिष आत्मनः ।
न स्वामी भृत्यतः स्वाम्यमिच्छन् यो राति चाशिषः ॥ ५ ॥

पदच्छेद— आशासानः न वै भृत्यः स्वामिनि आशिषः आत्मनः ।
न स्वामी भृत्यतः स्वाम्यम इच्छन् यः राति च आशिषः ॥

शब्दार्थ—

आशासानः	४.	आशा करने वाला	स्वामी	१५.	स्वामी
न	७.	नहीं है	भृत्यतः	१२.	दास से
वै	५.	निश्चित रूप से	स्वाम्यम्	१३.	स्वामीपन को
भृत्यः	६.	दास	इच्छन्	१४.	चाहता है (वह)
स्वामिनि	२.	स्वामी से	यः	८.	जो
आशिषः	३.	विषय भोग की	राति	१०.	देता है ।
आत्मनः	१.	अपने	च	११.	और
न	१६.	नहीं है	आशिषः ॥	९.	विषय भोग

श्लोकार्थ—अपने स्वामी से विषय भोग की आशा करने वाला निश्चित रूप से दास नहीं है । जो विषय-भोग देता है और दास से स्वामीपन को चाहता है, वह स्वामी नहीं है ॥

षष्ठः श्लोकः

अहं त्वकामस्त्वद्भक्तस्त्वं च स्वाम्यनपाश्रयः ।
नान्यथेहावयोरर्थो राजसेवकयोरिव ॥ ६ ॥

पदच्छेद— अहम् तु कामः त्वद्भक्तः त्वम् च स्वामी अनपाश्रयः ।
न अन्यथा इह आवयोः अर्थः राज सेवकयोः इव ॥

शब्दार्थ—

अहम् तु	१.	मैं तो	न	१३.	नहीं
कामः	३.	निष्काम	अन्यथा	१२.	अन्य प्रकार से
त्वद्	२.	आपका	इह	९.	यहाँ
भक्त	४.	सेवक हूँ	आवयोः	१०.	हम दोनों का
त्वम्	६.	आप	अर्थः	११.	सम्बन्ध
च	५.	और	राज	१५.	राजा और
स्वामी	८.	स्वामी हैं	सेवकयोः	१६.	सेवक का (सम्बन्ध होता है ।
अनपाश्रयः ।	७.	निरपेक्ष	इव ॥	१४.	जैसे

श्लोकार्थ—मैं तो आपका निष्काम सेवक हूँ । और आप निरपेक्ष स्वामी हैं । हम दोनों का सम्बन्ध अन्य प्रकार से नहीं है, जैसे राजा और सेवक का सम्बन्ध होता है ।

सप्तमः श्लोकः

यदि रासीश मे कामान् वरांस्त्वं वरदर्षभ ।
कामानां हृद्यसंरोहं भवतस्तु वृणे वरम् ॥ ७ ॥

पदच्छेद— यदि रासि ईश मे कामान् वरान्त्वम् वरदर्षभ ।
कामानाम् हृदि असंरोहम् भवतः तु वृणेवरम् ।।

शब्दार्द —

यदि	४.	यदि	कामानाम्	१०.	कामनाओं का
रासि	८.	देते हैं (तो मेरे)	हृदि	९.	हृदय में
ईश	२.	प्रभो	असंरोहम्	११.	बीज अंकुरित न हो
मे	३.	मुझे	भवतः	१२.	आप से
कामान्	६.	इच्छानुसार	तु	१३.	इस
वरान्	७.	वरों को	वृणे	१५.	प्रार्थना करता हूँ
त्वम्	५.	आप	वरम् ।।	१४.	वरदान की
वरदर्षभ ।	१.	हे वर देने वालों में श्रेष्ठ			

श्लोकार्थ—हे वर देने वालों में श्रेष्ठ ! प्रभो ! मुझे यदि आप इच्छानुसार वरों को देते हैं तो मेरे हृदय में कामनाओं का बीज अंकुरित न हो। आप से इस वरदान की प्रार्थना करता हूँ ।।

अष्टमः श्लोकः

इन्द्रियाणि मनः प्राणः आत्मा धर्मो धृतिर्मतिः ।
ह्रीः श्रीस्तेजः स्मृतिः सत्यं यस्य नश्यन्ति जन्मना ॥ ८ ॥

पदच्छेद— इन्द्रियाणि मनः प्राणः आत्मा धर्मः धृतिः मतिः ।
ह्रीः श्रीः तेजः स्मृतिः सत्यम् यस्य नश्यन्ति जन्मना ।।

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	१.	इन्द्रिय	ह्रीः	८.	लज्जा
मनः	२.	मन	श्रीः तेजः	९.	श्री तेज
प्राणः	३.	प्राण	स्मृतिः	१०.	स्मृति और
आत्मा	४.	शरीर	सत्यम्	११.	सत्य
धर्मः	५.	धर्म	यस्य	१२.	ये सब जिसके
धृतिः	६.	धैर्य (और)	नश्यन्ति	१४.	नष्ट हो जाते है।
मतिः	७.	(बुद्धि	जन्मना ।।	१३.	होने पर

श्लोकार्थ - इन्द्रिय, मन, प्राण, शरीर, धर्म, धैर्य और बुद्धि, लज्जा, श्री, तेज, स्मृति और सत्य ये सब जिसके होने पर नष्ट हो जाते हैं ।।

नवमः श्लोकः

विमुञ्चति यदा कामान्मानवो मनसि स्थितान् ।
तर्ह्येव पुण्डरीकाक्ष भगवत्त्वाय कल्पते ॥ ९ ॥

पदच्छेद— विमुञ्चति यदा कामान् मानवः मनसि स्थितान् ।
तर्हि एव पुण्डरीकाक्ष भगवत्त्वाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

विमुञ्चति	७. छोड़ देता है	तर्हि	८. तब
यदा	२. जब	एव	९. ही
कामान्	६. कामनाओं को	पुण्डरीकाक्ष	१. हे कमलनयन भगवान् !
मानवः	३. मनुष्य	भगवत्त्वाय	१०. भगवत् स्वरूप को
मनसि	४. मन में	कल्पते ॥	११. प्राप्त कर लेता हैं
स्थितान् ।	५. रहने वाली		

श्लोकार्थ हे कमल नयन भगवान् ! जब मनुष्य मन में रहने वाली कामनाओं को छोड़ देता है। तब ही भगवत् स्वरूप को प्राप्त कर लेता है ॥

दशमः श्लोकः

नमो भगवते तुभ्यं पुरुषाय महात्मने ॥
हरयेऽद्भुतसिंहाय ब्रह्मणे परमात्मने ॥ १० ॥

पदच्छेद— नमः भगवते तुभ्यम् पुरुषाय महात्मने ।
हरये अद्भुत सिंहाय ब्रह्मणे परमात्मने ॥

शब्दार्थ—

नमः	१०. नमस्कार है	हरये	३. हरि
भगवते	८. भगवान्	अद्भुत	४. अद्भुत
तुभ्यम्	९. आपको	सिंहाय	५. सिंह रूप
पुरुषाय	१. पुरुषरूप	ब्रह्मणे	६. पर ब्रह्म
महात्मने ।	२. महात्मा	परमात्मने ॥	७. परमात्मा

श्लोकार्थ—पुरुषरूप, महात्मा, हरि, अद्भुत सिंहरूप, परब्रह्म, परमात्मा, भगवान्, आपको नमस्कार है ॥

एकादशः श्लोकः

नृसिंह उवाच

नैकान्तिनो मे मयि जात्विहाशिष आशासतेऽमुत्र च ये भवद्विधाः ।
अथापि मन्वन्तरमेतदत्र दैत्येश्वराणामनुभुङ्क्ष्व भोगान् ॥ ११ ॥

पदच्छेद—न एकान्तिनः मे मयि जातु इह आशिषः आशासते अमुत्र च ये भवद्‌विधाः ।
अथ अपि मन्वन्तरम् एतद् अत्र दैत्येश्वराणाम् अनुभुङ्क्ष्व भोगान् ॥

शब्दार्थ—न	११.	नहीं	ये भवद्	१.	जो आपके
एकान्तिनः	४.	एकान्त प्रेमी भक्त हैं (वे)	विधाः	२.	समान
मे	३.	मेरे	अथ	१३.	तो
मयि	५.	मुझसे	अपि	१४.	भी
जातु	१०.	कभी	मन्वन्तरम्	१६.	मन्वन्तर में
इह	६.	इस लोक में	एतद्	१५.	इस
आशिषः	९.	विषय भोग को	अत्र	१७.	यहाँ
आशासते	१२.	चाहते हैं	दैत्येश्वराणाम्	१८.	दैत्यराजों के
अमुत्र	८.	परलोक में	अनुभुङ्क्ष्व	२०.	भोग करो
च	७.	और	भोगान् ॥	१९.	भोगों का

श्लोकार्थ—जो आपके समान मेरे एकान्त प्रेमी भक्त हैं, वे मुझसे इस लोक में और पर लोक में विषय भोगों को कभी नहीं चाहते हैं । तो भी इस मन्वन्तर में यहाँ दैत्यराजों के भोगों का भोग करो ॥

द्वादशः श्लोकः

कथा मदीया जुषमाणः प्रियास्त्वमावेश्य मामात्मनि सन्तमेकम् ।
सर्वेषु भूतेष्वधियज्ञमीशं यजस्व योगेन च कर्म हिन्वन् ॥ १२ ॥

पदच्छेद—कथाः मदीयाः जुषमाणाः प्रियाः त्वम् आवेश्य माम् आत्मनि सन्तम् एकम् ।
सर्वेषु भूतेषु अधियज्ञम् ईशम् यजस्व योगेन च कर्म हिन्वन् ॥

शब्दार्थ—कथाः	३.	कथाओं को	एकम् ।	११.	एकमात्र
मदीयाः	१.	मेरी	सर्वेषु	९.	सभी
जुषमाणाः	४.	सुनते हुये	भूतेषु	१०.	प्राणियों में
प्रियाः	२.	प्रिय	अधियज्ञम्	१३.	यज्ञों के रूप मे (और)
त्वम्	५.	तुम	ईशम्	१४.	ईश्वर के रूप में
आवेश्य	८.	स्थापित करके	यजस्व	१६.	आराधना करो
माम्	७.	मुझे	योगेन	१५.	योग के द्वारा
आत्मनि	६.	हृदय में	च कर्म	१७.	और कर्मों का
सन्तम्	१२.	विराजमान मेरी	हिन्वन् ॥	१८.	क्षय कर दो

श्लोकार्थ—मेरी प्रिय कथाओं को सुनते हुये तुम हृदय में मुझे स्थापित करके सभी प्राणियों में एक मात्र विराजमान मेरी यज्ञों के रूप में और ईश्वर के रूप में योग के द्वारा आराधना करो और कर्मों का क्षय कर दो ॥

त्रयोदशः श्लोकः

भोगेन पुण्यं कुशलेन पापं कलेवरं कालजवेन हित्वा।
कीर्तिं विशुद्धां सुरलोकगीतां विताय मामेष्यसि मुक्तबन्धः ॥१३॥

पदच्छेद— भोगेन पुण्यम् कुशलेन पापम् कलेवरम् कालजवेन हित्वा।
कीर्तिम् विशुद्धाम् सुरलोक गीताम् विताय माम् एष्यसि मुक्तबन्धः ॥

शब्दार्थ—

भोगेन	१.	भोग के द्वारा	कीर्तिम्	१२.	कीर्ति को
पुण्यम्	२.	पुण्य को	विशुद्धाम्	११.	विशुद्ध
कुशलेन	३.	निष्काम कर्मों से	सुरलोक	९.	देवलोक में
पापम्	४.	पाप को	गीताम्	१०.	गाई जाने वाली
कलेवरम्	७.	शरीर को	विताय	१३.	फैला कर
काल	५.	समय के	माम्	१६.	मुझे
जवेन	६.	वेग से	एष्यसि	१७.	प्राप्त होओगे
हित्वा।	८.	छोड़कर	मुक्त	१५.	मुक्त होकर
			बन्धनः ॥	१४.	समस्त बन्धनों से

श्लोकार्थ—भोग के द्वारा पुण्य को, निष्काम कर्मों से पाप को, समय के वेग से शरीर को छोड़कर देवलोक में गाई जाने वाली विशुद्ध कीर्ति को फैलाकर समस्त बन्धनों से मुक्त होकर मुझे प्राप्त होओगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

य एतत् कीर्तयेन्मह्यं त्वया गीतमिदं नरः।
त्वां च मां च स्मरन्काले कर्मबन्धात् प्रमुच्यते ॥१४॥

पदच्छेद— यः एतत् कीर्तयेत् मह्यम् त्वया गीतम् इदम् नरः।
त्वाम् च माम् च स्मरन् काले कर्म बन्धात् प्रमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	त्वाम्	८.	तुम्हारा
एतत्	१४.	इस	च	९.	और
कीर्तयेत्	१७.	कीर्तन करेगा (वह)	माम्	१०.	मेरा
मह्यम्	५.	मेरी	च	१२.	और
त्वया	३.	तुम्हारे द्वारा	स्मरन्	११.	स्मरण करता हुआ
गीतम्	४.	गाई हुई	काले	१३.	समय पर
इदम्	६.	इस स्तुति का	कर्म बन्धात्	१५.	कर्मों के बन्धन से
नरः।	२.	मनुष्य	प्रमुच्यते ॥	१६.	मुक्त हो जायेगा

श्लोकार्थ—हे प्रह्लाद ! जो मनुष्य तुम्हारे द्वारा गाई हुई मेरी इस स्तुति का कीर्तन करेगा, वह तुम्हारा और मेरा स्मरण करता हुआ समय पर इस कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जायेगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रह्लाद उवाच—वरं वरय एतत् ते वरदेशान्महेश्वर ।

यदनिन्दत् पिता मे त्वामविद्वांस्तेज ऐश्वरम् ॥१५॥

पदच्छेद— वरम् वरय एतत् ते वरद ईशात् महेश्वर ।
यत् अनिन्दत् पिता मे त्वाम् विद्वान् तेजः ऐश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

वरम्	६.	वरदान	**यत्**	८.	जो
वरये	७.	मांगता हूँ (कि)	**अनिन्दत्**	१२.	निन्दा की (वह आपके)
एतत्	५.	यह	**पिता**	१०.	पिता ने
ते	४.	आप से (मैं)	**मे**	९.	मेरे
वरद	२.	वर देने वालों के	**त्वाम्**	११.	आपकी
ईशात्	३.	स्वामी	**अविद्वान्**	१५.	न जानते हुये (की थी)
महेश्वरम् ।	१.	हे महेश्वर !	**तेजः**	१४.	तेज को
			ऐश्वरम् ॥	१३.	ईश्वरीय

श्लोकार्थ—हे महेश्वर ! वर देने वालों के स्वामी आप से मैं यह वरदान माँगता हूँ कि जो मेरे पिता ने आपकी निन्दा की वह आपके ईश्वरीय तेज को न जानते हुये की थी ॥

षोडशः श्लोकः

विद्धामर्षाशयः साक्षात् सर्वलोकगुरुं प्रभुम् ।

भ्रातृहेति मृषादृष्टिस्त्वद्भक्ते मयि चाघवान् ॥१६॥

पदच्छेद— विद्ध अमर्ष आशयः साक्षात् सर्वलोक गुरुम् प्रभुम् ।
भ्रातृहा इति मृषा दृष्टिः त्वद् भक्ते मयि च अघवान् ॥

शब्दार्थ—

विद्ध	२.	जले हुये	**भ्रातृहा**	१०.	भाई को मारने वाला है
अमर्ष	१.	क्रोध से	**इति**	९.	यह (मेरे)
आशयः	३.	चित्त वाले (मेरे पिता ने)	**मृषा**	११.	ऐसी मिथ्या
साक्षात्	७.	साक्षात्	**दृष्टिः**	१२.	दृष्टि रखकर
सर्व	४.	सभी	**त्वद्**	१३.	आपके
लोक	५.	लोकों के	**भक्ते**	१४.	भक्त
गुरुम्	६.	गुरु (और)	**मयि च**	१५.	मुझसे भी
प्रभुम् ।	८.	प्रभु को	**अघवान् ॥**	१६.	द्रोह किया

श्लोकार्थ—क्रोध से जले हुये चित्त वाले मेरे पिता ने सभी लोकों के गुरु और साक्षात् प्रभु को यह मेरे भाई को मारने वाला है ऐसी मिथ्या दृष्टि रखकर आपके भक्त मुझसे भी द्रोह किया ॥

सप्तदशः श्लोकः

तस्मात् पिता मे पूयेत दुरन्ताद् दुस्तरादघात् ।
पूतस्तेऽपाङ्गसंदृष्टस्तदा कृपणवत्सल ॥ १७ ॥

पदच्छेद— तस्मात् पिता मे पूयेत दुरन्तात् दुस्तरात् अघात् ।
पूतः ते अपाङ्ग संदृष्टः तदा कृपण वत्सल ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१३.	तो भी	पूतः	७.	पवित्र हो गये थे
पिता	१२.	पिता	ते	४.	आपके
मे	११.	मेरे	अपाङ्ग	५.	नेत्र के कोने से
पूयेत	१४.	पवित्र हो जावें	संदृष्टः	६.	देखे जाने से ही (मेरे पिता)
दुरन्तात्	८.	अन्त रहित और	तदा	३.	उस समय
दुस्तरात्	९.	कठिनाई से पार पाने योग्य	कृपण	१.	हे दीन
अघात्	१०.	पाप से	वत्सलः ॥	२.	बन्धु !

श्लोकार्थ—हे दीनबन्धु ! उस समय आपके नेत्रों के कोने से देखे जाने से ही मेरे पिता पवित्र हो गये थे । अन्तरहित और कठिनाई से पार पाने योग्य पाप से मेरे पिता तो भी पवित्र हो जावें ।

अष्टादशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—त्रिःसप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ ।
यत् साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः ॥ १८ ॥

पदच्छेद— त्रिः सप्तभिःपिता पूतः पितृभिः सह ते अनघ ।
यत् साधो अस्य गृहे जातः भवान्वै कुल पावनः ॥

शब्दार्थ –

त्रिः	४.	तीन	यत्	९.	क्योंकि
सप्तभिः	५.	सात (इक्कीस)	साधो	१०.	हे साधो
पिता	३.	पिता	अस्य	११.	इसके
पूतः	८.	पवित्र हो गये	गृह	१२.	घर में
पितृभिः	६.	पीढियों के	जातः	१६.	उत्पन्न हुआ है
सह	७.	साथ	भवान् वै	१५.	आप जैसा पुत्र
ते	२.	तुम्हारे	कुल	१३.	कुल को
अनघ ।	१.	हे निष्पाप प्रह्लाद !	पावनः ॥	१४.	पवित्र करने वाला

श्लोकार्थ—हे निष्पाप प्रह्लाद ! तुम्हारे पिता तीन सात इक्कीस पीढियों के साथ पवित्र हो गये । क्योंकि हे साधो ! इसके घर में कुल को पवित्र करने वाला आप जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ है ।

एकोनविंशः श्लोकः

यत्र यत्र च मद्भक्ताः प्रशान्ताः समदर्शिनः ।
साधवः समुदाचारास्ते पूयन्त्यपि कीकटाः ॥१६॥

पदच्छेद— यत्र यत्र च मत् भक्ताः प्रशान्ताः समदर्शिनः ।
साधवः समुद् आचाराः ते पूयन्ति अपि कीकटाः ।।

शब्दार्थ

यत्र	९.	जहाँ	**साधवः**	६.	सज्जन पुरुष
यत्र	१०.	जहाँ रहते हैं	**समुद्**	७.	सम्यक्
च	१.	और	**आचाराः**	८.	सदाचारी
मत्	२.	मेरे	**ते**	११.	वे
भक्ताः	३.	भक्त	**पूयन्ति**	१४.	पवित्र हो जाते हैं
प्रशान्ताः	४.	शान्त	**अपि**	१३.	भी
समदर्शिनः ।	५.	समदर्शी	**कीकटाः ।।**	१२.	मगध देश होने पर

श्लोकार्थ—और मेरे भक्त, शान्त, समदर्शी, सज्जन पुरुष, सम्यक् सदाचारी जहाँ-जहाँ रहते हैं वे मगध देश होने पर भी पवित्र हो जाते हैं ।।

विंशः श्लोकः

सर्वात्मना न हिंसन्ति भूतग्रामेषु किञ्चन ।
उच्चावचेषु दैत्येन्द्र मद्भावेन गतस्पृहाः ॥२०॥

पदच्छेद— सर्व आत्मना न हिंसन्ति भूत ग्रामेषु किञ्चन ।
उच्चावचेषु दैत्येन्द्र मत् भावेन गत स्पृहाः ।।

शब्दार्थ—

सर्व	६.	सर्वत्र	**उच्चावचेषु**	८.	बड़े-छोटे
आत्मना	७.	आत्मभाव हो जाने से	**दैत्येन्द्र**	१.	हे दैत्यराज !
न	१२.	नहीं	**मत्**	२.	मेरे
हिंसन्ति	१३.	हिंसा करते हैं	**भावेन**	३.	भक्ति-भाव से (जिनकी)
भूत	९.	प्राणियों के	**गत**	५.	नष्ट हो गई हैं ऐसे मनुष्य
ग्रामेषु	१०.	समूह में	**स्पृहाः ।।**	४.	कामनायें
किञ्चन ।	११.	किसी की भी			

श्लोकार्थ—हे दैत्यराज ! मेरे भक्ति-भाव से जिनकी कामनायें नष्ट हो गई हैं, ऐसे मनुष्य सर्वत्र आत्मभाव हो जाने से बड़े-छोटे प्राणियों के समूह में किसी की भी हिंसा नहीं करते हैं ।

एकविंशः श्लोकः

भवन्ति पुरुषा लोके मद्भक्तास्त्वामनुव्रताः ।
भवान्मे खलु भक्तानां सर्वेषां प्रतिरूपधृक् ॥ २१ ॥

पदच्छेद— भवन्ति पुरुषाः लोके मद् भक्ताः त्वाम् अनुव्रताः ।
भवान् मे खलु भक्तानाम् सर्वेषाम् प्रतिरूपधृक् ॥

शब्दार्थ—

भवन्ति	७. हो जाते हैं	भवान्	८. आप
पुरुषाः	४. लोग	मे	१०. मेरे
लोके	१. संसार में	खलु	९. निश्चित रूप से
मद्	५. मेरे	भक्तानाम्	११. भक्तों के
भक्ताः	६. भक्त	सर्वेषाम्	१२. सभी
त्वाम्	२. तुम्हारे	प्रतिरूप	१३. आदर्श रूप
अनुव्रताः ।	३. अनुयायी	धृक् ॥	१४. धारण किये हुए हैं ।

श्लोकार्थ—संसार में तुम्हारे अनुयायी लोग मेरे भक्त हो जाते हैं । आप निश्चित रूप से मेरे भक्तों के सभी आदर्श रूप धारण किये हुए हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

कुरु त्वं प्रेतकार्याणि पितुः पूतस्य सर्वशः ।
मदङ्गस्पर्शनेनाङ्ग लोकान्यास्यति सुप्रजाः ॥ २२ ॥

पदच्छेद— कुरु त्वम् प्रेतकार्याणि पितुः पूतस्य सर्वशः ।
मत् अङ्गस्पर्शनेन अङ्ग लोकान् यास्यति सुप्रजाः ॥

शब्दार्थ—

कुरु	१०. करो	मत्	२. मेरे
त्वम्	८. तुम	अङ्ग	३. अङ्गों के
प्रेतकार्याणि	९. अन्त्येष्टिक्रिया	स्पर्शनेन	४. स्पर्श से
पितुः	७. पिता की	अङ्ग	१. हे वत्स !
पूतस्य	६. पवित्र	लोकान्	१२. श्रेष्ठ लोकों को
सर्वशः ।	५. सब प्रकार से	यास्यसि	१३. प्राप्त करेगा
		सुप्रजाः ॥	११. उत्तम सन्तान के कारण वह

श्लोकार्थ—हे वत्स ! मेरे अङ्गों के स्पर्श से सब प्रकार से पवित्र पिता की अन्त्येष्टि क्रिया करो । उत्तम सन्तान के कारण वह श्रेष्ठलोकों को प्राप्त करेगा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पित्र्यं च स्थानमातिष्ठ यथोक्तं ब्रह्मवादिभिः ।
मय्यावेश्य मनस्तात कुरु कर्माणि मत्परः ॥ २३ ॥

पदच्छेद— पित्र्यम् च स्थानम् आतिष्ठ यथा उक्तम् ब्रह्म वादिभिः ।
मयि आवेश्य मनः तात कुरु कर्माणि मत् परः ॥

शब्दार्थ—

पित्र्यम्	३.	पिता के	मयि	१०.	मुझमें
च	१.	और	आवेश्य	१२.	लगाकर
स्थानम्	४.	पद पर	मनः	११.	मनको
आतिष्ठ	५.	स्थित हो जाओ	तात	२.	हे तात !
यथा	८.	जिस प्रकार	कुरु	१६.	करो
उक्तम्	९.	कहें	कर्माणि	१५.	कर्मों को
ब्रह्म	६.	ब्रह्म	मत्	१३.	मेरे
वादिभिः ।	७.	वादी मुनिजन	परः ॥	१४.	परायण होकर

श्लोकार्थ—और हे तात ! पिता के पद पर आरूढ हो जाओ । ब्रह्मवादी मुनि जन जिस प्रकार कहें, मुझ में मन को लगाकर मेरे परायण होकर कर्मों को करो ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नारद उवाच—**प्रह्लादोऽपि तथा चक्रे पितुर्यत्साम्परायिकम् ।**
यथाऽऽह भगवान् राजन्नभिषिक्तो द्विजोत्तमैः ॥ २४ ॥

पदच्छेद— प्रह्लादः अपि तथा चक्रे पितुः यत् साम्परायिकम् ।
यथा आह भगवान् राजन् अभिषिक्तः द्विज उत्तमैः ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लादः	६.	प्रह्लाद ने	यथा	२.	जैसा कि
अपि	७.	भी	आह	४.	कहा था
तथा	५.	उसी प्रकार	भगवान्	३.	भगवान् नृसिंह ने
चक्रे	१०.	की (और)	राजन्	१.	हे राजन् !
पितुः	८.	पिता	अभिषिक्तः	१४.	अभिषेक किया
यत	१३.	उनका	द्विज	१२.	ब्राह्मणों ने
साम्परायिकम् ।	९.	अन्त्येष्टि क्रिया	उत्तमैः ॥	११.	श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जैसा कि भगवान् नृसिंह ने कहा था, उसी प्रकार प्रह्लाद ने पिता की अन्त्येष्टि क्रिया की । और श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने उनका अभिषेक किया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

प्रसादसुमुखं दृष्ट्वा ब्रह्मा नरहरिं हरिम्।
स्तुत्वा वाग्भिः पवित्राभिः प्राह देवादिभिर्वृतः ॥२५॥

पदच्छेद— प्रसाद सुमुखम् दृष्ट्वा ब्रह्मा नरहरिम् हरिम्।
स्तुत्वा वाग्भिः पवित्राभिः प्राह देवादिभिः वृतः॥

शब्दार्थ—

प्रसाद	६.	प्रसन्न	स्तुत्वा	११.	स्तुति करके
सुमुखम्	७.	मुख	वाग्भिः	१०.	वचनों के द्वारा
दृष्ट्वा	८.	देखकर	पवित्राणि	९.	पवित्र
ब्रह्मा	३.	ब्रह्मा ने	प्राह	१२.	कहा
नरहरिम्	४.	नृसिंह	देवादिभिः	१.	देवताओं आदि से
हरिम्।	५.	भगवान् का	वृतः॥	२.	घिरे हुये

श्लोकार्थ—देवताओं आदि से घिरे हुये ब्रह्मा ने नृसिंह भगवान् का प्रसन्न मुख देखकर पवित्र वचनों के द्वारा स्तुति करके कहा॥

षड्विंशः श्लोकः

ब्रह्मा उवाच—देवदेवाखिलाध्यक्ष भूतभावन पूर्वज।
दिष्ट्या ते निहतः पापो लोक सन्तापनोऽसुरः ॥२६॥

पदच्छेद— देवदेव अखिल अध्यक्ष भूतभावन पूर्वज।
दिष्ट्या ते निहतः पापः लोक सन्तापनः असुरः॥

शब्दार्थ—

देवदेव	१.	हे देवताओं के देव!	दिष्ट्या	७.	भाग्य से
अखिल	२.	सबके	ते	८.	आपके द्वारा
अध्यक्ष	३.	स्वामी	निहतः	१३.	मार दिया गया
भूत	४.	जीवों के	पापः	११.	पापी
भावन	५.	जीवन दाता	लोक	९.	लोगों को
पूर्वज।	६.	सबसे पहले होने वाले	सन्तापनः	१०.	सताने वाला
			असुरः॥	१२.	दैत्य

श्लोकार्थ—हे देवताओं के देव! सबके स्वामी! जीवों के जीवन दाता! सबसे पहले होने वाले! भाग्य से आपके द्वारा लोगों को सताने वाला पापी दैत्य मार दिया गया॥

सप्तविंशः श्लोकः

योऽसौ लब्धवरो मत्तो न वध्यो मम सृष्टिभिः ।
तपोयोगबलोन्नद्धः समस्तनिगमानहन् ॥२७॥

पदच्छेद— य: असौ लब्धवरः मत्तः न वध्यः मम सृष्टिभिः ।
तपः योग बल उन्नद्धः समस्त निगमान् अहन् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	**तपः**	८.	तपस्या
असौ	२.	उसने	**योग**	९.	योग और
लब्धवरः	४.	वरदान पाकर (कि)	**बल**	१०.	बल के कारण
मतः	३.	मुझसे	**उन्नद्धः**	११.	उन्मत्त होकर
न वध्यः	७.	नहीं मर सकोगे	**समस्त**	१२.	सभी
मम	५.	मेरी	**निगमान्**	१३.	वेद के विधान को
सृष्टिभिः ।	६.	सृष्टि के प्राणियों से	**अहन् ॥**	१४.	नष्ट कर दिया था

श्लोकार्थ—जो उसने मुझसे वरदान पाकर कि मेरी सृष्टि के प्राणियों से नहीं मर सकोगे, तपस्या, योग और बल के कारण उन्मत्त होकर सभी वेद के विधान को नष्ट कर दिया था ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

दिष्ट्यास्य तनयः साधुः महाभागवतोऽर्भकः ।
त्वया विमोचितो मृत्योर्दिष्ट्या त्वां समितोऽधुना ॥२८॥

पदच्छेद— दिष्ट्या अस्य तनयः साधुः महाभागवतः अर्भकः ।
त्वया विमोचितः मृत्योः दिष्ट्या त्वाम् समितः अधुना ॥

शब्दार्थ—

दिष्ट्या	१.	भाग्य से	**त्वया**	८.	आपने
अस्य	२.	उसके	**विमोचितः**	१०.	छुड़ा दिया
तनयः	३.	पुत्र	**मृत्योः**	९.	मृत्यु के मुख से
साधुः	६.	सज्जन	**दिष्ट्या**	१०.	भाग्य से ही
महा	४.	परम	**त्वाम्**	१३.	आपकी
भागवतः	५.	भगवद्भक्त	**समितः**	१२.	शरण में है
अर्भकः ।	७.	बालक प्रह्लाद को	**अधुना ॥**	१२.	इस समय यह

श्लोकार्थ—भाग्य से उसके पुत्र परमभगवद्भक्त सज्जन बालक प्रह्लाद को आपने मृत्यु के मुख से छुड़ा दिया । भाग्य से ही इस समय यह आपकी शरण में है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एतद् वपुस्ते भगवन्ध्यायतः प्रयतात्मनः।

सर्वतो गोप्तृ संत्रासान्मृत्योरपि जिघांसतः ॥ २९ ॥

पदच्छेद— एतद् वपुः ते भगवन् ध्यायतः प्रयत आत्मनः।

सर्वतः गोप्तृ संत्रासात् मृत्योः अपि जिघांसतः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	३. यह		सर्वतः	८. सब प्रकार से	
वपुः	४. नृसिंह रूप		गोप्तृ	१३. बचाने वाला है	
ते	२. आपका		संत्रासात्	९. महान् भयों से (और)	
भगवन्	१. हे भगवन्		मृत्योः	११. मृत्यु से	
ध्यायतः	५. ध्यान करने वाले और		अपि	११. भी	
प्रयत	६. पवित्र		जिघांसतः ॥	१०. मारने के इच्छुक	
आत्मनः	७. आत्मा वाले (मनुष्य को)				

श्लोकार्थ—हे भगवन्! आपका यह नृसिंह रूप ध्यान करने वाले और पवित्र आत्मा वाले मनुष्य को सब प्रकार से महान् भयों से और मारने के इच्छुक मृत्यु से भी बचाने वाला है ॥

त्रिंशः श्लोकः

नृसिंह उवाच— **मैवं वरोऽसुराणां ते प्रदेयः पद्मसम्भव।**

वरः क्रूरनिसर्गाणामहीनाममृतं यथा ॥ ३० ॥

पदच्छेद— मा एवम् वरः असुराणाम् ते प्रदेयः पद्मसम्भव।

वरः क्रूरनिसर्गाणाम् अहीनाम् अमृतम् यथा ॥

शब्दार्थ—

मा	६. नहीं	वरः	१०. वरदान देना
एवम्	३. इस प्रकार	क्रूर	९. क्रूरव्यक्तियों को
वरः	५. वरदान	निसर्गाणाम्	८. स्वभाव से ही
असुराणाम्	४. दैत्यों को	अहीनाम्	११. सर्पों को
ते	२. आपको	अमृतम्	१२. अमृत पिलाने के
प्रदेयः	७. देना चाहिये	यथा ॥	१३. समान है।
पद्मसम्भव।	१. हे कमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी		

श्लोकार्थ—हे कमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी! आपको इस प्रकार दैत्यों को वरदान नहीं देना चाहिये। क्योंकि स्वभाव से ही क्रूरव्यक्तियों को वरदान देना सर्पों को अमृत पिलाने के समान है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

नारद उवाच— इत्युक्त्वा भगवान्राजंस्तत्रैवान्तर्दधे हरिः ।
अदृश्यः सर्वभूतानां पूजितः परमेष्ठिना ॥ ३१ ॥

पदच्छेद— इति उक्त्वा भगवान् राजन् तत्र एव अन्तर्दधे हरिः ।
अदृश्यः सर्व भूतानाम् पूजितः परमेष्ठिना ॥

शब्दार्थ

इति	२.	इतना	हरिः ।	५.	हरि
उक्त्वा	३.	कहकर	अदृश्यः	१२.	अदृश्य हो गये
भगवान्	४.	नृसिंह भगवान्	सर्व	१०.	सभी
राजन्	१.	हे राजन् !	भूतानाम्	११.	प्राणियों के लिये
तत्र एव	८.	वहीं	पूजितः	७.	पूजित होने पर
अन्तर्दधे	९.	अन्तर्ध्यान (एवम्)	परमेष्ठिना ।।	६.	ब्रह्मा के द्वारा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इतना कहकर नृसिंह भगवान् हरि ब्रह्मा के द्वारा पूजित होने पर वहीं अन्तर्ध्यान एवम् सभी प्राणियों के लिये अदृश्य हो गये ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

ततः सम्पूज्य शिरसा ववन्दे परमेष्ठिनम् ।
भवं प्रजापतीन्देवान्प्रह्लादो भगवत्कलाः ॥ ३२ ॥

पदच्छेद— ततः सम्पूज्य शिरसा ववन्दे परमेष्ठिनम् ।
भवम् प्रजापतीन् देवान् प्रह्लादः भगवत् कलाः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	भवम्	६.	शिव
सम्पूज्य	९.	पूजा करके	प्रजापतीन्	७.	प्रजापतियों (और)
शिरसा	१०.	शिरसे	देवान्	८.	देवताओं की
ववन्दे	११.	प्रणाम किया	प्रह्लादः	२.	प्रह्लाद ने
परमेष्ठिनम् ।	५.	ब्रह्मा	भगवत्	३.	भगवत्
			कलाः ॥	४.	स्वरूप

श्लोकार्थ—तदनन्तर प्रह्लाद ने भगवत् स्वरूप ब्रह्मा, शिव, प्रजापतियों और देवताओं की पूजा करके शिरसे प्रणाम किया ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ततः काव्यादिभिः सार्धं मुनिभिः कमलासनः ।
दैत्यानां दानवानां च प्रह्लादमकरोत् पतिम् ॥३३॥

पदच्छेद-- ततः काव्य आदिभिः सार्धम् मुनिभिः कमलासनः ।
दैत्यानाम् दानवानाम् च प्रह्लादम् अकरोत् पतिम् ॥

शब्दार्थ –

ततः	१. तब	दैत्यानाम्	८. दैत्यों
काव्य	२. शुक्राचार्य	दानवानाम्	१०. दानवों का
आदिभिः	३. आदि	च	९. और
सार्धम्	५. साथ	प्रह्लादम्	७. प्रह्लाद को
मुनिभिः	४. मुनियों के	अकरोत्	१२. बना दिया
कमलासनः ।	६. ब्रह्माजी ने	पतिम् ॥	११. स्वामी

श्लोकार्थ—तब शुक्राचार्य आदि मुनियों के साथ ब्रह्माजी ने प्रह्लाद को दैत्यों और दानवों का स्वामी बना दिया ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

प्रतिनन्द्य ततो देवाः प्रयुज्य परमाशिषः ।
स्वधामानि ययू राजन्ब्रह्माद्याः प्रतिपूजिताः ॥३४॥

प्रतिनन्द्य ततः देवाः प्रपूज्य परम आशिषः ।
स्वधामानि ययुः राजन् ब्रह्म आद्याः प्रतिपूजिताः ॥

शब्दार्थ—

प्रतिनन्द्य	५. प्रह्लाद का अभिनन्दन करके स्व		१०. अपने-अपने
ततः	२. तब	धामानि	११. लोकों को
देवाः	४. देवताओं ने	ययुः	१२. चले गये
प्रपूज्य	८. दिया (और)	राजन्	१. हे राजन् !
परम	६. शुभ	ब्रह्मआद्याः	३. ब्रह्मा आदि
आशिषः ।	७. आशीर्वाद	प्रतिपूजिताः ॥	९. पूजित होने पर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तब ब्रह्मा आदि देवताओं ने प्रह्लाद का अभिनन्दन करके शुभ आशीर्वाद दिया और पूजित होकर अपने-अपने लोकों को चले गये ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं तौ पार्षदौ विष्णोः पुत्रत्वं प्रापितौ दितेः ।
हृदि स्थितेन हरिणा वैरभावेन तौ हतौ ॥३५॥

पदच्छेद— एवम् तौ पार्षदौ विष्णोः पुत्रत्वम् प्रापितौ दितेः ।
हृदि स्थितेन हरिणा वैर भावेन तौ हतौ ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	हृदि	८.	हृदय में
तौ	२.	ये दोनों	स्थितेन	९.	रहने वाले
पार्षदौ	४.	पार्षद	हरिणा	१०.	भगवान् से
विष्णोः	३.	विष्णु भगवान् के	वैर	११.	वैर
पुत्रत्वम्	७.	पुत्र भाव को	भावेन	१२.	भाव रखने के कारण
प्रापितौ	६.	प्राप्त हो गये थे (और)	तौ	१३.	वे दोनों
दितेः	५.	दिति के	हतौ	१४.	मार डाले गये

श्लोकार्थ—इस प्रकार ये दोनों विष्णु भगवान् के पार्षद दिति के पुत्र भाव को प्राप्त हो गये थे। और हृदय में रहने वाले भगवान् से वैर भाव रखने के कारण वे दोनों मार डाले गये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

पुनश्च विप्रशापेन राक्षसौ तौ बभूवतुः ।
कुम्भकर्णदशग्रीवौ हतौ तौ रामविक्रमैः ॥३६॥

पदच्छेद— पुनः च विप्रशापेन राक्षसौ तौ बभूवतुः ।
कुम्भकर्ण दशग्रीवौ हतौ तौ राम विक्रमैः ॥

शब्दार्थ—

पुनः	२.	फिर से	कुम्भकर्ण	६.	कुम्भकर्ण (और)
च	१.	और	दशग्रीवौ	७.	रावण के रूप में
विप्र	३.	ब्राह्मणों के	हतौ	१३.	मार दिये गये
शापेन	४.	शाप से	तौ	१०.	वे दोनों
राक्षसौ	८.	राक्षस	राम	११.	राम के
तौ	५.	ये दोनों	विक्रमैः ॥	१२.	पराक्रम से
बभूवतुः ।	९.	हुये (तथा)			

श्लोकार्थ—और फिर से ब्राह्मणों के शाप से ये दोनों कुम्भकर्ण और रावण के रूप में राक्षस हुये। वे दोनों राम के पराक्रम से मार दिये गये ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

शयानौ युधि निर्भिन्नहृदयौ रामसायकैः ।
तच्चित्तौ जहतुर्देहं यथा प्राक्तनजन्मनि ॥३७॥

पदच्छेद— शयानौ युधि निर्भिन्न हृदयौ राम सायकैः ।
तत्‌चित्तौ जहतुः देहम् यथा प्राक्तन जन्मनि ॥

शब्दार्थ—

शयानौ	६.	सोते हुए	तत्	७.	उन दोनों ने भगवान् में
युधि	५.	युद्ध में	चित्तौ	८.	चित्त को लगाकर
निर्भिन्न	४.	फट जाने पर	जहतुः	१०.	छोड़ दिया
हृदयः	३.	हृदय के	देहम्	९.	शरीर को
राम	१.	राम के	यथा	११.	जैसे
सायकैः ।	२.	वाणों से	प्राक्तन	१२.	पूर्व
			जन्मनि ।।	१३.	जन्म में छोड़ा था

श्लोकार्थ—राम के वाणों से हृदय के फट जाने पर युद्ध में सोते हुये उन दोनों ने भगवान् में चित्त को लगाकर शरीर को छोड़ दिया, जैसे पूर्व जन्म में छोड़ा था ।।

अष्टात्रिंशः श्लोकः

ताविहाथ पुनर्जातौ शिशुपालकरूषजौ ।
हरौ वैरानुबन्धेन पश्यतस्ते समीयतुः ॥३८॥

पदच्छेद— तौ इह अथ पुनः जातौ शिशुपाल करूषजौ ।
हरौ वैर अनुबन्धेन पश्यतः ते समीयतुः ॥

शब्दार्थ—

तौ	२.	वे दोनों	हरौ	८.	भगवान् में
इह	१.	ये	वैर	९.	वैर
अथ	३.	यहाँ	अनुबन्धेन	१०.	होने के कारण
पुनः	४.	फिर से	पश्यतः	१२.	देखते हुए (उनमें)
जातौ	७.	उत्पन्न हुये (तथा)	ते	११.	तुम्हारे
शिशुपाल	५.	शिशुपाल (और)	समीहतुः ।।	१३.	समा गये
करूषजौ ।	६.	दन्तवक्त्र के रूप में			

श्लोकार्थ—वे दोनों यहाँ फिर से शिशुपाल और दन्तवक्त्र के रूप में उत्पन्न हुये तथा भगवान् से वैर-भाव होने के कारण तुम्हारे देखते हुये उनमें समा गये ।।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

एनः पूर्वकृतं यत् तद् राजानः कृष्णवैरिणः।
जहुस्त्वन्ते तदात्मानः कीटः पेशस्कृतो यथा ॥३९॥

पदच्छेद — एनः पूर्वं कृतम् यत् तद् राजानः कृष्ण वैरिणः।
जहुः तु अन्ते तत् आत्मानः कीटः पेशस्कृतः यथा ॥

शब्दार्थ —

एनः	६.	पाप	जहुः	१२.	त्याग दिया
पूर्वं	५.	पहले के	तु	१३.	जैसे
कृतम्	७.	किये थे	अन्ते	९.	अन्त में
यत्	४.	जो	तत्	१०.	उन भगवान् के
तद्	८.	उसे	आत्मानः	११.	स्वरूप होकर
राजानः	३.	राजाओं ने	कीटः	१५.	कीड़ा (चिन्तन से उसके)
कृष्ण	१.	श्री कृष्ण से	पेशस्कृतः	१४.	भृंगी के द्वारा पकड़ा गया
वैरिणः ।	२.	वैर करने वाले	यथा ॥	१६.	समान हो जाता है

श्लोकार्थः—श्रीकृष्ण से वैर करने वाले राजाओं ने जो पहले पाप किये थे, उसे अन्त में उन भगवान् के स्वरूप होकर त्याग दिया, जैसे भृंगी के द्वारा पकड़ा गया कीड़ा चिन्तन से उसके समान हो जाता है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यथा यथा भगवतो भक्त्या परमयाभिदा।
नृपाश्चैद्यादयः सात्म्यं हरेस्तच्चिन्तया ययुः ॥४०॥

पदच्छेद— यथा यथा भगवतः भक्त्या परमया अभिदा।
नृपाः चैद्य आदयः सात्म्यम् हरेः तत् चिन्तया ययुः ॥

शब्दार्थ—

यथा-यथा	१.	जैसे-जैसे	चैद्य	६.	(वैसे ही) शिशुपाल
भगवतः	२.	भगवान् के भक्त	आदयः	७.	आदि
भक्त्या	५.	भक्ति से (उनको प्राप्त कर लेते हैं)	सात्म्यम्	११.	भगवत् स्वरूप को
परमया	४.	परम	हरेः	९.	भगवान् के
अभिदा।	३.	भेद भाव से रहित	तत्	८.	उन
नृपः	८.	राजा	चिन्तया	१०.	चिन्तन से
			ययुः ॥	१२.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—जैसे-जैसे भगवान् के भक्त भेद भाव से रहित परम भक्ति से उनको प्राप्त कर लेते हैं। वैसे ही शिशुपाल आदि राजा उन भगवान् के चिन्तन से भगवत् स्वरूप को प्राप्त हो गये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

आख्यातं सर्वमेतत् ते यन्मां त्वं परिपृष्टवान् ।

दमघोषसुतादीनां हरेः सात्म्यमपि द्विषाम् ॥४१॥

पदच्छेद— आख्यातं सर्वम् एतत् ते यत् माम् त्वम् परिपृष्टवान् ।
दमघोष सुत आदीनाम् हरेः सात्म्यम् अपि द्विषाम् ॥

शब्दार्थ—

आख्यातम्	१५.	कह दिया	परिपृष्टवान्	४.	पूछा था (कि भगवान् से)
सर्वम्	१३.	सब	दमघोष	६.	दमघोष के
एतत्	१२.	यह	सुत	७.	पुत्र
ते	१४.	तुम से	आदीनाम्	८.	शिशुपालादि को
यत्	२.	जो	हरेः	१०.	भगवान् विष्णु के
माम्	३.	मुझसे	सात्म्यम्	११.	स्वरूप की प्राप्ति कैसे हुई
त्वम्	१.	तुमने	अपि	९.	भी
			द्विषाम् ॥	५.	द्वेष करने वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुमने जो मुझ से पूछा था कि भगवान् से द्वेष करने वाले दमघोष के पुत्र शिशुपालादि को भी भगवान् विष्णु के स्वरूप की प्राप्ति कैसे हुई, यह सब तुमसे कह दिया ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

एषा ब्रह्मण्यदेवस्य कृष्णस्य च महात्मनः ।

अवतारकथा पुण्या वधो यत्रादिदैत्ययोः ॥४२॥

पदच्छेद— एषा ब्रह्मण्य देवस्य कृष्णस्य च महात्मनः ।
अवतार कथा पुण्या वधः यत्र आदि दैत्ययोः ॥

शब्दार्थ—

एषा	१.	यह	अवतार	६.	अवतार की
ब्रह्मण्य	२.	ब्राह्मणों के	कथा	८.	कथा है
देवस्य	३.	रक्षक	पुण्या	७.	पवित्र
कृष्णस्य	५.	भगवान् श्रीकृष्ण के	वधः	१२.	वध का वर्णन है
च	९.	और	यत्र	१०.	जिसमें
महात्मनः ।	४.	परमात्मा	आदिदैत्ययोः ॥	११.	आदि दैत्य हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु के

श्लोकार्थ—यह ब्राह्मणों के रक्षक परमात्मा भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार की पवित्र कथा है। और जिसमें आदि दैत्य हिरण्याक्ष और हिरण्कशिपु के वध का वर्णन है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्रह्लादस्यानुचरितं महाभागवतस्य च।
भक्तिर्ज्ञानं विरक्तिश्च याथात्म्यं चास्य वै हरेः ॥४३॥

पदच्छेद— प्रह्लादस्य अनुचरितम् महा भागवतस्य च।
भक्तिः ज्ञान विरक्तिः च याथात्म्यम् च अस्य वै हरेः ॥

शब्दार्थ—

प्रह्लादस्य	४.	प्रह्लाद का	विरक्तिः	९.	वैराग्य
अनुचरितम्	५.	चरित	च	८.	और
महा	२.	इसमें परम	याथात्म्यम्	१४.	यथार्थ स्वरूप का वर्णन है
भागवतस्य	३.	भगवत् भक्त	च	१०.	तथा
च।	१.	और	अस्य	११.	इन
भक्तिः	६.	भक्ति	वै	१२.	ही
ज्ञान	७.	ज्ञान	हरेः ॥	१३.	विष्णु के

श्लोकार्थ—और इसमें परम भगवद्भक्त प्रह्लाद का चरित भक्ति, ज्ञान और वैराग्य तथा इन ही विष्णु के यथार्थ स्वरूप का वर्णन है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

सर्गस्थित्यप्ययेशस्य गुणकर्मानुवर्णनम्।
परावरेषां स्थानानां कालेन व्यत्ययो महान् ॥४४॥

पदच्छेद— सर्ग स्थिति अप्यय ईशस्य गुण कर्म अनुवर्णनम्।
पर अवरेषाम् स्थानानाम् कालेन व्यत्ययः महान् ॥

शब्दार्थ—

सर्ग	१.	सृष्टि	पर	७.	दैत्य (और)
स्थिति	२.	स्थिति (और)	अवरेषाम्	८.	दानवों के
अप्यय	३.	प्रलय के	स्थानानाम्	९.	स्थानों में
ईशस्य	४.	स्वामी के	कालेन	१०.	कालक्रम से जो
गुण	५.	गुण (और)	व्यत्ययः	१२.	परिवर्तन होता है (उसका भी)
कर्म	६.	कर्मों का (तथा)	महान् ॥	११.	महान्
अनुवर्णनम्।	१३.	वर्णन है			

श्लोकार्थ—सृष्टि, स्थिति और प्रलय के स्वामी के गुण और कर्मों का तथा देवता और दानवों के स्थानों में कालक्रम से जो महान् परिवर्तन होता है, उसका भी वर्णन है।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

धर्मो भागवतानां च भगवान्येन गम्यते ।
आख्यानेऽस्मिन्समाम्नातमाध्यात्मिकमशेषतः ॥ ४५ ॥

पदच्छेद— धर्मः भागवतानाम् च भगवान् येन गम्यते ।
आख्याने अस्मिन् समाम्नातम् आध्यात्मिकम् अशेषतः ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	७.	धर्म का	आख्याने	२.	कथा में
भागवतानाम्	६.	भागवत	अस्मिन्	१.	इस
च	५	और	समाम्नातम्	८.	वर्णन है
भगवान्	१०.	भगवान् की	आध्यात्मिकम्	४.	अध्यात्म सम्बन्धी विषयों का
येन	६.	जिससे	अशेषतः ॥	३.	सम्पूर्ण
गम्यते ।	११.	प्राप्ति होती है			

श्लोकार्थ—इस कथा में सम्पूर्ण अध्यात्म सम्बन्धी विषयों का और भागवत धर्म का वर्णन है। जिससे भगवान् की प्राप्ति होती है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

य एतत् पुण्यमाख्यानं विष्णोर्वीर्योपबृंहितम् ।
कीर्तयेच्छ्रद्धया श्रुत्वा कर्मपाशैर्विमुच्यते ॥ ४६ ॥

पदच्छेद— य एतत् पुण्यम् आख्यानम् विष्णोः वीर्यउपबृंहितम् ।
कीर्तयेत् श्रद्धया श्रुत्वा कर्मपाशैः विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	उपबृंहितम्	४.	परिपूर्ण
एतत्	५.	इस	कीर्तयेत्	१०.	कीर्तन करता है वह
पुण्यम्	६.	पवित्र	श्रद्धया	८.	श्रद्धा से
आख्यानम्	७.	कथा को	श्रुत्वा	६.	सुनकर
विष्णोः	२.	विष्णु के	कर्मपाशैः	११.	कर्मबन्धन से
वीर्य	३.	पराक्रम से	विमुच्यते ॥	१२.	मुक्त हो जाता है ।

श्लोकार्थ—जो विष्णु के पराक्रम से परिपूर्ण इस पवित्र कथा को श्रद्धा से सुनकर कीर्तन करता है, वह कर्म बन्धन से मुक्त हो जाता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

एतद् य आदिपुरुषस्य मृगेन्द्रलीलां दैत्येन्द्रयूथपवधं प्रयतः पठेत।
दैत्यात्मजस्य च सतां प्रवरस्य पुण्यं श्रुत्वानुभावमकुतोभयमेति लोकम् ॥४७॥

पदच्छेद एतद् यः आदि पुरुषस्य मृगेन्द्र लीलाम् दैत्येन्द्र यूथप वधम् प्रयतः पठेत।
दैत्य आत्मजस्य च सताम् प्रवरस्य पुण्यम् श्रुत्वा अनुभावम् अकुतोभयम् एति लोकम् ॥

शब्दार्थ एतद्	२.	इस	दैत्यात्मजस्य	१२.	दैत्य पुत्र प्रह्लाद के
यः	१.	जो मनुष्य	च सताम्	१०.	और सज्जनों में
आदि पुरुषस्य	३.	आदि पुरुष भगवान् की	प्रवरस्य	११.	श्रेष्ठ
मृगेन्द्रलीलाम्	४.	नृसिंह लीला	पुण्यम्	१३.	पवित्र
दैत्येन्द्र	६.	दैत्यराज के	श्रुत्वा	१५.	सुनेगा (वह)
यूथप	५.	सेनापति सहित	अनुभावम्	१४.	प्रभाव को
वधम्	७.	वध का	अकुतोभयम्	१६.	कहीं से भी भय न हो ऐसे
प्रयतः	८.	पवित्र होकर	एति	१८.	प्राप्त करता है
पठेत।	९.	पाठ करेगा	लोकम् ॥	१७.	वैकुण्ठधाम को

श्लोकार्थः—जो मनुष्य इस आदि पूरुष भगवान् की नृसिंह लीला तथा सेनापति सहित दैत्यराज के वध का पवित्र होकर पाठ करेगा और सज्जनों में श्रेष्ठ दैत्यराज प्रह्लाद के पवित्र प्रभाव को सुनेगा, वह कहीं से भी भय न हो, ऐसे वैकुण्ठधाम को प्राप्त करेगा ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यूयं नृलोके बत भूरिभागा लोकं पुनाना मुनयोऽभियन्ति।
येषां गृहानावसतीति साक्षाद् गूढं परं ब्रह्म मनुष्यलिङ्गम् ॥४८॥

पदच्छेद— यूयम् नृलोके बत भूरि भागाः लोकम् पुनानाः मुनयः अभियन्ति।
येषाम् गृहान् आवसतीति साक्षात् गूढम् परम् ब्रह्म मनुष्य लिङ्गम् ॥

शब्दार्थ - यूयम्	३.	आप लोग	येषाम्	९.	जिन तुम्हारे
नृलोके	२.	मनुष्य लोक में	गृहान्	१०.	घर में
बत	१.	हर्ष की बात है कि	आवसतीति	१६.	निवास करते हैं
भूरिभागाः	४.	बृहत्भाग्यवान् हो (क्योंकि)	साक्षात्	१२.	साक्षात्
लोकम्	५.	संसार को	गूढम्	११.	छिपे रूप से
पुनानाः	६.	पवित्र करने वाले	परंब्रह्म	१३.	परमात्मा
मुनयः	७.	मुनि लोग	मनुष्य	१४.	मनुष्य का
अभियन्ति।	८.	तुम्हारे पास आते हैं	लिङ्गम्॥	१५.	रूप धारण करके

श्लोकार्थः—हर्ष की बात है कि मनुष्यलोक में आप लोग बहुत भाग्यवान् हैं। क्योंकि संसार को पवित्र करने वाले मुनि लोग तुम्हारे पास आते हैं। जिन तुम्हारे घर में छिपे रूप से साक्षात् परमात्मा मनुष्य का रूप धारण करके निवास करते हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

स वा अयं ब्रह्म महद्विमृग्यकैवल्यनिर्वाणसुखानुभूतिः ।
प्रियः सुहृद् वः खलु मातुलेय आत्मार्हणीयो विधिकृद् गुरुश्च ॥४९॥

पदच्छेद— सः वा अयम् ब्रह्म महद् विमृग्य कैवल्य निर्वाण सुख अनुभूतिः ।
प्रियः सुहृद् वः खलु मातुलेयः आत्मा अर्हणीयः विधिकृत् गुरुः च ॥

शब्दार्थ—

सः	२. वह	प्रियः	११. प्रिय
वा	१. अथवा	सुहृद्	१२. हितैषी
अयम्	३. ये	वः	१०. तुम लोगों के
ब्रह्ममहद्	४. परमात्मा महान् पुरुषों में	खलु	१३. निश्चित रूप से
विमृग्य	५. ढूंढने योग्य	मातुलेयः	१४. ममेरे भाई
कैवल्य	६. माया से रहित	आत्मा अर्हणीयः	१५. आत्मा पूज्य
निर्वाण	७. परम शान्त	विधिकृत्	१६. आज्ञाकारी
सुख	८. परमानन्द	गुरुः	१८. गुरु हैं
अनुभूतिः ।	९. स्वरूप	च ॥	१७. और

श्लोकार्थ— अथवा ये वह परमात्मा महान् पुरुषों में ढूंढने योग्य, माया से रहित, परमशान्त, परमानन्द स्वरूप, तुम लोगों के प्रिय, हितैषी, निश्चित रूप से ममेरे भाई, आत्मा, पूज्य, आज्ञाकारी और गुरु हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

न यस्य साक्षाद् भवपद्मजादिभी रूपं धिया वस्तुतयोपवर्णितम् ।
मौनेन भक्त्योपशमेन पूजितः प्रसीदतामेष स सात्वतां पतिः ॥५०॥

पदच्छेद— न यस्य साक्षात् भव पद्मज आदिभिः, रूपम् धिया वस्तुतया उपवर्णितम् ।
मौनेन भक्त्या उपशमेन पूजितः प्रसीदताम् एषः सः सात्वताम् पतिः ॥

शब्दार्थ—

न	७. नहीं	मौनेन	९. मौन
यस्य	३. जिसके	भक्त्या	१०. भक्ति और
साक्षात् भव	१. साक्षात् शंकर	उपशमेन	११. शान्ति से
पद्मजादिभिः	२. ब्रह्मा आदि भी	पूजितः	१२. पूजित
रूपम्	४. रूप को	प्रसीदताम्	१६. प्रसन्न हों
धिया	५. बुद्धि से	एषः	१३. ये
वस्तुतया	६ वे ये हैं (इस रूप में)	सः	१४. वे भगवान्
उपवर्णितम् ।	८. वर्णन कर सके	सात्वताम् पतिः ॥	१५. भक्तों के स्वामी

श्लोकार्थ—साक्षात् शंकर, ब्रह्मा आदि भी जिसके रूप को बुद्धि से वे ये हैं इस रूप में वर्णन नहीं कर सके, मौन, भक्ति और शान्ति से पूजित ये वे भगवान् भक्तों के स्वामी प्रसन्न हों ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

स एष भगवान्राजन्व्यतनोद् विहतं यशः ।

पुरा रुद्रस्य देवस्य मयेनानन्तमायिना ॥५१॥

पदच्छेद— सः एषः भगवान् राजन् व्यतनोद् विहतम् यशः ।

पुरा रुद्रस्य देवस्य मयेन अनन्त मायिना ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वही	**यशः ।**	११.	यश को
एषः	३.	ये	**पुरा**	५.	पूर्वकाल में
भगवान्	४.	भगवान् हैं (जिन्होंने)	**रुद्रस्य**	९.	शंकर
राजन्	१.	हे राजन् !	**देवस्य**	१०.	देव के
व्यतनोद्	१२.	फैलाया था	**मयेन**	७.	मयदानव के द्वारा
विहतम्	८.	नष्ट हुये	**अनन्तमायिना ॥**	६.	महामायावी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वही ये भगवान् हैं, जिन्होंने पूर्वकाल में महामायावी मयदानव के द्वारा नष्ट हुये शंकर देव के यश को फैलाया था ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

राजोवाच—कस्मिन् कर्मणि देवस्य मयोऽहञ्जगदीशितुः ।

यथा चोपचिता कीर्तिः कृष्णेनानेन कथ्यताम् ॥५२॥

पदच्छेद— कस्मिन् कर्मणि देवस्य मयः अहन् जगत् ईशितुः ।

यथा च उपचिता कीर्तिः कृष्णेन अनेन कथ्यताम् ॥

शब्दार्थ—

कस्मिन्	१.	किस	**यथा**	९.	जिस प्रकार
कर्मणि	२.	कर्म में	**च**	८.	और
देवस्य	६.	महादेव के (यश को)	**उपचिता**	१३.	फैलाया था (उसे)
मयः	३.	मयनामक दैत्य ने	**कीर्तिः**	१२.	यश को
अहन्	७.	नष्ट किया था	**कृष्णेन**	१०.	भगवान् श्रीकृष्णने
जगत्	४.	संसार के	**अनेन**	११.	इनके
ईशितुः ।	५.	स्वामी	**कथ्यताम् ॥**	१४.	कहिये

श्लोकार्थ—किस कर्म से मयनामक दैत्य ने संसार के स्वामी महादेव के यश को नष्ट किया था । और जिस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण ने इनके यश को फैलाया था, उसे कहिये ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

नारद उवाच— निर्जिता असुरा देवैर्युध्यनेनोपबृंहितैः ।
मायिनां परमाचार्यं मयं शरणमाययुः ॥५३॥

पदच्छेद— निर्जिताः असुराः देवैः युधि अनेन उपबृंहितैः ।
मायिनाम् परम आचार्यम् मयम् शरणम् आययुः ॥

शब्दार्थ—

निर्जिताः	५.	जीते गये	मायिनाम्	७.	मायावियों के
असुराः	६.	दैत्य लोग	परम	८.	परम
देवैः	३.	देवताओं के द्वारा	आचार्यम्	६.	गुरु
युधि	४.	युद्ध में	मयम्	१०.	मयदानव की
अनेन	१.	श्रीकृष्ण के द्वारा	शरणम्	११.	शरण में
उपबृंहितैः ।	२.	शक्ति प्राप्त करके	आययुः ॥	१२.	गये

श्लोकार्थ—श्रीकृष्ण से शक्ति प्राप्त करके देवताओं के द्वारा युद्ध में जीते गये दैत्यलोग मायावियों के परम गुरु मयदानव की शरण में गये ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

स निर्माय पुरस्तिस्रो हैमीरौप्यायसीर्विभुः ।
दुर्लक्ष्यापायसंयोगा दुर्वितर्क्यपरिच्छदाः ॥५४॥

पदच्छेद— सः निर्माय पुरः तिस्रः हैमी रौप्य आयसीः विभुः ।
दुर्लक्ष्य अपाय संयोगाः दुर्वितर्क्य परिच्छदाः ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	उस दैत्य ने	विभुः ।	१.	शक्तिशाली
निर्माय	१२.	बना दिया	दुर्लक्ष्य	३.	अलक्षित
पुरः	११.	नगरों को	अपाय	५.	जाने वाले
तिस्रः	१०.	तीन	संयोगाः	४.	आने
हैमी रौप्य	८.	सोना चांदी और	दुर्वितर्क्य	६.	अनुमान से परे
आयसीः	६.	लोहे के	परिच्छदाः ॥	७.	सामग्रियों से युक्त

श्लोकार्थ—शक्तिशाली उस दैत्य ने अलक्षित आने जाने वाले, अनुमान से परे सामग्रियों से युक्त, सोने, चाँदी और लोहे के तीन नगरों को बना दिया ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

ताभिस्तेऽसुरसेनान्यो लोकांस्त्रीन् सेश्वरान् नृप ।
स्मरन्तो नाशयाञ्चक्रुः पूर्ववैरमलक्षिताः ॥५५॥

पदच्छेद— ताभिः ते असुर सेनान्यः लोकान् त्रीन् स ईश्वरान् नृप ।
स्मरन्तः नाशयाम् चक्रुः पूर्व वैरम् अलक्षिताः ॥

शब्दार्थ—

ताभिः	८.	उन नगरों के द्वारा	ईश्वरान्	९.	लोकपालों के
ते	२.	वे	नृप ।	१.	हे राजन् !
असुर	३.	असुर	स्मरन्तः	६.	स्मरण करते हुये
सेनान्यः	१४.	सेनापति	नाशयाम्	१३.	नष्ट
लोकान्	१२.	लोकों को	चक्रुः	१४.	करने लगे
त्रीन्	११.	तीनों	पूर्व वैरम्	५.	पहले के, वैर-भाव को
स	१०.	सहित	अलक्षिताः ॥	७.	छिपे रहकर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वे असुर सेनापति पहले के वैर-भाव को स्मरण करते हुये छिपे रहकर उन नगरों के द्वारा लोकपालों के सहित तीनों लोकों को नष्ट करने लगे ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

ततस्ते सेश्वरा लोका उपासाद्येश्वरं विभो ।
त्राहि नस्तावकान्देव विनष्टांस्त्रिपुरालयैः ॥५६॥

पदच्छेद — ततः ते स ईश्वराः लोकाः उपासाद्य ईश्वरम् विभो ।
त्राहि नः तावकान् देव विनष्टान् त्रिपुर आलयैः ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	तब	त्राहि	१४.	बचाइये
ते	३.	उन	नः	१३.	हमें
स ईश्वराः	५.	लोकपाल सहित	तावकान्	९.	हम आपके हैं
लोकाः	४.	प्रजाओं ने	देव	८.	हे देव !
उपासाद्य	७.	समीप जाकर प्रार्थना की	विनष्टान्	१२.	नष्ट होते हुये
ईश्वरम्	६.	शंकर जी के	त्रिपुर	१०.	तीन
विभो ।	१.	हे प्रभो !	आलयैः ॥	११.	पुरों में रहने वाले राक्षसों से

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! तब उन प्रजाओं ने लोकपालों सहित शंकर जी के समीप में जाकर प्रार्थना की—हे देव ! हम आपके हैं तीन पुरों में रहने वाले राक्षसों से हमें बचाइये ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

अथानुगृह्य भगवान्मा भैष्टेति सुरान्विभुः ।
शरं धनुषि सन्धाय पुरेष्वस्त्रं व्यमुञ्चत ॥५७॥

पदच्छेद— अथ अनुगृह्य भगवान् मा भैष्ट इति सुरान् विभुः ।
शरं धनुषि सन्धाय पुरेषु अस्त्रम् व्यमुञ्चत ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	इसके बाद	विभुः ।	३.	शंकर ने
अनुगृह्य	४.	कृपा करके	शरम्	१०.	बाण को
भगवान्	२.	भगवान्	धनुषि	९.	धनुष पर
मा	७.	मत	सन्धाय	११.	चढ़ाकर
भैष्ट	८.	डरो (और)	पुरेषु	१२.	पुरों पर
इति	५.	इस प्रकार	अस्त्रम्	१३.	अस्त्र को
सुरान्	६.	देवताओं से कहा	व्यमुञ्चत ॥	१४.	छोड़ दिया

श्लोकार्थ—इसके बाद भगवान् शंकर ने कृपा करके इस प्रकार देवताओं से कहा—मत डरो और धनुष पर बाण को चढ़ाकर पुरों पर अस्त्र को छोड़ दिया ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

ततोऽग्निवर्णा इषव उत्पेतुः सूर्यमण्डलात् ।
यथा मयूखसंदोहा नादृश्यन्त पुरो यतः ॥५८॥

पदच्छेद— ततः अग्निवर्णाः इषवः उत्पेतुः सूर्य मण्डलात् ।
यथा मयूख संदोहाः न अदृश्यन्त पुरः यतः ॥

शब्दार्थ—

ततः		तदनन्तर	यथा	७.	जैसे
अग्निवर्णाः	२.	अग्नि के समान कान्तिमान्	मयूख	८.	किरणों के
इषवः	३.	बाण	संदोहाः	९.	समूह हों
उत्पेतुः	६.	निकलने लगे	न अदृश्यन्त	१२.	नहीं दिखाई दिये
सूर्य	४.	सूर्य	पुरः	११.	तीनों पुर
मण्डलात् ।	५.	मण्डल से	यतः ॥	१०.	जिससे

श्लोकार्थ—तदनन्तर अग्नि के समान कान्तिमान् बाण सूर्यमण्डल से निकलने लगे जैसे किरणों के समूह हों, जिससे तीनों पुर नहीं दिखाई दिये ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

तैः स्पृष्टा व्यसवः सर्वे निपेतुः स्म पुरौकसः ।
तानानीय महायोगी मयः कूपरसेऽक्षिपत् ॥५९॥

पदच्छेद— तैः स्पृष्टाः व्यसवः सर्वे निपेतुः स्म पुरौकसः ।
तान् आनीय महायोगी मयः कूपरसे अक्षिपत् ॥

शब्दार्थ—

तैः	१.	उनसे	तान्	९.	उनको
स्पृष्टाः	२.	स्पर्श किये जाने पर	आनीय	१०.	लाकर
व्यसवः	५.	निष्प्राण होकर	महायोगी	७.	महान्‌योगी
सर्वे	४.	सभी दैत्य	मयः	८.	मय ने
निपेतुः स्म	६.	गिरने लगे	कूपरसे	११.	अमृत के कुयें में
पुरौकसः ।	३.	पुर में रहने वाले	अक्षिपत् ॥	१२.	डाल दिया

श्लोकार्थ—उनसे स्पर्श किये जाने पर पुर में रहने वाले सभी दैत्य निष्प्राण होकर गिरने लगे। महान्‌योगी मय ने उनको लाकर अमृत के कुयें में डाल दिया ॥

षष्टितमः श्लोकः

सिद्धामृतरसस्पृष्टा वज्रसारा महौजसः ।
उत्तस्थुर्मेघदलना वैद्युता इव वह्नयः ॥६०॥

पदच्छेद— सिद्ध अमृत रस स्पृष्टाः वज्रसाराः महौजसः ।
उत्तस्थुः मेघदलनाः वैद्युताः इव वह्नयः ॥

शब्दार्थ—

सिद्ध	१.	सिद्ध	उत्तस्थुः	१२.	उठ खड़े हुये
अमृत	२.	अमृत के	मेघ	७.	बादलों को
रस	३.	रस का	दलनाः	८.	फाड़ देने वाली
स्पृष्टाः	४.	स्पर्श होते ही (दैत्य)	वैद्युताः	९.	बिजली की
वज्रसाराः	५.	वज्र के समान कठोर	इव	११.	समान
महौजसः ।	६.	महान् तेजस्वी होकर	वह्नयः ॥	१०.	अग्नि के

श्लोकार्थ—सिद्ध अमृत के रस का स्पर्श होते ही दैत्य वज्र के समान कठोर और महान् तेजस्वी होकर बादलों को फाड़ देने वाली बिजली की अग्नि के समान उठ खड़े हुये ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

विलोक्य भंग्नसंकल्पं विमनस्कं वृषध्वजम् ।
तदायं भगवान्विष्णुस्तत्रोपायमकल्पयत् ॥६१॥

पदच्छेद— विलोक्य भग्न संकल्पम् विमनस्कम् वृषध्वजम् ।
तदा अयम् भगवान् विष्णुः तत्र उपायम् अकल्पयत् ॥

शब्दार्थ—

विलोक्य	५.	देखकर	अयम्	७.	उन
भग्न	२.	टूट जाने के कारण	भगवान्	८.	भगवान्
संकल्पम्	१.	संकल्प के	विष्णुः	९.	विष्णु ने
विमनस्कम्	४.	उदास	तत्र	१०.	वहाँ
वृषध्वजम्	३.	शंकर को	उपायम्	११.	उपाय
तदा ।	६.	तब	अकल्पयत् ॥	१२.	किया

श्लोकार्थ—संकल्प के टूट जाने के कारण शंकर को उदास देखकर तब उन भगवान् विष्णु ने वहाँ उपाय किया ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

वत्स आसीत्तदा ब्रह्मा स्वयं विष्णुरयं हि गौः ।
प्रविश्य त्रिपुरं काले रसकूपामृतं पपौ ॥६२॥

पदच्छेद— वत्सः आसीत् तदा ब्रह्मा स्वयं विष्णुः अयं हि गौः ।
प्रविश्य त्रिपुरं काले रसकूप अमृतम् पपौ ॥

शब्दार्थ—

वत्सः	३.	बछड़ा	हि गौः ।	८.	ही गौ बने (और)
आसीत्	४.	हुये	प्रविश्य	११.	प्रवेश करके
तदा	१.	तब	त्रिपुरम्	१०.	त्रिपुर में
ब्रह्मा	२.	ब्रह्मा	काले	९.	मध्याह्न के समय
स्वयम्	७.	स्वयम्	रसकूप	१२.	सिद्ध रस के कुयें का
विष्णुः	६.	विष्णु	अमृतम्	१३.	अमृत
अयम्	५.	ये	पपौ ॥	१४.	पी गये

श्लोकार्थ—तब ब्रह्मा बछड़ा हुये, ये विष्णु स्वयम् ही गौ बने और मध्याह्न के समय त्रिपुर में प्रवेश करके सिद्ध रस के कुयें का अमृत पी गये ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

तेऽसुरा ह्यपि पश्यन्तो न न्यषेधन्विमोहिताः ।
तद् विज्ञाय महायोगी रसपालानिदं जगौ ॥६३॥

पदच्छेद— ते असुराः हि अपि पश्यन्तः न न्यषेधन् विमोहिताः ।
तत् विज्ञाय महायोगी रसपालान् इदम् जगौ ॥

शब्दार्थ—

ते	१.	वे	तत्	८.	यह
असुराः	२.	दैत्य	विज्ञाय	९.	जानकर
हि अपि	४.	भी	महायोगी	१०.	महामायावी मय ने
पश्यन्तः	३.	देखते हुये	रसपालान्	११.	कुएँ के रक्षकों से
न	६.	नहीं	इदम्	१२.	यह
न्यषेधन्	७.	रोक सके	जगौ ॥	१३.	कहा
विमोहिताः ।	५.	मोहित होने के कारण			

श्लोकार्थ—वे दैत्य देखते हुये भी मोहित होने के कारण नहीं रोक सके । यह जानकर महामायावी मय ने कुएँ के रक्षकों से यह कहा ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

स्वयं विशोकः शोकार्तान्स्मरन्दैवगतिं च ताम् ।
देवोऽसुरो नरोऽन्यो वा नेश्वरोऽस्तीह कश्चन ॥६४॥

पदच्छेद— स्वयम् विशोकः शोकार्तान् स्मरन् दैवगतिम् च ताम् ।
देवः असुरः नरः अन्यः वा न ईश्वरः अस्ति इह कश्चन ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्	२.	स्वयम्	देवः	१०.	देवता
विशोकः	३.	शोक रहित होकर	असुरः	११.	असुर
शोक	८.	शोक से	नरः	१२.	मनुष्य
आर्तान्	९.	पीडित दैत्यों से कहा कि	अन्यः	१४.	दूसरा
स्मरन्	७.	स्मरण करते हुये (मय ने)	वा	१३.	अथवा
दैव	५.	प्रारब्ध के	न	१७.	नहीं
गतिम्	६.	विधान का	ईश्वरः	१६.	समर्थ
च	१.	और	अस्ति इह	१८.	है यहाँ
ताम् ।	४.	उस	कश्चन ॥	१५.	कोई (दैव गति को मिटाने में)

श्लोकार्थ—और स्वयम् शोक रहित होकर उस प्रारब्ध के विधान का स्मरण करते हुये मय ने शोक से पीड़ित दैत्यों से कहा कि देवता, असुर, मनुष्य अथवा दूसरा कोई दैवगति को मिटाने में यहाँ समर्थ नहीं है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

आत्मनोऽन्यस्य वा दिष्टं दैवेनापोहितुं द्वयोः ।
अथासौ शक्तिभिः स्वाभिः शम्भोः प्राधनिकं व्यधात् ॥६५॥

पदच्छेद— आत्मनः अन्यस्य वा दिष्टम् दैवेन अपोहितुम् द्वयोः ।
अथ असौ शक्तिभिः स्वाभिः शम्भोः प्राधनिकम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

आत्मनः	१.	अपने	अथ	८.	तदनन्तर
अन्यस्य	२.	पराये	असौ	९.	उन विष्णु ने
वा	३.	अथवा	शक्तिभिः	११.	शक्तियों के द्वारा
दिष्टम्	५.	भाग्य के	स्वाभिः	१०.	अपनी
दैवेन	६.	विधान को	शम्भोः	१२.	शंकर के लिये
अपोहितुम्	७.	मिटाने के लिये (कोई समर्थ नहीं है)	प्राधनिकम्	१३.	युद्ध सामग्री
द्वयोः ।	४.	दोनों के	व्यधात् ॥	१४.	तैयार की

श्लोकार्थ—अपने पराये अथवा दोनों के भाग्य के विधान को मिटाने के लिये कोई समर्थ नहीं है। तदनन्तर उन विष्णु ने अपनी शक्तियों के द्वारा शंकर के लिये युद्ध-सामग्री तैयार की ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

धर्मज्ञानविरक्त्यृद्धितपोविद्याक्रियादिभिः ।
रथं सूतं ध्वजं वाहान्धनुर्वर्म शरादि यत् ॥६६॥

पदच्छेद— धर्म ज्ञान विरक्ति ऋद्धि तपः विद्या क्रिया आदिभिः ।
रथम् सूतम् ध्वजम् वाहान् धनुः वर्म शर आदि यत् ॥

शब्दार्थ—

धर्म	१.	धर्म	रथम्	९.	रथ
ज्ञान	२.	ज्ञान	सूतम्	१०.	सारथी
विरक्ति	३.	वैराग्य	ध्वजम्	११.	ध्वजा
ऋद्धि	४.	ऐश्वर्य	वाहान्	१२.	घोड़े
तपः	५.	तपस्या	धनुः	१३.	धनुष
विद्या	६.	विद्या	वर्म	१४.	कवच
क्रिया	७.	क्रिया	शरआदि	१५.	बाण आदि
आदिभिः ।	८.	आदि के द्वारा	यत् ॥	१६.	वस्तुओं का निर्माण किया

श्लोकार्थ—धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, तपस्या, विद्या, क्रिया आदि के द्वारा रथ, सारथी, ध्वजा, घोड़े, धनुष, कवच, बाण आदि वस्तुओं का निर्माण किया ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

सन्नद्धो रथमास्थाय शरं धनुरुपाददे ।
शरं धनुषि सन्धाय मुहूर्तेऽभिजितीश्वरः ॥६७॥

पदच्छेद— सन्नद्धः रथम् आस्थाय शरम् धनुः उपाददे ।
शरम् धनुषि सन्धाय मुहूर्ते अभिजिति ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

सन्नद्धः	२. सज-धजकर	शरम्	८. बाण को
रथम्	३. रथ पर	धनुषि	९. धनुष पर
आस्थाय	४. बैठकर	सन्धाय	१०. चढ़ा कर
शरम्	५. बाण (और)	मुहूर्ते	१२. मुहूर्त में (प्रस्थान किया)
धनुः	६. धनुष	अभिजिति	११. अभिजित् नामक
आददे ।	७. धारण करके	ईश्वरः ॥	१. शिवजी ने

श्लोकार्थ—शिवजी ने सज-धजकर रथ पर बैठकर बाण और धनुष धारण करके बाण को धनुष पर चढ़ाकर अभिजित् नामक मुहूर्त में प्रस्थान किया ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

ददाह तेन दुर्भेद्या हरोऽथ त्रिपुरो नृप ।
दिवि दुन्दुभयो नेदुर्विमानशतसङ्कुलाः ॥६८॥

पदच्छेद— ददाह तेन दुर्भेद्याः हरेः अथ त्रिपुरः नृप ।
दिवि दुन्दुभयः नेदुः विमान शत सङ्कुलाः ॥

शब्दार्थ—

ददाह	७. जला दिया (और)	दिवि	८. स्वर्ग में
तेन	५. उन (भगवान्)	दुन्दुभयः	९. दुन्दुभियाँ
दुर्भेद्याः	३. भेदन न करने योग्य	नेदुः	१०. बजने लगीं (तथा)
हरेः	६. शंकर ने	विमान	१२. विमानों की
अथ	१. तदनन्तर	शत	११. सैकड़ों
त्रिपुरः	४. तीनों पुरों को	सङ्कुलाः	१३. भीड़ लग गई
नृप ।	२. हे राजन् !		

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे राजन् ! भेदन न करने योग्य तीनों पुरों को उन भगवान् शंकर ने जला दिया । और स्वर्ग में दुन्दुभियाँ बजने लगीं । तथा सैकड़ों विमानों की भीड़ लग गई ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

देवर्षिपितृसिद्धेशा जयेति कुसुमोत्करैः।
अवाकिरञ्जगुर्हृष्टा ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥६९॥

पदच्छेद— देव-ऋषि पितृ सिद्धेशाः जयइति कुसुम उत्करैः।
अवाकिरन् जगुः हृष्टाः ननृतुः च अप्सरोगणाः ॥

शब्दार्थ—

देव-ऋषि	१.	देवता-ऋषि	अवाकिरन्	७.	वर्षा करने लगे
पितृ	२.	पितर	जगुः	१२.	गाने लगीं
सिद्धेशाः	३.	सिद्धेश्वर	हृष्टाः	१०.	आनन्दित होकर
जयइति	४.	जय-जय करके	ननृतुः	११.	नाचने
कुसुम	५.	फूलों की	च	८.	और
उत्करैः।	६.	राशि की	अप्सरोगणाः ॥	९.	अपसरायें

श्लोकार्थ - देवता, ऋषि, पितर, सिद्धेश्वर जय-जय करके फूलों की राशि की वर्षा करने लगे। और अप्सरायें आनन्दित होकर नाचने-गाने लगीं ॥

सप्ततितमः श्लोकः

एवं दग्ध्वा पुरस्तिस्रो भगवान्पुरहा नृप।
ब्रह्मादिभिः स्तूयमानः स्वधाम प्रत्यपद्यत ॥७०॥

पदच्छेद— एवम् दग्ध्वा पुरः तिस्रः भगवान् पुरहा नृप।
ब्रह्मादिभिः स्तूयमानः स्वधाम प्रत्यपद्यत ॥

शब्दार्थ–

एवम्	२.	इस प्रकार	ब्रह्मा	८.	ब्रह्मा
दग्ध्वा	५.	जलाकर	आदिभिः	९.	आदि के द्वारा
पुरः	४.	पुरों को	स्तूयमानः	१०.	स्तुति किये जाते हुये
तिस्रः	३.	तीनों	स्व	११.	अपने
भगवान्	७.	भगवान् शिव	धाम	१२.	धाम को
पुरहा	६.	त्रिपुर नाशक	प्रत्यपद्यत ॥	१३.	चले गये
नृप।	१.	हे राजन्!			

श्लोकार्थ—हे राजन्! इस प्रकार तीनों पुरों को जलाकर त्रिपुरनाशक भगवान् शिव ब्रह्मा आदि के द्वारा स्तुति किये जाते हुये अपने धाम को चले गये ॥

एकसप्ततितमः श्लोकः

एवंविधान्यस्य हरेः स्वमायया विडम्बमानस्य नृलोकमात्मनः ।
वीर्याणि गीतान्यृषिभिर्जगद्गुरोर्लोकान् पुनानान्यपरं वदामि किम् ॥७१॥

पदच्छेद—एवम् विधानि अस्य हरेः स्वमायया विडम्बमानस्य नृलोकम् आत्मनः ।
वीर्याणि गीतानि ऋषिभिः जगद्गुरोः लोकान् पुनानानि अपरम् वदामि किम् ॥

शब्दार्थ—

एवंविधानि	११.	इस प्रकार के	वीर्याणि	१२.	पराक्रम का
अस्य	७.	इन	गीतानि	१४.	गान किया करते हैं
हरेः	८.	विष्णु के	ऋषिभिः	१३.	ऋषि लोग
स्व	१.	अपनी	जगद्गुरोः	६.	संसार के गुरु
मायया	२.	माया से	लोकान्	९.	लोकों को
विडम्बमानस्य	४.	विडम्बना करते हुये	पुनानानि	१०.	पवित्र करने वाले
नृलोकम्	३.	मनुष्य लोक की	अपरम्	१५.	दूसरा (और)
आत्मनः ।	५.	परमात्मा (और)	वदामि	१७.	बताऊँ
			किम् ॥	१६.	क्या

श्लोकार्थ—अपनी माया से मनुष्य लोक की विडम्बना करते हुये परमात्मा, संसार के गुरु, इन विष्णु के लोकों को पवित्र करने वाले इस प्रकार के पराक्रम का ऋषि लोग गान किया करते हैं । दूसरा और क्या बताऊँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे युधिष्ठिर-नारदसंवादे त्रिपुरविजयो नाम दशमः अध्यायः ॥१०॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—श्रुत्वेहितं साधुसभासभाजितं महत्तमाग्रण्य उरुक्रमात्मनः ।
युधिष्ठिरो दैत्यपतेर्मुदा युतः पप्रच्छ भूयस्तनयं स्वयम्भुवः ॥१॥

पदच्छेद— श्रुत्वा ईहितम् साधु सभा सभाजितम् महत्तम अग्रण्य उरुक्रम आत्मनः ।
युधिष्ठिरः दैत्यपतेः मुदा युतः पप्रच्छ भूयः तनयम् स्वयम्भुवः ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	७.	सुनकर	युधिष्ठिरः	१०.	युधिष्ठिर ने
ईहितम्	६.	चरित	दैत्यपतेः	३.	दैत्यराज प्रह्लाद का
साधुसभा	४.	साधुओं की सभायें	मुदा	११.	हर्ष से
सभाजितम्	५.	सम्मानित	युतः	१२.	युक्त होकर
महत्तम	८.	श्रेष्ठ महान् पुरुषों में	पप्रच्छ	१६.	पूछा
अग्रण्य	९.	अग्रण्य	भूयः	१५.	पुनः
उरुक्रम	१.	भगवान्	तनयम्	१४.	पुत्र नारद से
आत्मनः ।	२.	स्वरूप	स्वयम्भुवः ॥	१३.	ब्रह्मा ने

श्लोकार्थ—भगवत् स्वरूप दैत्यराज प्रह्लाद का साधुओं की सभा में सम्मानित चरित सुनकर श्रेष्ठ महान् पुरुषों में अग्रण्य युधिष्ठिर ने हर्ष से युक्त होकर ब्रह्मा के पुत्र नारद से पुनः पूछा ॥

द्वितीयः श्लोकः

युधिष्ठिर उवाच— भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि नृणां धर्मं सनातनम् ।
वर्णाश्रमाचारयुतं यत् पुमान्विन्दते परम् ॥२॥

पदच्छेद— भगवन् श्रोतुम् इच्छामि नृणाम् धर्मम् सनातनम् ।
वर्ण आश्रम आचार युतम् यत् पुमान् विन्दते परम् ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१.	हे भगवन् ! मैं	वर्ण आश्रम	२.	वर्ण और आश्रमों के
श्रोतुम्	८.	सुनना	आचार	३.	सदाचार से
इच्छामि	९.	चाहता हूँ	युतम्	४.	युक्त
नृणाम्	५.	मनुष्यों के	यत् पुमान्	१०.	जिस धर्म से मनुष्य
धर्मम्	७.	धर्म को	विन्दते	१२.	प्राप्त करता है
सनातनम् ।	६.	सनातन	परम् ॥	११.	परमात्मा को

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! वर्ण और आश्रमों के सदाचार से युक्त मनुष्यों के सनातन धर्म को सुनना चाहता हूँ, जिस धर्म से मनुष्य परमात्मा को प्राप्त करता है ॥

तृतीयः श्लोकः

भवान्प्रजापतेः साक्षादात्मनः परमेष्ठिनः ।
सुतानां सम्मतो ब्रह्मंस्तपोयोगसमाधिभिः ॥३॥

पदच्छेद— भवान् प्रजापतेः साक्षात् आत्मनः परमेष्ठिनः ।
सुतानाम् सम्मतः ब्रह्मन् तपः योग समाधिभिः ॥

शब्दार्थ—

भवान्	१.	आप	**सुतानाम्**	१०.	उनके पुत्रों में
प्रजापतेः	३.	प्रजापति	**सम्मतः**	११.	श्रेष्ठ हैं
साक्षात्	२.	स्वयम्	**ब्रह्मन्**	६.	हे ब्रह्मन् !
आत्मनः	५.	पुत्र हैं	**तपः**	७.	तपस्या
परमेष्ठिनः ।	४.	ब्रह्मा के	**योग**	८.	योग
			समाधिभिः ॥	९.	और समाधि के द्वारा

श्लोकार्थ—आप स्वयम् प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र हैं । हे ब्रह्मन् ! तपस्या, योग और समाधि के द्वारा उनके पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

नारायणपरा विप्रा धर्मं गुह्यं परं विदुः ।
करुणाः साधवः शान्तास्त्वद्विधा न तथापरे ॥४॥

पदच्छेद – नारायण पराः विप्राः धर्मम् गुह्यम् परम् विदुः ।
करुणाः साधवः शान्ताः त्वद् विधाः न तथा अपरे ॥

शब्दार्थ—

नारायण	३.	नारायण	**करुणाः**	५.	दयालु
पराः	४.	परायण	**साधवः**	६.	सदाचारी (और)
विप्राः	८.	ब्राह्मण	**शान्ताः**	७.	शान्त
धर्मम्	११.	धर्म को (जिस प्रकार)	**त्वद्**	१.	आप के
गुह्यम्	१०.	गुह्य	**विधाः**	२.	समान
परम्	९.	परम	**न**	१४.	नहीं जानते हैं
विदुः ।	१२.	जानते हैं	**तथाअपरे ॥**	१३.	उस प्रकार दूसरे लोग

श्लोकार्थ – आपके समान नारायण-परायण, दयालु, सदाचारी और शान्त ब्राह्मण परम गुह्य धर्म को जिस प्रकार जानते हैं उस प्रकार दूसरे लोग नहीं जानते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

नारद उवाच— नत्वा भगवतेऽजाय लोकानां धर्महेतवे ।
वक्ष्ये सनातनं धर्मं नारायणमुखाच्छ्रुतम् ॥५॥

पदच्छेद — नत्वा भगवते अजाय लोकानाम् धर्म हेतवे ।
वक्ष्ये सनातनम् धर्मम् नारायण मुखात् श्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

नत्वा	६.	नमस्कार करके	वक्ष्ये	९.	कहूँगा
भगवते	५.	भगवान् को	सनातनम्	७.	सनातन
अजाय	१.	अजन्मा	धर्मम्	८.	धर्म को
लोकानाम्	२.	लोकों के	नारायण	१०.	जैसा नारायण के
धर्म	३.	धर्मों के	मुखात्	११.	मुख से
हेतवे ।	४.	मूल कारण	श्रुतम् ॥	१२.	सुना था

श्लोकार्थ—अजन्मा लोकों के धर्मों के मूल कारण भगवान् को नमस्कार करके सनातन धर्म को कहूँगा, जैसा नारायण के मुख से सुना था ॥

षष्ठः श्लोकः

योऽवतीर्यात्मनोंऽशेन दाक्षायण्यां तु धर्मतः ।
लोकानां स्वस्तयेऽध्यास्ते तपो बदरिकाश्रमे ॥६॥

पदच्छेद— यः अवतीर्य आत्मनः अंशेन दाक्षायण्याम् तु धर्मतः ।
लोकानाम् स्वस्तये अध्यास्ते तपः बदरिकाश्रमे ॥

शब्दार्थ—

यः	३.	जो भगवान् नारायण	लोकानाम्	१.	लोकों के
अवतीर्य	८.	अवतार लेकर	स्वस्तये	२.	कल्याण के लिये
आत्मनः	६.	अपने	अध्यास्ते	११.	कर रहे हैं
अंशेन	७.	अंश से	तपः	१०.	तपस्या
दाक्षायण्याम्	४.	दक्ष पुत्री मूर्ति में	बदरिकाश्रमे ॥	९.	बदरिकाश्रम में
तु धर्मतः ।	५.	धर्म से			

श्लोकार्थ—लोकों के कल्याण के लिये जो भगवान् नारायण दक्ष पुत्री मूर्ति में धर्म से अपने अंश से अवतार लेकर बदरिकाश्रम में तपस्या कर रहे हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

धर्ममूलं हि भगवान्सर्ववेदमयो हरिः ।
स्मृतं च तद्विदां राजन्येन चात्मा प्रसीदति ॥७॥

पदच्छेद— धर्म मूलम् हि भगवान् सर्व वेदमयः हरिः ।
स्मृतम् च तत् विदाम् राजन् येन च आत्मा प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

धर्म	१४.	धर्म के	स्मृतम्	१०.	स्मृतियाँ
मूलम् हि	१५.	मूल कारण हैं	च	७.	और
भगवान्	५.	भगवान्	तत्	८.	उनके
सर्व	२.	सर्व	विदाम्	९.	जानने वालों की
वेद	३.	वेद	राजन्	१.	हे राजन् !
मयः	४.	स्वरूप	येन	११.	और जिससे
हरिः ।	६.	श्री हरि	च आत्मा	१२.	आत्मा
			प्रसीदति ॥	१३.	प्रसन्न हो (ये सब)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सर्व वेद स्वरूप भगवान् श्री हरि और उनके जानने वालों की स्मृतियाँ और जिससे आत्मा प्रसन्न हो ये सब धर्म के मूल कारण हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

सत्यं दया तपः शौचं तितिक्षेक्षा शमो दमः ।
अहिंसा ब्रह्मचर्यं च त्यागः स्वाध्याय आर्जवम् ॥८॥

पदच्छेद— सत्यम् दया तपः शौचम् तितिक्षा ईक्षा शमः दमः ।
अहिंसा ब्रह्मचर्यम् च त्यागः स्वाध्यायः आर्जवम् ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	१.	सत्य	दमः ।	८.	इन्द्रिय संयम
दया	२.	दया	अहिंसा	९.	अहिंसा
तपः	३.	तपस्या	ब्रह्मचर्यम्	११.	ब्रह्मचर्य
शौचम्	४.	पवित्रता	च	१०.	और
तितिक्षा	५.	सहनशीलता	त्यागः	१२.	त्याग
ईक्षा	६.	विवेक	स्वाध्याय	१३.	अध्ययन और
शमः	७.	शान्ति	आर्जवम् ॥	१४.	सरलता (ये सब धर्म के मूल हैं)

श्लोकार्थ—सत्य, दया, तपस्या, पवित्रता, सहनशीलता, विवेक, शान्ति, इन्द्रिय संयम, अहिंसा और ब्रह्मचर्य, त्याग अध्ययन और सरलता ये सब धर्म के मूल हैं ॥

नवमः श्लोकः

सन्तोषः समदृक् सेवा ग्राम्येहोपरमः शनैः ।
नृणां विपर्ययेहेक्षा मौनमात्मविमर्शनम् ॥९॥

पदच्छेद— सन्तोषः समदृक् सेवा ग्राम्य ईहा उपरमः शनैः ।
नृणाम् विपर्यय ईहा ईक्षा मौनम् आत्म विमर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

सन्तोषः	१.	सन्तोष	नृणाम्	८.	मनुष्यों की
समदृक्	२.	समदर्शी होना	विपर्यय	१०.	उल्टा फल होता है ऐसा
सेवा	३.	सेवा	ईहा	९.	इच्छाओं का
ग्राम्य	५.	सांसारिक भोगों की	ईक्षा	११.	विचारना
ईहा	६.	इच्छा से	मौनम्	१२.	मौन (और)
उपरमः	७.	निवृत्ति (तथा)	आत्म	१३.	आत्म
शनैः ।	४.	धीरे-धीरे	विमर्शनम् ॥	१४.	चिन्तन (के सब धर्म के मूल हैं)

श्लोकार्थ—सन्तोष, समदर्शी होना, सेवा, धीरे-धीरे सांसारिक भोगों की इच्छा से निवृत्ति तथा मनुष्यों की इच्छाओं का उल्टा फल होता है, ऐसा विचारना, मौन, आत्म-चिन्तन ये सब धर्म के मूल हैं ॥

दशमः श्लोकः

अन्नाद्यादेः संविभागो भूतेभ्यश्च यथार्हतः ।
तेष्वात्मदेवताबुद्धिः सुतरां नृषु पाण्डव ॥१०॥

पदच्छेद— अन्न आद्यादेः संविभागः भूतेभ्यः च यथा अर्हतः ।
तेषु आत्म देवता बुद्धिः सुतराम् नृषु पाण्डव ॥

शब्दार्थ—

अन्न	३.	अन्न	तेषु	१५.	उनमें
आद्यादेः	४	आदि का	आत्म	१२.	अपने
संविभागः	७.	विभाजन करना	देवता	१३.	इष्ट देव का
भूतेभ्यः	२.	प्राणियों को	बुद्धिः	१४.	भाव रखना (ये धर्म के मूल हैं)
च	८.	और	सुतराम्	९.	विशेष करके
यथा	५.	यथा	नृषु	१०.	मनुष्यों में
अर्हतः ।	६.	योग्य	पाण्डव ॥	१.	हे युधिष्ठिर !

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! प्राणियों को अन्नादि का यथा-योग्य विभाजन करना और विशेष करके मनुष्यों में अपने इष्ट देव का भाव रखना ये सब धर्म के मूल हैं ॥

एकादशः श्लोकः

श्रवणं कीर्तनं चास्य स्मरणं महतां गतेः ।
सेवेज्यावनतिर्दास्यं सख्यमात्मसमर्पणम् ॥११॥

पदच्छेद— श्रवणम् कीर्तनम् च अस्य स्मरणम् महताम् गतेः ।
सेवा इज्या अवनतिः दास्यम् सख्यम् आत्म समर्पणम् ॥

शब्दार्थ—

श्रवणम्	४. श्रवण	सेवा	८. सेवा
कीर्तनम्	५. कीर्तन	इज्या	९. यज्ञ
च	६. और	अवनतिः	१०. विनम्रता
अस्य	३. इस भगवान् के (नाम गुणों का)	दास्यम्	११. दास्य-भाव
स्मरणम्	७. स्मरण	सख्यम्	१२. सखा-भाव और
महताम्	१. महापुरुषों के	आत्म	१३. आत्म
गतेः ।	२. आश्रम	समर्पणम् ॥	१४. समर्पण (ये सब धर्म के लक्षण हैं)

श्लोकार्थ—महापुरुषों के आश्रय इस भगवान् के नाम गुणों का श्रवण, कीर्तन और स्मरण, सेवा, यज्ञ विनम्रता, दास्यभाव, सख्यभाव ओर आत्मसमर्पण ये सब धर्म के लक्षण हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

नृणामयं परो धर्मः सर्वेषां समुदाहृतः ।
त्रिंशल्लक्षणवान्राजन्सर्वात्मा येन तुष्यति ॥१२॥

पदच्छेद— नृणाम् अयम् परः धर्मः सर्वेषाम् समुद् आहृतः ।
त्रिंशत् लक्षणवान् राजन् सर्व आत्मा येन तुष्यति ॥

शब्दार्थ—

नृणाम्	८. मनुष्यों के लिये	त्रिंशत्	३. तीस प्रकार के
अयम्	२. यह (दूसरा)	लक्षणवान्	४. लक्षणों से युक्त
परः	५. श्रेष्ठ	राजन्	१. हे राजन् !
धर्मः	६. धर्म	सर्व	१२. सब के
सर्वेषाम्	७. सभी	आत्मा	१३. आत्मा भगवान्
समुद्	९. भली-भाँति	येन	१९. जिससे
आहृतः ।	१०. कहा गया है	तुष्यति ॥	१४. प्रसन्न होते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यह दूसरा तीस प्रकार के लक्षणों से युक्त श्रेष्ठ धर्म सभी मनुष्यों के लिये भली-भाँति कहा गया है । जिससे सब के आत्मा भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

संस्कारा यदविच्छिन्नाः स द्विजोऽजो जगाद यम् ।
इज्याध्ययनदानानि विहितानि द्विजन्मनाम् ।
जन्मकर्मावदातानां क्रियाश्चाश्रमचोदिताः ॥१३॥

पदच्छेद— संस्काराः यत् अविच्छिन्नाः सः द्विजः अजः जगाद यम् ।
इज्या अध्ययन दानानि विहितानि द्विजन्मनाम् ।
जन्म कर्म अवदातानाम् क्रियाः च आश्रम चोदिताः ॥

शब्दार्थ—

संस्काराः	२.	संस्कार	विहितानि ।	१२.	विधान है
यत्	१.	जिनके वंश में	द्विजन्मनाम्	९.	द्विजातियों के लिये
अविच्छिन्नाः	३.	अखण्ड रूप से होते आ रहे हैं	जन्म कर्म	७.	जन्म और कर्म से
सः द्विजः	६.	वे द्विज हैं	अवदातानाम्	८.	शुद्ध
अजः जगाद	५.	ब्रह्मा ने स्वीकार किया है	क्रियाः	१४.	क्रियायों को करना
यम्	४.	और जिन्हें	च आश्रम	१३.	और आश्रम के धर्मों की
इज्या अध्ययन	१०.	यज्ञ, अध्ययन और	चोदिताः ॥	१५.	कहा गया है
दानानि	११.	दान करने का			

श्लोकार्थ—जिनके वंश में संस्कार अखण्ड रूप से होते आ रहे हैं और जिन्हें ब्रह्मा ने स्वीकार किया है। वे द्विज हैं, जन्म और कर्म से शुद्ध द्विजातियों के लिये यज्ञ अध्ययन और दान करने का विधान है और आश्रमों के धर्मों की कियायों को करना कहा गया है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

विप्रस्याध्ययनादीनि षडन्यस्याप्रतिग्रहः ।
राज्ञो वृत्तिः प्रजागोप्तुरविप्राद् वा करादिभिः ॥१४॥

पदच्छेद— विप्रस्य अध्ययन आदीनि षडन्यस्याप्रतिग्रहः ।
राज्ञः वृत्तिः प्रजागोप्तुः अविप्रात् वा कर आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

विप्रस्य	१.	ब्राह्मण के	वृत्तिः	९.	जीविका
अध्ययन	२.	अध्ययन	प्रजा	६.	प्रजा की
आदीनि	३.	आदि	गोप्तुः	७.	रक्षा करने वाले
षडन्यस्य	४.	छः कर्म हैं। क्षत्रिय को	अविप्रात्	१०.	ब्राह्मण से भिन्न
अप्रतिग्रह ।	५.	दान नहीं लेना चाहिये	वा कर	११.	अथवा कर
राज्ञः	८.	क्षत्रिय राजा की	आदिभिः ॥	१२.	आदि के द्वारा होनी चाहिये

श्लोकार्थ—ब्राह्मण के अध्ययन आदि छःकर्म, दान लेना, दान देना, पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना हैं। क्षत्रिय को दान नहीं लेना चाहिये। प्रजा की रक्षा करने वाले क्षत्रिय राजा की जीविका ब्राह्मण (की जीविका) से भिन्न अथवा कर आदि के द्वारा होनी चाहिये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

वैश्यस्तु वार्तावृत्तिश्च नित्यं ब्रह्मकुलानुगः ।
शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा वृत्तिश्च स्वामिनो भवेत् ॥१५॥

पदच्छेद— वैश्यः तु वार्ता वृत्तिः च नित्यम् ब्रह्मकुल अनुगः ।
शूद्रस्य द्विज शुश्रूषा वृत्तिः च स्वामिनः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

वैश्यः	१.	वैश्य को	**शूद्रस्य**	८.	शूद्र का धर्म है (क)
तु वार्ता	५.	व्यापार से	**द्विज**	९.	द्विजातियों की
वृत्तिः	६.	जीविका चलानी चाहिये	**शुश्रूषा**	१०.	सेवा से
च	७.	और	**वृत्तिः**	१४.	जीविका चलानी चाहिये
नित्यम्	२.	सर्वदा	**च**	११.	और
ब्रह्मकुलम्	३.	ब्राह्मण वंश का	**स्वामिनः**	१२.	स्वामी से जो
अनुगः ।	४.	अनुयायी बनकर	**भवेत् ।।**	१३.	प्राप्त हो (उससे)

श्लोकार्थ—वैश्य को सर्वदा ब्राह्मण वंश का अनुयायी बनकर व्यापार से जीविका चलानी चाहिये । और शूद्र का धर्म है कि द्विजातियों की सेवा से और स्वामी से जो प्राप्त हो, उससे जीविका चलानी चाहिये ।।

षोडशः श्लोकः

वार्ता विचित्रा शालीनयायावरशिलोञ्छनम् ।
विप्रवृत्तिश्चतुर्धेयं श्रेयसी चोत्तरोत्तरा ॥१६॥

पदच्छेद— वार्ता विचित्रा शालीन यायावर शिलोञ्छनम् ।
विप्र वृत्तिः चतुर्धा इयम् श्रेयसी च उत्तरा उत्तरा ।।

शब्दार्थ—

वार्ता	३.	यज्ञादि से तथा	**चतुर्धा**	२.	चार प्रकार की है
विचित्रा	९.	जीविका अनेक प्रकार की है	**इयम्**	८.	यह
शालीन	४.	बिना माँगे जो मिले	**श्रेयसी**	१२.	अपेक्षाकृत श्रेष्ठ हैं
यायावर	५.	माँग करके मिले (और)	**च**	७.	और इससे
शिलोञ्छनम् ।	६.	खेत में तथा बाजार में	**उत्तरा**	१२.	आगे
विप्र वृत्तिः	१.	ब्राह्मण की जीविका	**उत्तरा ।।**	११.	आगे की वृत्तियाँ

श्लोकार्थ—ब्राह्मण की जीविका चार प्रकार की है। वार्ता यज्ञादि से तथा शालीन बिना माँगे जो मिले, यायावर माँग करके मिले और शिलोञ्छन खेत में तथा बजार में पड़े दाने बिनने से मिले। इससे यह जीविका अनेक प्रकार की है। इनमें आगे आगे की वृत्तियाँ अपेक्षाकृत श्रेष्ठ हैं ।।

सप्तदशः श्लोकः

जघन्यो नोत्तमां वृत्तिमनापदि भजेन्नरः ।
ऋते राजन्यमापत्सु सर्वेषामपि सर्वशः ॥१७॥

पदच्छेद— जघन्यः न उत्तमाम् वृत्तिम् अनापदि भजेत् नरः ।
ऋते राजन्यम् आपत्सु सर्वेषाम् अपि सर्वशः ॥

शब्दार्थ—

जघन्यः	१.	निम्नवर्ण का	नरः ।	२.	मनुष्य
न	६.	नहीं	ऋते	९.	छोड़ कर
उत्तमाम्	४.	उत्तम वर्ण की	राजन्यम्	८.	क्षत्रिय को
वृत्तिम्	५.	वृत्ति का	आपत्सु	१०.	आपत्ति काल में
अनापदि	३.	बिना आपत्तिकाल के	सर्वेषाम् अपि	११.	सभी
भजेत्	७.	अवलम्बन नहीं करे केवल	सर्वशः ॥	१२.	सबकी वृत्ति का आश्रय ले सकते हैं

श्लोकार्थ—निम्नवर्ण का मनुष्य बिना आपत्तिकाल के उत्तमवर्ण की वृत्ति का अवलम्बन नहीं करे। केवल क्षत्रिय को छोड़कर आपत्ति काल में सभी सबकी वृत्ति का आश्रय ले सकते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

ऋतामृताभ्यां जीवेत मृतेन प्रमृतेन वा ।
सत्यानृताभ्यां जीवेत न श्ववृत्त्या कथञ्चन ॥१८॥

पदच्छेद— ऋत अमृताभ्यां जीवेत मृतेन प्रमृतेन वा ।
सत्य अनृताभ्याम् जीवेत न श्ववृत्त्या कथञ्चन ॥

शब्दार्थ—

ऋत	१.	ऋत	सत्य	६.	सत्य और
अमृताभ्याम्	२.	अमृत	अनृताभ्याम्	७.	अनृत से
जीवेत	८.	जीवन निर्वाह करे (किन्तु)	जीवेत	१२.	जीवन निर्वाह करे
मृतेन	३.	मृत	न	११.	न ले
प्रमृतेन	४.	प्रमृत	श्ववृत्त्या	९.	कुत्ते की वृत्ति का
वा ।	५.	अथवा	कथञ्चन ॥	१०.	कभी भी आश्रय

श्लोकार्थ—ऋत, अमृत, मृत, प्रमृत अथवा सत्य और अनृत से जीवन निर्वाह करे। किन्तु कुत्ते की वृत्ति का कभी भी आश्रय न ले ॥

एकोनविंशः श्लोकः

ऋतमुञ्छशिलं प्रोक्तममृतं यदयाचितम् ।
मृतं तु नित्ययाच्ञा स्यात् प्रमृतं कर्षणं स्मृतम् ॥१९॥

पदच्छेद— ऋतम् उञ्छशिलम् प्रोक्तम् अमृतम् यद् अयाचितम् ।
मृतम् तु नित्य याञ्चा स्यात् प्रमृतम् कर्षणम् स्मृतम् ॥

शब्दार्थ—

ऋतम्	२.	ऋत (और)	**मृतम् तु**	८.	मृत है (और)
उञ्छशिलम्	१.	खेत में और बाजार में पड़े दाने बीनना	**नित्ययाच्ञा**	७.	नित्य मांगकर खाना
प्रोक्तम्	६.	कहा गया है	**स्यात्**	१२.	है
अमृतम्	५.	अमृत	**प्रमृतम्**	१०.	प्रमृत
यद्	३.	जो	**कर्षणम्**	९.	खेती आदि से निर्वाह करना
अयाचितम् ।	४.	बिना मांगे मिले वह	**स्मृतम् ॥**	११.	कहा गया

श्लोकार्थ—खेत में और बाजार में पड़े दाने बीनना ऋत और जो बिना मांगे मिले वह अमृत कहा गया है । नित्य मांग कर खाना मृत है । और खेती आदि से निर्वाह करना प्रमृत कहा गया है ।

विंशः श्लोकः

सत्यानृतं तु वाणिज्यं श्ववृत्तिर्नीचसेवनम् ।
वर्जयेत् तां सदा विप्रो राजन्यश्च जुगुप्सिताम् ।
सर्ववेदमयो विप्रः सर्वदेवमयो नृपः ॥२०॥

पदच्छेद— सत्य अनृतम् तु वाणिज्यम् श्ववृत्तिः नीच सेवनम् ।
वर्जयेत् ताम् सदा विप्रः राजन्यः च जुगुप्सिताम् ।
सर्व वेद मयः विप्रः सर्व देव मयः नृपः ॥

शब्दार्थ—

सत्य	१.	सत्य और	**राजन्यः**	१०.	क्षत्रिय राजा
अनृतम्	३.	अनृत है	**च**	९.	और
तु वाणिज्यम्	२.	व्यापार	**जुगुप्सिताम् ।**	११.	निन्दितवृत्ति को छोड़ दे
श्ववृत्तिः नीच	४.	कुत्ते की वृत्ति नीच की	**सर्ववेदमयः**	१३.	सब वेदों का स्वरूप है और
सेवनम्	५.	सेवा करना है	**विप्रः**	१२.	ब्राह्मण
वर्जयेत्	८.	छोड़ देवे	**सर्वदेव**	१५.	सब देवताओं का
ताम्	७.	उस श्ववृत्ति को	**मयः**	१६.	स्वरूप है
सदा विप्रः ।	६.	सदा ब्राह्मण	**नृपः ॥**	१४.	राजा

श्लोकार्थ—सत्य और व्यापार अनृत है । कुत्ते की वृत्ति नीच की सेवा करना है । सदा ब्राह्मण उस श्ववृत्ति को छोड़ देवे । और क्षत्रिय राजा निन्दित वृत्ति को छोड़ देवे । ब्राह्मण सब वेदों का स्वरूप है और राजा सब देवताओं का स्वरूप है ॥

एकविंशः श्लोकः

शमो दमस्तपः शौचं संतोषः क्षान्तिरार्जवम् ।
ज्ञानं दयाच्युतात्मत्वं सत्यं च ब्रह्मलक्षणम् ॥२१॥

पदच्छेद— शमः दमः तपः शौचम् सन्तोषः क्षान्तिः आर्जवम् ।
ज्ञानम् दया अच्युत आत्मत्वं सत्यम् च ब्रह्मलक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

शमः	१.	शम	ज्ञानम्	८.	ज्ञान
दमः	२.	दम	दया	९.	दया
तपः	३.	तपस्या	अच्युत	१०.	भगवत्
शौचम्	४.	शौच	आत्मानम्	११.	परायणता
सन्तोषः	५.	सन्तोष	सत्यम्	१३.	सत्य
क्षान्तिः	६.	क्षमा	च	१२.	और
आर्जवम् ।	७.	सरलता	ब्रह्मलक्षणम् ॥	१४.	ये ब्राह्मण के लक्षण हैं

श्लोकार्थ—शम, दम, तपस्या, शौच, सन्तोष, क्षमा, सरलता, ज्ञान, दया, भगवत् परायणता और सत्य ये ब्राह्मण के लक्षण हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

शौर्यं वीर्यं धृतिस्तेजस्त्याग आत्मजयः क्षमा ।
ब्रह्मण्यता प्रसादश्च रक्षा च क्षत्रलक्षणम् ॥२२॥

पदच्छेद— शौर्यम् वीर्यम् धृतिः तेजः त्यागः आत्मजयः क्षमा ।
ब्रह्मण्यता प्रसादः च रक्षा च क्षत्र लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

शौर्यम्	१.	वीरता	ब्रह्मण्यता	९.	ब्राह्मण भक्त होना
वीर्यम्	२.	पराक्रम	प्रसादः	१०.	प्रसन्नता
धृतिः	३.	धैर्य	च	८.	और
तेजः	४.	तेज	रक्षा	१२.	रक्षा
त्यागः	५.	त्याग	च	११.	और
आत्मजयः	६.	मनोजय	क्षत्र	१२.	ये क्षत्रिय के
क्षमा ।	७.	क्षमा	लक्षणम् ॥	१४.	लक्षण हैं

श्लोकार्थ—वीरता, पराक्रम, धैर्य, तेज, त्याग, मनोजय, क्षमा और ब्राह्मण भक्त होना, प्रसन्नता और रक्षा ये क्षत्रिय के लक्षण हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

देवगुर्वच्युते भक्तिस्त्रिवर्गपरिपोषणम् ।
आस्तिक्यमुद्यमो नित्यं नैपुणं वैश्यलक्षणम् ॥२३॥

पदच्छेद— देव गुरु अच्युते भक्तिः त्रिवर्ग परिपोषणम् ।
आस्तिक्यम् उद्यमः नित्यम् नैपुणम् वैश्य लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

देव	१. देवता	आस्तिक्यम्	७. आस्तिकता
गुरु	२. गुरु	उद्यमः	९. उद्योग करना
अच्युते	३. भगवान् की	नित्यम्	८. सदा
भक्तिः	४. भक्ति	नैपुणम्	१०. चतुरता
त्रिवर्ग	५. तीनों पुरुषार्थों की	वैश्य	११. ये वैश्य के
परिपोषणम् ।	६. रक्षा करना	लक्षणम् ॥	१२. लक्षण हैं

श्लोकार्थ—देवता, गुरु, भगवान् की भक्ति, तीनों पुरुषार्थों की रक्षा करना, आस्तिकता, सदा उद्योग करना, चतुरता ये वैश्य के लक्षण हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

शूद्रस्य संनतिः शौचं सेवा स्वामिन्यमायया ।
अमन्त्रयज्ञो ह्यस्तेयं सत्यं गोविप्ररक्षणम् ॥२४॥

पदच्छेद— शूद्रस्य संनतिः शौचम् सेवा स्वामिनि अमायया ।
अमन्त्र यज्ञः हि अस्तेयम् सत्यम् गोविप्र रक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

शूद्रस्य	१२. ये शूद्र के लक्षण हैं	अमन्त्र	६. विना वैदिक मन्त्र के
संनतिः	१. विनम्रता	यज्ञः हि	७. यज्ञ करना
शौचम्	२. पवित्रता	अस्तेयम्	८. चोरी न करना
सेवा	५. सेवा	सत्यम्	९. सत्य बोलना
स्वामिनि	३. स्वामी की	गोविप्र	१०. गाय और ब्राह्मण की
अमायया ।	४. निष्कपट	रक्षणम् ॥	११. रक्षा करना

श्लोकार्थ—विनम्रता, पवित्रता, स्वामी की निष्कपट सेवा, विना वैदिक मन्त्र के यज्ञ करना, चोरी न करना, सत्य बोलना, गाय और ब्राह्मण की रक्षा करना, ये शूद्र के लक्षण हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स्त्रीणां च पतिदेवानां तच्छुश्रूषानुकूलता ।

तद्बन्धुष्वनुवृत्तिश्च नित्यं तद्व्रतधारणम् ॥२५॥

पदच्छेद— स्त्रीणाम् च पति देवानाम् तत् शुश्रूषा अनुकूलता ।
तद्बन्धुषुअनुवृत्तिश्च नित्यम् तद् व्रत धारणम् ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीणाम्	१४.	स्त्रियों का धर्म है	**तत्**	७.	उनके
च	१.	और	**बन्धुषु**	८.	सम्बन्धियों को
पति	२.	पति को	**अनुवृत्तिः**	९.	प्रसन्न रखना
देवानाम्	३.	देवता मानना	**च**	१०.	और
तत्	४.	उनकी	**नित्यम्**	११.	सदा
शुश्रूषा	५.	सेवा करना (तथा)	**तद् व्रत**	१२.	उन पति के नियमों को
अनुकूलता ।	६.	अनुकूल रहना	**धारणम्॥**	१३.	धारण करना

श्लोकार्थ—और पति को देवता मानना, उनकी सेवा करना तथा अनुकूल रहना, उनके सम्बन्धियों को प्रसन्न रखना और सदा उन पति के नियमों को धारण करना, स्त्रियों का धर्म है ॥

षड्विंशः श्लोकः

संमार्जनोपलेपाभ्यां गृहमण्डलवर्तनैः ।

स्वयं च मण्डिता नित्यं परिमृष्टपरिच्छदा ॥२६॥

पदच्छेद— संमार्जन उपलेपाभ्याम् गृह मण्डल वर्तनैः ।
स्वयम् च मण्डिता नित्यम् परिमृष्ट परिच्छदा ॥

संमार्जन	२.	झाड़ना-बुहारना	**स्वयम्**	८.	अपने को
उपलेपाभ्याम्	३.	लीपना-पोतना	**च**	६.	और
गृह	१.	घर को	**मण्डिता**	९.	अलंकृत रखना
मण्डल	४.	चौक पूरना	**नित्यम्**	७.	सदा
वर्तनैः ।	५.	आदि से सजाना	**परिमृष्ट**	१०.	सामग्रियों को
			परिच्छदा ॥	११.	साफ-सुथरा रखना

श्लोकार्थ—घर को झाड़ना-बुहारना-लीपना-पोतना-चौक पूरना आदि से सजाना और सदा अपने को अलंकृत रखना, सामग्रियों को साफ-सुथरा रखना ये स्त्रियों का धर्म है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कामैरुच्चावचैः साध्वी प्रश्रयेण दमेन च ।
वाक्यैः सत्यैः प्रियैः प्रेम्णा काले काले भजेत् पतिम् ॥२७॥

पदच्छेद— कामैः उच्चावचैः साध्वी प्रश्रयेण दमेन च ।
वाक्यैः सत्यैः प्रियैः प्रेम्णा काले-काले भजेत् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

कामैः	३.	कामनाओं को पूर्ण करे	**वाक्यैः**	९.	वचनों से
उच्चावचैः	२.	पति की बड़ी-छोटी	**सत्यैः**	७.	सत्य
साध्वी	१.	पतिव्रता स्त्री	**प्रियैः**	८.	प्रिय
प्रश्रयेण	४.	विनय	**प्रेम्णा**	१०.	प्रेम पूर्वक
दमेन	५.	इन्द्रिय संयम	**काले-काले**	११.	समय-समय पर
च ।	६.	और	**भजेत् पतिम् ॥**	१२.	पति की सेवा करे

श्लोकार्थ—पतिव्रता स्त्री पति की बड़ी-छोटी कामनाओं को पूर्ण करे । विनय, इन्द्रिय संयम और सत्य, प्रिय, वचनों से प्रेमपूर्वक समय-समय पर पति की सेवा करे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

संतुष्टालोलुपा दक्षा धर्मज्ञा प्रियसत्यवाक् ।
अप्रमत्ता शुचिः स्निग्धा पतिं त्वपतितं भजेत् ॥२८॥

पदच्छेद— सन्तुष्टा अलोलुपा दक्षा धर्मज्ञा प्रिय सत्यवाक् ।
अप्रमत्ता शुचिः स्निग्धा पतिम् तु अपतितम् भजेत् ॥

शब्दार्थ—

सन्तुष्ट	१.	सन्तुष्ट	**अप्रमत्ता**	७.	सावधान
अलोलुपा	२.	निर्लोभ	**शुचिः**	८.	पवित्र
दक्षा	३.	निपुण	**स्निग्धा**	९.	प्रेम से परिपूर्ण
धर्मज्ञा	४.	धर्म की जानकार	**पतिम्**	११.	पति की
प्रिय	५.	प्रिय और	**तु अपतितम्**	१०.	पतित न हुये ऐसे
सत्यवाक् ।	६.	सत्य बोलने वाली	**भजेत् ॥**	१२.	सेवा करे

श्लोकार्थ—सन्तुष्ट, निर्लोभ, निपुण, धर्म की जानकार, प्रिय और सत्य बोलने वाली, सावधान, पवित्र, प्रेम से परिपूर्ण, पतित न हुये ऐसे पति की सेवा करो ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

या पतिं हरिभावेन भजेच्छ्रीरिव तत्परा।
हर्यात्मना हरेर्लोके पत्या श्रीरिव मोदते ॥२९॥

पदच्छेद— या पतिम् हरि भावेन भजेत् श्रीः इव तत्परा।
हरि आत्मना हरेः लोके पत्या श्रीः इव मोदते ॥

शब्दार्थ—

या	१. जो	हरि	९. भगवत्
पतिम्	२. पति को	आत्मना	१०. स्वरूप से
हरि	३. भगवान्	हरेः	११. हरि के
भावेन	४. समझकर	लोके	१२. लोक में
भजेत्	८. सेवा करती है (वह स्त्री)	पत्या	१३. पति के साथ
श्रीः	५. लक्ष्मी के	श्रीः	१४. लक्ष्मी के
इव	६. समान	इव	१५. समान
तत्परा।	७. पति परायण होकर	मोदते ॥	१६. आनन्दित होती है

श्लोकार्थ—जो पति को भगवान् समझकर लक्ष्मी के समान पति परायण होकर सेवा करती है वह भगवत् स्वरूप से हरि के लोक में पति के साथ लक्ष्मी के समान आनन्दित होती है ॥

त्रिंशः श्लोकः

वृत्तिः सङ्करजातीनां तत्तत्कुलकृता भवेत्।
अचौराणामपापानामन्त्यजान्तेऽवसायिनाम् ॥३०॥

पदच्छेद— वृत्तिः सङ्कर जातीनाम् तत्-तत् कुल कृता भवेत्।
अचौराणाम् अपापानाम् अन्त्यज अन्ते अवसायिनाम् ॥

शब्दार्थ—

वृत्तिः	१०. जीविका	अचौराणाम्	१. जो चोर न हो
सङ्कर	६. वर्ण सङ्कर	अपापानाम्	२. पापी न हो ऐसे
जातीनाम्	७. जातियों की	अन्त्यज	३. असवर्ण
तत्-तत्	८. वह	अन्ते	४. और
कुल-कृता	९. कुल परम्परागत	अवसायिनाम् ॥	५. चाण्डालादि
भवेत्।	११. होनी चाहिये		

श्लोकार्थ—जो चोर न हो ऐसे असवर्ण और चाण्डालादि वर्णसङ्कर जातियों की वह जीविका कुल परम्परागत होनी चाहिये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

प्रायः स्वभावविहितो नृणां धर्मो युगे युगे ।
वेददृग्भिः स्मृतो राजन्प्रेत्य चेह च शर्मकृत् ॥३१॥

पदच्छेद— प्रायः स्वभाव विहितः नृणाम् धर्मः युगे-युगे ।
वेद दृग्भिः स्मृतः राजन् प्रेत्य च इह च शर्मकृत् ॥

शब्दार्थ

प्रायः	७. प्रायः	**दृग्भिः**	३. दर्शी (ऋषियों ने)
स्वभाव	८. स्वभाव के	**स्मृतः**	१०. कहा है (जो)
विहितः	९. अनुसार ही	**राजन्**	१. हे राजन् !
नृणाम्	५. मनुष्यों का	**प्रेत्य**	१३. परलोक में
धर्मः	६. धर्म	**च**	१२. और
युगे-युगे	४. युग-युग में	**इह**	११. इस लोक में
वेद ।	२. वेद	**च शर्मकृत् ॥**	१४. कल्याणकारी है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वेददर्शी ऋषियों ने युग-युग में मनुष्यों का धर्म प्रायः स्वभाव के अनुसार ही कहा है । जो इस लोक में और परलोक में कल्याणकारी है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

वृत्त्या स्वभावकृतया वर्तमानः स्वकर्मकृत् ।
हित्वा स्वभावजं कर्म शनैर्निर्गुणतामियात् ॥३२॥

पदच्छेद— वृत्त्या स्वभाव कृतया वर्तमानः स्वकर्म कृत् ।
हित्वा स्वभावजम् कर्म शनैः निर्गुणताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

वृत्त्या	३. वृत्ति को	**हित्वा**	१०. छोड़कर
स्वभाव	१. स्वभाव के	**स्वभावजम्**	८. स्वाभाविक
कृतया	२. अनुसार रचित	**कर्म**	९. कर्म को
वर्तमानः	४. चलाते हुये	**शनैः**	७. धीरे-धीरे
स्वकर्म	५. अपने धर्म का	**निर्गुणताम्**	११. गुणों से परे
कृत् ।	६. पालन करने वाला मनुष्य	**इयात् ॥**	१२. हो जाता है

श्लोकार्थ—स्वभाव के अनुसार रचित वृत्ति को चलाते हुये अपने धर्म का पालन करने वाला मनुष्य धीरे-धीरे स्वाभाविक कर्म को छोड़कर गुणों से परे हो जाता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

उप्यमानं मुहुः क्षेत्रं स्वयं निर्वीर्यतामियात् ।
न कल्पते पुनः सूत्यै उप्तं बीजं च नश्यति ॥३३॥

पदच्छेद— उप्यमानम् मुहुः क्षेत्रम् स्वयम् निर्वीर्यताम् इयात् ।
न कल्पते पुनः सूत्यै उप्तम् बीजम् च नश्यति ॥

शब्दार्थ —

उप्यमानम्	३.	बोने से (वह)	कल्पते	१०.	समर्थ होता है
मुहुः	२.	बार-बार	पुनः	७.	फिर
क्षेत्रम्	१.	खेत को	सूत्यै	८.	अङ्कुर उगाने में
स्वयम्	४.	अपने आप ही	उप्तम्	१२.	बोया हुआ
निर्वीर्यताम्	५.	शक्ति हीन	बीजम्	१३.	बीज भी
इयात् ।	६.	हो जाता है	च	११.	और
न	९.	नहीं	नश्यति ॥	१४.	नष्ट हो जाता है

श्लोकार्थः—खेत को बार-बार बोने से वह अपने आप ही शक्तिहीन हो जाता है। फिर अङ्कुर उगाने में समर्थ नहीं होता है। और बोया हुआ बीज भी नष्ट हो जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एवं कामाशयं चित्तं कामानामतिसेवया ।
विरज्येत यथा राजन्नाग्निवत् कामबिन्दुभिः ॥३४॥

पदच्छेद— एवम् काम आशयम् चित्तम् कामानाम् अति सेवया ।
विरज्येत यथा राजन् न अग्निवत् काम बिन्दुभिः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	विरज्येत	९.	विरक्त हो जाता है
काम	३.	वासनाओं का	यथा	१०.	जैसे घी की बूंदों से
आशयम्	४.	खजाना	राजन्	१.	हे राजन् !
चित्तम्	४.	चित्त	न	१२.	नहीं बुझती है (वैसे ही)
कामानाम्	६.	कामनाओं का	अग्निवत्	११.	अग्नि
अति	७.	अत्यन्त	काम	१३.	काम के
सेवया ।	८.	सेवन करने के	बिन्दुभिः ॥	१४.	बिन्दुओंसे काम (नहीं बुझता है)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार वासनाओं का खजाना चित्त कामनाओं का अत्यन्त सेवन करने से विरक्त हो जाता है। जैसे घी की बूंदों से अग्नि नहीं बुझती है वैसे ही काम के बिन्दुओं से काम नहीं बुझता है ॥

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।
यदन्यत्रापि दृश्येत तत् तेनैव विनिर्दिशेत् ॥३५॥

पदच्छेद— यस्य यत् लक्षणम् प्रोक्तम् पुंसः वर्ण अभिव्यञ्जकम् ।
यत् अन्यत्र अपि दृश्येत तत् तेन एव विनिर्दिशेत् ॥

शब्दार्थ

यस्य	५.	जिसका	यत्	८.	वह
यत्	४.	जो	अन्यत्र	९.	दूसरे वर्ण में
लक्षणम्	६.	लक्षण	अपि	१०.	भी
प्रोक्तम्	७.	कहा गया है	दृश्येत	११.	दिखाई पड़े तो
पुंसः	१.	पुरुष के	तत्	१२.	उसी
वर्ण	२.	वर्ण को	तेन-एव	१३.	उसी वर्ण का
अभिव्यञ्जकम् ।	३.	बताने वाला	विनिर्दिशेत् ॥	१४.	समझना चाहिये

श्लोकार्थ—पुरुष के वर्ण को बताने वाला जो जिसका लक्षण कहा गया है । वह दूसरे वर्ण में भी दिखाई पड़े तो उसे उसी वर्ण का समझना चाहिये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमे स्कन्धे युधिष्ठिर नारदसंम्वादे सदाचारनिर्णयो नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—ब्रह्मचारी गुरुकुले वसन्दान्तो गुरोर्हितम् ।
आचरन्दासवन्नीचो गुरौ सुदृढसौहृदः ॥१॥

पदच्छेद— ब्रह्मचारी गुरुकुले वसन् दान्तः गुरोः हितम् ।
आचरन् दासवत् नीचः गुरौ सुदृढ सौहृदः ॥

शब्दार्थ —

ब्रह्मचारी	३.	ब्रह्मचारी	आचरन्	७.	करता हुआ
गुरुकुले	१.	गुरुकुल में	दासवत्	८.	दास के समान
वसन्	२.	रहने वाला	नीचः	९.	अपने को छोटा मानकर
दान्तः	४.	इन्द्रिय को वश में रखकर	गुरौ	१०.	गुरु के प्रति
गुरोः	५.	गुरु का	सुदृढ	११.	दृढ़
हितम् ।	६.	हित	सौहृदः ॥	१२.	प्रेम रक्खे

श्लोकार्थ—गुरुकुल में रहने वाला ब्रह्मचारी इन्द्रियों को वश में रखकर गुरु का हित करता हुआ दास के समान अपने को छोटा मानकर गुरु के प्रति दृढ़ प्रेम रखें ॥

द्वितीयः श्लोकः

सायं प्रातरुपासीत गुर्वग्न्यर्कसुरोत्तमान् ।
उभे सन्ध्ये च यतवाग् जपन्ब्रह्म समाहितः ॥२॥

पदच्छेद— सायम् प्रातः उपासीत गुरु अग्नि अर्क सुर उत्तमान् ।
उभे सन्ध्ये च यतवाक् जपन् ब्रह्म समाहितः ॥

शब्दार्थ—

सायम्	१.	सायंकाल (और)	उभे	१४.	दोनों समय की
प्रातः	२.	प्रातः काल	सन्ध्ये	१५.	संध्या करे
उपासीत	८.	उपासना करे	च	९.	और
गुरु	३.	गुरु	यतवाक्	१०.	मौन होकर
अग्नि	४.	अग्नि	जपन्	१३.	जप करता हुआ
अर्क	५.	सूर्य और	ब्रह्म	१२.	गायत्री का
सुर	७.	देवताओं की	समाहितः ॥	११.	समाहित चित्त से
उत्तमान् ।	६.	श्रेष्ठ			

श्लोकार्थ—सायंकाल और प्रातः काल गुरु, अग्नि, सूर्य और श्रेष्ठ देवताओं की उपासना करे और मौन होकर समाहित चित्त से गायत्री का जप करता हुआ दोनों समय की संध्या करे ॥

तृतीयः श्लोकः

छन्दांस्यधीयीत गुरोराहूतश्चेत् सुयन्त्रितः ।
उपक्रमेऽवसाने च चरणौ शिरसा नमेत् ॥३॥

पदच्छेद— छन्दांसि अधीयीत गुरोः आहूतः चेत् सुयन्त्रितः ।
उपक्रमे अवसाने च चरणौ शिरसा नमेत् ॥

शब्दार्थ—

छन्दांसि	५.	वेदों का	उपक्रमे	७.	प्रारम्भ में
अधीयीत	६.	स्वाध्याय करे	अवसाने	९.	अन्त में (गुरु के)
गुरोः	२.	गुरु	च	७.	और
आहूतः	३.	बुलावे	चरणौ	१०.	चरणों में
चेत्	१.	जब	शिरसा	११.	सिर झुकाकर
सुयन्त्रितः ।	४.	(तब) अनुशासन में रहकर	नमेत् ॥	१२.	प्रणाम करे

श्लोकार्थ—जब गुरु बुलावे तब अनुशासन में रहकर वेदों का स्वध्याय करे। प्रारम्भ में और अन्त में गुरु के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम करे ॥

चतुर्थः श्लोकः

मेखलाजिनवासांसि जटादण्डकमण्डलून् ।
बिभृयादुपवीतं च दर्भपाणिर्यथोदितम् ॥४॥

पदच्छेद— मेखला अजिन वासांसि जटा दण्ड कमण्डलून् ।
बिभृयात् उपवीतम् च दर्भपाणिः यथा उदितम् ॥

शब्दार्थ—

मेखला	३.	मेखला	बिभृयात्	१२.	धारण करे
अजिन	४.	मृगचर्म	उपवीतम्	९.	यज्ञोपवीत
वासांसि	५.	वस्त्र	च	१०.	और
जटा	६.	जटा	दर्भपाणिः	११.	हाथ में कुशा
दण्ड	७.	दण्ड	यथा	१.	जैसा
कमण्डलून् ।	८.	कमण्डलु	उदितम् ॥	२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—जैसा कहा गया है, मेखला, मृगचर्म, वस्त्र, जटा, दण्ड, कमण्डलु, यज्ञोपवीत और हाथ में कुशा धारण करे ॥

पञ्चमः श्लोकः

सायं प्रातश्चरेद् भैक्षं गुरवे तन्निवेदयेत् ।
भुञ्जीत यद्यनुज्ञातो नो चेदुपवसेत् क्वचित् ॥५॥

पदच्छेद— सायम् प्रातः चरेत् भैक्षम् गुरवे तत् निवेदयेत् ।
भुञ्जीत यदि अनुज्ञातः नो चेत् उपवसेत् क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

सायम्	१.	सायंकाल (और)	**भुञ्जीत**	१०.	भोजन करे
प्रातः	२.	प्रातः काल	**यदि**	८.	जब
चरेत्	४.	माँगकर लावे	**अनुज्ञातः**	९.	गुरु आज्ञा दे (तब)
भैक्षम्	३.	भिक्षा	**नो चेत्**	११.	अन्यथा
गुरवे	६.	गुरु को	**उपवसेत्**	१३.	उपवास कर ले
तत्	५.	वह (भिक्षा)	**क्वचित् ॥**	१२.	कभी
निवेदयेत् ।	७.	सर्मपित कर दे			

श्लोकार्थ—सायंकाल और प्रातःकाल भिक्षा माँगकर लावे । वह (भिक्षा) गुरु को सर्मपित करे । जब गुरु आज्ञा दे तब भोजन करे । अन्यथा कभी उपवास कर ले ॥

षष्ठः श्लोकः

सुशीलो मितभुग् दक्षः श्रद्दधानो जितेन्द्रियः ।
यावदर्थं व्यवहरेत् स्त्रीषु स्त्रीनिर्जितेषु च ॥६॥

पदच्छेद— सुशीलः मितभुक् दक्षः श्रद्दधानो जितेन्द्रियः ।
यावदर्थम् व्यवहरेत् स्त्रीषु स्त्रीनिर्जितेषु च ॥

शब्दार्थ—

सुशीलः	१.	सुन्दर स्वभाव वाला	**यावदर्थम्**	१०.	प्रयोजन के अनुसार
मितभुक	२.	थोड़ा भोजन करने वाला	**व्यवहरेत्**	११.	व्यवहार करे
दक्षः	३.	चतुर	**स्त्रीषु**	६.	स्त्रियों
प्रद्दधानो	४.	श्रद्धालु	**स्त्री**	८.	स्त्रियों के
जितेन्द्रियः ।	५.	जितेन्द्रिय होकर	**निर्जितेषु**	९.	वश में रहने वालों के साथ
			च ॥	७.	और

श्लोकार्थ—सुन्दर स्वभाव वाला, थोड़ा भोजन करने वाला, चतुर, श्रद्धालु तथा जितेन्द्रिय होकर स्त्रियों और स्त्रियों के वश में रहने वालों के साथ प्रयोजन के अनुसार व्यवहार करे ॥

सप्तमः श्लोकः

वर्जयेत् प्रमदागाथामगृहस्थो बृहद्व्रतः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्त्यपि यतेर्मनः ॥७॥

पदच्छेद— वर्जयेत् प्रमदा गाथाम् अगृहस्थः बृहद् व्रतः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति अपि यतेर्मनः ॥

शब्दार्थ—

वर्जयेत्	६. त्याग दे (क्योंकि)	इन्द्रियाणि	७. इन्द्रियाँ
प्रमदा	४. स्त्रियों की	प्रमाथीनि	८. बलवान् होती हैं (और)
गाथाम्	५. चर्चा	हरन्ति	१२. हरण कर लेती हैं
अगृहस्थः	१. जो गृहस्थ नहीं है	अपि	११. भी
बृहद्	२. महान् (ब्रह्मचर्य का)	यतेः	९. वे संन्यासो के
व्रतः ।	३. व्रत लिये हुए है (वह)	मनः ॥	१०. मन को

श्लोकार्थ—जो गृहस्थ नहीं है महान् ब्रह्मचर्य का व्रत लिए हुए है वह स्त्रियों की चर्चा त्याग दे । क्योंकि इन्द्रियाँ वलवान् होती हैं । और वे संन्यासी के मन को भी हरण कर लेती है ॥

अष्टमः श्लोकः

केशप्रसाधनोन्मर्दस्नपनाभ्यञ्जनादिकम् ।
गुरुस्त्रीभिर्युवतिभिः कारयेन्नात्मनो युवा ॥८॥

पदच्छेद— केश प्रसाधन उन्मर्दः स्नपन अभ्यञ्जन आदिकम् ।
गुरु स्त्रीभिः युवतिभिः कारयेत् न आत्मनः युवा ॥

शब्दार्थ—

केश	३. बाल	गुरु	९. गुरु की
प्रसाधन	४. सवाँरना	स्त्रीभिः	११. स्त्रियों से
उन्मदः	५. शरीर मतवाला	युवतिभिः	१०. युवती
स्नपन	६. स्नान करवाना	कारयेत्	१३. करावे
अभ्यञ्जन	७. उबटन लगवाना	न	१२. नहीं
आदिकम् ।	८. आदि कार्य	आत्मनः	२. अपना
		युवा ॥	१. युवक ब्रह्मचारी

श्लोकार्थ—युवक ब्रह्मचारी अपना बाल सवाँरना, शरीर मलवाना, स्नान करवाना, उबटन लगवाना आदि कार्य गुरु की युवती स्त्रियों से नहीं करावे ॥

नवमः श्लोकः

नन्वग्निः प्रमदा नाम घृतकुम्भसमः पुमान् ।
सुतामपि रहो जह्यादन्यदा यावदर्थकृत् ॥९॥

पदच्छेद— ननु अग्निः प्रमदा नाम घृतकुम्भ समः पुमान् ।
सुताम् अपि रहः जह्यात् अन्यदा यावत् अर्थकृत् ॥

शब्दार्थ—

ननु	१.	निश्चित रूप से	अपि	८.	भी
अग्नि	२.	अग्नि के समान	रहः	९.	एकान्त में
प्रमदानाम्	३.	स्त्रियाँ हैं (और)	जह्यात्	१०.	त्याग दे
घृतकुम्भ	४.	घी के घड़े के	अन्यदा	११.	अन्य समय
समः	५.	समान	यावत्	१२.	जब तक
पुमान् ।	६.	पुरुष है	अर्थ	१३.	आवश्यकता हो
सुताम्	७.	पुत्री को	कृत ॥	१४.	(तब तक) रहे

श्लोकार्थ—निश्चित रूप से अग्नि के समान स्त्रियाँ हैं और घी के घड़े के समान पुरुष हैं । पुत्र को भी एकान्त में त्याग दे । अन्य समय जब तक आवश्यकता हो तब तक रहे ॥

दशमः श्लोकः

कल्पयित्वाऽऽत्मना यावदाभासमिदमीश्वरः ।
द्वैतं तावन्न विरमेत् ततो ह्यस्य विपर्ययः ॥१०॥

पदच्छेद— कल्पयित्वा आत्मना यावत् आभासम् इदम् ईश्वरः ।
द्वैतम् तावत् न विरमेत् ततः हि अस्य विपर्ययः ॥

शब्दार्थ—

कल्पयित्वा	५.	मानने में	द्वैतम्	७.	द्वैत भाव
आत्मना	३.	अपने से (देहादि को)	तावत्	८.	तब तक
यावत्	१.	जब तक	न	९.	नहीं
आभासम्	४.	प्रतीत मात्र	विरमेत्	१०.	मिटाता है
इदम्	२.	यह (जीव)	ततः	११.	उससे
ईश्वरः ।	६.	समर्थ नहीं हो जाता	हि अस्य	१२.	ही इस जीव की बुद्धि
			विपर्ययः॥	१३.	विपरीत हो जाती है

श्लोकार्थ—जक तक यह जीव अपने से देहादि की प्रतीति मात्र मानने में समर्थ नहीं हो जाता तब तक द्वैत भाव नहीं मिटता है। उससे ही इस जीव की बुद्धि विपरीत हो जाती है ॥

एकादशः श्लोकः

एतत् सर्वं गृहस्थस्य समाम्नातं यतेरपि ।
गुरुवृत्तिर्विकल्पेन गृहस्थस्यर्तुगामिनः ॥११॥

पदच्छेद— एतत् सर्वम् गृहस्थस्य समाम्नातम् यतेः अपि ।
गुरु वृत्तिः विकल्पेन गृहस्थस्य ऋतुगामिनः ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१.	यह	गुरु	१०.	गुरु की
सर्वम्	२.	सब	वृत्तिः	११.	सेवा
गृहस्थस्य	३.	गृहस्थ के लिए (और)	विकल्पेन	१२.	वैकल्पिक है
समाम्नातम्	६.	कहा गया है	गृहस्थस्य	७.	गृहस्थ के लिए
यतेः	४.	संन्यासी के लिए	ऋतु	८.	ऋतुकाल में
अपि ।	५.	भी	गामिनः ॥	९.	गमन करने के कारण

श्लोकार्थ—यह सब गृहस्थ के लिए और संन्यासी के लिए भी कहा गया है । गृहस्थ के लिए ऋतु-काल में गमन करने के कारण गुरु की सेवा वैकल्पिक है ॥

द्वादशः श्लोकः

अञ्जनाभ्यञ्जनोन्मर्दस्त्र्यवलेखामिषं मधु ।
स्रग्गन्धलेपालंकारांस्त्यजेयुर्ये धृतव्रताः ॥१२॥

पदच्छेद— अञ्जन अभ्यञ्जन उन्मर्दः स्त्री अवलेखा आमिषम् मधु ।
स्रक् गन्धलेप अलंकारान् त्यजेयुः ये धृतव्रताः ॥

शब्दार्थ—

अञ्जन	३.	अञ्जन	स्रक्	९.	माला
अभ्यञ्जन	४.	उबटन	गन्धलेप	१०.	गन्ध और लेप
उन्मर्दः	५.	मालिश	अलंकारान्	११.	(तथा) आभूषणों को
स्त्री अवलेखा	६.	स्त्री का चित्र	त्यजेयुः	१२.	त्याग दे
आमिषम्	७.	मांस	ये	१.	जो
मधु ।	८.	मधु	धृतव्रताः ॥	२.	व्रत धारण किये हुए हैं

श्लोकार्थ—जो व्रत धारण किये हुए, हैं वे अञ्जन, उबटन, मालिश, स्त्री का चित्र, मांस मधु, माला, गन्ध और लेप तथा आभूषण त्याग दे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

उषित्वैवं गुरुकुले द्विजोऽधीत्यावबुध्य च ।
त्रयीं साङ्गोपनिषदं यावदर्थं यथाबलम् ॥१३॥

पदच्छेद— उषित्वा एवम् गुरुकुले द्विजः अधीत्य अवबुध्य च ।
त्रयीम् साङ्गोपनिषदम् यावत् अर्थम् यथा बलम् ॥

शब्दार्थ—

उषित्वा	३.	निवास करने वाला	त्रयीम्	८.	वेद उनके
एवम्	१.	इस प्रकार	साङ्गोपनिषदम्	९.	अङ्ग उपनिषदों का
गुरुकुले	२.	गुरुकुल में	यावत्	६.	और
द्विजः	४.	द्विजाति	अर्थम्	५.	आवश्यकतानुसार
अधीत्य	१०.	अध्ययन करे	यथा	८.	अनुसार
अवबुध्य	१२.	समझे	बलम् ॥	७.	शक्ति के
च ।	११.	और			

श्लोकार्थ—इस प्रकार गुरुकुल में निवास करने वाला द्विजाति आवश्यकतानुसार और शक्ति के अनुसार वेद और उनके अङ्ग उपनिषदों का अध्ययन करे और समझे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

दत्त्वा वरमनुज्ञातो गुरोः कामं यदीश्वरः ।
गृहं वनं वा प्रविशेत् प्रव्रजेत् तत्र वा वसेत् ॥१४॥

पदच्छेद— दत्त्वा वरम् अनुज्ञातः गुरोः कामम् यत् ईश्वरः ।
गृहम् वनम् वा प्रविशेत् प्रव्रजेत् तत्र वा वसेत् ॥

शब्दार्थ—

दत्त्वा	७.	दे (फिर)	गृहम्	८.	घर में
वरम्	६.	दक्षिणा	वनम्	१०.	वन में
अनुज्ञातः	४.	आज्ञा से उन्हें	वा	९.	अथवा
गुरोः	३.	गुरु की	प्रविशेत्	११.	प्रवेश करे
कामम्	५.	यथेच्छ	प्रव्रजेत्	१३.	संन्यास ले (या)
यत्	१.	यदि	तत्र	१४.	वहीं पर
ईश्वरः ।	२.	सामर्थ्य हो तो	वा	१२.	अथवा
			वसेत् ॥	१५.	आश्रम में निवास करे

श्लोकार्थ—यदि सामर्थ्य हो तो गुरु की आज्ञा से उन्हें यथेच्छ दक्षिणा दे । फिर घर में अथवा वन में प्रवेश करे अथवा संन्यास ले या वहीं पर आश्रम में निवास करे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अग्नौ गुरावात्मनि च सर्वभूतेष्वधोक्षजम् ।
भूतैः स्वधामभिः पश्येदप्रविष्टं प्रविष्टवत् ॥१५॥

पदच्छेद— अग्नौ गुरौ आत्मनि च सर्वभूतेषु अधोक्षजम् ।
भूतैः स्वधामभिः पश्येत् अप्रविष्टम् प्रविष्टवत् ॥

शब्दार्थ—

अग्नौ	५.	अग्नि में	भूतैः	४.	जीवों के साथ
गुरौ	६.	गुरु में	स्वधामभिः	३.	अपने आश्रित
आत्मनि	७.	आत्मा में	पश्येत्	११.	देखे
च	८.	और	अप्रविष्टम्	१.	न प्रविष्ट होने वाले
सर्वभूतेषु	९.	सभी प्राणियों में	प्रविष्टवत्॥	१०.	प्रविष्ट के समान
अधोक्षजम् ।	२.	भगवान् श्रीकृष्ण को			

श्लोकार्थ—अतएव न प्रवेश होने वाले भगवान् श्रीकृष्ण को अपने आश्रित जीवों के साथ अग्नि, गुरु, आत्मा और सभी प्राणियों में प्रविष्ट के समान देखे ॥

षोडशः श्लोकः

एवंविधो ब्रह्मचारी वानप्रस्थो यतिर्गृही ।
चरन्विदितविज्ञानः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥१६॥

पदच्छेद— एवम् विधः ब्रह्मचारी वानप्रस्थः यतिः गृही ।
चरन् विदित विज्ञानः परम् ब्रह्म अधि गच्छति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	चरन्	३.	आचरण करने वाला
विधः	२.	का	विदित	९.	सम्पन्न होकर
ब्रह्मचारी	४.	ब्रह्मचारी	विज्ञानः	८.	(विशिष्ट) विज्ञान में
वानप्रस्थः	५.	वानप्रस्थी	परम्	१०.	पर
यतिः	६.	संन्यासी (और)	ब्रह्म	११.	ब्रह्म को
गृही ।	७.	गृहस्थ	अधिगच्छति ॥	१२.	प्राप्त कर लेता है ॥

श्लोकार्थ—इस प्रकार का आचरण करने वाला ब्रह्मचारी वानप्रस्थी, संन्यासी और गृहस्थ विशिष्ट विज्ञान से सम्पन्न होकर पर ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

वानप्रस्थस्य वक्ष्यामि नियमान्मुनिसम्मतान् ।
यानातिष्ठन् मुनिर्गच्छेदृषिलोकमिहाञ्जसा ॥१७॥

पदच्छेद— वानप्रस्थस्य वक्ष्यामि नियमान् मुनि सम्मतान् ।
यान् आतिष्ठन् मुनिः गच्छेत् ऋषि लोकम् इह अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

वानप्रस्थस्य	३. वानप्रस्थाश्रम के	आतिष्ठन्	७. पालन करने से
वक्ष्यामि	५. बताऊँगा	मुनिः	८. मुनि
नियमान्	४. नियमों को	गच्छेत्	१३. प्राप्त कर लेता है
मुनि	१. मुनियों के	ऋषि	१०. ऋषियों के
सम्मतान्	२. मतानुसार	लोकम्	११. लोक को
यान् ।	६. जिन नियमों का	इह अञ्जसा ॥	९. यहाँ शीघ्र ही

श्लोकार्थः—मुनियों के मतानुसार वानप्रस्थ आश्रम के नियमों को बताऊँगा । जिन नियमों का पालन करने से मुनि यहाँ ऋषियों के लोक को शीघ्र ही प्राप्त कर लेता है ।

अष्टादशः श्लोकः

न कृष्टपच्यमश्नीयादकृष्टं चाप्यकालतः ।
अग्निपक्वमथामं वा अर्कपक्वमुताहरेत् ॥१८॥

पदच्छेद— न कृष्ट पच्यम् अश्नीयात् अकृष्टम् च अपि अकालतः ।
अग्नि पक्वम् अथ आमम् वा अर्क पक्वम् उत आहरेत् ॥

शब्दार्थ—न	३. नहीं	अग्नि	८. अग्नि से
कृष्ट	१. खेत में	पक्वम्	९. पकाई हुई वस्तु न खाये
पच्यम्	२. उत्पन्न होने वाले (चावलादि अन्न को)	अथआमम्	११. कच्चा अन्न न खाये
अश्नीयात्	४. खाये	वा	१०. अथवा
अकृष्टम्	६. बिना खेती के	अर्क	१३. सूर्य के ताप से
च	५. और	पक्वम्	१४. पकी हुई वस्तु का
अपि अकालतः	७. भी असमय से उत्पन्न हुए वस्तु को भी न खाये	आहरेत्	१५. सेवन करे
		उत	१२. अथवा

श्लोकार्थः—खेत में उत्पन्न होने वाले चावल आदि अन्न को नहीं खाये और बिना खेती के भी असमय में उत्पन्न हुए अन्न को न खाये । अग्नि से पकाई हुई (वस्तु) न खाये । अथवा कच्चा अन्न न खाये । सूर्य के ताप से पकी हुई वस्तु का सेवन करे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

वन्यैश्चरुपुरोडाशान् निर्वपेत् कालचोदितान् ।
लब्धे नवे नवेऽन्नाद्ये पुराणं तु परित्यजेत् ॥१९॥

पदच्छेद— वन्यैः चरु पुरोडाशान् निर्वपेत् काल चोदितान् ।
लब्धे नवे नवे अन्नाद्ये पुराणम् तु परित्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

वन्यैः	२.	वन में उत्पन्न हुए (धान्यों की)	लब्धे	८.	मिल जाने पर
चरु	३.	खीर	नवे नवे	६.	नया-नया
पुरोडाशान्	४.	लपसी आदि से	अन्नाद्ये	७.	अन्नादि के
निर्वपेत्	५.	हवन करे	पुराणम्	९.	पुराने अन्न को
कालचोदितान्।	१.	समयानुसार	तु परित्यजेत्	१०.	त्याग देना चाहिए

श्लोकार्थ—समयानुसार वन में उत्पन्न हुए धान्यों के खीर, लपसी आदि से हवन करे। नये नये अन्न अदि के मिल जाने पर पुराने अन्न को त्याग देना चाहिए ॥

विंशः श्लोकः

अग्न्यर्थमेव शरणमुटजं वाद्रिकन्दराम् ।
श्रयेत हिमवाय्वग्निवर्षार्कातपषाट् स्वयम् ॥२०॥

पदच्छेद— अग्नि अर्थम् एव शरणम् उटजम् वा अद्रिकन्दराम् ।
श्रयेत हिम वायु अग्नि वर्षा अर्क आतपषाट् स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

अग्नि	१.	(अग्नि होत्र की) अग्नि	कन्दराम्	८.	गुफा का
अर्थम्	२.	के लिए	श्रयेत	९.	आश्रय ले (और)
एव	३.	ही	हिमवायु	११.	शीत-वायु
शरणम्	४.	घर	अग्नि	१२.	अग्नि
उटजम्	५.	झोपड़ी	वर्षा	१३.	वर्षा
वा	६.	अथवा	अर्कआतपषाट्	१४.	सूर्य की धूप सहन करे
अद्रि	७.	पर्वत की	स्वयम्	१०.	स्वयम्

श्लोकार्थ—अग्निहोत्र की अग्नि के लिए ही घर, झोपड़ी अथवा पर्वत की गुफा का आश्रय ले और स्वयम् शीत-वायु, अग्नि वर्षा तथा सूर्य की धूप सहन करे ॥

एकविंशः श्लोकः

केशरोमनखश्मश्रुमलानि जटिलो दधत्।
कमण्डल्वजिने दण्डवल्कलाग्निपरिच्छदान् ॥२१॥

पदच्छेद— केश रोम नख श्मश्रु मलानि जटिलः दधत्।
कमण्डलु अजिने दण्ड वल्कल अग्नि परिच्छदान् ॥

शब्दार्थ—

केश	१.	बालों को	कमण्डलु	८.	कमण्डल
रोम	२.	रोयें	अजिने	९.	मृगचर्म
नख	३.	नाखून	दण्ड	१०.	दण्ड
श्मश्रु	४.	दाढ़ी	वल्कल	११.	वल्कल वस्त्र
मलानि	५.	मूँछ	अग्नि	१२.	अग्नि होत्र की
जटिलः	५.	जटा	परिच्छदान् ॥	१३.	सामग्रियों को अपने पास रखे
दधत् ।	७.	धारण करे (और)			

श्लोकार्थ—बाल, रोयें, नाखून, दाढ़ी-मूंछ, मैल और जटा धारण करे। तथा कमण्डल, मृगचर्म, दण्ड, वल्कल वस्त्र, अग्नि होत्र की सामग्रियों को अपने पास रखे॥

द्वाविंशः श्लोकः

चरेद् वने द्वादशाब्दानष्टौ वा चतुरो मुनिः।
द्वावेकं वा यथा बुद्धिर्न विपद्येत कृच्छ्रतः ॥२२॥

पदच्छेद— चरेद् वने द्वादशाब्दानष्टौ वा चतुरो मुनिः।
द्वौ एकम् वा यथा बुद्धिः न विपद्येत कृच्छ्रतः ॥

शब्दार्थ—

चरेत्	१०.	विचरण करे	द्वौ	८.	दो वर्ष (या)
वने	३.	वन में	एकम्	९.	एक वर्ष
द्वादशाब्दान्	४.	बारह वर्षों तक	वा	७.	या
अष्टौ	६.	आठ वर्षों तक	यथा	११.	जिससे
वा	५.	या	बुद्धिः	१३.	बुद्धि
चतुरः	१.	ज्ञानी	न विपद्येत	१४.	न बिगड़ जाये
मुनिः ।	२.	मुनि	कृच्छ्रतः ॥	१२.	कष्ट करने से

श्लोकार्थ—ज्ञानी मुनि वन में बारह वर्षों तक या आठ वर्षों तक या दो वर्ष या एक वर्ष विचरण करे जिससे कष्ट करने से बुद्धि न बिगड़ जाये॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यदाकल्पः स्वक्रियायां व्याधिभिर्जरयाथवा ।
आन्वीक्षिक्यां वा विद्यायां कुर्यादनशनादिकम् ॥२३॥

पदच्छेद— यदा अकल्पः स्वक्रियायाम् व्याधिभिः जरया अथवा ।
आन्वीक्षिक्याम् वा विद्यायाम् कुर्यात् अनशनादिकम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	आन्वीक्षिक्याम्	७.	वेदान्त के
अकल्पः	६.	असमर्थ हो जाये (तब)	वा	६.	अथवा
स्वक्रियायाम्	५.	अपनी क्रिया कर्म करने में	विद्यायाम्	८.	विचार करने में
व्याधिभिः	२.	रोगों से	कुर्यात्	११.	करना चाहिए
जरया	४.	बुढ़ापा के कारण	अनशनादिकम् ॥	१०.	अनशन आदि
अथवा ।	३.	अथवा			

श्लोकार्थ—जब रोगों से अथवा बुढ़ापे के कारण अपनी क्रिया कर्म करने में अथवा वेदान्त का विचार करने में असमर्थ हो जाय तब अनशन आदि करना चाहिए ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

आत्मन्यग्नीन् समारोप्य संन्यस्याहंममात्मताम् ।
कारणेषु न्यसेत् सम्यक् संघातं तु यथार्हतः ॥२४॥

पदच्छेद— आत्मनि अग्नीन् समारोप्य संन्यस्यअहंममआत्मताम् ।
कारणेषु न्यसेत् सम्यक् संघातम् तु यथा अर्हतः ॥

शब्दार्थ—

आत्मनि	१.	आत्मा में	कारणेषु	६.	कारण भूत तत्त्वों में
अग्नीन्	२.	अग्नियों को	न्यसेत्	१३.	लीन कर दे
सम्आरोप्य	३.	लीन करके	सम्यक्	१२.	भली भाँति
संन्यस्य	७.	छोड़कर	संघातम् तु	८.	शरीर को
अहम्	४.	मैं और	यथा	१०.	यथा
मम	५.	मेरे	अर्हतः	११.	योग्य
आत्मताम्	६.	पन को			

श्लोकार्थ—आत्मा में अग्नियों को लीन करके मैं और मेरे पन को छोड़कर शरीर को कारण भूत तत्त्वों में यथा योग्य भली भाँति लीन कर दे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

खे खानि वायौ निःश्वासांस्तेजस्यूष्माणमात्मवान् ।
अप्स्वसृक्श्लेष्मपूयानि क्षितौ शेषं यथोद्भवम् ॥२५॥

पदच्छेद— खे खानि वायौ निः श्वासान् तेजसि ऊष्माणम् आत्मवान् ।
अप्सु असृक्श्लेष्म पूयानि क्षितौ शेषम् यथा उद्भवम् ॥

शब्दार्थ—

खे	३. आकाश में	अप्सु	११. जल में और
खानि	२. छिद्राकाशों को	असृक्	८. रक्त
वायौ	५. वायु में	श्लेष्म	९. कफ
निःश्वासान्	४. प्राण वायु को	पूयानि	१०. पीब को
तेजसि	७. तेज से	क्षितौ	१४. पृथ्वी में (लीनकर दे)
ऊष्माणम्	६. गर्मी को	शेषम्	१२. शेष वस्तु की
आत्मवान् ॥	१. आत्मा को जानने वाला मनुष्य	यथा उदभवम्	१३. जैसे उत्पत्ति हुई है उसे

श्लोकार्थ—आत्मा को जानने वाला मनुष्य छिद्राकाशों को आकाश में, प्राण वायु को वायु, में गर्मी को तेज में, रक्त, कफ, पीब को जल में और शेष वस्तु की जैसे उत्पत्ति हुई है। उसे पृथ्वी में लीन कर दे ॥

षड्विंशः श्लोकः

वाचमग्नौ सवक्तव्यामिन्द्रे शिल्पं करावपि ।
पदानि गत्या वयसि रत्योपस्थं प्रजापतौ ॥२६॥

पदच्छेद— वाचम् अग्नौ सवक्तव्याम् इन्द्रे शिल्पम् करौ अपि ।
पदानि गत्या वयसि रत्या उपस्थम् प्रजापतौ ॥

शब्दार्थ—

वाचम्	१. वाणी को	पदानि	९. पैरों को
अग्नौ	३. अग्नि में	गत्या	८. गति सहित
सवक्तव्याम्	२. भाषण सहित	वयसि	१०. कालस्वरूप विष्णु में
इन्द्रे	७. इन्द्र में	रत्या	११. रति सहित
शिल्पम्	५. कारीगरी को	उपस्थम्	१२. उपस्थ (इन्द्रिय) को
करौ	४. हाथों सहित	प्रजापतौ ॥	१३. प्रजापति में लीन कर दे ।
अपि ।	६. भी		

श्लोकार्थ—वाणी को भाषण के सहित अग्नि में, हाथों सहित कारीगरी को इन्द्र में, गति सहित पैरों को कालस्वरूप विष्णु में, रति सहित उपस्थ इन्द्रिय को प्रजापति में लीन कर दे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

मृत्यौ पायुं विसर्गं च यथास्थानं विनिर्दिशेत् ।
दिक्षु श्रोत्रं सनादेन स्पर्शमध्यात्मनि त्वचम् ॥२७॥

पदच्छेद— मृत्यौ पायुम् विसर्गम् च यथा स्थानम् विनिर्दिशेत् ।
दिक्षु श्रोत्रम् सनादेन स्पर्शम् अध्यात्मनि त्वचम् ॥

शब्दार्थ—

मृत्यौ	४.	मृत्यु में	दिक्षु	१०.	दिशाओं में (तथा)
पायुम्	३.	गुदा को	श्रोत्रम्	९.	कान को
विसर्गम्	२.	मलोत्सर्ग के सहित	सनादेन	८.	शब्द सहित
च	१.	और	स्पर्शमपि	११.	स्पर्शसहित
यथा	५.	यथा	अध्यात्मनि	१३.	वायु में लीन कर दे
स्थानम्	६.	स्थान	त्वचम् ॥	१२.	त्वचा को
विनिर्दिशेत् ।	७.	लीन कर दे			

श्लोकार्थ—और मलोत्सर्ग के सहित गुदा को मृत्यु में यथा स्थान लीन कर दे। और शब्द सहित कान को दिशाओं में तथा स्पर्श सहित त्वचा को वायु में लीन कर दे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

रूपाणि चक्षुषा राजन् ज्योतिष्यभिनिवेशयेत् ।
अप्सु प्रचेतसा जिह्वां घ्रेयैर्घ्राणं क्षितौ न्यसेत् ॥२८॥

पदच्छेद— रूपाणि चक्षुषा राजन् ज्योतिषि अभिनिवेशयेत् ।
अप्सु प्रचेतसा जिह्वाम् घ्रेयैः घ्राणम् क्षितौ, न्यसेत् ॥

शब्दार्थ—

रूपाणि	३.	रूपको	प्रचेतसा	६.	मधुरस के सहित
चक्षुषा	२.	नेत्र सहित	जिह्वाम्	७.	जीभ को
राजन्	१.	हे राजन् !	घ्रेयैः	९.	सूघने योग्य वस्तु सहित
ज्योतिषि	४.	अग्नि में	घ्राणम्	१०.	नासिका को
अभिनिवेशयेत्	५.	लीन कर दे (और)	क्षितौ	११.	पृथ्वी में
अप्सु ।	८.	जल में	न्यसेत् ॥	१२.	लीन कर दे

श्लोकार्थ— हे राजन् ! नेत्र सहित रूप को अग्नि में लीन कर दे । और मधुरस के सहित जीभ को जल में, सूंघने योग्य वस्तु सहित नासिका को पृथ्वी में लीन कर दे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

मनो मनोरथैश्चन्द्रे बुद्धिं बोध्यैः कवौ परे ।
कर्माण्यध्यात्मना रुद्रे यदहंममताक्रिया ।
सत्त्वेन चित्तं क्षेत्रज्ञे गुणैर्वैकारिकं परे ॥२९॥

पदच्छेद— मनः मनोरथैः चन्द्रे बुद्धि बोध्यैः कवौ परे ।
कर्माणि अध्यात्मना रुद्रे यत् अहम् ममता क्रिया ॥
सत्त्वेन चित्तं क्षेत्रज्ञे गुणैः वैकारिकम् परे ।

शब्दार्थ—मनः	२.	मन को	यत्	१०.	इस प्रकार की
मनोरथैः	१.	मनोरथों के साथ	अहम्	८.	मैं हूँ
चन्द्रे	३.	चन्द्रमा में	ममता	९.	मेरा है
बुद्धिम्	५.	बुद्धि को	क्रिया	११.	चेष्टा करने वाले
बोध्यैः	४.	जानने योग्य पदार्थों के साथ	सत्त्वेन	१५.	चेतना सहित
कवौ	७.	कवि ब्रह्मा में	चित्तम्	१६.	चित्त को
परे ।	६.	श्रेष्ठ	क्षेत्रज्ञे	१७.	जीव में
कर्माणि	१३.	कर्मों को	गुणैः	१८.	गुणों के कारण
अध्यात्मना	१२.	अंहकार सहित	वैकारिकम्	१९.	वैकारिक जीव को
रुद्रे	१४.	रुद्र में	परे ॥	२०.	परब्रह्म में लीन कर दे

श्लोकार्थ—मनोरथों के साथ मन को चन्द्रमा में, जानने योग्य पदार्थों के साथ बुद्धि को श्रेष्ठ कवि ब्रह्मा में, मैं हूँ मेरा है इस प्रकार की चेष्टा करने वाले अहंकार सहित कर्मों को रुद्र में, चेतना सहित चित्त को जीव में और गुणों के कारण वैकारिक जीव को परब्रह्म में लीन कर दे ॥

त्रिंशः श्लोकः

अप्सु क्षितिमपो ज्योतिष्यदो वायौ नभस्यमुम् ।
कूटस्थे तच्च महति तदव्यक्तेऽक्षरे च तत् ॥३०॥

पदच्छेद — अप्सु क्षितिम् अपः ज्योतिषि अदः वायौ नभसि अमुम् ।
कूटस्थे तत् च महति तत् अव्यक्ते अक्षरे च तत् ॥

शब्दार्थ—अप्सु	२.	जल में	तत्	७.	उस आकाश को
क्षितिम्	१.	पृथ्वी को	च	९.	और
ज्योतिषिअदः	३.	जल को अग्नि में, अग्नि को	महति	११.	महत्तत्त्व में
वायौ	४.	वायु में	तत्	१०.	उस अंहकार को
नभसि	६.	आकाश में	अव्यक्ते	१४.	परमात्मा में लीनकर दे
अमुम्	५.	उस वायु को	अक्षरे	१३.	अविनाशी
कूटस्थे ।	८.	अंहकार में	च तत् ॥	१२.	और उस महत्तत्त्व को

श्लोकार्थ—पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में, उस वायु को आकाश, में उस आकाश को अंहकार में और उस अंहकार को महत्तत्त्व में और उस महत्तत्त्व को अविनाशी परमात्मा में लीन कर दे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

इत्यक्षरतयाऽऽत्मानं चिन्मात्रमवशेषितम् ।
ज्ञात्वाद्वयोऽथ विरमेद् दग्धयोनिरिवानलः ॥३१॥

पदच्छेद— इति अक्षर तया आत्मानम् चिन्मात्रम् अवशेषितम् ।
ज्ञात्वा अद्वयः अथ विरमेत् दग्ध योनिः इव अनलः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अथ	७.	अनन्तर
अक्षरतया	५.	अविनाशी परमात्मा	विरमेत्	६.	स्थित हो जावे
आत्मानम्	४.	अपने को	दग्ध	१२.	जलाकर
चिन्मात्रम्	२.	चेतना रूप वस्तु मात्र	योनि	११.	काष्ठ को
अवशेषितम्	३.	बच गयी है	इव	१०.	जैसे
ज्ञात्वा	६.	जानकर	अनलः ॥	१३.	अग्नि (शान्त हो जाता है)
अद्वयः ।	८.	अद्वैत रूप में			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार चेतना रूप वस्तु मात्र बच गयी है । अपने को अविनाशी परमात्मा जानकर अनन्तर अद्वैत रूप में शान्त हो जावे, जैसे काष्ठ को जलाकर अग्नि शान्त हो जाता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे युधिष्ठिर-नारदसंवादे सदाचारनिर्णयो नाम द्वादशः अध्यायः ॥१२॥



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

त्रयोदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— कल्पस्त्वेवं परिव्रज्य देहमात्रावशेषितः ।
ग्रामैकरात्रविधिना निरपेक्षश्चरेन्महीम् ॥१॥

पदच्छेद— कल्पः तु एवम् परिव्रज्य देहमात्र अवशेषितः ।
ग्रामे एकरात्र विधिना निपेक्षः चरेत् महीम् ॥

शब्दार्थ—

कल्पः	१. सामर्थ्य हो	ग्रामैकरात्र	६. गाँव में एक ही रात्र ठहरने के
तु एवम्	२. तो इस प्रकार	विधिना	७. नियम से
परिव्रज्य	३. संन्यास ले कि	निरपेक्षः	८. निरपेक्ष होकर
देहमात्र	४. शरीर मात्र	चरेत्	१०. विचरण करे
अवशेषितः ।	५. बच जाय	महीम् ॥	९. पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—यदि सामर्थ्य हो तो इस प्रकार संन्यास ले कि शरीर मात्र बच जाय गाँव में एक ही रात ठहरने के नियम से, निरपेक्ष होकर पृथ्वी पर विचरण करे ॥

द्वितीयः श्लोकः

बिभृयाद् यद्यसौ वासः कौपीनाच्छादनं परम् ।
त्यक्तं न दण्डलिङ्गादेरन्यत् किञ्चिदनापदि ॥२॥

पदच्छेद— बिभृयात् यदि असौ वासः कौपीन आच्छादनम् परम् ।
त्यक्तम् न दण्ड लिङ्गादि अन्यत् किञ्चित् अनापदि ॥

शब्दार्थ—

बिभृयात्	४. धारण करे (तो)	त्यक्तम्	१२. त्यागी हुई
यदि	१. यदि	न दण्ड	१३. न ही दण्ड के आश्रय
असौ	२. वह (संन्यासी)	लिङ्गादेः	१०. आदि के चिह्न
वासः	३. वस्त्र	अन्यत्	११. सिवाय
कौपीन	७. कोपीन मात्र पहने (और)	किञ्चित्	१४. कुछ भी (वस्त्र न ग्रहण करे)
आच्छादनम्	६. ढक लेने वाला	अनापदि ॥	८. विना विपत्ति आये
परम् ।	५. अच्छी प्रकार		

श्लोकार्थ—यदि वह संन्यासी वस्त्र धारण करे तो अच्छी प्रकार ढक लेने वाला कौपीन मात्र पहने और विना विपत्ति आये आश्रम आदि के चिह्न दण्ड के सिवाय त्यागी हुई कुछ भी वस्त्र न ग्रहण करे ॥

तृतीयः श्लकः

एक एव चरेद् भिक्षुरात्मारामोऽनपाश्रयः ।
सर्वभूतसुहृच्छान्तो नारायणपरायणः ॥३॥

पदच्छेद—— एकः एव चरेत् भिक्षुः आत्मारामः अनपाश्रयः ।
सर्वभूत सुहृत् शान्तः नारायण परायणः ॥

शब्दार्थ—

एकः	९.	अकेला	सर्वभूत	४.	सभी प्राणियों का
एव	१०.	ही	सुहृत्	५.	हितैषी
चरेत्	११.	विचरण करे	शान्तः	६.	शान्त और
भिक्षुः	१.	भिक्षुक संन्यासी	नारायण	७.	भगवत्
आत्मारामः	२.	अपने आप में रमण करने वाला	परायणः ॥	८.	परायण होकर
अनपाश्रयः ।	३.	किसी का आश्रय न लेने वाला			

श्लोकार्थ—भिक्षुक संन्यासी अपने आप में ही रमण करने वाला, किसी का आश्रय न लेने वाला, सभी प्राणियों का हितैषी, शान्त और भगवत्परायण होकर अकेला ही विचरण करे ॥

चतुर्थः श्लोकः

पश्येदात्मन्यदो विश्वं परे सदसतोऽव्यये ।
आत्मानं च परं ब्रह्म सर्वत्र सदसन्मये ॥४॥

पदच्छेद— पश्येत् आत्मनि अदः विश्वम् परे सद् असतः अव्यये ।
आत्मानम् च परम् ब्रह्म सर्वत्र सद् असत् मये ॥

शब्दार्थ—

पश्येत्	७.	देखे	आत्मानम्	१२.	आत्मा को
आत्मनि अदः	६.	आत्मा में	च	९.	और
विश्वम्	३.	इस संसार को	परम्	१०.	पर
परे	४.	परे	ब्रह्म	११.	ब्रह्म स्वरूप
सद्	२.	कार्य	सर्वत्र	१५.	जगत् में व्याप्त देखे
असतः	३.	कारण से	सद्	१३.	कार्य
अव्यये ।	५.	अविनाशी	असत्मये ॥	१४.	कारण स्वरूप

श्लोकार्थं—इस संसार को कार्य कारण से परे अविनाशी आत्मा में देखे । और पर ब्रह्मस्वरूप आत्मा को कार्य कारण स्वरूप जगत् में (व्याप्त) देखे ॥

पञ्चमः श्लोकः

सुप्तप्रबोधयोः सन्धावात्मनो गतिमात्मदृक् ।
पश्यन्बन्धं च मोक्षं च मायामात्रं न वस्तुतः ॥५॥

पदच्छेद— सुप्त प्रबोधयोः सन्धौ आत्मनः गतिम् आत्मदृक् ।
पश्यन् बन्धम् च मोक्षम् च माया मात्रम् न वस्तुतः ॥

शब्दार्थ—

सुप्त	२. सुषुप्ति (और)	पश्यन्	७. देखे
प्रबोधयोः	३. जाग्रत् अवस्था को	बन्धम्	६. बन्धन (तथा)
सन्धौ	४. सन्धि में	च मोक्षम्	१०. मोक्ष
आत्मनः	५. अपने	च	८. और
गतिम्	६. स्वरूप को	मायामात्रम्	११. माया मात्र
आत्मदृक् ।	१. आत्मदर्शी (संन्यासी)	न वस्तुतः ॥	१२. वास्तविक नहीं है (ऐसा जाने)

श्लोकार्थ—आत्मदर्शी संन्यासी सुषुप्ति और जाग्रत् अवस्था की सन्धि में अपने स्वरूप को देखे और बन्धन तथा मोक्ष माया मात्र है वास्तविक नहीं है ऐसा जाने ॥

षष्ठः श्लोकः

नाभिनन्देद् ध्रुवं मृत्युमध्रुवं वास्य जीवितम् ।
कालं परं प्रतीक्षेत भूतानां प्रभवाप्ययम् ॥६॥

पदच्छेद— न अभिनन्देत् ध्रुवम् मृत्युम् अध्रुवम् वा अस्य जीवितम् ।
कालम् परम् प्रतीक्षेत भूतानाम् प्रभव अप्ययम् ॥

शब्दार्थ—

न अभिनन्देत्	७. अभिनन्दन न करें	कालम्	१२. काल को
ध्रुवम्	५. अवश्य (होने वाली)	परम्	८. केवल
मृत्युम्	६. मृत्य का	प्रतीक्षेत	१३. प्रतीक्षा करे
अध्रुवम्	२. अनिश्चित	भूतानाम्	६. प्राणियों की
वा	४. अथवा	प्रभव	१०. उत्पत्ति और
अस्य	१. इस शरीर के	अप्ययम् ॥	११. नाश के कारण
जीवितम् ।	३. जीवन का		

श्लोकार्थ—इस शरीर के अनिश्चित जीवन का अथवा अवश्य होने वाली मृत्यु का अभिनन्दन न करे । केवल प्राणियों की उत्पत्ति और नाश के कारण काल की प्रतीक्षा करे ॥

सप्तमः श्लोकः

नासच्छास्त्रेषु सज्जेत नोपजीवेत जीविकाम् ।
वादवादांस्त्यजेत् तर्कान्पक्षं कंच न संश्रयेत् ॥७॥

पदच्छेद— न असत् शास्त्रेषु सज्जेत न उपजीवेत जीविकाम् ।
वाद वादान् त्यजेत् तर्कान् पक्षम् कंच न संश्रयेत् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	नहीं	वाद	८.	बाद
असत्	१.	असत्य	वादान्	९.	विवाद के लिए
शास्त्रेषु	२.	शास्त्रों से	त्यजेत्	११.	त्याग दे
सज्जेत	४.	प्रीति करे	तर्कान्	१०.	तर्कों को
न	६.	नहीं (निर्वाह के लिए)	पक्षम्	१४.	पक्ष
उपजीवेत	५.	जीवन	कम्	१३.	किसी का
जीविकाम् ।	७.	जीविका करे	च न	१२.	और नहीं
			संश्रयेत् ॥	१५.	ले

श्लोकार्थ—असत्य शास्त्रों से प्रीति नहीं करे । जीवन निर्वाह के लिए जीविका नहीं करे । वाद विवाद के लिए तर्कों को त्याग दे । और किसी का पक्ष न ले ॥

अष्टमः श्लोकः

न शिष्याननुबध्नीत ग्रन्थान्नैवाभ्यसेद् बहून् ।
न व्याख्यामुपयुञ्जीत नारम्भानारभेत् क्वचित् ॥८॥

पदच्छेद— न शिष्यान् अनुबध्नीत ग्रन्थान् न एव अभ्यसेत् बहून् ।
न व्याख्याम् उपयुञ्जीत न आरम्भान् आरभेत् क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

न	२.	नहीं	न	९.	नहीं
शिष्यान्	१.	शिष्यों को	व्याख्याम्	८.	व्याख्यान
अनुबध्नीत	३.	जुटावे	उपयुञ्जीत	१०.	दे
ग्रन्थान्	५.	ग्रन्थों का	न आरम्भान्	१३.	नहीं कार्यों को
न एव	६.	नहीं	आरभेत	१४.	आरम्भ करें
अभ्यसेत्	७.	अभ्यास करे	क्वचित् ॥	११.	कहीं
बहून् ।	४.	बहुत			

श्लोकार्थ—शिष्यों को नहीं जुटावे, बहुत ग्रन्थों का अभ्यास नहीं करे । व्याख्यान नहीं दे । कहीं कार्यों को आरम्भ नहीं करे ॥

नवमः श्लोकः

न यतेराश्रमः प्रायो धर्महेतुर्महात्मनः ।
शान्तस्य समचित्तस्य बिभृयादुत वा त्यजेत् ॥९॥

पदच्छेद— न यतेः आश्रमः प्रायः धर्म हेतुः महात्मनः ।
शान्तस्य समचित्तस्य बिभृयात् उत वा त्यजेत् ।।

शब्दार्थ—

न	१०.	नहीं है	शान्तस्य	१.	शान्त
यतेः	५.	संन्यासी के लिये	सम	२.	सम
आश्रमः	६.	आश्रम	चित्तस्य	३.	दर्शी
प्रायः	७.	प्रायः	बिभृयात्	१२.	धारण करे
धर्म	८.	धर्म का	उत	१३.	अथवा
हेतुः	९.	कारण	वा	११.	और वह सन्यासो चिह्न
महात्मनः ।	४.	महात्मा	त्यजेत् ।।	१४.	छोड़ दे

श्लोकार्थ—शान्त, समदर्शी, महात्मा, संन्यासी के लिये आश्रम प्रायः धर्म का कारण नहीं है । और वह संन्यासी-चिह्न धारण करे अथवा छोड़ दे ।।

दशमः श्लोकः

अव्यक्तलिङ्गो व्यक्तार्थो मनीष्युन्मत्तबालवत् ।
कविर्मूकवदात्मानं स दृष्ट्या दर्शयेन्नृणाम् ॥१०॥

पदच्छेद— अव्यक्तलिङ्गः व्यक्त अर्थः मनीषी उन्मत्त बालवत् ।
कविः मूकवत् आत्मानम् सः दृष्ट्या दर्शयेत् नृणाम् ।।

शब्दार्थ—

अव्यक्त	३.	रहित	कविः	९.	कवि होता हुआ भी
लिङ्गः	२.	चिह्न से	मूकवत्	१३.	गूंगे के समान
व्यक्त	५.	प्रकाशित करने वाला	आत्मानम्	१०.	अपने को
अर्थः	४.	अर्थ को	सः	१.	वह संन्यासी आश्रम के
मनीषी	६.	विद्वान्	दृष्ट्या	११.	मनुष्य की दृष्टि से
उन्मत्त	७.	पागल (और)	दर्शयेत्	१४.	दिखावे
बालवत् ।	८.	बालक के समान	नृणाम् ।।	१२.	लोगों को

श्लोकार्थ—वह संन्यासी आश्रम के चिह्न के रहित अर्थ को प्रकाशित करने वाला विद्वान् पागल और बालक के समान, कवि होता हुआ भी अपने को मनुष्य की दृष्टि से लोगों को गूंगे के समान दिखावे ।।

एकादशः श्लोकः

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
प्रह्लादस्य च संवादं मुनेराजगरस्य च ॥११॥

पदच्छेद— अत्र अपि उदाहरन्ति इमम् इतिहासम् पुरातनम् ।
प्रह्लादस्य च संवादम् मुनेः आजगरस्य च ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	यहाँ	**प्रह्लादस्य**	७.	प्रह्लाद
अपि	२.	भी (महात्मा लोग)	**च**	८.	और
उदाहरन्ति	६.	वर्णन करते हैं (वह)	**संवादम्**	११.	संवाद है
इमम्	३.	इस	**मुनेः**	१०.	मुनि का
इतिहासम्	५.	इतिहास का	**आजगरस्य च॥**	९.	अजगर वृत्ति धारण करने वाले
पुरातनम्।	४.	प्राचीन			

श्लोकार्थ—यहाँ भी महात्मा लोग इस प्राचीन इतिहास का वर्णन करते हैं, जो प्रह्लाद और अजगर वृत्ति धारण करने वाले मुनि का संवाद है ॥

द्वादशः श्लोकः

तं शयानं धरोपस्थे कावेर्यां सह्यसानुनि ।
रजस्वलैस्तनूदेशैर्निगूढामलतेजसम् ॥१२॥

पदच्छेद— तम् शयानम् धरा उपस्थे कावेर्याम् सह्य सानुनि ।
रजस्वलैः तनू देशैः निगूढ अमल तेजसम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	(प्रह्लाद ने) उस मुनि को	**रज**	१०.	धूल से
शयानम्	७.	लेटे हुए देखा (जसके)	**स्वलैः**	११.	भरे हुए थे (और)
धरा	५.	पृथ्वो	**तनू**	८.	शरीर के
उपस्थे	६.	तल पर	**देशैः**	९.	अङ्ग-प्रत्यङ्ग
कावेर्याम्	४.	कावेरी नदी के तट पर	**निगूढ**	१४.	ढका हुआ था
सह्य	२.	सह्य पर्वत की	**अमल**	१२.	निर्मल
सानुनि ।	३.	तलहटी में	**तेजसम् ॥**	१३.	तेज

श्लोकार्थ—प्रह्लाद ने उस मुनि को सह्यपर्वत की तलहटी में कावेरी नदी के तट पर पृथ्वी तल पर लेटे हुए देखा । जिसके शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग धूल से भरे हुए थे। और निर्मल तेज ढका हुआ था ॥

त्रयोदशः श्लोकः

ददर्श लोकान्विचरँल्लोकतत्त्वविवित्सया ।
वृतोऽमात्यैः कतिपयैः प्रह्लादो भगवत्प्रियः ॥१३॥

पदच्छेद— ददर्श लोकान् विचरन् लोकतत्त्व विवित्सया ।
वृतः अमात्यैः कतिपयैः प्रह्लादः भगवत् प्रियः ॥

शब्दार्थ—

ददर्श	११.	(मुनिको) देखा	वृतः	३.	घिरे हुए
लोकान्	९.	लोकों में	अमात्यैः	२.	मन्त्रियों से
विचरन्	१०.	विचरण करते हुए	कतिपयैः	१.	कुछ
लोकतत्त्व	७.	लोगों से हृदय के भाव को	प्रह्लादः	६.	प्रह्लाद ने
विवित्सया ।	८.	जानने की इच्छा से	भगवत्	४.	भगवान् के
			प्रियः ॥	५.	प्रिय

श्लोकार्थ—कुछ मन्त्रियों से घिरे हुए भगवान् के प्रिय प्रह्लाद ने लोगों के हृदय के भाव को जानने की इच्छा से लोकों में विचरण करते हुए मुनि को देखा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कर्मणाऽऽकृतिभिर्वाचा लिङ्गैर्वर्णाश्रमादिभिः ।
न विदन्ति जना यं वै सोऽसाविति न वेति च ॥१४॥

पदच्छेद— कर्मणा आकृतिभिः वाचा लिङ्गैः वर्ण आश्रम आदिभिः ।
न विदन्ति जनाः यम् वै सः असौ इति न वा इति च ॥

शब्दार्थ—

कर्मणा	१.	कर्म	न	१४.	नहीं
आकृतिभिः	२.	आकार	विदन्ति	१५.	जानते हैं
वाचा	३.	वाणी (और)	जनाः	१३.	लोग
लिङ्गैः	७.	चिह्नों से	यम् वै	८.	जिन्हें निश्चित रूप से
वर्ण	४.	वर्ण	सः	९.	ये
आश्रम	५.	आश्रम	असौ इति	१०.	सिद्ध पुरुष हैं
आदिभिः ।	६.	आदि के	न वा	११.	या नहीं हैं
			इति च ॥	१२.	इस प्रकार

श्लोकार्थ—कर्म, आकार वाणी और वर्ण, आश्रम आदि के चिह्नों से जिन्हें निश्चितरूप से ये सिद्ध पुरुष हैं या नहीं हैं, इस प्रकार लोग नहीं जानते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तं नत्वाभ्यर्च्य विधिवत् पादयोः शिरसा स्पृशन् ।
विवित्सुरिदमप्राक्षीन्महाभागवतोऽसुरः ॥१५॥

पदच्छेद— तम् नत्वा अभ्यर्च्य विधिवत् पादयोः शिरसा स्पृशन् ।
विवित्सुः इदम् अप्राक्षीत् महा भागवतः असुरः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१. उन्हें	स्पृशन् ।	७. स्पर्श करके
नत्वा	२. नमस्कार (और)	विवित्सुः	६. जानने की इच्छा से
अभ्यर्च्य	४. पूजा करके	इदम्	८. यह
विधिवत्	३. विधिपूर्वक	अप्राक्षीत्	१२. पूछा
पादयोः	६. चरणों का	महाभागवतः	१०. महान् भगवत् भक्त
शिरसा	५. सिर से	असुरः ॥	११. दैत्यराज प्रह्लाद ने उनसे

श्लोकार्थ—उन्हें नमस्कार और विधिपूर्वक पूजा करके सिर से चरणों का स्पर्श करके यह जानने की इच्छा से महान् भगवत् भक्त दैत्यराज प्रह्लाद ने उनसे यह पूछा ॥

षोडशः श्लोकः

बिभर्षि कायं पीवानं सोद्यमो भोगवान्यथा ।
वित्तं चैवोद्यमवतां भोगो वित्तवतामिह ।
भोगिनां खलु देहोऽयं पीवा भवति नान्यथा ॥१६॥

पदच्छेद — बिभर्षि कायम् पीवानम् स उद्यमो भोगवान् यथा ।
वित्तम् च एव उद्यमवताम् भोगः वित्तवताम् इह ।
भोगिनाम् खलु देहः अयम् पीवा भवति न अन्यथा ॥

शब्दार्थ—

बिभर्षि	६. धारण किये हैं (किन्तु)	भोगः	१२. भोग मिलता है (तथा)
कायम्	५. शरीर	वित्तवताम्	११. धनवानों को ही
पीवानम्	४. हृष्ट-पुष्ट	इह	१०. इस संसार में
स उद्यमः	१. आप उद्योगी (और)	भोगिनाम्	१४. भोगी पुरुषों का ही
भोगवान्	२. भोगी से	खलु	१३. निश्चित रूप से
यथा ।	३. समान	देहः अयम्	१५. यह शरीर
वित्तम् च	९. धन मिलता है (और)	पीवा भवति	१६. हृष्ट-पुष्ट होता है
एव	८. ही	न	१८. नहीं होता है
उद्यमवताम्	७. उद्योगी पुरुषों को	अन्यथा ॥	१७. दूसरे का

श्लोकार्थ—आप उद्योगी और भोगी के समान हृष्ट-पुष्ट शरीर धारण करते हैं। किन्तु उद्योगी पुरुषों को ही धन मिलता है। और इस संसार में धनवानों को ही भोग मिलता है। तथा निश्चित रूप से भोगी पुरुषों का ही यह शरीर हृष्ट-पुष्ट होता है। दूसरे का नहीं होता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

न ते शयानस्य निरुद्यमस्य ब्रह्मन् नु हार्थो यत एव भोगः ।
अभोगिनोऽयं तव विप्र देहः पीवा यतस्तद्वद नः क्षमं चेत् ॥१७॥

पदच्छेद— न ते शयानस्य निरुद्यमस्य ब्रह्मन् नु ह अर्थः यतः एव भोगः ।
अभोगिनः अयम् तव विप्र देहः पीवा यतः तत् वद नः क्षमम् चेत् ॥

शब्दार्थ—

न	६. नही हैं	अभोगिनः	१०. भोग रहित
ते	४. आपके (पास)	अयम्	१२. यह
शयानस्य	३. सोये हुये	तव	११. आपको
निरुद्यमस्य	२. उद्योग रहित होकर	विप्र	९. हे विप्र !
ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !	देहः पीवा	१३. शरीर हृष्ट पुष्ट
नु ह अर्थः	५. निश्चित रूप से धन	यतः तत्	१४. कैसे है यह
यतः एव	७. जिससे ही	वद	१५. बताइये
भोगः ।	८. भोग मिलता है	नः क्षमम्	१७. हमारे (सामने) योग्य हो तो
		चेत् ॥	१६. यदि

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! उद्योग रहित होकर सोये हुए आप के (पास) निश्चित रूप से धन नहीं है जिससे भोग मिलता है । हे विप्र ! भोग रहित आपका यह शरीर हृष्ट पुष्ट कैसे है, यह बताइये ।

अष्टादशः श्लोकः

कविः कल्पो निपुणदृक् चित्रप्रियकथः समः ।
लोकस्य कुर्वतः कर्म शेषे तद्वीक्षितापि वा ॥१८॥

पदच्छेद— कविः कल्पः निपुणदृक् चित्र प्रिय कथः समः ।
लोकस्य कुर्वतः कर्म शेषे तत् वीक्षिता अपि वा ॥

शब्दार्थ—

कविः	१. (आप) विद्वान्	लोकस्य	१०. संसार को
कल्पः	२. समर्थ	कुर्वतः	१२. करते हुए
निपुण	३. चतुर	कर्म	११. कर्म
दृक्	४. द्रष्टा	शेषे	१५. सो रहे हैं
चित्र	५. अद्‌भुत (और)	तत्	९. तब
प्रिय	६. प्रिय	वीक्षिता	१३. देखकर
कथः	७. बोलने वाले	अपि वा ॥	१४. भी क्यों
समः ।	८. समभाव रखने वाले हैं		

श्लोकार्थ—आप विद्वान्, समर्थ, चतुर, द्रष्टा, अद्‌भुत और प्रिय बोलने वाले, समभाव रखने वाले हैं । तब संसार को कर्म करते हुए देखकर भी क्यों सो रहे हैं ? ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नारद उवाच—स इत्थं दैत्यपतिना परिपृष्टो महामुनिः ।
स्मयमानस्तमभ्याह तद्वागमृतयन्त्रितः ॥१९॥

पदच्छेद— सः इत्थम् दैत्य पतिना परिपृष्टः महामुनिः ।
स्मयमानः तम् अभ्याह तत् वाक् अमृत यन्त्रितः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	उन	स्मयमानः	११.	मुसकारते हुए
इत्थम्	१.	इस प्रकार	तम्अभ्याह	१२.	उन प्रह्लाद से बोले
दैत्य	२.	दैत्यराज	तत्	७.	प्रह्लाद की
पतिना	३.	प्रह्लाद के द्वारा	वाक्	९.	वाणी से
परिपृष्टः	४.	पूछे जान पर	अमृत	८.	अमृतमयी
महामुनिः ।	५.	महामुनि ने	यन्त्रितः ॥	१०.	वशीभूत होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार दैत्यराज प्रह्लाद के द्वारा पूछे जाने पर महामुनि उन प्रह्लाद की अमृतमयी वाणो से वशीभूत होकर मुसकराते हुए उन प्रह्लाद से बोले ॥

विंशः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—वेदेदमसुरश्रेष्ठ भवान् नन्वार्यसम्मतः ।
ईहोपरमयोर्नृणां पदान्यध्यात्मचक्षुषा ॥२०॥

पदच्छेद— वेद इदम् असुर श्रेष्ठ भवान् ननु आर्य सम्मतः ।
ईहा उपरमयोः नृणाम् पदानि अध्यात्म चक्षुषा ॥

शब्दार्थ—

वेद	१३.	जानते है	ईहा	८.	कर्मों में प्रवृत्ति और
इदम्	६.	यह	उपरमयोः	९.	निवृत्ति के
असुरश्रेष्ठ	१.	हे असुर श्रेष्ठ प्रह्लाद	नृणाम्	७.	मनुष्यों की
भवान्	२.	आप	पदानि	१०.	फलों को (आप)
ननु	३.	निश्चित ही	अध्यात्म	११.	ज्ञान की
आर्य	४.	श्रेष्ठ पुरुषों में	चक्षुषा ॥	१२.	दृष्टि से
सम्मतः ।	५.	आदरणीय हैं			

श्लोकार्थ—हे असुरश्रेष्ठ प्रह्लाद ! आप निश्चित ही श्रेष्ठ पुरुषों में आदरणीय हैं । यह मनुष्यों की कर्मों में प्रवृत्ति और निवृ त्ति के फलों को आप ज्ञान की दृष्टि से जानते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

यस्य नारायणो देवो भगवान्हृद्गतः सदा।
भक्त्या केवलयाज्ञानं धुनोति ध्वान्तमर्कवत् ॥२१॥

पदच्छेद— यस्य नारायणः देवः भगवान् हृद् गतः सदा।
भक्त्या केवलया अज्ञानम् धुनोति ध्वान्तम् अर्कवत् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१. जिसके	भक्त्या	९. भक्ति से
नारायणः	६. नारायण	केवलया	८. केवल
देवः	७. देव	अज्ञानम्	१०. अज्ञान को (उसी प्रकार)
भगवान्	५. भगवान्	धुनोति	११. नष्ट करते हैं
हृद्	२. हृदय में	ध्वान्तम्	१३. अन्धकार को नष्ट करते हैं
गतः	४ विराजमान होकर	अर्कवत् ॥	१२. सूर्य जैसे
सदा।	३. सर्वदा		

श्लोकार्थ—जिसके हृदय में सर्वदा विराजमान होकर भगवान् नारायण देव केवल भक्ति से अज्ञान को उसी प्रकार नष्ट करते रहते हैं, जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करते है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अथापि ब्रूमहे प्रश्नांस्तव राजन्यथाश्रुतम्।
सम्भावनीयो हि भवानात्मनः शुद्धिमिच्छताम् ॥२२॥

पदच्छेद— अथापि ब्रूमहे प्रश्नान् तव राजन् यथा श्रुतम्।
सम्भावनीयः हि भवान् आत्मनः शुद्धिम् इच्छताम् ॥

शब्दार्थ—

अथापि	२. तो भी	श्रुतम्।	४. सुना है
ब्रूमहे	७. बताते हैं	सम्भावनीयः	१२. सम्माननीय है
प्रश्नान्	६. प्रश्नों को	हि भवान्	११. अवश्य आप
तव	५. तुम्हारे	आत्मनः	८. अपनी
राजन्	१. हे राजन् !	शुद्धिम्	९. शुद्धि
यथा	३. जिस प्रकार	इच्छताम् ॥	१०. चाहने वालों के

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तो भी जिस प्रकार सुना है तुम्हारे प्रश्न को बताते हैं। अपनी शुद्धि चाहने वालों के आप अवश्य सम्माननीय हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तृष्णया भववाहिन्या योग्यैः कामैरपूरया ।
कर्माणि कार्यमाणोऽहं नानायोनिषु योजितः ॥२३॥

पदच्छेद— तृष्णया भव वाहिन्या योग्यैः कामैः अपूरया ।
कर्माणि कार्यमाणः अहम् नाना योनिषु योजितः ॥

शब्दार्थ—

तृष्णया	६.	तृष्णा के कारण	**कर्माणि**	८.	कर्मों को
भव	१.	संसार को	**कार्यमाणः**	९.	करता (हुआ)
वाहिन्या	२.	बहाने वाली (और)	**अहम्**	७.	मैं
योग्यैः	३.	उचित	**नाना**	१०.	अनेक
कामैः	४.	भोगों के प्राप्त होने पर भी	**योनिषु**	११.	योनियों में
अपूरया ।	५.	पूर्ण न होने वाली	**योजितः ॥**	१२.	भटकता रहा

श्लोकार्थ—संसार को बहाने वाली और उचित भोगों के प्राप्त होने पर भी पूर्ण न होने वाली तृष्णा के कारण मैं कर्मों को करता हुआ अनेक योनियों में भटकता रहा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यदृच्छया लोकमिमं प्रापितः कर्मभिर्भ्रमन् ।
स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं तिरश्चां पुनरस्य च ॥२४॥

पदच्छेद— यदृच्छया लोकम् इमम् प्रापितः कर्मभिः भ्रमन् ।
स्वर्ग अपवर्गयोः द्वारम् तिरश्चाम् पुनः अस्य च ॥

शब्दार्थ—

यदृच्छया	३.	स्वेच्छा से	**स्वर्ग**	७.	स्वर्ग (और)
लोकम्	५.	संसार में	**अपवर्गयोः**	८.	मोक्ष (तथा)
इमम्	४.	इस	**द्वारम्**	१२.	द्वार है
प्रापितः	६.	पहुँचा दिया गया हूँ जो	**तिरश्चाम्**	९.	तिर्यक् योनि और
कर्मभिः	१.	कर्मों के द्वारा	**पुनः अस्य**	१०.	फिर इस मनुष्य योनि की
भ्रमन् ।	२.	भ्रमण करता हुआ	**च ॥**	११.	प्राप्ति का

श्लोकार्थ—कर्मों के द्वारा भ्रमण करता हुआ मैं स्वेच्छा से इस संसार में पहुँचा दिया गया हूँ जो स्वर्ग, मोक्ष तथा तिर्यक् योनि और इस मनुष्य योनि की प्राप्ति का द्वार है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अत्रापि दम्पतीनां च सुखायान्यापनुत्तये ।
कर्माणि कुर्वतां दृष्ट्वा निवृत्तोऽस्मि विपर्ययम् ॥२५॥

पदच्छेद— अत्रापि दम्पतीनाम् च सुखाय अन्य अपनुत्तये ।
कर्माणि कुर्वताम् दृष्ट्वा निवृत्तः अस्मि विपर्ययम् ॥

शब्दार्थ—

अत्रापि	१.	यहाँ भी	कर्माणि	६.	कर्मों को
दम्पतीनाम्	८.	पति-पत्नी के	कुर्वताम्	७.	करते हुए
च	३.	और	दृष्ट्वा	१०.	देखकर (मैं कर्मों से)
सुखाय	२.	सुख के लिए	निवृत्तः	११.	उपरत
अन्य	४.	दुःख की	अस्मि	१२.	हो गया हूँ
अपनुत्तये ।	५.	निवृत्ति के लिए	विपर्ययम् ॥	६.	उल्टे फल को

श्लोकार्थ—यहाँ भी सुख के लिये और दुःख की निवृत्ति के लिए कर्मों को करते हुए पति-पत्नी के उल्टे फल को देखकर मैं कर्मों से उपरत हो गया हूँ ॥

षड्विंशः श्लोकः

सुखमस्यात्मनो रूपं सर्वेहोपरतिस्तनूः ।
मनःसंस्पर्शजान् दृष्ट्वा भोगान्स्वप्स्यामि संविशन् ॥२६॥

पदच्छेद— सुखम् अस्य आत्मनः रूपम् सर्व ईहा उपरतिः तनूः ।
मनः संस्पर्शजान् दृष्टवा भोगान् स्वप्स्यामि संविशन् ॥

शब्दार्थ—

सुखम्	४.	सुख है	मनः	८.	मन के
अस्य	१.	इस	संस्पर्शजान्	६.	स्पर्श से उत्पन्न होने वाले
आत्मनः	२.	आत्मा का	दृष्ट्वा	११.	देखकर (मैं)
रूपम्	३.	स्वरूप	भोगान्	१०.	भोगों को
सर्व ईहा	५.	सभी इच्छाओं की	स्वप्स्यामि	१२.	सोया
उपरतिः	६.	निवृत्ति	संविशन् ॥	१३.	पड़ा रहता हूँ
तनूः ।	७.	शरीर है			

श्लोकार्थ—इस आत्मा का स्वरूप सुख है। सभी इच्छाओं की निवृत्ति शरीर है। मन के स्पर्श से उत्पन्न होने वाले भोगों को देखकर मैं सोया पड़ा रहता हूँ ॥

सप्तविंशः श्लोकः

इत्येतदात्मनः स्वार्थं सन्तं विस्मृत्य वै पुमान् ।
विचित्रामसति द्वैते घोरामाप्नोति संसृतिम् ॥२७॥

पदच्छेद — इति एतद् आत्मनः स्वार्थम् सन्तम् विस्मृत्य वै पुमान् ।
विचित्राम् असति द्वैते घोराम् आप्नोति संसृतिम् ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	पुमान् ।	७.	पुरुष
एतद्	१.	यह	विचित्राम्	९.	अद्भुत (एवं)
आत्मनः	३.	अपने	असति	१०.	असत्य
स्वार्थम्	५.	स्वार्थ को	द्वैते	११.	द्वैतभाव में पड़कर
सन्तम्	४.	वास्तविक	घोराम्	१२.	भयंकर
विस्मृत्य	६.	भूलकर	आप्नोति	१४.	प्राप्त करता है
वै	८.	निश्चित रूप से	संसृतिम् ॥	१३.	संसार को

श्लोकार्थ—यह इस प्रकार अपने वास्तविक स्वार्थ को भूलकर पुरुष निश्चित रूप से अद्भुत एवं असत्य द्वैतभाव में पड़कर भयंकर संसार को प्राप्त करता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

जलं तदुद्भवैश्छन्नं हित्वाज्ञो जलकाम्यया ।
मृगतृष्णामुपाधावेद् यथान्यत्रार्थदृक् स्वतः ॥२८॥

पदच्छेद— जलम् तत् उद्भवैःछन्नम् हित्वा अज्ञः जल काम्यया ।
मृग तृष्णाम् उपाधावेत् यथा अन्यत्र अर्थ दृक् स्वतः ॥

शब्दार्थ—

जलम्	४.	जल को	मृग	९.	मृग
तत्	२.	उस जल में	तृष्णाम्	१०.	तृष्णा की ओर
उद्भवैःच्छन्नम्	३.	उत्पन्न होने वाले तिनके आदि से ढके हुए	उपाधावेत्	११.	दौड़ता है (उसी प्रकार)
हित्वा	५.	छोड़कर	यथा	१.	जिस प्रकार
अज्ञः	६.	अज्ञानी मनुष्य	अन्यत्र	१३.	भिन्न
जल	७.	जल की	अर्थ	१४.	वस्तु में (सुख)
काम्यया ।	८.	इच्छा से	दृक्	१५.	मानने वाला (मनुष्य) दौड़ता है
			स्वतः ॥	१२.	अपने से

श्लोकार्थ—जिस प्रकार उस जल में उत्पन्न होने वाले तिनके आदि से ढके हुए जल को छोड़कर अज्ञानी मनुष्य जल की इच्छा से मृग तृष्णा की ओर दौड़ता है उसी प्रकार अपने से भिन्न वस्तु में सुख मानने वाला मनुष्य दौड़ता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

देहादिभिर्दैवतन्त्रैरात्मनः सुखमीहतः ।
दुःखात्ययं चानीशस्य क्रिया मोघाः कृताः कृताः ॥२९॥

पदच्छेद— देह आदिभिः दैवतन्त्रैः आत्मनः सुखम् ईहतः ।
दुःख अत्ययम् च अनीशस्य क्रियाः मोघाः कृताः कृताः ॥

शब्दार्थ—

देह	२. शरीर	दुःख	७. दुःख की
आदिभिः	३. आदि से	अत्ययम्	८. निवृत्ति
दैवतन्त्रैः	१. प्रारब्ध के अधीन	च	६. और
आत्मनः	४. अपना	अनीशस्य	१०. असमर्थ (व्यक्ति की)
सुखम्	५. सुख	क्रियाः	१२. सारी क्रियायें
ईहतः ।	९. चाहने वाले	मोघाः	१३. व्यर्थ हो जाती हैं
		कृताःकृताः ॥	११. बार-बार की गईं

श्लोकार्थ—प्रारब्ध के अधीन शरीर आदि से अपना सुख और दुःख की निवृत्ति चाहने वाले असमर्थ व्यक्ति की बार-बार की गईं सारी क्रियायें व्यर्थ हो जाती हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

आध्यात्मिकादिभिर्दुःखैरविमुक्तस्य कर्हिचित् ।
मर्त्यस्य कृच्छ्रोपनतैरर्थैः कामैः क्रियेत किम् ॥३०॥

पदच्छेद— आध्यात्मिक आदिभिः दुःखैः अविमुक्तस्य कर्हिचित् ।
मर्त्यस्य कृच्छ्र उपनतैः अर्थैः कामैः क्रियेत किम् ॥

शब्दार्थ—

आध्यात्मिक	१. आध्यात्मिक	कृच्छ्र	७. कष्ट से
आदिभिः	२. आदि	उपनतैः	८. प्राप्त
दुःखैः	३. दुःखों से	अर्थैः	९. धन और
अविमुक्तस्य	५. छुटकारा पाये हुए	कामैः	१०. भोगों से
कर्हिचित्	४. कभी भी	क्रियेत	१२. करना है
मर्त्यस्य ।	६. मनुष्य को	किम् ॥	११. क्या

श्लोकार्थ—आध्यात्मिक आदि दुखों से कभी भी छुटकारा न पाये हुए मनुष्य को कष्ट से प्राप्त धन और भोगों से क्या करना है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

पश्यामि धनिनां क्लेशं लुब्धानामजितात्मनाम् ।
भयादलब्धनिद्राणां सर्वतोऽभिविशङ्किनाम् ॥३१॥

पदच्छेद— पश्यामि धनिनाम् क्लेशम् लुब्धानाम् अजित आत्मनाम् ।
भयात् अलब्ध निद्राणाम् सर्वतः अभिविशङ्किनाम् ॥

शब्दार्थ

पश्यामि	१०.	देख रहा हूँ	भयात्	३.	भय से
धनिनाम्	८.	धनियों के	अलब्ध	५.	न पाने वाले
क्लेशम्	९.	कष्ट को	निद्राणाम्	४.	निद्रा को
लुब्धानाम्	१.	(मैं) लोभी	सर्वतः	६.	सब ओर से
अजित	२.	अजितेन्द्रिय और	अभिविशङ्किनाम् ॥	७.	शङ्कित रहने वाले
आत्मनाम् ।					

श्लोकार्थ—मैं लोभी, अजितेन्द्रिय और भय से निद्रा को न पाने वाले तथा सब ओर से शङ्कित रहने वाले धनियों के कष्ट को देख रहा हूँ ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

राजतश्चोरतः शत्रोः स्वजनात्पशुपक्षितः ।
अर्थिभ्यः कालतः स्वस्मान्नित्यं प्राणार्थवद्भयम् ॥३२॥

पदच्छेद— राजतः चोरतः शत्रोः स्वजनात् पशु पक्षितः ।
अर्थिभ्यः कालतः स्वस्मात् नित्यम् प्राण अर्थवत् भयम् ॥

शब्दार्थ—

राजतः	३.	राजा	कालतः	१०.	काल से (और)
चोरतः	४.	चोर	स्वस्मात्	११.	अपने आपसे भी
शत्रोः	५.	शत्रु	नित्यम्	१२.	नित्य
स्वजनात्	६.	अपने जन	प्राण	१.	जीवन और
पशु	७.	पशु	अर्थवत्	२.	धन के लोभी मनुष्य को
पक्षितः	८.	पक्षी	भयम् ॥	१३.	भय बना रहता है
अर्थिभ्यः ।	९.	याचक			

श्लोकार्थ—जीवन और धन के लोभी मनुष्य को राजा, चोर, शत्रु, अपने जन, पशु, पक्षी, याचक काल से और अपने आप से भी नित्य भय बना रहता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

शोकमोहभयक्रोधरागक्लैब्यश्रमादयः ।
यन्मूलाः स्युर्नृणां जह्यात् स्पृहां प्राणार्थयोर्बुधः ॥३३॥

पदच्छेद— शोक मोह भय क्रोध राग क्लैब्य श्रम आदयः ।
यत् मूलाः स्युः नृणाम् जह्यात् स्पृहाम् प्राण अर्थयोः बुधः ॥

शब्दार्थ —

शोक	९.	शोक	यत्	६.	जिसके
मोह	१०.	मोह	मूलाः	७.	कारण
भय	११.	भय	स्युः	१७.	हों
क्रोध	१२.	क्रोध	नृणाम्	८.	मनुष्यों को
राग	१३.	राग	जह्यात्	५.	त्याग दे
क्लैब्य	१४.	कायरता (और)	स्पृहाम्	४.	अभिलाषा को
श्रम	१५.	श्रम	प्राण	२.	प्राण और
आदयः ।	१६.	आदि (करने पड़ते है)	अर्थयोः	३.	धन की
			बुधः ॥	१.	बुद्धिमान् पुरुष

श्लोकार्थ—बुद्धिमान् पुरुष प्राण और धन की अभिलाषा को त्याग दे, जिसके कारण मनुष्यों को शोक, मोह, भय, क्रोध, राग, कायरता और श्रम आदि हों ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मधुकारमहासर्पौ लोकेऽस्मिन्नो गुरूत्तमौ ।
वैराग्यं परितोषं च प्राप्ता यच्छिक्षया वयम् ॥३४॥

पदच्छेद— मधुकार महासर्पौ लोके अस्मिन् नः गुरु उत्तमौ ।
वैराग्यम् परितोषम् च प्राप्ताः यत् शिक्षया वयम् ॥

शब्दार्थ—

मधुकार	३.	मधुमक्खी	वैराग्यम्	११.	वैराग्य
महासर्पौ	४.	अजगर सर्प	परितोषम्	१३.	सन्तोष को
लोके	२.	लोक में	च	१२.	और
अस्मिम्	१.	इस	प्राप्ताः	१४.	प्राप्त हुए हैं
नः	५.	हमारे	यत्	८.	जिनकी
गुरु	७.	गुरु हैं	शिक्षया	९.	शिक्षा से
उत्तमौ ।	६.	श्रेष्ठ	वयम् ॥	१०.	हम

श्लोकार्थ—इस लोक में मधु मक्खी, अजगर सर्प हमारे श्रेष्ठ गुरु हैं । जिनकी शिक्षा से हम वैराग्य और सन्तोष को प्राप्त हुए हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

विरागः सर्वकामेभ्यः शिक्षितो मे मधुव्रतात् ।
कृच्छ्राप्तं मधुवद् वित्तं हत्वाप्यन्यो हरेत्पतिम् ॥३५॥

पदच्छेद— विरागः सर्वकामेभ्यः शिक्षितः मे मधुव्रतात् ।
कृच्छ्र आप्तम् मधुवत् वित्तम् हत्वा अपि अन्यः हरेत् पतिम् ॥

शब्दार्थ—

विरागः	४. वैराग्य	आप्तम्	७. प्राप्त
सर्वकामेभ्यः	३. सभी कामनाओं से	मधुवत्	८. मधु के समान
शिक्षितः	५. सीखा है	वित्तम्	९. धन को
मे	१. मैंने	हत्वा	१२. मारकर
मधुव्रतात्	२. मधुमक्खी से	अपिअन्यः	१०. भी दूसरा व्यक्ति
कृच्छ्र ।	६. कष्ट से	हरेत्पतिम् ॥	१४. हरण कर लेता है (धन के स्वामी को)

श्लोकार्थ—मैंने मधु मक्खी से सभी कामनाओं से वैराग्य सीखा है । कष्ट से प्राप्त मधु के समान धन को दूसरा व्यक्ति धन के स्वामी को भी हरण कर लेता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

अनीहः परितुष्टात्मा यदृच्छोपनतादहम् ।
नो चेच्छये बह्वहानि महाहिरिव सत्त्ववान् ॥३६॥

पदच्छेद— अनीहः परितुष्ट आत्मा यदृच्छा उपनतात् अहम् ।
नो चेत् शये बहुअहानि महाहिः इव सत्त्ववान् ॥

शब्दार्थ—

अनीहः	२. मैं इच्छा रहित	नो चेत्	७. अन्यथा
परितुष्ट	५. सन्तुष्ट	शये	१२. सोया रहता हूँ
आत्मा	६. आतमा होकर (रहता हूँ)	बहुअहानि	८. बहुत दिनों तक
यदृच्छा	३. अपने आप	महाहिः	१०. महा सर्प अजगर के
उपनतात्	४. प्राप्त हुई वस्तु से	इव	११. समान
अहम् ।	१. मैं	सत्त्ववान् ॥	९. शक्तिशाली

श्लोकार्थ—मैं इच्छा रहित अपने आप प्राप्त वस्तु से सन्तुष्ट आतमा होकर रहता हूँ । अन्यथा बहुत दिनों तक शक्तिशाली महासर्प अजगर के समान सोया रहता हूँ ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

क्वचिदल्पं क्वचिद् भूरि भुञ्जेऽन्नं स्वाद्वस्वादु वा ।
क्वचिद् भूरिगुणोपेतं गुणहीनमुत क्वचित् ॥३७॥

पदच्छेद— क्वचित् अल्पम् क्वचित् भूरि भुञ्जे अन्नम् स्वादुअस्वादु वा ।
क्वचित् भूरि गुण उपेतम् गुण हीनम् उत क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१. कभी	क्वचित्	१०. कभी
अल्पम्	२. थोड़ा	भूरि	११. बहुत
क्वचित्	३. कभी	गुण	१२. गुणों से
भूरि	४. बहुत	उपेतम्	१३. युक्त
भुञ्जे	९. खा लेता हूँ ।	गुण	१६. गुण
अन्नम्	८. अन्न	हीनम्	१७. हीन भोजन करता हूँ
स्वादु	६. स्वादिष्ठ	उत	१४. अथवा
अस्वादु	७. स्वाद रहित	क्वचित ॥	१५. कभी
वा ।	५. अथवा		

श्लोकार्थ—कभी थोड़ा कभी बहुत अथवा स्वादिष्ठ या स्वाद रहित अन्न खा लेता हूँ । कभी बहुत गुणों से युक्त अथवा कभी गुग हीन भोजन करता हूँ ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

श्रद्धयोपाहृतं क्वापि कदाचिन्मानवर्जितम् ।
भुञ्जे भुक्त्वाथ कस्मिंश्चिद् दिवानक्तं यदृच्छया ॥३८॥

पदच्छेद— श्रद्धया उपाहृतम् क्वापि कदाचित् मान वर्जितम् ।
भुञ्जे भुक्त्वा अथ कस्मिन् चित् दिवानक्तम् यदृच्छया ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धया	२. श्रद्धा से	भुञ्जे	७. भोजन करता हूँ
उपाहृतम्	३. प्राप्त (और)	भुक्त्वा अथ	१३. दुबारा खा लेता हूँ
क्वापि	१. कभी	कस्मिन् चित्	९. कभी
कदाचित्	४. कभी	दिवा	१०. दिन में या
मान	५. मान से	नक्तम्	११. रात में
वर्जितम् ।	६. रहित	यदृच्छया ॥	१२. अपने आप मिल जाने पर

श्लोकार्थ—कभी श्रद्धा से प्राप्त और कभी मान से रहित भोजन करता हूँ । कभी दिन में या रात में अपने आप मिल जाने पर दुबारा खा लेता हूँ ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

क्षौमं दुकूलमजिनं चीरं वल्कलमेव वा ।
वसेऽन्यदपि सम्प्राप्तं दिष्टभुक् तुष्टधीरहम् ।।३९।।

पदच्छेद— क्षौमम् दुकूलम् अजिनम् चीरम् वल्कलम् एव वा ।
वसे अन्यत् अपि सम्प्राप्तम् दिष्ट भुक् तुष्टधीः अहम् ।।

शब्दार्थ—

क्षौमम्	१. रेशमी वस्त्र	**वसे**	११. पहन लेता हूँ
दुकूलम्	२. सूती वस्त्र	**अन्यत्**	८. और दूसरा
अजिनम्	३. मृगचर्म	**अपि**	९. भी
चीरम्	४. चीर	**सम्प्राप्तम्**	१०. मिल जाने पर
वल्कलम्	६. वल्कल वस्त्र	**दिष्ट**	१२. प्रारब्ध का
एव	७. ही पहन लेता हूँ	**भुक्**	१३. भोग करने में
वा ।	५. अथवा	**तुष्ट**	१४. सन्तुष्ट
		धीः अहम् ।।	१५. चित्त रहता हूँ मैं

श्लोकार्थ—रेशमी वस्त्र, सूती वस्त्र, मृग चर्म, चीर अथवा वल्कल वस्त्र ही और दूसरा भी मिल जाने पर पहन लेता हूँ। प्रारब्ध का भोग करने में मैं सन्तुष्ट चित्त रहता हूँ ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

क्वचिच्छये धरोपस्थे तृणपर्णाश्मभस्मसु ।
क्वचित् प्रासादपर्यङ्के कशिपौ वा परेच्छया ।।४०।।

पदच्छेद— क्वचित् शये धरा उपस्थे तृण पर्ण अश्मभस्मसु ।
क्वचित् प्रासाद पर्यङ्के कशिपौ वा परेच्छया ।।

शब्दार्थ—

क्वचित् शये	१. कहीं सोता हूँ	**क्वचित्**	८. कहीं
धरा	२. धरती के	**प्रासाद**	९. महलों में
उपस्थे	३. तल पर	**पर्यङ्के**	१०. पलंग पर
तृण	४. तिनके	**कशिपौ**	१३. गद्दों पर (सो जाता हूँ)
पर्ण	५. पत्ते	**वा**	११. अथवा
अश्मभस्मसु ।	६. पत्थर और राख पर	**परेच्छया ।।**	१२. दूसरों की इच्छा से

श्लोकार्थ—कहीं धरती के तल पर तिनके, पत्ते, पत्थर और राख पर सोता हूँ। कहीं महलों में पलँग पर अथवा दूसरों की इच्छा से गद्दों पर सो जाता हूँ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

क्वाचित् स्नानोऽनुलिप्ताङ्गः सुवासाः स्रग्व्यलंकृतः ।

रथेभाश्वैश्चरे क्वापि दिग्वासा ग्रहवद् विभो ॥४१॥

पदच्छेद — क्वचित् स्नातः अनुलिप्ताङ्गः सुवासाः स्रग्वी अलङ्कृतः ।
रथ इभ अश्वैः चरे क्वापि दिग्वासाः ग्रहवत् विभो ।।

शब्दार्थ—

क्वचित्	२.	कहों	रथ इभ	८.	रथ हाथी
स्नातः	३.	स्नान करके	अश्वैः	९.	घोड़ों पर
अनुलिप्ताङ्गः	४.	चन्दन लगाकर	चरे	१०.	चढ़कर
सुवासाः	५.	सुन्दर वस्त्र	क्वापि	११.	कहीं
स्रग्वी	६.	माला और	दिग्वासाः	१२.	नंग-धड़ंग
अलंङ्कृतः ।	७.	आभूषण पहनकर	ग्रहवत्	१३.	पिशाच के समान विचरण करता हूँ
			विभो ।।	१.	हे दैत्यराज !

श्लोकार्थ—हे दैत्यराज ! कहों स्नान करके चन्दन लगाकर सुन्दर वस्त्र माला और आभूषण पहनकर रथ, हाथी, घोड़ों पर चढ़कर कही नंग-घड़ंग पिशाच के समान विचरण करता हूँ ।।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नाहं निन्दे न च स्तौमि स्वभावविषमं जनम् ।

एतेषां श्रेय आशासे उतैकात्म्यं महात्मनि ॥४२॥

पदच्छेद— न अहम् निन्दे न च स्तौमि स्वभाव विषमम् जनम् ।
एतेषाम् श्रेयः आशासे उत ऐकात्म्यम् महात्मनि ।।

शब्दार्थ—

न अहम्	४.	नहीं मैं	एतेषाम्	८.	इन मनुष्यों का
निन्दे	५.	निन्दा करता हूँ	श्रेयः	९.	कल्याण
न च	६.	नहीं और	आशासे	१३.	चाहता हूँ
स्तौमि	७.	स्तुति करता हूँ	उत	१०.	और
स्वभाव	२.	स्वभाव के	ऐकात्म्यम्	१२.	एकता
विषमम्	१.	भिन्न-भिन्न	महात्मनि ।।	११.	परमात्मा से
जनम् ।	३.	मनुष्यों की			

श्लोकार्थ—भिन्न-भिन्न स्वभाव के मनुष्यों की मैं निन्दा नहीं करता हूँ और नहीं स्तुति करता हूँ । इन मनुष्यों का कल्याण और परमात्मा से एकता चाहता हूँ ।।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

विकल्पं जुहुयाच्चित्तौ तां मनस्यर्थविभ्रमे ।
मनो वैकारिके हुत्वा तन्मायायां जुहोत्यनु ॥४३॥

पदच्छेद— विकल्पम् जुहुयात् चित्तौ ताम् मनसि अर्थ विभ्रमे ।
मनः वैकारिके हुत्वा तत् मायायाम् जुहोति अनु ॥

शब्दार्थ—

विकल्पम्	१.	तर्क-वितर्क का	मनः	८.	मन को
जुहुयात्	३.	हवन करके	वैकारिके	९.	सात्त्विक अहंकार में
चित्तौ	२.	चित्त में	हुत्वा	१०.	हवह करके
ताम्	४.	उस चित्त वृत्ति में	तत्	१२.	उस अहंकार को
मनसि	७.	मन में (हवन करे)	मायायाम्	१३.	माया में
अर्थ	५.	पदार्थो में	जुहोति	१४.	हवन कर दे
विभ्रमे ।	६.	श्रम उत्पन्न करने वाले	अनु ॥	११.	बाद में

श्लोकार्थ—तर्क-वितर्क का चित्त में हवन करके उस चित्त वृत्ति को पदार्थो में श्रम उत्पन्न करने वाले मन में हवन करे । मन को सात्त्विक अहंकार में हवन करके उस अहंकार को माया में हवन कर दे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

आत्मानुभूतौ तां मायां जुहुयात् सत्यदृङ् मुनिः ।
ततो निरीहो विरमेत् स्वानुभूत्याऽऽत्मनि स्थितः ॥४४॥

पदच्छेद— आत्मा अनुभूतौ ताम् मायाम् जुहुयात् सत्य दृक् मुनिः ।
ततः निरीहः विरमेत् स्वानुभूत्या आत्मनि स्थितः ॥

शब्दार्थ—

आत्मा	५.	आत्मा की	ततः	८.	तब
अनुभूतौ	६.	अनुभूति में	निरीहः	९.	इच्छारहित एवम्
ताम्	३.	उस	विरमेत्	१३.	उपरत हो जावे
मायाम्	४.	माया को	स्वानुभूत्या	१०.	अपनी अनुभूति से
जुहुयात्	७.	हवन करे	आत्मनि	११.	आत्मा में
सत्यदृक्	१.	सत्यद्रष्टा	स्थितः ॥	१२.	स्थित होकर
मुनिः ।	२.	मुनिः			

श्लोकार्थ—सत्य द्रष्टा मुनि उस माया को आत्मा की अनुभूति में हवन करे । तव इच्छा रहित एवम् अपनी अनुभूति से आत्मा में स्थित होकर उपरत हो जावे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

स्वात्मवृत्तं मयेत्थं ते सुगुप्तमपि वर्णितम् ।

व्यपेतं लोकशास्त्राभ्यां भवान् हि भगवत्परः ॥४५॥

पदच्छेद— स्वात्म वृत्तम् मया इत्थम् ते सुगुप्तम् अपि वर्णितम् ।
व्यपेतम् लोक शास्त्राभ्याम् भवान् हि भगवत् परः ॥

शब्दार्थ—

स्वात्म	४.	अपनी आत्म	**व्यपेतम्**	१०.	परे (की वस्तु है)
वृत्तम्	५.	कथा का	**लोक**	८.	लोक और
मया इत्थम्	१.	मैंने इस प्रकार	**शास्त्राभ्याम्**	९.	शास्त्र से
ते	६.	तुमसे	**भवान्**	१२.	आप
सुगुप्तम्	२.	अत्यन्त गुप्त होने पर	**हि**	११.	क्योंकि
अपि	३.	भी	**भगवत्**	१३.	भगवान् के
वर्णितम् ।	७.	वर्णन किया (जो)	**परः ॥**	१४.	अनन्य भक्त हैं

श्लोकार्थ—मैंने इस प्रकार अत्यन्त गुप्त होने पर भी अपनी आत्म कथा का तुमसे वर्णन किया जो लोक और शास्त्र से परे की वस्तु है । क्योंकि आप भगवान् के अनन्य भक्त हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

नारद उवाच—धर्मं पारमहंस्यं वै मुनेः श्रुत्वासुरेश्वरः ।

पूजयित्वा ततः प्रीत आमन्त्र्य प्रययौ गृहम् ॥४६॥

पदच्छेद— धर्मम् पारमहंस्यम् वै मुनेः श्रुत्वा असुरेश्वरः ।
पूजयित्वा ततः प्रीतः आमन्त्र्य प्रययौ गृहम् ॥

शब्दार्थ—

धर्मम्	२.	धर्म को	**पूजयित्वा ततः**	६.	पूजन करके उनसे
पारमहंस्यम्	१.	परम हँसों के	**प्रीतः**	९.	प्रसन्नता पूर्वक
वै मुनेः	३.	मुनि से	**आमन्त्र्य**	८.	विदा लेकर
श्रुत्वा	४.	सुनकर	**प्रययौ**	११.	चले गये
असुरेश्वरः ।	५.	दैत्यराज प्रह्लाद ने	**गृहम् ॥**	१०.	घर को

श्लोकार्थ—परमहंसों के धर्म को मुनि से सुनकर दैत्यराज प्रह्लाद ने पूजन करके उनसे विदा लेकर प्रसन्नता पूर्वक घर को चले गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमे स्कन्धे युधिष्ठिर नारदसंवादे यतिधर्मे त्रयोदशः अध्यायः ॥१३॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

सप्तमः स्कन्धः

चतुर्दशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

युधिष्ठिर उवाच—गृहस्थ एतां पदवीं विधिना येन चाञ्जसा ।

याति देवऋषे ब्रूहि मादृशो गृहमूढधीः ॥१॥

पदच्छेद— गृहस्थः एताम् पदवीम् विधिना येन च अञ्जसा ।
याति देव ऋषे ब्रूहि मादृशः गृह मूढ धीः ॥

शब्दार्थ—

गृहस्थः	५.	गृहस्थ	**याति**	११.	प्राप्त कर लेता है वह
एताम्	९.	इस	**देवऋषे**	१.	हे देवर्षि !
पदवीम्	१०.	पद को	**ब्रूहि**	१२.	बताइये
विधिना	८.	साधन से	**मादृशः**	२.	मेरे जैसा
येन च	७.	जिस	**गृह**	३.	घर में
अञ्जसा ।	६.	बिना परिश्रम के	**मूढधीः ॥**	४.	आसक्त

श्लोकार्थ—हे देवर्षि ! मेरे जैसा घर में आसक्त गृहस्थ बिना परिश्रम के जिस साधन से इस पद को प्राप्त कर लेता है वह बताइये ॥

द्वितीयः श्लोकः

नारद उवाच—गृहेष्ववस्थितो राजन्क्रियाः कुर्वन्गृहोचिताः ।

वासुदेवार्पणं साक्षादुपासीत महामुनीन् ॥२॥

पदच्छेद— गृहेषु अवस्थितः राजन् क्रियाः कुर्वन् गृहोचिताः ।
वासुदेव अर्पणम् साक्षात् उपासीत महामुनीन् ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	२.	घर में	**वासुदेव**	८.	वासुदेव को
अवस्थिते	३.	स्थित रहकर	**अर्पणम्**	९.	अर्पण करे (और)
राजन्	१.	हे राजन् !	**साक्षात्**	७.	साक्षात् भगवान्
क्रियाः	५.	कर्म	**उपासीत**	१२.	उपासना करे
कुर्वन्	६.	करता हुआ	**महा**	१०.	महान्
गृहोचिताः ।	४.	गृहस्थ धर्म के अनुसार	**मुनीन् ॥**	११.	महात्माओं की

श्लोकार्थ— हे राजन् ! घर में स्थित रहकर गृहस्थ धर्म के अनुसार कर्म करता हुआ साक्षात् भगवान् वासुदेव को अर्पण करे और महान् महात्माओं की उपासना करे ॥

तृतीयः श्लोकः

शृण्वन्भगवतोऽभीक्ष्णमवतारकथामृतम् ।
श्रद्दधानो यथाकालमुपशान्तजनावृतः ॥३॥

पदच्छेद— शृण्वन् भगवतः अभीक्ष्णम् अवतार कथा अमृतम् ।
श्रद्दधानः यथा कालम् उपशान्त जन आवृतः ॥

शब्दार्थ—

शृण्वन्	७.	सुनता हुआ	श्रद्दधानः	६.	श्रद्धापूर्वक
भगवतः	२.	भगवान् की	यथा	९.	अनुसार
अभीक्षणम्	१.	निरन्तर	कालम्	८.	समय के
अवतार	४.	अवतारों की	उपशान्त	१०.	विरक्त
कथा	५.	कथाओं की	जन	११.	पुरुषों के
अमृतम् ।	३.	अमृत तुल्य	आवृतः ॥	१२.	साथ रहे

श्लोकार्थ—निरन्तर भगवान् की अमृत तुल्य अवतारों की कथाओं को श्रद्धा पूर्वक सुनता हुआ समय के अनुसार विरक्त पुरुषों के साथ रहे ॥

चतुर्थः श्लोकः

सत्सङ्गाच्छनकैः सङ्गमात्मजायात्मजादिषु ।
विमुच्येन्मुच्यमानेषु स्वयं स्वप्नवदुत्थितः ॥४॥

पदच्छेद— सत्सङ्गात् शनकैः सङ्गम् आत्म जाया आत्मज आदिषु ।
विमुच्येत् मुच्यमानेषु स्वयम् स्वप्नवत् उत्थितः ॥

शब्दार्थ—

सत्सङ्गात्	९.	सत्सङ्ग के द्वारा	विमुच्येत्	११.	छोड़ दे
शनकैः	१०.	धीरे-धीरे	मुच्यमानेषु	४.	छूट जाने वाले
सङ्गम्	८.	आसक्ति को	स्वयम्	३.	अपने आप
आत्मजाया	५.	शरीर, पत्नी और	स्वप्नवत्	१.	स्वप्न से
आत्मज	६.	पुत्र	उत्थिताः ॥	२.	जागने के समान
आदिषु ।	७.	आदि में			

श्लोकार्थ—मनुष्य स्वप्न से जागने के समान अपने आप छूट जाने वाले शरीर, पत्नी और पुत्र आदि में आसक्ति को सत्सङ्ग के द्वारा धीरे-धीरे छोड़ दे ॥

पञ्चमः श्लोकः

यावदर्थमुपासीनो देहे गेहे च पण्डितः ।
विरक्तो रक्तवत् तत्र नृलोके नरतां न्यसेत् ॥५॥

पदच्छेद— यावत् अर्थम् उपासीनः देहे गेहे च पण्डितः ।
विरक्तः रक्तवत् तत्र नृलोके नरताम् न्यसेत् ॥

शब्दार्थ—

यावत्	२. जितनी	विरक्तः	८. विरक्त होकर
अर्थम्	३. आवश्यकता हो	रक्तवत्	९. अनुरागी के समान
उपासीनः	४. उतना ही सेवन करे	तत्र	१०. यहाँ
देहे	५. शरीर	नृलोके	११. मनुष्य लोक में
गेहे	७. घर में	नर	१२. मनुष्यों
च	६. और	ताम्	१३. जैसा व्यवहार
पण्डितः ।	१. विद्वान् मनुष्य	न्यसेत् ॥	१४. करे

श्लोकार्थ—विद्वान मनुष्य जितनी आवश्यकता हो उतना ही सेवन करे । शरीर और घर में विरक्त होकर अनुरागी के समान यहाँ मनुष्य-लोक में मनुष्यों जैसा व्यवहार करे ॥

षष्ठः श्लोकः

ज्ञातयः पितरौ पुत्रा भ्रातरः सुहृदोऽपरे ।
यद् वदन्ति यदिच्छन्ति चानुमोदेत निर्ममः ॥६॥

पदच्छेद— ज्ञातयः पितरौ पुत्राः भ्रातरः सुहृदः अपरे ।
यत् वदन्ति यत् इच्छन्ति च अनुमोदेत निर्ममः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातयः	१. भाई-बन्धु	यत्वदन्ति	६. जो कहें
पितरौ	२. माता-पिता	यत्	७. जो
पुत्राः भ्रातरः	३. पुत्र, भाई	इच्छन्ति	८. चाहे
सुहृदः	४. मित्र और	च	९. तथा
अपरे ।	५. दूसरे	अनुमोदेत	११. उसका समर्थन करें
		निर्ममः ॥	१०. ममता रहित होकर

श्लोकार्थ—भाई, बन्धु, माता, पिता, पुत्र, भाई, मित्र और दूसरे जो कहें, जो चाहें तथा ममता रहित होकर उसका समर्थन करें ॥

सप्तमः श्लोकः

दिव्यं भौमं चान्तरिक्षं वित्तमच्युतनिर्मितम् ।
तत् सर्वमुपभुञ्जान एतत् कुर्यात् स्वतो बुधः ॥७॥

पदच्छेद— दिव्यम् भौमम् च अन्तरिक्षम् वित्तम् अच्युत निर्मितम् ।
तत् सर्वम् उपभुञ्जानः एतत् कुर्यात् स्वतः बुधः ॥

शब्दार्थ—

दिव्यम्	२.	दिव्य (वर्षादि से उत्पन्न)	तत्	९.	इन
भौमम्	४.	भूमि से उत्पन्न सुवर्णादि तथा	सर्वम्	१०.	सबका
च	३.	और	उपभुञ्जानः	११.	उपभोग करता हुआ
अन्तरिक्षम्	५.	अकस्मात् प्राप्त	एतत्	१२.	इसे
वित्तम्	६.	धन को	कुर्यात्	१४.	परमार्थ में लगावे
अच्युत	७.	भगवान् के द्वारा	स्वतः	१३.	अपने आप
निर्मितम् ।	८.	बनाये गये समझकर	बुधः ॥	१.	विद्वान् पुरुष

श्लोकार्थ—विद्वान् पुरुष दिव्य वर्षादि से उत्पन्न और भूमि से उत्पन्न सुवर्ण आदि तथा अकस्मात् प्राप्त धन को भगवान् के द्वारा बनाये गये समझकर इन सबका उपभोग करता हुआ इसे अपने आप परमार्थ में लगाये ॥

अष्टमः श्लोकः

यावद् भ्रियेत जठरं तावत् स्वत्वं हि देहिनाम् ।
अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति ॥८॥

पदच्छेद— यावत् भ्रियेत जठरम् तावत् स्वत्वम् हि देहिनाम् ।
अधिकम् यः अभिमन्येत सः स्तेनः दण्डम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१.	जितने से	अधिकम्	८.	अधिक
भ्रियेत	३.	भर जावे	यः	७.	जो (उससे)
जठरम्	२.	पेट	अभिमन्येत	९.	मानता है
तावत्	४.	उतने ही पर	सः स्तेनः	१०.	वह चोर है (और)
स्वत्वम् हि	६.	अपना अधिकार है	दण्डम्	११.	दण्ड पाने के
देहिनाम् ।	५.	प्राणियों का	अर्हति ॥	१२.	योग्य है

श्लोकार्थ—जितने से पेट भर जावे उतने ही पर प्राणियों का अधिकार है। जो उससे अधिक मानता है, वह चोर है और दण्ड पाने के योग्य है ॥

नवमः श्लोकः

मृगोष्ट्रखरमर्काखुसरीसृप्खगमक्षिकाः ।
आत्मनः पुत्रवत् पश्येत्तैरेषामन्तरं कियत् ॥९॥

पदच्छेद— मृग उष्ट्र खर मर्क आखु सरीसृप् खग मक्षिकाः ।
आत्मनः पुत्रवत् पश्येत् तैः एषाम् अन्तरम् कियत् ॥

शब्दार्थ—

मृग	१.	हरिण	**आत्मनः**	९.	अपने
उष्ट्र	२.	ऊँट	**पुत्र**	१०.	पुत्र के
खर	३.	गदहा	**वत्**	११.	समान
मर्क	४.	बन्दर	**पश्येत्**	१२.	देखे
आखु	५.	चूहा	**तैः**	१३.	उनमें (और)
सरीसृप्	६.	रेंग कर चलने वाला (प्राणी)	**एषाम्**	१४.	इनमें
खग	७.	पक्षी और	**अन्तरम्**	१६.	भेद है
मक्षिकाः ।	८.	मक्खी (इन सबको)	**कियत् ॥**	१५.	कितना

श्लोकार्थ—हरिण, ऊँट, गदहा, बन्दर, चूहा, रेंगकर चलने वाला प्राणी, पक्षी और मक्खी इन सबको अपने पुत्र के समान देखे । उनमें और इनमें कितना भेद है ॥

दशमः श्लोकः

त्रिवर्गं नातिकृच्छ्रेण भजेत गृहमेध्यपि ।
यथादेशं यथाकालं यावद्दैवोपपादितम् ॥१०॥

पदच्छेद— त्रिवर्गम् न अति कृच्छ्रेण भजेत गृह मेधि अपि ।
यथा देशम् यथा कालम् यावत् दैव उपपादितम् ॥

शब्दार्थ—

त्रिवर्गम्	३.	धर्म, अर्थ, काम को	**यथा**	११.	अनुसार (और)
न अति	४.	नहीं अत्यन्त	**देशम्**	१०.	देश के
कृच्छ्रेण	५.	कष्ट से	**यथा**	१३.	अनुसार भोग करे
भजेत	६.	प्राप्त करे	**कालम्**	१२.	काल के
गृहमेधि	१.	गृहस्थ	**यावत्**	८.	जितना
अपि ।	२.	भी	**दैव**	७.	भाग्य ने
			उपपादितम् ॥	९.	दिया है (उतना ही)

श्लोकार्थ—गृहस्थ भी धर्म, अर्थ, काम को अत्यन्त कष्ट से नहीं प्राप्त करे । भाग्य ने जितना दिया है, उतना ही देश के अनुसार और काल के अनुसार भोग करे ॥

एकादशः श्लोकः

आ श्वाघान्तेऽवसायिभ्यः कामान्संविभजेद् यथा।
अप्येकामात्मनो दारां नृणां स्वत्वग्रहो यतः ॥११॥

पदच्छेद— आ श्व अघ अन्ते अवसायिभ्यः कामान् संविभजेत् यथा।
अपि एकाम् आत्मनः दाराम् नृणाम् स्वत्वग्रहः यतः ॥

शब्दार्थ—

आ	४. पर्यन्त प्राणियों में	अपि	११. भी
श्व	१. कुत्ते	एकाम्	८. एकमात्र
अघ	२. पतित	आत्मनः	९. अपनी
अन्ते अवसायिभ्यः	३. चाण्डाल	दाराम्	१०. पत्नी को
कामान्	५. भोग सामग्रियों को	नृणाम्	१३. मनुष्यों का
संविभजेत्	७. बाँट दे	स्वत्वग्रहः	१४. अधिकार है उसे भी सेवा में लगा दे
यथा।	६. यथा-योग्य	यतः ॥	१२. जिस पर

श्लोकार्थ—कुत्ते, पतित, चाण्डाल पर्यन्त प्राणियों में भोग सामग्रियों को यथा योग्य बाँट दे। एकमात्र अपनी पत्नी को भी जिस पर मनुष्य का अधिकार है, उसे भी सेवा में लगा दे ॥

द्वादशः श्लोकः

जह्याद् यदर्थे स्वप्राणान्हन्याद् वा पितरं गुरुम्।
तस्यां स्वत्वं स्त्रियां जह्याद् यस्तेन ह्यजितो जितः ॥१२॥

पदच्छेद— जह्यात् यत् अर्थे स्वप्राणान् हन्यात् वा पितरम् गुरुम्।
तस्याम् स्वत्वम् स्त्रियाम् जह्यात् यः तेन हि अजितः जितः ॥

शब्दार्थ—

जह्यात्	४. छोड़ देता है	तस्याम्	९. उस
यत्	१. जिसके	स्वत्वम्	११. अपना अधिकार
अर्थे	२. लिये	स्त्रियाम्	१०. स्त्री पर
स्वप्राणान्	३. अपने प्राणों को	जह्यात्	१२. त्याग दे
हन्यात्	९. मार डालता है	यः	१३. जो मनुष्य (ऐसा करता है)
वा	५. अथवा	तेन	१४. वह
पितरम्	६. पिता (और)	हि अजितः	१५. भगवान् को भी
गुरुम्।	७. गुरु को भी	जितः ॥	१६. जीत लेता है

श्लोकार्थ—जिसके लिये अपन प्राणों को भी छोड़ देता है। अथवा पिता और गुरु को भी मार डालता है। उस स्त्री पर अपना अधिकार त्याग दे। जो मनुष्य ऐसा करता है, वह भगवान् को भी जीत लेता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

कृमिविड्भस्मनिष्ठान्तं क्वेदं तुच्छं कलेवरम् ।
क्व तदीयरतिर्भार्या क्वायमात्मा नभश्छदिः ॥१३॥

पदच्छेद— कृमिविड्भस्म निष्ठा अन्तम् क्व इदम् तुच्छम् कलेवरम् ।
क्व तदीय रतिः भार्या क्व अयम् आत्मा नभः छदिः ॥

शब्दार्थ—

कृमि	२. क्रीडा	**क्व**	१०. कहाँ इस
विड्	३. विष्ठा और	**तदीय**	११. शरीर
भस्म	४. राख का	**रतिः**	१२. रति करने वाली
निष्ठा	५. ढेर हो जाना है	**भार्या**	१३. पत्नी (और)
अन्तम्	१. अन्त में (इसे)	**क्व**	१४. कहाँ
क्व	६. कहाँ	**अयम्**	१७. यह
इदम्	७. यह	**आत्मा**	१८. आत्मा है
तुच्छम्	८. तुच्छ	**नभः**	१५. आकाश को भी
कलेवरम् ।	९. शरीर (और)	**छदिः ॥**	१६. ढक लेने वाला

श्लोकार्थ—अन्त में इसे क्रीडा, विष्टा और राख का ढेर हो जाना है। कहाँ यह तुच्छ शरीर और कहाँ शरीर से रति करने वाली पत्नी और आकाश को भी ढक लेने वाला यह आत्मा है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सिद्धैर्यज्ञावशिष्टार्थैः कल्पयेद् वृत्तिमात्मनः ।
शेषे स्वत्वं त्यजन्प्राज्ञः पदवीं महतामियात् ॥१४॥

पदच्छेद— सिद्धैः यज्ञ अवशिष्ट अर्थैः कल्पयेत् वृत्तिम् आत्मनः ।
शेषे स्वत्वम् त्यजन् प्राज्ञः पदवीम् महताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

सिद्धैः	१. स्वतः प्राप्त	**शेषे**	८. अतिरिक्त वस्तु में
यज्ञ	२. यज्ञ से	**स्वत्वम्**	९. अपना अधिकार
अवशिष्ट	३. बचे हुये	**त्यजन्**	१०. त्यागने वाला
अर्थैः	४. अन्न से	**प्राज्ञः**	११. बुद्धिमान् मनुष्य
कल्पयेत्	७. करे	**पदवीम्**	१३. पद को
वृत्तिम्	६ जीवन निर्वाह	**महताम्**	१२. महा पुरुषों के
आत्मनः ।	५. अपना	**इयात् ॥**	१४. प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—स्वतः प्राप्त यज्ञ से बचे हुये अन्न से अपना जीवन निर्वाह करे। अतिरिक्त वस्तु में अपना अधिकार त्यागने वाला बुद्धिमान् मनुष्य महापुरुषों के पद को प्राप्त करता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

देवानृषीन् नृभूतानि पितॄनात्मानमन्वहम् ।
स्ववृत्त्यागतवित्तेन यजेत पुरुषं पृथक् ॥१५॥

पदच्छेद— देवान् ऋषीन् नृभूतानि पितॄन् आत्मानम् अन्वहम् ।
स्ववृत्त्या आगत वित्तेन यजेत पुरुषम् पृथक् ॥

शब्दार्थ—

देवान्	६.	देवताओं	स्व	१.	अपनी
ऋषीन्	७.	ऋषियों	वृत्तयः	२.	जीविका के द्वारा
नृ	८.	मनुष्यों	आगत	३.	प्राप्त
भूतानि	९.	भूतों	वित्तेन	४.	धन से
पितॄन्	१०.	पितरों और	यजेत	१२.	पूजन करे (यह)
आत्मानम्	११.	आत्मा का	पुरुषम्	१४.	परमेश्वर का पूजन है
अन्वहम् ।	५.	प्रतिदिन	पृथक् ॥	१३.	अलग-अलग रूप में

श्लोकार्थ—अपनी जीविका के द्वारा प्राप्त धन से प्रतिदिन देवताओं ऋषियों, मनुष्यों भूतों, पितरों और आत्मा का पूजन करे ! यह अलग-अलग रूप में परमेश्वर का पूजन है ॥

षोडशः श्लोकः

यर्ह्यात्मनोऽधिकाराद्याः सर्वाः स्युर्यज्ञसम्पदः ।
वैतानिकेन विधिना अग्निहोत्रादिना यजेत् ॥१६॥

पदच्छेद— यर्हि आत्मनः अधिकार आद्याः सर्वाः स्युः यज्ञ सम्पदः ।
वैतानिकेन विधिना अग्नि होत्र आदिना यजेत् ॥

शब्दार्थ—

यर्हि	१.	यदि	सम्पदः ।	७.	सामग्रियाँ प्राप्त
आत्मनः	२.	अपने को	वैतानिकेन	९.	बड़े-बड़े यज्ञों के
अधिकारः	३.	अधिकार	विधिना	१०.	अनुष्ठान से
आद्याः	४.	आदि	अग्नि	११.	अग्नि
सर्वाः	५.	सभी	होत्र	१२.	होत्र
स्युः	८.	हों (तो)	आदिना	१३.	आदि के द्वारा भगवान् की
यज्ञ	६.	यज्ञ	जेत् ॥	१४.	आराधना करे

श्लोकार्थ—यदि अपने को अधिकार आदि सभी यज्ञ की सामग्रियाँ प्राप्त हों तो बड़े-बड़े यज्ञों के अनुष्ठान से अग्नि होत्र आदि के द्वारा भगवान् की आराधना करे ॥

सप्तदशः श्लोकः

न ह्यग्निमुखतोऽयं वै भगवान्सर्वयज्ञभुक् ।
इज्येत हविषा राजन्यथा विप्रमुखे हुतैः ॥१७॥

पदच्छेद— न हि अग्नि मुखतः अयम् वै भगवान् सर्व यज्ञभुक् ।
इज्येत हविषा राजन् यथा विप्र मुखे हुतैः ॥

शब्दार्थ—

न हि	१०.	नहीं (प्रसन्न होते हैं)	**इज्येत**	६.	आराधना करें
अग्नि	८.	अग्नि के	**हविषा**	५.	हविष्यान्न से
मुखतः	९.	मुख से प्राप्त हविष्यान्न से	**राजन्**	१.	हे राजन् !
अयम् वै	७.	ये भगवान् निश्चित रूप से	**यथा**	११.	जिस प्रकार
भगवान्	४.	भगवान् की	**विप्र**	१२.	ब्राह्मण के
सर्वयज्ञ	२.	सभी यज्ञों में	**मुखे**	१३.	मुख में
भुक् ।	३.	भोक्ता	**हुतैः ॥**	१४.	हवन करने से होते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सभी यज्ञों के भोक्ता भगवान् की हविष्यान्न से आराधना करे। ये भगवान् निश्चित रूप से अग्नि के मुख से प्राप्त हविष्यान्न से उस प्रकार नहीं प्रसन्न होते हैं जिस प्रकार ब्राह्मण के मुख में हवन करने से होते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

तस्माद् ब्राह्मणदेवेषु मर्त्यादिषु यथार्हतः ।
तैस्तैः कामैर्यजस्वैनं क्षेत्रज्ञं ब्राह्मणाननु ॥१८॥

पदच्छेद— तस्मात् ब्राह्मण देवेषु मर्त्य आदिषु यथा अर्हतः ।
तैः तैः कामैः यजस्व एनम् क्षेत्रज्ञम् ब्राह्मणान् अनु ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	**तैः तैः**	१०.	उन-उन
ब्राह्मण	२.	ब्राह्मण	**कामैः**	११.	भोग सामग्रियों से
देवेषु	३.	देवता	**यजस्व**	१४.	पूजा करे
मर्त्य	४.	मनुष्य	**एनम्**	१२.	इस
आदिषु	५.	आदि में	**क्षेत्रज्ञम्**	१३.	हृदय में विराजमान भगवान् की
यथा	८.	यथा	**ब्राह्मणान्**	६.	जिनमें ब्राह्मण प्रधान
अर्हतः ।	९.	योग्य	**अनु ॥**	७.	हैं

श्लोकार्थ—इस लिये ब्राह्मण, देवता, मनुष्य आदि में, जिनमें ब्राह्मण प्रधान हैं, यथा-योग्य उन-उन भोग-समाग्रियों से इस हृदय में विराजमान भगवान् की पूजा करे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

कुर्यादपरपक्षीयं मासि प्रौष्ठपदे द्विजः ।
श्राद्धं पित्रोर्यथावित्तं तद्बन्धूनां च वित्तवान् ॥१६॥

पदच्छेद— कुर्यात् अपर पक्षीयम् मासि प्रौष्ठपदे द्विजः ।
श्राद्धम् पित्रोः यथा वित्तम् तत् बन्धुनाम् च वित्तवान् ॥

शब्दार्थ—

कुर्यात्	१४.	करे	पित्रोः	६.	माता-पिता
अपर	६.	कृष्णपक्ष के अन्त तक	यथा	८.	अनुसार
पक्षीयम्	५.	आश्विन	वित्तम्	७.	धन के
मासि	४.	मास से लेकर	तत्	११.	उनके
प्रौष्ठपदे	३.	भादों	बन्धूनाम्	१२.	बन्धुओं का
द्विजः ।	२.	द्विजाति	च	१०.	और
श्राद्धम्	१३.	श्राद्ध	वित्तवान् ॥	१.	धनी

श्लोकार्थ—धनी द्विजाति भादों मास से लेकर आश्विन कृष्ण पक्ष के अन्त तक धन के अनुसार माता-पिता और उनके बन्धुओं का श्राद्ध करे ॥

विंशः श्लोकः

अयने विषुवे कुर्याद् व्यतीपाते दिनक्षये ।
चन्द्रादित्योपरागे च द्वादशीश्रवणेषु च ॥२०॥

पदच्छेद— अयने विषुवे कुर्यात् व्यतीपाते दिनक्षये ।
चन्द्र आदित्य उपरागे च द्वादशी श्रवणेषु च ॥

शब्दार्थ—

अयने	१.	द्विजाति कर्क और मकर	आदित्य	७.	सूर्य
विषुवे	२.	तुला और मेष संक्रान्ति	उपरागे	८.	ग्रहण के समय
कुर्यात्	१२.	करे	च	६.	और
व्यतीपाते	३.	व्यतीपात योग में	द्वादशी	६.	द्वादशी के दिन
दिनक्षये ।	४.	दिन क्षय में	श्रवणेषु	११.	श्रवण-धनिष्ठा-अनुराधा नक्षत्र में श्राद्ध
चन्द्र	५.	चन्द्र	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—द्विजाति कर्क और मकर, तुला और मेष की संक्रान्ति, व्यतीपात योग में, दिन क्षय में, चन्द्र और सूर्य ग्रहण के समय, द्वादशी के दिन और श्रवण, धनिष्ठा, अनुराधा नक्षत्र में श्राद्ध करे ॥

एकविंशः श्लोकः

तृतीयायां शुक्लपक्षे नवम्यामथ कार्तिके ।
चतसृष्वप्यष्टकासु हेमन्ते शिशिरे तथा ॥२१॥

पदच्छेद— तृतीयायाम् शुक्लपक्षे नवम्याम् अथ कार्तिके ।
चतसृषु अपि अष्टकासु हेमन्ते शिशिरे तथा ॥

शब्दार्थ—

तृतीयायाम्	१.	द्विजाति, वैशाख, तृतीया	**चतसृषु**	९.	चार महीनों की
शुक्लपक्षे	२.	शुक्ल पक्ष की	**अपि**	११.	भी श्राद्ध करे
नवम्याम्	५.	नवमी में	**अष्टकासु**	१०.	अष्टमियों में
अथ	३.	और	**हेमन्ते**	७.	अगहन-पूस
कार्तिके ।	४.	कार्तिक की	**शिशिरे**	८.	माघ-फाल्गुन इन
			तथा ॥	६.	और

श्लोकार्थ—द्विजाति शुक्ल पक्ष की वैशाख तृतीया और कार्तिक की नवमी में और अगहन, पूस, माघ, फाल्गुन चार महीनों की अष्टमियों में भी श्राद्ध करे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

माघे च सितसप्तम्यां मघाराकासमागमे ।
राकया चनुमत्या वा मासर्क्षाणि युतान्यपि ॥२२॥

पदच्छेद— माघे च सितसप्तम्याम् मघा राका समागमे ।
राकया च अनुमत्या वा मास ऋक्षाणि युतानि अपि ॥

शब्दार्थ—

माघे	२.	माघ मास की	**च**	२.	और
च	१.	और	**अनुमत्या**	८.	चतुर्दशी युक्त पूर्णिमा में
सितसप्तम्याम्	३.	शुक्ला सप्तमी में	**वा**	९.	अथवा
मघा	४.	मघा नक्षत्र से	**मास**	१०.	प्रत्येक मास के
राका	६.	पूर्णिमा में	**ऋक्षाणि**	१३.	नक्षत्रों से
समागमे ।	५.	युक्त माघ की	**युतानि**	१२.	युक्त
राकया	११.	अन्य पूर्णिमा से	**अपि ॥**	१४.	भी (श्राद्ध करे)

श्लोकार्थ—और माघ मास की शुक्ला सप्तमी में, मघा नक्षत्र से युक्त माघ की पूर्णिमा में और चतुर्दशी युक्त पूर्णिमा में अथवा प्रत्येक मास के अन्य पूर्णिमा से युक्त नक्षत्रों में भी श्राद्ध करे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

द्वादश्यामनुराधा स्याच्छ्रवणस्तिस्र उत्तराः ।

तिसृष्वेकादशी वाऽऽसु जन्मर्क्षश्रोणयोगयुक् ॥२३॥

पदच्छेद— द्वादश्याम् अनुराधा स्यात् श्रवणः तिस्रः उत्तराः ।
तिसृषु एकादशी वा आसु जन्म ऋक्ष श्रोण योगयुक् ॥

शब्दार्थ—

द्वादश्याम्	१. द्वादशी तिथि को	एकादशी	१०. एकादशी तिथि
अनुराधा	२. अनुराधा नक्षत्र (तथा)	वा	७. अथवा
स्यात्	३. हो	आसु	८. इन
श्रवणः	४. श्रवण नक्षत्र (तथा)	जन्म	११. अपने जन्म
तिस्रः	५. तीनों	ऋक्ष	१२. नक्षत्र और
उत्तराः ।	६. उत्तरायण हों	श्रोण	१३. श्रवण
तिसृषु	९. तीनों उत्तरा में	योगयुक् ॥	१४. योग से युक्त हो तो श्राद्ध करे

श्लोकार्थ—द्विजाति द्वादशी तिथि को अनुराधा नक्षत्र, श्रवण नक्षत्र तथा तीनों उत्तरायण हों अथवा इन तीनों उत्तरा में एकादशी तिथि अपने जन्म नक्षत्र और श्रवण योग से युक्त हो तो श्राद्ध करे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

त एते श्रेयसः काला नृणां श्रेयोविवर्धनाः ।

कुर्यात् सर्वात्मनैतेषु श्रेयोऽमोघं तदायुषः ॥२४॥

पदच्छेद— ते एते श्रेयसः कालाः नृणाम् श्रेयोविवर्धनाः ।
कुर्यात् सर्वात्मना एतेषु श्रेयः अमोघम् तत् आयुषः ॥

शब्दार्थ—

ते	१. ये	कुर्यात्	११. करे
एते	२. इतने	सर्वात्मना	९. सब प्रकार से
श्रेयसः	३. कल्याण के	एतेषु	८. इन में
कालाः	४. समय	श्रेयः	१०. कल्याणकारी कार्य
नृणाम्	५. मनुष्यों के	अमोघम्	१४. वर्धक होता है
श्रेयः	६. कल्याण को	तत्	१२. वह
विवर्धनाः ।	७. बढ़ाने वाले हैं	आयुषः ॥	१३. आयु

श्लोकार्थ—ये इतने कल्याण के समय मनुष्यों के कल्याण को बढ़ाने वाले हैं । इनमें सब प्रकार से कल्याणकारी कार्य करे । वह आयु वर्धक होता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एषु स्नानं जपो होमो व्रतं देवद्विजार्चनम् ।
पितृदेवनृभूतेभ्यो यद् दत्तं तद्ध्यनश्वरम् ॥२५॥

पदच्छेद— एषु स्नानम् जपः होमः व्रतम् देव द्विज अर्चनम् ।
पितृ देव नृभूतेभ्यः यत् दत्तम् तत् हि अनश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

एषु	१.	इन योगों में	**पितृ**	९.	पिता
स्नानम्	२.	स्नान	**देव**	१०.	देवता
जपः	३.	जप	**नृ**	११.	मनुष्य और
होमः	४.	होम	**भूतेभ्यः**	१२.	प्राणियों को
व्रतम्	५.	व्रत	**यत्**	१३.	जो कुछ
देव	६.	देवता और	**दत्तम्**	१४.	दिया जाता है
द्विज	७.	ब्राह्मणों का	**तत् हि**	१५.	वह सब ही
अर्चनम् ।	८.	पूजन	**अनश्वरम् ॥**	१६.	अक्षय होता है

श्लोकार्थ—इन योगों में स्नान, जप, होम, व्रत, देवता और ब्राह्मणों का पूजन पितर, देवता, मनुष्य और प्राणियों को जो कुछ दिया जाता है, वह सब कुछ अक्षय होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

संस्कारकालो जायाया अपत्यस्यात्मनस्तथा ।
प्रेतसंस्था मृताहश्च कर्मण्यभ्युदये नृप ॥२६॥

पदच्छेद— संस्कार कालः जायायाः अपत्यस्य आत्मनः तथा ।
प्रेतसंस्था मृत अहः च कर्मणि अभ्युदये नृप ॥

शब्दार्थ—

संस्कार	३.	पुंसवन संस्कारों के	**प्रेतसंस्था**	८.	मृतक की अन्त्येष्टि के समय (तथा)
कालः	४.	समय	**मृत अहः**	१०.	वार्षिक श्राद्ध में
जायायाः	२.	पत्नी के	**च**	९.	और
अपत्यस्य	५.	सन्तान के जातकर्मादि के	**कर्मणि**	१२.	कर्मों में भी यज्ञादि शुभ कर्म करे
आत्मनः	७.	अपने यज्ञादि के समय	**अभ्युदय**	११.	मांगलिक
तथा ।	६.	और	**नृप ॥**	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पत्नी के पुंसवन संस्कारों के समय, सन्तान के जातकर्मादि के समय और अपने यज्ञादि के समय, मृतक की अन्त्येष्टि के समय, वार्षिक श्राद्ध में तथा मांगलिक कर्मों में भी यज्ञादि शुभ कर्म करे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अथ देशान्प्रवक्ष्यामि धर्मादिश्रेयआवहान् ।
स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते ॥२७॥

पदच्छेद— अथ देशान् प्रवक्ष्यामि धर्म आदि श्रेय आवहान् ।
सः वै पुण्यतमः देशः सत् पात्रम् यत्र लभ्यते ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	सः	८.	वह
देशान्	२.	उन देशों को	वै	९.	ही
प्रवक्ष्यामि	३.	बताऊँगा	पुण्यतमः	१०.	अत्यन्त पुण्य
धर्म	४.	धर्म	देशः	११.	देश हैं
आदि	५.	आदि	सत्पात्रम्	१३.	उत्तम पात्र
श्रेयः	६.	श्रेय की	यत्र	१२.	जहाँ
आवहान् ।	७.	प्राप्ति कराने वाले हैं	लभ्यते ॥	१४.	रहते हैं

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन देशों को बताऊँगा, जो धर्म आदि श्रेय की प्राप्ति कराने वाले हैं वह ही अत्यन्त पुण्य देश हैं, जहाँ उत्तम पात्र रहते हैं ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

बिम्बं भगवतो यत्र सर्वमेतच्चराचरम् ।
यत्र ह ब्राह्मणकुलं तपोविद्यादयान्वितम् ॥२८॥

पदच्छेद— बिम्बम् भगवतः यत्र सर्वम् एतत् चराचरम् ।
यत्र ह ब्राह्मण कुलम् तपः विद्या दया अन्वितम् ॥

शब्दार्थ—

बिम्बम्	६.	प्रतिमा जहाँ हो (और)	यत्र ह	७.	जहाँ
भगवतः	५.	उन भगवान् की	ब्राह्मण	११.	ब्राह्मणों का
यत्र	१.	जिनमें	कुलम्	१२.	परिवार हो वह पुण्य देश है
सर्वम्	३.	सब	तपः विद्या	८.	तपस्या विद्या और
एतत्	२.	यह	दया	९.	दया से
चराचरम् ।	४.	चराचर जगत् स्थित है	अन्वितम् ॥	१०.	युक्त

श्लोकार्थ—जिनमें यह सब चराचर जगत् स्थित है, उन भगवान् की प्रतिमा जहाँ हो, और जहाँ तपस्या, विद्या और दया से युक्त ब्राह्मणों का परिवार हो वह पुण्य देश है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यत्र यत्र हरेरर्चा स देशः श्रेयसां पदम्।
यत्र गङ्गादयो नद्यः पुराणेषु च विश्रुताः ॥२९॥

पदच्छेद— यत्र यत्र हरेः अर्चा सः देशः श्रेयसाम् पदम्।
यत्र गङ्गा आदयः नद्यः पुराणेषु च विश्रुताः ॥

शब्दार्थ—

यत्र यत्र	१.	जहाँ-जहाँ	यत्र	५.	जहाँ
हरेः	२.	भगवान् की	गङ्गा	८.	गङ्गा
अर्चा	३.	पूजा होती है	आदयः	९.	आदि
सः	११.	वह	नद्यः	१०.	नदियाँ हों
देशः	१२.	देश	पुराणेषु	६.	पुराणों में
श्रेयसाम्	१३.	कल्याण का	च	४.	और
पदम्।	१४.	स्थान है	विश्रुताः ॥	७.	प्रसिद्ध

श्लोकार्थ—जहाँ-जहाँ भगवान् की पूजा होती है, और जहाँ पुराणों में प्रसिद्ध गंङ्गा आदि नदियाँ हैं, वह देश कल्याण का स्थान है ॥

त्रिंशः श्लोकः

सरांसि पुष्करादीनि क्षेत्राण्यर्हाश्रितान्युत।
कुरुक्षेत्रं गयशिरः प्रयागः पुलहाश्रमः ॥३०॥

पदच्छेद— सरांसि पुष्करादीनि क्षेत्राणि अर्ह आश्रितानि उत।
कुरुक्षेत्रम् गयशिरः प्रयागः पुलह आश्रमः ॥

शब्दार्थ—

सरांसि	३.	सरोवर	आश्रितानि	६.	सेवित
पुष्कर	१.	पुष्कर	उत।	४.	अथवा
आदीनि	२.	आदि	कुरुक्षेत्रम्	८.	कुरुक्षेत्र
क्षेत्राणि	७.	क्षेत्र (तथा)	गय शिरः	९.	गया
अर्ह	५.	सिद्ध पुरुषों से	प्रयागः	१०.	प्रयाग (और)
			पुलहाश्रमः ॥	११.	शालग्रामक्षेत्रादि (पुण्य क्षेत्र हैं)

श्लोकार्थ—पुष्कर आदि सरोवर अथवा सिद्ध पुरुषों से सेवित क्षेत्र तथा कुरुक्षेत्र, गया, प्रयाग और शालग्राम क्षेत्रादि पुण्य क्षेत्र हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

नैमिषं फाल्गुनं सेतुः प्रभासोऽथ कुशस्थली ।
वाराणसी मधुपुरी पम्पा बिन्दुसरस्तथा ॥३१॥

पदच्छेद— नैमिषम् फाल्गुनम् सेतुः प्रभासः अथ कुशस्थली ।
वाराणसी मधुपुरी पम्पा बिन्दुसरः तथा ॥

शब्दार्थ—

नैमिषम्	१. नैमिषाख्य	वाराणसी	७. काशी
फाल्गुनम्	२. फाल्गुन क्षेत्र	मधुपुरी	८. मथुरा
सेतुः	३. सेतु बन्ध	पम्पा	९. पम्पासर
प्रभासः	४. प्रभास	बिन्दु सरः	११. बिन्दुसर (ये पुण्यक्षेत्र हैं)
अथ	५. तथा	तथा ॥	१०. और
कुशस्थली ।	६. द्वारकापुरी		

श्लोकार्थ—नैमिषाख्य, फाल्गुन क्षेत्र, सेतुबन्ध, प्रभास तथा द्वारकापुरी, काशी, मथुरा, पम्पासर और बिन्दुसर ये पुण्य क्षेत्र हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नारायणाश्रमो नन्दा सीतारामाश्रमादयः ।
सर्वे कुलाचला राजन्महेन्द्रमलयादयः ॥३२॥

पदच्छेद— नारायण आश्रमः नन्दा सीताराम आश्रम आदयः ।
सर्वे कुलाचल राजन् महेन्द्र मलय आदयः ॥

शब्दार्थ—

नारायण	२. बदरिका	सर्वे	११. सभी
आश्रम	३. आश्रम	कुलाचलाः	१२. कुल पर्वत (पुण्यदेश हैं)
नन्दा	४. अलक नन्दा	राजन्	१. हे राजन्
सीताराम	५. सीताराम के	महेन्द्र	८. महेन्द्र
आश्रम	६. आश्रम	मलय	९. मलय
आदयः ।	७. अयोध्यादि	आदयः ॥	१०. आदि

श्लोकार्थ—हे राजन्! बदरिकाश्रम, अलकनन्दा, सीताराम के आश्रम अयोध्यादि, महेन्द्र, मलयादि सभी कुल पर्वत पुण्य देश हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

एते पुण्यतमा देशा हरेरर्चाश्रिताश्च ये।
एतान्देशान् निषेवेत श्रेयस्कामो ह्यभीक्ष्णशः।
धर्मो ह्यत्रेहितः पुंसां सहस्राधिफलोदयः ॥३३॥

पदच्छेद— एते पुण्यतमाः देशाः हरेः अर्चा आश्रिताः च ये।
एतान् देशान् निषेवेत श्रेयः कामः हि अभीक्षणशः।
धर्मः हि अत्र ईहितः पुंसाम् सहस्राधि फल उदयः ॥

शब्दार्थ—एते	१.	ये	श्रेयः	८.	कल्याण को
पुण्यतमाः	६.	अत्यन्त पवित्र हैं	कामः हि	९.	चाहने वाला
देशाः	५.	देश	अभीक्षणशः	१०.	निरन्तर
हरेः अर्चा	३.	भगवान् के अवतार से	धर्मः हि	१५.	धर्म
आश्रिताः	४.	युक्त	अत्र	१३.	यहाँ
च	७.	और	ईहितः	१४.	किया गया
ये	२.	जो	पुंसाम्	१६.	मनुष्यों को
एतान् देशान्	११.	इन देशों का	सहस्राधि	१७.	हजार गुना
निषेवेत।	१२.	सेवन करे	फल उदयः ॥	१८.	फल देता है

श्लोकार्थ—ये जो भगवान् के अवतार से युक्त देश अत्यन्त पवित्र हैं। और कल्याण को चाहने वाला निरन्तर इन देशों का सेवन करे। यहाँ किया गया धर्म मनुष्यों को हजार गुना फल देता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

पात्रं त्वत्र निरुक्तं वै कविभिः पात्रवित्तमैः।
हरिरेवैक उर्वीश यन्मयं वै चराचरम् ॥३४॥

पदच्छेद— पात्रम् तु अत्र निरुक्तम् वै कविभिः पात्र वित्तमैः।
हरिः एव एकः उर्वीश यत् मयम् वै चराचरम् ॥

शब्दार्थ—पात्रम्	१०.	पात्र	हरिः	६.	भगवान् को
तु अत्र	९.	यहाँ	एव	७.	ही
निरुक्तम्	११.	कहा गया है	एकः	८.	एक मात्र
वै	५.	निश्चित रूप से	उर्वीश	१.	हे पृथ्वीपते !
कविभिः	४.	विद्वानों द्वारा	यत् मयम्	१४.	उनका स्वरूप है
पात्र	२.	पात्र को	वै	१२.	निश्चित ही
वित्तमैः।	३.	जानने वालों में श्रेष्ठ	चराचरम् ॥	१३.	चराचर जगत्

श्लोकार्थ—हे पृथ्वीपते ! पात्र को जानने वालों में श्रेष्ठ विद्वानों द्वारा निश्चित रूप से भगवान् को ही एक मात्र यहाँ पात्र कहा गया है। निश्चित ही चराचर जगत् उनका स्वरूप है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

देवर्ष्यर्हत्सु वै सत्सु तत्र ब्रह्मात्मजादिषु ।

राजन्यदग्रपूजायां मतः पात्रतयाच्युतः ॥३५॥

पदच्छेद— देवर्षि अर्हत्सु वै सत्सु तत्र ब्रह्म आत्मज आदिषु ।

राजन् यत् अग्र पूजायाम् यतः पात्रतया अच्युतः ॥

शब्दार्थ—

देवर्षि	१.	देवर्षि देवता ऋषि	राजन्	१.	हे राजन् !
अर्हत्सु	४.	सिद्ध	यत्	११.	जो
वै	८.	निश्चित ही	अग्र	१०.	अग्र
सत्सु	७.	रहने पर भी	पूजायाम्	१२.	पूजा के लिये
तत्र	२.	वहाँ (राजसूययज्ञ में)	मतः	१४.	समझा गया
ब्रह्म आत्मज	५.	ब्रह्मा के पुत्र	पात्रतया	१३.	पात्र रूप में
आदिषु ।	६.	सनकादिकों के	अच्युतः ॥	१५.	भगवान् कृष्ण को ही

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वहाँ राजसूय यज्ञ में देवता, ऋषि, सिद्ध, ब्रह्मा के पुत्र सनकादिकों के रहने पर भी निश्चित ही अग्र पूजा के लिये पात्र रूप में श्रीकृष्ण को ही समझा गया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

जीवराशिभिराकीर्ण आण्डकोशाङ्घ्रिपो महान् ।

तन्मूलत्वादच्युतेज्या सर्वजीवात्मतर्पणम् ॥३६॥

पदच्छेद— जीव राशिभिः आकीर्णः आण्डकोशः अङ्घ्रिपः महान् ।

तत् मूलत्वात् अच्युत इज्या सर्व जीव आत्म तर्पणम् ॥

शब्दार्थ—

जीव	१.	जीव	तत् मूल	७.	मूल
राशिभिः	२.	समूहों से	त्वात् अच्युत	८.	होने से भगवान् के
आकीर्णः	३.	व्याप्त	इज्या	९.	पूजा
आण्डकोशः	४.	ब्रह्माण्डरूपी	सर्व जीव	१०.	सभी जीवों की
अङ्घ्रिपः	६.	वृक्ष के	आत्म	११.	आत्मा को
महान् ।	५.	महान्	तर्पणम् ॥	१२.	तृप्त करने वाली है

श्लोकार्थ—जीव समूहों से व्याप्त ब्रह्माण्डरूपी महान् वृक्ष के मूल होने से भगवान् की पूजा सभी जीवों की आत्मा को तृप्त करने वाली है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पुराण्यनेन सृष्टानि नृतिर्यगृषिदेवताः ।
शेते जीवेन रूपेण पुरेषु पुरुषो ह्यसौ ॥३७॥

पदच्छेद— पुराणि अनेन सृष्टानि नृ तिर्यक् ऋषिदेवताः ।
शेते जीवेन रूपेण पुरेषु पुरुषः हि असौ ॥

शब्दार्थ—

पुराणि	६. शरीर	शेते	१४. सोते हैं
अनेन	१. उस भगवान् ने	जीवेन	८. जीव
सृष्टानि	७. बनाये	रूपेण	९. रूप से (और)
नृ	२. मनुष्य	पुरेषु	१३. शरीरों में
तिर्यक्	३. पशु-पक्षी	पुरुषः	१०. पुरुष रूप से भगवान्
ऋषि	४. ऋषि	हि	११. ही
देवताः ।	५. देवता आदि के	असौ ॥	१२. उन

श्लोकार्थ—उस भगवान् ने मनुष्य, पशु, पक्षी, ऋषि, देवता, आदि के शरीर बनाये हैं । जीव रूप से और पुरुष रूप से भगवान् ही उन शरीरों में सोते हैं ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

तेष्वेषु भगवान्राजंस्तारतम्येन वर्तते ।
तस्मात् पात्रं हि पुरुषो यावानात्मा यथेयते ॥३८॥

पदच्छेद— तेषु एषु भगवान् राजन् तारतम्येन वर्तते ।
तस्मात् पात्रम् हि पुरुषः यावान् आत्मा यथा ईयते ॥

शब्दार्थ—

तेषु	२. उन	तस्मात्	८. इसलिये
एषु	३. उन शरीरों में	पात्रम्	१०. पात्र हैं (जिसमें)
भगवान्	४. भगवान्	हि पुरुषः	९. पुरुष ही
राजन्	१. हे राजन् !	यावान्	११. जितना भगवान् का अधिक
तार	६. रूप से	आत्मा	१२. अंश होता है (वह)
तम्येन	५. अधिक-न्यून	यथा	१३. उतना ही
वर्तते ।	७. विद्यमान हैं	ईयते ॥	१४. श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उन-उन शरीरों में भगवान् अधिक-न्यून रूप से विद्यमान हैं । इसलिये मनुष्य ही पात्र है । जिसमें जितना भगवान् का अधिक अंश होता है वह उतना ही श्रेष्ठ है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

दृष्ट्वा तेषां मिथो नृणामवज्ञानात्मतां नृप ।
त्रेतादिषु हरेरर्चा क्रियायै कविभिः कृतः ॥३९॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा तेषाम् मिथः नृणाम् अवज्ञान आत्मताम् नृप ।
त्रेता आदिषु हरेः अर्चा क्रियायै कविभिः कृतः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	९.	देखकर	त्रेता	२.	त्रेता
तेषाम्	४.	उन	आदिषु	३.	आदि युगों में
मिथः	६.	परस्पर	हरेः	११.	भगवान् की
नृणाम्	५.	मनुष्यों को	अर्चा	१३.	प्रतिमा की
अवज्ञान	७.	अपमान	क्रियायै	१२.	उपासना के लिये
आत्मताम्	८.	करते हुये	कविभिः	१०.	विद्वानों ने
नृप ।	१.	हे राजन् !	कृतः ॥	१४.	प्रतिष्ठा की

श्लोकार्थ—हे राजन् ! त्रेता आदि युगों में उन मनुष्यों को परस्पर अपमान करते हुये देखकर विद्वानों ने भगवान् की उपासना के लिये प्रतिमा की प्रतिष्ठा की ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

ततोऽर्चायां हरिं केचित् संश्रद्धाय सपर्यया ।
उपासत उपास्तापि नार्थदा पुरुषद्विषाम् ॥४०॥

पदच्छेद— ततः अर्चायाम् हरिम् केचित् संश्रद्धाय सपर्यया ।
उपासते उपास्तापि न अर्थदा पुरुष द्विषाम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तभी से	उपासते	७.	उपासना करते हैं
अर्चायाम्	२.	प्रतिमा में	उपास्तापि	१०.	उपासना भी
हरिम्	५.	भगवान् का	न	१२.	नहीं है
केचित्	३.	कोई	अर्थदा	११.	कल्याणकारी
संश्रद्धाय	४.	बड़ी श्रद्धा से	पुरुष	८.	मनुष्यों से
सपर्यया ।	६.	पूजन करके	द्विषाम् ॥	९.	द्वेष करने वालों को

श्लोकार्थ—तभी से प्रतिमा में कोई बड़ी श्रद्धा से भगवान् का पूजन करके उपासना करते हैं । मनुष्यों से द्वेष करने वालों को उपासना भी कल्याणकारी नहीं है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

पुरुषेष्वपि राजेन्द्र सुपात्रं ब्राह्मणं विदुः ।
तपसा विद्यया तुष्ट्या धत्ते वेदं हरेस्तनुम् ॥४१॥

पदच्छेद—
पुरुषेषु अपि राजेन्द्र सुपात्रम् ब्राह्मणम् विदुः ।
तपसा विद्यया तुष्ट्या धत्ते वेदम् हरेः तनुम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुषेषु	२. मनुष्यों में	तपसा	७. तपस्या
अपि	३. भी	विद्यया	८. विद्या (और)
राजेन्द्र	१. हे महारज !	तुष्टचा	९. सन्तोष से
सुपात्रम्	५. सुपात्र	धत्ते	१३. धारण करते हैं
ब्राह्मणम्	४. ब्राह्मणों को	वेदम्	११. वेदरूप
विदुः ।	६. माना है (क्योंकि वे)	हरेः	१०. भगवान् के
		तनुम् ॥	१२. शरीर को

श्लोकार्थ—हे महाराज ! मनुष्यों में भी ब्राह्मणों को सुपात्र माना हैं । क्योंकि वे तपस्या, विद्या और सन्तोष से भगवान् के वेदरूप शरीर को धारण करते हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नन्वस्य ब्राह्मणा राजन्कृष्णस्य जगदात्मनः ।
पुनन्तः पादरजसा त्रिलोकीं दैवतं महत् ॥४२॥

पदच्छेद—
ननु अस्य ब्राह्मणाः राजन् कृष्णस्य जगत् आत्मनः ।
पुनन्तः पादरजसा त्रिलोकीम् दैवतम् महत् ॥

शब्दार्थ—

ननु	२. निश्चय ही	पुनन्तः	१३. पवित्र करते हैं
अस्य	६. इन भगवान्	पाद	१०. चरणों की
ब्राह्मणाः	३. ब्राह्मण	रजसा	११. धूलो से
राजन्	१. हे राजन् !	त्रिलोकीम्	१२. तीनों लोकों को
कृष्णस्य	७. श्री कृष्ण के	दैवतम्	९. देवता हैं (जो)
जगत्	४. संसार के	महत् ॥	८. महान्
आत्मनः ।	५. आत्मा		

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निश्चय ही ब्राह्मण संसार के आत्मा इन भगवान् श्री कृष्ण के महान् देवता हैं । जो चरणों की धूली से तीनों लोकों को पवित्र करते हैं ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां सप्तमे स्कन्धे सदाचार निर्णयो नाम चतुर्दशः अध्यायः ॥१४॥

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच— कर्मनिष्ठा द्विजाः केचित् तपोनिष्ठा नृपापरे ।
स्वाध्यायेऽन्ये प्रवचने ये केचिज्ज्ञानयोगयोः ॥१॥

पदच्छेद— कर्मनिष्ठाः द्विजाः केचित् तपः निष्ठा नृप अपरे ।
स्वाध्याये अन्ये प्रवचने ये केचित् ज्ञान योगयोः ॥

शब्दार्थ—कर्म	४.	कर्मकाण्ड में	अपरे ।	६.	कोई दूसरे
निष्ठाः	५.	निष्ठा रखने वाले होते हैं	स्वाध्याये	१०.	स्वाध्याय में
द्विजाः	३.	ब्राह्मण	अन्ये	९.	अन्य कोई
केचित्	२.	कोई	प्रवचने	१२.	प्रवचन में (तथा)
तपः	७.	तपस्या में	ये केचित्	११.	और कोई
निष्ठाः	८.	निष्ठा रखने वाले होते हैं	ज्ञान	१३.	ज्ञान
नृप	१.	हे राजन् !	योगयोः ॥	१४.	योग में निष्ठा रखते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कोई ब्राह्मण कर्मकाण्ड में निष्ठा रखने वाले होते हैं। कोई दूसरे तपस्या में निष्ठा रखने वाले होते हैं। अन्य कोई स्वाध्याय में और कोई प्रवचन में तथा ज्ञान-योग में निष्ठा रखते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

ज्ञाननिष्ठाय देयानि कव्यान्यानन्त्यमिच्छता ।
दैवे च तदभावे स्यादितरेभ्यो यथार्हतः ॥२॥

पदच्छेद— ज्ञान निष्ठाय देयानि कव्यानि आनन्त्यम् इच्छता ।
दैवे च तत् अभावे स्यात् इतरेभ्यः यथा अर्हतः ॥

शब्दार्थ—ज्ञान	६.	ज्ञान में	च	२.	और
निष्ठाय	७.	तत्पर ब्राह्मण को	तत्	९.	उसके
देयानि	८.	देनी चाहिये (और)	अभावे	१०.	अभाव में
कव्यानि	१.	पितरों को दी जाने वाली वस्तु	स्यात्	१४.	देनी चाहिये
आनन्त्यम्	४.	अक्षय फल को	इतरेभ्यः	११.	दूसरे को भी
इच्छता ।	५	चाहने वाले मनुष्य को	यथा	१२.	यथा
दैवे	३.	देवताओं को दी जाने वाली वस्तु	योग्य ॥	१३.	योग्य

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पितरों को दी जाने वाली वस्तु और देवताओं को दी जाने वाली वस्तु अक्षय फल को चाहने वाले मनुष्य को ज्ञान में तत्पर ब्राह्मण को देनी चाहिये और उसके अभाव में दूसरे को भी यथा योग्य देनी चाहिये ॥

तृतीयः श्लोकः

द्वौ दैवे पितृकार्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा ।
भोजयेत् सुसमृद्धोऽपि श्राद्धे कुर्यान्न विस्तरम् ॥३॥

पदच्छेद— द्वौ दैवे पितृकार्ये त्रीन् एक एकम् उभयत्र वा ।
भोजयेत् सु समृद्धः अपि श्राद्धे कुर्यात् न विस्तरम् ॥

शब्दार्थ—

द्वौ	२. दो ब्राह्मणों को	भोजयेत्	८. भोजन करावे
दैवे	१. देवकर्म में	सुसमृद्ध	९. बहुत धनवान् होने पर
पितृकार्ये	३. पितृकर्म में	अपि	१०. भी
त्रीन्	४. तीन	श्राद्धे	११. श्राद्ध में
एक-एकम्	७. एक-एक ही (ब्राह्मण को)	कुर्यात्	१४. करना चाहिये
उभयत्र	६. दोनों	न	१३. नहीं
वा ।	५. अथवा	विस्तरम् ॥	१२. विस्तार

श्लोकार्थ—हे राजन् ! देवकर्म में दो, पितृकर्म में तीन अथवा दोनों में एक-एक ही ब्राह्मण को भोजन करावे। बहुत धनवान् होने पर श्राद्ध में विस्तार नहीं करना चाहिये ॥

चतुर्थः श्लोकः

देशकालोचितश्रद्धाद्रव्यपात्रार्हणानि च ।
सम्यग् भवन्ति नैतानि विस्तरात् स्वजनार्पणात् ॥४॥

पदच्छेद— देशकाल उचित श्रद्धा द्रव्य पात्र अर्हणानि च ।
सम्यक् भवन्ति न एतानि विस्तरात् स्वजन अर्पणात् ॥

शब्दार्थ—

देशकाल	५. देशकाल के	सम्यक्	१२. अच्छी प्रकार
उचित	६. योग्य	भवन्ति	१४. होते हैं
श्रद्धा	७. श्रद्धा	न	१३. नहीं
द्रव्य	८. द्रव्य	एतानि	११. यह
पात्र	९. पात्र	विस्तरात्	४. विस्तार करने से
अर्हणानि	१०. पूजनादि	स्वजन	१. सगे सम्बन्धियों को
च ।	३. और	अर्पणात् ॥	२. अर्पण करने से

श्लोकार्थ—सगे सम्बन्धियों को अर्पण करने से और विस्तार करने से देश काल के योग्य श्रद्धा द्रव्य, पात्र, पूजनादि यह अच्छी प्रकार नहीं होते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

देशे काले च सम्प्राप्ते मुन्यन्नं हरिदैवतम् ।
श्रद्धया विधिवत् पात्रे न्यस्तं कामधुगक्षयम् ॥५॥

पदच्छेद— देशे काले च सम्प्राप्ते मुनि अन्नम् हरि दैवतम् ।
श्रद्धया विधिवत् पात्रे न्यस्तम् कामधुक् अक्षयम् ॥

शब्दार्थ—

देशे	१. देश	दैवतम् ।	८. भोग लगाकर
काले	३. काल में	श्रद्धया	९. श्रद्धा से
च	२. और	विधिवत्	१०. विधिपूर्वक
सम्प्राप्ते	४. प्राप्त होने पर	पात्रे	११. सुपात्र को
मुनि	५. मुनियों के योग्य	न्यस्तम्	१२. दिया जाने पर
अन्नम्	६. अन्न	कामधुक्	१३. सकल कामनाओं को पूर्ण करने वाला
हरि	७. भगवान् को	अक्षयम् ॥	१४. अक्षय होता है

श्लोकार्थ—देश और काल के प्राप्त होने पर मुनियों के योग्य अन्न भगवान् को भोग लगाकर श्रद्धा से विधिपूर्वक दिया जाने पर सकल कामनाओं को पूर्ण करने वाला और अक्षय होता है ॥

षष्ठः श्लोकः

देवर्षिपितृभूतेभ्य आत्मने स्वजनाय च ।
अन्नं संविभजन्पश्येत् सर्वं तत् पुरुषात्मकम् ॥६॥

पदच्छेद— देवर्षि पितृ भूतेभ्यः आत्मने स्वजनाय च ।
अन्नम् संविभजन् पश्येत् सर्वम् तत् पुरुष आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

देवर्षि	१. देवता ऋषि	अन्नम्	८. अन्न का
पितृ	२. पितर (तथा)	संविभजन्	९. बँटवारा करते हुये
भूतेभ्यः	३. प्राणियों को	पश्येत्	१४. देखे
आत्मने	४. अपने आप को	सर्वम्	११. सब को
स्व	६. अपने	तत्	१०. उन
जनाय	७. बन्धुओं को	पुरुष	१२. परमात्मा का
च ।	५. और	आत्मकम् ॥	१३. स्वरूप

श्लोकार्थ—देवता, ऋषि, पितर तथा प्राणियों को अपने आप को और बन्धुओं को अन्न का बँटवारा करते हुये उन सबको परमात्मा का स्वरूप देखे ॥

सप्तमः श्लोकः

न दद्यादामिषं श्राद्धे न चाद्याद् धर्मतत्त्ववित् ।
मुन्यन्नैः स्यात्परा प्रीतिर्यथा न पशुहिंसया ॥७॥

पदच्छेद— न दद्यात् आमिषम् श्राद्धे न च अद्यात् धर्म तत्त्ववित् ।
मुनि अन्नैः स्यात् परा प्रीतिः यथा न पशु हिंसया ॥

शब्दार्थ—

न	५. नहीं	मुनि	९. मुनियों के योग्य
दद्यात्	६. दे	अन्नैः	१०. अन्न से
आमिषम्	४. मांस	स्यात्	१२. होती है
श्राद्धे	३. श्राद्ध में	परा प्रीतिः	११. बड़ी प्रसन्नता
न	७. नहीं	यथा	१३. वैसी
च अद्यात्	८. और खाये (क्योंकि पितरों) को न		१६. नहीं होती है
धर्मतत्त्वे	१. धर्म के तत्त्व को	पशु	१४. पशु
वित् ।	२. जानने वाला मनुष्य	हिंसया ॥	१५. हिंसा से

श्लोकार्थ—धर्म के तत्त्व को जानने वाला मनुष्य श्राद्ध में मांस नहीं दे और न खाये । क्योंकि पितरों को मुनियों के योग्य अन्न से बड़ा प्रसन्नता होती है, वैसी पशु हिंसा से नहीं होती है ॥

अष्टमः श्लोकः

नैतादृशः परो धर्मो नृणां सद्धर्ममिच्छताम् ।
न्यासो दण्डस्य भूतेषु मनोवाक्कायजस्य यः ॥८॥

पदच्छेद— न एता दृशः परः धर्मः नृणाम् सत् धर्मम् इच्छताम् ।
न्यासः दण्डस्य भूतेषु मनः वाक् कायजस्य यः ॥

शब्दार्थ—

न	७. नहीं है (कि वह)	न्यासः	१४. छोड़ दे
एतादृशः	५. ऐसा	दण्डस्य	१३. दण्ड देना
परः धर्मः	६. परम धर्म (कोई)	भूतेषु	८. प्राणियों को
नृणाम्	४. मनुष्यों के लिये	मनः	१०. मन
सत्	१. सत्य	वाक्	११. वाणी (और)
धर्मम्	२. धर्म की	कायजस्य	१२. शरीर से उत्पन्न
इच्छताम् ।	३. इच्छा करने वाले	यः ॥	९. जो

श्लोकार्थ—सत्य धर्म की इच्छा करने वाले मनुष्यों के लिये ऐसा परमधर्म कोई नहीं है कि वह प्राणियों को मन, वाणी और शरीर से उत्पन्न दण्ड देना छोड़ दे ॥

नवमः श्लोकः

एके कर्ममयान् यज्ञान् ज्ञानिनो यज्ञवित्तमाः ।
आत्मसंयमनेऽनीहा जुह्वति ज्ञानदीपिते ॥९॥

पदच्छेद— एके कर्ममयान् यज्ञान् ज्ञानिनः यज्ञ वित्तमाः ।
आत्म संयमने अनीहा जुह्वति ज्ञान दीपिते ॥

शब्दार्थ—

एके	३.	कोई	आत्म	१०.	आत्म
कर्ममयान्	६.	कर्ममय	संयमने	११.	संयम रूप (अग्नि में)
यज्ञान्	७.	यज्ञों का	अनीहा	४.	इच्छा रहित
ज्ञानिनः	५.	ज्ञानी	जुह्वति	१२.	हवन करते हैं
यज्ञ	१.	यज्ञ को	ज्ञान	८.	ज्ञान से
वित्तमाः ।	२.	जानने वालों में श्रेष्ठ	दीपिते ॥	९.	प्रज्वलित

श्लोकार्थ—यज्ञ को जानने वालों में श्रेष्ठ कोई इच्छारहित ज्ञानी कर्ममय यज्ञों का ज्ञान से प्रज्वलित आत्म संयम रूप अग्नि में हवन करते हैं ।।

दशमः श्लोकः

द्रव्ययज्ञैर्यक्ष्यमाणं दृष्ट्वा भूतानि बिभ्यति ।
एष माकरुणो हन्यादतज्ज्ञो ह्यसुतृप् ध्रुवम् ॥१०॥

पदच्छेद— द्रव्य यज्ञैः यक्ष्यमाणम् दृष्ट्वा भूतानि बिभ्यति ।
एषः मा अकरुणः हन्यात् अतज्ज्ञः हि असुतृप् ध्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	१.	द्रव्यमय	एषः	१०.	यह
यज्ञैः	२.	यज्ञों से	मा	१३.	मुझे
यक्ष्य	३.	यज्ञ	अकरुणः	११.	निर्दयी
माणम्	४.	करने वालों को	हन्यात्	१४.	मार डालेगा
दृष्ट्वा	५.	देखकर	अतज्ज्ञः	९.	तत्त्व को न जानने वाला
भूतानि	६.	प्राणी	हि असुतृप्	८.	केवल प्राणों का पोषण करने वाला और
बिभ्यति ।	७.	डर जाते हैं (कि)	ध्रुवम् ॥	१२.	निश्चित रूप से

श्लोकार्थ—द्रव्यमय यज्ञों से यज्ञ करने वालों को देखकर प्राणी डर जाते हैं कि केवल प्राणों का पोषण करने वाला और तत्त्व को न जानने वाला यह निर्दयी निश्चित रूप से मुझे मार डालेगा ॥

एकादशः श्लोकः

तस्माद् दैवोपपन्नेन मुन्यन्नेनापि धर्मवित्।
सन्तुष्टोऽहरहः कुर्यान्नित्यनैमित्तिकीः क्रियाः ॥११॥

पदच्छेद — तस्मात् दैव उपपन्नेन मुनि अन्नेन अपि धर्मवित् ।
सन्तुष्टः अहः अहः कुर्यात् नित्य नैमित्तिकीः क्रियाः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	**सन्तुष्टः**	७.	सन्तुष्ट रहकर
दैव	२.	प्रारब्ध के द्वारा	**अहः अहः**	८.	प्रतिदिन
उपपन्नेन	३.	प्राप्त	**कुर्यात्**	१२.	करे
मुनि अन्नेन	५.	मुनियों के योग्य अन्न से	**नित्य**	९.	नित्य (और)
अपि	६.	भी	**नैमित्तिकीः**	१०.	नैमित्तिक
धर्मवित् ।	४.	धर्म के जानकार (मनुष्य)	**क्रियाः ॥**	११.	क्रियाओं को

श्लोकार्थ—इसलिये प्रारब्ध के द्वारा प्राप्त धर्म के जानकार मनुष्य मुनियों के योग्य अन्न से भी सन्तुष्ट रहकर प्रतिदिन नित्य और नैमित्तिक क्रियाओं को करे ॥

द्वादशः श्लोकः

विधर्मः परधर्मश्च आभास उपमा छलः ।
अधर्मशाखाः पञ्चेमा धर्मज्ञोऽधर्मवत् त्यजेत् ॥१२॥

पदच्छेद— विधर्मः परधर्मः च आभासः उपमा छलः ।
अधर्म शाखाः पञ्च इमाः धर्मज्ञः अधर्मवत् त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

विधर्मः	१.	विधर्म	**अधर्म**	८.	अधर्म की
परधर्मः	२.	परधर्म	**शाखाः**	९.	शाखायें हैं
च	५.	और	**पञ्च इमाः**	७.	ये पाँच
आभासः	३.	आभास	**धर्मज्ञः**	१०.	धर्म को जानने वाला मनुष्य इन्हें
उपमा	४.	उपमा	**अधर्मवत्**	११.	अधर्म के समान
छलः ।	६.	छल	**त्यजेत् ॥**	१२.	त्याग दे

श्लोकार्थ—विधर्म, परधर्म, आभास, उपमा और छल ये पाँच अधर्म की शाखायें हैं। धर्म को जानने वाला मनुष्य इन्हें अधर्म के समान त्याग दे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

धर्मबाधो विधर्मः स्यात् परधर्मोऽन्यचोदितः ।
उपधर्मस्तु पाखण्डो दम्भो वा शब्दभिच्छलः ॥१३॥

पदच्छेद— धर्म बाधः विधर्मः स्यात् परधर्मः अन्यचोदितः ।
उपधर्मः तु पाखण्डः दम्भः वा शब्दभिः छलः ॥

शब्दार्थ—

धर्म	१.	धर्म को	उपधर्मः	१०.	उपमा कहा गया है
बाधः	२.	बाधा पहुँचाने वाला कार्य	तु पाखण्डः	७.	पाखण्ड
विधर्मः स्यात्	३.	विधर्म है	दम्भः	९.	दम्भ
परधर्मः	६.	परधर्म है	वा	८.	अथवा
अन्य	४.	दूसरों के लिये	शब्दभिः	११.	शब्द के अर्थ को तोड़ मरोड़ कर कहना
चोदितः ।	५.	कहा गया धर्म	छलः ॥	१२.	छल है

श्लोकार्थ—धर्म को बाधा पहुँचाने वाला कार्य विधर्म है । दूसरों के लिये कहा गया धर्म परधर्म हैं । पाखण्ड अथवा दम्भ उपमा कहा गया है । शब्द के अर्थ को तोड़ मरोड़ कर कहना छल है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यस्त्विच्छया कृतः पुम्भिराभासो ह्याश्रमात् पृथक् ।
स्वभावविहितो धर्मः कस्य नेष्टः प्रशान्तये ॥१४॥

पदच्छेद— यः तु इच्छया कृतः पुम्भिः आभासः हि आश्रमात् पृथक् ।
स्वभाव विहितः धर्मः कस्य न इष्टः प्रशान्तये ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	स्वभाव	८.	स्वभाव के
तु इच्छया	२.	अपनी इच्छा से	विहितः	९.	अनुकूल
कृतः	६.	किया जाता है (वह)	धर्मः	१०.	जो आश्रमोचित धर्म है
पुम्भिः	३.	पुरुषों के द्वारा	कस्य	१२.	वह किसे
आभासः हि	७.	आभास है	न	१४.	नहीं है
आश्रमात्	४.	आश्रम के	इष्टः	१३.	इष्ट
पृथक् ।	५.	विपरीत	प्रशान्तये ॥	११.	शान्ति के लिये

श्लोकार्थ—जो अपनी इच्छा से पुरुषों के द्वारा आश्रम के विपरीत किया जाता है वह आभास है । स्वभाव के अनुकूल जो आश्रमोचित धर्म है वह शान्ति के लिये किसे इष्ट नहीं है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

धर्मार्थमपि नेहेत यात्रार्थं वाधनो धनम् ।
अनीहानीहमानस्य महाहेरिव वृत्तिदा ॥१५॥

पदच्छेद— धर्म अर्थम् अपि न ईहेत यात्रा अर्थम् वा अधनः धनम् ।
अनीहा अनीहमानस्य महाहेः इव वृत्तिदा ॥

शब्दार्थ—

धर्म अर्थम्	२.	धर्म के लिये	धनम् ।	७.	धन
अपि	६.	भी	अनीहा	११.	अनिच्छा ही (उसे)
न ईहेत	८.	नहीं चाहे	अनीह	९.	इच्छा न
यात्रा	४.	जीवन	मानस्य	१०.	करने वाले (भिक्षुक की)
अर्थम्	५.	निर्वाह के लिये	महाहेः	१२.	अजगर सर्प के
वा	३.	अथवा	इव	१३.	समान
अधनः	१.	निर्धन संन्यासी	वृत्तिदा ॥	१४.	जीविका देने वाली होती है

श्लोकार्थ—निर्धन संन्यासी धर्म के लिये अथवा जीवन निर्वाह के लिये भी धन नहीं चाहे । इच्छा न करने वाले भिक्षुक की अनिच्छा ही उसे अजगर सर्प के समान जीविका देने वाली होती है ॥

षोडशः श्लोकः

सन्तुष्टस्य निरीहस्य स्वात्मारामस्य यत् सुखम् ।
कुतस्तत् कामलोभेन धावतोऽर्थेहया दिशः ॥१६॥

पदच्छेद— सन्तुष्टस्य निरीहस्य स्वात्म आरामस्य यत् सुखम् ।
कुतः तत् काम लोभेन धावतः अर्थ ईहया दिशः ॥

शब्दार्थ—

सन्तुष्टस्य	१.	सन्तुष्ट रहने वाले	तत्	७.	वह (सुख)
निरीहस्य	२.	इच्छा रहित	काम	८.	कामना (और)
स्वात्म	३.	अपनी आत्मा में	लोभेन	९.	लोभ वश
आर मस्य	४.	रमण करने वाले को	धावतः	१३.	दौड़ धूप करते हुये को
यत्	५.	जो	अर्थ	१०.	धन की
सुखम्	६.	सुख मिलता है	ईहया	११.	इच्छा से
कुतः ।	१४.	कहाँ से मिलेगा	दिशः ॥	१२.	चारों दिशाओं में

श्लोकार्थ—सन्तुष्ट रहने वाले, इच्छा रहित, अपनी आत्मा में रमण करने वाले को जो सुख मिलता है, वह सुख कामना और लोभ वश धन की इच्छा से चारों दिशाओं में दौड़ धूप करते हुये को कहाँ से मिलेगा ॥

सप्तदशः श्लोकः

सदा सन्तुष्टमनसः सर्वाः सुखमया दिशः ।
शर्कराकण्टकादिभ्यो यथोपानत्पदः शिवम् ॥१७॥

पदच्छेद— सदा सन्तुष्ट मनसः सर्वाः सुखमयाः दिशः ।
शर्करा कण्टक आदिभ्यः यथा उपानत् पदः शिवम् ॥

शब्दार्थ—

सदा	१. हमेशा	शर्करा	८. कंकड़
सन्तुष्ट	२. सन्तुष्ट	कण्टक	९. काँटे
मनसः	३. मन वाले के लिये	आदिभ्यः	१०. आदि से
सर्वाः	४. सभी	यथा	७. जैसे
सुखमयाः	६. सुखमय होती हैं	उपानत्पदः	११. जूता पहने हुये को
दिशः ।	५. दिशायें	शिवम् ॥	१२. कष्ट नहीं होता है

श्लोकार्थः—हमेशा सन्तुष्ट मन वाले के लिये सभी दिशायें सुखमय होती हैं । जैसे कंकड़, काँटे आदि से जूता पहने हुये को कष्ट नहीं होता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

सन्तुष्टः केन वा राजन्न वर्तेतापि वारिणा ।
औपस्थ्यजैह्व्यकार्पण्याद् गृहपालायते जनः ॥१८॥

पदच्छेद— सन्तुष्टः केन वा राजन् न वर्तेत अपि वारिणा ।
औपस्थ्य जैह्व्य कार्पण्यात् गृह पालायते जनः ॥

शब्दार्थ—

सन्तुष्टः	३. सन्तुष्ट रहकर	औपस्थ्य	८. जननेन्द्रिय
केन	६. क्यों	जैह्व्य	१०. जीभ की
वा	९. अथवा	कार्पण्यात्	११. कृपणता के कारण
राजन्	१. हे राजन् !	गृह	१२. कुत्ते के समान
न वर्तेत	७. नहीं निर्वाह कर लेता है (वह)	पालायते	१३. आचरण करने वाला हो जाता है
अपि	५. भी	जनः ॥	२. मनुष्य
वारिणा ।	४. जल से		

श्लोकार्थः—हे राजन् ! मनुष्य सन्तुष्ट रहकर जल से भी क्यों नहीं निर्वाह कर लेता है । वह जननेन्द्रिय अथवा जीभ की कृपणता के कारण कुत्ते के समान आचरण करने वाला हो जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

असन्तुष्टस्य विप्रस्य तेजो विद्या तपो यशः।
स्रवन्तीन्द्रियलौल्येन ज्ञानं चैवावकीर्यते ॥१९॥

पदच्छेद— असन्तुष्टस्य विप्रस्य तेजः विद्या तपः यशः।
स्रवन्ति इन्द्रिय लौल्येन ज्ञानम् च एव अवकीर्यते ॥

शब्दार्थ—

असन्तुष्टस्य	१.	असन्तुष्ट	स्रवन्ति	९.	क्षीण हो जाते हैं
विप्रस्य	२.	ब्राह्मण के	इन्द्रिय	७.	इन्द्रियों की
तेजः	३.	तेज	लौल्येन	८.	लोलुपता के कारण
विद्या	४.	विद्या	ज्ञानम्	११.	ज्ञान भी
तपः	५.	तपस्या और	च एव	१०.	और
यशः।	६.	यश	अवकीर्यते ॥	१२.	नष्ट हो जाता है

श्लोकार्थ—असन्तुष्ट ब्राह्मण के तेज, विद्या, तपस्या और यश इन्द्रियों की लोलुपता के कारण क्षीण हो जाते हैं और ज्ञान भी नष्ट हो जाता है ॥

विंशः श्लोकः

कामस्यान्तं च क्षुत्तृड्भ्यां क्रोधस्यैतत्फलोदयात्।
जनो याति न लोभस्य जित्वा भुक्त्वा दिशो भुवः ॥२०॥

पदच्छेद— कामस्य अन्तम् च क्षुत् तृड्भ्याम् क्रोधस्य एतत् फल उदयात्।
जनः याति न लोभस्य जित्वा भुक्त्वा दिशः भुवः ॥

शब्दार्थ—

कामस्य	२.	कामना का	जनः	९.	मनुष्य
अन्तम्	३.	अन्त हो जाता है	याति	१६.	अन्त पाता है
च	४.	और	न	१५.	नहीं
क्षुत्तृड्भ्याम्	१.	भूख-प्यास मिट जाने पर	लोभस्य	१४.	लोभ का
क्रोधस्य	६.	क्रोध भी	जित्वा	१२.	जीतकर (और उसका)
एतत	५.	इस	भुक्त्वा	१३.	भोगकर के भी
फल	७.	फल	दिशः	११.	दिशाओं को भी
उदयात्।	८.	मिल जाने पर (वह शान्त हो जाता है किन्तु)	भुवः ॥	१०.	पृथ्वी की

श्लोकार्थ—भूख-प्यास मिट जाने पर कामना का अन्त हो जाता है और इस क्रोध का भी फल मिल जाने पर वह शान्त हो जाता है। किन्तु मनुष्य पृथ्वी की दिशाओं को भी जीतकर और उसका भोग करके भी लोभ का अन्त नहीं पाता है ॥

एकविंशः श्लोकः

पण्डिता बहवो राजन्बहुज्ञाः संशयच्छिदः ।
सदसस्पतयोऽप्येके असन्तोषात् पतन्त्यधः ॥२१॥

पदच्छेद— पण्डिताः बहवः राजन् बहुज्ञाः संशय छिदः ।
सदसः पतयः अपिएके असन्तोषात् पतन्ति अधः ॥

शब्दार्थ—

पण्डिताः	६.	पण्डित	सदसः	८.	विद्वानों की सभा के
बहवः	५.	बहुत से	पतयः	९.	सभापति
राजन्	१.	हे राजन् !	अपि	१०.	भी
बहुज्ञाः	२.	बहुत जानने वाले	एके	७.	और कोई
संशय	३.	तथा संदेहों को	असन्तोषात्	११.	असन्तोष के कारण
छिदः ।	४.	मिटाने वाले	पतन्ति	१३.	गिर जाते हैं
			अधः ॥	१२.	नीचे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बहुत जानने वाले, सन्देहों को मिटाने वाले, बहुत से पण्डित और कोई विद्वानों की सभा के सभापति भी असन्तोष के कारण नीचे गिर जाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

असङ्कल्पाज्जयेत् कामं क्रोधं कामविवर्जनात् ।
अर्थानर्थेक्षया लोभं भयं तत्त्वावमर्शनात् ॥२२॥

पदच्छेद— असंकल्पात् जयेत् कामम् क्रोधम् कामविवर्जनात् ।
अर्थ-अनर्थ ईक्षया लोभम् भयम् तत्त्व अवमर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

असंकल्पात्	१.	संकल्प न करने से	अर्थ-अनर्थ	६.	अर्थ को अनर्थ
जयेत्	१२.	जीत लेना चाहिये	ईक्षया	७.	समझकर
कामम्	२.	काम को	लोभम्	८.	लोभ को (तथा)
क्रोधम्	५.	क्रोध को	भयम्	११.	भय को
काम	३.	कामनाओं के	तत्त्व	९.	तत्त्व के
विवर्जनात् ।	४.	त्याग से	अवमर्शनात् ॥	१०.	विचार से

श्लोकार्थ—संकल्प न करने से काम को, कामनाओं के त्याग से क्रोध को, अर्थ को अनर्थ समझकर लोभ को तथा तत्त्व के विचार से भय को जीत लेना चाहिये ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

आन्वीक्षिक्या शोकमोहौ दम्भं महदुपासया ।
योगान्तरायान् मौनेन हिंसां कायाद्यनीहया ॥२३॥

पदच्छेद— आन्वीक्षिक्या शोक मोहौ दम्भम् महत् उपासया ।
योग अन्तरायान् मौनेन हिंसां काय आदि अनीहया ॥

शब्दार्थ—

आन्वीक्षिक्या	१.	अध्यात्म विद्या से	योग	८.	योग के
शोक	२.	शोक और	अन्तरायान्	९.	विघ्नों को
मोहौ	३.	मोह को	मौनेन	७.	मौन के द्वारा
दम्भम्	६.	दम्भ को	हिंसां	१२.	हिंसा को जीत लेना चाहिये
महत्	४.	महापुरुषों की	काय आदि	१०.	शरीरादि के प्रति
उपासया ।	५.	उपासना से	अनीहया ॥	११.	अनिच्छा से

श्लोकार्थ—अध्यात्म विद्या से शोक और मोह को, महापुरुषों की उपासना से दम्भ को, मौन के द्वारा योग के विघ्नों को तथा शरीरादि के प्रति अनिच्छा से हिंसा को जीत लेना चाहिये ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

कृपया भूतजं दुःखं दैवं जह्यात् समाधिना ।
आत्मजं योगवीर्येण निद्रां सत्त्वनिषेवया ॥२४॥

पदच्छेद— कृपया भूतजम् दुःखम् दैवम् जह्यात् समाधिना ।
आत्मजम् योग वीर्येण निद्राम् सत्त्व निषेवया ॥

शब्दार्थ—

कृपया	१.	दया के द्वारा	आत्मजम्	८.	आध्यात्मिक दुःख को
भूतजम्	२.	भौतिक	योग	६.	योग के
दुःखम्	३.	दुःख को	वीर्येण	७.	बल से
दैवम्	५.	दैविक दुःख को	निद्राम्	११.	निद्रा को
जह्यात्	१२.	जीत ले	सत्त्व	९.	सात्त्विक वस्तु के
समाधिना ।	४.	समाधि के द्वारा	निषेवया ॥	१०.	सेवन से

श्लोकार्थ—दया के द्वारा भौतिक दुःख को, समाधि के द्वारा दैविक दुःख को, योग बल से अध्यात्मिक दुःख को तथा सात्त्विक वस्तु के सेवन से निद्रा को जीत ले ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

रजस्तमश्च सत्त्वेन सत्त्वं चोपशमेन च ।
एतत् सर्वं गुरौ भक्त्या पुरुषो ह्यञ्जसा जयेत् ॥२५॥

पदच्छेद— रजः तमः च सत्त्वेन सत्त्वम् च उपशमेन च ।
एतत् सर्वं गुरौ भक्त्या पुरुषः हि अञ्जसा जयेत् ॥

शब्दार्थ—

रजः	२.	रजोगुण	एतत्	११.	इन
तमः	४.	तमोगुण को	सर्वं	१२.	सब को
च	३.	और	गुरौ	८.	गुरु की
सत्त्वेन	१.	सत्त्वगुण के द्वारा	भक्त्या	९.	भक्ति के द्वारा
सत्त्वम्	६.	सत्त्व गुण को	पुरुषः हि	१०.	मनुष्य
च उपशमेन	५.	शान्ति के द्वारा	अञ्जसा	१३.	सुगमता से
च ।	७.	और	जयेत् ॥	१४.	जीत लेता है

श्लोकार्थ—सत्त्व गुण के द्वारा रजोगुण और तमोगुण को, शान्ति के द्वारा सत्त्व गुण को और गुरु की भक्ति के द्वारा मनुष्य इन सब को सुगमता से जीत लेता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यस्य साक्षाद् भगवती ज्ञानदीपप्रदे गुरौ ।
मर्त्यासद्धीः श्रुतं तस्य सर्वं कुञ्जरशौचवत् ॥२६॥

पदच्छेद— यस्य साक्षात् भगवति ज्ञान दीप प्रदे गुरौ ।
मर्त्य असद्धीः श्रुतम् तस्य सर्वम् कुञ्जर शौचवत् ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जो	मर्त्य	८.	मनुष्य समझने की
साक्षात्	५.	साक्षात्	असद्धीः	९.	दुर्बुद्धि करता है
भगवति	६.	भगवान् स्वरूप	श्रुतम्	१२.	शास्त्र ज्ञान
ज्ञान	२.	ज्ञान	तस्य	१०.	उसका
दीप	३.	दीपक	सर्वम्	११.	सब
प्रदे	४.	जलाने वाले	कुञ्जर	१३.	हाथी के
गुरौ ।	७	गुरु को	शौचवत् ॥	१४.	स्नान के समान व्यर्थ है

श्लोकार्थ—जो ज्ञान दीप जलाने वाले साक्षात् भगवान् स्वरूप गुरु को मनुष्य समझने की दुर्बुद्धि करता है, उसका सब शास्त्र ज्ञान हाथी के स्नान के समान व्यर्थ है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एष वै भगवान्साक्षात् प्रधानपुरुषेश्वरः ।
योगेश्वरैर्विमृग्याङ्घ्रिर्लोको यं मन्यते नरम् ॥२७॥

पदच्छेद— एषः वै भगवान् साक्षात् प्रधान पुरुष ईश्वरः ।
योगेश्वरैः विमृग्य अङ्घ्रिलोकः यम् मन्यते नरम् ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	ये	योगेश्वरैः	८.	योगिराजों द्वारा
वै	२.	निश्चित ही	विमृग्य	६.	ढूंढने योग्य
भगवान्	४.	भगवान्	अङ्घ्रि	१०.	चरण वाले हैं
साक्षात	३.	साक्षात्	लोकः	११.	संसार
प्रधान	५.	प्रकृति (और)	यम्	१२.	इन्हें
पुरुष	६.	पुरुष के	मन्यते	१४.	मानता है
ईश्वरः ।	७.	स्वामी (तथा)	नरम् ॥	१३.	मनुष्य

श्लोकार्थ—ये निश्चित ही साक्षात् भगवान्, प्रकृति और पुरुष के स्वामी तथा योगिराजों द्वारा ढूंढने योग्य चरण वाले हैं, संसार इन्हें मनुष्य मानता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

षड्वर्गसंयमैकान्ताः सर्वा नियमचोदनाः ।
तदन्ता यदि नो योगानावहेयुः श्रमावहाः ॥२८॥

पदच्छेद— षड्वर्ग संयम एकान्ताः सर्वाः नियम चोदनाः ।
तदन्ताः यदि नो योगान् आवहेयुः श्रमावहाः ॥

शब्दार्थ—

षड्वर्ग	१.	काम, क्रोध आदि छः शत्रुओं	तदन्ताः	८.	विजय
संयम	३.	विजय पाना	यदि	७.	यदि (उन पर
एकान्ताः	२.	पूर्ण	नो	६.	नहीं (पा सके तो)
सर्वाः	४.	सभी शास्त्रों में	योगान्	१०.	योग आदि को
नियम	५.	नियम सम्बन्धी	आवहेयुः	१२.	समझना चाहिये
चोदनाः ।	६.	आदेश हैं	श्रमावहाः ॥	११.	कष्टदायी

श्लोकार्थ—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर आदि छः शत्रुओं पर पूर्ण विजय पाना सभी शास्त्रों में नियम सम्बन्धी आदेश हैं । यदि उन पर विजय नहीं पा सके तो योग आदि को कष्टदायी समझना चाहिये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यथा वार्तादयो ह्यर्था योगस्यार्थं न बिभ्रति ।
अनर्थाय भवेयुस्ते पूर्तमिष्टं तथासतः ॥२९॥

पदच्छेद— यथा वार्ता आदयः हि अर्थाः योगस्य अर्थम् न बिभ्रति ।
अनर्थाय भवेयुः ते पूर्तम् इष्टम् तथा असतः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जिस प्रकार	अनर्थाय	१३. अनर्थ के लिये
वार्ता	२. खेती	भवेयुः	१४. होते हैं
आदयः	३. आदि	ते	१०. वे
हि अर्थाः	४. कर्म	पूर्तम्	११. श्रौत (और)
योगस्य	५. योग के	इष्टम्	१२. स्मार्त कर्म
अर्थम्	६. फल को	तथा	८. उसी प्रकार
न बिभ्रति ।	७. नहीं दे सकते हैं	असतः ॥	९. दुष्ट व्यक्ति के

श्लोकार्थ—जिस प्रकार खेती आदि कर्म योग के फल को नहीं दे सकते हैं उसी प्रकार दुष्ट व्यक्ति के वे श्रौत और स्मार्त कर्म अनर्थ के लिये होते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

यश्चित्तविजये यत्तः स्यान्निः सङ्गोऽपरिग्रहः ।
एको विविक्तशरणो भिक्षुर्भिक्षामिताशनः ॥३०॥

पदच्छेद— यः चित्त विजये यत्तः स्यात् निः सङ्गः अपरिग्रहः ।
एकः विविक्त शरणः भिक्षुः भिक्षा अमित अशनः ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जो मनुष्य	एकः	८. अकेला
चित्त	२. मन पर	विविक्तः	९. एकान्त में
विजये	३. विजय प्रात करने के लिये	शरणः	१०. रहने वाला
यत्तः	४. उद्यत	भिक्षुः	११. संन्यासी
स्यात्	५. हो (वह)	भिक्षा	१२. भिक्षा
निः सङ्गः	६. आसक्ति रहित	अमित	१३. वृत्ति से थोड़ा
अपरिग्रहः ।	७. परिग्रह का त्याग करने वाला	असनः ॥	१४. भोजन करने वाला हो

श्लोकार्थ—जो मनुष्य मन पर विजय प्राप्त करने के लिये उद्यत हो वह आसक्ति रहित, परिग्रह का त्याग करने वाला, अकेला, एकान्त में रहने वाला, संन्यासी भिक्षा वृत्ति से थोड़ा भोजन करने वाला हो ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

देशे शुचौ समे राजन्संस्थाप्यासनमात्मनः ।
स्थिरं समं सुखं तस्मिन्नासीतर्ज्वङ्ग ओमिति ॥३१॥

पदच्छेद— देशे शुचौ समे राजन् संस्थाप्य आसनम् आत्मनः ।
स्थिरम् समम् सुखम् तस्मिन् आसीत ऋजु अङ्ग ओम् इति ॥

शब्दार्थ—

देशे	४. स्थान में	समम्	१०. समान
शुचौ	२. पवित्र (और)	सुखम्	१२. सुख पूर्वक
समे	३. समान	तस्मिन्	१३. उस पर
राजन्	१. हे राजन्	आसीत	१४. बैठकर
संस्थाप्य	७. बिछाकर	ऋजु	९. सीधा करके
आसनम्	६. आसन	अङ्ग	८. अङ्गों को
आत्मनः	५. अपना	ओम्	१५. ॐकार का जप
स्थिरम् ।	११. स्थिर भाव से	इति ॥	१६. करे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पवित्र और समान स्थान में अपना आसन बिछाकर अङ्गों को सीधा करके समान और स्थिर भाव से सुख पूर्वक उस पर बैठकर ॐकार का जप करे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

प्राणापानौ सन्निरुन्ध्यात् पूरकुम्भकरेचकैः ।
यावन्मनस्त्यजेत् कामान् स्वनासाग्रनिरीक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद— प्राण अपानौ सन्निरुन्ध्यात् पूर कुम्भक रेचकैः ।
यावत् मनः त्यजेत् कामान् स्वनासाग्रनिरीक्षणः ॥

शब्दार्थ—

प्राण	११. प्राण (और)	यावत्	१. जब तक
अपानौ	१२. अपान वायु को	मनः	२. मन
सन्निरुन्ध्यात्	१३. रोके रहे	त्यजेत्	४. छोड़ न दे (तब तक)
पूर	८. पूरक	कामान्	३. कामनाओं को
कुम्भक	९. कुम्भक (और)	स्व	५. अपनी
रेचकैः ।	१०. रेचक प्राणायाम के द्वारा	नासाग्र	६. नासिका के अग्रभाग पर
		निरीक्षणः ॥	७. दृष्टि को स्थिर करके

श्लोकार्थ—जब-तक मन कामनाओं को छोड़ न दे तब-तक अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि को स्थिर करके पूरक, कुम्भक और रेचक प्राणायाम के द्वारा प्राण और अपान वायु को रोके रहे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यतो यतो निःसरति मनः कामहतं भ्रमत् ।
ततस्ततः उपाहृत्य हृदि रुन्ध्याच्छनैर्बुधः ॥३३॥

पदच्छेद — यतः यतः निःसरति मनः कामहतम् भ्रमत् ।
ततः ततः उपाहृत्य हृदि रुन्ध्यात् शनैः बुधः ॥

शब्दार्थ—

यतः यतः	५.	जहाँ जहाँ	ततः ततः	७.	वहाँ वहाँ से
निःसरति	६.	जावे	उपाहृत्य	८.	लौटाकर
मनः	४.	मन	हृदि	११.	हृदय में
काम	१.	कामनाओं से	रुन्ध्यात्	१२.	रोके
हतम्	२.	आहत हो	शनैः	१०.	धीरे-धीरे (उसे)
भ्रमत् ।	३.	चक्कर काटता हुआ	बुधः ॥	९.	बुद्धिमान् मनुष्य

श्लोकार्थ—कामनाओं से आहत हो चक्कर काटता हुआ मन जहाँ-जहाँ जावे वहाँ-वहाँ से लौटाकर बुद्धिमान् मनुष्य धीरे-धीरे उसे हृदय में रोके ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एवमभ्यसतश्चित्तं कालेनाल्पीयसा यतेः ।
अनिशं तस्य निर्वाणं यात्यनिन्धनवह्निवत् ॥३४॥

पदच्छेद— एवम् अभ्यसतः चित्तम् कालेन अल्पीयसा यतेः ।
अनिशम् तस्य निर्वाणम् याति अनिन्धन वह्निवत् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१	इस प्रकार	अनिशम्	२.	निरन्तर
अभ्यसतः	३.	अभ्यास करते हुये	तस्य	४.	उस
चित्तम्	६.	मन	निर्वाणम्	११.	शान्त
कालेन	८.	समय में	याति	१२.	हो जाता है
अल्पीयसा	७.	थोड़े ही	अनिन्धन	९.	बिना इन्धन की
यतेः ।	५.	संन्यासी का	वह्निवत् ॥	१०.	अग्नि के समान

श्लोकार्थ—इस प्रकार निरन्तर अभ्यास करते हुये उस संन्यासी का मन थोड़े ही समय में बिना इन्धन की अग्नि के समान शान्त हो जाता है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

कामादिभिरनाविद्धं प्रशान्ताखिलवृत्ति यत् ।
चित्तं ब्रह्मसुखस्पृष्टं नैवोत्तिष्ठेत कर्हिचित् ॥३५॥

पदच्छेद— काम आदिभिः अनाविद्धम् प्रशान्त अखिल वृत्ति यत् ।
चित्तम् ब्रह्मसुख स्पृष्टम् न एव उत्तिष्ठेत् कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

काम	१.	काम	चित्तम्	७.	मन है (वह)
आदिभिः	२.	आदि से	ब्रह्मसुख	८.	ब्रह्मानन्द के
अनाविद्धम्	३.	अनाहत (और)	स्पृष्टम्	९.	स्पर्श से (मग्न होकर)
अखिल	४.	समस्त	न एव	११.	नहीं
वृत्ति	५.	वृत्ति वाला	उत्तिष्ठेत्	१२.	उठता है
यत् ।	६.	जो	कर्हिचित् ॥	१०.	कभी भी

श्लोकार्थ—काम आदि से अनाहत और समस्त वृत्ति वाला जो मन है वह ब्रह्मानन्द के स्पर्श से मग्न होकर कभी भी नहीं उठता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यः प्रव्रज्य गृहात् पूर्वं त्रिवर्गावपनात् पुनः ।
यदि सेवेत तान्भिक्षुः स वै वान्ताश्यपत्रपः ॥३६॥

पदच्छेद— यः प्रव्रज्य गृहात् पूर्वम् त्रिवर्ग आवपनात् पुनः ।
यदि सेवेत तान् भिक्षुः सः वै वान्ताशी अपत्रपः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	यदि	९.	यदि
प्रव्रज्य	७.	संन्यास लेकर	सेवेत	११.	सेवन करता है तो
गृहात्	६.	घर से	तान्	१०.	उन काम, धर्म अर्थ का
पूर्वम्	३.	पहले	भिक्षुः	२.	संन्यासी
त्रिवर्ग	४.	तीनों धर्म, अर्थ, काम के	सः वै	१२.	वह निश्चित रूप से
आवपनात्	५.	मूल कारण	वान्ताशी	१३.	उगला हुआ खाने वाला
पुनः ।	८.	फिर	अपत्रपः ॥	१४.	निर्लज्ज है

श्लोकार्थ—जो संन्यासी पहले तीनों धर्म, अर्थ, काम के मूल कारण घर से संन्यास लेकर फिर यदि उन धर्म, काम और अर्थ का सेवन करता है तो वह निश्चित ही उगला हुआ खाने वाला निर्लज्ज है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

यैः स्वदेहः स्मृतो नात्मा मर्त्यो विट्कृमिभस्मसात् ।
त एनमात्मसात्कृत्वा श्लाघयन्ति ह्यसत्तमाः ॥३७॥

पदच्छेद— यैः स्वदेहः स्मृतः न आत्मा मर्त्यः विट्कृमि भस्मसात् ।
ते एनम् आत्मसात् कृत्वा श्लाघयन्ति हि असत्तमाः ॥

शब्दार्थ—

यैः	१.	जिन्होंने	भस्मसात्	७.	और राख
स्व	२.	अपने	ते	६.	वे
देहः	३.	शरीर को	एनम्	११.	इस शरीर को
स्मृतः	८.	समझ लिया था	आत्मसात्	१२.	आत्मा
न आत्मा	४.	अनात्मा	कृत्वा	१३.	मानकर
मर्त्याः	५.	मरने वाला	श्लाघयन्ति	१४.	प्रशंसा करते हैं
विट्कृमि	६.	विष्ठा, कीड़ा	हि असत्तमाः ॥	१०.	ही मूर्ख

श्लोकार्थ—जिन्होंने अपने शरीर को अनात्मा, मरने वाला, विष्ठा, कीड़ा और राख समझ लिया है। वे ही मूर्ख इस शरीर को आत्मा मानकर प्रशंसा करते हैं ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

गृहस्थस्य क्रियात्यागो व्रतत्यागो वटोरपि ।
तपस्विनो ग्रामसेवा भिक्षोरिन्द्रियलोलता ॥३८॥

पदच्छेद— **गृहस्थस्य क्रिया त्यागः व्रत त्यागः वटोः अपि ।**
तपस्विनः ग्रामसेवा भिक्षोः इन्द्रिय लोलता ॥

शब्दार्थ—

गृहस्थस्य	१.	गृहस्थ मनुष्य का	**अपि**	५.	भी
क्रिया	२.	कर्म को	**तपस्विनः**	८.	तपस्वी को
त्यागः	३.	छोड़ देना (और)	**ग्रामसेवा**	६.	ग्राम का सेवन करना
व्रत	६.	व्रत को	**भिक्षोः**	१०.	संन्यासी का
त्यागः	७.	छोड़ना	**इन्द्रिय**	११.	इन्द्रिय
वटोः	४.	ब्रह्मचारी का	**लोलता ॥**	१२.	लोलुप होना (ये कलंक हैं)

श्लोकार्थ—गृहस्थ मनुष्य का कर्म को छोड़ देना, ब्रह्मचारी का भी व्रत को छोड़ना, तपस्वी को ग्राम का सेवन करना और संन्यासी का इन्द्रिय लोलुप होना ये कलंक हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

आश्रमापसदा ह्येते खल्वाश्रमविडम्बकाः ।
देवमायाविमूढांस्तानुपेक्षेतानुकम्पया ॥३९॥

पदच्छेद— आश्रम अपसदाः हि एते खलु आश्रम विडम्बकाः ।
देवमाया विमूढान् तान् उपेक्षेत अनुकम्पया ॥

शब्दार्थ—

आश्रम	२. आश्रम का	देव	७. भगवान् की
अपसदाः	३. ढोंग करने वाले मनुष्य	माया	८. माया से
हि एते	१. ये	विमूढान्	९. मोहित
खलु	४. निश्चित रूप से	तान्	१०. उन मूर्खों की
आश्रम	५. आश्रमों को	उपेक्षयेत	१२. उपेक्षा कर देनी चाहिये
विडम्बकाः ।	६. बिगाड़ने वाले हैं	अनुकम्पया ॥	११. दया करके

श्लोकार्थ—ये आश्रम का ढोंग करने वाले मनुष्य निश्चित रूप से आश्रमों को बिगाड़ने वाले हैं। भगवान् की माया से मोहित उन मूर्खों की दया करके उपेक्षा कर देनी चाहिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

आत्मानं चेद् विजानीयात् परं ज्ञानधुताशयः ।
किमिच्छन्कस्य वा हेतोर्देहं पुष्णाति लम्पटः ॥४०॥

पदच्छेद— आत्मानम् चेद् विजानीयात् परम् ज्ञान धुत आशयः ।
किम् इच्छन् कस्य वा हेतोः देहम् पुष्णाति लम्पटः ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	६. आत्मा को	किम् इच्छन्	८. किसको इच्छा करेगा
चेद्	५. यदि (ऐसा मनुष्य)	कस्य	१०. किसके
विजानीयात्	७. जान लेता है तो	वा	९. अथवा
परम्	३. अत्यन्त	हेतोः	११. लिये
ज्ञान	१. ज्ञान से (जिसका)	देहम्	१३. शरीर का
धुत	४. निर्मल हो गया है	पुष्णाति	१४. पोषण करेगा
आशयः ।	२. चित्त	लम्पटः ॥	१२. इन्द्रिय लोलुप होकर

श्लोकार्थ—ज्ञान से जिसका चित्त अत्यन्त निर्मल हो गया है, यदि ऐसा मनुष्य आत्मा को जान लेता है तो किसकी इच्छा करेगा ? अथवा किसके लिये इन्द्रियलोलुप होकर शरीर का पोषण करेगा ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

आहुः शरीरं रथमिन्द्रियाणि हयानभीषून् मन इन्द्रियेशम्।
वर्त्मानि मात्रा धिषणां च सूतं सत्त्वं बृहद् बन्धुरमीशसृष्टम् ॥४१॥

पदच्छेद— आहुः शरीरम् रथम् इन्द्रियाणि हयान् अभीषून् मनः इन्द्रिय ईशम्।
वर्त्मानि मात्रा धिषणाम् च सूतम् सत्त्वं बृहद् बन्धुरम् ईश सृष्टम् ॥

शब्दार्थ—					
आहुः	१८.	कहा गया है	वर्त्मनि	१०.	मार्ग
शरीरम्	१.	शरीर को	मात्रा	९.	शब्दादि विषय को
रथम्	२.	रथ	धिषणाम्	११.	बुद्धि को
इन्द्रियाणि	३.	इन्द्रियों को	च सूतम्	१२.	और सारथी
हयान्	४.	घोड़े	सत्त्वम्	१३.	चित्त को
अभीषून्	८.	लगाम	बृहत्	१६.	विशाल
मनः	७.	मन को	बन्धुरम्	१७.	बाँधने की रस्सी
इन्द्रिय	५.	इन्द्रियों के	ईश	१४.	भगवान् के द्वारा
ईशम्।	६.	स्वामी	सृष्टम् ॥	१५.	निर्मित

श्लोकार्थ—शरीर को रथ, इन्द्रियों को घोड़े, इन्द्रियों के स्वामी मन को लगाम, शब्दादि विषय को मार्ग, बुद्धि को सारथी और चित्त को भगवान् के द्वारा निर्मित विशाल बाँधने की रस्सी कहा गया है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अक्षं दशप्राणमधर्मधर्मौ चक्रेऽभिमानं रथिनं च जीवम्।
धनुर्हि तस्य प्रणवं पठन्ति शरं तु जीवं परमेव लक्ष्यम् ॥४२॥

पदच्छेद— अक्षम् दश प्राणम् अधर्म धर्मौ चक्रे अभिमानम् रथिनम् च जीवम्।
धनुर्हि तस्य प्रणवम् पठन्ति शरम् तु जीवम् परम् एव लक्ष्यम् ॥

शब्दार्थ—					
अक्षम्	२.	धुरी	धनुर्हि	११.	धनुष
दश प्राणम्	१.	दश प्राणों को	तस्य	१०.	उसका
अधर्म धर्मौ	३.	अधर्म और धर्म को	प्रणवम्	९.	ओंकार को ही
चक्रे	४.	पहिये	पठन्ति	१२.	कहते हैं
अभिमानम्	६.	अभिमानी	शरम् तु	१४.	बाण है (और)
रथिनम्	८.	रथी	जीवम्	१३.	जीवात्मा
च	५.	और	परम् एव	१५.	परमात्मा ही
जीवम्।	७.	जीव को	लक्ष्यम् ॥	१६.	लक्ष्य है

श्लोकार्थ—दश प्राणों को धुरी, अधर्म और धर्म को पहिये और अभिमानी जीव को रथी, ओंकार को ही उसका धनुष कहते है। जीवात्मा बाण है और परमात्मा ही लक्ष्य है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

रागो द्वेषश्च लोभश्च शोकमोहौ भयं मदः ।
मानोऽवमानोऽसूया च माया हिंसा च मत्सरः ॥४३॥

पदच्छेद— रागः द्वेषः च लोभः च शोक मोहौ भयम् मदः ।
मानः अवमानः असूया च माया हिंसा च मत्सरः ॥

शब्दार्थ—

रागः	१. राग	मानः	९. मान
द्वेषः	२. द्वेष	अवमानः	१०. अपमान
च	४. और	असूया	१२. ईर्ष्या
लोभः	३. लोभ	च	११. और
च	८. और	माया	१३. छल
शोक	५. शोक	हिंसा	१४. हिंसा
मोहौ	६. मोह	च	१५. और
भयम् मदः ।	७. डर, घमंड	मत्सरः ॥	१६. डाह (ये जीव के शत्रु हैं)

श्लोकार्थ—राग, द्वेष, लोभ और शोक, मोह, डर और घमंड, मान, अपमान और ईर्ष्या, छल, हिंसा और डाह ये जीव के शत्रु हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

रजः प्रमादः क्षुन्निद्राशत्रवस्त्वेवमादयः ।
रजस्तम प्रकृतयः सत्त्वप्रकृतयः क्वचित् ॥४४॥

पदच्छेद— रजः प्रमादः क्षुत् निद्रा शत्रवः तु एवम् आदयः ।
रजः तमः प्रकृतयः सत्त्व प्रकृतयः क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

रजः	१. तृष्णा	रजः	७. रजोगुण और
प्रमादः	२. प्रमाद	तमः	८. तमोगुण प्रधान
क्षुत् निद्रा	३. भूख, नींद	प्रकृतयः	९. वृत्तियाँ अधिक हैं
शत्रवः	६. शत्रु हैं (कहीं पर)	सत्त्व	११. सत्त्व गुण प्रधान
तु एवम्	४. इस प्रकार के	प्रकृतयः	१२. वृत्तियां अधिक हैं
आदयः ।	५. ये सब जीव के	क्वचित् ॥	१०. कहीं

श्लोकार्थ—तृष्णा, प्रमाद, भूख, नींद इस प्रकार के ये सब जीव के शत्रु हैं । कहीं पर रजोगुण और तमोगुण प्रधान वृत्तियां अधिक हैं । कहीं सत्त्वगुण प्रधान वृत्तियां अधिक हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यावन्नृकायरथमात्मवशोपकल्पं धत्ते गरिष्ठचरणार्चनया निशातम् ।
ज्ञानासिमच्युतबलो दधदस्तशत्रुः स्वाराज्यतुष्ट उपशान्त इदं विजह्यात् ॥४५॥

पदच्छेद **यावत् नृकाय रथम् आत्मवश उपकल्पम् धत्ते गरिष्ठ चरण अर्चनया निशातम् ।**
ज्ञान असिम् अच्युत बलः दधत् अस्तशत्रुः स्वाराज्य तुष्टः उपशान्तः इदम् विजह्यात् ॥

शब्दार्थ—यावत्	१.	जब-तक	ज्ञान असिम्	९.	ज्ञानरूपी तलवार को
नृकाय	२.	मनुष्य शरीर रूपी	अच्युत	११.	भगवान् कृष्ण का
रथम्	३.	रथ	बलः	१२.	सहारा
आत्मवश	४.	अपने वश में	दधत्	१३.	लेकर
उपकल्पम्	५.	विद्यमान रहता है	अस्तशत्रुः	१४.	शत्रुओं का नाश करे
धत्ते	१०.	धारण करे (और)	स्वाराज्य	१५.	अपने राज्य सिंहासन पर
गरिष्ठ	६.	गुरुजनों के	तुष्टः	१६.	सन्तुष्ट होकर विराजे
चरण अर्चनया	७.	चरणों की सेवा से	उपशान्तः	१७.	अत्यन्त शान्त भाव से
निशातम् ।	८.	सान धराई हुई	इदम् विजह्यात् ॥	१८.	इस शरीर को छोड़ दे

श्लोकार्थ—जब-तक मनुष्य शरीररूपी रथ अपने वश में विद्यमान है । तब-तक गुरुजनों के चरणों की सेवा से सान धराई हुई ज्ञानरूपी तलवार को धारण करे। और भगवान् श्रीकृष्ण का सहारा लेकर शत्रुओं का नाश करे । तथा सन्तुष्ट होकर अपने राज्य सिंहासन पर विराजे । और अत्यन्त शान्त भाव से इस शरीर को छोड़ दे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

नो चेत् प्रमत्तमसदिन्द्रियवाजिसूता नीत्वोत्पथं विषयदस्युषु निक्षिपन्ति ।
ते दस्यवः सहयसूतममुं तमोऽन्धे संसारकूपउरुमृत्युभये क्षिपन्ति ॥४६॥

पदच्छेद— **नो चेत् प्रमत्तम् असत् इन्द्रिय वाजिसूताः नीत्वा उत्पथम् विषय दस्युषु निक्षिपन्ति ।**
ते दस्यवः सहय सूतम् अमुम् तमः अन्धे संसार कूपे उरुमृत्युभये क्षिपन्ति ॥

शब्दार्थ—नोचेत्	१.	नहीं तो	ते दस्यवः	१०.	वे डाकू
प्रमत्तम्	२.	प्रमाद करने पर जीव को	सहय	१२.	घोड़ों सहित
असत् इन्द्रिय	३.	दुष्ट इन्द्रिय रूपी	सूतम्	११.	सारथी (और)
वाजिसूताः	४.	घोड़े और बुद्धिरूपी सारथी	अमुम्	१३.	इस जीव को
नीत्वा	६.	ले जाकर	तमः	१४.	घोर
उत्पथम्	५.	उल्टे रास्ते	अन्धे	१५.	अन्धकारमय
विषय	७.	विषय रूपी	संसार कूपे	१७.	संसाररूपी कुयें में
दस्युषु	८.	लुटेरों के हाथ में	उरुमृत्युभये	१६.	मृत्यु से अत्यन्त डरावने
क्षिपन्ति ।	९.	डाल देते हैं	क्षिपन्ति ॥	१८.	गिरा देते हैं

श्लोकार्थ—नहीं तो प्रमाद करने पर जीव को दुष्ट इन्द्रिय रूपी घोड़े और बुद्धिरूपी सारथी उल्टे रास्ते ले जाकर विषयरूपी लुटेरों के हाथ में डाल देते हैं । वे डाकू सारथी और घोड़ों सहित इस जीव को घोर अन्धकारमय मृत्यु से अत्यन्त डरावने संसाररूपी कुयें में गिरा देते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म वैदिकम् ।
आवर्तेत प्रवृत्तेन निवृत्तेनाश्नुतेऽमृतम् ॥४७॥

पदच्छेद— प्रवृत्तम् च निवृत्तम् च द्विविधम् कर्म वैदिकम् ।
आवर्तेत प्रवृत्तेन निवृत्तेन अश्नुते अमृतम् ॥

शब्दार्थ—

प्रवृत्तम्	१. प्रवृत्तिपरक	आवर्तेत	७. संसार में लौट आता है
च निवृत्तम्	२. और निवृत्तिपरक ये	प्रवृत्तेन	६. प्रवृत्तिपरक कर्म के द्वारा मनुष्य
च	५. और (जिनमें)	निवृत्तेन	८. निवृत्तिपरक कर्म के द्वारा
द्विविधम्	३. दो प्रकार के	अश्नुते	१०. प्राप्त करता है
कर्म वैदिकम् ।	४. कर्म वैदिक हैं	अमृतम् ॥	९. मोक्ष को

श्लोकार्थ—प्रवृत्ति परक और निवृत्ति परक ये दो प्रकार के कर्म वैदिक हैं। जिनमें प्रवृत्ति परक कर्म के द्वारा मनुष्य संसार में लौट आता है और निवृत्ति परक कर्म के द्वारा मोक्ष को प्राप्त करता है ॥

अष्टाचत्वारिंशः श्लोकः

हिंस्रं द्रव्यमयं काम्यमग्निहोत्राद्यशान्तिदम् ।
दर्शश्च पूर्णमासश्च चातुर्मास्यं पशुः सुतः ॥४८॥

पदच्छेद— हिंस्रम् द्रव्यमयम् काम्यम् अग्निहोत्र आदि अशान्तिदम् ।
दर्शः च पूर्णमासः च चातुर्मास्यम् पशुः सुतः ॥

शब्दार्थ—

हिंस्रम्	१. हिंसामय कर्म	दर्शः	८. अमावस्या
द्रव्यमयम्	२. द्रव्यमय कर्म	च	७. और
काम्यम्	३. काम्यकर्म	पूर्णमासः च	९. पूर्णमास और
अग्निहोत्र	४. अग्निहोत्र	चातुर्मास्यम्	१०. चातुर्मास्य
आदि	५. आदि	पशुः	११. पशुयाग
अशान्तिदम् ।	६. अशान्ति देने वाले हैं	सुतः ॥	१२. सोमयाग

श्लोकार्थ—हिंसामय कर्म, द्रव्यमय कर्म, काम्य कर्म, अग्निहोत्र आदि अशान्ति देने वाले हैं। और अमावस्या, पूर्णमास और चातुर्मास्य, पशुयाग सोमयाग ये सब इष्ट पूर्त कर्म हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

एतदिष्टं प्रवृत्ताख्यं हुतं प्रहुतमेव च।
पूर्तं सुरालयारामकूपाजीव्यादिलक्षणम् ॥४९॥

पदच्छेद— एतत् इष्टम् प्रवृत्त आख्यम् हुतम् प्रहुतम् एव च।
पूर्तम् सुर आलय आराम कूप आजीव्य आदिलक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१. यह	पूर्तम्	१४. ये पूर्त कर्म हैं
इष्टम्	७. इष्ट कर्म हैं	सुर	८. देव
प्रवृत्त	५. प्रवृत्त	आलय	९. मन्दिर
आख्यम्	६. नामक	आराम	१०. बगीचा
हुतम्	२. वैश्वदेव	कूप	११. कूआँ
प्रहुतम्	४. बलिहरण	आजीव्य।दि	१२. प्याऊ आदि
एव च।	३. और	लक्षणम् ॥	१३. लगाना

श्लोकार्थ—यह वैश्वदेव और बलि हरण प्रवृत्त नामक इष्ट कर्म हैं। देव-मन्दिर, बगीचा, कूआँ, प्याऊ आदि लगाना ये पूर्त कर्म हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

द्रव्यसूक्ष्मविपाकश्च धूमो रात्रिरपक्षयः।
अयनं दक्षिणं सोमो दर्श ओषधिवीरुधः ॥५०॥

पदच्छेद— द्रव्य सूक्ष्म विपाकः च धूमः रात्रिः अपक्षयः।
अयनम् दक्षिणम् सोमः दर्शः ओषधि वीरुधः ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	१. द्रव्यों के	अयनम्	८. अयन को प्राप्त करके
सूक्ष्म	२. सूक्ष्म भाग से बना	दक्षिणम्	७. दक्षिण
विपाकः	३. शरीर धारण करके	सोमः	१०. चन्द्रमा के समान क्षीण होकर
च	६. और	दर्शः	९. अमावस्या के
धूमरात्रिः	४. धूम रात्रि	ओषधि	११. ओषधि और
अपक्षयः।	५. कृष्ण पक्ष	वीरुधः ॥	१२. लताओं में परिणत हो जाता है

श्लोकार्थ—प्रवृत्ति मार्गी मनुष्य द्रव्यों के सूक्ष्म भाग से बना शरीर धारण करके धूम रात्रि, कृष्ण पक्ष और दक्षिण अयन को प्राप्त करके अमावस्या के चन्द्रमा के समान क्षीण होकर ओषधि और लताओं में परिणत हो जाता है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

अन्नं रेत इति क्ष्मेश पितृयानं पुनर्भवः ।

एकैकश्येनानुपूर्वं भूत्वा भूत्वेह जायते ॥५१॥

पदच्छेद— अन्नम् रेत इति क्ष्मेश पितृयानम् पुनः भवः ।
एक एक श्येन अनुपूर्वम् भूत्वा-भूत्वा इह जायते ॥

शब्दार्थ—

अन्नम्	२.	अन्न और	एक-एक	७.	एक-एक
रेतः	३.	बीजरूप में	श्येन	८.	श्येन याग आदि के
इति	४.	परिणत होकर	अनुपूर्वम्	९.	अनुसार
क्ष्मेश	१.	हे राजन् !	भूत्वा भूत्वा	१०.	शरीर धारण कर कर के
पितृयानम्	५.	पितृयान मार्ग से	इह	११.	इस लोक में
पुनः भवः ।	६.	पुनः जन्म लेता है	जायते ॥	१२.	जन्म लेता है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! अन्न और बीज रूप में परिणत होकर पितृयान मार्ग से पुनः जन्म लेता है । एक-एक श्येन याग आदि के अनुसार शरीर धारण कर करके इस लोक में जन्म लेता है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

निषेकादिश्मशानान्तैः संस्कारैः संस्कृतो द्विजः ।

इन्द्रियेषु क्रियायज्ञान् ज्ञानदीपेषु जुह्वति ॥५२॥

पदच्छेद— निषेक आदि श्मशान अन्तैः संस्कारैः संस्कृतः द्विजः ।
इन्द्रियेषु क्रिया यज्ञान् ज्ञान दीपेषु जुह्वति ॥

शब्दार्थ—

निषेक	१.	गर्भाधानसे	इन्द्रियेषु	९.	इन्द्रियों में
आदि	२.	लेकर	क्रिया	१०.	कर्म
श्मशान अन्तैः	३.	अन्त्येष्टि तक	यज्ञान्	११.	यज्ञों का
संस्कारैः	४.	संस्कारों से	ज्ञान	७.	विषयों का ज्ञान
संस्कृतः	५.	संस्कृत किया गया	दीपेषु	८.	कराने वाले
द्विजः ।	६.	द्विज	जुह्वति ॥	१२	हवन कर दे

श्लोकार्थ गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक संस्कारों से संस्कृत किया गया द्विज विषयं का ज्ञान कराने वाले इन्द्रियों में कर्म यज्ञों को हवन कर दे ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

इन्द्रियाणि मनस्यूर्मौ वाचि वैकारिकं मनः ।
वाचं वर्णसमाम्नाये तमोङ्कारे स्वरे न्यसेत् ।
ओङ्कारं विन्दौ नादे तं तं तु प्राणे महत्यमुम् ॥५३॥

पदच्छेद— इन्द्रियाणि मनसि ऊर्मौ वाचि वैकारिकम् मनः ।
वाचम् वर्ण समाम्नाये तमः ओङ्कारे स्वरे न्यसेत् ।
ओङ्कारम् विन्दौ नादे तम् तम् तु प्राणे महति अमुम् ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	१.	इन्द्रियों को	**ओङ्कारे**	११.	ओङ्कार में
मनसि	२.	मन में	**स्वरे**	१०.	स्वररूपी
ऊर्मौ	५.	परा	**न्यसेत् ।**	१८.	लीन कर दे
वाचि	६.	वाणी में	**ओङ्कारम् विन्दौ**	१२.	ओंकार को विन्दु में
वैकारिकम्	३.	वेकारिक	**नादे**	१४.	नाद में
मनः ।	४.	मन को	**तम्-तम्**	१३.	उस विन्दु को
वाचम् वर्ण	७.	वाणी को अक्षरों के	**तु प्राणे**	१५.	नाद को प्राण में और
समाम्नाये	८.	समूह में	**महति**	१७.	ब्रह्म में
तम्	९.	उस अक्षर समूह को	**अमुम् ॥**	१६.	प्राण को

श्लोकार्थ—इन्द्रियों को मन में, वैकारिक मन को परावाणी में, वाणी को अक्षरों के समूह में, उस अक्षरसमूह को स्वररूपी ओंकार में, ओंकार को विन्दु में, उस विन्दु को नाद में, नाद को प्राण में और प्राण को ब्रह्म में लीन कर दे ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

अग्निः सूर्यो दिवा प्राह्णः शुक्लो राकोत्तरं स्वराट् ।
विश्वश्च तैजसः प्राज्ञस्तुर्य आत्मा समन्वयात् ॥५४॥

पदच्छेद— अग्निः सूर्यः दिवा प्राह्णः शुक्लः राका उत्तरम् स्वराट् ।
विश्वः च तैजसः प्राज्ञः तुर्यः आत्मा समन्वयात् ॥

शब्दार्थ—

अग्निः सूर्यः	१.	अग्नि, सूर्य	**विश्वः च**	७.	फिर वह क्रमशः विश्व
दिवा प्राह्णः	२.	दिन सायंकाल	**तैजसः**	८.	तैजस
शुक्लः	३.	शुक्लपक्ष	**प्राज्ञः**	९.	प्राज्ञ और
राका	४.	पूर्णिमा	**तुर्यः**	१०.	तुरीय होकर
उत्तरम्	५.	उत्तरायण के अभिमानी	**आत्मा**	११.	आत्मा हो जाता है
स्वराट् ।	६.	ब्रह्मलोक में देवता के पास	**समन्वयात् ॥**	१२.	यही मोक्ष है

श्लोकार्थ—वह ज्ञानी अग्नि, सूर्य, दिन, सायंकाल, शुक्लपक्ष. पूर्णिमा, उत्तरायण के अभिमानी देवता के पास जाकर ब्रह्मलोक में पहुँचता हैं । फिर वह क्रमशः तैजस, प्राज्ञ और तुरीय होकर आत्मा हो जाता है । यही मोक्ष है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

देवयानमिदं प्राहुर्भूत्वा भूत्वानुपूर्वशः ।
आत्मयाज्युपशान्तात्मा ह्यात्मस्थो न निवर्तते ॥५५॥

पदच्छेद— देवयानम् इदम् प्राहुः भूत्वा भूत्वा अनुपूर्वशः ।
आत्मयाजी उपशान्त आत्मा हि आत्मस्थः न निवर्तते ॥

शब्दार्थ—

देवायनम्	२.	देवयान मार्ग	आत्मयाजी	७.	आत्मोपासक व्यक्ति
इदम्	१	इसे	उपशान्त आत्मा	८.	शान्तस्वरूप होकर
प्राहुः	३.	कहते हैं	हि आत्मस्थः	९.	आत्मा में स्थित हो जाता है फिर
भूत्वा	५.	जा	न	१०.	नहीं
भूत्वा	६	जाकर	निवर्तते ॥	११.	लौटता है
अनुपूर्वशः	४.	क्रमशः इस मार्ग में			

श्लोकार्थ—इसे देवयान मार्ग कहते हैं। क्रमशः इस मार्ग में जाकर आत्मोपासक व्यक्ति शान्त स्वरूप होकर आत्मा में स्थित हो जाता है फिर नहीं लौटता है ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

य एते पितृदेवानामयने वेदनिर्मिते ।
शास्त्रेण चक्षुषा वेद जनस्थोऽपि न मुह्यति ॥५६॥

पदच्छेद— यः एते पितृ देवानाम् अयने वेद निर्मिते ।
शास्त्रेण चक्षुषा वेद जनस्थः अपि न मुह्यति ॥

शब्दार्थ—

यः	७.	जो	शास्त्रेण	८.	शास्त्र रूपी
एते	१.	ये	चक्षुषा	९.	दृष्टि से (इन्हें)
पितृ	२.	पितृयान और	वेद	१०.	जान लेता है
देवयानम्	३.	देवायान	जनस्थः	११.	वह शरीर में स्थित रहता हुआ
अयने	४.	मार्ग	अपि	१२.	भी
वेद	५.	वेद में	न	१३.	नहीं
निर्मिते ।	६.	निर्मित है	मुह्यति ॥	१४.	मोहित होता है

श्लोकार्थ—ये पितृयान और देवयान मार्ग वेद में निर्मित हैं। जो शास्त्र रूपी दृष्टि से इन्हें जान लेता है वह शरीर में स्थित रहता हुआ भी मोहित नहीं होता है।

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

आदावन्ते जनानां सद् बहिरन्तः परावरम् ।
ज्ञानं ज्ञेयं वचो वाच्यं तमो ज्योतिस्त्वयं स्वयम् ॥५७॥

पदच्छेद— आदौ अन्ते जनानाम् सत् बहिः अन्तः पर अवरम् ।
ज्ञानम् ज्ञेयम् वचः वाच्यम् तमः ज्योतिः तु अयम् स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

आदौ	३. पहले और	ज्ञानम्	९. जानना
अन्ते	४. अन्त में	ज्ञेयम्	१०. जानने का विषय
जनानाम्	१. शरीरों के	वचः	११. वाणी
सत्	२. विद्यमान होने से	वाच्यम्	१२. वाणी का विषय
बहिः	५. बाहर	तमः	१३. अन्धकार (और)
अन्तः	६. भीतर	ज्योतिः	१४. प्रकाश
पर	७. ऊँचा	तु अयम्	१६. ही यह है
अवरम् ।	८. नीचा	स्वयम् ॥	१५. स्वयम्

श्लोकार्थ—शरीरों के विद्यमान होने के पहले और अन्त में बाहर, भीतर, ऊँचा-नीचा जानना, जानने का वियष, वाणी, वाणी का विषय अन्धकार और प्रकाश स्वयम् ही यह है ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

आबाधितोऽपि ह्याभासो यथा वस्तुतया स्मृतः ।
दुर्घटत्वादैन्द्रियकं तद्वदर्थविकल्पितम् ॥५८॥

पदच्छेद— आबाधितः अपि हि आभासः यथा वस्तुतया स्मृतः ।
दुर्घटत्वात् ऐन्द्रियकम् तत् वत् अर्थ विकल्पितम् ॥

शब्दार्थ—

आबाधितः	२. बाधित होने पर	दुर्घटत्वात्	१०. असम्भव होने पर भी
अपि	३. भी	ऐन्द्रियकम्	११. इन्द्रियों से दीखने वाला है
हि आभासः	५. प्रतीत होने वाला	तत्-वत्	७. उसी प्रकार
यथा	१. जिस प्रकार (दर्पणादि में बिम्ब)	अर्थ	८. वस्तुओं का
वस्तुतया	४. वस्तु के रूप में	विकल्पितम् ॥	९. भेद-भाव
स्मृतः ।	६. कहा गया है		

श्लोकार्थ—जिस प्रकार दर्पणादि में बिम्ब बाधित होने पर भी वस्तु के रूप में प्रतीत होने वाला कहा गया है, उसी प्रकार वस्तुओं का भेद-भाव असम्भव होने पर भी इन्द्रियों से दिखाई देने वाला है ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

क्षित्यादीनामिहार्थानां छाया न कतमापि हि ।
न संघातो विकारोऽपि न पृथङ् नान्वितो मृषा ॥५९॥

पदच्छेद— क्षिति आदीनाम् इह अर्थानाम् छाया न कतमा अपि हि ।
न संघातः विकारः अपि न पृथक् न अन्वेति मृषा ॥

शब्दार्थ—

क्षिति	१.	पृथ्वी	न	९.	नहीं (पञ्चभूतों का)
आदीनाम्	२.	आदि से उत्पन्न	संघात	१०.	समूह (और)
इह	३.	इस शरीर में	विकारः	११.	परिणाम
अर्थानाम्	४.	पञ्चभूतों की	अपि	१२.	ही दिखाई देता है
छाया	६.	छाया	न	१४.	नहीं
न	७.	नहीं	पृथक्	१५.	अलग है और न
कतमा	५.	कोई	न अन्वेति	१३.	नहीं समाया हुआ है
अपि हि ।	८.	भी दिखाई देती है	मृषा ॥	१६.	मिथ्या है

श्लोकार्थ—पृथ्वी आदि से उत्पन्न इस शरीर में पञ्चभूतों की कोई छाया भी नहीं दिखाई देती हैं। और नहीं पञ्चभूतों का समूह और परिणाम ही दिखाई देता है और नहीं समाया हुआ है। नहीं अलग है और न मिथ्या है ॥

षष्टितमः श्लोकः

धातवोऽवयवित्वाच्च तन्मात्रावयवैर्विना ।
न स्युर्ह्यसत्यवयविन्यसन्नवयवोऽन्ततः ॥६०॥

पदच्छेद— धातवः अवयवित्वात् च तन्मात्रा अवयवैः विना ।
न स्युः हि असति अवयविनि असन् अवयवः अन्ततः ॥

शब्दार्थ—

धातवः	१.	(ये शरीर के कारण रूप) पञ्चभूत	न	६.	नहीं है
अवयवित्वात्	२.	अवयवी होने के कारण	स्युः	१०.	अस्तित्व न मिलने पर
च	७.	और	हि असति	८.	अवयवों के अतिरिक्त
तन्मात्रा	३.	सूक्ष्मभूत	अवयविनि	९.	अवयवी का
अवयवैः	४.	अवयवों से	असन्	१३.	असत्य है
विना ।	५.	भिन्न	अवयवः	१२.	अवयव भी
			अन्ततः ॥	११.	वस्तुतः

श्लोकार्थ—ये शरीर के कारण रूप पञ्चभूत अवयवी होने के कारण सूक्ष्मभूत अवयवों से भिन्न नहीं है। और अवयवों के अतिरिक्त अवयवी का अस्तित्व न मिलने पर वस्तुतः अवयव भी असत्य है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

स्यात् सादृश्यभ्रमस्तावद् विकल्पे सति वस्तुनः ।
जाग्रत्स्वापौ यथा स्वप्ने तथा विधिनिषेधता ॥६१॥

पदच्छेद— स्यात् सादृश्य भ्रमः तावत् विकल्पे सति वस्तुनः ।
जाग्रत् स्वापौ यथा स्वप्ने तथा विधि निषेधता ॥

शब्दार्थ—

स्यात्	७. हो सकता है	**जाग्रत्**	९. जाग्रत् अवस्था और
सादृश्य	५. समानता का	**स्वापौ**	१०. स्वप्नावस्था की प्रतीति
भ्रमः	६. भ्रम भी	**यथा**	८. जिस प्रकार
तावत्	४. तब-तक	**स्वप्ने**	११. स्वप्न में होती है
विकल्पे	२. वस्तुओं का भेदभाव	**तथा**	१२. उसी प्रकार
सति	३. होने पर	**विधि**	१३. वेद विहित और
वस्तुनः ।	१. परम तत्त्व में अनेक	**निषेधता॥**	१४. वेद विरुद्ध कार्य की भी प्रतीति होती है

श्लोकार्थ—परमतत्त्व में अनेक वस्तुओं का भेद भाव होने पर तब तक समानता का भ्रम भी हो सकता है। जिस प्रकार जाग्रत् अवस्था और स्वप्नावस्था की प्रतीति स्वप्न में होती है। उसी प्रकार वेद विहित और वेद विरुद्ध कर्म की प्रतीति होती है

द्विषष्टितमः श्लोकः

भावाद्वैतं क्रियाद्वैतं द्रव्याद्वैतं तथाऽऽत्मनः ।
वर्तयन्स्वानुभूत्येह त्रीन्स्वप्नान्धुनुते मुनिः ॥६२॥

पदच्छेद— भाव अद्वैतम् क्रिया अद्वैतम् द्रव्य अद्वैतम् तथा आत्मनः ।
वर्तयन् स्व अनुभूत्या इह त्रीन् स्वप्नान् धुनुते मुनिः ॥

शब्दार्थ—

भाव	८. भाव	**वर्तयन्**	१४. साक्षात्कार करते हुये तीन प्रकार के
अद्वैतम्	९. अद्वैत	**स्व**	३. अपनी
क्रिया	१०. क्रिया	**अनुभूत्या**	४. अनुभूति से
अद्वैतम्	११. अद्वैत	**इह**	५. इस संसार में
द्रव्य	१२. द्रव्य	**त्रीन्**	७. तीन प्रकार के (अद्वैतों का)
अद्वैतम्	१३. अद्वैत का	**स्वप्नान्**	१५. स्वप्नों को
तथा	२. उसी प्रकार	**धुनुते**	१६. मिटा देते हैं
आत्मनः ।	६. आत्मा के	**मुनिः ॥**	१. मननशील व्यक्ति

श्लोकार्थ—मननशील व्यक्ति उसी प्रकार अपनी अनुभूति से इस संसार में आत्मा के तीन प्रकार के अद्वैतों का भाव अद्वैत, क्रिया अद्वैत, द्रव्य अद्वैत का साक्षात्कार करते हुये तीन प्रकार के (जाग्रत्-स्वप्न और सुषुप्ति) इन स्वप्नों को मिटा देते हैं ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

कार्य कारणवस्त्वैक्यमर्शनं पटतन्तुवत् ।
अवस्तुत्वाद् विकल्पस्य भावाद्वैतं तदुच्यते ॥६३॥

पदच्छेद— कार्य कारण वस्तु ऐक्य मर्शनम् पटतन्तु वत् ।
अवस्तुत्वात् विकल्पस्य भाव अद्वैतम् तत् उच्यते ॥

शब्दार्थ—

कार्य	६.	कार्य	अवस्तु	४.	वास्तविक न
कारण	७.	कारण रूप	त्वात्	५.	होने के कारण
वस्तु	८.	वस्तु की	विकल्पस्य	३.	भेद-भाव को
ऐक्य	९.	एकता का	भाव	१२.	भाव
मर्शनम्	१०.	विचार करना	अद्वैतम्	१३.	अद्वैत
पटतन्तु	१.	वस्त्र और सूत के	तत्	११.	वह
वत् ।	२.	समान	उच्यते ॥	१४.	कहलाता है

श्लोकार्थ—वस्त्र और सूत के समान भेद-भाव को वस्तविक न होने के कारण कार्य कारणरूप वस्तु की एकता का विचार करना वह भावाद्वैत कहलाता है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

यद् ब्रह्मणि परे साक्षात् सर्वकर्मसमर्पणम् ।
मनोवाक्तनुभिः पार्थ क्रियाद्वैतं तदुच्यते ॥६४॥

पदच्छेद— यत् ब्रह्मणि परे साक्षात् सर्वं कर्म समर्पणम् ।
मनः वाक् तनुभिः पार्थ क्रिया अद्वैतम् तत् उच्यते ॥

शब्दार्थ—

यत्	८.	जो	मनः	२.	मन
ब्रह्मणि	११.	ब्रह्म में (किया जाता है)	वाक्	३.	वाणी (और)
परे	१०.	पर	तनुभिः	४.	शरीर से होने वाले
साक्षात्	९.	साक्षात्	पार्थ	१.	हे युधिष्ठिर
सर्वं	५.	सभी	क्रियाअद्वैतम्	१३.	क्रियाद्वैत
कर्म	६.	कर्मों का	तत्	१२.	वह
समर्पणम् ।	७.	समर्पण	उच्यते ॥	१४.	कहलाता है

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! मन, वाणी और शरीर से होने वाले सभी कर्मों का समर्पण जो साक्षात् पर ब्रह्म में किया जाता है, वह क्रियाद्वैत कहलाता है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

आत्मजायासुतादीनामन्येषां सर्वदेहिनाम् ।
यत् स्वार्थकामयोरैक्यं द्रव्याद्वैतं तदुच्यते ॥६५॥

पदच्छेद— आत्म जाया सुत आदीनाम् अन्येषाम् सर्व देहिनाम् ।
यत् स्वार्थ कामयोः ऐक्यम् द्रव्य अद्वैतम् तत् उच्यते ॥

शब्दार्थ—

आत्मजाया	१. अपनी पत्नी	यत्	९. जो
सुत	२. पुत्र	स्वार्थ	७. स्वार्थ और
आदीनाम्	३. आदी के (और)	कामयोः	८. योग को
अन्येषाम्	४. दूसरे	ऐक्यम्	१०. एक समझता है
सर्व	५. समस्त	द्रव्यअद्वैतम्	१२. द्रव्याद्वैत
देहिनाम् ।	६. प्राणियों के	तत्	११. वह
		उच्यते ॥	१३. कहलाता है

श्लोकार्थ—अपनी पत्नी, पुत्र आदि के और दूसरे समस्त प्राणियों के स्वार्थ और योग को जो एक समझता है, वह द्रव्याद्वैत कहलाता है ।

षट्षष्टितमः श्लोकः

यद् यस्य वानिषिद्धं स्याद् येन यत्र यतो नृप ।
स तेनेहेत कर्माणि नरो नान्यैरनापदि ॥६६॥

पदच्छेद— यत् यस्य वाअनिषिद्धम् स्याद् येन यत्र यतः नृप ।
सः तेन ईहेत कर्माणि नरः न अन्यैः अनापदि ॥

शब्दार्थ—

यत्	२. जो (द्रव्य के लिये)	सः	९. वह
यस्य	३. जिसे	तेन	११. उसी से (सब)
वा	५. अथवा	ईहेत	१३. करे
अनिषिद्धम्	७. शास्त्रविरुद्ध	कर्माणि	१२. कर्मों को
स्यात्	८. हो	नरः	१०. मनुष्य
येन यत्र	४. जिस उपाय से जहाँ	न	१६. नहीं करे
यतः	६. जिसके द्वारा ग्रहणीय तथा	अन्यैः	१४. दूसरे कर्मों से
नृप ।	१. हे राजन् !	अनापदि ॥	१५. आपत्तिकाल को छोड़कर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो द्रव्य के लिये जिसे जिस उपाय से जहाँ अथवा जिसके द्वारा ग्रहणीय तथा शास्त्र विरुद्ध न हो वह मनुष्य उससे सब कर्मों को करे । दूसरे कर्मों से आपत्तिकाल को छोड़ कर नहीं करे ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

एतैरन्यैश्च वेदोक्तैर्वर्तमानः स्वकर्मभिः ।
गृहेऽप्यस्य गतिं यायाद् राजंस्तद्भक्तिभाङ्नरः ॥६७॥

पदच्छेद— एतैः अन्यैः च वेदोक्तैः वर्तमानः स्व कर्मभिः ।
गृहे अपि अस्य गतिम् यायात् राजन् तत् भक्तिभाक् नरः ॥

शब्दार्थ—एतैः	७.	इन कर्मों	अपिअस्य	१४.	भी इस भगवान् की
अन्यैः	६.	दूसरे	गतिम्	१५.	गति को
च	८.	तथा	यायात्	१६.	प्राप्त करता है
वेदोक्तैः	६.	वेद में कहे हुए	राजन्	१.	हे राजन् !
वर्तमानः	१३.	रहते हुये	तत्	२.	उस भगवान् की
स्व	१०.	अपने	भक्ति	३.	भक्ति से युक्त
कर्मभिः	११.	कर्मों के अनुष्ठान से	भाक्	४.	भगवत् भक्त
गृहे	१२.	घर में	नरः ॥	५.	मनुष्य

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस भगवान् की भक्ति से युक्त भगवत् भक्त मनुष्य वेद में कहे हुये इन कर्मों तथा दूसरे अपने कर्मों के अनुष्ठान से घर में रहते हुये भी इस भगवान् की गति को प्राप्त करता है ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

यथा हि यूयं नृपदेव दुस्त्यजादापद्गणादुत्तरतात्मनः प्रभोः ।
यत्पादपङ्केरुहसेवया भवानहार्षीन्निर्जितदिग्गजः क्रतून् ॥६८॥

पदच्छेद— यथा हि यूयम् नृप देव दुस्त्यजात् आपद् गणात् उत्तरत आत्मनः प्रभो ।
यत्पाद पङ्केरुह सेवया भवान् अहार्षीत् निर्जित दिग्गजः क्रतून् ॥

शब्दार्थ—यथा हि	२.	जैसे कि	यत्	१०.	जिनके
यूयम्	३.	आप लोग	पादपङ्केरुह	११.	चरण कमल की
नृपदेव	१.	हे युधिष्ठिर !	सेवया	१२.	सेवा से
दुस्त्यजात्	४.	कठिनाई से त्यागने योग्य	भवान्	१३.	आपने
आपद्	५.	विपत्ति	अहार्षीत्	१७.	किया है
गणात्	६.	समूह से	निर्जित	१५.	जीत कर
उत्तरत	६.	पार हो गये हो	दिग्गजः	१४.	भूमण्डल को
आत्मनः	७.	अपने	क्रतून् ॥	१६.	यज्ञों को
प्रभोः ।	८.	स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से			

श्लोकार्थ—हे युधिष्ठिर ! जैसे कि आप लोग कठिनाई से त्यागने योग्य विपत्ति समूह से अपने स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से पार हो गये हो । जिनके चरण कमल की सेवा से आपने भूमण्डल को जीतकर यज्ञों को किया है ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

अहं पुराभवं कश्चिद् गन्धर्व उपबर्हणः ।
नाम्नातीते महाकल्पे गन्धर्वाणां सुसम्मतः ॥६९॥

पदच्छेद— अहम् पुरा अभवम् कश्चित् गन्धर्व उपबर्हणः ।
नाम्ना अतीते महाकल्पे गन्धर्वाणाम् सुसम्मतः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१. मैं	नाम्ना	९. नाम का
पुरा	२. पूर्व जन्म में	अतीते	३. बीते हुये
अभवम्	१२. हुआ	महा	४. महा
कश्चित्	१०. एक	कल्पे	५. कल्प में
गन्धर्व	११. गन्धर्व	गन्धर्वाणाम्	६. गन्धर्वों में
उपबर्हणः ।	८. उपबर्हण	सुसम्मतः ॥	७. प्रतिष्ठित

श्लोकार्थ—मैं पूर्व जन्म में बीते हुये महाकल्प में गन्धर्वों में प्रतिष्ठित उपबर्हण नाम का एक गन्धर्व हुआ ॥

सप्ततितमः श्लोकः

रूपपेशलमाधुर्यसौगन्ध्यप्रियदर्शनः ।
स्त्रीणां प्रियतमो नित्यं मत्तस्तु पुरुलम्पटः ॥७०॥

पदच्छेद— रूप पेशल माधुर्य सौगन्ध्य प्रिय दर्शनः ।
स्त्रीणाम् प्रियतमः नित्यम् मत्तः तु पुरुलम्पटः ॥

शब्दार्थ—

रूप	१. मैं सुन्दरता	स्त्रीणाम्	७. और मैं स्त्रियों को
पेशल	२. सुकुमारता	प्रियतमः	८. प्यारा
माधुर्य	३. मधुरता	नित्यम्	९. नित्य
सौगन्ध्य	४. सुगन्धि से युक्त (तथा)	मत्तः	१०. प्रमादी
प्रिय	६. प्रिय लगता था	तु	११. तथा
दर्शनः ।	५. देखने में	पुरुलम्पटः ॥	१२. अत्यन्त विलासी था

श्लोकार्थ—मैं सुन्दरता, सुकुमारता, मधुरता, सुगन्धि से युक्त तथा देखने में प्रिय लगता था । और मैं स्त्रियों का प्यारा, नित्य प्रमादी तथा अत्यन्त विलासी था ॥

एकसप्ततितमः श्लोकः

एकदा देवसत्रे तु गन्धर्वाप्सरसां गणाः ।
उपहूता विश्वसृग्भिर्हरिगाथोपगायने ॥७१॥

पदच्छेद— एकदा देवसत्रे तु गन्धर्व अप्सरसाम् गणाः ।
उपहूताः विश्वसृग्भिः हरिगाथा उपगायने ॥

शब्दार्थ—एकदा	१.	एक बार	उपहूताः	१०.	बुलाया था
देवसत्रे	२.	देवताओं के यज्ञ में	विश्वसृग्भिः	३.	प्रजापतियों ने
तु गन्धर्व	७.	गन्धर्वों और	हरिः	४.	भगवान् की
अप्सरसाम्	८.	अप्सराओं के	गाथा	५.	लीला का
गणाः ।	९.	समूह को	उपगायने ॥	६.	गान करने के लिये

श्लोकार्थ—एक बार देवताओं के यज्ञ में प्रजापतियों ने भगवान् की लीला का गान करने के लिये गन्धर्वों और अप्सराओं के समूह को बुलाया था ॥

द्विसप्ततितमः श्लोकः

अहं च गायंस्तद्विद्वान् स्त्रीभिः परिवृतो गतः ।
ज्ञात्वा विश्वसृजस्तन्मे हेलनं शेपुरोजसा ।
याहि त्वं शूद्रतामाशु नष्टश्रीः कृतहेलनः ॥७२॥

पदच्छेद— अहम् च गायन् तत् विद्वान् स्त्रीभिः परिवृतः गतः ।
ज्ञात्वा विश्वसृजः तत् मे हेलनम् शेपुः ओजसा ।
याहि त्वम् शूद्रताम् आशु नष्ट श्रीः कृत हेलनः ॥

शब्दार्थ—अहम्	२.	मैं	हेलनम्	१०.	अवहेलना को
च	४.	और	शेपुः	१३.	शाप दे दिया कि
गायन्	३.	गान करता हुआ	ओजसा	१२.	अपनी शक्ति से
तत् विद्वान्	१.	उस संगीत का जनकार	याहि	२०.	जा
स्त्रीभिः	५.	स्त्रियों से	त्वम्	१६.	तू
परिवृतः गतः	६.	घिरा हुआ पहुँचा	शूद्रताम्	१९.	शूद्रयोनि में
ज्ञात्वा	११.	जानकर	आशु	१८.	शीघ्र
विश्वसृजः	७.	प्रजापतियों ने	नष्ट श्रीः	१७.	शोभाहीन होकर
तत्	९.	उस	कृत	१५.	करने वाला
मे ।	८.	मेरी	हेलनम् ॥	१४.	अवहेलना

श्लोकार्थ—उस संगीत का जानकार मैं गान करता हुआ और स्त्रियों से घिरा हुआ पहुँचा । प्रजापतियों ने मेरी उस अवहेलना को जानकर अपनी शक्ति से शाप दे दिया कि अवहेलना करने वाला तू शोभाहीन होकर शीघ्र शूद्रयोनि में जा ॥

त्रिसप्ततितमः श्लोकः

तावद्दास्यामहं जज्ञे तत्रापि ब्रह्मवादिनाम् ।
शुश्रूषयानुषङ्गेण प्राप्तोऽहं ब्रह्मपुत्रताम् ॥७३॥

पदच्छेद— तावत् दास्याम् अहम् जज्ञे तत्र अपि ब्रह्म वादिनाम् ।
शुश्रूषया अनुषङ्गेण प्राप्तः अहम् ब्रह्म पुत्रताम् ॥

शब्दार्थ—

तावत्	१.	तब	वादिनाम् ।	८.	वादी महात्माओं का
दास्याम्	३.	दासी से	शुश्रूषया	९.	सेवा (और)
अहम्	२.	मैं	अनुषङ्गेण	१०.	सत्सङ्ग से
जज्ञे	४.	उत्पन्न हुआ	प्राप्तः	१४.	हुआ
तत्र	५.	वहाँ	अहम्	११.	मैं
अपि	६.	भी	ब्रह्म	१२.	ब्रह्मा का
ब्रह्म	७.	ब्रह्म	पुत्रताम् ॥	१३.	पुत्र (नारद)

श्लोकार्थ—तब मैं दासी से उत्पन्न हुआ । वहाँ भी ब्रह्मवादी महात्माओं की सेवा और सत्सङ्ग से मैं ब्रह्मा का पुत्र नारद हुआ ॥

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

धर्मस्ते गृहमेधीयो वर्णितः पापनाशनः ।
गृहस्थो येन पदवीमञ्जसा न्यासिनामियात् ॥७४॥

पदच्छेद— धर्मः ते गृहमेधीयः वर्णितः पापनाशनः ।
गृहस्थः येन पदवीम् अञ्जसा न्यासिनाम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

धर्म	४.	धर्म का	गृहस्थः	६.	गृहस्थ
ते	१.	मैंने तुम्हें	येन	७.	धर्म के आश्रय से
गृहमेधीयः	२.	गृहस्थों के	पदवीम्	१०.	पद को
वर्णितः	५.	वर्णन किया	अञ्जसा	८.	अनायास ही
पापनाशनः ।	३.	पाप नाशक	न्यासिनाम्	९.	संन्यासियों के
			इयात् ॥	११.	प्राप्त कर लेता है

श्लोकार्थ—मैंने तुमसे गृहस्थों के पापनाशक धर्म का वर्णन किया । गृहस्थ जिस धर्म के आश्रय से अनायास ही संन्यासियों के पद को प्राप्त कर लेता है ॥

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

यूयं नृलोके बत भूरिभागा लोकं पुनाना मुनयोऽभियन्ति ।
येषां गृहानावसतीति साक्षाद् गूढं परं ब्रह्म मनुष्यलिङ्गम् ॥७५॥

पदच्छेद— यूयम् नृलोके बत भूरिभागाः लोकम् पुनानाः मुनयः अभियन्ति ।
येषाम् गृहान् आवसति इति साक्षात् गूढम् परम् ब्रह्म मनुष्यलिङ्गम् ॥

शब्दार्थ—यूयम्	३.	आप लोग	येषाम्	५.	जिनके
नृलोके	२.	मनुष्य लोक में	गृहान्	६.	घर में
बत	१.	हर्ष की बात है कि	आवसति	११.	निवास करते हैं
भूरिभागाः	४.	बड़े भाग्यवान् हैं	इति	१२.	यह जानकर
लोकम्	१२.	संसार को	साक्षात्	७.	साक्षात्
पुनानाः	१३.	पवित्र करते हुये	गूढम्	१०.	छिपे रूप से
मुनयः	१४.	मुनि लोग	परम् ब्रह्म	८.	परमात्मा
अभियन्ति ।	१५.	आपके पास जाते हैं	मनुष्यलिङ्गम् ॥	९.	मनुष्य रूप धरकर

श्लोकार्थ—हर्ष की बात है कि मनुष्य लोक में आप लोग बड़े भाग्यवान् हैं । जिनके घर में साक्षात् परमात्मा मनुष्यरूप धरकर छिपे रूप से निवास करते हैं । यह जानकर संसार को पवित्र करते हुये मुनि लोग आपके पास जाते हैं ॥

षट्सप्ततितमः श्लोकः

स वा अयं ब्रह्म महद्विमृग्यं कैवल्यनिर्वाणसुखानुभूतिः ।
प्रियः सुहृद् वः खलु मातुलेय आत्मार्हणीयो विधिकृद् गुरुश्च ॥७६॥

पदच्छेद— सः वै अयम् ब्रह्म महत् विमृग्यम् कैवल्य निर्वाण सुख अनुभूतिः ।
प्रियः सुहृद् वः खलु मातुलेयः आत्मा अर्हणीयः विधिकृत् गुरुः च ॥

शब्दार्थ—सः वै	१.	वे ही	प्रियः	११.	प्रिय
अयम्	२.	ये (भगवान् कृष्ण)	सुहृद्	१२.	मित्र
ब्रह्म	४.	ब्रह्म	वः	१०.	आप लोगों के
महत्	३.	महान्	खलु	१३.	निश्चित रूप से
विमृग्यम्	५.	निरन्तर खोजने योग्य	मातुलेय :	१४.	ममेरे भाई
कैवल्य	६.	माया से परे	आत्मा	१५.	आत्मा
निर्वाण	७.	परम शान्त	अर्हणीयः	१६.	पूज्य
सुख	८.	सुख के	विधिकृत्	१८.	आज्ञाकारी हैं
अनुभूतिः ।	९.	अनुभव रूप	गुरुः च ॥	१७.	गुरु और

श्लोकार्थ—ये ही ये भगवान् कृष्ण महान् ब्रह्म, निरन्तर खोजने योग्य, माया से परे, परमशान्त, सुख के अनुभव रूप, आप लोगों के प्रिय मित्र, निश्चित रूप से ममेरे भाई, आत्मा, पूज्य, गुरु और आज्ञाकारी हैं ॥

सप्तसप्ततितमः श्लोकः

न यस्य साक्षाद्भवपद्मजादिभी रूपं धिया वस्तुतयोपवर्णितम् ।
मौनेन भक्त्योपशमेन पूजितः प्रसीदतामेष स सात्वतां पतिः ॥७७॥

पदच्छेद— न यस्य साक्षात् भवपद्मज आदिभिः रूपम् धिया वस्तुतया उपवर्णितम् ।
मौनेन भक्त्या उपशमेन पूजितः प्रसीदताम् एषः सः सात्वताम् पतिः ॥

शब्दार्थ—

न	८. नहीं	मौनेन	१४. मौन
यस्य	१. जिन भगवान् कृष्ण के	भक्त्या	१५. भक्ति और
साक्षात्	३. साक्षात्	उपशमेन	१६. संयम के द्वारा
भवपद्मज	४. शंकर, ब्रह्मा	पूजितः	१७. पूजित होकर
आदिभिः	५. आदि भी	प्रसीदताम्	१८. प्रसन्न हों
रूपम्	२. रूप का	एषः	१३. ये भगवान् श्रीकृष्ण
धिया	७ बुद्धि से	सः	१०. वे
वस्तुतया	६. वास्तव में	सात्वताम्	११. भक्तों के
उपवर्णितम् ।	९. वर्णन कर सके	पतिः ॥	१२. स्वामी

श्लोकार्थ—जिन भगवान् श्रीकृष्ण के रूप का साक्षात् शंकर ब्रह्मा आदि भी वास्तव में बुद्धि से वर्णन नहीं कर सके वे भक्तों के स्वामी ये भगवान् श्रीकृष्ण मौन, भक्ति और संयम के द्वारा पूजित होकर प्रसन्न हों ॥

अष्टसप्ततितमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— इति देवर्षिणा प्रोक्तं निशम्य भरतर्षभः ।
पूजयामास सुप्रीतः कृष्णं च प्रेमविह्वलः ॥७८॥

पदच्छेद— इति देवर्षिणा प्रोक्तम् निशम्य भरतर्षभः ।
पूजयामास सुप्रीतः कृष्णम् च प्रेम विह्वलः ॥

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार	पूजयामास	१०. पूजा की
देवर्षिणा	२. देवर्षि नारद के द्वारा	सुप्रीतः	६. अत्यन्त प्रसन्न होकर
प्रोक्तम्	३. कहे गये (वचन को)	कृष्णम्	९. भगवान् श्रीकृष्ण की
निशम्य	४. सुनकर	च	७. और
भरतर्षभः ।	५. युधिष्ठिर ने	प्रेमविह्वलः ॥	८. प्रेम से विह्वल होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार देवर्षि नारद के द्वारा कहे गये वचन को सुनकर राजा युधिष्ठिर ने अत्यन्त प्रसन्न होकर और प्रेम से विह्वल होकर भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा की ॥

एकोनाशीतितमः श्लोकः

कृष्णपार्थावुपामन्त्र्य पूजितः प्रययौ मुनिः ।
श्रुत्वा कृष्णं परं ब्रह्म पार्थः परमविस्मितः ॥७९॥

पदच्छेद— कृष्ण पार्थौ उपामन्त्र्य पूजितः प्रययौ मुनिः ।
श्रुत्वा कृष्णम् परम् ब्रह्म पार्थः परम विस्मितः ॥

शब्दार्थ—

कृष्ण	१.	कृष्ण और	श्रुत्वा	९.	सुनकर
पार्थौ	२.	युधिष्ठिर से	कृष्णम्	७.	श्रीकृष्ण को
उपामन्त्र्य	३.	विदा लेकर (और)	परंब्रह्म	८.	परब्रह्म
पूजितः	४.	पूजित होकर	पार्थः	१०.	युधिष्ठिर को
प्रययौ	६.	चले गये	परम	११.	परम
मुनिः ।	५.	नारदमुनि	विस्मितः ॥	१२.	आश्चर्य हुआ

श्लोकार्थ—कृष्ण और युधिष्ठिर से विदा लेकर और पूजित होकर नारदमुनि चले गये । श्रीकृष्ण को परब्रह्म सुनकर युधिष्ठिर को परम आश्चर्य हुआ ॥

अशीतितमः श्लोकः

इति दाक्षायणीनां ते पृथग्वंशाः प्रकीर्तिताः ।
देवासुरमनुष्याद्या लोका यत्र चराचराः ॥८०॥

पदच्छेद— इति दाक्षायणीनाम् ते पृथक् वंशाः प्रकीर्तिताः ।
देवअसुर मनुष्य आद्याः लोकाः यत्र चर अचराः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	देव-असुर	८.	देव असुर
दाक्षायणीनाम्	३.	दक्ष पुत्रियों के	मनुष्य	९.	मनुष्य
ते	२.	तुमसे	आद्याः	१०.	आदि
पृथक्	५.	अलग-अलग	लोकाः	१२.	लोकों की (सृष्टि हुई)
वंशाः	४.	वंशों का	यत्र	७.	जिस वंश में
प्रकीर्तिताः ।	६.	वर्णन किया	चर-अचराः ।	११.	चर-अचर

श्लोकार्थ—इस प्रकार तुमसे दक्ष पुत्रियों के वंशों का अलग-अलग वर्णन किया । जिस वंश में देव-असुर, मनुष्य आदि चर-अचर लोकों की सृष्टि हुई ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे वैयासिक्यामष्टादशसाहस्र्यायाम् पारमहंस्यां संहितायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लादानुचरिते युधिष्ठिरनारदसंवादे सदाचारनिर्णयो नाम पञ्चदशः अध्यायः ॥१५॥